संविधानों की दुनियां

The World Constitutions : UK, USA, Switzerland, USSR & Japan

Dr PRABHU DUTT SHARMA
M A. (Pol Sc & History) Ph D (U S.A.)
M.P.A (Pub Adm) (U S.A) Gold Medalist
Reader, Department of Political Science
University of Rajasthan, JAIPUR

COLLEGE BOOK DEPOT
JAIPUR-2

कॉलिज बुक डिपो, जयपुर-2

संस्करण 1971-72

[illegible]
[illegible] जयपुर में मुद्रित

दूसरे संस्करण की भूमिका

संविधानों की दुनिया एक पाठ्य-पुस्तक के रूप में अपना स्थान बना सकी इसकी हमे प्रसन्नता है।

प्रस्तुत संस्करण अपने संशोधित एवं परिवर्द्धित रूप मे अधिक उपयोगी, रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक सिद्ध होगा ऐसी हमे आशा है।

जिन पाठको ने हमे समय-समय पर अपने सुझावो से लाभान्वित कर इस संस्करण को सुधारने मे हमारी सहायता की उनके हम कृतज्ञ हैं।

लेखक

प्राक्कथन

प्रस्तुत प्रकाशन राजनीति विज्ञान के एक बहुचर्चित एवं पुरातन परम्परागत विषय पर होते हुए भी एक ऐसा प्रयास है जो कई दृष्टियो से नया है और इसीलिये शायद उपयोगी भी। पाठ्य-पुस्तको की दुनियां भी दुनिया के अन्य सभी पहलुओ की तरह प्रतिद्वन्द्वात्मक है और शाश्वत विकासशील भी। अतः पुराने क्षेत्र में प्रयुक्त हुए नये प्रयास का अपना एक मूल्य है और अपना एक विशिष्ट स्थान।

उक्त भावना से अनुप्राणित प्रस्तुत रचना विद्यार्थी-जगत को संविधान की नई-पुरानी विधाओं से परिचित कराने के साथ-साथ उन्हे विश्लेषित एवं मूल्यांकित करने के लिये कुछ नये मान उपस्थित करती है। सामग्री का समीचीनता विवेचन की सरलता एवं नये दृष्टिकोणो से संविधानो को देखने पहिचानने एवं तोलने का यह प्रयास विद्यार्थियो को विषय के प्रति एक जिज्ञासा एवं रुचि दे सके इसकी यथासम्भव निष्ठा से चेष्टा की गई है।

आशा है विद्यार्थी-जगत इस प्रयास का स्वागत करेगा। पुस्तक के प्रणयन मे जिन मानक ग्रन्थो से सहायता ली गई है उनके विद्वान् लेखकों के प्रति आभार ज्ञापित करना एक औपचारिकता न होते हुए सच्ची श्रद्धा है।

लेखक

अनुक्रम

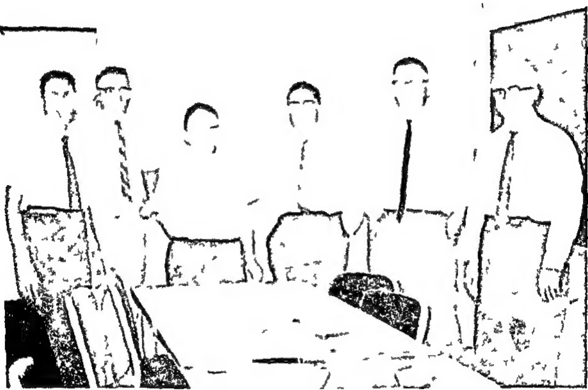
ब्रिटेन का संविधान

अमेरिका का संविधान

स्विट्ज़रलैण्ड का संविधान

सोवियत रूस का संविधान

जापान का संविधान



अमेरिका के सुप्रसिद्ध राजनीतिशास्त्रियों के साथ एक सेमिनार में भाग लेते हुए लेखक (बाएं)

ब्रिटेन का संविधान

[THE BRITISH CONSTITUTION]

"ब्रिटिश साम्राज्य एक नियन्त्रित राजसत्ता द्वारा संयुक्त है जो उस प्राचीन नियन्त्रित राजसत्ता के अलावा कोई दूसरा नहीं है जिसका गठबन्धन पहले स्काटलैण्ड की राजसत्ता से हुआ और जिसमें बाद में समुद्र पार के दूसरे राष्ट्र भी शामिल कर लिये गए। उसका वर्तमान वैधानिक स्वरूप किसी एक घटना या आन्दोलन से उत्पन्न न होकर एक ऐसे क्रमिक विकास के कारण है जो प्राचीन नोमन (Norman) जाति की विजय के जितना ही प्राचीन है। वास्तव में हम अपनी दृष्टि नोर्मन-काल से हटा कर और भी पहले के उन सेक्सन राजाओं पर लगा सकते हैं जिनके आधिपत्य में इङ्गलैण्ड के राजा और उसके प्रदेशों का जन्म हुआ। विशेषतया हमारी दृष्टि हमारे राजाओं में सबसे महान एल्फ्रेड पर आकर जमती है, जिसका जीवन व चरित्र अंग्रेजी संविधान का जीता-जागता रूप मालूम पड़ता है।"

—जी० एम० ट्रेवेलियान

"अंग्रेजी संविधान एक पूर्ण की हुई वस्तु नहीं है परन्तु वृद्धि का एक प्रक्रम है। यह बुद्धिमत्ता व संयोग के मिलन से उत्पन्न बालक है जिसका मार्ग प्रदर्शन कभी आकस्मिक घटनाओं द्वारा और कभी कभी उच्चकोटि की योजनाओं द्वारा हुआ है। यह एक नदी की भांति है जिसका गतिशील तलपृष्ठ (Surface) भाग मानों किसी के पैर से इधर उधर से निकल कर कभी अन्दर व कभी बाहर की ओर घूम कर धीरे से वह निकलता है और कभी कभी पत्तों के झुरमुट में छा भी जाता है।"

—मुनरो

1

ब्रिटिश सविधान का विकास व स्वरूप

(GROWTH AND NATURE OF THE BRITISH CONSTITUTION)

"हम अ ग्रेजों को अपने सविधान पर गर्व है। यह ईश्वर की
देन है। इस सम्बन्ध मे अन्य किसी देश पर
उसकी इतनी कृपा नहीं हुई है।"

—चार्ल्स डिकिन्स

विश्व के सविधानो में ब्रिटिश सविधान का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। इसके पीछे सदियों के सघर्ष और प्रगति की कहानी छिपी हुई है। यह प्राचीनतम परम्पराओ का सकलन है। गत पाच शताब्दियो से इसका विकास धारावाहिक है। ब्रिटिश सावैधानिक व्यवस्था और सस्थाओ ने विश्व की विभिन्न सावैधानिक व्यवस्थाओं तथा सस्थाओ के निर्माण मे अपना व्यापक प्रभाव डाला है। विश्व के अनेक देशो ने प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से ब्रिटिश परम्पराओ को अपनाया है। जो राज्य ब्रिटिश साम्राज्यवाद के चगुल से स्वतन्त्र हुए, वहा प्राय ब्रिटिश पद्धति पर आधारित ससदीय प्रजातन्त्र का ही विकास हुआ है। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि आज के अधिकाश सविधान न्यूनाधिक रूप से ब्रिटिश सविधान की नकल हैं। सर्वशक्तिशाली ससद, उत्तरदायी मत्रिमडल, द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका, सावैधानिक कार्यपालिका, कानून का शासन, स्वायत्त शासन आदि ब्रिटिश सावैधानिक परम्पराओ की देन हैं। यही कारण है कि ब्रिटिश ससद को "ससदो की जननी" (The Mother of Parliaments) तथा ब्रिटिश सविधान को "मातृ सविधान' (Mother Constitution) कहा जाता है।

यदि हम विश्व के सविधानो पर दृष्टिपात करें तो पायेंगे कि कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिण अफ्रीका, भारत, बर्मा आदि देशो की शासन पद्धतियो का निर्माण ब्रिटिश प्रभाव के अन्तर्गत ही हुआ है। यहा तक कि सयुक्त राज्य-

अमेरिका और सोवियत रूस के संविधान निर्माता भी ब्रिटिश शासन व्यवस्था के प्रभाव से मुक्त नहीं रह सके।

ब्रिटिश संविधान का महत्व विशेषकर इसलिए भी है कि इसका विकास मानव जाति की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए किये गये संघर्ष का इतिहास है। ब्रिटेन का वर्तमान संविधान राजतन्त्र की निरंकुशता के विरोध का परिणाम है। यह मानव-स्वतन्त्रता के लिए बलिदान का जीता जागता निशान है।

ब्रिटिश संविधान की राजनीतिक पृष्ठभूमि
(Political Background of the British Constitution)

संविधान के क्रियात्मक रूप का निर्धारण समाजशास्त्रीय तत्वों से होता है। अत ब्रिटिश संविधान का अध्ययन भी इन तत्वों के संक्षिप्त उल्लेख से करें, तो उपयुक्त होगा —

भूमि (आकार एवं सामुद्रिक घिराव)—ब्रिटेन के छोटे से द्वीप का क्षेत्रफल 93,371 वर्गमील है जो फ्रांस का दो पाचवां, अमेरिका का तीसवां तथा रूस का अस्सीवां भाग है। ग्रेट ब्रिटेन मे लदन, वेल्स, स्कॉटलैंड और उत्तरी आयरलैंड सम्मिलित हैं। यह यूरोप के उत्तर-पश्चिमी कोने पर स्थित है। लगभग 20 मील चौडी इगलिश चैनल इसे यूरोपीय महाद्वीप से अलग करती है। अतीतकाल में ब्रिटिश सुरक्षा की दृष्टि से इस चैनल ने बडी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। इसके द्वारा ब्रिटेन शेष यूरोप म होने वाली क्रान्तियो से अछूता बचा रहा है।

ब्रिटेन का छोटा आकार ही सरकार की एकात्मकता और केन्द्रीयकरण का प्रमुख कारण है। ब्रिटेन चारो ओर समुद्र से घिरा हुआ है अत यहाँ की जनता अपने को सुरक्षित अनुभव करती रही है। इस सामुद्रिक स्थिति के कारण ही ब्रिटेन जलशक्ति के क्षेत्र मे अत्यधिक शक्तिशाली राज्य और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का केन्द्र रहा है। सामुद्रिक घिराव ने इसके इतिहास और सांविधानिक विकास को पर्याप्त रूप मे प्रभावित किया है।

निवासी और धर्म—ब्रिटेन म लगभग 5 करोड से भी अधिक लोग रहते हैं। मूल रूप से अग्रेज अनेक जातियो से उत्पन्न हैं पर ये सभी जातियां (केल्टस, रोमन ऐंग्लो सेक्सन, डेन्स, नोमन्स आदि) परस्पर मिलकर एक होती रही हैं। वर्तमान ब्रिटिश शासन प्रणाली इस जातिय एकरूपता से पर्याप्त प्रभावित है। सभी ब्रिटेनवासी ईसाई धर्म के अनुयायी हैं। यह अपने आप में एक महान् राजनीतिक महत्व की बात है।

भाषा और साहित्य भी ब्रिटेन वासियो के जीवन में विशेष स्थान रखता है। इसने नैतिक धार्मिक, और राजनीतिक एकता को बनाये रखा है। अग्रेजो म धर्म की विभिन्नता पाई जाती है। बहुसंख्यक व्यक्ति प्रोटेस्टैन्ट ईसाई धर्म के अनुयायी हैं जबकि कुछ प्राचीन धर्मावलम्बी कैथोलिक हैं। स्वय प्रोटेस्टेंट धर्म अनेक शाखा म विभक्त फिर भी ब्रिटेन मे धर्म-व्यवस्था की यह प्रमुख विशेषता है कि धर्मों मे पारस्परिक

मत-विभाजन के साथ-साथ आधारभूत एकता रही है। अर्नेस्ट बार्कर (E Barker) के विचार में 'धर्म की यही व्यवस्था ब्रिटेन में संसदीय जनतन्त्र का बहुत कुछ आधार रही है।"

सामाजिक एवं आर्थिक दशा—ब्रिटिश समाज के ज्येष्ठत्व के सिद्धान्त एवं पारिवारिक व्यवस्था ने ब्रिटिश राजनीतिक जीवन को काफी प्रभावित किया है। नोर्मन विजय ने ज्येष्ठत्व के सिद्धान्त को स्थापित किया जिसके फलस्वरूप ब्रिटिश समाज में एक कुलीन-वर्ग का जन्म हुआ। फ्रांस के विपरीत ब्रिटेन में इस वर्ग ने सांविधानिक विकास में सहयोग दिया। इस वर्ग के प्रतिनिधि जनता के प्रतिनिधियों के रूप में लोकसभा में बैठने लगे, अतः लोक सभा शनैः शनैः सम्पूर्ण राष्ट्र की प्रतिनिधि संस्था बन गई जबकि लॉर्ड सभा केवल वर्गीय एवं निहित हितों की संस्था रह गई। ब्रिटिश समाज में पारिवारिक व्यवस्था का ढाचा ढीला-ढाला है इसी कारण प्रत्येक व्यक्ति परिवार की अपेक्षा सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रति अधिक प्रेम और भक्तिपूर्ण होता है। ब्रिटिश समाज के इस चरित्र से वहां की राजनीतिक एवं राष्ट्रीय एकता को बल मिलता है। पुनश्च, ग्रेट ब्रिटेन एक अत्यधिक औद्योगिक देश है। अतः आज यह मूलतः पूंजीपतियों और श्रमिकों के दो वर्गों में विभक्त है। देश का दलीय ढाचा समाज के इसी विभाजन पर आधारित है। पूंजीपति अपने पूंजीवादी हितों के कारण उच्च माध्यमिक वर्ग के रूप में सगठित हैं। रूढ़िवादी दल (Conservative Party) उनका प्रतिनिधित्व करता है। इसके विपरीत श्रमिक दल को कारखानों में कार्य करने वाले श्रमिकों, बाबूओं, कर्मचारियों और दूकानदारों आदि की एक बहुत बड़ी संख्या का प्रतिनिधित्व करने का श्रेय है।

एक उल्लेखनीय बात यह है कि ब्रिटिश-स्वभाव रूढ़िवादी है जो एकदम आकस्मिक परिवर्तन में विश्वास नहीं करता। इसलिए ब्रिटिश शासन प्रणाली और उसकी राजनीतिक संस्थायें सदियों के अनवरत् विकास (Unbroken Development) का परिणाम हैं। वास्तव में ब्रिटिश जाति समझौतावादी है। वह सैद्धान्तिक झगड़ों में न पड़कर केवल व्यावहारिक पहलू को ही विशेषतया ध्यान में रखती है। ब्रिटेन आर्थिक दृष्टि से एक समृद्ध देश रहा है, तथापि प्राकृतिक साधनों की दृष्टि से वह मूल रूप से गरीब है।

कुलीनतन्त्र से प्रजातन्त्र—ब्रिटिश शासन प्रणाली की वर्तमान रूपरेखा पर शक्ति और उत्तरदायित्व के ऐतिहासिक उत्तराधिकार का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। प्रवृत्ति यही रही है कि पुरखों का राजनीतिक आचरण एक बड़ी सीमा तक वर्तमान आचरण को निश्चित करता है। ब्रिटेन में शासन शक्ति और शासन उत्तरदायित्व पहिले राजतन्त्र तथा कुलीनतन्त्र (Aristocracy) के हाथ में था, किन्तु शनैः शनैः यह जनता के हाथों में चला आया और प्रजातान्त्रिक व्यवस्था की स्थापना हो गई। सत्ता का यह हस्तांतरण आकस्मिक अथवा क्रांतिकारी रूप से नहीं बल्कि क्रमिक विकास द्वारा हुआ। कुलीनतन्त्र ने समयानुकूल अपना रंग बदला और प्रजातन्त्र के

साथ सामन्जस्य किया। कुलीनतन्त्र प्रजातन्त्र के मार्ग मे बाधा नही बना, उल्टे उसने प्रजातन्त्र को गति दी और उसे सुधार तथा नेतृत्व प्रदान किया। इस तरह कुलीनतन्त्र एव प्रजातन्त्र के समन्वय से ब्रिटिश शासन-प्रणाली मे नई व्यवस्था पैदा हुई और ब्रिटिश समाज मे नये समाज का आविर्भाव हुआ।

ब्रिटिश संविधान की परिभाषा
(Definition of the British Constitution)

चूंकि ब्रिटिश सविधान का न तो किसी योजनानुसार निर्माण हुआ है और न वह कभी लेखबद्ध ही किया गया है, अत वह परिभाषा के बिना है। फिर भी विभिन्न विद्वानो ने इसे विभिन्न ढग से प्रस्तुत किया है।

परिभाषा

ब्रिटिश सविधान "अवसर और बुद्धि की सन्तान है।"

—Lytton Strachey

ब्रिटिश सविधान "सिद्धान्तो और आचरणो का एक समूह है जो एक सहस्र वर्ष के इतिहास का निरीक्षण करने पर ही एकत्रित किये जा सकते हैं जिसमे कोई कानून (Statute) यहा मिला तो कोई न्यायिक विनिश्चय वहा, जिसमे राजनीतिक आचरणो को सवमान्य रिवाजो मे दृढीभूत होते हुए देखा जाता है, और विधि-निर्माण शासन, वित्त, न्याय और निर्वाचन यन्त्र के भीतरी भाग को देखना पडता है कि किस प्रकार अतीत मे ये और किस प्रकार वे काम कर रहे हैं।"

—Ogg and Zink

"इगलैड का सविधान विभिन्न सस्थाओ, आदर्शों व व्यवहारो का विचित्र मिश्रण है। यह राज पत्रो (Charters), न्यायिक निर्णयो रूढि विधि (Common Law) नजीरो (Precedents) प्रथाओ तथा परम्पराओ का मिश्रण है। यह कोई एक लेख्य (Document) नही बल्कि हजारो लेख्य हैं। इसको एक ही स्रोत से न लेकर अनेक साधनो व स्थानो से लिया गया है। यह कोई पूर्णता प्राप्त वस्तु न होकर विकासशील वस्तु है। यह बुद्धिमत्ता और सयोग की सन्तान है, जिसका मार्ग प्रदर्शन कही आकस्मिकता ने और कही उच्च कोटि की योजनाओ ने किया है।"

—Munro

परन्तु उपयुक्त सभी परिभाषाओ व प्रशसाओ के सर्वथा विपरीत विचार टाक्युविली (Tocqueville) और थोमस पेन (Thomas Paine) ने व्यक्त किये हैं। फ्रेंच विचारक टोक्युविली ने कहा था कि "इगलैंड मे सविधान जैसी कोई वस्तु नहीं है। अमेरिका मे थोमस पेन ने भी इसी विचार का समर्थन करते हुए मत प्रकट किया कि "किसी सविधान को वास्तविक कहे जाने के लिये यह आवश्यक है कि उसे लिखित रूप मे दिखाया जा सके और चूंकि इगलैंड ऐसा नहीं कर सकता, उसका कोई सविधान नहीं है। जाज बनार्ड्स ने भी ऐसे ही विचार व्यक्त किये—"हमारा ब्रिटिश सविधान है, लेकिन कोई भी नहीं जानता कि यह क्या है, यह कहीं भी

लिखा हुआ नही है, और न इसमे कोई संशोधन ही किया जा सकता है। हा, संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान, एक वास्तविक मूल, पढा जा सकने योग्य लेख्य है। मै आपको उसका प्रत्येक वाक्य समझा सकता हू।"

टोक्यूविली और थोमस पेन के समान ब्रिटिश संविधान की अस्तित्वहीनता के प्रतिपादक अपने विचार के पक्ष मे प्राय तीन तर्क देते हैं—

(i) पहिला तर्क है कि ब्रिटिश संविधान किसी लिखित प्रलेख के रूप मे नही है जब कि संविधान को एक लिखित, निश्चित और क्रमबद्ध प्रलेख के रूप मे होना चाहिये जिसका निर्माण किसी संविधान-निर्मात्री परिषद् या व्यक्ति द्वारा किया गया हो। चूकि ब्रिटिश संविधान किसी लिखित पत्र के रूप मे नही है, उसका रूप निश्चित नही है, उसकी विषय वस्तु क्रमबद्ध नहीं है और अन्य संविधानो की भाति उसकी कोई प्रति प्रस्तुत नही की जा सकती, अत ब्रिटेन मे संविधान नाम की कोई चीज नही है।

(ii) दूसरा तर्क है कि एक संविधान को अनम्य (Rigid) होना चाहिये। उसमे संशोधन के लिये विशेष प्रक्रिया का प्रयोग होना चाहिये—ऐसी प्रक्रिया जो सामान्य विधि मे संशोधन लाने की प्रक्रिया से सर्वथा भिन्न हो। चूकि ब्रिटिश संविधान मे सामान्य विधि और संविधान मे संशोधन लाने की एक ही प्रणाली है अत यह संसार का सबसे नम्य (Flexible) संविधान है और उसे संविधान की श्रेणी मे नही गिना जाना चाहिये।

(iii) तीसरा तर्क है कि एक संविधान मे उच्च आधारभूत नियमो (Supreme Fundamental Laws) का संकलन होना चाहिये जबकि ब्रिटिश संविधान मे ऐसा नही है। ब्रिटिश संविधान मे संसद सप्रभु है, संविधान नही। संविधान के आधारभूत नियमो मे संसद स्वेच्छानुसार परिवर्तन और परिवर्धन कर सकती है। चूकि ब्रिटेन में पवित्र,उच्च और मौलिक नियमो का अभाव है, अत ब्रिटिश संविधान का अस्तित्व संदेहप्रद है।

परन्तु थोमस पेन और टाक्यूविली के उपर्युक्त तर्क भ्रामक हैं। दोनो विद्वानो को अपने समय म यह तर्क सही इसलिये प्रतीत हुए थे क्योकि उन दिनो व्यक्ति के अधिकारो की रक्षा के लिये संविधान को अति-आवश्यक समझा जाता था और उसके लिखित तथा अनम्य (Rigid) स्वरूप पर जोर दिया जाता था। चूकि अंग्रेजी संविधान को दोनो विद्वानो ने न तो आलेख (Document) के रूप मे पाया और न उसका अधिकाश किसी संविधान सभा द्वारा निर्मित कानून के रूप मे ही मिला, अत उन्होने यही त्रुटिपूर्ण निष्कर्ष निकाला कि इगलैंड मे कोई संविधान नही है।

वास्तव "संविधान" शब्द से दो अर्थ निकाले जाते हैं। एक अर्थ से तो संविधान के उस आलेख का बोध होता है जिसको संविधान निर्माताओ ने किसी एक समय व एक स्थान पर बैठकर रचा हो और जिसमे शासन के ढाचे, शासन के विभिन्न भागो के कार्यों, शासन के विभिन्न अधिकारियो के कर्तव्यो, शासकों और प्रजा के

सम्बन्धो, न्यायालयो, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता आदि की व्यवस्था के मूल सिद्धान्तो को निर्णयात्मक रूप से निश्चित कर दिया गया हो। दूसरे अर्थ मे, जो अधिक व्यापक है, सविधान से केवल एक लेख अथवा एक विशिष्ट शासन विधि का ही बोध नही होता बल्कि उन सब नियमो, अधिनियमो, परिपाटियो, प्रचलित प्रथाओ तथा रूढियो आदि का भी बोध होता है जो उस शासन विधि से सम्बद्ध हैं, चाहे उन्हे वरकर किसी एक समय अथवा स्थान पर किसी ने लेखबद्ध न किया हो। ब्रिटिश सविधान का अस्तित्व इसी पिछले अर्थ मे है।

वास्तव मे ऐसा एक भी सविधान नही है जो पूर्णत लिखित हो। प्रत्येक सविधान मे लिखित तत्व उपस्थित रहते हैं। लॉर्ड ब्राइस के शब्दो मे "लिखित सविधान व्याख्या द्वारा विकसित, निर्णयो द्वारा आभूषित और लोकाचारो द्वारा विस्तृत होते हैं और कुछ समय के पश्चात् उनके अक्षरश पाठ उनका पूर्ण अर्थ प्रकट नही कर सकते।' इसी बात का ध्यान मे रखकर मुनरो ने लिखा है—"अमेरिका ने सविधान को समझने म 20 मिनिट नही बल्कि 20 महीने लगेंगे।" ससार की प्रत्येक शासन प्रणाली मे किसी न किसी रूप मे रीति रिवाजो और परम्पराओ का तत्व अवश्य विद्यमान है। मनुष्य गतिशील है, अत उसकी राजनीतिक सस्थाएं भी गतिशील ही हैं। इसलिये यह सम्भव नही है कि सविधान निर्मित भविष्य के लिये भी शासन के अन्तिम स्वरूप को पूर्ण रूप से अपरिवर्तनीय बना दे अथवा निश्चित कर दे। वास्तविकता यही है कि सविधान-निर्माता सविधान को केवल ढाचे या ककाल का स्वरूप प्रदान करते है। बाद की आने वाली पीढिया उस ढाचे या ककाल को नियमो, प्रथाओ सकटकालीन आवश्यकताओ, आर्थिक विकासो आदि के अनुरूप मास मज्जा से पूर्ण कर लेती है। अमेरिका का सविधान लिखित सविधान का आदर्श नमूना है और वह ही इस प्रकार के विकासो के बाद ही पूर्ण होता है।

अनम्य (Rigid) न होने के आधार पर ही ब्रिटिश सविधान को सविधान की श्रेणी मे न रखना भी तर्क सगत नही है। किसी भी सविधान की नम्यता (Flexibility) सशोधन प्रणाली पर नही बल्कि उसके मौलिक उपबन्धो की प्रकृति और देशवासियो के चरित्र तथा परम्परा पर निर्भर करती है। यदि उपबन्धो के दृष्टि कोण से देखा जाए तो अमेरिका और ब्रिटेन के सविधान को नम्यता की एक श्रेणी मे रखा जा सकता है। देशवासियो के चरित्र और परम्परा की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि अग्रेज जाति गम्भीर प्रकृति की है तथा अपने उत्तरदायित्व के प्रति सजग रहने वाली है। ब्रिटिश जाति को अपनी प्राचीन परम्पराओ और सस्थाओ से अनन्य प्रेम है। इसलिए ब्रिटिश सविधान म आकस्मिक और अधिकाश परिवर्तन अथवा सशोधन नही हो पाया है। जो थोडे बहुत सशोधन हुए भी हैं वे शनै शनै और बहुत सोच विचार के बाद तथा अधिकाशत सर्वसम्मति से ही हुए हैं। फाइनर (Finer) का यह लिखना ठीक ही है कि "व्यवहार मे सविधान साधारण विधि की अपेक्षा सविधानिक विधि के सम्बन्ध में अधिक कठोर है।'

उच्च आधारभूत नियमों के अभाव की बात कहकर ब्रिटिश संविधान पर आपत्ति प्रकट करना भी ठीक नहीं कहा जा सकता। आग और जिंक (Ogg & Zink) ने कहा है "ग्रेट ब्रिटेन में बहुत से आधारभूत सार्वजनिक नियम और अभ्यास वर्तमान थे और आज भी हैं।" इन आधारभूत नियमों के बारे में डायसी (Dicey) ने लिखा है कि "ये नियम प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में सार्वभौम शक्ति के विभाजन और प्रयोग को निर्धारित करते हैं।"

निष्कर्ष यही निकलता है कि ब्रिटिश संविधान का भी अन्य संविधानों की तरह पूरा अस्तित्व है। सिर्फ अन्तर यही है कि अन्य देशों के संविधानों की भांति इसे क्रमबद्ध, संहिताबद्ध और सुव्यवस्थित नहीं किया गया है। यह किसी एक की नहीं वरन् हजारों स्रोतों की उपज है। इसका निर्माण नहीं बल्कि विकास हुआ है।

निर्माणात्मक तत्व या स्रोत या अवयवी भाग

(Sources of the British Constitution)

ब्रिटिश संविधान के विकास में एक नहीं वरन् अनेक तत्वों ने भाग लिया है जिन्हें हम इस संविधान के स्रोत या अवयवी भाग (Component parts) कहते हैं। ये तत्व प्रधानतः निम्नलिखित हैं—

(1) सांविधानिक समझौते—ये वे ऐतिहासिक लेख्य अथवा समझौते हैं जो संकटकाल में राजा और प्रजा के बीच तय हुए थे। जब राजाओं ने अपनी शक्ति का दुरुपयोग किया तो जनता की ओर से अपने अधिकारों की रक्षा के लिए आन्दोलन किये गये। फलस्वरूप राजाओं व प्रजा के बीच अनेक समझौते हुए जिनमें राजा की शक्ति तथा प्रजा के अधिकारों की परिभाषा करने का प्रयास किया गया। वास्तव में ये समझौते वे सांविधानिक सीमा चिह्न (Constitutional Landmarks) हैं जिनके माध्यम से इंगलण्ड का लोकतन्त्रीकरण होने में भारी सहायता मिली है। ये समझौते उन स्थलों का परिचय देते हैं जिनसे इंगलैंड लोकतन्त्रीय मार्ग पर बढ़ता गया था।

ब्रिटिश सांविधानिक समझौतों में महान् आज्ञापत्र, 1215 (Magnacarta, 1215), अधिकारों का प्रार्थना पत्र, 1628 (Petition of Rights, 1628) और अधिकार पत्र 1689 (Bill of Rights 1689) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन्हें ब्रिटिश संविधान की 'बाइबिल' कहा जाता है।

(2) सांविधानिक कानून या संसदीय विधियां—ये वे स्रोत हैं जिनके द्वारा संसद ने समय-समय पर राजा की शक्ति को नियन्त्रित किया है अथवा व्यक्तिगत स्वतन्त्रता या स्थानीय अधिकारियों या न्यायालयों व प्रशासनिक मशीनरी और जनमत को स्थापित तथा परिभाषित किया है। इन संसदीय विधियों में कुछ प्रमुख ये हैं—बन्दी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम (Habeas Corpus Act) 1679, समझौता अधिनियम (Act of Settlement) 1701, सन् 1832 1867 व 1884 के सुधार अधिनियम (Reform Acts), सन् 1888, 1894, 1929 व 1933 के

स्थानीय शासन अधिनियम (Local Govt Acts), सन् 1872 का संसदीय तथा म्युनिसिपल चुनाव अधिनियम (Parliamentary & Municipal Elections Act), सन् 1911 का संसदीय अधिनियम (Parliamentary Acts of 1911), सन् 1918 और 1948 के जनमत प्रतिनिधित्व अधिनियम (Representation of Peoples Act), आदि।

(3) न्यायिक निर्णय—ब्रिटिश सांविधानिक नियमों का तीसरा स्रोत न्यायालयों में सुने जाने वाले अभियोगों के सम्बन्ध में न्यायाधीशों के निर्णय हैं। इनके द्वारा चार्टरों और विधियों के अर्थ निश्चित किए गए हैं और उनकी सीमायें निर्धारित कर दी गई हैं। इन निर्णयों ने ब्रिटिश संविधान के विकास में बहुत भाग दिया है। इसी कारण डायसी ने कहा है कि "ब्रिटिश संविधान न्यायाधीशों द्वारा निर्मित है।" इस प्रकार के न्यायिक निर्णय अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों के समान हैं। अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों ने वहाँ के संविधान के प्रावधानों को स्पष्ट और विकसित करने में बड़ी सहायता की है। ब्रिटेन में न्यायिक निर्णय ही राजा के परमाधिकारों (Rerogative) और संसद-सदस्यों के विशेषाधिकार (Previleges) के अधिकार हैं। कुछ प्रमुख न्यायिक निर्णय इस प्रकार उल्लेखनीय हैं—

विल्कीज बनाम वुड (Wilkes V/s Wood) में यह निर्णय किया गया था कि किसी भी अनाम निर्दिष्ट (Un named) लेखक की तलाशी अथवा उसके कागजात को अधिकार में लेने का सामान्य अधिपत्र (General warrant) अवैध है। सामरसैट (Somerset) के अभियोग में अंग्रेजों की भूमि से दासत्व को सदा के लिए हटा दिया। हावेल (Howell) के अभियोग में न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता की गारन्टी दी गई। बुशल (Bushell) के अभियोग से ज्यूरी अर्थात् न्याय सभ्यों की स्वतन्त्रता स्थापित हो गई।

(4) कानूनी टीकायें—सांविधानिक विधि के सम्बन्ध में प्रख्यात लेखकों की टीकाओं (Commentaries) का भी संविधान के अवयव के रूप में उल्लेख किया जा सकता है। इन टीकाओं के द्वारा लेखकों ने विविध अभिसमयात्मक नियमों (Conventional rules) को क्रमबद्ध किया है उनका सम्बन्ध निश्चित किया है और मूल सिद्धान्तों की ओर संकेत करते हुए उन्हें कुछ हद तक एकता की कड़ी में बांध दिया है।

इन कानूनी टीकाओं में निम्नलिखित प्रमुख हैं—

(i) एनसन रचित "संविधान की विधि और लोकाचार" (Law and Custom of the Constitution by Anson)

(ii) मे द्वारा रचित संसदात्मक प्रथा' (Parliamentary Practice by May)

(iii) डायसी रचित 'संविधान की विधि (Law of the Constitution by Dicey)

(iv) बेजहोट रचित "इंगलैंड का संविधान" (English Constitution by Bagehot)

(5) सामान्य विधि—ब्रिटिश संविधान का अन्य मुख्य स्रोत सामान्य विधि (Common Law) है। "सामान्य विधि", मुनरो के शब्द में "उन नियमों का समूह है जिनका संसद विधि से पृथक विकास हुआ और अन्तत जिन्हें न्यायालयों से राज्य में मान्यता मिली।" ये नियम, रीति रिवाजो और परम्पराओं के आधार पर विकसित हुए हैं, संसद द्वारा कभी निर्मित नहीं हुए। न्यायाधीशों ने अपने निर्णय में ऐसे अनेक सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है जिन्होंने समय बीतने पर कानून जैसी महत्ता प्राप्त कर ली है। इन सिद्धांतों व नियमों की कोई संहिता नहीं बनी है। संसद द्वारा पारित न होने पर भी न्यायालय इन्हें मान्यता देते हैं और यदि इनका उल्लंघन होता है तो इनके विषय में न्यायालय में अभियोग चलाया जा सकता है और उल्लंघन करने वालों को दण्ड दिया जा सकता है। ये सिद्धान्त व्यवहार के कारण शासन प्रणाली के अङ्ग प्रत्यङ्ग में घुस आये हैं।

सामान्य विधि के सिद्धान्तों के अन्तर्गत सांविधानिक महत्व के बहुत से मुख्य मामले आते हैं। उदाहरण के लिए, राजा ने अपना परमाधिकार (Prerogative) तथा संसद ने अपनी सर्वोच्चता सामान्य विधि से प्राप्त की है। इसी तरह ब्रिटिश जनता की नागरिक स्वतन्त्रतायें, जो अमेरिका में बिल आफ राइट्स (Bill of Rights) में उपलब्ध हैं, सामान्य विधि के नियमों द्वारा संरक्षित हैं।

(6) सांविधानिक परम्परायें या अभिसमय—ब्रिटिश संविधान के सबसे महत्वपूर्ण अंश अभिसमय (Conventions) पर आधारित है। ये अभिसमय लिपिबद्ध नहीं हैं और न्यायालय भी इन्हें कानूनन क्रियान्वित नहीं कर सकते। फिर भी इन अभिसमयों को कानून का सा ही आदर प्राप्त है और इनका पालन भी कानूनों के समान ही होता है। वास्तव में ये अभिसमय राजनीतिक पद्धति के अलिखित नियम हैं। ऑग और जिंक (Ogg and Zink) के शब्दों में "वे (अभिसमय) उन समझौतों, आदतों या प्रथाओं से मिल कर बनते हैं जो राजनीतिक नैतिकता के नियम मात्र होने पर भी बड़ी से बड़ी सार्वजनिक सत्ताओं के दिन प्रतिदिन के सम्बन्धों और गतिविधियों के अधिकांश भाग का नियमन करते हैं।" इन्हीं सांविधानिक अभिसमयों के आधार पर ब्रिटिश शासन विधान का समस्त ढाँचा निर्भर है और ये ही उसे लचीला बनाते हैं।

ब्रिटिश संविधान में कुछ अभिसमय (सांविधानिक परम्परायें) निम्न लिखित हैं—

1. वर्ष में कम से-कम एक बार संसद अवश्य बुलाई जाती है।
2. राजा मन्त्रिमंडल की बैठक में सम्मिलित नहीं होता है।
3. राजा अपने मन्त्रियों का परामर्श सदैव स्वीकार कर लेता है।
4. राजा संसद द्वारा पारित विधेयक पर सदैव स्वीकृति प्रदान कर देता है।

5 मन्त्रिमण्डल अपने कार्यों के लिए संसद के प्रति उत्तरदायी है।
6 प्रत्येक विधेयक का तीन बार वाचन होना चाहिये जब कहीं जाकर उस पर अन्तिम मतदान होता है।
7 लोकसभा का अध्यक्ष राजनीति में भाग नहीं लेता।
8 लोकसभा के अध्यक्ष का निर्दलीय व्यक्ति होना चाहिये।
9 अवकाश ग्रहण करने वाले अध्यक्ष का निर्विरोध निर्वाचन होना चाहिये और जितनी बार वह चाहे उसे निर्वाचित किया जाना चाहिये।
10 लार्ड सभा का अधिवेशन जब न्यायालय के रूप में होता है तो केवल कानूनी लॉर्ड ही उपस्थित होते हैं।
11 प्रायः सभी राजकीय विशेषाधिकारों का प्रयोग मन्त्रियों द्वारा किया जाता है, आदि आदि।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि ब्रिटिश संविधान विभिन्न तत्वों से बना हुआ संविधान है। दूसरे शब्दों में ब्रिटिश संविधान के अनेक स्रोत है। वह किसी एक आलेख के रूप में नहीं है वरन् सैकड़ो आलेख उसमें शामिल है। ब्रिटिश संविधान के निर्माणात्मक तत्वों के विषय में विचार व्यक्त करते हुए ब्राइस ने ठीक ही कहा है कि, "लोगों की भावनाओं में अथवा लिखित रूप में विद्यमान प्राचीन उदाहरणों का समूह, वकीलों एवं राजनेताओं के कथन विविध प्रथायें रिवाज कल्पनायें, जिनका प्रभाव सरकार की कार्यप्रणाली पर पड़ता है तथा अनेक संसदीय कानून ब्रिटिश संविधान में सम्मिलित हैं।

ब्रिटिश संविधान का विकास
(Growth of the British Constitution)

ब्रिटिश संविधान क्रमिक विकास का परिणाम है। इसकी जड़े सदियों पुराने इतिहास में जमी हुई हैं। इसका जो रूप आज हमारे सामने उपस्थित है, वह किसी समय विशेष परिस्थितियों में नहीं बना है बल्कि इसका निर्माण शताब्दियों के अनुभव ने किया है। ब्रिटिश संविधान का विकास लोगों की राजनीतिक चेतना की पुकार के साथ साथ आवश्यकतानुसार धीरे धीरे हुआ है। परिवर्तन एकदम आकस्मिक नहीं हुए हैं बल्कि प्रत्येक नया कदम पुराने कदम का स्वाभाविक परिणाम रहा है। यह संविधान लगभग 1300 वर्ष पुराना है। इस संविधान के इतिहास का सार यह है कि निरंकुश राजतन्त्र को शान्तिपूर्ण ढंग से वैधानिक राजतन्त्र के रूप में रूपान्तरित कर दिया गया है।

ब्रिटिश संविधान का विकास कुछ मुख्य स्तरों को पार करते हुए हुआ है जिनका विवेचन निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है—

ऐंग्लो सेक्सन काल

ब्रिटेन का लिपिबद्ध इतिहास केल्ट जाति के समय से शुरू होता है जिसने ई. से लगभग 600 वर्ष पूर्व आक्रमण करके यहां कब्जा जमाया था। केल्ट जाति

की एक शाखा ब्रिटेन के नाम पर इस द्वीप का नाम भी ब्रिटेन पड गया। केल्ट जाति के बाद ब्रिटेन रोमन साम्राज्य के चगुल मे फस गया और तब पाचवी शताब्दी के उत्तराद्ध मे ऐग्लो सैक्सन जाति (Anglo Saxon Tribe) ने ब्रिटेन पर अधिकार जमा लिया। इस जाति का आधिपत्य लगभग 1066 तक रहा। ऑग और जिंक (Ogg and Zink) के अनुसार यही वह प्रथम काल था जिसे ब्रिटेन के राजनीतिक सस्थाओ के विकास का प्रारम्भ कहा जा सकता है। कम से कम दो सस्थायें इस युग की बहुत बडी देन है राजपद और स्थानीय स्वायत्त शासन।

राजपद का प्रादुर्भाव—राजपद ब्रिटिश सांविधानिक व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण बिन्दु है, जिस पर सम्पूर्ण ब्रिटिश सविधान केन्द्रित है। इस पद का प्रादुर्भाव ऐंग्लो-सैक्सन लोगो के समय सातवीं आठवी शताब्दी मे हुआ। उस समय ब्रिटेन मे छोटे छोटे कबीलें और समुदाय थे। शन शनै शक्तिशाली समुदायो ने निबल समुदायो पर विजय प्राप्त करना आरम्भ किया और ब्रिटेन मे राजकीय शासन की स्थापना हुई। अलग अलग राज्यो की स्थापना के बाद वेसेक्स (Wessex) राजघराने की सर्वोच्चता कायम हो गई और अल्फ्रेड (871 ई०) से लेकर नोर्मन विजय (1066 ई०) तक वस्तुत पूरे इगलैड पर इसी का शासन रहा।

ऐंग्लो-सैक्सन कालीन राजा का पद कभी परम्परागत होता था और कभी निर्वाचित। इस समय राजा का रूप यद्यपि निरकुश हो गया था तथापि उसकी स्वेच्छाचारिता पर विटनजमोट (Witenagemot) अर्थात् बुद्धिमानो की सभा का बडा अकुश था। यह राजा की एक प्रकार की परामर्श-दात्री समिति थी जिसके पास इतनी शक्ति थी कि वह राजा को गद्दी से उतार सकते थे और नया राजा चुन सकते थे। शासन प्रबन्ध मे इसका पूरा अधिकार था। वास्तव मे यह भ्रूणावस्था में आधुनिक ससद (Parliament) थी। यह सभा प्राय अपना अधिकारो का उपयोग नही करती थी और राजा का व्यक्तित्व ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण समझा जाता था। कालान्तर मे जैसे जसे शक्तिशाली राजा आते गये, विटनेजमोट की शक्ति घटती गई। राजाओ ने इसमें अपने मित्रो का भरना शुरू कर दिया और यह राजा की हा मे हा मिलाने वाली सस्था मात्र रह गई।

स्थानीय स्वशासन—सांविधानिक दृष्टिकोण से इस काल की दूसरी महत्व पूर्ण सफलता स्थानीय स्वशासन की स्थापना है। इस समय सम्पूर्ण देश शायरो (Shires) मे विभक्त था। शायर स्थानीय शासन की सर्वोच्च इकाई थी। ये शायर ही आधुनिक काउण्टियो (Counties) की जन्मदात्री हैं। शायर हन्डरड (Hundred) नामक उप प्रदेशो मे विभक्त थे। एक हन्डरेड मे अनेक ग्राम सम्मिलित होते थे। हन्डरड गावो व शहरो मे विभक्त थे। प्रत्येक गाव अथवा शहर मे एक टाउनशिप (Township) होती थी जो स्थानीय शासन की सबसे नीचे की इकाई थी। ये सभी इकाइया प्रशासनिक और न्यायिक दोनो ही काय करती थी।

नॉर्मन एन्जीवन काल

सन् 1066 तक ऐंग्लो सैक्सन जाति का ब्रिटेन में प्रभुत्व रहा, परन्तु इस वर्ष नॉर्मन (Norman) देश के विलियम ग्राफ नोरमंडी (William of Normandy) ने आक्रमण करके ब्रिटेन मे नॉमन राज्य की स्थापना की। इस विजय के साथ ही ब्रिटिश सांविधानिक विकास का एक नया युग शुरू हुआ।

सामन्तशाही की स्थापना—विलियम ने शासन की सुविधा और जनता की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए देश मे सामन्तिक शासन की स्थापना की। सम्पूर्ण देश सामन्तिय इकाइयो में बाट दिया गया। प्रत्येक इकाई एक बैरन (Baron) के आधीन रखी गई जो अपने यहा सेना रखता था और आवश्यकतानुसार राजा की सहायता करता था। विलियम ने विटनेजमोट (Witenagemot) को समाप्त कर दिया। उसके स्थान पर एक महान् परिषद अथवा उच्च स्तरीय समिति (Great Council) की स्थापना की जिसमे बरन और राज्य के बड़े बड़े पदाधिकारी बुलाये जाते थे। इस महान् परिषद् को मग्नम कान्सीलियम (Magnum Concilium) भी कहा जाता था। इस परिषद् का काम राजकीय मालगुजारी को इकट्ठा करना व उसका हिसाब रखना था। समिति की बैठक वर्ष मे 3 बार होती थी। वर्तमान चासलर ग्रोफ दी एक्सचैकर (Chancellor of the Exchequer) की उत्पत्ति यहीं से होती है। महान् परिषद् या मग्नम कौंसीलियम के भी वही काय थे जो इसकी पूर्वगामी संस्था विटनेजमोट के थे, किन्तु चूंकि राजा की शक्तियां बढ़ गई थीं, अतः महान परिषद की शक्तियां विटनेजमोट की तुलना मे कम हो गई। विलियम ने एक अन्तरिम समिति जिसको 'क्यूरिया रेजिस (Curia Regis) कहा जाता था, की भी स्थापना की। इसमे राज्य के स्थायी अधिकारी होते थे और यह समिति स्थायी होती थी।

मंत्री मंडल एवं सीमित राजतन्त्र का सूत्रपात—प्रारम्भ में उपर्युक्त दोनों संस्थाओं (Magnum Concilium and Curia Regis) का क्षेत्राधिकार निश्चित न था। राजा जिनसे चाहता परामर्श ले सकता था और किसी का भी परामर्श मानना उसे बाध्य न था। फिर भी प्रायः प्रशासकीय और दैनिक कार्य सम्बन्धी मामलों में क्यूरिया रेजिस तथा गम्भीर विषयों और नीति के सम्बन्ध में मग्नम कौंसीलियम अथवा महान परिषद् से सलाह ली जाती थी। धीरे धीरे क्यूरिया रेजिस बहुत उपयोगी संस्था हो गई और उसका अधिवेशन भी प्रायः नियमित होने लगा। बाद में क्यूरिया रेजिस के कुछ विभाग जैसे विभिन्न कार्यों का संचालन और पृथक संस्थाओं के रूप में परिणत हो गए। क्यूरिया रेजिस में से ही एक छोटी सलाहकार समिति की उत्पत्ति हुई जिसे 'प्रिवी कौंसिल' (Privy Council) कहा गया। 17 वीं और 18 वीं शताब्दी में प्रिवी कौंसिल से 'कौंसिल आफ मिनिस्टर्स' (Council of Ministers) की तथा कौंसिल आफ मिनिस्टर्स से कैबिनेट (Cabinet) की उत्पत्ति हुई। ये तीनों ... अर्थात् प्रिवी कौंसिल, कौंसिल आफ मिनिस्टर्स तथा कैबिनेट आज भी

विद्यमान हैं। इसी प्रकार महान् परिषद् (Magnum Concilium) से संसद के द्वितीय भवन "हाउस आफ लॉर्ड्स" (House of Lords) का विकास हुआ। मुनरो और इयर्स्ट (Munro and Ayearst) ने ठीक ही लिखा है कि अत्यन्त प्रारम्भिक रूप में हम मैग्नम कौंसीलियम में आधुनिक पार्लियामेंट का और क्यूरिया रेजिस में आधुनिक कैबीनेट का स्वरूप देख सकते हैं।

नोमन कालीन शासन व्यवस्था में बाद में हेनरी द्वितीय ने परिष्कार किया। उसने क्यूरिया रेजिस के न्याय सम्बन्धी और प्रशासन सम्बन्धी कार्यों में भिन्नता की। महान परिषद् की अधिक बैठकें बुलाकर और उसको निर्णय के लिए प्रायः सभी मामलों को सौंपकर उसे संसद की संस्था बनाया। उसने चल न्यायाधीशों की व्यवस्था की जिससे सब लोगों व स्थानों के लिये सामान्य कानून के विकसित होने में सहायता मिली।

सन् 1196 से 1216 तक ब्रिटेन में एक बहुत ही अत्याचारी राजा हुआ जिसका नाम जॉन था। उसके अत्याचारों से तंग आकर बड़े बड़े बरन उसके विरुद्ध हो गये। उन्होंने उसे गृह युद्ध की धमकी दी। अन्त में जॉन को झुकना पड़ा और उनकी उन मांगों को स्वीकार करना पड़ा जो उन्होंने मैगनाकार्टा (Megna Carta, 1215) नामक प्रपत्र में प्रस्तुत की। इस प्रपत्र अथवा अधिकार पत्र को ब्रिटेन के वैधानिक इतिहास में एक महान् सीमा चिन्ह माना गया है। इस महान् अधिकार पत्र के मुख्य प्रबन्ध निम्न थे—

1 महान् परिषद् अर्थात् मग्नम कौंसीलियम की सम्मति पर ही राजा सामन्तों पर करारोपण करे।

2 किसी नागरिक को उस समय तक बन्दी न बनाया जाए और न ही उसको निर्वासित किया जाए जब तक उसका अपराध सिद्ध न हो जाए।

3 किसी व्यक्ति को उसकी स्थिति एवं अपराध की मात्रा के अनुरूप ही अर्थ दण्ड दिया जाए। यह अर्थ-दण्ड नितान्त स्वेच्छाचारी नहीं होना चाहिए।

4 'कोर्ट आफ कामन प्ली' (Court of Common Plea) एक सुनिश्चित स्थान पर कार्य करे, राजा के साथ ये स्थान स्थान पर दौरे न किया करे।

5 राजा चर्च के संगठन और उसके अधिकारियों की नियुक्ति में हस्तक्षेप न करे।

6 प्रभावशाली सामन्तों और पादरियों को महान् परिषद् में अवश्य निमन्त्रित किया जाए।

7 विदेशी व्यापारियों के देश में स्वातन्त्र्य विचरण का केवल युद्ध काल में ही प्रतिबन्ध हो, अन्यथा उन्हें स्वतन्त्रतापूर्वक देश में आने-जाने की आज्ञा हो।

8 सम्पूर्ण राज्य में तौल के एक ही पैमानों का प्रयोग किया जाए।

मैगनाकार्टा ने इस मौलिक तथ्य की सृष्टि की कि राजा को कुछ मूलभूत विधियों के अधीन रहना चाहिये और यदि वह उनका उल्लंघन करे तो जनता को अधिकार है कि वह राजा को उन विधियों को मानने के लिए बाध्य करे। मॉग

श्रोर जिंक (Ogg and Zink) के अनुसार "इसके द्वारा सामन्तों ने राजा पर यह प्रतिबन्ध लगाकर कि वह अमुक कार्य करे और अमुक नहीं, देश की निरंकुशवाद की ओर प्रवाहित होती हुई धारा को जनतन्त्र की दिशा में मोड़ दिया।

संसद का सूत्रपात—मग्नाकार्टा ने यद्यपि प्रतिनिधित्व के प्रश्न को नहीं उठाया किन्तु इसके बाद आंशिक रूप में यह सिद्धांत प्रचलन में आ गया। इसी के साथ-साथ आधुनिक संसद (Modern Parliament) के बीज ब्रिटिश संविधान में दृष्टिगोचर होने लगे। हेनरी तृतीय के समय महान परिषद् (Magnum Concilium) को आधुनिक संसदीय व्यवस्था की दिशा में आगे बढ़ने का अवसर मिला। अभी तक महान परिषद में केवल बिशप बैरन, राज्य के उच्चाधिकारी आदि ही सम्मिलित होते थे, परन्तु अब इसमें प्रजा के प्रतिनिधियों की वृद्धि हुई। बिशप तथा बैरनों के साथ साथ प्रत्येक शायर से 22 उपाधि प्राप्त व्यक्ति (Knights) तथा प्रत्येक नगरों (Borough) से 22 स्वतन्त्र नागरिक बुलाये गए। इस प्रकार बड़े-बड़े लोगों के साथ साथ छोटे छोटे लोगों का भी महान परिषद में आना प्रारम्भ हुआ और वर्तमान लोकसभा की नींव पड़ी। संसद का यह अधिवेशन 1265 में बुलाया गया।

सन् 1274 ई० में एडवर्ड प्रथम सिंहासन पर बैठा। सन् 1275 में संसद ने वेस्ट मिनिस्टर का प्रथम विधान (First Statute of West Minister) पारित किया जिसमें भूमि कर निश्चित किया गया तथा निर्वाचन व्यवस्था स्वीकृत की गई। सन् 1278 में ग्लौसेस्टर का विधान (Statute of Gloucestar) पारित हुआ। इसके अन्तर्गत यह व्यवस्था की गई कि किस प्रकार भूमिपति किस अधिकार और भूमि का प्रयोग करते रहे हैं। सन् 1279 में पादरियों के अधिकार सीमित कर दिये गए। सन् 1285 ई० में वेस्ट मिन्स्टर का द्वितीय विधान (Second Statute of West Minister) पारित हुआ, जिसके अनुसार मृत्यु के बाद स्वतन्त्र नागरिकों की भूमि उनके ज्येष्ठ पुत्रों को दिये जाने की व्यवस्था हुई।

सन् 1295 में एडवर्ड प्रथम ने एक संसद (Parliament) बुलाई जिसका नाम आदर्श संसद (Modern Parliament) रखा गया। इस आयोजन से अंग्रेजी संसद का विकास एक और चरण आगे बढ़ा। इस संसद में शायरों और बारों (Shires and Boroughs) के 172 बैरनों, क्लर्जियों, बिशपों आदि के 400 प्रतिनिधि थे। इस आदर्श संसद में वास्तव में जनता के प्रतिनिधि अधिक संख्या में सम्मिलित हुए और शनैः शनैः इन जन प्रतिनिधियों की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती गई और अन्त में यह ब्रिटिश शासन व्यवस्था का एक स्थायी तथा अनिवार्य अंग बन गई।

यह ध्यान रखने योग्य बात है कि प्रारम्भ में आदर्श संसद (Modern Parliament) की बैठक एक सदन के रूप में हुई जिसमें तीन अलग अलग समूह थे—प्रथम समूह ऊंचे लोगों का था जिन्हें नोबल (Noble) कहा जाता था, दूसरा समूह

कार्जी लोगो का था और तीसरा समूह साधारण लोगो का। कालान्तर म व्यावहारिक स्वाथ ने इन ससद सदस्यो को दो समूहो मे बाट दिया। समान हिता के कारण एक ओर उच्चकोटि के सामन्त तथा पादरी और दूसरी ओर निम्नकोटि के सामन्त और नागरिक (Commoner) एक साथ मिल गये। दोना समूहो की अलग-अलग बैठक होने लगी। प्रथम वग के लोगो की सभा का नाम लाड सभा (House of Lords) तथा दूसरे वग के लोगो की सभा का नाम लोक सभा (House of Commons) पडा। इस प्रकार द्विसदनीय ससद का प्रादुर्भाव हुआ। यह द्विसदनात्मक व्यवस्था सन् 1295 के बाद लगभग 100 वर्षो मे पूण हुई।

ससद की शक्तिया धीरे 2 बढती गई। प्रारम्भ मे राजा का खर्चा माल गुजारी से चल जाता था, परन्तु युद्धो के कारण उसकी धन सम्बन्धी आवश्यकता दिन पर दिन बढती गई और उसे ससद को बार बार करो की स्वीकृति के लिए बुलाना पडा। सन् 1340–41 मे एडवड तृतीय को ससद ने अन्य करो की स्वीकृति उस समय प्रदान की जब उसने निम्नलिखित शर्तों को स्वीकार कर लिया –

(1) राजा ससद की स्वीकृति के बिना कोई नये कर नही लगायेगा।

(2) ससद हिसाब-किताब का निरीक्षण करने के लिए एक आयोग की नियुक्ति कर सकेगी।

(3) राजा के मन्त्रियो की नियुक्ति ससद द्वारा की जाएगी।

(4) ससद के नये अधिवेशन के आरम्भ होने से पूव मन्त्री राजा के समक्ष अपना त्याग पत्र प्रस्तुत करेंगे और अपने विरुद्ध की हुई शिकायतो का ससद को उत्तर देंगे।

इस प्रकार इस युग मे ससद को मन्त्रियो तथा वित्त पर नियन्त्रण रखने का अधिकार प्राप्त हो गया। किन्तु अभी भी ससद की शक्ति अधिक नही हो पाई थी क्योकि उसका बुलाना, उसे विसर्जित करना आदि काम राजा के ही हाथ म था। इसके अतिरिक्त उसे विधि-निर्माण सम्बन्धी कोई अधिकार न थे तथा लोक सभा को वित्त के ऊपर कोई अधिकार प्राप्त न थे।

प्लान्टेगनेट व लकास्ट्रीयन

ससद की शक्ति का उत्तरोत्तर विकास होता गया। प्लान्टेगनट वश के राज्य काल मे जो 1154 से 1399 तक रहा इसकी शक्ति से बहुत वृद्धि हुई। इगलैंड के इतिहास मे सवप्रथम सन् 1327 मे ससद ने एडवड द्वितीय को सिंहासन से च्युत कर दिया। रिचड द्वितीय को भी ससद के सामने झुकना पडा और ससद ने लका स्ट्रीयन वश के राजा हैनरी को इगलैंड के राजसिंहासन पर बिठा दिया।

सन् 1399 स 1485 तक लकास्ट्रीयन (Lancaster) वश के हाथ म शासन की सत्ता रही। उस समय ससद को पर्याप्त अधिकार मिले जिनम से मुख्य निम्न हैं—

(1) हैनरी चतुथ ने अपने चुने हुए मन्त्रियो के मन्त्री मण्डल का प्रिवी कौंसिल (Privy council) का नाम दिया जो अब तक चला आ रहा है।

(2) सन् 1401 में लोकसभा ने राजा को यह स्वीकार करने के लिए बाध्य किया कि नवीन करों की स्वीकृति देने के पूर्व राजा को जनता की शिकायतों का निवारण करना चाहिये। बाद में यह परिपाटी अपनाई गई और नये करों की स्वीकृति उस समय दी जाने लगी जब राजा जनता की शिकायतों को दूर करने का वचन दे देता था।

(3) सन् 1407 में लोक सभा को स्वयं वित्त विधेयक आरम्भ करने का अधिकार प्राप्त हुआ, हालांकि इस सम्बन्ध में पूर्ण शक्ति उसे 1911 के अधिनियम के बाद ही मिल सकी।

किन्तु यह सब कुछ होते हुए भी संसद अपनी शक्ति को संगठित नहीं कर सकी। इसी मध्य 'गुलाबों के युद्ध' (War of Roses) शुरू हो गये और लोग परेशान हो कर यह चाहने लगे कि ऐसा राज्य पुनः अस्तित्व में आये जिस पर संसद का कोई नियन्त्रण न हो।

ट्यूडर काल

सन् 1485 में ट्यूडर राजाओं की निरंकुश सत्ता स्थापित हो गई। ट्यूडर वंश का राज्य 1903 ई० तक चला। ट्यूडर सम्राटों ने देश में निरपेक्ष राजतन्त्र की स्थापना की। इस वंश के शासन काल में संसद की शक्ति को बड़ा आघात पहुंचा। जनता ने ट्यूडर शासकों की निरंकुशता को प्रसन्नतापूर्वक इसलिए स्वीकार किया क्योंकि उन्होंने देश में सुख, शान्ति और समृद्धि स्थापित की तथा बैरनों (Barons) की शक्ति को क्षीण कर दिया। ट्यूडर राजाओं ने विपुल धनराशि एकत्रित कर ली, अतः उन्हें संसद का बुलाने की आवश्यकता ही नहीं हुई। यद्यपि ट्यूडर सम्राटों ने संसद को अपनी स्वामिनी नहीं होने दिया, तथापि उसकी सदस्य संख्या में वृद्धि की और प्रतिनिधित्व के सिद्धान्तों को भी निर्धारित किया। ऐलिजाबेथ प्रथम ने महत्वपूर्ण विषयों पर संसद की राय से काम करना शुरू किया। इस प्रकार यह स्थिति आ गई जिसमें इंगलैण्ड के शासन अधिकार संसद सहित राजा में निहित हो गये और दोनों में सहयोग चलने लगा। ट्यूडर काल में एक महत्वपूर्ण बात यह रही कि राजकीय शक्ति पोप के नियन्त्रण से मुक्त हो गई।

स्टूअर्ट काल

स्टूअर्ट राजाओं ने 1603 से 1714 ई० तक राज्य किया। इस अवधि में राजा और संसद एक दूसरे के विरोधी थे। ब्रिटेन में यह मांग की जाने लगी कि राजाओं की शक्ति को मर्यादित करके ब्रिटेन में वैधानिक राजतन्त्र स्थापित किया जाय। स्टूअर्ट काल में संसदीय लोकतन्त्र की आधार शिला बहुत कुछ रख दी गई। इसी अवधि में 1688 की गौरवपूर्ण क्रान्ति (Glorious Revolution) हुई। इस क्रान्ति में जेम्स विलियम और मेरी को संयुक्त शासक घोषित किया गया। ब्रिटेन में निरंकुश राज्य समाप्त हो गया और संसद की प्रभुता स्थापित हो गई। राजा को कानून के अधीन कर दिया गया।

स्टुअर्ट काल (Stuart Period) में जो प्रमुख क्रान्तिकारी सांविधानिक परिवर्तन हुए और संसद शक्ति विकास की जिन अत्यन्त ऊंची सीढ़ियों पर चढ़ी—उनका संक्षेप में इस प्रकार उल्लेख किया जा सकता है—

1. सर्वप्रथम 1628 में संसद चार्ल्स प्रथम से उस विख्यात "अधिकार याचना पत्र" (Petition of Rights) पर हस्ताक्षर कराने में सफल हुई जिसके अनुसार यह निश्चित हुआ कि—

(क) संसद की स्वीकृति के बिना राजा नये कर न लगाये,

(ख) संसद की पूर्व स्वीकृति के बिना राजा कोई धन उधार न ले,

(ग) राजा बिना कोई निश्चित कारण बताये हुए ही किसी व्यक्ति को बन्दी न बनाये, एवं

(घ) राजा शांतिकाल में युद्ध सम्बन्धी कोई कानून लागू न करे।

2 सन् 1679 में "बन्दी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम" (Habeas Corpus Act) बनाया गया। यह निश्चित किया गया कि राजा जिन लोगों को बन्दी बनायेगा, उन पर तुरन्त ही न्यायालयों में अभियोग चलायेगा।

3 सन् 1689 में संसद द्वारा अधिकार-पत्र (Bill of Rights) पर विलियम और मेरी के हस्ताक्षर कराये गये। इसके अनुसार यह निश्चित किया गया कि—

(क) राजा संसद की पूर्व स्वीकृति के बिना कोई नवीन कर नहीं लगायगा।

(ख) राजा को वर्ष में कम से कम एक बार संसद की बैठक अवश्य बुलानी होगी।

(ग) राजा संसद की पूर्व स्वीकृति के बिना कोई सेना नहीं रख सकेगा।

(घ) अपने स्वार्थ के लिए न्याय कार्य पर प्रभाव डालने के लिए राजा उच्चायुक्त जैसे नवीन न्यायालयों की स्थापना न कर सकेगा।

(ङ) संसद के सदस्यों को भाषण की स्वतन्त्रता का अधिकार होगा।

4 सन् 1701 में संसद ने समझौते का अधिनियम (Act of Settlement) पास किया। यह निश्चय हुआ कि रानी ऐन की मृत्यु के उपरान्त यदि कोई उत्तराधिकारी राज्य का न हो तो हैनोवर वंश की राजकुमारी सोफिया और उसके उत्तराधिकारी इंगलैंड के राजसिंहासन पर आसीन होंगे। इसके अतिरिक्त इस एक्ट द्वारा अंग्रेजी जनता के धर्म, न्याय और स्वतन्त्रता की रक्षा का आयोजन किया गया। इस सम्बन्ध में तीन धारायें विशेष प्रसिद्ध हैं—

(i) इंगलैंड में राजा को इंगलैंड के चर्च का अनुयायी होना होगा।

(ii) राजा किसी ऐसे देश की रक्षा के लिए संसद का धन व्यय नहीं करेगा जो देश इंगलैंड के अधीन न हो। उसे ऐसा करने के लिए संसद की स्वीकृति प्राप्त करना अनिवार्य होगा।

(iii) राजा संसद की अनुमति प्राप्त किए बिना ग्रेट ब्रिटेन की सीमा से बाहर नहीं जायगा।

5 विलियम और मेरी के शासनकाल के समाप्त होने से पहिले ही द्विन्दल प्रथा (Two party System) प्रारम्भ हो गई। इसकी उत्पत्ति सन् 1679 81 में हुई। चूंकि चार्ल्स द्वितीय के कोई सन्तान न थी, अत उत्तराधिकारी का प्रश्न उठा। संसद यह नहीं चाहती थी कि चार्ल्स द्वितीय का भाई जेम्स द्वितीय राज्य सिंहासन का उत्तराधिकारी हो क्योंकि वह पक्का कैथोलिक था। इसलिए संसद में बहिष्कार विधेयक (Exclusion Bill) रखा गया जिसके अनुसार जेम्स द्वितीय को चार्ल्स के बाद सिंहासन से वंचित रखना था। विधेयक पर बड़ा मतभेद रहा और संसद ह्विग्ज (Whigs) व टोरी (Tories) लोगों के दो दलों में विभक्त हो गई। ह्विग्ज लोग विधेयक के पक्ष में थे जबकि टोरी लोग विपक्ष में। जिस प्रश्न को लेकर मत भेद पैदा हुआ था वह तो शीघ्र ही हल हो गया लेकिन इन दोनों दलों ने परस्पर विरोधी राजनीतिक दलों का रूप ले लिया। इसी समय से ब्रिटेन में द्वि दल प्रणाली का प्रारम्भ हुआ। वर्तमानकाल में ह्विग्ज लिबरल (Liberals) और टोरी और कंजर्वेटिव (Conservatives) कहलाते थे।

6 सन् 1693 में राजा विलियम ने संसद के बहुमत वाले दल में से अपने मन्त्री मण्डल का निर्माण किया। इस मन्त्री मण्डल को उसने जुन्टा (Junta) कह कर पुकारा। तभी से यह प्रथा चल पड़ी कि मन्त्री मण्डल सदैव उसी दल का होगा जिसका संसद में बहुमत हो। इस प्रकार कैबीनेट (Cabinet) का प्रारम्भ हुआ।

7 सन् 1689 में सेना अधिनियम (Army Act) और सन् 1694 में त्रैवार्षिक अधिनियम (Triennial Act) पास हुए। प्रथम के अनुसार सैनिकों का एक वर्ष के लिए भर्ती किया जाना निश्चित हुआ जिससे राजा के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह प्रति वर्ष संसद की बैठक बुलाये। द्वितीय के अनुसार संसद की अवधि तीन साल के लिए निश्चित कर दी गई। थोड़े ही समय बाद सप्तवर्षीय अधिनियम (Septennial Act) पारित हुआ जिससे संसद का कार्यकाल सात वर्ष कर दिया गया।

8 सन् 1707 में स्काटलैंड का संयोग अधिनियम (Act of Union with Scotland) भी पास हो गया जिसके अनुसार वहां से भी लार्ड सभा और लोक सभा में क्रमश 16 और 45 सदस्य भेजने की अनुमति मिल गई।

अंतिम चरण

ब्रिटिश संविधान के अन्तिम चरण का प्रारम्भ हम सन 1714 से मान सकते हैं जब हैनोवर वंश के जार्ज प्रथम को राज गद्दी मिली और तत्पश्चात् संसद की सदैव के लिए सर्वोच्चता स्थापित हो गयी। इस शक्ति वृद्धि के दो प्रमुख कारण थे—

(1) प्रथम तो संसद के द्वारा ही सन् 1701 के समझौते अधिनियम (Act of Settlement) के अनुसार वह राजा बनाया गया। इस परिस्थिति में उसे संसद के प्रति कृतज्ञ होना पड़ा।

(ii) दूसरे अंग्रेजी न जानने के कारण उसे प्रत्येक बात के लिए संसद पर ही निर्भर रहना पड़ा।

कैबीनेट का विकास अथवा प्रधान मन्त्री द्वारा मन्त्री मंडल की अध्यक्षता का सूत्रपात—चूंकि हैनोवर राजा अंग्रेजी नहीं जानते थे, इसलिए उन्होंने संसद व मन्त्री-मंडल को स्वेच्छानुसार व्यवहार करने के लिए छोड़ दिया। उन्होंने मन्त्री मंडल की बैठकों में सम्मिलित होना और उसका सभापतित्व करना भी त्याग दिया। उनके स्थान की पूर्ति मन्त्रियों में से ही एक ने प्रारम्भ कर दी और वह मन्त्री प्रधानमन्त्री कहलाया। इस प्रकार मन्त्री मंडलीय (Cabinet) प्रणाली द्वारा, जिसमें एक प्रधान मन्त्री और अन्य मन्त्री हों, शासन का कार्य करने की प्रथा ने बल पकड़ा। राजाओं के असाधारण अधिकार धीरे धीरे उनके हाथों से निकल कर मन्त्रियों और संसद के हाथ में आने लगे। राजा वास्तविक शासक न रहा, वह सांविधानिक प्रधान बन गया।

मताधिकार एवं लोकसभा की शक्तियों का विस्तार—हैनोवर वंश के प्रारम्भ होते ही संसद के अधिकारों में वृद्धि अवश्य हुई फिर भी आन्तरिक रूप में वह शक्तिशाली न थी क्योंकि वह जनता के एक अत्यन्त छोटे भाग का प्रतिनिधित्व करती थी। वास्तव में 1714 के पश्चात् का इतिहास मताधिकार और लोकसभा की शक्तियों के विस्तार का इतिहास रहा। संसद ने अपनी शक्ति वृद्धि के लिए अनेक सुधार अधिनियम पारित किए जिनमें से प्रमुख ये हैं—

(1) सन 1716 में सप्तवर्षीय अधिनियम (Septennial Act) द्वारा लोकसभा की अवधि तीन वर्ष से सात वर्ष कर दी गई।

(2) 1732 के अधिनियम द्वारा संसद में मध्यम श्रेणी के लोगों के प्रतिनिधियों का आना प्रारम्भ हुआ।

(3) 1835 में संसद ने म्युनिसिपल कारपोरेशन अधिनियम पारित किया जिसके अनुसार स्थानीय संस्थाओं में जनता के प्रतिनिधियों की संख्या में वृद्धि हुई।

(4) सन 1837 के सुधार नियम द्वारा मध्यम वर्ग के अतिरिक्त अन्य दस्तकारों और शहर के मजदूरों को भी मतदान का अधिकार मिला।

(5) सन 1884 के सुधार अधिनियम द्वारा खेतीहर मजदूरों को मताधिकार मिल गया।

(6) सन् 1888 का स्थानीय सरकारी अधिनियम (Local Government Act) द्वारा काउण्टी कौंसिलों की स्थापना हुई जिनमें कि जनता के चुने हुए प्रतिनिधि होते थे।

(7) 1894 के स्थानीय सरकारी अधिनियम द्वारा प्रशासकीय काउण्टी प्रदेशों को शहरी और देहाती जिलों में बांट दिया गया और इस बात की व्यवस्था की गई कि उनकी समितियां निर्वाचित हों।

(8) सन् 1911 का संसदीय अधिनियम (Parliament Act) पारित हुआ जिसके अनुसार वित्त विधेयकों पर लोकसभा का एकाधिकार स्थापित हुआ और लार्ड

सभा को केवल यह अधिकार दिया गया कि वह ऐसे विधेयकों को केवल दो वर्ष तक के लिए निलम्बित कर सके। सन् 1949 में श्रम दल की सरकार ने उसकी शक्ति पर और भी अधिक प्रतिबंध लगा दिये। इन दोनों अधिनियमों ने लोकसभा की शक्ति में इतनी अभिवृद्धि कर दी कि वह संसार की जनतन्त्रात्मक निकायों में सर्वोपरि हो गई।

(9) सन् 1918 के अधिनियम द्वारा तीस वर्ष से अधिक आयु की स्त्रियों को भी मताधिकार प्राप्त हुआ।

(10) सन् 1928 के अधिनियम के अनुसार 21 वर्ष से अधिक आयु वाले स्त्री पुरुषों को मताधिकार मिला।

(11) वेस्ट मिनस्टर का महत्वपूर्ण कानून बना, जिसके द्वारा राजा और उपनिवेशों के पारस्परिक सम्बन्धों का निर्णय किया गया।

उपरोक्त विवरण लगभग 1300 वर्ष पुराने ब्रिटिश संविधान के विकास की केवल मात्र संक्षिप्त रूपरेखा ही प्रस्तुत करते हैं, किन्तु इनसे यह स्पष्ट है कि विश्व के अन्य किसी भी देश में ऐसा राजनीतिक विकास नहीं हुआ जो इतने लम्बे समय तक निरन्तर चलता रहा हो। ब्रिटिश संविधान में अनेक परिवर्तन हुए हैं और आज भी हो रहे हैं। विकास का क्रम रुका नहीं है, वह गतिशील है।

ब्रिटिश संविधान का स्वरूप अथवा उसकी विशेषतायें
(The Nature or Salient features of the British Constitution)

ब्रिटिश संविधान की कुछ निराली विशेषतायें हैं। यह विश्व में सबसे प्राचीन है और अनेक राजनीतिक प्रथायें इसकी निराली हैं। इसके द्वारा अनेक प्रकार से राजनीति के क्षेत्र में विश्व का पथ प्रदर्शन हुआ। आज के अधिकांश संविधान बहुत कुछ ब्रिटिश संविधान की ही नकल है। सब शक्तिशाली संसद, उत्तरदायी मन्त्रि मण्डल, द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका, संविधानिक न्यायपालिका, कानून का शासन, स्वायत्त शासन आदि ब्रिटिश साविधानिक परम्परा की देन है। मुनरो ने ब्रिटिश संविधान को 'मातृ संविधान" (Mother Constitution) और ब्रिटिश संसद को "मातृ संसद" (Mother Parliament) ठीक ही कहा है।

ब्रिटिश संविधान के स्वरूप और उसकी विशेषताओं का विश्लेषण हम निम्नलिखित शीर्षकों में कर सकते हैं —

(1) अनुभव-जनित संविधान—ब्रिटिश संविधान जनता के अनुभव से प्रादुर्भूत हुआ है। ब्रिटिश जनता ने अपने अनुभव से आवश्यकता और परिस्थितियों के अनुसार इसे परिवर्तित किया है। जनता के अनुभव के आधार पर उसमें जोड़ और घटाव होते रहे हैं। इसीलिये इसे 'अवसर और बुद्धि की सन्तान' कहा गया है। "यह जनसमुदाय का एक ऐसा भवन है जिसमें एक के बाद दूसरे अधिकारियों ने अपनी सुविधा और समय की परिस्थिति के अनुसार सुधार करने के लिए सदा पतिया, सिढ़ियों, बरामदों और स्तम्भों के रूप में योग दिया है।" आग और ब्रिंक ने ठीक

ही लिखा है कि "ब्रिटिश सविधान "सिद्धान्तो और आचरणो का एक समूह है जो एक सहस्र वर्ष के इतिहास का निरीक्षण करने पर ही एकत्र किये जा सके हैं।"

(2) अलिखित सविधान —ब्रिटिश सविधान की दूसरी विशेषता उसका अलिखित होना है। पर जैसा कि कहा जा चुका है, इसका अभिप्राय यह नही है कि कोई लिखित कानून ब्रिटिश सविधान का अ ग है ही नही। इसका आशय केवल यह है कि ब्रिटिश सविधान अ शत लिखित (Partly written) और बहुत कुछ अलिखित (Mostly unwritten) है। यह कोई पूर्व निश्चित व्यवस्था नही है जिसके अनुसार शासन का सचालन होना चाहिए। इसका जान बूझ कर कभी निर्माण नही किया गया है। इसका विकास धीरे धीरे शताब्दियो मे हुआ है। इसके लिखित भाग म वे सब कानून हैं जिन्हे ससद ने समय समय पर बनाया है जैसे 1215 का मगनाकार्टा 1628 का पिटिशन आफ राइट्स, 1911 व 1949 के ससदीय कानून आदि। इस सविधान के अलिखित भाग मे उन साविधानिक परम्पराओ या अभिसमयो का स्थान है जो लिखित न होने पर भी लिखित कानून के समान ही मान्य है। इस प्रकार यह सविधान लिखित कानूनो और अलिखित प्रथाओ व परम्पराओ का मिश्रण है।

(3) विकसित सविधान —ब्रिटिश सविधान एक विकसित सविधान है जिसने अपना वर्तमान स्वरूप युगो के विकास के बाद प्राप्त किया है। विचित्रता यह है कि इसका विकास एक ओर तो बिना पूर्व योजना के अवसर और आवश्यकतानुकूल हुआ है तथा दूसरी ओर नियोजित ढग से भी। उदाहरणार्थ, ससदीय कानून जहा सुनियोजित व्यवस्थापन द्वारा अस्तित्व म आये हैं वहा साविधानिक परम्परायें अथवा अभिसमय या रूढिया परिस्थितियो की उपज हैं। फिर भी यह अवश्य है कि ब्रिटिश सविधान की योजना का तत्व सुविचारित न हो कर अधिकाशत अस्त-व्यस्त सा है। इसमे जोड और घटाव होते रह है। "यह एक ऐसा ढाचा है जिसके मालिको ने समय समय पर इसम खम्भे, गोखे बरण्डे, आदि जोडे हैं, जैसी उनम आवश्यकतायें प्रतीत होती गई।' अनेक बार तो पुरानी बातो का समाधान किये बिना ही नई बातो की व्यवस्था कर दी गई है। इसी कारण इस सविधान म अनेक असगतियां देखने को मिलती हैं। वास्तव म ब्रिटिश सविधान एक बहुत पुरानी इमारत के समान है जिसमे समयानुकूल परिवर्तन होते रहे हैं और जो अब वर्तमान की आवश्यकताओ के अनुकूल परिवर्तित कर ली गई हैं।

ब्रिटिश सविधान के धीरे धीरे विकसित होने के कुछ विशेष कारण रहे है। सर्वप्रथम तो अ ग्रेजो का स्वभाव अधिकाशत रूढिवादी है। वे ज्यादातर उन्हीं आवश्यक परिवर्तनो को स्वीकार करते हैं जिनसे अधिक से अधिक परम्परागत सस्थाओ की रक्षा की जा सके। दूसरे, अ ग्रेज लोग सिद्धान्तवादी कम और व्यवहारवादी अधिक होते है। सिद्धान्तो की उपयोगिता को व्यावहारिकता की कसौटी पर, कस कर वे सन्तुलन और बुद्धिमत्ता से काम लेते हैं। इस प्रकार आकस्मिक परिवर्तनो

का खतरा मोल लेना वे अधिकतर पसन्द नहीं करते। इतिहास बताता है कि ब्रिटेन में क्रांति द्वारा परिवर्तनों की तुलना में विकास द्वारा परिवर्तनों को ही अधिक पसन्द किया गया है।

ब्रिटिश संविधान के विकासशील होने से कुछ निश्चित लाभ मिले हैं। इसी कारण ब्रिटिश संविधान प्रगतिशील रह सका है। इसी कारण नई परिस्थितियों से समझौता करके आवश्यकतानुरूप वह अपना स्वरूप बदलता रहा है। ऊपर से ब्रिटिश संविधान पूर्ववत् प्रतीत होता है पर आन्तरिक भावना में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो चुके हैं। उदाहरणार्थ ब्रिटेन में राजतन्त्र कायम है लेकिन वह निरंकुश राजतन्त्र नहीं, बल्कि लोकतन्त्र है। यह कथन पूर्णतया यथार्थ है कि "ब्रिटिश संविधान का अतीत वर्तमान में प्रवाहित हो रहा है और वर्तमान भविष्य में प्रवाहित होगा।"

ब्रिटिश संविधान की विकासशीलता कुछ दृष्टियों से हानिकारक भी रही है। योजनाबद्ध ढंग से निर्मित न होने के कारण इसमें अनेक असंगतियाँ आ गई हैं। राजपद और लोकसभा आनुवंशिक होने के कारण लोकतन्त्र से पूर्ण असंगत हैं। राजतन्त्र और लोकतन्त्र का सहअस्तित्व भी असंगतिपूर्ण है। पर विशेषता इस बात में है कि इन असंगतियों के बावजूद संविधान का प्रवाह और परिवर्तन अविरल रूप से चल रहा है। ब्रिटिश संविधान विकास और अविच्छिन्नता का आदर्श नमूना है। यह हजार वर्षों से भी अधिक होने वाले क्रमिक विकास और विस्तार का फल है।

(4) सिद्धान्त और व्यवहार में अन्तर— ब्रिटिश संविधान की एक अन्य विशेषता यह है कि उसके सैद्धान्तिक और व्यावहारिक रूप में बड़ा भारी अन्तर पाया जाता है। 'इंगलैंड में कोई बात जैसी दिखाई देती है वैसी नहीं है और जैसी है वैसी दिखाई नहीं देती।' बेजहाट (Bagehot) ने संविधान के इन दो रूपों को एक दूसरे के प्रतिकूल बतलाया है। उसके लिखित रूप में वह सजीवता नहीं है जो उसके व्यावहारिक रूप में है और उसके व्यावहारिक रूप में वह शालीनता नहीं है जो उसके लिखित सिद्धान्तों में है।

बाहरी रूपों तथा वास्तविक तथ्यों के बीच अन्तर अन्य संविधानों में भी दिखाई देते हैं। उदाहरण के लिए सोवियत संविधान के वैधानिक सैद्धान्तिक दृष्टि से लोगों को पूर्ण स्वतन्त्रता है, लेकिन यदि व्यावहारिक दृष्टि से देखा जाए तो उनके जीवन का प्रत्येक पक्ष साम्यवादी दल से नियन्त्रित है। इसी तरह यदि कोई व्यक्ति केवल संविधान की सहायता से ही रूस की सर्वोच्च सोवियत (Supreme Soviet) या मंत्री परिषद् (Council of Ministers) का वास्तविक महत्व समझना चाहे तो वह नहीं समझेगा। पुनश्च, यदि कोई व्यक्ति भारत के संविधान का अनुशीलन करे तो वह राष्ट्रपति की शक्ति के बारे में बहुत गलत धारणा बना लेगा। परन्तु जैसा कि आग एवम् जिंक (Ogg and Zink) ने लिखा है—'सभी शासनों में सिद्धान्त और व्यवहार में पर्याप्त भेद पाया जाता है लेकिन जिस प्रकार यह भेद ब्रिटिश शासन व्यवस्था का ताना बाना बन गया है, वैसा अन्यत्र कहीं नहीं है।

ब्रिटिश संविधान मे सिद्धान्त और आचरण के इस महान् अन्तर को कुछ उदाहरणो द्वारा भली प्रकार समझा जा सकता है —

(1) सिद्धान्त इगलैंड म निरकुश राजतन्त्र है । सावैधानिक दृष्टि से ब्रिटिश सम्राट सर्वोपरि है । उसी म सम्पूर्ण शक्ति निहित है । वह सम्पूर्ण विधि और न्याय का स्रोत है । वही ससद को आहूत करता है तथा उसका विघटन और सत्रावसान करता है । राज्य के मन्त्रि और अन्य उच्च अधिकारियो को वही नियुक्त और अपदस्थ करता है । सम्राट ही जल, थल और नभ सेना का स्वामी है । युद्ध की घोषणा शाति एव सधिया उसी के नाम से होती हैं । और तो और विरोधी दल भी राजा का है (His Majesty s Loyal Opposition), परन्तु यह सब उसका अवास्तविक अथवा सद्धान्तिक रूप है । व्यवहार म सम्राट इन शक्तियो का उपयोग नही करता । उसकी समस्त शक्तिया ससद अथवा मन्त्रि मण्डल के हाथो म आ गई है । राजा मन्त्रि मण्डल के हाथ की कठपुतली है, यहा तक कि राजा ससद के अभिभाषण म जो भाषण देता है वह भी मन्त्रियो द्वारा ही तयार किया जाता है । बेजहाट (Bagehot) का ठीक ही लिखना है कि यदि ससद के दोनो सदन उसके मृत्यु आदेश को पारित कर उसके पास भेज दें तो उस पर भी उसे हस्ताक्षर करने ही पड़ेंगे ।' राजा केवल शक्ति का प्रतीक है, वास्तविक शक्ति उसके हाथ से निकल चुकी है ।

आज ब्रिटेन म जनता सम्प्रभु है और उस वास्तविक सम्प्रभुता का प्रतीक राजा (King) न होकर मुकुट (Crown) है । मुकुट प्रशासन की सस्था है, जबकि राजा प्रशासन का व्यक्तिगत प्रतीक है । मुकुट की शक्ति यथार्थ एवम् वास्तविक है जब कि राजा की शक्ति केवल नाम मात्र की । इस मुकुट रूपी सस्था म मन्त्री राजा प्रिवी कौंसिल तथा ससद सम्मिलित ह । वास्तव म यह एक विचित्र अवास्तविकता है कि ब्रिटेन मे सद्धान्तिक रूप से ससद और मन्त्री मडल केवल परामर्शदात्री सस्थायें हैं और राजा उनके परामर्श को मानने अथवा न मानने को पूर्ण स्वतन्त्र है, लेकिन व्यावहारिक दृष्टि से यह सस्थायें ही सर्वशक्तिमान है । ब्रिटिश सविधान के सिद्धान्त और व्यवहार के इस भेद को ग्राग ने इन शब्दो म प्रकट किया है— 'इगलैंड की शासन प्रणाली अन्तिम सिद्धान्त म निरकुश राजतन्त्र दिखने म सीमित वधानिक राजतन्त्र और व्यवहार मे लोकतन्त्रात्मक गणराज्य है ।

(2) ब्रिटिश सविधान की अवास्तविकता का दूसरा महत्वपूर्ण उदाहरण यह है कि सिद्धान्तत ससद सर्वोच्च है, किन्तु व्यवहार म ससद मन्त्रि मडल के हाथ की कठपुतली है । इसी तरह सैद्धान्तिक रूप मे सम्पूर्ण व्यवस्थापन ससद राजा (The King in Parliament) द्वारा किया जाता है लेकिन व्यवहार मे अधिकाश व्यवस्थापन मन्त्रि मडल द्वारा ही होता है । ब्रिटिश मन्त्रि मडल इतना शक्तिवान है कि अपने बहुमत के बल पर वह ससद पर छाया रहता है और उसे अपने इशारे पर नचाता रहता है । बेजहोट (Bagehot) के शब्दो म, "मन्त्रि मडल (ससद का) उत्पादन है,

लेकिन उसे इतनी शक्ति प्राप्त है कि वह अपने उत्पादक कर्ताओं को भी समाप्त कर सकती है।"

(3) सिद्धान्त में लॉर्ड सभा के पास सर्वोच्च न्यायिक शक्ति है और वह अपील का सबसे बड़ा न्यायालय है, परन्तु वास्तव में न्याय सम्बन्धी कार्य कानून के लॉर्डों (Law Lords) द्वारा ही सम्पादित किया जाता है।

(4) ब्रिटिश संविधान में सिद्धान्त और आचरण में अन्तर का एक अन्य उदाहरण यह है कि ब्रिटिश शासन व्यवस्था में सिद्धान्त रूप में शक्ति का पृथक्करण देखने को मिलता है जबकि वास्तव में वहाँ शासन की शक्ति पूर्णतः केन्द्रीभूत है। सैद्धान्तिक दृष्टि से विधि निर्माण की शक्ति संसद में, प्रशासकीय शक्ति मंत्री मण्डल में और न्यायिक शक्ति न्यायपालिका में निहित है। इसी सैद्धान्तिक रूप से भ्रमित होकर मोन्टेस्क्यू ने अपनी रचना "स्प्रिट ऑफ लाज" (Spirit of Laws) में लिख दिया था कि ब्रिटेन की शासन-व्यवस्था शक्ति के पृथक्करण का एक उत्तम उदाहरण है। परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से हमें यही देखने को मिलता है कि ब्रिटिश संविधान शक्ति पृथक्करण का पूरी तरह प्रस्तुत नहीं करता। ऑग एवं जिंक (Ogg and Zink) का मत है कि चाहे स्वतन्त्र न्याय पालिका के अस्तित्व की व्यवस्था के कारण ब्रिटेन में शक्ति का आंशिक पृथक्करण हो परन्तु वहाँ व्यवस्थापिका और कार्यपालिका शक्ति का मिश्रण है। रमजेम्यूर (Ramsay Muir) ने भी ऐसा ही मत प्रकट करते हुए कहा है कि ब्रिटेन में व्यवस्थापिका और कार्यपालिका शक्तियों का मिश्रण है। हीवर्ट (Hewart) ने अपनी पुस्तक "न्यू डैस्पाटिज्म" में यह प्रतिपादित किया है कि व्यवस्थापन के विस्तार के कारण अब न्यायपालिका की शक्ति मंत्री मण्डल में केन्द्रित होती जा रही है।

ब्रिटिश संविधान की अवास्तविकताओं का तत्व इतना प्रबल है कि इसने न केवल ब्रिटिश प्रशासनिक ढांचे के बारे में भ्रान्तियाँ ही पैदा की बल्कि कतिपय विद्वानों को यह कहने के लिए भी बाध्य कर दिया कि ब्रिटेन में संविधान जैसी किसी वस्तु का अस्तित्व ही नहीं है। मुनरो (Munro) ने इस तत्व को बहुत सुन्दर शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया है—"किसी पदाधिकारी के नाम से कोई पदाधिकारी कार्य करता है। संविधान के अनुसार कार्य किसी और तरह होने चाहिये, लेकिन पदाधिकारी उन कार्यों को किसी और ही ढंग से करते हैं। यही कारण है कि अपनी शासन प्रणाली का वर्णन करने में अंग्रेजी लेखक आधे अध्यायों में जो कुछ होना चाहिए उसका विवरण करते हैं और आधे अध्यायों में यह समझाने का प्रयत्न करते हैं कि वास्तविकता उसमें सर्वथा भिन्न है। ऐसी दशा में यदि डी टॉकवेविले ने धैर्य का परित्याग करके नकारात्मक स्वर में यह कह दिया कि ब्रिटेन में संविधान जैसी कोई वस्तु नहीं है तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है।'

यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि आखिर ब्रिटिश सविधान मे इस प्रकार की अवास्तविकता क्यो मिलती है ? इन अवास्तविकताओ अथवा अ तरो के तीन प्रधान कारण हैं—वैधानिक विकास की अविरता, स्थिति मे क्रान्तिकारी परिवतन हो जाने के बाद भी परम्परागत स्वरूप को बनाये रखने की प्रवति और अधिकाश परिवतना का परम्पराओ द्वारा अस्तित्व मे आना। वास्तव म अ ग्रेजो ने अपने रूढिवादी स्वभाव के कारण अपनी ऐतिहासिक परम्पराओ को आमूल नष्ट नही किया है। जीवन की कठोर वास्तविकताओ के अनुसार आवश्यक परिवतन करत हुए भी उन्होने अपनी प्राचीन राजनीतिक सस्थाओ को उनके अवास्तविक रूप मे ही बने रहने दिया है।

(5) लचीलापन—ब्रिटिश सविधान विश्व के लचील सविधानो का सर्वोत्तम उदाहरण है। देश की व्यवस्थापिका सविधान म बिना किसी विशेष प्रक्रिया क उसी सरलता से यथेष्ठ परिवतन या सजन कर सकती है जिस सरलता से वह साधारण कानून पास करती है। ब्रिटिश सविधान मे विधि निर्माण करने वाली तथा सविधान म सशोधन करने वाली शक्ति एक ही है। दूसरे शब्दो म सावधानिक व साधारण दोनो प्रकार के कानूनो का एक सा स्तर है और दोनो मे सशोधन सामा य कानून निर्माण की प्रक्रिया द्वारा किया जा सकता है। लाड ब्राइस (Lord Brice) के शब्दो म "सविधान के ढाचे को बिना तोडे मरोडे ही आवश्यकतानुसार उस खीचा और मोडा जा सकता है।'

लचीला हाने के कारण ब्रिटिश सविधान मे यह विशषता है कि अवसर आने पर परिस्थितियो के अनुकूल यह सुगमता और शीघ्रता स अपने म परिवतन कर सकता है। इसके उदाहरण पर्याप्त सख्या मे मिलते हैं। सन् 1936 मे जब एडवड अष्टम् न गद्दी से त्याग पत्र दिया तो ब्रिटिश ससद न केवल मात्र आधे घटे के भीतर ही उसे बध कर दिया। इसी तरह विगत महायुद्ध म ससद की निर्धारित अवधि बढा दी गई। सन् 1939 मे अ ग्रेजो न अपना प्रधानमत्री भी बदल लिया, क्योकि वह जमनी से युद्ध करने और कुशलतापूवक युद्ध सचालन के योग्य न था। अ य कही भी एसा उदाहरण सम्भवत नही मिलेगा।

मैरियट (Marriot) के मतानुसार ब्रिटिश सविधान मे लचीलापन इसलिए और भी अधिक पाया जाता है कि औपचारिक सशोधनो के बिना भी उसमे सशोधन हो सकते हैं। सविधान म परम्पराओ के परिवतना द्वारा जो सशोधन होते हैं वे इसी प्रकार के सशोधन है।

(6) एकात्मक—ब्रिटिश सविधान एकात्मक (Unitary) है। शासन की समस्त शक्तिया केन्द्रीय सरकार मे निहित है। सम्पूण शक्तिया लन्दन मे अधिष्ठित केन्द्रीय सरकार म है, वही से समस्त देश का प्रशासन होता है। यद्यपि प्रशासनिक सुविधा की दृष्टि से वहा विकेन्द्रीकरण को अपनाया गया है, किन्तु केन्द्रीय तथा स्थानीय सरकारो मे किसी प्रकार का विषयो का कानूनी बटवारा नही है।

स्थानीय सरकारों पर प्रशासन का उत्तरदायित्व है, परन्तु शक्ति का स्रोत एक ही है। स्थानीय संस्थायें अपनी शक्तियां संघीय अधिनियमों से प्राप्त करती हैं। केन्द्रीय सरकार इन शक्तियों को अपनी इच्छानुसार संकुचित या विस्तृत कर सकती है। ब्रिटेन में अलिखित संविधान के होते हुए भी शासन व्यवस्था का काम चल रहा है और इसका कारण शासन के एकात्मक स्वरूप की विद्यमानता है। संघात्मक राज्य व्यवस्था के लिए तो संविधान लिखित और कठोर होना बहुत आवश्यक है।

(7) सांविधानिक राजतन्त्र—सामान्यतः "संविधान" और "राजतन्त्र" सहगामी नहीं हो सकते क्योंकि जहां संविधान शासनतन्त्र के लिए अंकुश और मर्यादा का प्रतीक होता है वहां राजतन्त्र निरंकुशता का चिह्न। लेकिन ब्रिटेन की राजनीतिक व्यवस्था में मर्यादा का प्रतीक संविधान और निरंकुशता का चिह्न राजतन्त्र दोनों साथ साथ विद्यमान हैं। ब्रिटिश शासन का स्वरूप "समुकुट लोकतन्त्र" (Crowned Democracy) का है। ब्रिटिश सांविधानिक विकास की यह विशेषता रही है कि समय की गति के साथ निरंकुश राजतन्त्र अपनी जनतन्त्रीकरण की दिशा में अग्रसर होता गया और इस तरह उसने अपना आधुनिक रूप ग्रहण कर लिया।

(8) संसदीय शासन व्यवस्था—ब्रिटिश संविधान देश में संसदीय शासन प्रणाली की स्थापना करता है। संसदीय शासन के अनुरूप ब्रिटेन में कार्यपालिका की द्वैधता वर्तमान है। सम्राट (अथवा साम्राज्ञी) सिर्फ नाम मात्र का वैधानिक प्रधान है जब कि कार्यपालिका की वास्तविक शक्तियां उन मन्त्रियों के हाथ में हैं जो संसद के सदस्य होते हैं और उसके विश्वास-पर्यन्त अपने पद पर रहते हैं।

कार्यपालिका और व्यवस्थापिका में घनिष्ठ सम्बन्ध भी है। प्रधानमन्त्री और अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति संसद के बहुमत दल में से होती है। कार्यपालिका संसद के प्रति ही उत्तरदायी होती है। मन्त्रिगण संसद सदस्य होने के नाते विधियों को तैयार करते हैं और उन्हें व्यवस्थापिका में प्रस्तुत व संचालित करते हैं। मन्त्री एक ओर तो अधिशासी प्रधान (Executive heads) होते हैं और दूसरी ओर संसद सदस्य। इस नाते वे शासन के विधायी और अधिशासी (कार्यकारी) भाग में सन्तुलन स्थापित करते हैं। बेजहॉट (Bagehot) ने इसीलिए कहा है कि "इंगलैंड में मन्त्रि मण्डल एक ऐसा योजक है जो जोड़ता है, एक ऐसा बकसुआ है जो अधिशासी तथा विधायी विभागों को आपस में बांधता है।" दूसरी ओर व्यवस्थापिका भी अपनी कटौती प्रस्तावों, अविश्वास प्रस्तावों आदि द्वारा कार्यपालिका पर पूरा नियन्त्रण रखती है। मन्त्रि मण्डल लोक-सभा के विश्वास-पर्यन्त ही पदासीन रहता है। लोक सभा का विश्वास न रहने पर या तो विरोधी दल नया मन्त्रि मण्डल बनाता है या लोक सभा भंग हो कर नये निर्वाचन होते हैं और

फिर बहुमत दल मंत्रि मण्डल का निर्माण करता है। इस प्रकार कार्यपालिका और व्यवस्थापिका में एकता का मूल तत्व सदा बने रहता है।

उपर्युक्त प्रसंग में मौनटेस्क्यू के इस मत पर टिप्पणी आवश्यक है कि ब्रिटेन में शासन के तीनों अंगों का कार्य क्षेत्र पूर्णतः पृथक् पृथक् है। पर वास्तव में ब्रिटेन में तो शासन की शक्ति केन्द्रीभूत है। यद्यपि आग एवं जिंक (Ogg and Zink) के अनुसार इंगलैंड में 'शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त आंशिक रूप में लागू हुआ है जिसका प्रयोग केवल न्यायपालिका के विषयों में होता है," पर आज प्रवृत्ति यह है कि व्यवस्थापन के विस्तार के कारण न्यायपालिका की शक्ति भी कार्यपालिका में केन्द्रित होती जा रही है। बीसवीं शताब्दी में विकसित प्रदत्त व्यवस्थापन और प्रशासकीय न्याय व्यवस्था इंगलैण्ड के शक्ति एकत्रीकरण सिद्धान्त को सबल करती है। इसके अतिरिक्त लार्ड सभा व्यवस्थापिका का अंग होते हुए भी अपील के अन्तिम न्यायालय के रूप में कार्य करती है और तब मंत्रि मण्डल का सदस्य लार्ड चान्सलर मुख्य न्यायाधीश के पद पर आसीन होता है। इन सब व्यवस्थाओं के कारण यह कहना भ्रान्तिपूर्ण है कि इंगलैण्ड में शक्ति का पृथक्करण है।

संसदीय शासन-प्रणाली की तीसरी मुख्य बात कार्यपालिका के कार्यकाल का अनिश्चित होना है। यह विशेषता ब्रिटिश शासन-व्यवस्था में विद्यमान है। ब्रिटिश कार्यपालिका का कार्य काल अनिश्चित है क्योंकि लोकसभा का विश्वास खोने पर वह कभी भी समाप्त हो सकती है।

(9) संसद की सर्वोच्चता—ब्रिटिश संविधान की मूलभूत विशेषता संसद की सर्वोच्चता है। वैधानिक दृष्टि से उसकी प्रभुसत्ता असीम है। कार्यपालिका उसी के प्रति उत्तरदायी है। कानून बनाने, संशोधन करने, रद्द करने अथवा कानून का विस्तार करने आदि का उसे पूरा अधिकार है। साधारण कानूनों के निर्माण के साथ ही सांविधानिक कानूनों के निर्माण में भी वह उतनी ही सत्तावान है। संसद में पारित कानूनों की समीक्षा करने का अधिकार न्यायपालिका को नहीं है। संसदीय कानून अन्तिम होते हैं जिन्हें देश की कोई संस्था चुनौती नहीं दे सकती है।

यह स्मरणीय है कि संसद की सर्वोच्चता केवल वैधानिक दृष्टि से ही है। व्यावहारिक दृष्टि से उसकी सर्वोच्चता पर अनेक नैतिक और परम्परागत बातों का अंकुश लगा रहता है। वह परम्परागत सांविधानिक अभिसमयों की उपेक्षा नहीं कर पाती और न ही लोकमत की अवहेलना कर सकती है। संसद का संपूर्ण कार्य सदैव उत्तरदायित्व की भावना के साथ होता है। संविधान का संशोधन करते समय उसे विभिन्न मनोवैज्ञानिक और स्व आरोपित प्रतिबन्धों का ध्यान रखना होता है। इसके अतिरिक्त उसके लिए यह भी संभव नहीं है कि वह अन्तर्राष्ट्रीय

समझौतों और अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों आदि का अतिक्रमण करके स्वेच्छाचारी का परिचय दे।

(10) मिश्रित संविधान—ब्रिटिश संविधान में राजतन्त्रीय, सामन्तीय तथा प्रजातन्त्रीय सिद्धान्तों का विलक्षण मिश्रण पाया जाता है। ऑग (Ogg) का मत है, "ब्रिटेन में राज्य व्यवस्था शुद्ध सैद्धान्तिक रूप से निरकुश राजतन्त्र है, बाह्य स्वरूप से सीमाबद्ध वैधानिक राजतन्त्र है और वास्तविक स्वरूप में प्रजातन्त्रात्मक गणराज्य है।" राजतन्त्रीय तत्व साम्राज्ञी अथवा सम्राट के रूप में मिलता है, सामन्ती तत्व लॉर्ड सभा के रूप में देखने को मिलता है और प्रजातन्त्रीय तत्व लोकसभा के रूप में उपलब्ध है। किन्तु इन सामन्ती और राजतन्त्री तत्वों से लोकतन्त्रीय सिद्धान्तों को कोई हानि न होकर बढ़ावा ही मिलता है।

(11) अवरोध व सतुलन के लिए स्थान—इगलैण्ड का संविधान अवरोध और सतुलन के सिद्धान्त पर आधारित है। यहा किसी भी शक्ति को पूर्ण अधिकार नहीं है वरन् प्रत्येक शक्ति पर दूसरी शक्ति का नियन्त्रण है। ससद के दोनों सदन कोई भी नियम पारित कर सकते हैं परन्तु उसके लागू होने के लिए सम्राट की स्वीकृति आवश्यक है। इसी प्रकार सम्राट की कोई भी आज्ञा तब तक कानूनन मान्य नहीं होगी जब तक उस पर किसी मन्त्री के हस्ताक्षर नहीं हो जाते। इसी तरह जहा मन्त्रि मण्डल सामूहिक रूप से लोकसभा के प्रति उत्तरदायी है वहीं प्रधान मन्त्रि का अधिकार है कि वह सम्राट से कह कर लोकसभा को विघटित करा दे। न्यायाधीशो की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा होती है किन्तु उनका पद स्थायी होता है। इस प्रकार शासन के प्रत्येक अङ्ग पर दूसरे अङ्ग का किसी न किसी रूप में नियन्त्रण है।

(12) पितृगत सिद्धांत या आनुवंशिकता का तत्त्व—ब्रिटिश संविधान प्रजातांत्रिक सिद्धान्तों के साथ साथ सामन्तशाही पर आधारित पितृगत अथवा आनुवाशिक सिद्धान्त (Hereditary Principle) का समर्थन करता है। उदाहरण स्वरूप सम्राट का पद अनुवंशिक सिद्धान्त पर आधारित है और लॉर्ड-सभा के अधिकांश सदस्य आनुवाशिक पीयर हैं। इसका प्रमुख कारण यही है कि अग्रेज रूढ़िवादी हैं और अपनी प्राचीन संस्थाओं के प्रति उनमे अगाध श्रद्धा व निष्ठा है। वस्तुत 'यहा ही संविधान में आगत प्रगतिशील तथा अनुदारशील दृष्टिकोणों का यह अपूर्व सम्मिलन है।"

(13) विधि शासन—ब्रिटेन संविधान की एक आधारभूत विशेषता विधि अथवा कानून का शासन (Rule of Law) है। विधि शासन का सामान्यत यह अभिप्राय समझा जाता है कि अमुक देश में शासन वहा के कानून के अनुसार चलता है किसी व्यक्ति विशेष की इच्छानुसार नहीं। सब कानून के अधीन हैं कानून से ऊपर कोई नहीं हो सकता। ब्रिटिश संविधान में विधि शासन का एक विशिष्ट अर्थ डायसी (Dicey) के अनुसार इसके प्रमुख आधार ये हैं—

1 पहला प्रमुख लक्षण यह है कि "व्यक्ति को कानून के उल्लंघन के लिए दण्ड दिया जा सकता है, अन्य किसी बात के लिए नहीं।" इसका अभिप्राय यह हुआ कि ब्रिटेन में तब तक किसी भी व्यक्ति को साम्पत्तिक अथवा शारीरिक दण्ड नहीं दिया जा सकता जब तक कि देश के न्यायालयों द्वारा तथा सामान्य कानून की प्रक्रिया के अन्तर्गत यह निश्चय न हो जाय कि वह व्यक्ति कानून के उल्लंघन करने का दोषी है।

2 दूसरा अर्थ "कानूनी समानता अथवा सभी वर्ग के लोगों का साधारण न्यायालयों द्वारा प्रयुक्त देश के सामान्य कानून के अधीन होना है।" दूसरे शब्दों में, केवल राजा को छोड़कर, क्योंकि वह पदेन कोई अपराध नहीं कर सकता, ब्रिटेन का प्रत्येक व्यक्ति एक ही कानून को मानने के लिए बाध्य है और उस पर साधारण न्यायालयों में मुकदमा चलाया जा सकता है। इस बारे में सरकारी कर्मचारी अथवा साधारण व्यक्ति में कोई भेद नहीं है। ब्रिटेन में केवल एक ही प्रकार की विधि है जो सरकारी व गैर सरकारी व्यक्तियों पर समान रूप से लागू होती है और यहां एक ही प्रकार के न्यायालय हैं तथा सरकारी तथा गैर सरकारी सभी व्यक्ति उनके द्वारा दण्डनीय हैं। उल्लेखनीय है कि ब्रिटिश 'विधि शासन' की पद्धति के स्थान पर फ्रांस में 'प्रशासनिक कानून' (Administrative Law) की पद्धति है, जिसके अन्तर्गत वहां साधारण नागरिकों और सरकारी कर्मचारियों के लिए दो प्रकार के कानूनों के समूह और दो ही प्रकार के पृथक न्यायालय हैं।

स्मरणीय है कि 'कानून के समक्ष सब की समानता' के कुछ अपवाद (Some exceptions) भी हैं, जो निम्न हैं—

(क) 'राजा कोई गलती नहीं कर सकता', यह इंगलैंड की एक कानूनी कहावत है। इंगलैंड में ऐसा कोई भी न्यायालय नहीं है जिसमें राजा पर कोई भी मुकदमा चलाया जा सके।

(ख) यदि राज्य कर्मचारी अपने प्रशासकीय कर्तव्यों का पालन करते हुए कोई भूल करता है तो उस पर व्यक्तिगत रूप में कोई मुकदमा नहीं चलाया जा सकता।

(ग) न्यायाधीश भी अपने सरकारी कार्यों में व्यक्तिगत उत्तरदायित्व से मुक्त हैं, बशर्ते कि यह सिद्ध न हो जाय कि उन्होंने दुष्प्रवृत्ति से कार्य किया है।

(घ) सेना के लोग अथवा धर्माधिकारीगण भी सामान्य कानून के क्षेत्र से बाहर हैं। उनके लिए मार्शल लॉ अथवा ऐक्लेसियास्टिकल लॉ (Ecclesiastical Law धर्म कानून) जैसे अन्य कानूनों की व्यवस्था है।

3 डायसी के अनुसार विधि शासन में तीसरा अर्थ यह निहित है कि "ब्रिटेन में संविधान के सामान्य सिद्धान्त न्यायाधीशों के निर्णयों के परिणामस्वरूप हैं जो उनके सामने लाये गये अभियोगों में अराजकीय (साधारण) व्यक्तियों के अधिकारों का निरूपण करते हैं।" सरल शब्दों में इसका तात्पर्य यह निकलता है कि बहुत से मामलों में, जिनकी संविधान में स्पष्टता नहीं है, न्यायालयों के निर्णय ही अंतिम

मान गए हैं। इन न्यायिक निर्णयों में हम संविधानिक तत्व मिलते हैं और वैयक्तिक स्वतन्त्रता सम्बन्धी विधियाँ इन्हीं निर्णयों का परिणाम हैं।

स्पष्ट है कि 'विधि शासन' नागरिकों की स्वेच्छाचारी शासन के विरुद्ध रक्षा और कानून की सर्वोच्चता स्थापित करता है। वह कानून के आगे सब वर्गों के व्यक्तियों की समानता स्थापित करता है और अन्त में संविधान को देश के सामान्य कानून पर आधारित करता है। विधि शासन स्वेच्छाचार से भिन्न है। शासन की शक्तियाँ मनमाने ढंग से नहीं बल्कि कुछ सुनिश्चित और बन्धनकारी नियमों के अनुसार प्रयुक्त होती हैं। विधि शासन नागरिकों की स्वतन्त्रता का महान प्रतीक है जिसे ब्रिटिश जनता ने शताब्दियों के संघर्ष के उपरान्त प्राप्त किया है।

विधि शासन से प्राप्त नागरिक अधिकार—ब्रिटिश संविधान में मौलिक अधिकारों की चर्चा नहीं है किन्तु ब्रिटिश नागरिकों को अन्य किसी भी देश से कहीं अधिक मौलिक अधिकार 'विधि शासन' के अन्तर्गत मिले हैं जो संसद के विविध अधिनियमों, न्यायिक निर्णयों और सामान्य विधि में अन्तर्निहित हैं। कुछ मुख्य मौलिक अधिकार ये हैं—

(i) नागरिकों को शस्त्र धारण करने की स्वतन्त्रता है, उनसे अत्यधिक जमानत नहीं माँगे जाने की व्यवस्था है उन्हें अमानवीय व असाधारण दण्ड नहीं दिए जाते उन्हें संसद में अपनी शिकायतों के प्रार्थना पत्र भेजने का अधिकार है।

(ii) ब्रिटिश नागरिकों को भाषण की पूर्ण स्वतन्त्रता है। वे अपने विचार अभिव्यक्त करने और उन्हें प्रकाशित करने का पूर्ण अधिकार रखते हैं बशर्ते कि ये बातें अपमानकारी और अश्लील न हों।

(iii) नागरिकों को धार्मिक स्वतन्त्रता है। शासन ने धर्म निरपेक्षता का आदर्श अपनाया है केवल राज्य का अध्यक्ष 'अंग्रेजी चर्च' को मानने वाला होना चाहिये।

(iv) सभा और सम्मेलन करने की उन्हें स्वतन्त्रता है—परन्तु इस पर कुछ आवश्यक मर्यादाएं हैं—सम्राट को प्रजाजनों की दृष्टि में गिराना, असन्तोष व रोष उत्पन्न करना, जनता को अशान्ति, हिंसा और अव्यवस्था के लिए उत्तेजित करना शासन और संविधान के विरुद्ध घृणा पैदा करना या शारीरिक शक्ति द्वारा कानून में परिवर्तन करना राजद्रोह है।

(v) ब्रिटिश नागरिकों को संघ बनाने की स्वतन्त्रता है, किन्तु संघ का उद्देश्य और उसके साधन वैधानिक होने चाहिये। नागरिकों को जीवन की व शारीरिक स्वतन्त्रता है। किसी भी व्यक्ति को बिना कानूनी कार्यवाही के प्राण अथवा शारीरिक स्वतन्त्रता से वंचित नहीं किया जा सकता।

विधि शासन का ह्रास—आधुनिक काल में विधि शासन की ओर कुछ अश्रद्धा प्रकट होने लगी है। विधि के नियम का स्वरूप आज कुछ बदल सा गया है। इस पर विशेषतः निम्नलिखित बातों का प्रभाव पड़ा है—

1 हस्तान्तरित कानून का प्रचलन,

2 ससद् के विशेष अधिनियम, एव

3 विभिन्न विभागो के न्याय सम्बन्धी अधिकार।

आज राज्य का स्वरूप तेजी से जन-कल्याणकारी राज्य होता जा रहा है। ब्रिटेन म ही नही सर्वत्र राज्य का काय-क्षेत्र बढता जा रहा है। अत ससद् को इतना समय नहीं मिलता कि कानून बनाते समय सब विवरण की बातो को भी वह उसमे सम्मिलित कर सके। ससद् समयाभाव के कारण अधिकाश कानूनो को पूण रूप मे न बनाकर उनकी स्थल रूप-रेखा मात्र बना देती है और शेष कार्य विभागीय अध्यक्ष करते है। इनको हस्तान्तरित कानून की सज्ञा दी जाती है। यही नहीं, बहुधा विभागाध्यक्षो को मूल नियमो मे भी परिवतन करने का अधिकार प्रदान किया जाता है जिससे विभागीय अध्यक्षो की नई निरकुशता (New Despotism) को प्रोत्साहन मिलता है। इसी कारण कुछ व्यक्तियो का कहना है कि या तो विधि-शासन केवल बहकावा है या पौराणिक कथा मात्र, वस्तुत आज ससदीय कानून के शासन का महत्त्व कम होता जा रहा है और कार्यपालिका द्वारा निर्मित नियमो के अनुसार शासन का आधिक्य होता जा रहा है।

विधि शासन के ह्रास होने का दूसरा कारण यह है कि ससद के विशेष अधिनियम बहुधा जनता के अधिकारो को सीमित कर देते हैं। उदाहरणाथ, सन् 1893 का सार्वजनिक कमचारी रक्षा सम्बन्धी अधिनियम (Public Authorities Protection Act of 1893) जिसका सशोधन 1939 के (Limitation Act of 1939) द्वारा हुआ था और सन 1947 का क्राउन प्रोसीडिंग एक्ट (Crown Proceeding Act, 1947) जैसे अधिनियम नागरिको के अधिकारो का राज कमचारियो के विरुद्ध नियन्त्रित करते हैं। इन अधिनियमो के द्वारा साधारण व्यक्तियो के अधिकारो की सुरक्षा पर कुठाराघात हुआ है, क्योकि जहा एक ओर इनसे सामान्य नागरिको के अधिकारो व उनकी स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध लगे हैं वहा दूसरी ओर सरकारी कर्मचारियो को सामान्य कानून (Common Law) की पकड मे आने से बचाने की व्यवस्था भी की गई है। सन् 1902 के शिक्षा अधिनियम, 1919 के वित्त अधिनियम, 1912 के राष्ट्रीय बीमा अधिनियम आदि ने विभागीय पदाधिकारियो की शक्तियो में आशातीत वृद्धि की है।

विधि शासन के ह्रास का तीसरा प्रमुख कारण यह है कि विभिन्न विभागों के न्याय सम्बन्धी अधिकार बढते जा रहे हैं और बहुधा उनके निणयो के विरुद्ध अपील सभव नही होती। मुकदमे चलाने वाले के हाथ ही मे निणय करने की शक्ति देना न्याय की उपेक्षा करना है। आधुनिक समय मे ब्रिटेन में विधि-शासन के अनेक अपवाद नजर आते हैं। फौजी लोगो पर फौजी अदालतो मे मुकदमा चलाया

जाता है, डाक्टरों के लिए मेडिकल कौंसिल हैं जो उन पर अभियोग चलाती हैं और पादरियों की कार्य-त्रुटि दिखाने पर दण्ड देने का अधिकार धार्मिक न्यायालयों को है।

उपरोक्त समस्त तर्कों से यह अर्थ नहीं लिया जाना चाहिए कि ब्रिटेन में नागरिकों की स्वतन्त्रता की स्थिति सुरक्षित नहीं है और विधि शासन महत्त्वहीन अथवा मृत हो चुका है। विधि शासन आज भी ब्रिटिश राजनीतिक जीवन का अभिन्न अंग और जनता के अधिकारों व उसकी स्वतन्त्रता का प्रहरी है। ब्रिटिश न्यायपालिका की निष्पक्षता और ईमानदारी आज भी संदेह से परे है। ब्रिटेन में चाहे ऐसे कानून निर्मित हो गए हों कि जिनमें विधि शासन की भावना को ठेस पहुंचती है, परन्तु वेड व फिलिप्स (Wade and Philips) के शब्दों में जनता का यह विश्वास अब भी है कि "कर्मचारीगण साधारण न्यायालयों के कार्य क्षेत्र से बचे हुए नहीं हैं और इंगलैंड के कानून की दृष्टि से असाधारण न्यायालयों द्वारा निबटाए गए अपराधों का कोई महत्त्व नहीं है।"

संक्षेप में, ये ही ब्रिटिश संविधान की प्रमुख विशेषताएं हैं। वास्तव में ब्रिटिश संविधान राजतन्त्र, कुलीनतन्त्र और जनतन्त्र का सर्वोत्तम और कल्याणकारी मिश्रण है। परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को बदल लेने की इसमें क्षमता है। इसे बीसवीं शताब्दी का एक सर्वाधिक प्रजातान्त्रिक और प्रगतिशील संविधान कहा जा सकता है।

ब्रिटिश संविधान की कुछ आधुनिक प्रवृत्तियां

(Modern Tendencies of the British Constitution)

कुछ आधुनिक प्रवृत्तियां ब्रिटिश-शासन के स्वरूप को बदल रही हैं। ये मुख्यतः इस प्रकार हैं—

(i) ब्रिटिश संविधान प्रमुखतः अलिखित है, किन्तु अब इसमें परिवर्तन लाने के लिए अधिकांशतः लिखित कानूनों का सहारा लेने की प्रवृत्ति बढ़ रही है।

(ii) ब्रिटिश शासन-व्यवस्था एकात्मक है किन्तु धीरे-धीरे इसमें विकेन्द्रीकरण के चिह्न प्रकट होते जा रहे हैं। इंगलैंड, स्काटलैंड, उत्तरी आयरलैंड और वेल्स को क्षेत्रीय प्रशासन सम्बन्धी स्वायत्तता देने की मांग गत वर्षों में की गई है। उत्तरी आयरलैंड में पृथक संसद् के संस्थापन ने इस आंदोलन को बल प्रदान किया है।

(iii) शासन-व्यवस्था में जनतन्त्र का अधिकाधिक विकास हुआ है। उदाहरणार्थ, 1949 में लॉर्ड-सभा की शक्तियों को एकदम घटा दिया गया, 1948 में विश्वविद्यालयों के लोकसभा में प्रतिनिधित्व को समाप्त कर दिया गया और स्त्रियों को लॉर्ड-सभा की सदस्यता का अधिकार दिया गया।

(iv) संसद की शक्ति का ह्रास और मन्त्रीमण्डलीय शक्ति में वृद्धि ब्रिटिश संविधान की एक प्रमुख आधुनिक प्रवृत्ति है। मन्त्रीमण्डल के हाथ में देश की वास्तविक प्रशासकीय और विधायिकीय शक्ति इतनी अधिक चली आई है कि अब मन्त्रीमण्डलीय निरंकुशता अधिक यथार्थ दिखलाई देती है।

(v) ब्रिटिश उपनिवेशों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण विकास हुआ है और अधिकांश ब्रिटिश उपनिवेश स्वतन्त्र हो गए हैं। 1949 में राष्ट्रमण्डल की स्थापना की गई, जिसका अध्यक्ष ब्रिटिश सम्राट है और स्वतन्त्र गणतन्त्र बनने के उपरान्त भी भारत, घाना, पाकिस्तान आदि राष्ट्रमण्डल के सदस्य हैं।

(vi) ब्रिटेन के दोनों प्रमुख दलों में सांविधानिक सिद्धान्त के सम्बन्ध में अधिक सहमति और निकटता बढ़ने की प्रवृत्ति है। एक ओर श्रमिक दल की प्रतिवादी विचारधारा में संशोधन हो गया है और दूसरी ओर अनुदार-दल की विचारधारा में पर्याप्त प्रगति हो गई है।

2

अभिसमय अथवा वैधानिक परम्पराएं

(CONVENTIONS OF THE CONSTITUTION)

"अभिसमय राजनीतिक आचरण के वे नियम हैं, जिनकी स्थापना
परिनियमों, न्यायिक निर्णयों या संसदीय परम्पराओं के
अन्तर्गत नहीं बल्कि इनसे पृथक उनके पूरक के रूप में और
उनसे विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए होती है।
ब्रिटिश संविधान में यह उद्देश्य है—
कार्यपालिका और व्यवस्थापिका को
जन इच्छा के प्रति उत्तरदायी
बनाना।"

—हर्मन फाइनर

विश्व की लगभग प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में अभिसमयों अथवा वैधानिक परम्पराओं (Contitutional Conventions) का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। संविधान के लिखित या अलिखित सभी स्वरूपों में इन्होंने उसके विकास में काफी सहयोग दिया है। ब्रिटेन को तो 'अभिसमयों की शास्त्रीय भूमि' (Classic Land of Conventions) कहा जाता है। वास्तव में ब्रिटिश संविधान के जन्म, जीवन और मरण की कहानी अभिसमयों की कहानी है। इनकी बहुलता के कारण ही ब्रिटिश संविधान को अलिखित कहा जाता है। इन्हें अच्छी तरह समझे बिना ब्रिटिश संविधान का अध्ययन अधूरा ही है। अमेरिका, कनाडा, स्वीटजरलैण्ड, भारत आदि देशों में भी अभिसमयों का उल्लेखनीय विकास हुआ है।

अभिसमयों का स्वरूप

(Nature of Conventions)

डायसी ने अभिसमयों को 'सांविधानिक परम्पराओं (Constitutional Conventions), जे. एस. मिल ने 'संविधान के अलिखित नियम (Unwritten

Maxims of the Constitution) और एन्सन ने 'सांविधानिक रीति रिवाज, (Customs of the Constitution) कहा है। आग एवं जिंक ने अभिसमयों का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है—"इनका निर्माण उन समझौतों, आदतों या प्रथाओं से मिलकर होता है जो राजनीतिक नैतिकता के नियम-मात्र होने पर भी बड़ी से बड़ी सार्वजनिक सत्ताओं के दिन प्रतिदिन के सम्बन्धों और गतिविधियों के अधिकांश भाग का नियमन करते हैं। ये अभिसमय कानून के सूखे ढांचे पर मांस चढ़ाते हैं, कानूनी संविधान को चालू रखते हैं और उसे, बदलती हुई सामाजिक आवश्यकताओं तथा राजनीतिक विचारों के अनुसार संशोधित करते रहते हैं।"

अभिसमय कानून द्वारा सुरक्षित न होते हुए भी कानून की तरह मान्य होते है। समाज में उनका इतना सम्मान होता है कि लोग सामान्यतः उनका उल्लंघन करने का साहस नहीं करते। ब्रिटेन में तो इन अभिसमयों अथवा वैधानिक परम्पराओं पर ही शासन विधान का अधिकांश ढांचा निर्भर है। अभिसमयों के कारण ही ब्रिटिश संविधान संसार का सबसे लचीला संविधान है। ब्रिटिश संविधान के लिखित तत्व तो राजकीय प्रक्रिया के केवल छोटे से भाग का ही नियमन कर पाते हैं, शेष कमियों को ये अभिसमय ही पूरा करते हैं और इस तरह कानूनी संविधान को कार्य-रूप देते हैं।

अभिसमयों के इस स्वरूप में उनकी निम्नलिखित तीन प्रमुख विशेषताएं स्पष्ट होती हैं—

(1) अभिसमयों का स्रोत संसद की विधि निर्मात्री शक्ति नहीं है बल्कि प्रथाएं हैं। धीरे-धीरे प्रयोग और व्यवहार में आते आते कुछ प्रथाएं प्रशासन के दैनिक संचालन के लिए अनिवार्य हो जाती है और तब उनका रूप वैधानिक परम्पराओं या अभिसमयों का हो जाता है।

(2) अभिसमयों को कानून द्वारा मान्यता नहीं दी जाती और न्यायालयों द्वारा उन्हें क्रियान्वित नहीं किया जाता। अभिसमयों का पालन किए जाने का कारण उनकी महान् उपयोगिता है। एक लम्बे समय से धीरे धीरे प्रयोग में आते-आते अभिसमय ऐसी उपयोगिता शक्ति प्राप्त कर लेते हैं कि जनमत उनकी अवहेलना करने वाले को आदर की दृष्टि से नहीं देखता।

(3) समय के साथ अभिसमय उसी प्रकार का पवित्र स्थान ग्रहण कर लेते हैं, जैसा सांविधानिक कानूनों का होता है।

अभिसमयों की उत्पत्ति

अभिसमयों का जन्म प्रायः दो कारणों से होता है—

(1) यदि देश के कानूनी ढांचे और तत्कालीन वैधानिक विचारधारा में भिन्नता होती है तथा तत्कालीन वैधानिक विचारधारा में जनता इतनी श्रद्धा रखती है कि कानूनी ढांचे को इसके अनुकूल बनाना अनिवार्य हो जाय तो बहुधा महा

अनुकूलता प्राप्त करने के लिए अभिसमयो की सहायता ली जाती है। इंगलैण्ड का कानूनी ढांचा राजतन्त्रीय है जबकि प्रचलित विचारधारा प्रजातन्त्रीय है। दोनों मे अनुकूलता पैदा करने के लिए अनेकों अभिसमयो का जन्म हुआ है, जैसे सम्राट किसी बिल को अस्वीकार नहीं करता क्योंकि वह जनता की संसद द्वारा पास किया हुआ होता है और इसी प्रकार मन्त्रीमण्डल लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होता है।

(2) अभिसमयो की उत्पत्ति का दूसरा कारण यह है कि कभी-कभी कानून कोई शून्य (Gap) छोड देता है और उसकी पूर्ति के लिए अभिसमयो या प्रथाओं का जन्म होता है।

कानून और अभिसमय के भेद

मान्यता की दृष्टि से समान प्रभाव रखते हुए भी, कानूनो और अभिसमयो मे पाए जाने वाले अन्तर प्रधानत तीन हैं—

(1) सांविधानिक अभिसमय की अपेक्षा सांविधानिक कानून अधिक पवित्र और माननीय समझा जाता है। अभिसमय केवल राजनीतिक नैतिकता का नियम होता है जबकि कानून किसी विधि-निर्मात्री शक्ति की इच्छा का परिणाम। अत. जहा परम्परा के पालन का आधार इच्छा होती है, वहा कानून के पालन का आधार शक्ति। कानून का पालन प्रत्येक व्यक्ति को अनिवार्यत करना पडता है, जबकि प्रत्येक अभिसमय के पालन के पीछे 'अनिवार्य' शब्द नही जुडा रहता। उदाहरण के रूप मे यह एक अभिसमय है कि कानून बनने से पहले प्रत्येक विधेयक के तीन वाचन प्रत्येक सदन में होने चाहिए, परन्तु यदि इस अभिसमय को भग करके संसद दो ही वाचनों के बाद विधेयक को कानून बनादे तो इसमे 'अनिवार्यता टूटने वाली कोई बात न होगी और न ही किसी कानून का उल्लघन होगा।

परन्तु इसका यह अभिप्राय कदापि नही लेना चाहिए कि अभिसमयो का महत्त्व कानूनों से गौण है। अनेक अभिसमयो के महत्त्व को तो कानूनो से भी बढकर कहा जा सकता है। उदाहरण के लिए, यह सोचना भी कठिन है कि कोई मन्त्रिमण्डल लोकसभा का विश्वास खोने पर भी त्याग पत्र न दे अथवा दोनों सदनों द्वारा पास किए गए विधेयक पर सम्राट या साम्राज्ञी हस्ताक्षर न करे।

(2) कानून सामान्य रूप से सटीक और सुनिश्चित शब्दावली मे व्यक्त होता है लेकिन अभिसमयो का निर्माण ऐसे नही होता। अभिसमय तो प्रथाओं और परम्पराओं पर आधारित होते हैं और उनमे परिवर्तन भी प्रचलित प्रथा के आधार पर होता है। कभी-कभी यह ज्ञात करना भी कठिन हो जाता है कि कोई प्रथा अभिसमय बन गई है अथवा नहीं। कानून विधि निर्मात्री शक्ति द्वारा लिखित रूप मे विहित किया जाता है, जबकि अभिसमय सदा अलिखित ही रहता है।

(3) कानूनो को न्यायालय की शक्ति प्राप्त रहती है। न्यायालयों के

द्वारा उन्हें लागू किया जाता है, परन्तु अभिसमयों को न्यायालयों की शक्ति प्राप्त नहीं रहती और न ही न्यायालयों द्वारा उन्हें लागू किया जाता है। न्यायालय कानूनों के समान अभिसमयों की रक्षा नहीं करते। यदि किसी व्यक्ति अथवा सरकार द्वारा किसी अभिसमय अर्थात् वैधानिक परम्परा का उल्लंघन किया जाय तो उसके लिए न्यायालय में अभियोग नहीं चलाया जा सकता, परन्तु यदि किसी कानून का उल्लंघन हो तो व्यक्ति और सरकार दोनों ही न्यायालय की शरण ले सकते हैं और न्यायालय से दण्डनीय हैं।

सच पूछा जाए तो कानून और अभिसमय में कोई स्पष्ट विभाजन रेखा खींचना कठिन है। दोनों ही शासन व्यवस्था के आधारभूत तत्त्व हैं। दोनों का पालन समान रूप से होता है। दोनों अनेक बार साथ साथ चलते हैं। विशिष्ट बात मूलतः केवल यह है कि दोनों के पालन के आधार भिन्न भिन्न हैं। कानून का पालन इसलिए होता है कि उसके पीछे राज्य की प्रभुत्व शक्ति होती है, जबकि अभिसमय का पालन इसलिए होता है कि उसके पीछे 'उपयोगिता और जनमत' का बल होता है।

ब्रिटेन के सांविधानिक अभिसमयों का वर्गीकरण

ब्रिटिश सांविधानिक अभिसमयों की पूरी सूची देना यहाँ सम्भव नहीं है। ब्रिटिश अभिसमय अनेक प्रकार के हैं। कुछ का सम्बन्ध राजा (या रानी), उसके कार्य और उसकी शक्तियों से है। कुछ मन्त्रिमण्डल से सम्बन्धित हैं। इसी तरह कुछ अभिसमय संसद के विषय में हैं तो कुछ राष्ट्रमण्डल के बारे में। इन अभिसमयों में उल्लेखनीय ये हैं—

(क) राजा से सम्बन्धित अभिसमय—(1) राजा अपने मन्त्रियों के परामर्श से कार्य करता है।

(2) मन्त्रिमण्डल का निर्माण करने के लिए राजा लोकसभा के बहुमत वाले दल के नेता को प्रधानमन्त्री नियुक्त करता है।

(3) प्रधानमन्त्री द्वारा निर्मित मन्त्रिमण्डल को राजा अपने मन्त्रिमण्डल के रूप में स्वीकार कर लेता है।

(4) राजा संसद को प्रतिवर्ष एक बार अवश्य आहूत (Summon) करता है।

(5) राजा मन्त्रिमण्डल की बैठकों में सम्मिलित नहीं होता।

(6) प्रधानमन्त्री के परामर्श पर ही राजा लोकसभा का विघटन करता है।

(7) संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित किये गये विधेयकों पर राजा को अनुमति (Assent) देनी ही होती है।

(ख) मन्त्रिमंडल से सम्बन्धित अभिसमय—इस समूह में प्रमुख ये हैं—

(1) मन्त्रिमण्डल सामूहिक रूप से संसद् (व्यवहार में लोकसभा) के प्रति उत्तरदायी है।

(2) मन्त्रिमण्डल सामूहिक और सम्मिलित उत्तरदायित्व के सिद्धान्त के अनुसार काम करता है।

(3) मन्त्रिमण्डल को लोकसभा का विश्वास-पात्र न रहने पर त्याग पत्र देना पड़ता है। यदि प्रधानमन्त्री चाहे तो राजा को लोकसभा का विघटित करने का परामर्श दे सकता है।

(4) मन्त्रिमण्डल को अपने सम्पूर्ण प्राधिकार के साथ घरेलू संकट का प्रतिकार करना चाहिये, लेकिन उसे तुरन्त संसद् को आमन्त्रित करके उससे मंत्रणा अवश्य करनी चाहिये।

(ग) संसद् से सम्बन्धित अभिसमय—इनमें उल्लेखनीय ये हैं—

(1) लोकसभा के अध्यक्ष को निर्दलीय व्यक्ति होना चाहिये और उसे अध्यक्ष पद के लिए निर्वाचन में खड़ा होने से पूर्व अपने दल की सदस्यता त्याग देनी चाहिए।

(2) अवकाश ग्रहण करने वाले अध्यक्ष का निर्विरोध निर्वाचन होना चाहिए और जितनी बार वह चाहे, उसे निर्वाचित किया जाना चाहिए।

(3) अध्यक्ष को अपने निर्णायक मत का प्रयोग बहुत कम और इस प्रकार करना चाहिये कि संसद् स्वयं निर्णय कर सके।

(4) लार्ड-सभा जब अपीलीय न्यायालय के रूप में कार्य करती हो, तब कानूनी लॉर्डों (Law-Lords) को उसमें अवश्य सम्मिलित होना चाहिए और उन्हें छोड़कर अन्य किसी लार्ड अथवा पीयर को लार्ड-सभा के न्यायिक मामलों में भाग नहीं लेना चाहिये।

(5) लोकसभा किसी वित्तीय विधेयक पर तभी विचार करती है जबकि उसे राजा (अर्थात् कैबिनेट) की सिफारिश पर पेश किया जाये।

(6) लोकसभा अनुदान की माँग (Demand for grant) में कमी कर सकती है और उसे अस्वीकार कर सकती है किन्तु उसमें वृद्धि नहीं कर सकती।

(7) कानून बनने से पहिले प्रत्येक विधेयक का तीन बार वाचन (Reading) होना चाहिये।

(8) शासक-दल की ओर से एक भाषण होने के पश्चात् दूसरा भाषण विरोधी दल के सदस्य का होता है।

राष्ट्र मण्डल से सम्बन्धित अभिसमय—इस श्रेणी के प्रमुख अभिसमय ये हैं—

(1) राष्ट्र-मण्डल सम्बन्धी विषयों में राजा को अपने राष्ट्र-मण्डलीय विभाग के मन्त्री से परामर्श करना चाहिये।

(2) किसी भी उपनिवेश के सम्बन्ध में संसद् तभी कोई कानून बनायेगी

जब उपनिवेश की ओर से इस बारे मे स्पष्ट प्रार्थना की गई हो और ऐसा करने की उसकी ओर से स्पष्ट अनुमति द दी गयी हो।

ब्रिटिश सविधान के अभिसमयो की सख्या बहुत बडी है। इसके अतिरिक्त इन अभिसमयो का रूप प्रगतिशील है, अत वे समय की प्रगति के साथ, और लोगो के व्यवहार के अनुरूप बदलती व बढती रहती है।

अभिसमयों का पालन क्यो किया जाता है ?

यह कहा जा चुका है कि अभिसमयो के पीछे कानून जैसी कोई शक्ति नही है। तब प्रश्न उठता है कि अभिसमयो का पालन क्यो होता है ? विद्वानो ने इस प्रश्न का उत्तर विभिन्न प्रकार से दिया है। डायसी के अनुसार, अभिसमयों के पालन का कारण कानून के भग होने का भय है। लावेल (Lowell) ने इस पालन के पीछे जनमत के बल का तर्क दिया है। लास्की (Laski) के अनुसार अभिसमयो का पालन इसलिए होता है क्योकि एक तो ये 'प्रचलित सामयिक सावैधानिक सिद्धान्तो' के अनुरूप होते हैं और दूसरे सभी राजनीतिक दल देश के सामाजिक व राजनीतिक ढाचे की आधार भूत बातो के बारे मे प्राय एक मत रहते है। दूसरे शब्दो मे लास्की के अनुसार, अभिसमयों के पालन का मूल कारण उनकी विपुल उपयोगिता है। अग्रिम पक्तियो मे हम इन विचारको के तर्कों का कुछ विस्तार से विश्लेषण करेंगे।

डायसी—का निष्कर्ष है कि अभिसमय और कानून गहरे गुथे हुए है। किसी अभिसमय का उल्लघन किसी न किसी कानून का उल्लघन हो जाता है या इस उल्लघन से उसे क्षति पहुचती है। चू कि कानून का उल्लघन नही किया जा सकता, अत स्वभावत अभिसमयो का भी पालन करना ही पडता है। अभिसमय और कानून के इस घनिष्ठ सम्बन्ध को डायसी ने उदाहरणो द्वारा स्पष्ट किया है।

डायसी ने बतलाया है कि प्रतिवर्ष ससद् का सत्र बुलाना एक अभिसमय है। यदि ससद् का सत्र प्रतिवर्ष न बुलाया जाए तो अभिसमय ही भग होगा कानून नही। लेकिन अभिसमय के इस उल्लघन से अनेक कानूनी व्यवस्थाओ के उल्लघन का स्वत ही खतरा पैदा हो जायेगा। ब्रिटेन मे दो महत्त्वपूर्ण कानूनी व्यवस्थायें हैं—प्रतिवर्ष बजट स्वीकृत हो तथा प्रतिवर्ष सेना सम्बन्धी कानून का नवीनीकरण हो। ससद् का अधिवेशन वर्ष म एक बार भी न बुलाने पर इन दोनो ही कानूनी व्यवस्थाओ का निश्चित रूप मे उल्लघन हो जायेगा। इन कानूनी व्यवस्थाओ के उल्लघन से सम्पूर्ण शासन-तन्त्र बिगड जायेगा, न किसी विभाग पर कुछ व्यय किया जा सकेगा न कोई नया कर लगाया जा सकेगा।

इस उदाहरण से डायसी ने यही प्रतिपादित किया है कि अभिसमयों के पीछे कानून के भग होने का भय है। स्वय उन्ही के शब्दो म "वह शक्ति जिसके

कारण अन्तत: वैधानिक नैतिकता का पालन करना पड़ता है, स्वयं कानून की शक्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। किसी पूर्णत: परम्परागत नियम का उल्लंघन, चाहे वह पूर्णतया अज्ञात और वस्तुत: कानून के विपरीत प्रथा का उल्लंघन ही क्यों न हो, उल्लंघन करने वाले को देश के निश्चित कानून से विमुख कर देता है।"

डायसी का तर्क पूर्ण-सत्य नहीं है, हां आंशिक रूप में अवश्य सत्य है। यह तर्क सभी अभिसमयों पर समान रूप से लागू नहीं होता। अभिसमय और कानून सदैव साथ-साथ चलें, यह भी आवश्यक नहीं। लास्की के अनुसार, इंगलैंड प्रतिवर्ष संसद् का सत्र बुलाने के लिए विवश नहीं है। सम्प्रभु-सम्पन्न होने के कारण ब्रिटिश संसद् सेना सम्बन्धी कानून कई वर्षों के लिये पास कर सकती है अथवा वर्तमान वार्षिक करों को अनेक वर्षों के लिए स्वीकार कर सकती है और छोटे मोटे खर्चों का आकस्मिक निधि से पूरा कर सकती है। यदि डायसी का यह मत स्वीकार कर लिया जाये कि परम्पराओं को कानून का समर्थन प्राप्त है, तो उसमें संसद की व्यवस्थापन सम्बन्धी सर्वोच्चता खण्डित हो जाती है, क्योंकि तब संसद उन कानूनों के बारे में स्वच्छन्दतापूर्वक अपने अधिकार का प्रयोग नहीं कर सकेगी जो अपने पालन के लिये परम्पराओं के पालन पर निर्भर करते हैं। डायसी ने कानून और अभिसमयों को जो एकदम अन्योन्याश्रित मान लिया है, वह अनुचित है।

इसके अतिरिक्त अनेक अभिसमय ऐसे हैं जिनके भंग होने से किसी कानून का अतिक्रमण नहीं होता। यदि अध्यक्ष (Speaker) पद पर निर्वाचित होने के पश्चात अपने दल की सदस्यता का त्याग न करे, प्रधानमंत्री लार्ड-सभा में लिया जाये या लोकसभा के कार्य संचालन सम्बन्धी अभिसमयों का पालन न किया जाये, तो इसमें किसी कानून का उल्लंघन नहीं होता है।

स्पष्ट है कि अभिसमयों का पालन मूलत: कानून के भंग होने के भय से नहीं बल्कि उनकी उपयोगिता के कारण होता है। फिर यह स्मरणीय है कि देश की परिवर्तित राजनीतिक परिस्थितियां की मांग होने पर पूर्वोदाहरणों या पूर्व दृष्टान्तों को तोड़ा जा सकता है। उदाहरण के लिये, डिजरैली (Disraeli) ने 1868 में आम निर्वाचन में पराजित होने पर संसद् के सम्मुख उपस्थित हुए बिना ही त्याग पत्र देकर परम्परागत रूढ़ि की उपेक्षा की थी। इसके विपरीत 1929 में बाल्डविन (Baldwin) ने पुन: पुराने अभिसमय का अनुकरण करते हुए संसद के समक्ष उपस्थित होकर उसका निर्णय प्राप्त किया था।

लॉवेल (Lowell)—डायसी के विपरीत लॉवेल का विचार है कि अभिसमयों का पालन इसलिए किया जाता है कि उन्हें जनमत का परम्परागत समर्थन प्राप्त है। अंग्रेज लोग अपनी प्राचीन प्रथाओं को बनाए रखने के लिए अपने जीवन में अनेक असंगतियां तक स्वीकार कर लेते हैं। यही कारण है कि ये अभिसमय जो परम्परागत प्रथाओं के आधार पर निर्मित हो जाते हैं आदर पाते हैं। ऐसी अवस्था में सरकार सुगमता से उन अभिसमयों की उपेक्षा नहीं

कर सकती। जब राष्ट्र चाहता है कि ससद् का अधिवेशन प्रति वर्ष हो और मन्त्रीमण्डल लोक सभा मे बहुमत न रहने पर त्याग पत्र दे दे, तो फिर सामान्यत ऐसा कोई कारण पैदा नही होता कि सरकार इन अभिसमयो का पालन न करे।

लॉवेल का मत डायसी के मत की अपेक्षा अधिक सत्य है, तथापि वह पूर्णत मान्य नही ठहराया जा सकता। जनमत के समर्थन का आधार कोरा रूढिवाद नही है। अग्रेज लोग किसी परम्परा अथवा प्रथा का समर्थन केवल इसीलिए नही करते कि यह पुरातन काल से चली आ रही है, इसके विपरीत उनका समर्थन अधिकाशत इसलिए होता है कि वह परम्परा या प्रथा प्राचीन-कालीन होने के उपरात भी वर्तमान परिस्थितियो मे उपयोगी है।

लास्की (Laski)—लास्की के मतानुसार अभिसमयो का पालन मुख्यत दो कारणो से होता है—

(i) पहला कारण यह है कि अभिसमय "प्रचलित सामयिक सावैधानिक सिद्धान्तो के अनुरूप हैं। इसके अतिरिक्त ये उनके क्रियान्वयन में सहायक होते हैं। उदाहरणार्थ, ब्रिटेन मे किसी समय मन्त्रिमण्डल की बैठको का सभापतित्व स्वय राजा करता था, किन्तु जॉर्ज राजाओ ने मन्त्रिमण्डलीय बैठको मे सभापतित्व करना बन्द कर दिया। परिणामत राजा के स्थान पर प्रधानमन्त्री द्वारा मन्त्रिमण्डलीय बैठको का सभापतित्व करने की परम्परा बन गई। शनै-शनै *लोकतन्त्रात्मक प्रवृत्ति के बढने के साथ साथ यह परम्परा राष्ट्र को पूरी तरह मान्य* हो गई। इसने इस तरह एक अभिसमय (Convention) का रूप धारण कर लिया और आज भी यह अभिसमय आदर का पात्र है।

(ii) लॉस्की के अनुसार अभिसमयो के मान्यता का दूसरा कारण यह है कि ब्रिटेन के राजनीतिक दल देश की राजनीतिक व सामाजिक ढाचे के मौलिक रूप के विषय मे एकमत हैं और इस कारण इस ढाचे से सम्बन्धित परम्पराए भी उन्हे समान रूप से मान्य हैं। उदाहरणार्थ, सभी ब्रिटिश राजनीतिक-दल राजतन्त्रीय लोकतन्त्र (Monarchic Democracy) मे विश्वास करते हैं और वैयक्तिक सम्पत्ति की व्यवस्थाओ को ब्रिटिश सामाजिक ढाचे के लिए उपयोगी मानते है। अत इन व्यवस्थाओ से सम्बन्धित अभिसमय भी उनके (दलो के) लिए सम्माननीय हैं। यदि देश के सामाजिक और राजनीतिक ढाचे की आधारभूत बातो पर ब्रिटिश राजनीतिक दलो मे मतैक्य न होता तो अभिसमयो का पालन सन्देहास्पद हो जाता और उनकी पवित्रता एक प्रश्न चिन्ह बन जाती।

यद्यपि अभिसमयो की मान्यता के विभिन्न कारण बतलाये गये हैं, पर वास्तव मे अभिसमयो के पालन का सर्वाधिक शक्तिशाली कारण उनकी उपयोगिता है। वे न केवल वैधानिक शासन और लोकतन्त्र के सिद्धान्तो से ही सम्बन्ध रखते हैं, प्रत्युत वे युक्तियो के ऊपर आधारित होते हैं। शासन के सफल तथा निर्बाध सचालन के लिये यह आवश्यक है कि अभिसमयो का सम्यक् रूप से पालन किया

जाय। यदि इनका पालन नहीं होगा तो प्रशासन यन्त्र अस्त व्यस्त हो जायगा और शासन-सचालन मे विभिन्न अवरोध उपस्थित हो जायेंगे। उपयोगिता के अतिरिक्त लोकमत की शक्ति के कारण भी परम्परायें सम्मान की दृष्टि से देखी जाती है। शासन की अन्तिम शक्ति जनता अर्थात निर्वाचकों की शक्ति से ऊपर आधारित है। अत लोकमत समर्थित अभिसमयो का यदि आदर न किया जाय तो इससे जनप्रभु (Popular Sovereign) की भावनाओ को चोट पहुचेगी, और कोई भी लोकतन्त्रात्मक सरकार इस बात के लिये तैयार होना पसन्द नहीं करेगी।

ब्रिटिश संविधान मे अभिसमयों का महत्त्व

(Importance of Conventions in British Constitution)

अभिसमय संविधान को पूर्ण बनाते है और साथ ही व्यावहारिक भी। उनके अभाव मे संविधान समुचित रूप से कार्य नहीं कर पाता। ब्रिटिश संविधान मे तो अभिसमयो का महत्त्व 'शरीर मे आत्मा' जैसा है। ब्रिटिश संविधान के निर्माण और क्रिया वयन मे इनकी कितनी महत्त्वपूर्ण भूमिका है, यह निम्नलिखित वर्णन मे स्पष्ट हो सकेगी—

(1) ब्रिटिश संविधान के निर्माण मे योगदान—ब्रिटिश संविधान बहुत कुछ अभिसमयो की उपज है। इनके कारण उसके विकास को बल मिला है और निरकुश राजतन्त्र आज के लोकतन्त्रीकरण मे बदल गया है। यह एक उदाहरण से भली-प्रकार स्पष्ट है। स्टूअर्ट काल तक राजा ही मन्त्रिमण्डलीय बैठकों का सभापतित्व करते थे। राजा की उपस्थिति में मन्त्रीगण अपनी इच्छानुसार निर्णय नहीं ले पाते थे, किन्तु हनोवर वशीय राजाओ की, अंग्रेजी भाषा से अनभिज्ञता और ब्रिटिश राजनीति मे विशेष रुचि न होने के कारण, ससद तथा मन्त्रिमण्डल को स्वेच्छानुसार व्यवहार करने के लिए छोड दिया। हनोवर राजा न तो मन्त्रिमण्डल की बैठको मे सम्मिलित होते थे और न उनका सभापतित्व करते थे।

हनोवर नरेशो के व्यवहार से यह परम्परा बन पड़ी कि राजा मन्त्रिमण्डल की बैठकों मे सम्मिलित नहीं होगा, इनकी अध्यक्षता प्रधानमन्त्री द्वारा ही की जाएगी। शनै-शनै दीर्घकालीन प्रयोग के कारण, यह परम्परा इतनी पक्की हो गयी कि आज तृतीय मन्त्रिमण्डलीय बैठकों का पुन सभापतित्व करने के प्रयत्न मे असफल रहा।

इस तरह कानून द्वारा नहीं बल्कि सांविधानिक परम्परा या अभिसमय द्वारा राजाओ के असाधारण अधिकार धीरे धीरे मन्त्रियो और ससद के हाथ मे आते गये। निरकुश राजतन्त्र आधुनिक लोकतन्त्रीकरण के मार्ग पर अग्रसर हुआ। अत मे स्थिति यह हो गयी कि आज राजा वास्तविक शासक नहीं है, वह सांविधानिक प्रधानमात्र है वह राज करता है, शासन नहीं।

केवल उपरोक्त अभिसमय ही नहीं, बल्कि 18 वीं शताब्दी के अन्त तक

मन्त्रिमण्डलीय व्यवस्था के लगभग सभी अभिसमय स्थापित हो गए। और तो और, ब्रिटेन के वर्तमान श्रमिक और रूढ़िवादी दलों का अभ्युदय भी परम्परा से ही हुआ। राजपद, संसद, मन्त्रिमण्डल आदि स्वयं भी अभिसमयों की ही उपज हैं।

(2) अभिसमयों द्वारा ब्रिटिश संविधान के क्रियान्वयन में योग—ब्रिटिश संविधान को और प्रशासन यन्त्र को सुगमतापूर्वक चलाये रखने में अभिसमयों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अभिसमय कानून की सूखी हड्डियों पर मांस चढ़ाते हैं। वे शासन के कठोर वैधानिक संगठन को बदलते हुए राजनीतिक विचारों और जनता की आवश्यकताओं के अनुसार उसे संशोधित करते हैं। अनेक अभिसमय इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि उनके न होने पर भीषण राजनीतिक कठिनाइयां उठ खड़ी हो सकती हैं और ब्रिटिश संविधान का कानूनी ढांचा लड़खड़ाकर गिर सकता है।

उदाहरण के लिए, ब्रिटेन में कुछ ऐसे अभिसमय हैं जो कानूनी सम्प्रभु और राजनीतिक सम्प्रभु के बीच मेल जोल बनाए रखते हैं। राजा कानूनी सम्प्रभु है और मन्त्रिमण्डल तथा संसद् व जनता राजनीतिक सम्प्रभु। कानूनी दृष्टि से सम्पूर्ण शासन शक्ति राजा (अथवा रानी) में निहित है। कानूनी रूप से राजा मन्त्रिमण्डल के परामर्श को मानने या संसद् द्वारा पारित विधेयकों पर स्वीकृति देने के लिए बाध्य नहीं है, लेकिन यदि राजा विशुद्ध रूप से इस कानूनी आचरण पर चलना शुरू करदे तो राजनीतिक सम्प्रभु अर्थात् मन्त्रिमण्डल, संसद और जनता से उसका संघर्ष शुरू हो जाएगा। पर ऐसी स्थिति को टालने का महान कार्य आज केवल एक अभिसमय पर आधारित है और वह यह है कि राजा को मन्त्रिमण्डल का परामर्श मानना चाहिए तथा संसद् द्वारा पारित कानूनों पर अपनी स्वीकृति देनी चाहिए। जब तक इस अभिसमय का पालन होता रहेगा तब तक कानूनी सम्प्रभु और राजनीतिक सम्प्रभु के टकराने की नौबत नहीं आएगी।

अब जरा यह भी देख लेना चाहिए कि यदि राजा इस अभिसमय का उल्लंघन करे तो क्या होगा। मान लीजिए कि राजा प्रधानमन्त्री का परामर्श ठुकरा देता है तो पहला परिणाम यह होगा कि प्रधानमन्त्री और साथ ही सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल को त्यागपत्र देना होगा ? अब राजा के पास दो ही रास्ते बच जायेंगे या तो विरोधी दल के नेता को सरकार बनाने के लिए आमन्त्रित करे या लोकसभा का विघटन करके नए निर्वाचनों का आदेश दे। विरोधी दल का नेता प्रथम तो, लोकसभा में बहुमत का समर्थन न होने से आमन्त्रण स्वीकार ही नहीं करेगा और यदि कर लेगा तो लोकसभा में उसके मन्त्रिमण्डल को प्रत्येक प्रश्न पर मुंह की खानी पड़ेगी। अन्ततः, बहुमत का समर्थन पाने के लिए सामान्य निर्वाचन कराने होंगे। अब यदि नया प्रधानमन्त्री निर्वाचनों में हार जायगा तो यह सम्राट की हार होगी। यदि राजा सीधे लोकसभा को भंग करके नये निर्वाचन करायेगा तो निर्वाचन मुख्यतः इसी प्रश्न पर लड़ा जायेगा कि राजा ने अपनी शक्तियों का दुरुपयोग किया

है। इस स्थिति में राजा स्वयं को राजनीतिक संघर्ष में घिरा पाएगा। अभिप्राय यह हुआ कि केवल एक अभिसमय के उल्लंघन से राजा और राजतन्त्रीय संस्थाओं का अस्तित्व खतरे में पड़ जायेगा। स्पष्ट है कि ऐसी मूर्खता कोई भी राजा नहीं करना चाहेगा।

कानूनी और राजनीतिक सम्प्रभु की इच्छाओं के मध्य सामंजस्य बनाये रखने वाला एक अन्य प्रमुख अभिसमय यह है कि राजा लोकसभा के बहुमत दलीय नेता को ही प्रधानमन्त्री नियुक्त करेगा तथा उसके द्वारा चुने हुए मन्त्रियों को मन्त्रि-मण्डल के रूप में स्वीकार कर लेगा। इस अभिसमय के मूल में यह भावना निहित है कि शासन की बागडोर जनता के प्रतिनिधियों के हाथ में रहनी चाहिए।

और भी अनेक अभिसमय ब्रिटिश संसदीय शासन के सुसंचालन में सहायक हैं उनके कारण मन्त्रिमण्डल और लोकसभा में सहयोग बना रहता है। उदाहरणार्थ, लोकसभा का विश्वास खो देने पर मन्त्रिमण्डल के त्यागपत्र देने का अभिसमय देश को उस संघर्ष की स्थिति से बचाता है जो कार्यपालिका और व्यवस्थापिका में मतभेद होने पर पैदा हो सकता है। इसी तरह लोकसभा का बहुसंख्यक दल ही मन्त्रिमण्डल बनाए—यह अभिसमय मन्त्रिमण्डल व लोकसभा में निकटतम सम्पर्क और सामंजस्य बनाए रखता है। लोकसभा कहीं स्वेच्छाचारी और व्यर्थ की अड़गेबाजी द्वारा मन्त्रिमण्डल का अनुचित विरोध करके प्रशासकीय यन्त्र को न गड़बड़ कर दे, इसके लिए भी अभिसमय विद्यमान है, वह यह है कि प्रधानमन्त्री राजा से अनुरोध करके अवांछित लोकसभा को भंग करा सकता है और दुबारा निर्वाचन कराके राष्ट्र का पुनः विश्वास प्राप्त कर सकता है।

ब्रिटेन में कुछ सांविधानिक अभिसमय ऐसे हैं जिनसे शासन कार्य का स्तर उन्नत होने में सहायता मिलती है। उदाहरणार्थ, यह अभिसमय है कि कानून बनने से पहले प्रत्येक विधेयक के तीन वाचन होने चाहिए। इस अभिसमय से विधेयक पर निश्चित रूप से सुधारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसी तरह एक अभिसमय यह है कि लार्ड-सभा जब अपीलीय न्यायालय के रूप में कार्य करे तो उसमें सिर्फ कानूनी लार्ड (Law Lords) ही बैठें। इस अभिसमय का सुधारात्मक प्रभाव यह होता है कि न्यायिक कार्य ठीकतौर पर चलता रहता है तथा कानून से अनभिज्ञ दूसरे लार्ड न्यायिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं कर पाते।

इन कुछ उदाहरणों से ही स्पष्ट है कि ब्रिटिश प्रशासन में अभिसमयों की कितनी उपयोगिता और महत्ता है। जेनिंग्स ने ठीक ही लिखा है कि "अभिसमय परिवर्तित सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों के अनुकूल शासन-व्यवस्था को ढालते हैं और शासक वर्ग को शासन-यन्त्र संचालित करने की योग्यता प्रदान करते हैं। व्हीयर (Wheare) के अनुसार "अभिसमय अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करते हैं, विधान मण्डल के दोनों सदनों के पारस्परिक सम्बन्धों को नियमित करते हैं, व्यवस्थापिका के संगठन को निर्धारित करते हैं, व्यवस्थापिका और

कार्यपालिका के सम्बन्ध को निश्चित करते हैं, राजनीतिक दलों और शासनांगों के सम्बन्ध निर्धारित कर, शासन की रूपरेखा को सन्तुलित करते है तथा शासन व्यवस्था को परिस्थितियों के अनुकूल लचीली और परिवर्तनशील बनाते हैं।"

अन्त मे साराश मे ब्रिटिश सविधान के अन्तर्गत अभिसमयों के महत्व के बारे मे कहा जा सकता है कि—

(1) "अभिसमयों ने ब्रिटिश राजपद को सीमाबद्ध और उसके सब अधिकारों को मन्त्रिमण्डल को हस्तातरित किया है।

(2) अभिसमयों ने मन्त्रिमण्डल के लोकसभा के प्रति सामूहिक और व्यक्तिगत उत्तरदायित्व के सिद्धान्त को विकसित किया है।

(3) अभिसमयों के कारण ही आज सावैधानिक विकास इस अवस्था को पहुच गया है कि मन्त्रिमण्डलों का निर्माण और विघटन प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचक करते है।

(4) अभिसमयों के द्वारा ही ब्रिटिश शासन-व्यवस्था नवीन सामाजिक एव आर्थिक परिस्थितियों के अनुकूल प्रगतिशील हो सकी है।

(5) ब्रिटिश शासन प्रणाली की मूल सस्थायें—राजपद, ससद, मन्त्रिमण्डल, प्रधानमन्त्री आदि अभिसमयों की ही उपज है। ससद् का दो सदनों मे सगठन होना, उसकी कार्य पद्धति का एक बडा भाग, सम्राट की स्थिति, कार्यपालिका और व्यवस्थापिका का सीमा विभाजन आदि व्यवस्थायें किसी कानून पर आधारित नही हैं बल्कि अभिसमयों पर आधारित है।"

अभिसमयों के बाहुल्य के कारण ही यह कहा जाता है कि ब्रिटेन मे कोई सविधान नही है।

3

राजा तथा राजमुकुट
(THE KING AND THE CROWN)

"कानून वैधानिक रूप में सम्राट की प्रभुशक्तियों, असाधारण अधिकारों एवं सामान्य अधिकारों का भण्डार है।"

—सर मौरिस एमोस

राजमुकुट का सांविधानिक अर्थ और अतीत में राजा व राजमुकुट

ब्रिटिश इतिहास में एक समय ऐसा रहा था जब राजा शासन का सर्वोच्च अधिकारी था। राजा स्वयं ही कानून बनाता, लागू करता तथा न्याय का काम करता था अर्थात वह ब्रिटेन का वास्तविक एवं निरंकुश शासक था। परन्तु राजा को ये अपरिमित शक्तियाँ राजतिलक होने के साथ ही प्राप्त होती थीं, उसके पूर्व नहीं। दूसरे शब्दों में राजा इन शक्तियों का अधिकारी तब होता था जब वह सिंहासनारूढ़ होकर राजमुकुट या ताज (Crown) पहनने का अधिकारी हो जाता था। इसका वास्तविक अभिप्राय यही हुआ कि विधायी, न्यायिक और कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियाँ व्यक्तिगत रूप में राजा की न होकर राजमुकुटधारी राजा की होती थीं, अर्थात पहले का शक्ति विहीन व्यक्ति विशेष राजतिलक होने पर जब राजमुकुट धारण कर लेता था तो वह शक्ति युक्त हो जाता था।

आशय यही हुआ कि राजमुकुट का शाब्दिक अर्थ चाहे 'राजा के सिर की टोपी (जिसे वह राज पद के चिन्ह स्वरूप पहनता है) हो, परन्तु सांविधानिक दृष्टि से शासन का वह साकार रूप हुआ जिसमें विधायी, न्यायिक और कार्यपालिका सम्बन्धी सभी शक्तियाँ निहित हों। इसीलिए जब व्यक्ति-विशेष (राजा) राजमुकुट-धारी बनता है तो उसे स्वतः ही उन सब शक्तियों के प्रयोग का अधिकार मिल जाता है, जो राजमुकुट में निहित हैं।

उपर्युक्त व्याख्या से स्पष्ट है कि राजा व राजमुकुट मे अन्तर है। राजा वह व्यक्ति विशेष है जो राजमुकुट मे निहित शक्तियो का प्रयोग करता है, अर्थात् सांविधानिक दृष्टि से राजमुकुट शासन का प्रतीक है राजा नही यह अन्तर आज भी विद्यमान है और भूतकाल मे भी था। फर्क सिर्फ यही है कि भूतकाल के इस अन्तर का कोई वैधानिक महत्व नही था, लोग इस पर ध्यान नही देते थे। ऐसा इसलिए था क्योकि उस समय राजमुकुट की समस्त शक्तियो का प्रयोग व्यक्तिश राजा करता था, आज की तरह अनेक संस्थाओं का समूह नहीं। राजमुकुट की शक्तिया अकेले राजा मे केन्द्रीभूत थी, अत राजा राजमुकुट था व राजमुकुट राजा, जबकि आज राजमुकुट की शक्तिया सामूहिक रूप से अनेक संस्थाओं या व्यक्तियों (ध्वजामात्र शासक राजा एव वास्तविक शासक ससद व मन्त्रिमण्डल तथा प्रिवी कौंसिल आदि) मे निहित हैं। आज अनेक मिलकर राजमुकुट की शक्तियो का प्रयोग करते हैं, पहले 'एक राजा—मात्र व्यक्तिश राजमुकुट की शक्तिया का प्रयोग करता था। 'राजतन्त्र के लोकतन्त्रीकरण' के कारण इस अन्तर का बड़ा महत्व हो गया है जिसे समझे बिना ब्रिटिश सविधान को भी अच्छी तरह नहीं समझा जा सकता।

राजा तथा राजमुकुट का अन्तर

(Distinction between the King and the Crown)

राजा और राजमुकुट मे अन्तर को दिए गए इतने महत्व से स्वभावत यह जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि आखिर ऐसा क्यो है ? अत इन दोनो के अन्तर पर प्रकाश डालने से पूर्व इस अन्तर या भेद के महत्व के कारणो को समझ लेना चाहिए।

राजा व राजमुकुट के भेद का महत्व

राजा और राजमुकुट का महत्व मुख्यतया दो कारणो से है—

(1) हमे ब्रिटिश सविधान के वास्तविक स्वरूप को समझने मे सहायता मिलती है। यह पता चलता है कि जिस राजा के नाम से सम्पूर्ण शासन चलता है वह व्यावहारिक दृष्टि से केवल नाममात्र का शासक है। शासन की शक्तियो का प्रयोग राजा (अथवा रानी) द्वारा नही वरन् राजमुकुट द्वारा किया जाता है जिसमे राजा, ससद्, मन्त्रिमण्डल तथा लोक सभा के सदस्य आदि शामिल होते हैं। ससद् और मन्त्रि मण्डल जो राजमुकुट के प्रतीक हैं, देश के वास्तविक शासक हैं।

(2) राजा व राजमुकुट के अन्तर को समझने से हम ब्रिटिश सविधान के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक रूप मे पाये जाने वाले अन्तर को समझ सकते हैं। हमे पता चलता है कि सिद्धान्त शासन सम्राट मे निहित है किन्तु व्यवहारत वास्तविक शक्तिया मुकुट मे चली आई हैं जो ससद् व मन्त्रियो द्वारा प्रयुक्त होती है। सिद्धात

में संसद् और मन्त्रि-मण्डल राजा की परामर्शदात्री संस्थायें हैं किन्तु व्यवहार में राजा उनके हाथ की कठपुतली है और शक्ति का प्रतीक-मात्र है।

यथार्थतः राजा और राजमुकुट के अन्तर का महत्व इसलिये है कि "ब्रिटिश शासन सिद्धान्ततः निरकुश राजतन्त्र, स्वरूप में सीमित राजतन्त्र और व्यवहार में लोकतन्त्रात्मक गणतन्त्र है। यहां राजतन्त्र और लोकतन्त्र दोनों साथ चल रहे हैं—प्रथम का प्रतीक राजा है और द्वितीय का प्रतीक राजमुकुट। राजा से जहां राजपद के अधिकारी व्यक्ति का बोध होता है, वहां राजमुकुट से ध्वज-मात्र शासक, मन्त्रि मण्डल तथा संसद आदि वास्तविक शासकों का बोध होता है।

इस पृष्ठ भूमि के उपरान्त राजा व राजमुकुट का अन्तर समझना अधिक सुगम है।

राजा व राजमुकुट में अन्तर

ब्रिटेन के सांविधानिक इतिहास में हम पढ़ चुके हैं कि पहले निरकुश राजतन्त्र था, लेकिन धीरे धीरे संसद् निरन्तर शक्ति ग्रहण करती चली गई। समय के साथ साथ राजतन्त्र रूपी संस्था के चारों तरफ विशेष प्रकार के कार्यों और शक्तियों का घेरा डाल दिया गया। इस प्रक्रिया से कालान्तर में राजा के सभी कार्य कानून और परम्पराओं के अधीन हो गये। शक्तियों के इस स्थानान्तरण के बाद राजा और राजमुकुट में जो वर्तमान अन्तर है, उसे निम्नानुसार व्यक्त किया जा सकता है—

राजमुकुट एक संस्था, राजा एक व्यक्ति—राजमुकुट एक संस्था है जबकि राजा एक व्यक्ति है, जो राजपद को सुशोभित करता है और राजमुकुट रूपी संस्था में निहित शक्तियों का प्रयोग करता है। राजमुकुट वह संस्था है जो शासन की प्रतीक है। इसमें व्यवस्थापन, कार्यपालन और न्याय तीनों से सम्बन्धित शक्तियां सम्मिलित हैं। राजा इस संस्था का एक अंगमात्र है और अंग भी ऐसा कि जिसके पास कोई वास्तविक शक्तियां नहीं हैं।

राजमुकुट स्थाई, राजा अस्थाई—राजमुकुट एक संस्था के रूप में सदैव बनी रहने वाली वस्तु है जिसका नाश नहीं होता, परन्तु राजा एक जीवित प्राणी के रूप में नाशवान है। राजमुकुट सदा से चला आ रहा है और सदा चलता रहेगा लेकिन राजा व्यक्ति के रूप में सदा नहीं रहता। एक राजा मरता है तो दूसरा उसका स्थान ग्रहण कर लेता है। इस तरह राजाओं के आने-जाने का चक्र चलता रहता है। परन्तु राजमुकुट अविनाशी (Immortal) है। 'राजा मर गया, राजा चिरंजीवी हो' का जयघोष राजा के व्यक्तिगत रूप और राजमुकुट के संस्थागत रूप के अन्तर पर प्रकाश डालता है। इसका अर्थ यही है कि राजा विशेष की मृत्यु हो सकती है, लेकिन राजमुकुट या राजपद (Institution of Kingship) स्थिर है। राजा और राजमुकुट के अन्तर को ग्लेडस्टोन के शब्दों में—"हैनरी, एडवर्ड या जाज मर सकते हैं, लेकिन राजा (क्राउन) कभी नहीं मरता।"

राजमुकुट सामूहिक, राजा वैयक्तिक—राजमुकुट का रूप सामूहिक है, राजा का वैयक्तिक। राजमुकुट एक बहुत कार्यकारणी है जिसमे ससद, मन्त्रिमण्डल और लोकसभा के सदस्य आदि सम्मिलित है। इसके विपरीत राजा वैयक्तिक नाम पालक है। राजमुकुट के सामूहिक रूप को बतलाते हुए वेड तथा फिलिप्स (Wade and Phillips) ने लिखा है कि, "राजमुकुट शब्द से शासन की सम्पूर्ण शक्ति के योग का बोध होता है और वह कार्यपालिका का पर्यायवाची है। राजमुकुट की कुछ शक्तियो के प्रयोग मे राजा से व्यक्तिगत विवेक से काम लेने के लिये कहा जा सकता है, कुछ का प्रयोग राजा मन्त्रियो के पूर्ण दायित्व पर करता है और कुछ के प्रयोग मे उसका कोई हाथ नही होता, क्योकि कानूनों पर आधारित अधिकाश शक्तिया मन्त्रियो को ही प्राप्त होती हैं यद्यपि उनका प्रयोग राजा के नाम पर किया जाता है तथापि वे मन्त्रिगण ही सरकारी तौर पर उसका वास्तविक प्रयोग करते हैं।"

राजमुकुट जन इच्छा का प्रतीक, राजा सजावट मात्र—चूकि राजमुकुट शासन की वास्तविक सत्ता अधिकारी है जिसकी शक्तियो का प्रयोग ससद, मन्त्रिमण्डल आदि के द्वारा किया जाता है, अत उसे जन इच्छा का प्रतीक कहा जाता है। इसके विपरीत, जो ध्वजमात्र शासक है, एक सजावट मात्र है जिसे 'स्वर्णिम शून्य' (Golden Zero) कहा गया है वह ब्रिटिश शासन की शोभा बढाता है।

अत सक्षेप मे कहा जा सकता है कि राजमुकुट (Crown) राजा, मन्त्री और ससद तीनो का सयोग है। बृहद अर्थ मे राजमुकुट का अभिप्राय "पूरी सरकार" (The Government) से है।

राजमुकुट की शक्तियो के स्रोत

(Sources of the Power of the Crown)

राजमुकुट की शक्तिया अत्यन्त पूर्ण और व्यापक हैं। इन शक्तियो के प्रधान स्रोत ये हैं—

(1) ससदीय कानून—ये वे कानून हैं जिनके द्वारा समय समय पर ससद मे राजमुकुट की शक्तियो को परिभाषित किया गया है। ससदीय कानूनो मे प्राप्त शक्तियो के अन्तर्गत शासन के विभिन्न विभागो के सचालन सम्बन्धी और स्थानीय या अन्य प्रशासनिक अधिकारियो पर नियत्रण से सम्बन्धी अधिकार सम्मिलित हैं। ससदीय नियम वस्तुत राजमुकुट की शक्ति के बडे उपजाऊ स्रोत बन गये है।

(2) विशेषाधिकार या परमाधिकार—राजमुकुट के विशेषाधिकार का अर्थ है—राजमुकुट की स्वतन्त्र शक्ति या अधिकार। दूसरे शब्दो मे, राजा या उसके सेवक ससदीय अधिनियमो के बिना भी केवल अपने अधिकार से क्या-क्या कर सकते है? यही विशेषाधिकारो की व्याख्या है।

ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो जनतन्त्र के उदय से पूर्व राजा की शक्तियों को विशेषाधिकार या परमाधिकार कहा जाता था। यह अधिकार उसे सामन्ती होने के नाते प्राप्त थे। किन्तु संसदीय लोकतन्त्र के विकास के साथ राजा के व्यक्तित्व से निहित सभी विशेषाधिकार छिन गये या नष्ट हो गये। जो शेष रहे, उन्हें आज राजमुकुट ने ग्रहण कर लिया है।

राजमुकुट के वर्तमान विशेषाधिकार भी इतने अधिक और जटिल हैं कि उन्हें यहां सूचीबद्ध करना सम्भव नहीं है। फिर भी, कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषाधिकार गिनाये जाते हैं—संसद का आह्वान करना, युद्ध अथवा तटस्थता की घोषणा, सन्धियों का अनुसमर्थन, सार्वजनिक पदों पर नियुक्ति, राज-सेवकों की बर्खास्तगी, पीयरों की नियुक्ति, अपराधियों का क्षमादान, आदि।

राजमुकुट के विशेषाधिकारों का सबसे बड़ा महत्त्व इस बात में है कि इससे एक ऐसे सुगम-तन्त्र (Convenient Mechanism) का जन्म होता है जिससे शासन के विभिन्न महत्त्वपूर्ण कार्य-कलाप चलते रहते हैं।

(3) विशेषाधिकारों व कानूनों का मिश्रण—राजमुकुट की शक्तियों का एक तृतीय स्रोत विशेषाधिकारों और कानूनों का मिश्रण है। राजमुकुट की कुछ शक्तियां इस प्रकार की हैं जो प्रारम्भ में विशेषाधिकार जनित थीं लेकिन जिन्हें बाद में संसद ने भी कानून बना कर मान्यता प्रदान कर दी है और इस तरह इनका स्रोत कानून और विशेषाधिकार दोनों ही हैं।

राजमुकुट के अधिकारों की परिवर्तनशीलता

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि राजमुकुट की शक्तियां निरन्तर परिवर्तनशील रही हैं। मैग्ना कार्टा (Magna Carta) के समय से ही वे घटती जाती रही हैं। राजा की वैयक्तिक शक्तियों को कम करने में जन-आन्दोलनों और संसदीय कानूनों दोनों का विशेष हाथ रहा है। जन आन्दोलन के फलस्वरूप मैग्ना-कार्टा स्वीकृत हुआ, जिसके द्वारा राजा पर यह प्रतिबन्ध लगा दिया गया कि वह कानून का उल्लंघन नहीं कर सकेगा। इसी तरह अधिकार याचिका (Petition of Rights) के द्वारा राजा पर यह अंकुश लगा दिया गया कि वह न तो मनमाने ढंग से लोगों को जेल में डाल सकेगा और न संसद् की पूर्व स्वीकृति के बिना कोई कर ही लगा सकेगा। संसदीय कानूनों की दृष्टि से अधिकार पत्र (Bill of Rights) का उदाहरण पेश किया जा सकता है, जिसके द्वारा राजा पर यह प्रतिबन्ध लगा दिया गया कि वह न तो देश के प्रचलित कानूनों को निलम्बित कर सकेगा और न उन्हें समाप्त ही कर सकेगा। राजा के कुछ अधिकार दीर्घकाल तक प्रयोग में न आने के कारण स्वतः ही समाप्त हो गये। उदाहरणार्थ, ट्यूडर वंश के समय से राजा ने लोक-सभा में प्रतिनिधि नियुक्त करने के अधिकार का प्रयोग नहीं किया, तथा उससे कुछ पहिले से लॉर्ड-सभा में आजन्म पीयर (Peer) नियुक्त करने के (संसद की स्वीकृति के बिना) अधिकार का भी प्रयोग नहीं किया। परिणामस्वरूप यह

मान लिया गया कि राजा के ऊपर लिखे दोनों अधिकार समाप्त हो गये हैं और वह स्वेच्छा से संसद के सदनों की सदस्य संख्या बढ़ाने का अधिकार नहीं रखता। परन्तु यह स्मरणीय है कि राजा की वैयक्तिक शक्तियों के क्षीण होने के साथ साथ राजमुकुट की शक्तियां बढ़ती गईं क्योंकि जो जो शक्तियां राजा से छीनी गईं, वे जनता को हस्तांतरित होती गईं और उनका प्रयोग उसके प्रतिनिधियों द्वारा राजमुकुट के माध्यम से किया जाने लगा। यह पहिले भी कहा जा चुका है कि राजमुकुट में जनता के प्रतिनिधि अर्थात् मन्त्रिगण और संसद सदस्य सामूहिक रूप से सम्मलित हैं।

पुनश्च, यह भी उल्लेखनीय है कि राजमुकुट की शक्ति राज्य विस्तार, अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं आदि के कारण भी वर्तमान युग में बढ़ती ही जा रही है। मन्त्रिमण्डल, कार्यपालिका के विभाग, सिविल सर्विस, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, गृह-संस्थाएं, वित्त-रक्षा, चर्च, न्यायालय आदि अनेक ऐसे विभाग हैं जो राजमुकुट द्वारा ही नियन्त्रित हैं। वस्तुतः ज्यों ज्यों लोक कल्याणकारी राज्य के विचार का विस्तार होता जायेगा और राज्य के कार्यक्षेत्र का विस्तार बढ़ता जायेगा राजमुकुट की शक्तियां भी बढ़ेंगी। ब्रिटिश संविधान का यह एक विरोधाभास ही है कि प्रजातन्त्र के विकास के साथ साथ राजमुकुट की शक्तियों में वृद्धि होती है।

राजमुकुट की शक्तियां, अधिकार और कार्य

(Powers, Functions and Rights of the Crown)

राजमुकुट में कार्यपालिका, व्यवस्थापिका और न्यायपालिका की सभी शक्तियां निहित हैं। उसकी व्यापक शक्तियों का अध्ययन हम निम्नलिखित वर्गों में कर सकते हैं—

(क) कार्यपालिका शक्तियां

राजमुकुट की कार्यपालिका शक्तियां अत्यन्त महत्वपूर्ण, व्यापक और निरन्तर वृद्धिशील हैं। इसकी कार्यपालक शक्तियों का विवेचन निम्न शीर्षकों में किया जा सकता है—

(1) प्रशासन निर्देशन—अमेरिका के राष्ट्रपति की भांति ही राजमुकुट का सबसे प्रमुख कार्य प्रशासन का निर्देशन करना है। इस नाते वह समस्त राष्ट्रीय कानूनों को क्रियान्वित करता है और सब प्रशासनिक विभागों तथा सरकारी कर्मचारियों के कार्यों की निगरानी करता है। वही उच्च कार्यपालक एवं प्रशासन अधिकारियों तथा न्यायाधीशों व सैनिक अधिकारियों की नियुक्त करता है। इसके अतिरिक्त न्यायाधीशों को छोड़कर अन्य अधिकारियों के विरुद्ध अनुशासन की कार्यवाही कर सकता है और उन्हें पदच्युत कर सकता है। न्यायाधीशों को पदच्युत करने के लिए संसद् के दोनों सदनों की सम्मिलित आवश्यकता होती है। राजमुकुट ही राष्ट्रीय कोष का नियन्त्रण और संचालन करता है। राष्ट्रीय बजट

उसकी ओर से प्रस्तुत किया जाता है और संसद की स्वीकृति के बाद, उसी के द्वारा कार्य रूप में लाया जाता है। कर्मचारियों की सेवा स्थिति की उचित व्यवस्था करना उसी का कर्तव्य है। वह राष्ट्रीय सैनिक सेवाओं का सर्वोच्च सेनापति है। उसका एक प्रमुख कार्य स्थानीय सरकारों के कार्यों की देख भाल व उनका नियन्त्रण करना है। राजमुकुट ही देश के दैनिक प्रशासन का नियन्त्रण और उसका संचालन करता है। स्पष्ट है कि प्रशासकीय क्षेत्र में राजमुकुट की शक्तियां, कार्य और अधिकार अत्यन्त व्यापक हैं।

(ii) **वैदेशिक सम्बन्धों का संचालन**—शासन के प्रमुख के रूप में राजमुकुट ही ब्रिटेन के वैदेशिक सम्बन्धों का संचालन करता है। समस्त विदेशी मामले या विदेशी कार्य उसी की ओर से अथवा उसी के नाम से होते हैं। विदेशों में सभी राजदूतों और उच्च कूटनीतिक प्रतिनिधियों की नियुक्ति वही करता है। वही अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में अपने प्रतिनिधि-मंडल भेजता है। विदेशों में ब्रिटिश प्रतिनिधियों को कार्य व नीति विषयक निर्देश भेजना, उसी का कार्य है। विदेशी राजदूत अपना प्रमाण-पत्र उसी को दिखाते हैं और वही उनका स्वागत करता है। युद्ध की घोषणा करने अथवा तत्सम्बन्धी संधि करने का अधिकार भी उसी का है। उसके द्वारा की हुई संधियों पर संसद की स्वीकृति की उस समय तक आवश्यकता नहीं है जब तक कि उसमें संसदीय स्वीकृति सम्बन्धी शर्तें न हों अथवा जब तक उसमें कोई ऐसा मामला ग्रस्त न हो (जैसे स्व भूभाग का परित्याग, धन की अदायगी अथवा देश के प्रचलित कानून में परिवर्तन) जिसको विधि अनुकूल बनाने के लिये संसद की स्वीकृति की आवश्यकता होती है।

यद्यपि राजमुकुट कुछ संधियों को स्वीकृति के लिए संसद में प्रस्तुत करता है किन्तु ऐसा करने के लिए वह कानूनी रूप से बाध्य नहीं है। संसद अपनी बजट पारित करने की शक्ति से राजमुकुट के परराष्ट्र सम्बन्धी कार्यों को प्रभावित कर सकती है, परन्तु कानूनी रूप से राजमुकुट बाधित नहीं है कि वह सब अन्तर्राष्ट्रीय संधियों को संसद में प्रस्तुत करके उसकी प्रत्यक्ष स्वीकृति प्राप्त करे। व्यापक हितों को ध्यान में रखते हुए राजमुकुट अनेक गोपनीय वैदेशिक संधियां को संसद में प्रस्तुत नहीं कर सकता।

(iii) **उपनिवेश व राष्ट्रमण्डल सम्बन्धी अधिकार**—ब्रिटिश उपनिवेशों व सुदूरस्थ अधीन प्रदेशों के शासन का राजमुकुट ही वास्तविक अध्यक्ष है। सम्राट (साम्राज्ञी) राष्ट्रमण्डलीय देशों का औपचारिक प्रधान है। पर अब राजमुकुट की राष्ट्रमण्डल व उपनिवेश सम्बन्धी शक्तियां का व्यावहारिक महत्व बहुत कम रह गया है। लगभग सभी ब्रिटिश उपनिवेश पूर्ण स्वतन्त्र हो चुके हैं और स्वराष्ट्र व परराष्ट्र सम्बन्धी अपनी नीतियों का स्वयमेव संचालन करते हैं। राजमुकुट उपनिवेशों के मन्त्रिमण्डल की परामर्श से वहां के सर्वोच्च शासकों की नियुक्ति करता है और वे राजमुकुट के प्रतिनिधि भी कहलाते हैं, परन्तु वह सब

केवल औपचारिक हैं। राजमुकुट के राष्ट्रमण्डलीय काय तो और भी औपचारिक हैं क्योंकि भारत, पाकिस्तान जसे पूण स्वतन्त्र राज्य भी राष्ट्रमण्डल के सदस्य हैं।

(ख) विधायनी शक्तियां

राजमुकुट को व्यवस्थापन सम्बन्धी अनेक शक्तिया प्राप्त हैं। ये शक्तिया स-संसद राजा अर्थात् राजा सहित संसद (King in Parliament) म निहित है। स संसद् राजा ही कानून निर्माण का अधिकारी माना जाता है। विधायिक क्षेत्र मे राजमुकुट की शक्तियो, उसके कर्त्तव्यो और अधिकारो को निम्नलिखित उपशीर्षकों में बाटा जा सकता है—

(1) ससद से सम्बन्धित—सयुक्त राज्य अमरिका के सवथा विपरीत ब्रिटन मे कायपालिका और व्यवस्थापिका को एक–दूसरे मे अभिन्न रखा गया है। विधायी शक्तिया ससद सहित सम्राट के हाथो म हैं। कोई भी विधेयक तब तक कानून नही बन सकता जब तक कि उस पर राजा की स्वीकृति प्राप्त न हो जाय। राजा को ससद् के दोनो सदनो से पारित किसी भी विधेयक को स्वीकृति प्रदान करने या उसका निषेध (Veto) करने का अधिकार है। परन्तु सन् 1707 के बाद से राजा द्वारा निषेध शक्ति का प्रयोग कभी नहीं किया गया है। अब यह शक्ति शून्य के समान ही है, हालांकि सिद्धान्त रूप मे यह विद्यमान है। आजकल तो राजा स्वय विधेयको पर अपनी स्वीकृति भी नही देता, अपितु पाच कमिश्नर, जिनकी नियुक्ति राजमुकुट राजकीय साईन मेनुअल (Sign Manual) के अनुसार करता है, अपनी स्वीकृति देते हैं।

ससद् म विधेयको के प्रस्तुत होने के सम्बन्ध मे भी राजमुकुट का हाथ रहता है। राजमुकुट की सिफारिश पर ही वित्त विधेयक प्रस्तुत किये जा सकते हैं। अन्य सरकारी विधेयक भी मन्त्रियो द्वारा ही पेश किय जाते हैं और उन्हें ऐसा करने का अधिकार राजमुकुट के मन्त्री होने के नाते प्राप्त है।

राजमुकुट को ससद से सम्बन्धित और भी अनेक अधिकार हैं। ससद् के निर्माण के सम्बन्ध मे उसे पीयर (Peer) बनान का अधिकार है। केवल वे ही लोग लार्ड-सभा के सदस्य हो सकते हैं, जो राजा द्वारा पीयर बनाये जाते हैं।

लोक सभा के निर्वाचन की तिथि की घोषणा भी राजमुकुट द्वारा ही की जाती है। राजमुकुट के मत्री ससद के सदस्य भी होते हैं और वे ससद की काय-वाहियो पर निगाह तथा नियन्त्रण रखते हैं और यह निणय करते हैं कि ससद मे अमुक विषय पर किस प्रकार सुगमता से कायवाही की जा सकती है?

राजमुकुट ही लोक–सभा का स्थगन और विघटन करता है। लॉर्ड–सभा के बारे मे उसे ऐसा अधिकार प्राप्त नहीं है क्योंकि वह एक स्थायी संस्था है। ससद का सत्रावसान भी राजमुकुट ही करता है।

जब नई ससद का सम्मेलन होता है तो प्राय राजा ही लॉर्ड-सभा मे, जहा लोक सभा के सदस्य भी होते हैं, स्वयं उपस्थित होकर अपना सिंहासन भाषण

(Speech from the Throne) देता है और उसके द्वारा संसद का स्वागत करता है परन्तु राजा के इस भाषण को वास्तव में मन्त्री ही तैयार करते हैं और उसे राजा को पढ़ने-मात्र के लिए दे देते हैं।

(ii) स परिषद आदेश (Orders in Council)—राजमुकुट का एक अन्य प्रमुख कार्य है स परिषद आदेश निकालना। इनका अभिप्राय यह है कि संसद विधेयकों की मोटी रूपरेखा मात्र पारित कर देती है और सूक्ष्म बातों की पूर्ति का कार्य राजमुकुट पर छोड़ देती है जिसे वह अपने मन्त्रियों द्वारा करता है। इस प्रकार से उपव्यवस्थापन के अन्तर्गत मन्त्रिमण्डल विभिन्न आदेश निकालता है जो राजमुकुट के नाम से जारी किये जाते हैं। इन आदेशों को स परिषद आदेश (Orders in Council) कहा जाता है। इनका महत्व कानूनों के समान ही होता है।

(ग) न्यायिक शक्तियां

राजमुकुट को न्याय का स्रोत (Fountain of Justice) कहा जाता है। परन्तु अब यह कथन केवल औपचारिक बन गया है क्योंकि ब्रिटेन में स्वतन्त्र न्यायपालिका का अस्तित्व है। फिर भी न्यायालय राजमुकुट के अधिकार क्षेत्र से पूरी तरह बाहर नहीं है। ब्रिटेन में सभी न्यायालय राजा के न्यायालय हैं, और समस्त न्याय राजा के नाम से होते हैं। राजमुकुट ही न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है और संसद की सहमति से उन्हें पदच्युत भी कर सकता है।

राजमुकुट प्रिवी कौंसिल की न्याय समिति की परामर्श से उपनिवेशों से आयी हुई अपीलों का निर्णय करता है। समस्त अधिकारियों को राजमुकुट के नाम से दण्डित किया जाता है।

राजमुकुट के न्यायपालिका सम्बन्धी अधिकार कुछ दृष्टियों से प्रतिबन्धित हैं। उदाहरणार्थ, राजमुकुट का यह अधिकार नहीं है कि वह कोई नवीन न्यायालय बना सके। इसी तरह वह किसी वर्तमान न्यायालय के संगठन और उसकी कार्य विधि में भी परिवर्तन नहीं कर सकता। न्यायाधीशों की संख्या, उनके कार्यकाल, उनकी नियुक्ति, विधि और वेतन आदि में भी कोई परिवर्तन करने का उसे अधिकार नहीं है। अपील का अन्तिम न्यायालय भी राजमुकुट न होकर लार्ड सभा है। राजमुकुट की न्यायिक शक्तियों के बारे में ऑग (Ogg) ने ठीक ही लिखा है कि आज यह केवल एक प्रथा सी हो गई है कि उसे गौरव के साथ न्याय का स्रोत कहा जाता है अन्यथा इसमें वास्तविकता बहुत कम है।

राजमुकुट की न्यायिक शक्तियों में ही हम उसके महत्वपूर्ण अधिकार क्षमादान व दण्ड स्थगन को ले सकते हैं। राजमुकुट को यह विशेषाधिकार है कि वह इस अपराधियों का क्षमा कर दे जो फौजदारी मामलों में दोषी हों। यह कार्य उसके गृह सचिव (Home Secretary) द्वारा किया जाता है। फौजदारी मामलों में राजमुकुट मृत्यु दण्ड प्राप्त अपराधी तक को क्षमा कर सकता है। दीवानी मामलों में राजमुकुट को ऐसे कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं हैं।

(घ) धार्मिक शक्तियां

राजमुकुट को विभिन्न धार्मिक शक्तियां (Ecclesiastical Powers) भी प्राप्त हैं। ब्रिटेन में एग्लीकन (Anglican) और प्रेसबिटेरियन (Presbyterian) चर्च राज्य के अवयव के रूप में हैं। उनका नियन्त्रण राजमुकुट व ससद द्वारा होता है। इंगलैड के स्थापित चर्च का प्रमुख होने के नाते वह कैंटरबरी तथा याक के आँच-विशपो तथा अन्य चर्चों के पदाधिकारियों की नियुक्ति करता है। राजा की अनुमति से ही 'चर्च ऑफ इंगलैड की राष्ट्रीय सभा' (National Assembly of the Church of England) की समस्त कार्यवाहियां होती हैं। चर्च के 'कनवोकेशन' केवल राजमुकुट ही बुला सकता है। कनवोकेशन द्वारा पारित नियमों के लिए राजमुकुट की अन्तिम स्वीकृति आवश्यक होती है। सम्राट चर्च के अन्तर्गत अनुशासन सम्बन्धी विषयों का सर्वोच्च अधिकारी है। धार्मिक अदालतों (Ecclesiastical Courts) से अपीलें प्रिवी कौंसिल की न्यायिक समिति के पास आती हैं। स्कॉटलैड के स्थापित चर्च (Established Church of Scotland) अर्थात् प्रेसबिटेरियन चर्च के सम्बन्ध में राजमुकुट की शक्तियां उतनी महत्वपूर्ण नहीं हैं।

व्यक्तिगत रूप में राजा का यह धार्मिक दायित्व है कि वह किसी रोमन कैथोलिक से विवाह न करे, क्योंकि वह एग्लीकन व प्रेसबिटेरियन दोनों ही धार्मिक व्यवस्थाओं का प्रमुख है। अपनी धार्मिक शक्तियों के कारण ही राजा 'धर्म रक्षक' (Defender of the Faith) कहा जाता है।

(ङ) सरक्षण और सम्मान की शक्तियां

राजमुकुट को 'सम्मान का स्रोत' (Fountain of Honours) भी कहा जाता है। यही नागरिकों को राजनीतिक व सामाजिक सम्मान और उपाधियां प्रदान करता है। उदाहरणार्थ 'पीयर' बनाया जाना यदि राजनीतिक सम्मान है तो 'नाइट' (Knight) की उपाधि देना सामाजिक सम्मान है। प्रधानमन्त्री के परामर्श से ही सम्राट द्वारा लोगों को उपाधियां से सुशोभित किया जाता है।

राजमुकुट की शक्तियां किस प्रकार व्यवहार में लाई जाती हैं ?

ऊपर वर्णित शक्तियां और अधिकार वैधानिक दृष्टि से राजमुकुट में निहित हैं, किन्तु यथार्थ में उन सभी का प्रयोग मन्त्रिमण्डल, ससद तथा लोक-सेवा के सदस्यों आदि के द्वारा किया जाता है। राजमुकुट की शक्तियों का प्रयोग राजा (या रानी) स्वयं नहीं करता। ये शक्तियां राजा के नाम में अन्य लोगों द्वारा प्रयुक्त होती हैं। यथार्थतः राजमुकुट की शक्तियों के रखवाले ससद के प्रति उत्तरदायी मन्त्री ही होते हैं। उनका नियन्त्रण इस सीमा तक विस्तृत है कि राजा के कुछ व्यक्तिगत सेवकों को छोड़कर अन्य सभी अधिकारियों की नियुक्ति अथवा छांट उनके मन्त्रियों के हाथ में है। राजा का कोई आदेश तब तक वैध नहीं समझा जाता

जब तक कोई मन्त्री उस पर हस्ताक्षर न कर दे। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि राजमुकुट जो भी करता है, चाहे परमाधिकारों का प्रयोग हो या संसदीय कानूनों द्वारा दी गई शक्तियों का प्रयोग, वह ब्रिटिश जनता के कार्यपालिका प्रतिनिधि के रूप में करता है और ये सभी कार्य संसद के नियन्त्रण के अधीन हैं।

राजा की वास्तविक स्थिति, उसके विशेषाधिकार और प्रभाव

(The Actual Position, Privileges and Influence of the Sovereign)

राजमुकुट की शक्तियों के प्रसंग में स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि राजमुकुट में निहित शक्तियों का प्रयोग राजा स्वयं किस हद तक कर सकता है? दूसरे शब्दों में राजमुकुट रूपी सत्ता में राजा की वास्तविक स्थिति क्या है? वह केवल मात्र एक 'स्वर्णिम शून्य (Golden Zero) अथवा 'रबर की मुहर' (Rubber Stamp) है अथवा शासन में कुछ प्रभाव और विशेष स्थिति का भी उपभोग करता है? इंगलैंड में राजा की वास्तविक स्थिति का मूल्यांकन के लिए हम निम्नलिखित बातों पर विचार करना होगा—

(1) 'राजा कोई गलती नहीं कर सकता' (The King can do no wrong)

(2) "राजा राज्य करता है, शासन नहीं करता" (The King reigns, but does not govern)

(3) राजा के विशेषाधिकार और उन्मुक्तियाँ (Royal Privileges and mmunities)

(4) विभिन्न कारणोंवश राजा का विस्तृत प्रभाव।

राजा कोई गलती नहीं कर सकता

इस कथन का प्रयोग इस अर्थ में किया जाता है कि राजा को किसी कार्य के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि लॉवेल (Lowell) के शब्दों में "संविधान के पुराने सिद्धान्त के अनुसार मन्त्री लोग राजा के सलाहकार होते थे। उनका काम था सलाह देना और राजा का काम था निर्णय करना। अब स्थिति बिल्कुल विपरीत हो गई है। राजा से सलाह ली जाती है किन्तु निर्णय मन्त्री करते हैं। वास्तव में इस उक्ति के दो रूप हैं—कानूनी और राजनीतिक। कानूनी रूप से राजा अपने कार्यों के लिए कानून से ऊपर है क्योंकि वह स्वयं स्व विवेक से कोई काम नहीं करता बल्कि मन्त्रियों के परामर्श से ही कोई भी काम करता है। राजनीतिक दृष्टि से आशय है कि यदि राजा कोई राजनीतिक भूल करे या किसी अपराध का परामर्श दे तो भी उसके विरुद्ध कुछ नहीं किया जा सकता। उस भूल के लिये सम्बन्धित विभाग का मन्त्री ही उत्तरदायी ठहराया जायेगा और वह स्वयं । कानूनी या संवैधानिक अपराध के दोष से बचा नहीं सकेगा।

"राजा कोई गल्ती नही कर सकता" इस सूत्र को अधिक सरलता से इसके निम्नलिखित तीन अर्थों द्वारा समझा जा सकता है—

(i) राजा कानून से ऊपर है—इसका अर्थ है कि राजा विधि और न्याय का स्रोत है। उस पर किसी भी विधि के अन्तर्गत दोष आरोपित नही किया जा सकता। राजा पर न किसी न्यायालय मे अभियोग ही लगाया जा सकता है और न किसी न्यायालय द्वारा उसे अपराधी ही घोषित किया जा सकता है। यहा तक कि राजा किसी की हत्या भी कर दे तो भी ब्रिटिश विधान मे ऐसा कोई नियम नही है जिसके द्वारा उस पर अभियोग चलाया जा सके।

(ii) राजा दूसरो से भी गलत कार्य नहीं करा सकता—यह अर्थ पहिले अर्थ से ही निकलता है। जब राजा स्वय कोई भूल नही कर सकता तो वह दूसरो से भी गलत कार्य नहीं करा सकता अथवा किसी भी व्यक्ति को गलती करने के लिए अधिकृत नही कर सकता। इस प्रकार यदि कोई मत्री कोई कानूनी या सांविधानिक अपराध करता है तो वह यह कहकर अपनी रक्षा नही कर सकता कि उसने यह काम राजा की आज्ञानुसार किया है। दूसरे शब्दो मे कोई भी अधिकारी अपने द्वारा किय गये किसी अवधानिक कृत्य के लिए राजा की कानूनी उन्मुक्ति (Legal Immunity) की शरण नही ले सकता। कोई भी अपराधी यह बात कह कर अपनी सफाई नही दे सकता कि राजा के कहने से उसने यह गलती की है। सन 1678 मे 'डेनबी काण्ड' (Danby's case, 1678) मे इस सिद्धान्त का ही प्रतिपादन किया गया था। विदेश मन्त्री डनबी ने फ्रास के साथ एक गुप्त सधि बिना अन्य मन्त्रियो की सलाह लिय कर ली थी। जब ससद ने उस पर राजद्रोह का अभियोग लगाया तो डेनबी ने अपने बचाव म यह तर्क पेश किया कि उक्त पत्र सम्राट के आदेश के अधीन लिखा गया था, और चू कि सम्राट कोई गलती नही कर सकता, अत वह दोषी नही है। अपने महाभियोग के समय उसने राजकीय क्षमा भी उपस्थित की। लेकिन, ससद ने सब दलीलो को अस्वीकार करते हुए यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि अपने कार्यों के लिए मत्री ही उत्तरदायी हैं और वे किसी भी अवैध या असवैधानिक कृत्य के लिए 'राजा के आदेश' की शरण नही ले सकते।

(iii) राजा के कार्य के लिए किसी दूसरे व्यक्ति को उत्तरदायी होना चाहिए—उपर्युक्त दूसरे अर्थ से ही तीसरा अर्थ यह निकलता है कि यदि राजा न स्वय भूल कर सकता है, न दूसरे व्यक्ति, से भूल करवा सकता है, तो किसी न किसी व्यक्ति को उसके गलत कार्य के लिय उत्तरदायी होना चाहिए। राजा की किसी भी भूल का उत्तरदायित्व स्वाभाविक रूप से उस मन्त्री पर होता है जिसके परामर्श से उसने यह भूल की। इस प्रकार यह कथन मन्त्रियो के उत्तरदायित्व की स्थापना करता है जो ब्रिटिश शासन-प्रणाली की आधारशिला है।

स्पष्ट है कि ब्रिटेन का राजा व्यक्तिगत रूप से कोई कार्य नहीं करता उसे सभी कार्य मन्त्रियो की सलाह पर करने पडते हैं और उसके सभी कार्यों मे

मंत्री ही उत्तरदायी होते हैं। इस सम्बन्ध में ग्लैडस्टन (Gladston) ने सत्य ही कहा था कि, "राजा के जीवन में उसके राज सिंहासन पर आसीन होने के समय से उसकी मृत्यु तक एक भी क्षण ऐसा नहीं जाना जबकि उसके कार्यों के लिए कोई न कोई मंत्री संसद के प्रति उत्तरदायी न हो और राजा तब तक कोई कार्य नहीं कर सकता जब तक कि कोई मंत्री उसका उत्तरदायित्व वहन करने को तैयार न हो।"

वास्तव में मन्त्रिमण्डलीय उत्तरदायित्व के परिणामस्वरूप राजा आज राजनीतिक दलबन्दी से अलग हो गया है और यदाकदा मन्त्रिमण्डल को ही यश अथवा अपयश प्राप्त होता है न कि राजा को।

राजा राज्य करता है, शासन नहीं करता

ब्रिटिश राजा की स्थिति को इन बहुचर्चित शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है कि "राजा राज्य करता है, शासन नहीं।" इसका अभिप्राय यह है कि वैधानिक दृष्टि से तो राजा का आज भी प्राचीनकाल जैसा ही महत्व है, लेकिन वास्तव में वह अब उन शक्तियों का प्रयोग नहीं करता जिनका प्राचीनकाल में प्रयोग किया जाता था। प्रजातन्त्र के विकास के फलस्वरूप राजा आज केवल सांविधानिक अथवा नाममात्र का "शासन प्रमुख" रह गया है। उसकी उक्त सभी वास्तविक शक्तियाँ "राजमुकुट" नामक अमूर्त या काल्पनिक संस्था में निहित हो गई हैं। "राजमुकुट" की किसी भी शक्ति का प्रयोग राजा या रानी व्यक्तिगत रूप से नहीं करता। इनका प्रयोग उत्तरदायी मन्त्रियों द्वारा किया जाता है। इस प्रकार यह कहना सच है कि राजा के हाथों में शासन की कोई शक्तियाँ नहीं हैं, अर्थात् राजा शासन नहीं करता परन्तु राजा राज्य करता है अर्थात् नाम मात्र का राजा है क्योंकि शासन के सभी कार्य उसी के नाम से होते हैं और उसे राजा जैसा सम्मान प्राप्त है।

परन्तु 'राजा शासन नहीं करता' इससे यह नहीं समझना चाहिए कि राजा सर्वथा प्रभावहीन है और उसका कोई महत्व नहीं है। पास में वास्तविक शक्तियाँ न होते हुए भी राजा शासन पर काफी असर डालता है। बजहॉट के अनुसार उसे शासन के क्षेत्र में तीन महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त हैं—

(i) परामर्श देने का अधिकार,
(The Right to the consulted)

(ii) प्रोत्साहन देने का अधिकार,
(The Right to Encourage)

(iii) चेतावनी देने का अधिकार
(The Right to Warn)

आज राजा शासन का आलोचक, परामर्शदाता और मित्र है। उसके परामर्श देने के अधिकार का आशय है कि वह मंत्रियों के कार्यों की पूर्ण जानकारी रखे और उन्हें आवश्यकतानुसार उचित परामर्श दे। प्रोत्साहन देने के अधिकार का अर्थ है कि राजा यदि किसी नीति को राज्य के लिए कल्याणप्रद समझे तो मन्त्रियों

को उसे पूरा करने के लिए प्रोत्साहित करे। चेतावनी देने के अधिकार का मतलब है कि यदि मन्त्रियों द्वारा कोई गलत निर्णय किया जाय या उनका कोई काम देश के लिए हानिप्रद हो तो राजा उन्हें चेतावनी देने और गलती दूर करने के उपाय भी बतलाये, किन्तु चेतावनी के अधिकार का यह अर्थ समझना भ्रामक होगा कि राजा मन्त्रियों का विरोध करने की क्षमता रखता है। राजा चेतावनी दे सकता है, लेकिन मन्त्रियों का अधिकार है कि वे राजा की बातों को मानें या न मानें।

वास्तव में एक प्रभावशाली राजा अपने प्रयुक्त अधिकारों से प्रशासकीय मामलों और घटना-चक्र को प्रभावित करने में बहुत कुछ सफल हो सकता है। अपने इन अधिकारों के कारण वह केवल प्रतिमा मात्र या स्वर्णिम शून्य नहीं बन पाया है। ब्रिटेन का इतिहास बतलाता है कि विभिन्न अवसरों पर ब्रिटिश राजाओं और रानियों ने प्रशासनिक कार्यों में हस्तक्षेप करने की सरकार की नीति को बड़ा प्रभावित किया है पर यह सब कुछ वस्तुतः राजा के व्यक्तित्व पर निर्भर करता है, उसकी औपचारिक शक्तियों पर नहीं।

राजा के कुछ विशेषाधिकार

राजा की वास्तविक स्थिति को आंकने की दिशा में उसके विशेषाधिकारों का अध्ययन भी सहायक है। यद्यपि शासन से सम्बन्धित कोई भी कार्य करने की स्वतन्त्रता उसे नहीं है, फिर भी वह अपने विशेषाधिकारों के क्षेत्र में अपने विवेक से महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकता है। संविधान शास्त्रियों के अनुसार राजा के अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषाधिकार ये हैं—(1) प्रधानमन्त्री एवं अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति करने का, (2) लोकसभा को भंग करने का, (3) मन्त्रियों को बर्खास्त करने का, (4) लोगों को पीयर बनाने का, एवं (5) विधेयकों पर अपनी स्वीकृति देने या न देने का।

प्रधानमन्त्री और अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति का विशेषाधिकार—सरकार का प्रमुख होने के नाते राजा को अधिकार है कि वह अपनी समझ से उपयुक्त व्यक्ति को प्रधानमन्त्री पद पर नियुक्त करदे। परन्तु अपने इस चुनाव में राजा पर यह प्रतिबन्ध है कि वह व्यक्ति एक स्थायी मन्त्रिमण्डल बनाने के लिए लोक सभा में बहुमत का विश्वासपात्र होना चाहिए। अपने इस निर्णय में वह इस परम्परा से निर्देशित होता है कि लोकसभा का नेता कौन है। हां, कुछ असामान्य परिस्थितियों में राजा को अपनी ओर से प्रधानमन्त्री नियुक्त करने का अवसर मिल सकता है। उदाहरणार्थ, किसी प्रधानमन्त्री की मृत्यु हो जाने पर अथवा उसके त्याग-पत्र दे देने पर या लोकसभा में किसी दल का बहुमत न होने पर प्रधानमन्त्री पद के अनेक उम्मीदवार हों और यह निश्चित न हो पाय कि बहुमत का नेतृत्व किसके हाथ में है तो राजा स्वविवेक का प्रयोग करते हुए किसी को भी प्रधानमन्त्री नियुक्त कर सकता है। सन् 1894 में रानी विक्टोरिया ने उस अवस्था में लार्ड रोजबरी को प्रधानमन्त्री बनाया, जब उस पद के कई प्रत्याशी थे। प्रधानमन्त्री की नियुक्ति

मे राजा के स्व विवेक के प्रयोग का एक अन्य उदाहरण उस अवसर का है जब कि आर्थर हण्डरसन के लोक सभा के बहुमत वाले दल का नेता चुन लिए जाने पर भी राजा ने रमजे मैकडोनल्ड को संयुक्त सरकार का प्रमुख नियुक्त कर दिया। इस घटना को 1931 की राजमहल की क्रान्ति (Palace Revolution of 1931) की संज्ञा दी जाती है। इसके अतिरिक्त एक परम्परा के अनुसार राजा आमतौर से स्वयं पदच्युत प्रधानमन्त्री से उसके उत्तराधिकारी के बारे में सलाह लेता है, परन्तु वह ऐसा करने के लिये बाध्य नही है। 1956 मे जब स्वेज संकट पर एन्थोनी ईडन ने त्याग पत्र दिया तो महारानी एलिजाबेथ ने दूसरे प्रधानमन्त्री के लिए ईडन से नही बल्कि दो बुजुर्ग राजनीतिज्ञो—चर्चिल और लार्ड सेलिसबरी से मन्त्रणा की तथा चर्चिल की राय मानते हुए मैकमिलन को नया मन्त्रिमण्डल बनाने के लिए आमन्त्रित किया।

जहा तक अन्य मन्त्रियो की नियुक्तियो का प्रश्न है, प्रधानमन्त्री का परामर्श ही प्राय निर्णायक सिद्ध होता है। हा, एक प्रभावशाली व्यक्तित्व वाला राजा (या रानी) मन्त्रियो के चयन मे प्रधान मन्त्री को प्रभावित कर सकता है, किन्तु इस विषय मे प्रधान मन्त्री का विरोध नही किया जा सकता।

लोकसभा को भग करने का विशेषाधिकार——राजा का एक अन्य विशेषाधिकार प्रधानमन्त्री के परामर्श पर अथवा उसकी प्रार्थना पर लोकसभा को भग करने से सम्बन्धित है। इस विषय मे दो प्रमुख मत प्रचलित हैं—एक मत तो यह है कि राजा का लोकसभा को विघटित करने का विशेषाधिकार वास्तविक है, जबकि दूसरा मत यह है कि राजा का यह अधिकार अवास्तविक है। पहले मत के समर्थक 'संरक्षता-सिद्धान्त' (Theory of Guardianship) को मानने वाले हैं। उनका विचार है कि राजा संविधान का संरक्षक है, अत उसका यह वास्तविक विशेषाधिकार है कि लोकसभा के विघटन के प्रश्न पर वह स्व विवेक से कार्य करे। इस विचार के समर्थकों में एन्सन, कीथ और क्विंटिन हॉग (Quintin Hogg) प्रमुख हैं। दूसरे मत के समर्थक 'लोकतन्त्रात्मक सिद्धान्त' (Democratic Theory) अथवा 'संसदीय सिद्धान्त' (Parliamentarian Theory) को मानने वाले हैं। इनका विचार है कि संसद के विघटन का राजा का विशेषाधिकार अवास्तविक है। सांविधानिक प्रमुख होने के नाते उसका कर्त्तव्य है कि वह अपने सभी विशेषाधिकारो का प्रयोग अपने मन्त्रियों के परामर्श से करे ताकि संविधान की रक्षा और संसदीय शासन प्रणाली का निर्वाह हो सके। लास्की का निष्कर्ष है कि अपने हित अथवा स्वार्थ की दृष्टि से राजा को मन्त्रिमण्डल के परामर्श से ही अपने विशेषाधिकारों का प्रयोग करना चाहिये अन्यथा राजा का प्रभाव अधिक दल के विरोध मे और अनुदार दल के पक्ष में प्रयुक्त हो सकता है। पर अब तक यह भी है कि यदि राजा को संविधान का संरक्षक मान लिया जायेगा तो उसकी निरंकुशता का प्रोत्साहन मिलेगा।

व्यावहारिक और तार्किक दोनों ही दृष्टियों से राजा के विशेषाधिकारों के प्रयोग के विषय में संसदीय या लोकतन्त्रात्मक सिद्धान्तवादियों का मत ही अधिक उपयुक्त है। वैसे भी सन् 1784 के बाद से अब तक कोई ऐसा उदाहरण नहीं है कि राजा ने लोकसभा के विघटन से सम्बन्धित प्रधानमन्त्रीय परामर्श को न माना हो।

मन्त्रियों की बर्खास्तगी का विशेषाधिकार—राजा के इस विशेषाधिकार की वास्तविकता के बारे में भी विद्वानों में मतभेद है। कुछ लोगों का मत है कि मन्त्रियों को बर्खास्त करने सम्बन्धी राजा का विशेषाधिकार वास्तविक है। सन् 1783 में जार्ज पंचम ने लार्ड नार्थ फाक्स के मन्त्रिमण्डल को बर्खास्त करके अपने इस अधिकार का प्रत्यक्ष परिचय दिया था। जेनिंग्स का कहना है कि यदि राजा को यह विश्वास हो जाये कि शासक दल बहुमत द्वारा समर्थित नहीं रहा है तो इस सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी प्राप्त करके और भली प्रकार आश्वस्त होने के बाद ही वह मन्त्रिमण्डल से त्यागपत्र देने अथवा लोकसभा का विघटन करने की बात पर बल दे सकता है और यदि मन्त्रिमण्डल राजा की बात न माने तो उसे मन्त्रिमण्डल को अपदस्थ करने का अधिकार है। परन्तु चूंकि यह मार्ग कंटकाकीर्ण है, अतः जेनिंग्स का विचार है कि उचित यही है कि या तो राजा अपने मन्त्रियों को इस बात के लिये तैयार करले कि वे उसे लोकसभा के विघटन का परामर्श दें या त्याग पत्र दे दे।

इस सम्बन्ध में अधिकांशतः मान्य मत यही है कि राजा स्वेच्छा से अपनी इस शक्ति का प्रयोग प्रायः नहीं कर सकता। पूरे मन्त्रिमण्डल की बर्खास्तगी का उसका प्रयत्न निष्फल रहेगा, यदि उस मन्त्रिमण्डल को लोकसभा में बहुमत का समर्थन प्राप्त है। व्यक्तिगत मन्त्रियों को बर्खास्त करने का साहस वह प्रधानमन्त्री से शत्रुता मोल लेकर नहीं करेगा क्योंकि लोकसभा में बहुमत का नेतृत्व करने वाला प्रधानमन्त्री रुष्ट होकर राज-पद के अस्तित्व के लिए भी खतरा पैदा कर सकता है। व्यक्तिगत मन्त्रियों को वह प्रधानमन्त्री के परामर्श पर ही बर्खास्त करेगा।

पीयर बनाने का विशेषाधिकार—राजा का एक उल्लेखनीय विशेषाधिकार लोगों को 'पीयर (Peer) बनाने से सम्बन्धित है। यदि लार्ड सभा लोकसभा द्वारा पारित किये गये विधेयक का विरोध करे तो राजा प्रधानमन्त्री के परामर्श पर लार्ड-सभा के विरोध को दबाने के लिये नये पीयरों का निर्माण कर सकता है। परन्तु यदि वह ऐसा न करना चाहे तो प्रधानमन्त्री से यह कह सकता है कि वह विवाद ग्रस्त विधेयक को विषय बनाकर पुनः साधारण निर्वाचन कराये और यह देखे कि सत्तारूढ़ दल को सम्पूर्ण राष्ट्र का समर्थन प्राप्त है या नहीं। लार्ड-सभा की शक्ति के अत्यधिक घट जाने से राजा के विशेषाधिकारों का अब महत्व अधिक नहीं रहा है।

विधेयकों पर स्वीकृति देने या न देने का विशेषाधिकार--राजा का यह विशेषाधिकार वर्तमान परिस्थितियों में अवास्तविक ही है। यद्यपि सन 1852 में डिजरैली ने राजा के इस अधिकार को वास्तविक बतलाया था, किन्तु 1707 से अब तक इस अधिकार का प्रयोग किसी राजा द्वारा नहीं किया गया है और अब इस अधिकार को मृतप्राय समझा जाता है। आज तो स्थिति यह है कि राजा स्वयं विधेयकों पर स्वीकृति नहीं देता वरन यह कार्य उसके कमिश्नर करते हैं।

राजा की शक्ति और उसके व्यावहारिक प्रयोग के विषय में जो कुछ ऊपर कहा गया है, उससे यही निष्कर्ष निकलता है कि अंतिम रूप से राजा एक सांविधानिक प्रमुख है जो केवल राज्य करता है, शासन नहीं। अपने विशेषाधिकारों के विषय में भी वह स्वविवेक से कार्य करने के लिए पूर्ण स्वतन्त्र नहीं है और उसे अपने मंत्रियों के परामर्शानुसार ही कार्य करना पड़ता है। परन्तु फिर भी अपने बुद्धि बल, विवेक, व्यक्तित्व, अनुभव और निष्पक्ष व्यवहार तथा पद की श्रेष्ठता आदि के कारण वह शासन को आवश्यकतानुसार प्रभावित करने की क्षमता अवश्य रखता है। हमें राजा की इस क्षमता अथवा उसके प्रभाव को बनाये रखने वाली इन विभिन्न बातों पर भी विचार करना चाहिये।

राजा के प्रभाव के कारण

राजा मृतप्राय स्वर्णिम शून्य अथवा मिट्टी की मूर्ति मात्र नहीं है, अपितु उसका विशिष्ट प्रभाव और महत्व है। बजहाट के इन शब्दों से राजा के प्रभाव की गहराई का पता चलता है कि, "प्रशासन और नीति निर्माण के सम्बन्ध में सम्राट के तीन राजनीतिक अधिकार हैं, यथा परामर्श के लिए पूछे जाने का अधिकार, प्रोत्साहन देने का अधिकार और चेतावनी देने का अधिकार। यद्यपि राजा के ये अधिकार मुख्यतः सैद्धान्तिक हैं, फिर भी उसे प्रभावशाली बनाने में इनका बहुत हाथ है। इन अधिकारों का विश्लेषण पहले किया जा चुका है। इनके अतिरिक्त राजा के महत्व और प्रभाव के कुछ अन्य प्रमुख कारण ये हैं—

व्यक्तित्व—राजा के प्रभाव का सबसे प्रमुख कारण उसका व्यक्तित्व है। यदि राजा का व्यक्तित्व प्रभावशाली है तो मंत्रिगण स्वतः ही उसके परामर्श के आगे नतमस्तक होते हैं, किन्तु यदि राजा प्रभावशाली व्यक्तित्व नहीं रखता तो उसे मन्त्रियों के हाथों की रबर की मुहर बन कर रहना पड़ता है। लास्की का मत है कि शासन पर राजा का प्रभाव व्यक्तित्व के अनुपात की समस्या है, प्रधान मन्त्री का व्यक्तित्व उच्च है तो सम्राट का प्रभाव कम होगा।

अनुभव—राजा के प्रभाव का दूसरा कारण उसका विस्तृत अनुभव है। राजा स्वयं जीवन पर्यन्त शासन का प्रमुख रहता है जब कि मंत्रिमण्डल निरन्तर बदलते रहते हैं। इस प्रकार वह अपने राज्यकाल में अनेक मन्त्रिमण्डलों का उत्थान और पतन की कहानी पढ़ता है तथा परिवर्तित होते रहने वाले मन्त्रियों

की तुलना में उसका प्रशासनिक अनुभव उत्तरोत्तर गहरा होता चला जाता है। उसकी स्थिति एक ऐसे अनुभवी शासन कुशल व्यक्ति की सी हो जाती है जो अपने विशाल अनुभव के बल पर मन्त्रिमण्डल को प्रभावित कर सकने की क्षमता रखता है।

संसदीय शासन की कार्य विधि—ब्रिटिश संसदीय शासन की कार्य विधि भी राजा के प्रभाव की वृद्धि में विशेष सहायक है। राजा संसदीय शासन का अध्यक्ष होता है। अत मन्त्रिमण्डल की कार्यवाहियां उसके समक्ष प्रस्तुत होती हैं, विदेश विभाग के महत्वपूर्ण पत्र व्यवहार भी उनके पास प्रतिदिन पहुंचते हैं और संसदीय वाद-विवादों का सरकारी प्रतिवेदन व समाचार-पत्रों में प्रकाशित विवरण भी रोजाना उसके सम्मुख पेश किये जाते हैं। प्रधानमन्त्री का कर्त्तव्य है कि वह मन्त्रिमण्डलीय निर्णयों और महत्वपूर्ण शासन कार्यों से राजा को निरन्तर अवगत कराता रहे। राजा का स्वयं का कर्मचारी मण्डल होता है और उसका एक मन्त्री (Conscience Keeper) भी होता है जिसका काम सभी राजनीतिक घटनाओं की सूचना राजा को देते रहना है। स्पष्ट है कि संसदीय शासन की इस कार्य विधि के कारण राजा को सम्पूर्ण शासन के बारे में इतना ज्ञान हो जाता है जितना कि अलग-अलग मन्त्रियों को सम्भवतः नहीं होता। इसका स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि आवश्यकता पड़ने पर वह मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को उपयोगी परामर्श दे सकता है, मन्त्रिमण्डल के कार्य विशेष के दोष गिना सकता है और मन्त्रिमण्डल की किसी त्रुटिपूर्ण नीति के सम्भावित परिणामों के बारे में चेतावनी दे सकता है।

निष्पक्षता—राजा के प्रभाव का चौथा महत्वपूर्ण कारण उसकी राजनीतिक निष्पक्षता है। जनता की, राजा में, उसकी इस निष्पक्षता के कारण अपूर्व भक्ति है और राजा जिस बात को अच्छी मानता है, जनता के लिए भी वह बहुत उत्तम हो जाती है। राजा की राजनीतिक तटस्थता के कारण ही सभी दलों के मन्त्रिमण्डल उसके परामर्श को समान रूप से सम्मान देते हैं। राजा शासन का प्रमुख होते हुए भी राजनीतिक दृष्टि से तटस्थ है और इसीलिए विरोधी दल भी उसका अपना (His Majesty's Loyal Opposition) होता है।

गौरवपूर्ण पद—राजा के प्रभाव का एक प्रमुख कारण उसके पद की महत्ता है। राजा की गौरवपूर्ण स्थिति उसके परामर्श और विचार को गुरुता प्रदान करती है। अतीत काल से चले आने वाले राज पद के प्रति सम्पूर्ण ब्रिटिश जनता में अनन्य भक्ति भाव है। अत कोई भी मन्त्रिमण्डल राजा के प्रति उपेक्षा-भाव प्रदर्शित करने का साहस नहीं करता। महान राज पद का प्रभाव मन्त्रिगण पर अवश्य पड़ता है क्योंकि वे ब्रिटिश जनता के ही तो प्रतिनिधि होते हैं।

निष्कर्ष रूप में अपने पद के स्थायित्व, विशाल अनुभव, राजनीतिक तटस्थता और अनुपम व्यक्तित्व के कारण एक योग्य राजा ब्रिटेन के शासन पर गहरा प्रभाव डाल सकता है और इस प्रभाव से मुंह नहीं मोड़ा जा सकता।

राजपद का औचित्य
(Justification of Monarchy)

इंगलैण्ड के राजपद के अध्ययन के प्रसंग में यह प्रश्न स्वभावतः उठता है कि आखिर आधुनिक युग के इस महान प्रजातान्त्रिक राज्य में राजतन्त्र अभी तक क्या चालू है अथवा राज पद की क्या आवश्यकता है ? जबकि विश्व के प्रत्येक भाग में राजतन्त्र का सूर्य डूब रहा है वहां ब्रिटनवासी 'महारानी चिरजीवी हो' के गीत गा रहे हैं। वास्तव में ब्रिटेन में राजपद का होना एक आश्चर्यजनक असंगति है क्योंकि वह न केवल संसदीय जनतन्त्र का जन्म स्थान है बल्कि आधुनिक प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के लिए आदर्श प्रजातन्त्र का नमूना भी है। अवश्य ही ब्रिटेन में राजतन्त्र अथवा राज पद के प्रचलन के पीछे कुछ निश्चित उपयोगी कारण छिपे हुए हैं।

ऐतिहासिक कारण

ब्रिटेन में राजपद के अस्तित्व को बनाये रखने में मुख्यतया इन ऐतिहासिक कारणों ने योग दिया है —

(1) राजपद एक ऐतिहासिक वस्तु है—ब्रिटेन का राजपद लगभग 1150 वर्ष पुराना एक ऐतिहासिक धरोहर है। ब्रिटनवासी जिस राजतन्त्र के सम्पर्क में शताब्दियों से रहते आये हैं, उनसे अलग होने की बात सोचना भी उन्हें अस्वाभाविक लगता है। स्वभाव से रूढ़िवादी और परम्परावादी ब्रिटिश जनता के लिए राजपद एक ऐतिहासिक परम्परा है, अतीत का वर्तमान से तथा वर्तमान को अतीत से जोड़ने वाली कड़ी है।

(2) राजपद का सराहनीय इतिहास—अंग्रेजों का राजपद से इसलिए भी प्यार है कि उसका अतीत बड़ा गौरवमय तथा देश के हितों का रक्षक रहा है। केवल स्टूअर्टकालीन राजाओं को छोड़कर अन्य सभी राजाओं ने व्यक्तिगत स्वार्थों की तुलना में राष्ट्रीय हितों और गौरव की रक्षा की है। आज प्रथम तो अपनी महानता, कर्मठता और प्रजावत्सलता के कारण 'अपने प्रजाजनों के पिता' तक कहलाने लगे थे। आज के अंग्रेज बालक जब अपने महान सम्राटों के महान् कार्यों की गाथा पढ़ते हैं तो उनमें राजपद के प्रति एक स्वाभाविक प्रेम और सम्मान की भावना पैदा हो जाती है।

(3) राजतन्त्र का शांतिपूर्ण जनतन्त्रीकरण—ब्रिटेन में राजपद इसलिए भी अति लोकप्रिय है कि उसने अपने को जनता की इच्छानुसार ढाला है। ब्रिटेन के निरंकुश राजतन्त्र ने लोकतन्त्र के उदय और प्रसार में बाधक बनने की चेष्टा नहीं की है, वरन् अपना शांतिपूर्ण जनतन्त्रीकरण हो जाने दिया है। यदि ब्रिटिश राजा रूस के जारों और फ्रांस के लुई चतुर्थ की तरह विवेकहीन व्यवहार करते तो ब्रिटेन का राजतन्त्र भी कभी का समाप्त हो गया होता। वास्तव में राजाओं ने

ठीक ही लिखा है कि "ब्रिटेन मे राजतन्त्र ने अपने को लोकतन्त्र के हाथ में ऐसे बेच दिया है मानो वह इसी का प्रतीक हो।"

मनोवैज्ञानिक कारण

राजपद के अस्तित्व के मूल मे मनोवैज्ञानिक उपयोगिता भी बडी उत्तरदायी रही है—

(1) ब्रिटिश जाति का रूढ़िवादी स्वभाव--अंग्रेज स्वभाव से रूढ़िवादी और पुरातन प्रिय है। वे अपनी प्राचीन पद्धतियो और संस्थाओ को, समयानुसार सुधारते हुए, बनाये रखना अति पसन्द करते हैं। प्राचीनकाल से चली आ रही संस्थाओं और ऐतिहासिक परम्पराओं की मौलिकता और प्राचीनता को बनाये रखकर भी उन्हें आधुनिकतम परिस्थितियों के अनुकूल ढाल लेना, ब्रिटिश जनता का स्वभाव है। यही कारण है कि ब्रिटिश मानस राजतन्त्र जैसी गौरवपूर्ण प्राचीनतम राजनीतिक संस्था के विनाश की कल्पना से भी काँप उठता है। अंग्रेजों ने अपनी स्वभावगत विशेषता के कारण राजतन्त्र को बनाये रखा है। उन्होंने उसका जनतन्त्रीकरण किया है, पर इस तरह कि राजतन्त्र के परम्परागत स्वरूप को कोई आँच नहीं आयी है। राजतन्त्र बदस्तूर कायम है, किन्तु उसकी आत्मा का जनतन्त्रीकरण कर दिया गया है।

(2) राजपद मे स्वाभाविक सम्मान--राजपद के अस्तित्व का दूसरा मनोवैज्ञानिक कारण उसमें एक अद्भुत सम्मान और आकर्षण का होना है। उसमें वह राजशाही शान-शौकत होती है जो किसी अन्य शासन में नहीं हो सकती। जेनिंग्स के अनुसार 'ताकत वालक शासन बेजान तर्कों और नीरस नीतियों तक ही सीमित नहीं है। उसमें कुछ रंगीनता, कुछ तड़क भड़क होनी ही चाहिये और ऐसी स्पष्ट तड़क भड़क और रंगत देखने को मिलेगी जैसी कि शाही पोशाक (Royal Purple) में मिलती है।' राजपद की महानता लोग बिना तर्क स्वीकार करते हैं और उसके प्रति निष्ठा व सम्मान प्रदर्शित करने हेतु राजाओं को बड़ी धूम धाम से गद्दी पर बैठाते हैं।

राजपद सुरक्षा का प्रतीक--अंग्रेजों की भावना के अनुसार राजा उनकी एकता, दृढ़ता और सुरक्षा का प्रतीक है। उन्हें यह अनुभूति होती है कि राजपद के बिना उनके देश का सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक ढाँचा ढह जायगा। यह वस्तुतः एक विचित्रता है किन्तु साथ ही ब्रिटिश जनता के लिए गौरवपूर्ण बात है कि राजा अथवा रानी उनके लिए एक महान औषधि स्वरूप है। अंग्रेज समझते हैं कि "यदि राजा बकिंघम राजप्रासाद में रहता रहे, तो लोग और भी चैन की नींद सोते हैं। अंग्रेजों की निगाह में उनका राजतन्त्र प्रजातन्त्र का पोषक और रक्षक है।

राजनीतिक कारण

ब्रिटेन में राजपद कुछ सशक्त राजनीतिक कारणों के आधार पर भी अपना अस्तित्व बनाये हुए है, जो निम्न हैं—

(1) राजतन्त्र का लोकतन्त्रात्मक रूप ग्रहण करना—ब्रिटेन में निरंकुश राजतन्त्र ने सांविधानिक राजतन्त्र का रूप ले लिया है। राजतन्त्र के जनतन्त्रीकरण की सम्पूर्ण प्रक्रिया शान्तिपूर्ण और अविकाराद स्वाभाविक ढंग से हुई है। इंगलैंड के अधिकांश राजा हवा के रुख को पहिचानने में माहिर रहे हैं और जिस शान से वे निरंकुश राजाओं के रूप में शासन करते थे उसी शान से सांविधानिक राजाओं के रूप में कार्य करने को उद्यत हो गये। ऐसे राजतन्त्र को बनाये रखना ब्रिटिश संसदीय प्रणाली के लिये बड़ा आवश्यक है। मुनरो का मत है कि यदि राजतन्त्र हटाया गया तो उसके स्थान पर कोई अन्य संस्था पुनः स्थापित करनी पड़ेगी क्योंकि संसदीय शासन में दूसरी कार्यपालिका की आवश्यकता होती है तथा प्रधानमन्त्री किसी प्रजातान्त्रिक देश में ध्वज मात्र अध्यक्ष के रूप में कार्य नहीं करता। यदि राजतन्त्र अथवा राजा को लोप किया गया तो उसके स्थान पर या तो अमरिका की तरह जनता द्वारा निर्वाचित राष्ट्रपति या कुछ अन्य देशों की भाँति संसद द्वारा चुना हुआ राष्ट्रपति लाने की आवश्यकता होगी। इस तरह निर्वाचित राष्ट्रपति को पदासीन करने पर स्वभावतः उसे कुछ शक्तियाँ प्रदान करनी होंगी। यदि अमरिका के समान राष्ट्रपति बनाया गया तो कैबिनेट का अस्तित्व खतरे में पड़ेगा और संसद की सर्वोच्चता समाप्त होगी। यदि फ्रांस नमूने का राष्ट्रपति लाया गया तो इसका अर्थ राजतन्त्र को ही दूसरे नाम से स्थापित करना होगा। यह निश्चित है कि निर्वाचित राष्ट्रपति कभी भी अधिकारों की माँग करके शासन में गतिरोध पैदा कर सकता है। अतः वंश परम्परागत राजतन्त्र ही उत्तम है क्योंकि राजा निष्पक्ष भी रहता है और कभी अधिकारों की माँग भी नहीं करेगा और देश राष्ट्रपति के चुनावों की भारी झंझट अथवा गड़बड़ से बचा रहेगा।

(2) राजनीतिक निष्पक्षता—राजपद बने रहने का दूसरा राजनीतिक कारण राजा की निष्पक्षता है। संसदीय शासन प्रणाली के लिये वही व्यक्ति सर्वाधिक उपयोगी प्रधान होगा जो राजनीतिक दृष्टिकोण से किसी दल विशेष का न हो और दलगत संस्थाओं से ऊपर हो। राजा वंशानुगत होने के कारण इन दलगत भावनाओं से ऊपर उठा होता है। अपनी महती स्थिति के कारण, एक महान् गौरवपूर्ण राजगद्दी का अधिपति होने के कारण वह एक सर्वथा भिन्न आदर्श एवं गरिमामय वातावरण में विचरता है। परिणामस्वरूप वह सदैव पनपते रहने हेतु उचित काम करता है। अपनी राजनीतिक तटस्थता के कारण वह एक आदर्श मध्यस्थ की भूमिका का निर्वाह करता है, अपनी प्रतिष्ठा व अपने प्रभाव द्वारा राजनीतिक मतभेदों को तय करता है और विरोध की प्रचण्ड भावना को कम करता है।

(3) शासन कार्य का क्रम बनाये रखने मे सहायक—राजपद शासन-कार्यक्रम अथवा व्यवस्था बनाये रखने मे बडा सहायक है। एक मन्त्रीमण्डल के पद त्यागने और दूसरे मन्त्रिमण्डल के पद ग्रहण करने के बीच के समय मे शासन का भार राजा ही ढोता है। राजपद के कारण ही बिना उथल पुथल हुए ही सरकार मे सरलता से परिवतन हो जाता है।

अन्तर्राष्ट्रीय कारण

राजपद के बने रहने के अन्तर्राष्ट्रीय कारण भी है—

(1) राजा राष्ट्र की एकता का प्रतीक—ब्रिटेन का राजा दूर दूर बिखरे हुए राष्ट्रमण्डलीय देशो के बीच एकता का अपरिहार्य प्रतीक है। बाल्डविन (Baldwin) ने एक बार एडवर्ड अष्टम् (Edward VIII) से कहा था "सम्राट ही हमारे एकमात्र बचे खुचे साम्राज्य की अन्तिम कडी है। यदि इस कडी को तोड दिया जाय तो स्वतन्त्र राष्ट्रमण्डलीय देशो के बीच कुछ भी सामान्य प्रतीक नही रहगा।' वेस्टमिनिस्टर के अधिनियम (Statute of Westminster) द्वारा एकता के इस प्रतीक को दृढ बनाने की चेष्टा की गई है। इसकी एक धारा मे उल्लिखित है कि जब कभी राजसिंहासन के उत्तराधिकार के सम्बन्ध मे कोई परिवतन हो तो उस समय इनके लिये राष्ट्रमण्डल के सभी सदस्य राष्ट्रो की अनुमति आवश्यक होगी। परन्तु इस सम्बन्ध मे लास्की (Laski) का यह कथन याद रखना होगा कि 'सम्राट राष्ट्रमण्डल का भौतिक आधार है और जब तक राष्ट्रमण्डलीय बन्धन विभिन्न देशो के लिए लाभदायक बना रहेगा, तब तक ही सम्राट का एकता के प्रतीक रूप म महत्व रहेगा।"

(2) अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों मे विकास--राजपद का अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे, पहले साम्राज्य विस्तार की दृष्टि से भी बडा महत्व था। राजतन्त्र ब्रिटिश साम्राज्य के लिए औचित्य प्रदान करता था, ब्रिटेनवासी सुदूर प्रदेशो को जीतने के लिए उत्साहित था और साम्राज्य के पालन मे योग देता था। अग्रेज लोग 'साम्राज्यिक मुकुट मे उपनिवेश विजय' (New Jewel for the Imperial Crown) तथा 'साम्राज्यिक परिवार मे नया सदस्य' (New Child for Imperial Family) जोडते थ। ब्रिटन का राजा विभिन्न देशो से उत्तम सम्बन्ध बनाये रखने मे भी बडी सहायता पहुँचाता है। यदा कदा की जाने वाली ब्रिटिश राजाओ (या रानियो) की मैत्री यात्रायें ब्रिटिश प्रतिष्ठा को बढाने वाली होती ह।

आर्थिक कारण

राजपद को बनाये रखने का एक आर्थिक औचित्य (Economic Justification) भी है। ब्रिटिश-शासन के लिए यह एक महगी संस्था नही है। इसके प्रतिष्ठापन पर राष्ट्रीय बजट के एक प्रतिशत का बीसवा भाग भी खर्च नही होता। लेकिन तुलना मे राजनीतिक चेतना के रूप मे आय की मात्रा बहुत ज्यादा है। बाकर (Barker) के कथनानुसार "राजतन्त्र पर व्यय राजनीतिक भावना तथा

विचार के रूप में लौट जाता है, जो समाज को दृढ़ बनाता है।" इतनी उपयोगी और ऊपर से कम खर्चीली संस्था को खोने में ब्रिटिश जाति को कोई लाभ नहीं दिखाई देता। इसके अतिरिक्त ब्रिटेन का राजा ब्रिटिश समाज के लिए आय का एक स्रोत भी है। राज-परिवार से सम्बन्धित उत्सवों, फिल्मों आदि से काफी आमदनी होती है।

सामाजिक कारण

ब्रिटिश राजा के पद के अस्तित्व का एक कारण यह भी है कि वह ब्रिटेन के सामाजिक ढांचे का महत्वपूर्ण अंग है। वह इंगलैंड के सामाजिक व मनोरंजन क्षेत्र का नेता है। राजकीय परिवार नैतिकता फैशन, कला, साहित्य आदि के क्षेत्र में आदर्श स्थापित करता है और उत्साहवर्धक कार्य करता है। लो (Low) के अनुसार—"किसी भी संगठन के साथ 'राजकीय' शब्द जुड़ जाने से सफलता अवश्यम्भावी हो जाती है।" राजा का अवलम्बन मिल जाने से कोई भी सार्वजनिक कार्य लोकप्रिय बन जाता है। और तो और दैनिक जीवन के फैशन तक पर राजपरिवार का बड़ा प्रभाव पड़ता है।

वस्तुतः संसार में कोई भी राजपद इतना सुरक्षित अथवा जनता द्वारा सम्मानित नहीं है, जितना कि ब्रिटेन का, और उसके प्रति जनता की आस्था बढ़ती ही जा रही है। तभी तो अंग्रेज बड़े विश्वास के साथ यह कहते हैं कि संसार में केवल पांच राजा रहेंगे—चार राजा खेलने वाले ताशों के और एक इंगलैंड का राजा।

4

प्रिवी परिषद् एवं मंत्रिमण्डल
(THE PRIVY COUNCIL AND THE CABINET)

'यह (मंत्रिमंडल) वह केन्द्रीय बिंदु है जिसके चारों ओर
समस्त राजनीतिक यंत्र घूमता है।'

—ग्रॉन मेरियट

ब्रिटिश राज्य की प्रशासकीय शक्ति कार्यपालिका में निहित है जिसमें मन्त्रिमण्डल सर्वप्रमुख है और शासन की वास्तविक धुरी है। वैसे कार्यपालिका के पांच विभाग हैं जिनके द्वारा संसद द्वारा निर्मित नियमों का पालन होता है और सम्पूर्ण शासन-कार्य सचालित किया जाता है। ये विभाग निम्नलिखित हैं—

(1) राजा

(2) प्रिवी परिषद

(3) मन्त्रिमण्डल (केबिनेट)

(4) राज्य के विभिन्न विभाग

(5) लोक सेवा (Civil Service)

राजा के बारे में, जो कि औपचारिक कार्यपालिका है, हम पढ़ चुके हैं। अब और अगले परिच्छेदों में यथास्थान अन्य संस्थाओं का वर्णन किया जायगा।

प्रिवी परिषद्
(The Privy Council)

प्रिवी परिषद् एक सांविधानिक यन्त्र है। इसके द्वारा राजा के कार्यपालिका सम्बन्धी कार्य सम्पादित होते हैं परन्तु कार्य और शक्ति की दृष्टि से यह इतनी नगण्य हो गई है कि अब यह एक औपचारिक और नाममात्र की संस्था रह गई है।

उत्पत्ति तथा विकास

प्रिवी परिषद् की उत्पत्ति नोमन काल की प्राचीन क्यूरिया रेजिस (Curia Regis) से हुई जो राजा की एक परामर्शदात्री संस्था था। क्यूरिया रेजिस के कार्य

धीरे धीरे बहुत बढ गये। फलत इसकी दो शाखायें हो गई। प्रशासकीय कार्य करने वाली शाखा प्रिवी परिषद कहलायी। यह राजा को परामर्श भी देती थी और उसके प्रशासन मे दिन प्रतिदिन के कार्यों मे सहायता भी दिया करती थी। राजा उच्चवर्गों से इसके सदस्यो को चुनता था। ट्यूडरवंश के राज्यकाल मे प्रिवी परिषद राजाओ की निरंकुशता की शक्तिशाली माध्यम बन गई और यह उन सभी कार्यों को करने लगी जिन्हें आज मन्त्रिमण्डल करता है। कालान्तर मे इसके आकार मे इतनी अधिक वृद्धि हो गई कि राजा के लिये पूरी प्रिवी परिषद से परामर्श करना अव्यावहारिक हो गया। चार्ल्स द्वितीय ने प्रिवी परिषद के कुछ विश्वसनीय सदस्यो की एक समिति बनाई जिसका नाम 'कबाल (Cabal) पड़ा। शनै शनै इस 'कबाल' अर्थात अन्तरंग सभा के हाथो मे वास्तविक शक्ति आ गई और इसने मन्त्रि मण्डल या कैबिनेट का रूप धारण कर लिया, परन्तु प्रिवी परिषद समाप्त नही हुई, वह भी बराबर बनी रही। आज शासन व्यवस्था मे इसकी स्थिति औपचारिक रह गई है लेकिन फिर भी वह प्रतिष्ठापूर्ण है।

प्रिवी परिषद का वर्तमान संगठन

वर्तमान समय मे प्रिवी परिषद मे लगभग 320 सदस्य है जिनकी नियुक्ति राजा प्रधानमन्त्री की परामर्श से करता है। सभी वर्तमान एवं भूतपूर्व मन्त्री, राजनीतिक जीवन मे ख्याति प्राप्त व्यक्ति, गणमान्य वैज्ञानिक, साहित्यकार, कलाकार, चर्च के अधिकारी, अवकाश प्राप्त न्यायाधीशो और प्रशासको आदि को प्रिवी परिषद् का सदस्य बना दिया जाता है। व्यक्ति अपनी विद्वत्ता एव योग्यता के कारण ही इसके पदाधिकारी हो पाते हैं। इस परिषद की सदस्यता जीवन पर्यन्त रहती है और सदस्यो को 'महामान्य' (Right Honourable) की उपाधि से विभूषित किया जाता है। इसके सदस्यो मे कुछ उपनिवेशो के लोग भी होते हैं। कुछ भारतीय भी इसके सदस्य बनाये गये थे, जैसे सर तेज बहादुर सप्रू।

प्रिवी परिषद की बैठकें

प्रिवी परिषद की बैठको मे प्राय बहुत कम सदस्य आ पाते हैं। इसकी सारी कार्यवाही केवल चार या पाच सदस्यो की उपस्थिति मे ही की जाती है जो सदैव मन्त्रिमण्डल के भी सदस्य होते हैं। गणपूर्ति (Quorum) तीन सदस्यो से पूरी हो सकती है। समस्त परिषद को केवल विशेष अवसरो पर ही आमन्त्रित किया जाता है। समस्त प्रिवी परिषद प्राय केवल दो अवसरो पर सम्मिलित होती है—प्रथम जबकि राजा की मृत्यु होती है द्वितीय जब राजा या रानी अपने विवाह इच्छा की घोषणा करते हैं। राज्याभिषेक के समय भी लगभग पूरी परिषद उपस्थित होती है। लॉर्ड प्रेसीडेन्ट (Lord President) जो स्वय कैबिनेट का मन्त्रि होता है प्रिवी परिषद की सभाओ का सभापतित्व करता है।

प्रिवी परिषद के वर्तमान कार्य

प्रिवी परिषद के वर्तमान कार्य बहुत मिले जुले से हैं तथापि यह मुख्यत

कार्यपालिका सम्बन्धी कर्त्तव्यों का निवहन करती है। यह मन्त्रिमण्डल के निर्णयों पर औपचारिक स्वीकृति देती है। चूंकि राजा मन्त्रियों के परामर्श पर कार्य करता है, अतः प्रिवी परिषद के निर्णय सत्तारूढ शासन की नीतियों को प्रकट करते हैं। प्रिवी परिषद जो भी कार्य करती है, वह संसदीय अधिनियमों के अधिकार के अन्तर्गत निकाले गये 'सपरिषद आदेशों (Orders in Council) और उद्घोषणाओं (Proclamations) के रूप में व्यक्त किये जाते हैं। उद्घोषणाएं अधिक महत्वपूर्ण मामलों से सम्बन्ध रखती है। परिषद में स्वीकृत होने पर इन्हें राजा मुद्रांकित रूप से निकालता है। सपरिषद आदेशों को राजा प्रिवी परिषद की मुद्रा (Privy Council Seal) के अन्तर्गत निकालता है। ये सपरिषद आदेश, जो राजा के परमाधिकार सम्बन्धी परिषद आदेशों से भिन्न होते है, सरकार के कार्य सचालन और उपनिवेशों से सम्बन्धित नियम-उपनियम होते हैं।

प्रिवी परिषद के कुछ गैर राजनीतिक कार्य भी होते है, उदाहरणार्थ कुछ ऐसे चार्टरों को स्वीकार करना जो वैज्ञानिक व औद्योगिक गवेषणा के लिये तथा विश्वविद्यालयों के प्रशासन में सुधार करने के लिये कमीशनों की स्थापना करते हैं।

प्रिवी परिषद के सामने मन्त्री और अन्य उच्च पदाधिकारी शपथ ग्रहण करते हैं। परिषद आर्थिक एकीकरण के लिए प्रबन्ध करती है और ब्रिटिश ब्रॉड-कास्टिंग कोर्पोरेशन की नीति निर्धारित करती है। प्रिवी परिषद के कार्यों के सचालन के लिए अनेक समितियां होती हैं। इनमें सर्वप्रमुख न्यायिक समिति है, जिसका निर्माण 1833 में किया गया था। इसमें विख्यात कानून वेत्ता, विशेषकर न्यायाधीश गण और भूतपूर्व लार्ड चांसलर (Lord Chancellors) होते हैं जो दीवानी मुकदमों में अपील के न्यायालय के रूप में बैठते है। यह समिति ब्रिटिश साम्राज्य के अधीनस्थ उपनिवेशों तथा कुछ हद तक स्वराज्य प्राप्त उपनिवेशों का सर्वोच्च न्यायालय है। धर्मोपदेश विषयक और प्राइज-कोर्ट (Prize Court) सम्बन्धी समस्त मामलों के लिए भी यह समिति सर्वोच्च अपीलीय कोर्ट के रूप में कार्य करती है, परन्तु यह निर्णयात्मक संस्था नहीं है, अपितु राजा को केवल परामर्श देती है। राजा समिति की रिपोर्ट पर कार्य करता हुआ दिये गये सम्बन्धित सपरिषद आदेश का अनुमोदन करता है।

अन्त में यह ध्यान रखने योग्य बात है कि प्रिवी परिषद कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो स्वयं नीति निर्धारित करे और शासन कार्य चलाये। इसके कार्य विभिन्न विभागों ने ले लिए हैं और उन्हीं पर अलग अलग उनका उत्तरदायित्व है। दूसरे शब्दों में प्रिवी परिषद् के समस्त कार्यों की जवाबदेही मन्त्रिमण्डल के ऊपर रहती है। यह परिषद प्राचीनकाल में शक्ति की प्रतीक थी, परन्तु आज उस शक्ति के गौरव की प्रतीक है।

कार्यपालिका सम्ब धी कत्तव्यो का निर्वहन करती है। यह मन्त्रिमण्डल के निणयो पर औपचारिक स्वीकृति देती है। चू कि राजा मन्त्रियो के परामश पर काय करता है, अत प्रिवी परिषद के निणय सत्तारूढ शासन की नीतियो को प्रकट करते हैं। प्रिवी परिषद जा भी काय करती है, वह ससदीय अधिनियमा के अधिकार के अन्तगत निकाले गये 'सपरिषद् आदेशो' (Orders in Council) और उदघोषणाओ (Proclamations) के रूप मे व्यक्त किय जाते हैं। उदघोषणाए अधिक महत्वपूण मामलो से सम्ब ध रखती है। परिषद में स्वीकृत होने पर इन्हे राजा मुद्राकित रूप से निकालता है। सपरिषद् आदेशा को राजा प्रिवी परिषद की मुद्रा (Privy Council Seal) के अन्तगत निकालता है। ये सपरिषद आदेश, जो राजा के परमाधिकार सम्ब धी परिषद आदेशो से भिन्न होते है, सरकार के कार्य-सचालन और उपनिवशो से सम्बन्धित नियम उपनियम होते हैं।

प्रिवी परिषद् के कुछ गैर राजनीतिक काय भी होते है, उदाहरणाथ कुछ ऐसे चार्टरो को स्वीकार करना जा वैज्ञानिक व औद्योगिक गवेषणा के लिये तथा विश्वविद्यालयो के प्रशासन मे सुधार करने के लिये कमीशनो की स्थापना करते हैं।

प्रिवी परिषद के सामने मन्त्री और अन्य उच्च पदाधिकारी शपथ ग्रहण करते हैं। परिषद आर्थिक एकीकरण के लिए प्रबन्ध करती है और ब्रिटिश ब्राड-कास्टिंग कोर्पोरेशन की नीति निर्धारित करती है। प्रिवी परिषद् के कार्यों के सचालन के लिए अनेक समितिया होती है। इनमे सवप्रमुख न्यायिक समिति है, जिसका निर्माण 1833 मे किया गया था। इसमे विख्यात कानून वेत्ता, विशेषकर न्यायाधीश गण और भूतपूव लाड चासलर (Lord Chancellors) होते है जो दीवानी मुकदमो मे अपील के न्यायालय के रूप मे बैठते है। यह समिति ब्रिटिश साम्राज्य के अधीनस्थ उपनिवेशो तथा कुछ हद तक स्वराज्य प्राप्त उपनिवेशो का सर्वोच्च न्यायालय है। धर्मोपदेश-विषयक और प्राइज-कोर्ट (Prize Court) सम्बन्धी समस्त मामलो के लिए भी यह समिति सर्वोच्च अपीलीय कोट के रूप मे काय करती है, परन्तु यह निणयात्मक सस्था नही है, अपितु राजा को केवल परामर्श देती है। राजा समिति की रिपोर्ट पर काय करता हुआ दिय गये सम्बन्धित सपरिषद् आदेश का अनुमोदन करता है।

अन्त मे यह ध्यान रखने योग्य बात है कि प्रिवी परिषद कोई ऐसी शक्ति नही है जो स्वय नीति निर्धारित करे और शासन कार्य चलाये। इसके कार्य विभिन्न विभागो ने ले लिए हैं और उन्ही पर अलग-अलग उनका उत्तरदायित्व है। दूसरे शब्दो मे प्रिवी परिषद के समस्त कार्यों की जवाबदेही मन्त्रिमण्डल के ऊपर रहती है। यह परिषद प्राचीनकाल म शक्ति की प्रतीक थी, परन्तु आज उस शक्ति के गौरव की प्रतीक है।

धीरे धीरे बहुत बढ गये। फलत इसकी दो शाखायें हो गई। प्रशा
करने वाली शाखा प्रिवी परिषद कहलायी। यह राजा को परामर्श
और उसके प्रशासन मे दिन प्रतिदिन के कार्यों में सहायता भी दिया
राजा उच्चवर्गों से इसके सदस्यो को चुनता था। ट्यूडरवंश के राज्य
परिषद राजाओ की निरकुशता की शक्तिशाली माध्यम बन गई और
कार्यों को करने लगी जिन्हें आज मन्त्रिमण्डल करता है। कालान्तर
में इतनी अधिक वृद्धि हो गई कि राजा के लिये पूरी प्रिवी प
करना अव्यावहारिक हो गया। चार्ल्स द्वितीय ने प्रिवी परिषद के
सदस्यो की एक समिति बनाई जिसका नाम 'कबाल (Cabal)
इस 'कबाल' अर्थात अन्तरग सभा के हाथो म वास्तविक शक्ति
मन्त्र मण्डल या केबिनट का रूप धारण कर लिया, परन्तु प्रि
नही हुई, वह भी बराबर बनी रही। आज शासन व्यवस्था
औपचारिक रह गई है लेकिन फिर भी वह प्रतिष्ठापूर्ण है।

प्रिवी परिषद का वर्तमान सगठन

वर्तमान समय मे प्रिवी परिषद म लगभग 320 सदस्
राजा प्रधानमन्त्री की परामर्श से करता है। सभी वर्तमान
राजनीतिक जीवन म ख्याति प्राप्त व्यक्ति, गणमान्य व
कलाकार, चर्च के अधिकारी, अवकाश प्राप्त न्यायाधीशो और
प्रिवी परिषद् का सदस्य बना दिया जाता है। व्यक्ति अपनी
कारण ही इसके पदाधिकारी हो पाते हैं। इस परिषद की स
रहती है और सदस्यो को 'महामान्य (Right Honour
विभूषित किया जाता है। इसके सदस्यो मे कुछ उपनिवेशो
कुछ भारतीय भी इसके सदस्य बनाये गये थे, जैसे सर तेज बहा

प्रिवी परिषद की बैठकें

प्रिवी परिषद की बैठको म प्राय बहुत कम सदस्य आ
कार्यवाही केवल चार या पाच सदस्यो की उपस्थिति म ही क
मन्त्रिमण्डल के भी सदस्य होते हैं। गणपूर्ति (Quorum) तीन
सकती है। समस्त परिषद की केवल विशेष अवसरो पर ही
है। समस्त प्रिवी परिषद प्राय केवल दो अवसरो पर सम्मि
जबकि राजा की मृत्यु होती है द्वितीय जब राजा या
इच्छा की घोषणा करते हैं। राज्याभिषेक के समय भी लगभग पू
होती है। लॉर्ड प्रेसीडेन्ट (Lord President) जो स्वय केबिनेट
है प्रिवी परिषद की सभाओ का सभापतित्व करता है।

प्रिवी परिषद के वर्तमान कार्य

प्रिवी परिषद के वर्तमान कार्य बहुत मिले जुले से हैं तथापि

मंत्री इस सिद्धान्त का दुरुपयोग नहीं कर सकता। यह नहीं हो सकता कि एक मन्त्री अपनी इच्छा से मनमाना काम करके सम्पूर्ण मन्त्रि-मंडल को उसके लिए उत्तरदायी बना दे। सामूहिक उत्तरदायित्व के साथ यह बात निहित है कि यदि कोई मन्त्री ऐसा गलत काम करता है जिसके बारे में मन्त्रि-मंडल ने कोई निर्णय नहीं लिया है या कोई ऐसा कार्य करता है जिससे मन्त्रि-मंडल अथवा संसद् असहमत है तो वह सामूहिक उत्तरदायित्व की आड़ लेकर अपना बचाव नहीं कर सकता। ऐसे कार्य के लिए वह स्वयं दण्डित होगा न कि सम्पूर्ण मन्त्रि-मंडल। उदाहरणार्थ, एटली मन्त्रि मंडल के अर्थ-मन्त्री ह्यू ग (Hugh Dalton) ने एक प्रिय पत्रकार को बजट की कुछ बातें बतला दी थी जिससे वे संसद् में बजट पेश होने से पहले ही एक पत्र में प्रकाशित हो गई। यह ह्यू ग डाल्टन की व्यक्तिगत भूल थी और उसे मन्त्रि-मंडल से त्याग-पत्र देना पड़ा। सम्पूर्ण मन्त्रि-मंडल पर कोई आंच नहीं आई।

कभी-कभी व्यक्तिगत उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का गलत प्रयोग भी होता है। मन्त्रि-मंडल के निर्णय के अनुसार किए गए किसी कार्य को यदि संसद का समर्थन नहीं मिलता तो मन्त्रि-मंडल सामूहिक त्याग पत्र से बचने के लिए उस कार्य का उत्तरदायित्व मन्त्री विशेष पर डालकर उससे त्याग पत्र दिला देता है। इस तरह एक मन्त्री को बलि का बकरा बनाकर सम्पूर्ण मन्त्रि मंडल को बचा लिया जाता है। सन् 1935 में सर सेमुअल होर इसी प्रकार की दुरभि-संधि का शिकार बना था। इटालियन प्रधानमन्त्री लावेल के साथ एक गुप्त समझौता मन्त्रि मंडल के पूर्व-निर्णय के अनुसार किया गया लेकिन संसद के विरोध करने पर इस समझौते के लिए श्री होर को व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहरा दिया गया। इस प्रकार होर के बलिदान द्वारा सम्पूर्ण मन्त्रि-मंडल का पतन बचा लिया गया।

सामूहिक उत्तरदायित्व की उपादेयता पर एक दृष्टि—सामूहिक उत्तरदायित्व की यह व्यवस्था कुछ दृष्टियों से उपयोगी तथा कुछ दृष्टियों से अनुपयोगी दोनों है।

इस व्यवस्था की उपयोगिताएं ये हैं—

(i) मन्त्रियों में पारस्परिक सहयोग की भावना का उदय होता। वे पारिवारिक सदस्यों की भांति मिलकर और एक इकाई के रूप में कार्य करते हैं। टीम भावना के कारण मन्त्रीगण व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर उठकर व्यापक हितों की बात सोचते हैं।

(ii) यह व्यवस्था मन्त्रिमण्डल को शक्ति प्रदान करती है। जब पारस्परिक सहयोग पर आधारित मन्त्रिमण्डल एक स्वर से लोकसभा में कोई विचार या विधेयक प्रस्तुत करता है अथवा राजा को परामर्श देता है तो दोनों ही उसकी उपेक्षा नहीं कर पाते।

भी भार रहता है। एक मंत्री की आलोचना पूरे मन्त्रिमण्डल की आलोचना समझी जाती है और एक मन्त्री की प्रशंसा पूरे मन्त्रिमण्डल की प्रशंसा। व्यावहारिक दृष्टि से सामूहिक उत्तरदायित्व के कुछ बड़े महत्वपूर्ण परिणाम निकलते हैं, जो ये हैं—

(1) मन्त्रिमण्डल एक इकाई के रूप में ही शासन सत्ता सम्भालता है। उसी प्रकार वह एक इकाई के रूप में ही राज्य सत्ता त्यागता है। व्यक्तिगत रूप में किसी मन्त्री का कोई महत्व नहीं होता। वह मन्त्रिमण्डल का अंग होता है और उसका यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वह प्रत्येक कार्य में मन्त्रिमण्डल के निर्णय के अनुसार चले। प्रत्येक मन्त्री को सब कार्य इस दृष्टि से करने होते हैं कि सब कार्यों के लिए सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल उत्तरदायी है।

(2) मन्त्रि-मण्डल की बैठकों में वाद विवाद और विचार-विनिमय की पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है। मन्त्रिगण एक दूसरे के मत का विरोध भी कर सकते हैं, पर यह केवल तभी तक सम्भव है जब तक कि कोई निर्णय नहीं ले लिया जाता। एक बार निर्णय हो जाने पर प्रत्येक मन्त्री का यह कर्त्तव्य है कि वह उसे स्वीकार करे और उसे कार्य-रूप देने में अपना सहयोग दे। पूर्णतः असहमत मन्त्री के लिए त्याग पत्र देकर मन्त्रिपद से अलग हो जाने का मार्ग ही खुला है। मन्त्रिमण्डल में विरोधी विचार वालों के लिए प्रायः कोई स्थान नहीं है। ऐसे मन्त्री का सहन नहीं किया जा सकता जो मन्त्रिमण्डल के निर्णयों के विरुद्ध होने पर भी त्याग पत्र न दे। यदि कोई मन्त्री त्याग पत्र न देने पर अड़ ही जाए तो प्रधानमन्त्री के लिए मार्ग खुला है कि वह अपना त्याग पत्र देकर सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल का, संसद का अपने बहुमत के कारण, पुनर्निर्माण कर ले।

(3) यदि किसी मन्त्रालय के कार्यों या नीति को लोकसभा अस्वीकृत कर देती है और उस मन्त्रालय के वे कार्य मन्त्रिमण्डल के निर्णय पर आधारित होते हैं, तो सम्पूर्ण मन्त्रि-मण्डल को त्याग-पत्र देना होता है न कि एक मन्त्री को। इसका अभिप्राय यह है कि एक मन्त्रालय की नीति अथवा उसके कार्य सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल के समझे जाते हैं।

इस तरह मन्त्रिमण्डलीय सामूहिक उत्तरदायित्व का सार है—परस्पर अधीनता अथवा सम्मिलित मोर्चा (Solidarity or Common Front)। मन्त्रि-मण्डल के सब मन्त्री या तो साथ साथ ही डूबते हैं या साथ साथ ही तैरते हैं। इसके अतिरिक्त यदि किसी मन्त्रिमंडल का पतन होता है तो सारे दल का भी पतन हो जाता है और उसके साथ ही सारे राजनीतिक अधिकारी वर्ग का भी पतन हो जाता है।

उल्लेखनीय है कि यद्यपि मन्त्रि मंडल का सामूहिक उत्तरदायित्व होता है, प्रत्येक मन्त्री का कार्य सम्पूर्ण मन्त्रिमंडल का कार्य समझा जाता है, तथापि

मत्री इस सिद्धान्त का दुरुपयोग नही कर सकता। यह नहीं हो सकता कि एक मन्त्री अपनी इच्छा से मनमाना काम करके सम्पूर्ण मन्त्रि-मडल को उसके लिए उत्तरदायी बना दे। सामूहिक उत्तरदायित्व के साथ यह बात निहित है कि यदि कोई मन्त्री ऐसा गलत काम करता है जिसके बारे में मन्त्रि मडल ने कोई निर्णय नही लिया है या कोई ऐसा कार्य करता है जिससे मन्त्रि-मण्डल अथवा ससद असहमत है तो वह सामूहिक उत्तरदायित्व की आड लेकर अपना बचाव नहीं कर सकता। ऐसे कार्य के लिए वह स्वय दडित होगा न कि सम्पूर्ण मन्त्रि-मडल। उदाहरणार्थ, एटली मन्त्रि मडल के अर्थ-मन्त्री ह्यू ग (Hugh Dalton) ने एक प्रिय पत्रकार को बजट की कुछ बातें बतलादी थी जिससे वे ससद में बजट पेश होने से पहले ही एक पत्र में प्रकाशित हो गईं। यह ह्यू गडाल्टन की व्यक्तिगत भूल थी और उसे मन्त्रि-मडल से त्याग-पत्र देना पडा। सम्पूर्ण मन्त्रि-मडल पर कोई आच नही आई।

कभी-कभी व्यक्तिगत उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का गलत प्रयोग भी होता है। मन्त्रि-मडल के निर्णय के अनुसार किए गए किसी कार्य को यदि ससद का समर्थन नहीं मिलता तो मन्त्रि-मडल सामूहिक त्याग-पत्र से बचने के लिए उस कार्य का उत्तरदायित्व मन्त्री विशेष पर टालकर उससे त्याग-पत्र दिला देता है। इस तरह एक मन्त्री को बलि का बकरा बनाकर सम्पूर्ण मन्त्रि मडल को बचा लिया जाता है। सन् 1935 में सर सेमुअल होर इसी प्रकार की दुरभिसधि का शिकार बना था। इटालियन प्रधानमन्त्री लावेल के साथ एक गुप्त समझौता मन्त्रि मडल के पूर्व-निर्णय के अनुसार किया गया लेकिन ससद के विरोध करने पर इस समझौते के लिए श्री होर को व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहरा दिया गया। इस प्रकार होर के बलिदान द्वारा सम्पूर्ण मन्त्रि-मडल का पतन बचा लिया गया।

सामूहिक उत्तरदायित्व की उपादेयता पर एक दृष्टि—सामूहिक उत्तरदायित्व की यह व्यवस्था कुछ दृष्टियो से उपयोगी तथा कुछ दृष्टियो से अनुपयोगी दोनो है।

इस व्यवस्था की उपयोगिताए ये हैं —

(i) मन्त्रियो में पारस्परिक सहयोग की भावना का उदय होता। वे पारिवारिक सदस्यो की भाति मिलकर और एक इकाई के रूप मे कार्य करते हैं। टीम भावना के कारण मन्त्रीगण व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर उठकर व्यापक हितो की बात सोचते हैं।

(ii) यह व्यवस्था मन्त्रिमण्डल को शक्ति प्रदान करती है। जब पारस्परिक सहयोग पर आधारित मन्त्रिमण्डल एक स्वर से लोकसभा में कोई विचार या विधेयक प्रस्तुत करता है अथवा राजा को परामर्श देता है तो दोनो ही उसकी उपेक्षा नहीं कर पाते।

(iii) सामूहिक उत्तरदायित्व की व्यवस्था मन्त्रिमण्डल को स्थायित्व प्रदान करती है। सभी मन्त्री संसद में अपने अपने समर्थकों को निरन्तर अपने प्रभाव में रखे रहने को प्रयत्नशील रहते हैं ताकि मन्त्रिमण्डल संसद के बहुमत का निरन्तर विश्वासभाजन रह सके।

सामूहिक उत्तरदायित्व की व्यवस्था कुछ दृष्टियों से अनुपयोगी भी है—

(i) इस व्यवस्था के कारण मन्त्रिमण्डल अत्यधिक शक्तिशाली बन कर कभी-कभी तानाशाही के रास्ते पर चलने लगता है।

(ii) इस व्यवस्था से व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की भावना कमजोर होती है। कुछ मन्त्रिगण सामूहिक उत्तरदायित्व की आड में स्वेच्छाचारी आचरण करने की ओर अग्रसर होते हैं।

(iii) मन्त्री अपने स्वतन्त्र निर्णय अथवा विचार के अनुरूप कार्य नहीं कर पाते। मन्त्री यदि नीति को ठीक नहीं समझता तो भी उसे अपनी आत्मा की आवाज के विरुद्ध उसी नीति पर चलना पड़ता है।

(iv) इस व्यवस्था का दुरुपयोग न केवल उन मन्त्रियों को दबाने के लिए किया जा सकता है जो मन्त्रिमण्डल के बहुमत से सहमत न हों बल्कि इसका दुरुपयोग सामूहिक निर्णय के आधार पर किये हुए कार्य को किसी मन्त्रि-विशेष का कार्य बतलाकर मन्त्रि-मण्डल के पतन को बचाने के लिये किया जा सकता है।

(v) सामूहिक शक्ति के कारण मन्त्रि मण्डल के ऐसे निर्णय भी राजा व संसद को मानने पड़ सकते हैं जो स्पष्टतः अनुचित अथवा त्रुटिपूर्ण हों।

गोपनीयता

मन्त्रिमंडलीय शासन प्रणाली की एक प्रमुख विशेषता गोपनीयता (Secracy) है। ब्रिटिश मन्त्रि-मण्डल एक गुप्त निकाय है। इसका विचार-विमर्श गुप्त रीति से होता है और इसकी सम्पूर्ण कार्यवाही पर गोपनीयता का पर्दा पड़ा रहता है। सार्वजनिक रूप से मन्त्रिगण केवल उन्हीं बातों को प्रकट करते हैं जो मन्त्रि मण्डल के निर्णयों के अनुकूल हों।

मन्त्रि मण्डल की गोपनीयता को विधि और अभिसमयों ने भी संरक्षण प्रदान किया है। प्रत्येक मन्त्री मण्डलीय मन्त्री को प्रिवी परिषद् के सम्मुख यह शपथ लेनी पड़ती है कि वह मन्त्रि-मण्डल के भेद किसी पर प्रकट नहीं करेगा। इसके लिए 'शासन भेद-अधिनियम, 1920' (Official Secrets Act, 1920) यह व्यवस्था देता है कि सरकारी प्रलेखों अथवा अन्य गोपनीय सूचना को अवैध व्यक्ति अथवा व्यक्तियों पर प्रकट करना दण्डनीय है।

यह उल्लेखनीय है कि प्रथम महायुद्ध तक मन्त्रिमण्डलीय कार्यवाहियों का कोई लेखा (Record) भी नहीं रखा जाता था, केवल मन्त्रिमण्डल के निर्णयों का संक्षिप्त लेखा 1917 से रखा जाने लगा है। मन्त्रिमण्डल का यह लेखा (Record)

अत्यन्त गोपनीयता से रक्षित रहता है और उसकी औपचारिक रिपोर्ट प्रकाशित नही की जाती।

मन्त्रिमण्डलीय 'गोपनीयता' का विशेष महत्व है। इससे राजनीतिक एकमतता (Unanimity) उत्पन्न होती है। गोपनीयता और राजनीतिक एकमनता के कारण मन्त्रिमण्डल मे उत्तरदायित्व की भावना का सचार होता है।

एकता व एकरूपता

ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल की अन्तिम प्रमुख विशेषता यह है कि उसमे एकता का भाव समस्त मन्त्रिमण्डल का एक सूत्र मे बाध रखना है। मन्त्रिमण्डल का दलगत आधार होता है। मन्त्रिगण प्राय एक ही राजनीतिक दल के सदस्य होते है। समान उद्देश्य, विचार और कार्यक्रम वाले व्यक्तियो की एक समिति होने के कारण मन्त्रिमण्डल मे वह राजनीतिक एकता और एकरूपता बनी रहती है जो सामूहिक उत्तरदायित्व के निर्वाह को सम्भव बनाती है। मन्त्रिमण्डल की इस एकता व एकरूपता के कारण ही शासन का काय सुचारु रूप से चलता है और काय सचालन मे एकरूपता बनी रहती है।

कभी-कभी कुछ विशेष सकटकालीन परिस्थितियो मे सयुक्त या राष्ट्रीय सरकारो (Coalition or National governments) का भी निर्माण होता है, परन्तु ब्रिटेन मे वे लोकप्रिय नही है। मिश्रित सरकारें सकट समाप्त हो जाते ही भग हो जाती है।

ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल की उपयुक्त सभी विशेषताओ का ससदीय शासन-व्यवस्था वाले अन्य देशो मे अनुकरण किया गया है, तथापि अन्य देशो मे वे उतनी आदर्श रूप मे विद्यमान नही हैं जितनी कि ब्रिटेन मे।

मन्त्रिमडल का गठन अथवा उसका निर्माण

(Composition or Formation of the Cabinet)

ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल का निर्माण राजा (अथवा रानी) करता है। परन्तु यह केवल औपचारिक है, क्योंकि वह अपनी इच्छा से इसका निर्माण नही कर सकता। सर्व प्रथम राजा प्रधानमन्त्री को नियुक्त करता है और तब उसके परामर्श पर अन्य मन्त्रियो की नियुक्ति करता है। प्रधानमन्त्री सामान्यत लोकसभा के बहुमत प्राप्त दल का नेता होता है। यदि लोकसभा मे किसी भी दल का बहुमत नही होता है तो प्रधानमन्त्री पद पर उस व्यक्ति को आसीन किया जाता है जो सयुक्त मन्त्रिमण्डल का निर्माण करने मे समर्थ हो।

हर नया प्रधानमन्त्री अपने मन्त्रियों की सूची तैयार करता है, उसे राजा के सम्मुख प्रस्तुत करता है और राजा आवश्यक परामर्श आदि देने के बाद (यदि वह आवश्यक समझे तो) सदैव ही इस सूची को स्वीकार कर लेता है। इस प्रकार मन्त्रियो की नियुक्ति हो जाती है। मन्त्रियो के चयन म कुछ प्रचलित अभिसमयों,

नियमों और व्यवहार की दृष्टि से प्रधानमन्त्री को प्राय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना पड़ता है—

(i) मन्त्रियों का चयन अपने ही दल के सदस्यों में से करे।

(ii) सब क्षेत्रीय हितों की तुष्टि करने का प्रयास करे।

(iii) मन्त्रियों का चयन संसद के दोनों सदनों में से करे। वर्तमान नियम यह है कि कम से कम तीन मन्त्री लार्ड-सभा से अवश्य लिये जाने चाहिये। लार्ड चांसलर के अतिरिक्त कुछ छोटे मन्त्री भी लार्डसभा से लिये जाते हैं, क्योंकि परम्परा ऐसी है कि कोई मन्त्री केवल उसी सदन में भाषण दे सकता है, जिसका वह सदस्य हो। कुछ मन्त्री स्वयं अपने पद के कारण मन्त्रिमण्डल के सदस्य बन जाते हैं, जैसे, चांसलर आफ दी एक्सचेकर, लार्ड प्रिवीसील आदि।

मन्त्रियों के चयन में प्रधानमन्त्री दल के प्रभावशाली सदस्यों की प्राय उपेक्षा नहीं कर पाता। यह स्मरणीय है कि प्रत्येक मन्त्री का संसद का सदस्य होना अनिवार्य है। यदि विशेष कारणवश किसी ऐसे व्यक्ति को मन्त्री पद पर आसीन कर दिया जाय जो संसद का सदस्य न हो तो यह आवश्यक है कि वह छ मास के अन्दर संसद का सदस्य बन जाय।

मन्त्रिमण्डल के सदस्यों की संख्या निश्चित नहीं है। आरम्भ में इसमें 7-8 सदस्य होते थे और अब इनकी संख्या 18-20 या इससे भी अधिक होती है। राज्य कार्यों में घटाव बढ़ाव होने पर मन्त्रिमण्डल के सदस्यों की संख्या कम ज्यादा हो सकती है।

सब मन्त्रियों का महत्व व कार्य एक सा नहीं होता है। अत उनके वेतन भिन्न भिन्न हैं। प्रधानमन्त्री को 10,000 पौण्ड वार्षिक मिलते हैं और पद मुक्ति के बाद उसे 2,000 पौण्ड वार्षिक पेंशन दी जाती है। अन्य मन्त्रियों का वेतन 5000 पौण्ड और कुछ मन्त्रियों व सेक्रेटरियों का वेतन 1,500 पौण्ड से लेकर 3 000 पौण्ड वार्षिक तक है।

मन्त्रिमण्डल के विभाग वितरण, प्रधानत प्रधानमन्त्री की इच्छा पर है कि वह किसको क्या विभाग सौंपता है। एक सदस्य के पास एक से अधिक विभाग भी हो सकते हैं।

मन्त्रिमण्डल व मन्त्रालय में अन्तर

(Distinction between Cabinet and Ministry)

प्राय लोग मन्त्रि मण्डल और मन्त्रालय (जिसे कुछ लेखकों ने मन्त्रि परिषद भी लिखा है) का एक ही अर्थ लेते हैं, किन्तु यह भ्रमात्मक है। मन्त्रालय मन्त्रि-मण्डल का व्यापकत्तर रूप है। दोनों के कार्यों, संगठन, शक्तियों आदि में बहुत अन्तर है। मन्त्रालय एक वृहत संस्था है जिसमें छोटे बड़े सभी मन्त्री रहते हैं। नव निर्वाचित प्रधानमन्त्री प्रशासन के संचालन के लिए संसद के 60-70 या इससे भी अधिक सदस्यों की नियुक्ति राजा से कराता है जो सभी संसद के प्रति उत्तरदायी

होते हैं। इन सभी राजपदाधिकारियों के सामूहिक संगठन को मन्त्रिपरिषद या मन्त्रालय कहा जाता है। किन्तु मन्त्रिमण्डल मंत्रालय के अन्तर्गत एक छोटा सा समूह होता है जिसमें निश्चित महत्वपूर्ण विभागों के मन्त्री होते हैं। इस लघु-समूह में प्राय वे व्यक्ति लिये जाते हैं जो मन्त्रालय के वयोवृद्ध, प्रभावशाली और अनुभवी नेता होते हैं तथापि कुछ प्रमुख पदों के मन्त्री अनिवार्यत इसमें सम्मिलित होते हैं, जैसे—राज चांसलर, लार्ड प्रिवीसील, चांसलर आफ दी एक्सचेकर, गृहमन्त्री, विदेश मन्त्री, आदि।

स्पष्ट है कि मन्त्रीमण्डल का प्रत्येक सदस्य मन्त्रालय का सदस्य होता है, परन्तु मन्त्रालय के कुछ इने गिने सदस्य ही मन्त्रिमण्डल के सदस्य हो सकते हैं। मन्त्रालय की एक समिति के रूप में बैठकें नहीं होती किन्तु मन्त्रिमण्डल मन्त्रालय की वह कार्यकारिणी समिति है जो एक साथ एकत्रित होती है, किसी विषय पर सम्मिलित रूप से विचार करती है और सामूहिक निर्णय देती है, जिसे मन्त्रालय के समस्त सदस्यों को मानना होता है।

दोनों प्रकार के मन्त्रियों में वेतन सम्बन्धी अन्तर भी होता है। यह अन्तर स्वयं मन्त्रिमण्डलीय मन्त्रियों में भी होता है और मन्त्रिमण्डलीय मन्त्रियों तथा मन्त्रालय के मन्त्रियों में भी। प्रधानमन्त्री और वित्तमन्त्री 10,000 पौण्ड वार्षिक पाते हैं जबकि अन्य मन्त्रिमण्डलीय स्तर के मन्त्री 5,000 पौण्ड वार्षिक। मन्त्रालय के साधारण मन्त्रियों का वेतन 1,500 से 3,000 पौण्ड वार्षिक तक होता है।

दोनों प्रकार के मन्त्रियों में कार्य क्षेत्र सम्बन्धी अन्तर भी विद्यमान है। मन्त्रिमण्डलीय मन्त्रियों के पास महत्वपूर्ण शासन-विभाग होते हैं। अपने अपने विभागों को सम्भालने के अतिरिक्त उन्हें विविध विभागों के कार्यों व उनकी नीतियों में सामञ्जस्य बनाये रखना होता है। मन्त्रालय के साधारण मन्त्रियों को इन सामञ्जस्यकारी कार्यों से कोई प्रयोजन नहीं होता और न नीति निर्धारण में ही उनका कोई भाग होता है। मन्त्रालय के समस्त मन्त्रियों व सदस्यों की सामयिक बैठकें नहीं होती। उनके ऊपर केवल अपने अपने विभाग से सम्बन्धित प्रशासन का दायित्व होता है जिसे वे मन्त्रिमण्डल द्वारा निर्धारित की गई नीति के अनुरूप निभाते हैं। फिर भी सामूहिक उत्तरदायित्व में वे सभी सम्मिलित होते हैं जो मन्त्रालय में किसी भी राजनीतिक पद पर नियुक्त हों। उन सभी का लोकसभा के समक्ष समान रूप से उत्तरदायित्व है।

मन्त्रिमण्डल की कार्यप्रणाली

(The Working of the Cabinet)

मन्त्रिमण्डल की बैठकें एकान्त में होती हैं और उनकी कार्यवाही पूर्णत गुप्त रखी जाती है। सरकारी भेद अधिनियम (Official Secrets Act) के अन्तर्गत मन्त्रिमण्डल और राज्य के गुप्त पत्रों का प्रकाशन करना दण्डनीय है

त्याग-पत्र देते समय भी मंत्री राजा की अनुमति से ही त्याग पत्र के कारणों पर प्रकाश डाल सकता है। शांतिकाल में मन्त्रिमण्डल की प्रति सप्ताह सामान्यतः दो बैठकें होती हैं, किन्तु आवश्यकता पड़ने पर प्रधानमन्त्री इसकी बैठक कभी भी बुला सकता है। मन्त्रिमण्डलीय बैठकों में शासन के नीति सम्बन्धी महत्वपूर्ण प्रश्नों पर निर्णय किया जाता है। किसी प्रश्न या मामले की जाँच करने के लिए मन्त्रिमण्डल शाही आयोग (Royal Commission) की भी नियुक्ति करता है। मन्त्रिमण्डल का बहुत सा कार्य विभिन्न समितियों द्वारा होता है जो साधारणतः दो प्रमुख वर्गों की होती हैं—स्थायी समितियाँ (Standing Committees) और तदर्थ समितियाँ (Adhoc Committees)। मन्त्रिमण्डल की बैठकों में प्रायः उन मन्त्रियों को (जो मन्त्रिमण्डल के सदस्य नहीं होते) भी आमन्त्रित किया जाता है। विभागों से सम्बन्धित मामलों पर मन्त्रिमण्डल में विचार होता है। वे मन्त्री समितियों के सदस्य हो सकते हैं।

मन्त्रिमण्डल की बैठकों की कार्यवाही का विस्तृत विवरण नहीं रखा जाता। सारांश रूप में केवल प्रमुख तर्क और अन्तिम निर्णय ही लिखे जाते हैं। कार्यवाही का प्रसारण भी बड़ा सीमित रहता है। इस कार्यवाही का उत्तरदायित्व मन्त्रिमण्डल के सचिवालय (Cabinet Secretariat) पर होता है।

मन्त्रिमण्डल के कार्य और अधिकार

(Functions and Powers of the Cabinet)

ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल कार्यों व अधिकारों की दृष्टि से सर्वोच्च नियन्त्रक शक्ति है। राज-पद के सब अधिकारों, शक्तियों और कर्त्तव्यों का प्रयोग राजा के नाम से मन्त्रिमण्डल ही करता है। पर इतनी शक्तिवान इस संस्था की शक्ति का आधार कानूनी न होकर परम्परागत है। कानूनी दृष्टि से मन्त्रिमण्डल राजा की परामर्शदात्री समिति मात्र है जब कि परम्परा अथवा अभिसमयों की दृष्टि से वह वास्तविक कार्यपालिका बन गया है। राजतन्त्र के लोकतन्त्रीकरण की प्रक्रिया में उत्तरोत्तर घटती हुई राजा की शक्तियों का स्थान क्रमशः मन्त्रिमण्डल लेता गया है और आज शक्तियों व कार्यों की दृष्टि से व्यावहारिक ब्रिटिश राजनीति तथा प्रशासन में मन्त्रिमण्डल सर्वोच्च है।

मन्त्रिमण्डल के अधिकारों और कार्यों को हम तीन श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं।

(1) व्यवस्थापन सम्बन्धी अधिकार एवं कार्य,
(2) कार्यपालिका सम्बन्धी अधिकार एवं कार्य,
(3) वित्त सम्बन्धी अधिकार एवं कार्य।

व्यवस्थापन सम्बन्धी अधिकार एवं कार्य

कानून बनाने के सम्बन्ध में समस्त शक्तियाँ व्यवस्थापिका को ही प्राप्त

हैं, किन्तु इस सम्बन्ध मे ससद पर मन्त्रिमण्डल ही नियन्त्रण रखता है। मन्त्रिमण्डल कानून निर्माण मे अगुआई करता है और हर कदम पर कानून का स्वरूप निर्धारित एव नियन्त्रित करता है। मन्त्रिमण्डल सारे कार्यों की जिम्मेदारी अपने कन्धो पर लेता है। विधेयक पेश करना, उसकी व्याख्या करना और उसे पास कराना मन्त्रिमण्डल का ही काय है। विधेयक यद्यपि लार्ड-सभा मे भी पेश होते हैं और वे सदस्य भी जो मन्त्री नही हैं, विधेयक पेश कर सकते हैं, परन्तु अधिकाश और महत्वपूण विधेयक मन्त्रियो द्वारा ही पेश किये जाते हैं। वित्त विधयक मन्त्रिमण्डल द्वारा ही लोकसभा मे पेश किये जाते हैं। जिस विधेयक को मन्त्रिमण्डल का समथन प्राप्त नही होता, उसके कानून बनने की सम्भावना बहुत ही कम होती है।

मन्त्रिमण्डल का ही यह निश्चय करने का अधिकार है कि कब ससद की बैठक बुलाई जाय, कब उसका सत्रावसान किया जाय और कब विघटन किया जाय ? उस भाषण को भी मन्त्रिमण्डल ही तैयार करता है, जिसे राजा ससद का उद्घाटन करते समय देता है और जिसमे आगामी सत्र के लिये शासन को सामान्य नीति व उसके कायक्रम आदि का साकेतिक विवरण होता है। ससद के कायक्रम का निणय भी मन्त्रिमण्डल ही करता है।

कायपालिका सम्बन्धी अधिकार और काय

मन्त्रिमण्डल मूलरूप से शासन की वास्तविक कायपालिका शक्ति है और राजपद म निहित समस्त अधिकारो का प्रयोग राजा के नाम से करता है। सन् 1918 में 'शासन यन्त्र समिति (Machinery of Government Committee) के अनुसार कायपालक क्षेत्र मे मन्त्रिमण्डल के तीन मुख्य काय हैं—

(i) ससद मे उपस्थित की जाने वाली नीति का अन्तिम निर्धारण,

(ii) ससद द्वारा निर्धारित नीति के अनुरूप राष्ट्रीय कायपालिका का सर्वोच्च नियन्त्रण,

(iii) राज्य के विभिन्न विभागो के अधिकारियो की सीमा का निर्धारण करना और उनमे सदा सामजस्य बनाये रखना।

मन्त्रिमण्डल 'नीति का चुम्बक' है। वह समस्त राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओ पर विचार करता है और उन पर निणय देता है। मन्त्रिमण्डल के निणयो को सम्बन्धित विभाग क्रियान्वित करते हैं। अपने निणयो को वैधानिक रूप देने के लिए वह प्रशासनिक विधियो और ससदीय विधियो के निर्माण माग चुनता है। मन्त्रिमण्डल विधि निमाण के क्षेत्र म ससद का नेतृत्व करता है।

मन्त्रिमडल का परम्परागत काय ससद द्वारा पारित कानूनो या विधियो को क्रियान्वित करना और प्रशासन का सचालन करना है। ब्रिटेन म समस्त कायपालिका शक्ति राजा के हाथ मे है, लेकिन यह एक सद्धान्तिक सत्य मात्र है। व्यवहारत वास्तविक कायपालिका राजमुकुट है, परन्तु चूकि राजमुकुट (Crown) एक कल्पना है, अत उसके नाम पर शक्तियो का उपयोग मन्त्रिमडल करता है।

मन्त्रीगण विभिन्न विभागों के अध्यक्ष होते हैं। वे अपने विभागों का सचालन और उनके कार्यों की देखभाल करते हैं। सम्पूर्ण मन्त्रालय को मन्त्रिमंडल के आदेशों का पालन करना पड़ता है और उसके द्वारा निर्धारित नीतियों व निर्णयों को क्रियान्वित करना होता है।

मन्त्रिमण्डल, सरकार की नीति को क्रियान्वित करने के उद्देश्य से, विभिन्न विभागों को एक-सूत्र में बांधता है और देखता है कि उनके कार्यों में अन्तर्विरोध न हो, वे एक दूसरे के कार्य-क्षेत्र का अतिक्रमण न करें और सभी के कार्यों में समन्वय रहे। राजनयिक स्तर पर बड़े बड़े पदाधिकारियों का चयन भी मन्त्रिमंडल ही करता है। राजा उन्हें केवल औपचारिक रूप से नियुक्त कर देता है।

प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated Legislation) की शक्ति ने मन्त्रिमंडल के कार्यपालिका सम्बन्धी अधिकारों को और भी विस्तृत कर दिया है। संसद कानूनों की केवल मोटी रूपरेखा बना देती है और मन्त्रिमंडल नियमों विनियमों द्वारा आवश्यक न्यूनताओं को पूर्ण करता है। चूंकि इन नियमों विनियमों का निर्माण संसद प्रदत्त अधिकार के अन्तर्गत होता है, अतः उनकी मान्यता वैसी ही होती है जैसी कि संसद द्वारा निर्मित कानूनों की।

संसद में प्रशासन से सम्बन्धित प्रश्न पूछे जाते हैं, और मन्त्रिमंडल व शासन के विविध विभागों की आलोचना की जाती है। इन सबका उत्तर मन्त्रिमण्डल को ही देना पड़ता है। उसे प्रशासन को उन दोषों से भी मुक्त करना होता है जिनके कारण सरकार की आलोचना होती है।

स्पष्ट है कि मन्त्रिमण्डल का कार्यपालक कार्य क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है।

वित्त सम्बन्धी अधिकार और कार्य

वित्तीय क्षेत्र में भी मन्त्रिमण्डल की शक्तियां बड़ी महत्वपूर्ण हैं। मन्त्रिमण्डल ही राज्य के समस्त व्यय के लिये उत्तरदायी है और उस समस्त व्यय के लिये आवश्यक वित्त जुटाना उसी का काम है। वार्षिक राजकीय बजट (Budget) को प्रस्तुत करना मन्त्रिमण्डल का अधिकार है। बजट निर्माण करते समय वित्तमन्त्री (Chancellor of the Exchequer) केवल प्रधानमन्त्री के आदेशों और सलाह से अपना लेखा तैयार करता है। कर सम्बन्धी आगामी नीति गुप्त रखने की दृष्टि से बजट मन्त्रिमण्डल में प्रायः नहीं रखा जाता और न उस पर मन्त्रिमण्डल में कोई विचार ही होता है। विविध विभागों के मन्त्री अपने-अपने विभागों की वित्तीय आवश्यकताओं और अपने कर-प्रस्तावों को वित्तमन्त्री के पास भेज देते हैं जिनके आधार पर वह बजट तैयार कर लेता है। बजट को संसद में प्रस्तुत किये जाने से कुछ दिन पूर्व अन्य मन्त्रियों को इसकी मोटी सूचना मिल जाती है। पर जब बजट संसद में प्रस्तुत कर दिया जाता है तो प्रत्येक मन्त्री को अपने अपने विभाग से सम्बन्धित वित्तीय आवश्यकताओं और कर प्रस्तावों को समझाना पड़ता है तथा तत्सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर भी देना

पडता है। ससद मे बजट प्रस्तावो की आलोचना का उत्तर देना और ससद सदस्यो के कटौती प्रस्तावो से सरकारी पक्ष की रक्षा करना मन्त्रिमण्डल का ही काय है। मन्त्रिमण्डल बजट को ससद म उपस्थित करने के बाद भी उसमे आवश्यक परिवतन ला सकता है। सभी प्रकार के वित्त विधेयक राजा की सिफारिश पर लोकसभा मे ही प्रस्तुत किये जाते है।

सरकार के उत्तरदायित्व पर ऋण लेने की व्यवस्था भी मन्त्रिमन्डल ही करता है। यह निणय करने का अधिकार भी मन्त्रिमण्डल को ही है कि कौन सा व्यय सचित निधि (Consolidated Fund) और कौन सा व्यय आकस्मिक निधि (Contingency Fund) से किया जायगा।

स्पष्ट है कि मन्त्रिमण्डल को व्यवस्थापन, कायपालन और वित्तीय सभी क्षेत्रो मे व्यापक अधिकार प्राप्त हैं। प्रदत्त व्यवस्थापन के कारण तो इसका काय और अधिकार क्षेत्र और भी अधिक बढ गया है।

मन्त्रिमण्डल का अधिनायकत्व

या

मन्त्रिमण्डल और लोकसभा का सम्बध

मन्त्रिमण्डल के कार्यों और उसकी शक्तिया को देखने से हमे यह स्पष्ट होता है कि विधि निर्माण और प्रशासन दोनो ही क्षेत्रो म मन्त्रिमण्डल प्रधान है। रैम्जे म्योर का विचार है कि इतना व्यापक और विनाशक शक्तियुक्त होने के कारण मन्त्रिमण्डल वास्तव म अधिनायक हो गया है क्योकि अपने बहुमत के बल पर वह अपने एकमात्र अकुश ससदीय नियन्त्रण से भी मुक्त हो गया है। ससद् का परम्परागत सिद्धान्त है कि वह जनता की ओर से जनता के हित मे सरकार को सीमित और नियन्त्रित कर, परन्तु लोकसभा मे बहुमत का नतृत्व करने के कारण मन्त्रिमण्डल की शक्तिया इतनी बढ गई है कि वह ससद की नियन्त्रण शक्ति के अधीन नही रहा है, अपितु बहुमत के बल पर ससद का मनोवाछित प्रयोग भी करता है। दलीय सगठन और अनुशासन इतना कठोर एव दृढ होता है कि ससद के सदस्यगण सचेतको (Whips) की अवज्ञा करने का साहस प्राय नही करते। इस प्रकार ससद मन्त्रिमण्डल के प्रस्तावो का बहुधा यथावत समथन करने के लिए विवश रहती है।

मन्त्रिमण्डल की व्यापक शक्तियो का सही मूल्याकन तभी किया जा सकता है जब कि लोकसभा के साथ उसके सम्बन्धो पर कानूनी अथवा सावैधानिक और व्यावहारिक दोनो दृष्टियो से अलग-अलग विचार किया जाय। कानूनी दृष्टिकोण के प्रतिपादको मे डायसी (Dicey) प्रमुख है, तो व्यावहारिक दृष्टिकोण स विचार करने वालो मे रैम्जे म्योर (Ramsay Muir) एव लास्की (Laski) उल्लेखनीय हैं।

नियन्त्रित एव मर्यादित करती है। ससद् प्रश्नो, मन्त्रिमण्डलीय नीति की आलोचना या अस्वीकृति, कटौती प्रस्ताव, कार्य-स्थगत प्रस्ताव, निन्दा प्रस्ताव, अविश्वास प्रस्ताव आदि द्वारा मन्त्रिमडल पर अपना अकुश रखती है।

स्पष्ट है कि विधि निमाण, वित्त व्यवस्था तथा प्रशासन पर नियन्त्रण करना ब्रिटिश ससद् का मुख्य अधिकार क्षेत्र है और कानूनी दृष्टि से ससद् सर्वोच्च सत्तावान है। मन्त्रिमडल अपनी नीतियो एव कार्यो के लिये ससद् के समथन पर आश्रित है और अपने जीवन के लिये ससदीय बहुमत के समथन पर निभर करता है। यही ससदीय प्रभुता का सिद्धान्त है।

व्यावहारिक दृष्टिकोण और ससद् की महत्ता

परन्तु लोकसभा और मन्त्रिमण्डल के सम्बन्ध पर यदि व्यावहारिक दृष्टिकोण से विचार किया जाय, तो स्थिति पूणत भिन्न है। ससद और मन्त्रिमडल का उपयुक्त परम्परागत सम्बन्ध पल्ट गया है और अब ससद मन्त्रिमडल का नियन्त्रण नही करती अपितु मन्त्रिमडल ससद् का नियन्त्रण करता है। मन्त्रिमडल की यह महत्ता निम्नलिखित विवेचन स स्पष्ट है—

(1) **व्यवस्थापन क्षेत्र मे मन्त्रिमण्डल**—इस क्षेत्र मे व्यावहारिक स्थिति यह है कि जो भी प्रमुख कानून पारित किये जाते हैं, उनका प्रारूप मन्त्रिमण्डल द्वारा तैयार किया जाता है। ससद् द्वारा प्राय उन्हे उसी रूप मे पारित कर दिया जाता है जिस रूप मे वे मन्त्रिमण्डल द्वारा तैयार किए जाते हैं। उनमे सशोधन भी केवल तभी हो पाते हैं जब वे मन्त्रिमण्डल को मान्य होते हैं। मन्त्रिमण्डल के सदस्य लोकसभा मे बहुमत दल के नेता होते है, अत लोकसभा मन्त्रिमण्डल की इच्छानुसार विधेयको को स्वीकृति प्रदान कर देती है। वास्तव मे दलीय सगठन और अनुशासन इतना कडा है कि ससद के सदस्य अपने दलीय नेताओ का विरोध करने, उनके आदेशो के विरुद्ध आलोचना अथवा मतदान करने का साहस भी नही करते। अतः मन्त्रिमण्डल जो कि बहुमत दल के प्रमुख नेताओ का ही मडल मात्र है, अपने दलीय सदस्यो के समथन के आधार पर अपनी नीति व अपने कार्यों के लिए ससदीय स्वीकृति प्राप्त कर सकने मे पूण विश्वास और निश्चितता रखता है। गैर-सरकारी विधेयक तभी ससद की स्वीकृति प्राप्त कर पाते हैं, जब उन पर मन्त्रिमण्डल की कृपा-दृष्टि हो। मन्त्रिमण्डल की इच्छा के विरुद्ध विरोधी पक्ष का किसी भी प्रस्ताव को पास करा लेना या समाप्त कर देना एकदम कठिन है।

(2) **कायपालन क्षेत्र मे मन्त्रिमण्डल**—कायपालन क्षेत्र मे भी व्यावहारिक रूप से ससद की अपेक्षा मन्त्रिमण्डल की ही उच्चतर स्थिति है। नीति निधारण का वास्तविक काय मन्त्रिमडल ही करता है और वही अपने बहुमत के बल पर ससद् से उसे स्वीकृत कराता है। मन्त्रिमडल ससद का कायक्रम और उसकी कायपद्धति को निर्धारित करता है। वही यह निणय करता है कि ससद् का अधिवेशन कब होगा, क्या-क्या काम उसमे होगा, कितना समय किस काम के लिए दिया

जायगा और संसद के सत्र का अवसान व उसका विघटन कब होगा ? इसके अतिरिक्त लोकसभा का अधिकांश समय मंत्रिमण्डल हड़प जाता है। गैर सरकारी सदस्यों को विधि प्रस्तावों पर विवाद का पूरा अवसर ही नहीं मिल पाता।

यदि लोकसभा अविश्वास प्रस्ताव या अन्य किसी साधन द्वारा मन्त्रिमण्डल की जीवनलीला समाप्त कर सकती है तो मंत्रिमंडल को भी यह अधिकार प्राप्त है कि वह लोकसभा का विघटन करादे उसके सदस्यों को पुनः निर्वाचकों की दया का भिखारी बनादे। लोकसभा द्वारा मंत्रिमण्डल के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर देने पर भी यह मन्त्रिमण्डल की इच्छा पर निर्भर है कि वह त्यागपत्र का मार्ग चुनता है अथवा नए निर्वाचन करा कर जनमत जानने के लिए राजा से कह कर लोकसभा को भंग करवाने का रास्ता अपनाता है। स्पष्ट है कि लोकसभा अपना जीवन बनाए रखने के लिए अपने अधिकारों के प्रयोग में, प्रायः मन्त्रिमण्डल के पतन की सीमा तक नहीं सोचती।

(3) वित्तीय क्षेत्र में मंत्रिमण्डल—इस क्षेत्र में व्यावहारिक दृष्टि से मंत्रीमंडल ही बजट तैयार करता है, उसे पारित करवाता है और तब उसे लागू करता है। राज्य की सम्पूर्ण आर्थिक नीति का संचालन मन्त्रिमण्डल द्वारा किया जाता है। मंत्रिमंडल ही राज्य की व्यवस्था का निर्धारण करता है, राजकीय आय के व्यय का निश्चय करता है। लोकसभा वित्त विधेयकों की आलोचना कर सकती है किन्तु वह मद या व्यय बढ़ा नहीं सकती और न कोई नया कर जोड़ सकती है। वह नए करों का सुझाव भी नहीं दे सकती, केवल प्रस्तावित करों में कमी कर सकती है, लेकिन वह भी एड़ी चोटी का जोर लगा कर ही क्योंकि लोकसभा का बहुमत मंत्रिमंडल का समर्थक होता है।

स्पष्ट है कि व्यवहार में मन्त्रिमंडल ही लोकसभा का स्वामी बन गया है। विरोधी दल मंत्रिमंडल की खुलकर आलोचना करता है, परन्तु मंत्रिमण्डल यह भली प्रकार जानता है कि जब लोकसभा में बहुमत उसका समर्थक है, तब उसके प्रस्ताव निश्चित रूप से पारित होते रहेंगे।

लास्की का निष्कर्ष

लास्की का निष्कर्ष है कि व्यवहार में मंत्रिमण्डल की शक्ति संसद से अधिक अवश्य है, पर वह अधिनायक की तरह सर्वसत्तावान नहीं है। उसने इस मत का खण्डन किया है कि मंत्रिमण्डल ने लोकसभा के अधिकारों का अपहरण करके उसे अपने अधीनस्थ कर लिया है और वह स्वयं निरंकुश हो गया है। लास्की का कहना है कि संसदीय प्रणाली की सफलता इसी में है कि मन्त्रिमण्डल द्वारा लोकसभा का नियन्त्रण हो, क्योंकि इस नियन्त्रण का उद्देश्य एक समानुगत कार्यक्रम को लागू करना और उसके लिये संविधान के अनुसार संसद की सहमति प्राप्त करना है। लास्की के अनुसार संसद में सहमति प्राप्त करने की मंत्रिमण्डलीय योग्यता पर ही सम्पूर्ण शासनतन्त्र की सफलता निर्भर है। यह सहमति प्राप्त करना एक

कठिन कार्य है। संसद् के भीतर और बाहर होने वाली आलोचनाओं के बावजूद, अपने समर्थकों की अपने प्रति निष्ठा बनाये रखना एक महत्वपूर्ण और विकट कार्य है। यही कारण है कि मन्त्रिमंडल को प्रत्येक नीति और प्रस्ताव के बारे में पूर्ण जागरूक रहना पड़ता है। चूंकि जरासी भी असावधानी उसके बहुमत को हिला सकती है। बहुमत को बनाये रखना कोई साधारण और सरल कार्य नहीं है। मन्त्रिमंडल लोकसभा को बड़े मनोवैज्ञानिक एवं चातुर्यपूर्ण ढंग से संचालित करता है। मन्त्रिमंडलीय जीवन के लिए लोकसभा का कठोरता से संचालन खतरनाक है। अत्यधिक एवं अनावश्यक गोपनीयता, त्यागपत्र अथवा विघटन की बारम्बार धमकी, क्रुद्ध लोकमत की उपेक्षा आदि ऐसी बातें हैं जो सदैव विद्रोह पैदा करती हैं। मन्त्रिमंडल द्वारा नियन्त्रण निरंकुशता के ढंग पर नहीं हो सकता। लोकसभा मन्त्रिमंडल के निर्देशन को तभी तक सहन करती है जब तक वह उसके (लोकसभा के) द्वारा समर्थित नीति के विरुद्ध नहीं जाता। मन्त्रिमंडल को यह समझना चाहिए कि कब झुकना उचित है और कब नहीं, और यह भी नहीं भूलना चाहिए कि शान के साथ झुकना ही महत्वपूर्ण है। निरंकुश आचरण करने वाला और अपनी नीति को स्वेच्छाचारी रूप में लागू करने की इच्छा रखने वाला मन्त्रिमंडल पतनोन्मुख होता है।

मन्त्रिमण्डल की शक्ति में प्रसार के कारण

(Reasons of Growing Importance of the Cabinet)

मन्त्रिमंडल और लोकसभा के सम्बन्धों के कानूनी और व्यावहारिक रूप में इतना विशाल अन्तर देखने पर, स्वभावतः यह प्रश्न मस्तिष्क में उठता है कि मन्त्रिमंडल की इस सर्वव्यापकता अथवा महत्ता या शक्ति में प्रसार के कारण क्या हैं। यदि इसके कारणों पर विचार किया जाय तो यह सिद्ध होगा कि यह प्रसार अनिवार्य है। मन्त्रिमंडल की महत्ता या शक्ति-प्रसार के कारण संक्षेप में निम्नलिखित हैं—

1 दल प्रणाली—मन्त्रिमंडल की शक्ति में प्रसार का सबसे प्रमुख कारण ब्रिटेन की दल प्रणाली है। ब्रिटेन में प्रधानतः दो दल ही राजनीतिक क्षेत्र में रहते हैं, और उनमें से स्पष्ट बहुमत प्राप्त करने वाला दल अपना मन्त्रिमंडल बनाता है। तीसरा दल यदि कोई होता भी है तो देश की राजनीति में उसकी कोई महत्वपूर्ण स्थिति नहीं होती। लोकसभा के बहुमत दल का समर्थन प्राप्त होने के कारण मन्त्रिमण्डल को अपने कार्यों के लिये लोकसभा की स्वीकृति प्राप्त होती है। यदि ब्रिटेन में दो दलों की प्रमुखता न होकर फ्रांस की भांति अनेक दलों की प्रमुखता होती तो वहां के मन्त्रिमण्डल की दशा भी फ्रांस के मन्त्रिमण्डल जैसी होती। तब शक्ति के लिये विविध दल परस्पर खींचतान करते रहते, मन्त्रिमण्डल को स्थायित्व नहीं मिल पाता और न ही आज के समान महत्व और शक्ति का वह स्वामी होता।

2 दलीय अनुशासन—ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल की महत्ता का दूसरा कारण दलीय अनुशासन है। इसका अभिप्राय यह है कि कोई सदस्य अपने दल के विरुद्ध मत नहीं दे सकता और न ही दल की नीति और उसके कार्यों को अपना समर्थन देने से मना कर सकता है। दलीय अनुशासन के कारण संसद् सदस्य स्वेच्छापूर्वक कार्य नहीं कर सकते। कोई भी सदस्य दल के आदेशों का उल्लंघन करने का साहस नहीं कर सकता क्योंकि इसका परिणाम दल से बहिष्कार और अन्ततः राजनीतिक आत्मघात भी होता है। स्पष्ट है कि चुनाव के समय जब कोई दल बहुमत प्राप्त कर लेता है तो उसका वह बहुमत सरलता से नष्ट नहीं होता। परिणामतः मन्त्रिमण्डल पूर्ण विश्वास के साथ अपने नियोजित कार्यक्रम पर चलता रहता है। अनुशासनबद्ध बहुमत का स्थायित्व ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल को इतनी शक्ति प्रदान कर देता है कि वह लोकसभा पर छाया रहता है।

3 प्रशासनिक समस्याओं की जटिलता—ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल को जटिल प्रशासनिक समस्याएं भी शक्ति प्रदान करती हैं। लोक कल्याणकारी राज्य के विचार के प्रादुर्भाव के कारण प्रशासन की समस्यायें अत्यन्त व्यापक और जटिल हो गई हैं। संसद के सामान्य सदस्य इन योग्य नहीं होते कि वे इन समस्याओं को भली प्रकार समझ सकें और राजनीतिक प्रशासनिक, आर्थिक एवं तकनीकी मामलों में मन्त्रिमण्डल का मार्ग निर्देशन कर सकें। इस असमर्थता का स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि लोकसभा इन विभिन्न समस्याओं की जानकारी के लिए मन्त्रिमण्डल पर ही अधिकाधिक निर्भर रहती है और इस प्रकार मन्त्रिमण्डल की महत्ता बढ़ गई है।

4 कार्यभार की अधिकता—कार्य की अधिकता के कारण भी लोकसभा को प्राप्त होने वाली महत्ता मन्त्रिमण्डल को प्राप्त हो जाती है। लोकसभा का कार्य इतना बढ़ चुका है कि वह स्वयं इसका नियमन निरीक्षण अथवा संचालन करने में असमर्थ है। मन्त्रिमण्डल द्वारा जो विधेयक और प्रस्ताव लोकसभा के समक्ष प्रस्तुत किए जाते हैं उन्हें प्रथम तो सभी संसद्-सदस्य अच्छी तरह समझने में ही असमर्थ होते हैं और दूसरे इन सब विषयों पर भली प्रकार विचार करने का समय ही नहीं मिलता। इसका परिणाम यह निकलता है कि मन्त्रिमंडल के अधिकांश निर्णयों को लोकसभा बिना किसी विशेष कठिनाई या वाद विवाद के स्वीकार कर लेती है। इस प्रकार मन्त्रिमंडल के निर्णय ही लोकसभा के निर्णय हो जाते हैं। विधेयकों का प्रारूप तैयार करना, उन्हें संसद् में प्रस्तुत करना और संसद् से स्वीकार करवाना मन्त्रिमंडल का ही काम रह गया है। कार्यभार की अधिकता के कारण ही प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated Legislation) व्यवस्था प्रचलन में आ गई है, जिससे विधि निर्माण के क्षेत्र में मन्त्रिमंडल बहुत अधिक शक्तिशाली हो गया है।

5 मन्त्रिमण्डल का सामूहिक उत्तरदायित्व—मन्त्रिमण्डल को शक्तिशाली बनाने में मन्त्रियों के सामूहिक उत्तरदायित्व का भी बड़ा हाथ है। इस सिद्धान्त के

अतगत एक मन्त्री की पराजय का अथ सम्पूण मन्त्रिमडल का पतन होता है, अत सभी मन्त्रिगण टीम भावना से काय करते है। मन्त्रिमडल एक बहुत ही दृढ छोटा सा निकाय बन जाता है जो असगठित और विभिन्न दलो स निर्मित ससद् की तुलना मे विशेष शक्तिशाली बना रहता है। सगठन की दृढता शक्ति की द्योतक है।

6 **लोकसभा के विघटन की व्यवस्था**—ब्रिटिश मन्त्रिमडल आवश्यकता पडने पर राजा द्वारा लोकसभा का विघटन कराने का अधिकार रखता है। ब्रिटेन मे यह एक सावैधानिक अभिसमय है कि जब कोई मन्त्रिमण्डल लोकसभा मे पराजित हो जाता है, तो उसे तुरन्त पद-त्याग करने की आवश्यकता नही है। प्रधानमन्त्री को यह अधिकार है कि यदि वह यह अनुभव करे कि मन्त्रिमण्डल की नीतियो और कार्यों को राष्ट्र का समथन प्राप्त है तो वह राजा से लोकसभा को भग करने की प्राथना कर सकता है और राजा उसकी प्राथना को ठुकरा नही सकता। यदि नए निर्वाचन मे मन्त्रिमडल को बहुमत प्राप्त हो जाता है तो उसे पद त्याग की आवश्यकता नही होती। स्पष्ट है कि यदि लोकसभा मन्त्रिमडल को पद त्यागने के लिए विवश करने का अधिकार रखती है तो मन्त्रिमडल को भी लोकसभा को भग कराकर सदस्यो को पुन निर्वाचको की दया का भिखारी बना देने का अधिकार है। अत लोकसभा के सदस्य दुबारा निर्वाचन की अनिश्चितता से बचने के लिए प्राय मन्त्रिमडल का समर्थन करते रहते हैं।

7 **लार्ड सभा के अधिकारों की कटौती**—मन्त्रिमण्डल की महत्ता का एक प्रमुख कारण यह भी है कि, लार्ड सभा अब लगभग शक्तिहीन सदन बना दिया गया है। 1911 और 1949 के ससदीय अधिनियमो के पारित होने के बाद लार्ड-सभा ससद् का दूसरा सदन नही रहा अपितु दूसरे दर्जे का सदन हो गया। इन अधिनियमो के कारण अब लार्ड-सभा मन्त्रिमण्डल द्वारा प्रस्तुत विधेयको को पारित होने से नही रोक सकती हैं। उनके पारित होने मे केवल कुछ देर लगा सकती है और उनकी आलोचना कर सकती है। इस तरह मन्त्रिमण्डल का उत्तरदायित्व अब केवल एक ऐसे सदन (लोक सभा) के प्रति ही रह गया है, जो उनके ही दल के बहुमत के कारण उसका अपना होता है।

8 **ससदीय काय विधि**—मन्त्रिमण्डल की शक्ति म वृद्धि का एक कारण ससद की काय विधि (Procedure) है। ससदीय कार्यवाहियो के नियमो द्वारा ससद सदस्यो के हाथ बधे रहते हैं, उनकी स्वतन्त्रता पर अकुश लगा रहता है। मन्त्रिमण्डल वाद विवाद को समाप्त करवा सकता है अथवा उसे सीमित कर सकता है। सामान्य समापन (Simple Closure) द्वारा पर्याप्त वाद विवाद हो चुकने पर प्रस्ताव लाया जा सकता है। मुखबध (Guillotine) के अनुसार विधेयक को अनेक भागो मे बाट दिया जाता है और प्रत्येक भाग के लिए समय निश्चित कर दिया जाता है। कगारू समाप्त (Kangaroo Closure) के द्वारा सभापति कुछ सशोधनो

पर वाद विवाद की आज्ञा ही नही देना। इन उपायो के अतिरिक्त दल सचेतक (Party Whips) ससद-सदस्यो की स्वतन्त्रता पर पूरा नियन्त्रण रखता है। इन ससदीय कार्य विधियो का अतिम परिणाम मन्त्रिमण्डल की शक्ति मे वृद्धि है।

9 ससदीय जीवन की स्थिति—ससदीय जीवन की स्थिति भी मन्त्रिमण्डल की शक्ति मे वृद्धि का कारण है। प्राय ससद के अवकाशकाल म सदस्यो को पता नही रहता कि मन्त्री लोग क्या कर रहे हैं? उन्हे केवल समाचार-पत्रो के माध्यम से ही कुछ बातो का पता चलता रहता है। ससद सदस्यो की यह वेखबरी की अवस्था मन्त्रियो को प्रभावपूर्ण बनाने मे बडी सहायक होती है।

निष्कर्ष रूप मे कहा जा सकता है कि ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल ससद से अधिक शक्तिशाली अवश्य है, किन्तु अधिनायक नही है। मन्त्रिमण्डल का अधिनायकतन्त्र साविधानिक है, निरकुश नही, उत्तरदायी है, स्वेच्छाचारी नही। मन्त्रिमण्डल बहुमत के मद मे चूर होकर विरोधी दल या जनमत की अवहेलना नहीं कर सकता। सदन की प्रचलित प्रथायें भी बहुमत दल के शासन को अधिनायकवादी होने से बचाती हैं। विरोधी दल को शासक दल पर अकुश रखने का पर्याप्त अवसर प्रदान किया जाता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न साधनो और ससद मन्त्रिमण्डल को उसकी गलती के प्रति सजग रखती है। सामान्यत मन्त्रीगण ससद के सम्मुख झूठ बोलना अनैतिक समझते हैं। अन्त मे, मन्त्रिमण्डल जनमत पर टिका रहता है। सरकार जनता की इच्छा को व्यावहारिक रूप देने का साधन है। अत प्रत्येक मन्त्रिमण्डल यह ध्यान रखता है कि उसे भविष्य मे अपने कारनामो का हिसाब चुकाना पडेगा। इगलैण्ड मे यह एक मान्य सिद्धान्त है कि शासन प्रजा की सम्मति से ही सम्भव हो सकता है।

/

है कि वह राष्ट्र की कितनी सेवा कर सकता है। किसी भी समय उसके प्रतिद्वंद्वी उसका स्थान ग्रहण कर सकते हैं।

प्रधानमन्त्री पद की औपचारिकता

ब्रिटेन की अन्य संस्थाओं की भांति प्रधानमन्त्री का पद भी अनौपचारिक है, उसका कोई कानूनी आधार नहीं है। प्रधानमन्त्री पद की उत्पत्ति परम्परा अथवा निरूढ़ि द्वारा हुई है। सन् 1878 से पहले प्रधान मन्त्री पद का नाम भी किसी सरकारी प्रपत्र में नहीं आया था। 1937 के क्राउन मन्त्री अधिनियम (The Minister of the Crown Act, 1937) में पहली बार कानूनी रूप में प्रधान मन्त्री के पद को मान्यता प्रदान की। इसमें 'प्रधान मन्त्री व सरकारी कोष के प्रथम लार्ड' के पद का अस्तित्व स्वीकार किया गया और उसके अधिकारी के लिए 10 हजार पौण्ड वार्षिक वेतन निर्धारित किया गया। इस अधिनियम से प्रधान मन्त्री की केवल सांविधानिक स्थिति को मान्यता मिली, उसे वास्तविक शक्ति प्रदान नहीं की गयी। आज भी यही स्थिति वर्तमान है, अर्थात् प्रधानमन्त्री पद के अधिकारों और उसकी शक्तियों का कोई कानूनी आधार नहीं है। प्रधान मन्त्री को सभी अधिकार सांविधानिक अभिसमयों से मिले हुए हैं और उन्हीं अभिसमयों से वे मर्यादित भी हैं।

उल्लेखनीय है कि 1937 के क्राउन मन्त्री अधिनियम में 'विरोधी पक्ष के नेता' को भी मान्यता प्रदान की गयी और उसके लिए 2000 पौण्ड वार्षिक वेतन स्वीकार किया गया। अक्तूबर, 1964 के एक संशोधन के अनुपालन में अब प्रधान मन्त्री का वेतन 14 हजार पौण्ड तथा विरोधी पक्ष के नेता का वेतन 4,500 पौण्ड वार्षिक है।

प्रधान मन्त्री की नियुक्ति

(The Choice of the Prime Minister)

सिद्धान्ततः प्रधानमन्त्री की नियुक्ति राजा द्वारा होती है। लेकिन दलगत सरकार के विकास ने यह परम्परा स्थापित कर दी है कि लोकसभा में बहुमत दल का नेता प्रधान मन्त्री बनता तथा मन्त्रिमण्डल का निर्माण करे। इस प्रकार प्रधान मन्त्री के चुनाव में राजा की शक्ति नगण्य हो गई है। फिर भी कुछ परिस्थितियां हैं, जिनमें राजा स्वनिर्णय (Discretion) के अनुसार कार्य कर सकता है। ऐसी दशाएं मुख्यतः तीन हो सकती हैं—

1 जब लोकसभा में दो से अधिक दल हों और उनमें से किसी को भी आधे से अधिक मत अर्थात् स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो। इस स्थिति में राजा का कर्त्तव्य है कि वह ऐसे व्यक्ति को पद भार सम्भालने हेतु आमन्त्रित करे जो लोकसभा का बहुमत अपनी सरकार के लिए प्राप्त करने में सफल हो।

2 जब बहुमत दल का नेता स्पष्ट न हो। यह स्थिति तब पैदा हो सकती

है जब एक प्रधानमन्त्री अचानक त्यागपत्र दे दे या मृत्यु को प्राप्त हो जाय और आन्तरिक द्वन्द्व के कारण दल अपना नेता चुनने मे असमर्थ हो ।

3 जब संसद् मे दलीय स्थिति अथवा देश की परिस्थितिवश एक मिश्रित मन्त्रिमण्डल का बनाया जाना आवश्यक हो, परन्तु प्रधानमन्त्री के सम्बन्ध मे विभिन्न दलो मे मतैक्य न हो । जेनिंग्स ने लिखा है कि "जब 1931 मे श्री मैकडॉनल्ड ने पद त्याग किया तो उनसे तथा विरोधी दलीय नेताओ से राजा का व्यक्तिगत अनुरोध ही उनको मिश्रित सरकार के प्रधान के रूप मे प्रतिष्ठित कर सका ।"

उल्लेखनीय है कि प्रधानमन्त्री पद के सम्बन्ध मे अब यह सर्वमान्य धारणा हो गई है कि प्रधानमन्त्री लोकसभा म से ही चुना जाए, हालांकि प्रथागत नियम यही है कि प्रधानमन्त्री या तो कोई पीयर (Peer) हो अथवा लोकसभा का सदस्य हो । वास्तव मे 1902 के बाद से ही कोई प्रधानमन्त्री लार्ड–सभा की सदस्यता मे से नही चुना गया है । अक्टूबर, 1963 म जब लार्ड ह्यूम को प्रधानमन्त्री बनाया गया तो स्पष्ट कर दिया गया कि उन्हें अपनी उपाधिया का परित्याग कर देना होगा । लार्ड ह्यूम ने अपनी उपाधि त्यागने और लोकसभा के लिए उप चुनाव लडने के निश्चय की घोषणा की । चुनाव 7 नवम्बर को हुए जिनम ह्यूम विजयी घोषित किया गया । प्रधानमन्त्री को लोकसभा का सदस्य ही होना इसलिए आवश्यक माना जाता है कि वह तथा उसका मन्त्रिमण्डल केवल लोकसभा के प्रति ही उत्तरदायी होता है । दलीय सगठन की दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि प्रधानमन्त्री लोकसभा मे से ही चुना जाए ।

प्रधानमन्त्री पद के लिए योग्यतायें

यद्यपि नियमत प्रधानमन्त्री पद के लिए कोई निश्चित योग्यता नही है, फिर भी व्यवहारत उसके लिए कुछ योग्यताओ और व्यक्तिगत गुणो का होना आवश्यक है । प्रथम तो सांविधानिक प्रथाओ ने ही यह आवश्यक बना दिया है कि प्रधानमन्त्री लोकसभा का सदस्य हो, लोकसभा के बहुमत दल का नेता हो अथवा लोकसभा के बहुमत का समर्थन प्राप्त करने मे समर्थ हो । द्वितीय, उसे विभिन्न व्यक्तिगत गुणों का धनी होना चाहिए । लास्की ने प्रधानमन्त्री के गुणो का विशद् वर्णन इस प्रकार किया है–"विवेक कौशल, मनुष्यो पर शासन करने की शक्ति, विश्वसनीय व्यक्तियो की पहचान, प्रभावशाली वक्तव्य देने की क्षमता, ऐसा शिष्टतापूर्ण निर्णय ले सके कि वह दल तथा लोकमत से आगे तो अवश्य हो लेकिन इतना न हो कि उसका सुगमतापूर्वक पालन न हो सके, एक ऐसी महत्त्वाकांक्षा जो आगे तो बढाए पर साथ ही आकस्मिकता के प्रदर्शन में सजग हो, व्यक्तियो या कार्यों के बारे मे तत्कालीन निर्णय के समय मर्यादित व्यग्रता—ये सब ऐसे गुण हैं जिनके बिना प्रधानमन्त्री का काम नहीं चल सकता ।'

वस्तुतः ब्रिटिश प्रधानमन्त्री पद तक पहुँचने का मार्ग बड़ा जटिल है। कार्टर ने लिखा है कि—"सर्वप्रथम लोकसभा में व्यक्ति को राजनैतिक नेता के रूप में ख्याति प्राप्त करनी होती है। मन्त्रिमण्डल की सदस्यता और फिर सम्भवतः प्रधानमन्त्री पद की आकांक्षा साधारणतः व्यक्ति अनेक पदों पर प्रशिक्षण प्राप्त करने के उपरान्त ही प्राप्त कर सकता है।"

प्रधानमन्त्री के अधिकार और कर्त्तव्य

(Powers and Functions of the Prime Minister)

जैसा कि कहा जा चुका है प्रधानमन्त्री वास्तविक रूप में, वैधानिक रूप में नहीं, राज्य का प्रधान है। उसके समान विशाल सत्ता संसार में सम्भवतः किसी वैधानिक प्रधान को प्राप्त नहीं है। जब तक उसके दल का संसद में बहुमत रहता है, वह अनेक ऐसे काम कर सकता है जो अमेरिका का राष्ट्रपति भी नहीं कर सकता। वह पहले से ही इस बात का वचन दे सकता है कि उक्त संधि पर हस्ताक्षर हो जायेंगे या उसका अनुमोदन हो जायगा, या कोई विशेष विधान पारित हो जायगा, या किसी भी धन राशि के व्यय की संसद् द्वारा स्वीकृति मिल जाएगी। प्रधानमन्त्री सम्पूर्ण शासन सूत्र का केन्द्र है। उसकी व्यापक शक्तियों और उसके अधिकारों व कर्त्तव्यों का विवेचन हम निम्नलिखित शीर्षकों में कर सकते हैं—

प्रधानमन्त्री व मन्त्रिमण्डल

प्रधानमन्त्री ही मन्त्रिमण्डल के निर्माण, जीवन तथा मरण का केन्द्र स्थल है और उसका प्रभावशाली संचालन उसी पर निर्भर करता है।

मन्त्रिमण्डल का निर्माण—प्रधानमन्त्री पद की बागडोर सम्भालने के बाद उसका पहला कर्त्तव्य होता है—मन्त्रिमण्डल का निर्माण करना। इसके लिए वह सदस्यों की सूची तैयार करता है, जिसे राजा विधिवत् स्वीकार कर लेता है। राजा द्वारा मन्त्रियों की नियुक्ति करना केवल एक औपचारिकता मात्र है। कौन व्यक्ति मन्त्रिमण्डल में लिया जायगा, कौन मन्त्रिपद पर नियुक्त किया जायगा, इसका निर्णय प्रधानमन्त्री ही करता है? इस निर्णय में दलीय एकता एवं सुदृढ़ता, राजा की इच्छा, सांविधानिक अभिसमय, राजनीतिक स्थिति आदि अनेक तत्व प्रभावशाली होते हैं, परन्तु अन्तिम निश्चय करना प्रधानमन्त्री का अधिकार है। यदि वह किसी व्यक्ति को मन्त्रिमण्डल में सम्मिलित करना चाहता है तो राजा रोक नहीं सकता और यदि वह किसी व्यक्ति को सम्मिलित करना नहीं चाहता है तो राजा उसे विवश नहीं कर सकता।

फिर भी मन्त्रियों के चयन में प्रधानमन्त्री मनमानी नहीं कर पाता। उसे यह देखना पड़ता है कि उसके दल के प्रमुख सदस्य मन्त्रिमण्डल में आ जाएं क्योंकि ऐसा न होने पर दल के भीतर फूट पड़ सकती है और उसकी स्वयं की स्थिति कमजोर हो सकती है। कभी-कभी तो उसे ऐसे व्यक्तियों को भी मन्त्रिमण्डल में रखना पड़ता है जिन्हें वह नहीं चाहता, क्योंकि उन्हें नहीं रखने से शासन संकट में पड़ सकता है।

कभी कभी उन लोगों की शर्तों पर भी चलना पड़ता है और उन्हें उनकी इच्छा का विभाग देना पड़ता है। मन्त्रिमण्डल का निर्माण करते समय उसे इस बात का भी ध्यान रखना पड़ता है कि यथासम्भव वे ही लोग उसमें आयें जो परस्पर सहयोग की भावना से काय कर सकते हों। प्रधानमन्त्री को अपने सहयोगियों के चयन में विभिन्न वर्गों, विभिन्न धर्मों विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों, नवयुवक राजनीतिज्ञों आदि के प्रतिनिधित्व को भी ध्यान में रखना पड़ता है। राजा की इच्छा पर भी, चाहे सौजन्य के कारण ही सही, प्रधानमन्त्री को उचित ध्यान देना होता है।

मन्त्रिमण्डल का सचालन—प्रधानमन्त्री न केवल मन्त्रिमण्डल का निर्माण करता है बल्कि उसे जीवन और गति भी वही देता है। वही अपने मन्त्रियों के बीच विभागों का वितरण करता है। फिर भी कुछ सदस्य इतने प्रभावशाली और सशक्त हो सकते हैं कि विभाग वितरण करते समय प्रधानमन्त्री उनकी इच्छा का आदर करे। परन्तु साधारणत विभागों के वितरण के सम्बन्ध में प्रधानमन्त्री का निर्णय अन्तिम होता है।

प्रधानमन्त्री को यह भी देखना पड़ता है कि मन्त्रिमण्डल का काय सुचारु रूप से चलता रहे। समस्त प्रशासन का मुखिया होने के नाते वह सभी विभागों का निरीक्षण करता है। कभी कभी मन्त्रियों में परस्पर मतभेद उठ खड़े होते हैं, तब प्रधानमन्त्री हस्तक्षेप करके औचित्य अनौचित्य के निर्णय द्वारा उनके मतभेदों को दूर करता है। इस प्रकार मन्त्रिमण्डलीय जीवन को सहयोग एव सौहार्दपूर्ण बनाये रखने का उत्तरदायित्व प्रधानमन्त्री पर ही है। वही सबको एक सूत्र में पिरोये रखता है।

प्रधानमन्त्री ही मन्त्रिमण्डल की बैठकों का सभापतित्व और उनकी समस्त कार्यवाहियों का सचालन करता है। मन्त्रिमण्डल की कार्यविधि (Agenda) पर उसका नियन्त्रण होता है। मन्त्रिमण्डल के निर्णयों और नीति निर्धारण में प्रधानमन्त्री का ही सर्वोपरि हाथ रहता है। मन्त्रिमण्डल के सदस्य वाद विवाद के लिए जो भी विषय विचारार्थ प्रस्तुत करते हैं उन्हें मानने या न मानने की उसे स्वतन्त्रता होती है।

परन्तु यह स्मरणीय है कि प्रधानमन्त्री अन्य मन्त्रियों का अधिनायक नहीं है। अन्य मन्त्रियों के साथ व्यवहार करते समय वह इस बात का ध्यान रखता है कि वह उनके साथ अनुचित व्यवहार करेगा या उन पर अनुचित दबाव डालेगा तो उसकी अपनी दलगत स्थिति बिगड़ सकती है। मन्त्रिमण्डल के सदस्य प्रधानमन्त्री के दास या अधानस्थ नहीं होते वरन वे उसके सहयोगी होते हैं। उनको वह अपने विचारों को मानने के लिए फुसला सकता है किन्तु विवश नहीं कर सकता। इस रूप में उसकी स्थिति अमेरिकन राष्ट्रपति की स्थिति से पूर्ण रूप से भिन्न है। वह अपने सहयोगी मन्त्रियों की राय की कभी भी पूर्ण अवहेलना नहीं कर सकता। हाँ, यह अवश्य है कि उसकी स्थिति अन्य मन्त्रियों की तुलना में बहुत अधिक प्रभावशाली

होती है और वह मन्त्रियों से अपने विचारों को मनवा ही लेता है। व्यवहार में पहल उसी की रहती है और मन्त्रीगण बहुधा उसका अनुसरण करते हैं।

मन्त्रीमण्डल का अन्त—प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल का सिर्फ निर्माता एवं पालनकर्ता ही नहीं है, बल्कि संहारकर्ता भी है। मन्त्रियों के मन्त्रित्व की समाप्ति तथा मन्त्रिमण्डल के भंग करने के विषय में उसकी इच्छा का वस्तुतः पर्याप्त महत्व है। सभी मन्त्रियों का भविष्य उसी के साथ बंधा हुआ है। प्रधानमन्त्री के साथ ही अन्य मन्त्री भी तरते या डूबते हैं। उसके त्यागपत्र के साथ पूरा मन्त्रीमंडल भंग हो जाता है। इसके अतिरिक्त यदि प्रधानमन्त्री व अन्य किसी मन्त्री के मध्य कोई मतभेद होता है तो ऐसी दशा में प्रधानमन्त्री उस असन्तुष्ट मन्त्री से त्यागपत्र की मांग कर सकता है, या स्वयं अपना त्यागपत्र देकर सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल को विघटित कर सकता है। किसी भी मन्त्री का प्रधानमन्त्री से मतभेद होने पर मन्त्रिपद से हट जाना आवश्यक है अन्यथा वह मन्त्रिमण्डल के सामूहिक उत्तरदायित्व से उन्मुक्त नहीं हो सकता। प्रधानमन्त्री एक नहीं वरन् अनेक मन्त्रियों को एक साथ पद मुक्त होने के लिए बाध्य कर सकता है जैसा कि 1962 में प्रधानमन्त्री मैकमिलन ने किया था। वैधानिक रूप से मन्त्रियों को पदच्युत का अधिकार राजा का विशेषाधिकार है, लेकिन व्यवहारतः यह परम्परा बन गई है कि इस अधिकार का प्रयोग वह प्रधानमन्त्री की मन्त्रणा पर ही करता है। इस प्रकार मन्त्रियों की पदच्युति का अधिकार प्रधानमन्त्री का ही अधिकार बन गया है।

स्मरणीय है कि प्रधानमन्त्री अपनी स्थिति का अनुचित प्रयोग प्राय: नहीं करता और अकारण ही किसी मन्त्री को पदत्याग के लिए बाध्य नहीं करता क्योंकि उसे अपनी दलीय स्थिति को ध्यान में रखना पड़ता है। वह ऐसे किसी भी कार्य से बचने की कोशिश करता है जिससे स्थिति बिगड़ने का अंदेशा हो।

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल के निर्माण, जीवन और मरण का केन्द्र बिन्दु है। वह मन्त्रिमण्डल रूपी मेहराब की आधारशिला है, परन्तु अमेरिका के राष्ट्रपति की तरह मन्त्रिमण्डल का मालिक नहीं है। मन्त्रिमण्डल में अन्य सदस्य उसके नौकर नहीं, बल्कि सहयोगी हैं।

शासन प्रमुख के रूप में प्रधानमन्त्री

सिद्धान्ततः देश का शासन प्रमुख राजा है, पर व्यवहारतः शासन प्रमुख के सभी अधिकारों का प्रयोग प्रधानमन्त्री और मन्त्रिमण्डल के द्वारा किया जाता है। प्रधानमन्त्री ही राजा के नाम पर देश का पूरा शासन यन्त्र संचालित करता है। राज्य की सभी महत्वपूर्ण नियुक्तियां या तो प्रधानमन्त्री द्वारा स्वयं की जाती हैं या राजा द्वारा उसके परामर्श से की जाती हैं। राजकीय सम्मानों के प्रदान करने के अधिकार का प्रयोग भी राजा प्रधानमन्त्री के परामर्श पर ही करता है। प्रशासकीय विभागों का संचालन उसी की देखरेख में होता है। देश की परराष्ट्रीय नीति के

सम्बन्ध मे समस्त महत्वपूर्ण घोषणायें उसी के द्वारा होती हैं, न कि विदेश मंत्री के द्वारा। परराष्ट्र मंत्रालय चाहे प्रधानमंत्री के पास हो या न हो, परराष्ट्र सम्बन्धों का सुचारु सचालन उसका दायित्व समझा जाता है। अन्य प्रशासकीय विभागो पर भी प्रधानमंत्री देखरेख करता है और मंत्रिगण उसका परामर्श लेकर ही कोई महत्वपूर्ण निर्णय करते हैं। देश की शासन सम्बन्धी नीति का निर्धारण मंत्रिमण्डल के परामर्श से प्रधानमंत्री ही करता है। वही विविध मंत्रालयो के कार्य मे सामंजस्य बनाये रखता है। प्रधानमंत्री मंत्रिमण्डल के परामर्श से ही अपने निर्णय करने को बाध्य नही है। वह बिना मंत्रिमण्डल के विचाराधीन रखे किसी भी नवीन नीति अथवा योजना को सार्वजनिक रूप से घोषित कर सकता है तथापि शासन के सचालन मे प्रधानमंत्री अपने सहयोगियो की परवाह न करके मनमाना व्यवहार नही कर सकता। उसे अपने सहयोगियो का विश्वास प्राप्त करना पडता है क्योंकि उसकी सफलता बहुत कुछ उनके सहयोग पर निर्भर है। सहयोगियो के विश्वास को ठुकराकर स्वेच्छाचारी आचरण करने वाला प्रधानमंत्री अपने दल, ससद और राष्ट्र का सम्मान खो बैठता है। सभी की दृष्टि सदैव प्रधानमंत्री के कार्यों पर लगी रहती है। वह और सरलतापूर्वक अपने अधिकारो का दुरुपयोग नही कर सकता।

अन्तिम रूप से प्रधानमन्त्री बजट के लिए उत्तरदायी होता है, इसलिए राजकीय बजट को प्रधानमंत्री और वित्तमंत्री ही अन्तिम रूप देते है। लोकसभा मे प्रेषित करने से पूर्व मंत्रिमण्डल की स्वीकृति इस बजट के लिये नही ली जाती, यद्यपि मन्त्रिमण्डल को बजट का एक मौलिक विवरण दे दिया जाता है।

राजा के परामर्शदाता के रूप मे प्रधानमन्त्री

केवल प्रधानमन्त्री ही राजा के परामर्शदाता का कार्य करता है। सिद्धान्तत प्रधानमन्त्री का कार्य राजा को शासन सम्बन्धी परामर्श देना है और राजा इस बात के लिए स्वतन्त्र है कि वह प्रधानमन्त्री के परामर्श को माने या न माने। किन्तु व्यवहारत राजा प्रधानमन्त्री के परामर्श को सदैव मानता है।

प्रधानमन्त्री, राजा और मन्त्रिमण्डल को एक दूसरे से सम्बद्ध रखने वाली कडी का काम करता है। वह मन्त्रिमण्डल के निर्णयो और वार्तालापो की सूचना राजा को देता है। आपातकाल मे राजा सर्वप्रथम प्रधानमन्त्री से ही सलाह लेता है। प्रधानमन्त्री राजा के व्यक्तिगत जीवन के मामलो को भी नियन्त्रित करता है। राजा किन-किन सरकारी कार्यों मे भाग लेगा, साम्राज्य या राष्ट्रमण्डल के किस भाग की यात्रा करेगा आदि बातो का निर्णय प्रधानमन्त्री ही करता है।

सरक्षण और उपाधियो सम्बन्धी शक्ति

प्रधानमन्त्री के पास सरक्षण और कृपा के अपार स्रोत हैं। उपाधिया प्रदान करना राजा का विशेषाधिकार है, किन्तु उनका वितरण प्रधानमन्त्री के परामर्श पर ही किया जाता है। विशेष रूप से लार्डसभा की सदस्यता का भडार ऐसा है

जिसका प्रधानमन्त्री राजनीतिक प्रयोग कर सकता है। दल के असन्तुष्ट नेताओं को सन्तुष्ट करने, दल के समर्थकों और सेवकों को पुरस्कृत करने, दल के वयोवृद्ध एवं प्रतिष्ठित नेताओं को संसद में स्थान देने तथा दल के लिए धन एकत्रित करने आदि के लिए ब्रिटिश प्रधानमन्त्री के संरक्षण अधिकार (Patronage) का यही मुख्य स्रोत है। यह उल्लेखनीय है कि राष्ट्रीय महोत्सव के अवसरों पर प्रधानमन्त्री उपाधियां व सम्मान वितरित करते समय विरोधी दल के सुझाव भी आमन्त्रित करता है।

आपातकालीन अधिकार

युद्ध, अर्थ संकट या अन्य इसी प्रकार के संकटों के समय ब्रिटिश प्रधानमन्त्री की शक्ति बहुत बढ़ जाती है। यद्यपि ब्रिटिश संविधान के अन्तर्गत भारतीय संविधान की भांति कोई आपातकालीन प्रावधान नहीं दिये हुये हैं, किन्तु फिर भी तुरन्त कदम उठाने के लिये अथवा विपत्ति के समय सम्पूर्ण राष्ट्र की शक्ति प्रयुक्त करने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि कार्यपालिका विशेष रूप से शक्तिशाली बन जाये। यह एक तथ्य है कि द्वितीय महायुद्ध के दौरान ब्रिटेन जैसे प्रजातान्त्रिक राज्य में चर्चिल ने हिटलर और मुसोलिनी के समान अधिनायकीय शक्तियों का प्रयोग किया किन्तु यह प्रयोग सांविधानिक ढंग से हुआ। वास्तव में आपातकाल के समय ब्रिटेन में सांविधानिक अधिनायकत्व की स्थापना हो जाती है, जिसका तानाशाह प्रधानमन्त्री होता है। कभी कभी तो शीघ्र कार्य करने की दृष्टि से प्रधानमन्त्री स्वयं निर्णय कर लेता है और तब कार्य पूरा करने के बाद उसे मन्त्रिमण्डल के समक्ष विचार विमर्श के लिये प्रस्तुत किया जाता है।

दल का नेता

शासन का प्रधान होने के अतिरिक्त प्रधानमन्त्री बहुमत दल का नेता होता है और उसकी सर्वोच्च शक्ति का राज उसकी यह दलीय स्थिति ही है। विजित दल का नेता होने के नाते ही वह प्रधानमन्त्री बन पाता है। इस स्थिति में उसका व्यक्तित्व सार्वजनिक रूप ले लेता है। रेडियो, कार्टून, प्रेस आदि द्वारा उसका व्यक्तित्व जनता के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। वह दलीय एकता का प्रमुख स्तम्भ और प्रतीक होता है, जिसके विरुद्ध अकारण ही अंगुली उठाना दल के साथ विश्वासघात माना जाता है। प्रधानमन्त्री के व्यक्तित्व को ही केन्द्र बनाकर सामान्य निर्वाचन (General Election) लड़ा जाता है। अनिश्चित मतदाता जो वास्तव में चुनावों का निर्णय करते हैं किसी दल विशेष अथवा नीति का समर्थन नहीं करके केवल एक नेता का समर्थन करते हैं। इसलिए प्रधानमन्त्री को प्रभावशाली नेतृत्व करना पड़ता है।

वस्तुतः निर्वाचन के द्वारा प्रधानमन्त्री सम्पूर्ण राष्ट्र का प्रतीक बन जाता है, उसके व्यक्तित्व में दल की प्रतिष्ठा और शक्ति समाहित हो जाती है और तब

उसे नेता पद से निकाल फेंकना एक अत्यधिक दुष्कर कार्य हो जाता है। यह कह देना कोई अतिशयोक्ति न होगी कि प्रधानमन्त्री के व्यक्तित्व पर ही दल बहुत कुछ टिका रहता है।

लोकसभा के नेता के रूप में प्रधानमन्त्री

प्रधानमन्त्री लोकसभा (House of Commons) का नेता होता है। यद्यपि आजकल ऐसा चलन है कि वह अपने किसी साथी को लोकसभा का नेता मनोनीत कर देता है, ताकि इस उत्तरदायित्व से उसे छुटकारा मिल जाय, किन्तु तब भी लोकसभा के नेता के रूप में अंतिम उत्तरदायित्व प्रधानमन्त्री का ही है। लोकसभा का नेता होने व अपने दल के बहुमत के कारण प्रधानमन्त्री लोकसभा को अपने नियन्त्रण में बनाये रखता है। इस सम्बन्ध में उसकी स्थिति अमेरिकन राष्ट्रपति से बहुत भिन्न है जिसका वहां की प्रतिनिधि सभा (House of Representatives) से कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता। लोक सभा का नेता होने के नाते मुख्य नीति सम्बन्धी घोषणाएँ प्रधानमन्त्री को ही करनी पड़ती हैं। उससे ही विभाग विशेष या प्रशासन की आम आलोचना से सम्बन्धित प्रश्न किये जाते हैं। वही इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए संसद् का सीधा सामना करता है। प्रधानमन्त्री ही महत्वपूर्ण वाद विवादों को आरम्भ करता है और वही रक्षा विभाग विदेश विभाग या गृह विभाग से सम्बन्धित वाद विवाद में हस्तक्षेप करता है। यदि मन्त्रियों से कोई भूल हो जाय तो प्रधानमन्त्री उस भूल को सुधार सकता है। अपने मन्त्रियों के साथ उसे ही संसद में सम्पूर्ण व्यवस्थापन कार्य का संचालन करना पड़ता है। संसद के दलीय सचेतक प्रधानमन्त्री के नियन्त्रण में रहते हैं। उन्हीं के द्वारा वह लोकसभा के अपने दल के सदस्यों का आवश्यक आदेश देता रहता है। मुख्य सचेतक की सहायता से वह सदन की समय सूचक कार्यवाहियां निर्दिष्ट करता है, कार्य व्यवहार बतलाता है और विरोधी दल की राय जान कर प्रत्येक कार्यवाही के लिए समय निश्चित करता है। प्रधानमन्त्री राजा से कहकर लोकसभा को विघटित कराने का महत्वपूर्ण अधिकार रखता है और राजा साधारणतया उसके इस परामर्श को अस्वीकार नहीं कर सकता।

परन्तु अपनी इस महत्वपूर्ण स्थिति के कारण प्रधानमन्त्री मनमानी नहीं कर सकता। उसे सदैव संसद् सदस्यों की नाड़ी पर हाथ रखे हुए यह ध्यान रखना पड़ता है कि उसके क्रिया कलापों के प्रति उनकी प्रतिक्रिया क्या है? अपने दलीय सदस्यों और जनमत की वह उपेक्षा नहीं कर सकता। लोकमत की अवहेलना से वह बचता है क्योंकि उसका और उसके दल का भावी निर्वाचन अनुकूल लोकमत पर ही निर्भर करता है।

प्रधानमन्त्री की स्थिति की वास्तविकता

ब्रिटिश शासन व्यवस्था में प्रधानमन्त्री की स्थिति एक अधिनायक के समान है, केवल अन्तर यही है कि एक अधिनायक अथवा तानाशाह मनमाने तरीके से अपनी

शक्तियों का प्रयोग करता है जबकि प्रधानमन्त्री स्थापित नियमों, परम्पराओं और अभिसमयों के अनुसार कतिपय प्रतिबन्धों के मातहत होकर देश का शासन करता है और इन प्रतिबन्धों की अवहेलना करने पर उसका अस्तित्व खतरे में पड़ जाता है। प्रधानमन्त्री एक सांविधानिक तानाशाह है जो अपने मन्त्रियों को उचित सम्मान देता है और उनके मत का उचित आदर करता है। यद्यपि खींचातानी का अवसर उपस्थित होने पर वह अपनी ही चलाता है और जान के ज्यादा बढ़ने पर उसे नहीं बल्कि मन्त्री को पदत्याग करना होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मन्त्रिमण्डल के अन्य मन्त्रियों की तुलना में उसकी स्थिति अधिक महत्त्व की है और वही मन्त्रिमण्डल के निर्माण, सचालन व पतन के लिए उत्तरदायी होता है, परन्तु फिर भी विविध मन्त्रियों के सम्बन्ध में उसकी स्थिति इतनी शक्तिशाली नहीं है जितनी संयुक्त राज्य अमरिका के राष्ट्रपति की है। लास्की के शब्दों में "अमेरिका में मन्त्रिमण्डल के सदस्य राष्ट्रपति के 'दास' हैं जबकि ब्रिटेन में वे प्रधानमन्त्री के सहयोगी हैं।" प्रधानमन्त्री को समस्त मन्त्रिमण्डल के विचारानुसार चलना पड़ता है। मन्त्रियों के अपने कुछ उत्तरदायित्व होते हैं जिन्हें वे प्रधानमन्त्री व मन्त्रिमण्डल के अन्य सदस्यों के साथ संयुक्त रूप से निभाते हैं।

प्रधानमन्त्री और उसके सहयोगियों में क्या सम्बन्ध है, इसे विद्वानों ने विभिन्न रूपों में व्यक्त किया है। लार्ड मार्ले (Morley) ने प्रधानमन्त्री को "समकक्षों में प्रथम" बतलाते हुए कहा है कि— "मन्त्रिमण्डल में यद्यपि सभी मन्त्रियों का स्थान एक सा है, उनकी आवाज एक-सी है और कभी-कभी जब मतभेद के समय मत लिए जाते हैं तो उनके मत भी समानता पर आधारित 'एक व्यक्ति एक मत' के सिद्धान्त के अनुसार गिने जाते हैं, फिर भी मन्त्रिमण्डल का अध्यक्ष समान पदवालों में प्रथम है और जब तक वह पद पर रहता है उसकी स्थिति असाधारण व अद्वितीय अधिकार की रहती है।" लेकिन ब्रिटिश उग्रवादी लेखक रम्जे म्योर (Ramsay Muir) ने इस विचार को निरस्त करते हुए लिखा है कि "प्रधानमन्त्री को समकक्षों में प्रथम कहना सर्वथा भ्रममूलक है क्योंकि वह अपने सहयोगियों को नियुक्त तथा पदच्युत कर सकता है। विधि में नहीं, लेकिन व्यवहार में वह राज्य का कार्यकारी प्रधान है, जिसकी शक्तियाँ इतनी व्यापक हैं जितनी कि विश्व में किसी भी सांविधानिक शासक यहाँ तक की अमरिकन राष्ट्रपति, को भी प्राप्त नहीं हैं।" हरबर्ट मारीसन (Herbert Morison) के मतानुसार भी प्रधानमन्त्री का "समकक्षों में प्रथम" कहा जाना उसकी स्थिति को कम आँकना है। जेनिंग्स के अनुसार "प्रधानमन्त्री केवल समकक्षों में प्रथम ही नहीं है और न केवल सितारों में चाँद चन्द्रमा ही बल्कि वह तो सूर्य के समान है जिसके चारों ओर अन्य नक्षत्र घूमते रहते हैं। दरअसल में मन्त्रिमण्डल में प्रधानमन्त्री की शक्ति अनुमानित से कहीं ज्यादा है।"

प्रधानमन्त्री की स्थिति का महत्त्व केवल अन्य मन्त्रियों के सम्बन्ध में ही नहीं

है, अपितु उसकी स्थिति शासन सूत्र के सभी पहलुओ की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। मन्त्रिमण्डल के अध्यक्ष के रूप मे, शासन-प्रमुख के रूप मे, राजा के परामर्शदाता के रूप मे, दल के नेता और लोकसभा के नेता के रूप मे प्रधानमन्त्री विशाल शक्तियो का स्वामी है। इसलिए जेनिंग्स (Jennings) ने कहा है कि "प्रधानमन्त्री को सम्पूर्ण सविधान की आधार-शिला कहना ही उपयुक्त है। फाइनर (Finer) ने लिखा है कि "प्रधानमन्त्री की श्रेष्ठता इस बात से प्रकट होती है कि वह मन्त्रिमण्डल का अध्यक्ष, ससद का नेता, सामान्य नीति से सम्बन्धित विषयो पर सम्राट से विचार-विमर्श की प्रमुख कडी, देश मे दल का सर्वमान्य नेता तथा सर्वोच्च राजनीतिक शक्ति का मूर्तिमान रूप है।' किन्तु फिर भी प्रधानमन्त्री की स्थिति बहुत कुछ उसके व्यक्तित्व पर निर्भर है। इसको फाइनर ने इन शब्दो मे स्पष्ट किया है—"वह जीन पर दृढता से अवस्थित है, लेकिन वह मजा हुआ सवार है या लुढकने वाला, भाडे के टट्टू के लायक है या फौजो और घुडदौड के घोडे के लायक, यह उस पर निर्भर करता है। पुनश्च, लास्की के इस विचार मे पर्याप्त बल है कि "प्रधानमन्त्री की स्थिति दलीय प्रणाली से बधी हुई है।" राजनीतिक दल का नेता बने रहने और लोकसभा के बहुमत का समर्थन प्राप्त किए रहने तक ही वह राष्ट्रीय महत्व का व्यक्ति समझा जाता है किन्तु ज्योही वह दलीय समर्थन से वचित हो जाता है और लोकसभा के बहुमत का विश्वास खो बैठता है, उसका सम्पूर्ण महत्व लुप्तप्राय हो जाता है। वस्तुत अपना महत्व बनाये रखने के लिए प्रधानमन्त्री को व्यक्तित्ववान होना पडता है। अपने व्यक्तित्व द्वारा अर्जित किए गए महत्व के अनुरूप ही वह अपने पद का महत्व दे पाता है।

6

लोकसेवा

(THE CIVIL SERVICE)

"ग्रेट-ब्रिटेन में शासन मन्त्रिमण्डल द्वारा नहीं और न ही व्यक्तिगत मन्त्रियों द्वारा बल्कि लोकसेवकों द्वारा किया जाता है।"

—बेर

किसी भी देश की शासन व्यवस्था की सफलता अथवा विफलता उसके लोकसेवकों के ऊपर निर्भर करती है। देश का वास्तविक प्रशासन इन लोक-सेवकों के हाथ में होता है। मन्त्रीगण तो केवल नीति निर्धारण मात्र ही करते हैं। उस नीति का क्रियान्वयन इन लोकसेवकों द्वारा ही किया जाता है। यदि ये कर्मचारी योग्य तथा कुशल होते हैं तो प्रशासन अच्छा होता है अन्यथा नहीं।

ब्रिटिश लोकसेवा का सामान्य परिचय

लोकसेवा का सदस्य अथवा लोकसेवक (Civil Servant) इंगलैंड में राजमुकुट (Crown) का कर्मचारी होता है जिसका पद न तो न्यायिक ही होता है और न राजनीतिक ही। उसको राजकोष से वेतन प्राप्त होता है। राज्य के प्रशासनिक विभागों के सभी स्थाई कर्मचारी लोक सेवा (Civil Service) के सदस्य होते हैं। लोक सेवा के सदस्यों को संसद का सदस्य होना आवश्यक नहीं है। सन 1937 में यह बात भी निश्चित हो गई है कि उनके राजनीतिक विचार उनके व्यक्तिगत मामले हैं बशर्ते कि उनके विचार उनके कार्यों पर विपरीत प्रभाव डालने वाले अथवा राज्य के लिए संकट पैदा करने वाले न हों। लोकसेवा के सदस्य अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए किसी भी सरकारी रहस्य अथवा सूचना का दुरुपयोग नहीं कर सकते। यद्यपि लोक सेवक वैधानिक रूप से राजमुकुट के सेवक होते हैं, परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से उन्हें अपने विभागीय मंत्री के अधीन रहना

पड़ता है। वे मन्त्रियों को नीति निर्माण में परामर्श देते हैं और उनके निर्णयों को कार्यान्वित करने में सहायक होते हैं।

समय-समय पर मन्त्रीगण बदल जाते हैं, पर लोक सेवक स्थाई रूप से बने रहते हैं। ब्रिटेन में सरकार के परिवर्तन के कारण लोक-सेवा के लोगों में परिवर्तन नहीं होता। वे स्थाई रूप से सभी सरकारों के अधीन कार्य करते रहते हैं।

ब्रिटेन में लोक सेवा का विकास

लोक सेवा अपने आधुनिक रूप में लगभग 100 वर्ष पुरानी है। ग्राहम वालास (Graham Wallas) ने इसे "इंगलैंड की 19वीं शताब्दी की महान् राजनीतिक खोज" कहा है। प्रारम्भ में शासन का कार्य राजघराने के लोग चलाते थे, किन्तु मन्त्रिमण्डलात्मक शासन के विकास के साथ साथ प्रशासन सचालन के लिए मन्त्रियों द्वारा अधिकारियों की नियुक्ति होने लगी, जो प्राय जब तक स्वास्थ्य उत्तम रहता था, पदासीन रहते थे। किन्तु 18वीं शताब्दी के अन्त में और 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में बर्क, बेंथम, कार्लाइल आदि ने इस प्रकार की नियुक्ति प्रथा पर आक्षेप किये। आलोचनाओं के फलस्वरूप लोक सेवकों की नियुक्ति-प्रथा में शनैः शनैः सुधार होने लगा। 1870 ई० में लोक सेवा में प्रवेश पाने के लिए आवश्यक प्रतियोगिता परीक्षणों का श्रीगणेश हो गया। बाद में ग्लैडस्टन के अनुरोध पर, लोक-सेवा आयोग (Civil Service Commission) की स्थापना की गई। अब परीक्षाओं के सचालन और लोक सेवा के सदस्यों की भर्ती की व्यवस्था यही आयोग करने लगा। इसके बाद और भी विभिन्न सुधार लाये गये। सेवाओं को विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया, स्त्रियाँ भी प्रवेश पाने लगीं तथा वेतन, तरक्की आदि सब कुछ निश्चित हो गया। पिछले 50 वर्षों में लोक-सेवा की भर्ती की प्रतियोगिता का शैक्षणिक स्तर भी काफी उन्नत बना दिया गया है। अनेक आयोगों और जाँच समितियों की नियुक्ति की गई है तथा उनके प्रतिवेदनों के आधार पर लोक सेवा की कुशलता बढ़ाने का प्रयत्न किया गया है। अब लोक-सेवक किसी विभाग विशेष का कर्मचारी नहीं होता, बल्कि वह अब सम्पूर्ण लोक सेवा का एक सदस्य होता है और उसे योग्यतानुसार आगे पद व वेतन आदि की सुरक्षा प्राप्त होती है। आज सम्पूर्ण ब्रिटिश लोक सेवा में एकरूपता आ गई है। ब्रिटिश लोक-सेवकों की संख्या 10 लाख से भी अधिक है।

लोक सेवा का नियन्त्रण, सगठन और उसके वर्ग

ब्रिटिश लोक-सेवा पर वित्त मन्त्रालय का साधारणत नियन्त्रण रहता है। वित्त मन्त्रालय ही लोक सेवा की भर्ती के नियमों के निर्धारण, सदस्यों के वेतन आदि के लिए उत्तरदायी होता है। कर्मचारियों की संख्या निर्धारित करना, उच्च पदों के स्थानों का बढ़ाना, कम करना या प्रशिक्षित करना आदि की व्यवस्था करना भी इस मन्त्रालय का ही काम है। लोक सेवा के सगठन में प्रशासनिक वर्ग, कार्यकारी

वर्ग, विशिष्ट वर्ग, लिपिक वर्ग सहायक लिपिक वर्ग, संदेश वाहक एवं निम्न वर्ग सम्मिलित है। प्रशासनिक वर्ग लोक-सेवा का आधार है, जिसमें स्थायी सचिव से लेकर सहायक प्रधान तक के अधिकारी आते हैं। यह वर्ग नीति-निर्माण के कार्यों में मन्त्रियों को परामर्श देता है। कार्यपालक वर्ग का दायित्व निर्धारित नीति के अनुसार दैनिक शासन-कार्य का संचालन करना होता है। विशिष्ट वर्ग में अकाउंटेंट, वकील, सर्वेयर, वैज्ञानिक आदि होते हैं जो विशिष्ट सेवाएं निभाते हैं। लिपिक और सहायक लिपिक वर्ग शासन संचालन में लिखने पढ़ने, टाइप करने आदि के कामों में प्रयुक्त होता है। सन्देश वाहक और निम्न वर्ग में चपरासी, सफाई करने वाले कर्मचारी आदि सम्मिलित हैं। इनके अलावा विभागीय वर्ग (Departmental Classes) भी होते हैं जिनके लिए भरती पृथक पृथक विभागों की आवश्यकताओं के अनुसार की जाती है।

ब्रिटेन में सितम्बर 1966 तक लोक-सेवा वर्ग के कर्मचारियों की संख्या कुल मिलाकर लगभग 8 लाख 22 हजार थी।

उत्तरीय आयरलैंड की लोक सेवा

उत्तरी आयरलैंड की सरकार लोक-सेवा का एक पृथक संगठन रखे हुए है। इसके द्वारा उन कार्यों का सम्पादन किया जाता है जिन्हें सन् 1920 के आयरलैंड के सरकारी अधिनियम (Govt of Ireland Act, 1920) के अन्तर्गत उत्तरी आयरलैंड की सरकार के सुपुर्द कर दिया गया है। उत्तरी आयरलैंड की लोक-सेवा का संगठन प्रायः ग्रेट-ब्रिटेन के समान ही है तथापि उसके लिए भर्ती आदि के लिए एक पृथक लोक सेवा आयोग स्थापित है।

लोक सेवा कर्मचारियों की भर्ती, पदोन्नति, प्रशिक्षण, कार्यकाल आदि

आरम्भ में ब्रिटिश लोक-कर्मचारियों की नियुक्ति शासक वर्ग द्वारा मनमाने रूप द्वारा होती थी, किन्तु धीरे धीरे प्रतियोगिता की प्रथा चल पड़ी। इसका श्रीगणेश तो 1870 में हो गया था, किन्तु प्रतियोगिता परीक्षाओं की शुरुआत 1910 में एक सपरिषद् आदेश (Order in Council) द्वारा हुई। आज भी लोक-कर्मचारियों की भर्ती का आधार यही है। भर्ती का कार्य एक लोक सेवा आयोग द्वारा होता है जो प्रतियोगिता परीक्षाओं का आयोजन करता है। इस आयोग का संस्थापन सन् 1855 में हुआ था।

लोक-सेवा कर्मचारियों के प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था है। प्रशिक्षण का कार्य मुख्यतः विभागों द्वारा संचालित होता है। कर्मचारियों को साधारण और तकनीकी दोनों प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाता है। भर्ती होने वाले कर्मचारियों को तो विधिवत् प्रशिक्षण दिया जाता है, नौकरी करते हुए कर्मचारियों को भी माध्यमिक शिक्षण (Refresher Courses) दिए जाते हैं। प्रशिक्षण कार्य बहुत ही ... तरीकों से सम्पन्न कराया जाता है।

पदाधिकारियो का नौकरी के आरम्भ मे एक विभाग से दूसरे विभाग मे और एक शाखा स दूसरी शाखा मे स्थानान्तरण होता रहता है ताकि वे अधिकाधिक स्थानो व प्रशासन का अनुभव प्राप्त कर सकें। वैसे भी पदाधिकारियो का प्राय नियमित रूप से स्थानान्तरण होता रहता है। अधिकारियो का देश-विदेश की यात्रा करने के अवसर भी दिए जाते है। इससे उनके प्रशासनिक ज्ञान मे वृद्धि होती है।

लोक सेवा कर्मचारियो की पदोन्नति की समुचित व्यवस्था है। पदोन्नति कार्य की वार्षिक रिपोर्ट के आधार पर भी की जाती है और खुली प्रतियोगितात्मक परीक्षाओ द्वारा भी। बिना परीक्षा लिए पदोन्नति देते समय कर्मचारी की वरीयता योग्यता आदि का ध्यान रखा जाता है। प्राय प्रत्येक विभाग मे पद-वृद्धि आयोग पाए जाते है। यदि कोई व्यक्ति आयोग की सिफारिश से असन्तुष्ट हो तो उसे अपील करने का अधिकार होता है।

लोक सेवा कर्मचारियो का कार्यकाल सम्राट की इच्छा-पर्यन्त होता है। इसका व्यावहारिक अर्थ है कि वे पद-निवृत्ति की आयु तक बने रहते है। यह आयु साठ वर्ष है, कारण विशेष पर पहले भी पदनिवृत्त हो सकते हैं। सरकार के परिवर्तन का कार्यकाल पर कोई असर नही पडता। उनसे यही आशा की जाती है कि वे प्रत्येक दल के मन्त्रियो की निष्पक्षतापूर्वक सेवा करेंगे। पहले अक्टूबर, 1936 तक विवाहित महिला कर्मचारियो के पद की सुरक्षा नही थी, किन्तु वर्ष (1946 मे ही) विवाह के प्रतिबन्ध को हटा लिया गया है।

लोक कर्मचारियो की नौकरी की शर्तों का निर्णय राष्ट्रीय व्हिटले कौंसिल (National Whitley Council) द्वारा किया जाता है जिसमे सरकार और कर्मचारी दोनो के ही प्रतिनिधि होते है। सभी कर्मचारियो को सामान्यत इतना वेतन मिल जाता है, जितना वैसे ही काम के लिए उन्हे अन्यत्र भी मिल सकता हो। कर्मचारियो के कार्य के घण्टे भी निश्चित है। पद निवृत्त होने के बाद पेंशन दिए जाने की व्यवस्था भी है।

मन्त्रिगण और लोक-सेवक
(Ministers and the Civil Servants)

ब्रिटिश शासन-व्यवस्था अविशेषज्ञो (Amateurs) और विशेषज्ञो (Experts) के समन्वय पर आधारित है, अर्थात ब्रिटिश शासन-सूत्र का सचालन करने वाले लोग दो प्रकार के है—मन्त्रिगण और लोक सेवक। मन्त्रियो मे प्रशासनिक अनभिज्ञता होती है, जबकि लोक सेवको मे प्रशासनिक ज्ञान की विशिष्टता होती है। मन्त्रिगण प्रशासनिक दृष्टि से अनभिज्ञ अथवा अविशेषज्ञ किस प्रकार है और लोक-सेवक विशेषज्ञ कैसे हैं ? यह निम्नलिखित विवरण से समझ मे आ सकेगा।

मन्त्रियों की प्रशासनिक अनभिज्ञता

मन्त्री अपने अपने विभाग के अध्यक्ष होते हैं, किन्तु विभाग के वास्तविक

अनुभवों और प्रशासनिक बारीकियों का उन्हें प्राय ज्ञान नहीं होता। उनका प्रशासनिक ज्ञान स्थूल होता है न कि विशिष्ट। ऐसा होना स्वाभाविक भी है। प्रथम तो मन्त्रीपद पर उनकी नियुक्ति राजनीतिक आधार पर होती है, किसी विशिष्ट प्रतियोगिता परीक्षा के आधार पर नहीं। दूसरे, उनका कार्यकाल अनिश्चित होता है, वे किसी विभाग के स्थायी अध्यक्ष नहीं होते। तीसरे, राजनीतिक प्रपचो और गतिविधियो म वे इतने फंसे रहते हैं कि प्रशासन के वास्तविक कार्य का सचालित करने का प्राय उन्हें बहुत कम अनुभव हो पाता है। इन्हीं सब कारणों से मन्त्रियों को नौसिखिए या अविशेषज्ञ (Amateurs) कहा जाता है, अर्थात वे ऐसे व्यक्ति होते हैं जो पेशेवर प्रशासक नहीं होते, जिन्हें प्रशासन सम्बन्धी कोई प्रशिक्षण नहीं दिया गया होता और जिन्हें प्राय प्रशासन का पर्याप्त अनुभव नहीं होता। वे केवल राजनीतिक प्रशासक होते हैं।

इस बात को अब एक लोकतान्त्रिक सिद्धात माना जाने लगा है कि मन्त्रिगण प्रशासन के विशेषज्ञ नहीं होते।

लोक सेवकों की प्रशासनिक विशिष्टता

शासन-सूत्र चलाने वाला दूसरा वर्ग लोक सेवकों (Civil Servants) का है जो प्रशासनिक मामलों के विशेषज्ञ (Experts) होते हैं। शासन का वास्तविक सचालन ये लोक सेवक ही करते हैं। ये प्रशासन के मामलों म दक्ष होते हैं, मन्त्रियो को नीति-निर्धारण मे सहायता देते है और विधियो को क्रियान्वित करते हैं, परन्तु ये विशेषज्ञ-कर्मचारी अविशेषज्ञों या नौसिखियो (Amateurs) के अधीन रहते हैं, जो शासन के विभागो के अध्यक्ष होते है।

लोक-सेवको को उनका प्रशासन सम्बन्धी प्रशिक्षण और अनुभव शासन कार्य का विशेषज्ञ बना देता है। उनकी नियुक्ति योग्यता के आधार पर की जाती है, न कि राजनीतिक आधार पर। एक बार योग्यता सम्बन्धी परीक्षा मे उत्तीर्ण हो जाने के बाद यह निश्चय हो जाता है कि उन्हें स्थायी रूप से प्रशासन के ही किसी पद पर कार्य करना है। अत प्रशासनिक काय म उनकी अधिकाधिक रुचि होती जाती है। वे समझते हैं कि जितना अधिक वे प्रशासनिक कार्यों मे निपुण होगे उतने ही अधिक अवसर उन्हें पदोन्नति के प्राप्त होगे। एक ही प्रकार का काम अधिक दिनो तक करते रहने के कारण और अधिकाधिक प्रशासनिक अनुभव प्राप्त करने के, उपयुक्त अवसरो के मिलते रहने के कारण लोक-सेवक विभागीय दाव पेचो को भली भाति समझते हैं। राजनीतिक प्रपचो से दूर रहते हुए अपने पद के स्थायित्व के कारण उन्हें अपने विभाग की भीतरी बातो और उनके परिणामो का पूरा ज्ञान होता है। वे मन्त्रियो को उचित परामर्श देते है और उनके द्वारा निर्धारित नीति को कार्यरूप मे परिणित कराते हैं। मन्त्रियो को प्रशासन चलाने के लिए और प्रशासन की बारीकियों के लिए लोक सेवको पर, जो प्रशासनिक विशेषज्ञ होते हैं, प्राय पूर्णत निर्भर रहना पडता है।

अविशेषज्ञ और विशेषज्ञ के समन्वय से लाभ

अविशेषज्ञों और विशेषज्ञों—इन दो तत्वों के ब्रिटिश प्रशासन में योगदान तथा समन्वय के विषय में मुनरो (Munro) ने लिखा है कि "प्रथम तत्व द्वारा प्रशासन में जनतन्त्र की और द्वितीय तत्व द्वारा सत्यतन्त्र की स्थापना होती है। दोनों ही अत्यन्त आवश्यक है। प्रथम तत्व से शासन जनप्रिय और द्वितीय से कुशल बनता है। सुशासन की सबसे बड़ी कसौटी यह है कि जनतन्त्र और कार्य-कुशलता में सफल सयोग हो।" मन्त्रिगण राजनीतिक नेता होते हैं जिनका कार्य है—राष्ट्र की नाड़ी की गति पहचानना। जनता की इच्छा के अनुसार वे नीति-निर्धारित करते हैं और उसे विधि का रूप देते हैं, परन्तु विधियों (Laws) को कायरूप देने के लिए विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है, और प्रशासकवर्ग इसी कमी को पूरा करता है। पुनश्च, लोक सेवक ही मन्त्रियों को उचित मार्ग दिखाते हैं। विधान में उनके लिए नीति निर्माण में कोई स्थान नहीं, पर उन्हीं के परामर्श पर प्रायः शासन का कार्य होता है।

क्या मन्त्रियों का प्रशासनिक विशेषज्ञ न होना उपयोगी है ?

प्रश्न उठता है कि क्या मन्त्रियों को विशेषज्ञ होना चाहिए ? समर्थकों का कहना है कि मन्त्रियों के प्रशासनिक विशेषज्ञ न होने से नौकरशाही प्रोत्साहित होती है। अतः व्यावसायिक जानकारों और अनुभवी व्यक्तियों को ही मंत्री बनाया जाना चाहिए, जैसा कि फ्रांस और अमेरिका में प्रायः होता है।

परन्तु इस तर्क में विशेष बल नहीं है। हम यह नहीं समझ लेना चाहिए कि विशेषज्ञ न होने से मन्त्रियों का प्रशासन की दृष्टि से कोई महत्व नहीं होता। विशेषज्ञ न होते हुए भी प्रशासन के लिए उनकी विशेष उपयोगिता होती है और यदि सचमुच देखा जाय तो वे उपयोगी इसलिए और भी अधिक होते हैं कि उन्हें प्रशासनिक ज्ञान की विशिष्टता नहीं होती। निम्नलिखित विवरण से यह स्पष्ट हो जायगा—

(1) मन्त्रियों का पहला प्रमुख कार्य यह है कि वे प्रशासन की नीतियों का निर्धारण इस प्रकार करें जिससे अधिकाधिक नागरिक हित हो सके और लोकमत को समुचित आदर प्राप्त हो सके। अतः वे नीति-निर्माण में एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाते हैं। उनका दृष्टिकोण समन्वयकारी और प्रगतिशील विचारों वाला होता है। इसके विपरीत विशेषज्ञों का दृष्टिकोण संकुचित होता है। वे छोटे मोटे पारिभाषिक बातों को विशेष महत्व देते हैं और किसी बात पर प्रायः एकमत नहीं होते। अतः यह आवश्यक है कि मन्त्री लोक-सेवकों की तरह प्रशासन विशेषज्ञ न हो, क्योंकि यदि मन्त्री भी लोक-सेवा के सदस्यों की तरह ही प्रशासन विशेषज्ञ होने लगें तो उन्हीं के समान वे भी कार्यालय की फाइलों के पीछे पड़कर रह जावेंगे। तब वे प्रशासन का संचालन, निर्देशन और नियन्त्रण इस प्रकार नहीं कर सकेंगे, जिससे देश की वास्तविक सेवा हो सके। इसके अतिरिक्त वे जनता

के साथ अपना निकट सम्पर्क भी स्थापित नही कर सकेंगे और जनता के कष्टों को अपना कष्ट नही बना सकेंगे। रैमजे मैक्डानल्ड (Ramsay Mac Donald) ने ठीक ही कहा है कि "मन्त्रिमंडल जनता और विशेषज्ञ तथा सिद्धान्त व व्यवहार को जोड़ने वाला पुल है।"

(2) मन्त्रिमंडलीय शासन का सार है, मन्त्रियो का उत्तरदायित्व। वे व्यक्तिगत विभागीय हितो के साथ साथ सम्पूर्ण प्रशासन के हितों को भी ध्यान में रखते हैं। एक मन्त्री सिर्फ अपने महकमे से ही सम्बन्ध नहीं रखता, उसे दूसरे महकमो की जरूरतो का भी ध्यान रखना पड़ता है। वह इस तथ्य को कभी नहीं भूल सकता कि मन्त्रियो के सामूहिक उत्तरदायित्व के कारण किसी दूसरे मन्त्री की हार का नतीजा सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल का पतन हो सकता है। इस अनुभूति के कारण वह अपने विभागो के कार्यों का अन्य विभागों के कार्यों के साथ इस प्रकार सामंजस्य करता है कि सम्पूर्ण सरकार एक सामूहिक इकाई के रूप में कार्य कर पाती है। सम्पूर्ण प्रशासन के सर्वोपरि हितों को अविशेषज्ञ मन्त्री ही सोच सकता है न कि विशेषज्ञ लोकसेवक। विशेषज्ञ तो विभागीय प्रशासनिक पचड़ो में फंसा रहता है। उसका विभागवाद उसे विशाल दृष्टिकोण नही अपनाने देता। इसके अतिरिक्त *विशेषज्ञ लोक-सेवक ज्ञान की एक शाखा का विशेषज्ञ होता है* और यह पर्याप्त सम्भव है कि दूसरे विषयो में उसका ज्ञान शून्य हो।

(3) मन्त्री लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होते हैं और उनके लिये आवश्यक है कि वे अपने हृदय में लोकसभा और उसके सदस्यो के प्रति आदर-भाव रखें। मन्त्री यदि विशेषज्ञ होंगे तो हो सकता है कि स्वयं को इतना ज्ञानवान समझने लगें कि साधारण विधायकों के प्रति स्वयं को उत्तरदायी मानने में अपमानित होना अनुभव करने लगें। इस प्रकार की भावना का प्रचार होने से मन्त्री स्पष्टत लोकसभा के प्रति अपने वास्तविक उत्तरदायित्व का निर्वाह नहीं करेंगे। उनमें उत्तरदायित्व के स्थान पर निरंकुशता के विचारो को प्रोत्साहन मिलेगा। यह बात *संसदीय शासन-व्यवस्था के लिए एक गम्भीर आघात होगी।*

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि मन्त्रियो के विशेषज्ञ न होने से प्रशासन में अथवा राजनीतिक क्षेत्र में उनकी उपयोगिता और महत्व को कोई आघात नहीं पहुंचता, प्रत्युत विशिष्ट दृष्टियों से यह लाभदायक ही है।

मन्त्रियो और लोकसेवको का पारस्परिक संबंध

(Relationship between the Ministers and the Civil Servants)

मन्त्रियो और लोकसेवकों का पारस्परिक सम्बन्ध एक अत्यन्त विवादग्रस्त विषय है। कुछ विद्वानों की मान्यता है कि लोकसेवकों का ब्रिटिश प्रशासन में इतना प्रभाव है कि मन्त्रीगण उनके संकेतो पर चलते हैं, वे उनके हाथो का खिलौना बनकर

कार्य करते हैं। उनका आरोप है कि ब्रिटेन मे वस्तुत नौकरशाही का आधिपत्य स्थापित हो गया है। इसके विपरीत–विद्वानो के दूसरे वर्ग का कहना है कि ब्रिटेन मे नौकरशाही के आधिपत्य की बात करना भ्रामक है। यह सही है कि ब्रिटिश प्रशासन के मूल मे लोक–सेवको का काफी प्रभाव है, परन्तु फिर भी वास्तविक निर्णय शक्ति मन्त्रियो मे ही निहित है। मन्त्रियो मे, अपने विभाग के लिए नए होते हुए भी, नीति-निर्धारण और निर्णय करने की क्षमता होती है और वे ऐसा करते भी है। लास्की (Laski) का कहना है कि दोनो का सम्बन्ध वस्तुत उनके व्यक्तित्व पर आधारित है। यदि मन्त्री का व्यक्तित्व शक्तिशाली है तो वह लोकसेवको पर हावी रहता है, और यदि मन्त्री एक कमजोर और ढीला-ढाला व्यक्ति है तो उसे लोक सेवको के इशारो पर चलना पडता है।

वैधानिक स्थिति यही है कि प्रशासन का अन्तिम उत्तरदायित्व मन्त्रियो पर ही है अत लोकसेवको को उन्ही की इच्छा के अनुरूप चलना पडता है। मन्त्री ही मन्त्रिमडल द्वारा किए गए निर्णयो की सीमा के अन्तर्गत अपने अपने विभाग की नीति निर्धारित करते हैं और लोकसेवको के माध्यम से उनका क्रियान्वयन करते हैं। स्पष्ट है कि ऐसी स्थिति मे लोकसेवको का मन्त्रियो पर हावी रहने का तब तक कोई प्रश्न नही उठता जब तक कि मन्त्री स्वय स्वेच्छा से अथवा अनजाने मे उन्हे ऐसा अवसर न दें।

अब हम विस्तार से यह देखने का प्रयास करेंगे कि नौकरशाही की शक्ति क्या है, अर्थात् मन्त्रियो पर लोकसेवको का क्या प्रभाव है और क्या मन्त्री लोक-सेवको के हाथो की कठपुतली होते हैं?

मन्त्रियों पर लोक सेवकों का प्रभाव

यह प्राय सभी मानते हैं कि प्रशासन के क्षेत्र मे नीति निर्धारण और योजनाओ के प्रारूप बनाने से लेकर उनकी अन्तिम सफलता तक लोकसेवकों के सहयोग का निश्चित मूल्य होता है। शासन-सूत्र मे उनके इस प्रभाव के कुछ प्रमुख कारण ये है—

प्रथम, मन्त्रीगण प्रशासन के विशेषज्ञ नही होते जबकि लोकसेवक उसके विशेषज्ञ होते हैं। अत मन्त्रियो को उनसे विभिन्न मामलो मे परामर्श लेना पडता है। लोकसेवक प्रशासन का तकनीकी पक्ष और उसकी बारीकियां मन्त्रियो के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं ताकि वे (मन्त्री) अपने निर्णय करने मे यथासम्भव कोई भूल न कर पाएँ।

दूसरे, मन्त्रियो की यह विशेष प्रवृत्ति होती है कि वे प्रशासन की किसी बात को प्रयोग पर नही छोडते। ऐसा करने से उनकी त्रुटियां प्रकाश मे आती हैं, जिनका उनके स्वय के भविष्य पर, उस राजनीतिक दल पर, जिनके वे सदस्य हैं विपरीत प्रभाव पडता है। इस स्थिति से बचे रहने के लिए मन्त्रिगण प्राय प्रत्यक्ष प्रशासन सम्बन्धी कार्य लोक–सेवा के विशेषज्ञो से परामर्श लेकर करना ही अधिक अच्छा समझते हैं। रैम्जे म्यार (Ramsay Muir) का मत है कि नीति निर्माण,

निर्णय और उनके क्रिया चयन में मन्त्रियों पर लोकसेवकों का प्रभाव इतना अधिक रहता है कि मन्त्रियों को लोकसेवकों के हाथ की कठपुतली मात्र समझा जाना चाहिए। यह मत यद्यपि अतिशयोक्तिपूर्ण है, किन्तु इससे प्रशासन के क्षेत्र में लोकसेवकों के प्रभाव की ओर स्पष्ट संकेत मिलता है। रैम्जे म्योर की तुलना में लास्की (Laski) का यह विचार अधिक सन्तुलित है कि मन्त्रियों और लोकसेवकों का सम्बन्ध वस्तुतः उनके व्यक्तित्व पर आधारित है।

तीसरे, मन्त्रियों के समक्ष प्रस्तुत होने वाली अनेक प्रशासनिक समस्यायें सर्वथा नवीन न होकर पहले से चली हुई होती हैं। अतः उनके सम्बन्ध में आगे की योजना बनाने के लिये यह जान लेना जरूरी होता है कि उन समस्याओं पर पहले क्या-क्या किया जा चुका है और उसका क्या परिणाम हुआ? यह आवश्यक जानकारी सही रूप में लोकसेवक ही मन्त्रियों के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। ऐसे मामलों में मन्त्रियों को प्राय लोकसेवकों के परामर्श का पूर्ण आदर करना पड़ता है।

क्या मन्त्री लोकसेवकों के हाथ की कठपुतली होते हैं?

अथवा

क्या नौकरशाही के आधिपत्य का आक्षेप सही है?

स्पष्ट है कि सैद्धान्तिक रूप से लोक-सेवक यद्यपि मन्त्रियों के अधीनस्थ हैं पर व्यावहारिक रूप में वे मन्त्रियों के क्रियाकलापों पर अपनी पर्याप्त छाप छोड़ते हैं, किन्तु यह मानना कि मन्त्री लोकसेवकों के हाथ की कठपुतली मात्र हैं अथवा ब्रिटेन में लोकसेवकों के शासन का आधिपत्य स्थापित हो गया है, निश्चित रूप से एक भ्रामक धारणा है।

मन्त्री-पद प्राप्त करने वाला व्यक्ति अवश्य ही प्रतिभा का धनी होता है और मन्त्री पद प्राप्त करने से पूर्व वह प्राय ऐसी अनेक परिस्थितियों से गुजरता है जिनसे उसे प्रशासनिक बातों का पर्याप्त ज्ञान हो जाता है। अनेक व्यक्ति मन्त्री बनने से पहले प्राय विभिन्न अस्थाई व स्थाई समितियों के सदस्य अथवा संसदीय सचिव आदि के रूप में अनुभव प्राप्त कर चुके होते हैं। इस प्रकार उन्हें विभिन्न प्रशासनिक समस्याओं का इतना ज्ञान प्राप्त हो जाता है कि वे प्रशासनिक विशेषज्ञों द्वारा सरलता से उल्लू नहीं बनाये जा सकते। लोक-सेवक भी उनकी इन बातों से भिज्ञ होते हैं अतः वे किसी समस्या के प्रशासन सम्बन्धी बारीकियों का उनके सामने रखते हुए यह अनुभव नहीं करते कि वे सामान्य ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों के सामने रख रहे हैं जो आँख मींच कर उनके (लोक सेवकों के) बताये हुए मार्ग पर चलने में ही अपना कल्याण समझते हों। लोक-सेवक मन्त्रियों की कुशाग्रबुद्धि के प्रति सदैव सीचते रहते हैं। वस्तुतः मन्त्रियों में इतना अनुभव होता है कि वे लोकसेवकों द्वारा दिये हुए परामर्श का औचित्य व अनौचित्य जान सकें और निर्णय कर सकें कि अमुक परिस्थिति में क्या करना अधिक हितकर होगा? ग्रीव्स के मतानुसार मन्त्री-पद के अधिकारी का 'पहला गुण सामान्य विवेक है, दूसरा

मनुष्य को परखने की कला है, और फिर उसके लिए यह जानना भी आवश्यक है कि आज्ञायें कब दी जाती हैं और कैसे यह देखा जाता है कि उनका पालन हो रहा है या नहीं।

मन्त्रियों का लोक सेवकों के हाथों की कठपुतली मानने की भ्रामक विचार-धारा का एक दूसरा आधार यह है कि प्रशासन को संगीत या नृत्य जैसी कला माना जाता है, जिनका ज्ञान प्राप्त करने के लिए कलाकार को विधिवत प्रशिक्षण प्राप्त करना आवश्यक है। किंतु प्रशासन एक ऐसी कला नहीं है जिसके लिये सतत् अभ्यास की आवश्यकता हो। कुशाग्रबुद्धि वाला और दैनिक सामान्य प्रशासन की समस्याओं को समझने की योग्यता रखने वाला कोई भी व्यक्ति मन्त्रि पद सम्भाल सकता है और सावधानी तथा विवेक से कार्य करते हुए प्रशासन चला सकता है। आखिर लोकसभा के सदस्यों को भी सम्पूर्ण प्रशासनिक समस्याओं का पूर्ण ज्ञान नहीं होता। उनके सामने भी प्रायः नवीनतम समस्याएं उपस्थित होती रहती हैं, जिनका समाधान वे अपने सामान्य विवेक से करते हैं। अतः स्पष्टतः अंतर केवल यही है कि लोकसेवक यदि किसी प्रशासनिक कार्य को सरलता या कुछ परिश्रम से सम्पन्न कर लेते हैं तो मन्त्रियों को उसी कार्य को करने में अपेक्षाकृत कुछ अधिक परिश्रम की आवश्यकता हो सकती है।

मन्त्रियों को लोक सेवा के सदस्यों के हाथों में खिलौना मानने वालों का तीसरा भ्रामक आधार यह है कि वे सम्भवतः सभी मन्त्रियों को प्रशासनिक नौसिखिये और सभी लोक सेवकों को प्रशासनिक विशेषज्ञ मान कर चलते हैं। किन्तु वास्तविकता यह है कि न तो सभी मन्त्री नौसिखिये होते हैं और न ही सभी लोक सेवक विशेषज्ञ। यदि कुछ नौसिखिये और दुर्बल मन शक्ति एवं व्यक्तित्व वाले मन्त्री लोकसेवकों के प्रभाव में रहते हैं तो कुछ मन्त्री इतने प्रतिभावान, दृढ़ मन शक्ति और व्यक्तित्व वाले होते हैं कि वे लोकसेवकों पर छाये रहते हैं।

लास्की ने मन्त्रियों और लोकसेवकों के सम्बन्ध को वस्तुतः उनके व्यक्तित्व पर आधारित माना है। इस दृष्टि से उसने मन्त्रियों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है—शक्तिशाली व्यक्तित्व वाले, लोकप्रिय व्यक्तित्व वाले एवं भाग्य के सहारे चलने वाले।

शक्तिशाली एवं प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्व वाले मन्त्रि लगभग सभी प्रशासनिक समस्याओं को अपने सामान्य विवेक से समझ लेते हैं और उनके समाधान के लिये लोकसेवकों पर आश्रित नहीं रहते। वे इस बात के प्रति पूर्ण सजग रहते हैं कि लोकसेवक स्वयं कोई गलती नहीं कर उठे और लोकसेवक स्वयं इस भय से आशंकित रहते हैं कि कहीं उनकी असावधानी न हो जाय।

कुछ मन्त्री अपनी लोकप्रियता के बल पर लोक सेवकों पर हावी रहते हैं। वह लोक सेवकों द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली प्रशासकीय बारीकियों की परवाह

नहीं होती। वे तो प्रत्येक निर्णय और नीति को जनता की पसन्दगी की तराजू मे तोलते हैं। वे लोकसेवको को बतला देते हैं कि जनता क्या पसन्द करेगी और क्या नही ? लोकसेवक उन्हे ऐसा कोई सुझाव या परामर्श देने का साहस नही करते जो जनता को नाराज करने वाला हो।

कुछ मन्त्री भाग्य के भरोसे चलने वाले होते हैं। उन्हें अपने प्रभाव व व्यक्तित्व की नही प्रत्युत अपने पद की चिन्ता बनी रहती है। वे प्राय स्व निर्णय की अपेक्षा लोकसेवक-विशेषज्ञो के परामर्श पर अधिक आश्रित रहते है। फिर भी उन्हे यह अवश्य ध्यान रखना पडता है कि उनका विभाग दलीय-कार्यक्रम और मन्त्रिमण्डल द्वारा किये गये निर्णय के अनुरूप चलता रहे क्योकि ऐसा न करने पर उनका मन्त्रीपद खतरे मे पड सकता है।

उक्त सम्पूर्ण विवेचना से स्पष्ट है कि मन्त्रियो के क्रिया-कलापो पर लोकसेवको का पर्याप्त प्रभाव पडता है और लोकसेवको का सहयोग प्रशासन यन्त्र को सुगमतापूर्वक चलाने के लिये वांछनीय भी है। परन्तु मन्त्रीगणो की स्थिति लोकसेवको के हाथो की कठपुतली जैसी नही है। नीति के निर्माता मन्त्री ही हैं और लोकसेवको को व्यवहार मे उनकी इच्छा का पालन करना पडता है। वस्तुत ब्रिटेन मे अविशेषज्ञो और विशेषज्ञो का विशेष प्रकार का मेल है। सरकारी कर्मचारी मन्त्रियो को आवश्यक जानकारी एव तथ्य प्रदान करते है और सरकारी नीतियो को क्रियान्वित करते है। वे शासन पर छा जाने का प्रयास नही करते, प्रत्युत शासन की प्रकृति व स्वरूप को बनाने मे सहायक होते हैं।

7

संसद्
(THE PARLIAMENT)

"चाहे किसी भी दृष्टिकोण से देखें ब्रिटिश संविधान मण्डल संसार मे सबसे अधिक मनोरंजक और महत्वपूर्ण है। इससे प्राचीन कोई विधान मण्डल नहीं है। इसका अधिकार-क्षेत्र सबसे अधिक विस्तृत है और इसकी शक्ति असीम है।"

—मैरियट

ब्रिटेन की संसद् संसार में प्राचीनतम मानी जाती है। इसे 'संसदों की जननी' कहा जाता है। लगभग प्रत्येक प्रजातन्त्रात्मक देश ने किसी न किसी रूप में ब्रिटेन की महान संसद का अनुकरण किया है। ब्रिटिश संसद् में दो सदन हैं— लार्ड-सभा (House of Lords) तथा लोकसभा (House of Commons)। इन दोनों में लार्ड-सभा अधिक प्राचीन है। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक लार्ड-सभा लोकसभा से अधिक महत्वपूर्ण सदन था किन्तु शनैः शनैः उसकी शक्तियां घटती गयीं और आज वह द्वितीय सदन नहीं बल्कि दूसरे दर्जे का सदन बन गया है। लोकसभा को निम्न-सदन (Lower House) और लार्ड-सभा को उच्च सदन (Upper House) भी कहा जाता है।

संसद् की सम्प्रभुता
(Sovereignty of Parliament)

ब्रिटेन में संसद ही सम्प्रभु है। उसकी सत्ता सर्वोपरि, असीमित और निरंकुश है। संसद ही सारे शासन यन्त्र को संचालित करती है। वह सम्राट को भी अपदस्थ कर सकती है। वह राजा को चुन सकती है और राजतन्त्र को समाप्त कर सकती है। एडवर्ड कोक, डी लोमे, डायसी आदि ने संसद की सम्प्रभुता के महान् गीत गाये हैं। वस्तुतः वैधानिक और कानूनी रूप में संसद किसी प्रकार भी

मर्यादित नहीं है। वह किसी भी विषय से सम्बन्धित कानून बना सकती है, वैधानिक रूप से देश में स्थापित सम्राट् तक को पलट सकती है और संविधान तथा स्वयं संसद में संशोधन कर सकती है अथवा उसे पूर्णतः नवीन रूप दे सकती है। सारांश वैधानिक रूप से संसद सब कुछ कर सकती है—चाहे उसका काम पागलपन का हो या बुद्धि का।

संसद् की सम्प्रभुता का मूल्यांकन

परन्तु संसद् की यह सम्प्रभुता केवल एक कानूनी कल्पना है। इसमें व्यावहारिक पहलू की उपेक्षा कर दी गयी है। व्यवहारतः संसद् सभी कुछ नहीं कर सकती, वह हर प्रकार के कानून का निर्माण या भंग नहीं कर सकती। वैधानिक रूप से पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न होते हुए भी व्यावहारिक दृष्टि से अनेक आचार विषयक और राजनीतिक-रुकावटें संसद की शक्ति में बाधा डालती हैं तथा उसकी सम्प्रभुता को सीमित बनाती हैं। संसदीय सम्प्रभुता व्यवहारतः निम्नलिखित बातों से प्रतिबन्धित होती है—

(1) जनता का विरोध—संसदीय सम्प्रभुता पर यह सबसे बड़ा व्यावहारिक प्रतिबन्ध है। विधि सम्बन्धी सारे प्रस्ताव इसी कसौटी पर कसे जाते हैं कि व्यावहारिक तथा नैतिक दृष्टि से उनका महत्त्व क्या है? यह ध्यान रखना पड़ता है कि विधि कहीं प्राकृतिक नियमों, जनता की इच्छा और परम्परा के विरुद्ध न हो। संसद सदैव इस बात का ध्यान रखती है कि वह अपने-आपको व्यावहारिक मर्यादा में रखे।

(2) मन्त्रिमण्डल की शक्ति—समय की कमी और कार्य की अधिकता के कारण संसद् अपनी अपार शक्तियों का पूर्ण उपभोग नहीं कर पाती। मन्त्रिमण्डल उसका नेतृत्व करता है। विधि निर्माण, वित्त नियन्त्रण तथा प्रशासकीय मामलों में मन्त्रिमण्डल का ही बोलबाला रहता है। जब तक मन्त्रिमण्डल का सदन में बहुमत रहता है तब तक वह संसद् का सेवक नहीं वरन् स्वामी बना रहता है।

(3) प्रदत्त विधान—कार्यभार की अधिकता और समयाभाव के कारण संसद् विधि निर्माण सम्बन्धी कुछ कार्य अन्य संस्थाओं को सौंप कर अपना बोझ हल्का कर लेती है। कहीं कहीं राजा अपने ऐकान्तिक अधिकार के आधार पर आज्ञायें निकालता है, जिन्हें सपरिषद् आदेश (Orders-in-Council) कहते हैं। संसद ऐसे नियम भी पारित कर देती है जिनके द्वारा वह मन्त्री, विभाग या किसी संस्था को अधिकार देती है कि वे आज्ञायें निकालें। संसद उन सब पर न तो पूर्ण अंकुश ही रखती है और न रख ही सकती है।

(4) निर्वाचक मण्डल—वास्तविक सम्प्रभुता संसद में नहीं, अपितु निर्वाचक मण्डल (Electorate) में निहित है। निर्वाचकगण ही संसद को चुनते हैं और हटा भी सकते हैं। अतः संसद को निर्वाचकों की प्रतिक्रिया को ध्यान में रखते हुए ही अपना कार्य करना पड़ता है।

(5) ससद का अधिकार—ससद अपनी सप्रभुता और जीवन काल को स्वय भी निश्चित कर सकती है। ससद ने ही अपने अधिनियम, 1911 (Parliament Act of 1911) द्वारा अपना जीवनकाल 7 वष से घटाकर 5 वष कर दिया था। ससद की सप्रभुता पर इस अथ मे भी अकुश है कि वह अपने जीवनकाल मे तब तक वृद्धि नही कर सकती जब तक कि राष्ट्र की मौन सम्मति उसके पास न हो। द्वितीय महायुद्ध काल म राजनीतिक दलो और राष्ट्र के मौन समथन के बल पर ही ससद ने अपना जीवनकाल लगभग 8 वष रखा था।

(6) विधि का शासन—ब्रिटेन मे ससद् की सम्प्रभुता और विधि का शासन (Rule of Law) दोनो एक दूसरे से मिले-जुले है। विधि शासन का अथ है कि देश का आम कानून सब पर लागू होता है। किसी के पास कोई मनमानी शक्ति नही है और कानून के समक्ष सभी नागरिक बराबर हैं। ससद की सम्प्रभुता तभी तक सही है जब तक 'विधि का शासन' चलता है। ससद् उसका उल्लघन नही कर सकती।

(7) अन्तर्राष्ट्रीय कानून—ससद यद्यपि वधानिक रूप से अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों के विरुद्ध विधियो का निमाण कर सकती है, किन्तु व्यवहार म उसे उनका आदर करना पडता है। वेस्ट रैण्ड गोल्ड माईनिंग कम्पनी बनाम सम्राट नामक विवाद मे यह स्वीकार कर लिया गया था कि "जो कुछ सभ्य राष्ट्रो ने निणय किया है, वह हमारे देश मे भी माना जाना चाहिये।"

म कार्य करती चली आ रही है। ब्रिटेन की व्यवस्थापन प्रणाली में यह सदन वंशानुगत है। इस प्रकार यह यहाँ की लोकतन्त्र पर आधारित शासन प्रणाली का एक अपवाद है।

लार्ड सभा की रचना

लार्ड-सभा विश्व की सबसे बड़ी विधायी संस्था है। इसकी सदस्य संख्या बदलती रही है। जुलाई, 1966 में इसके सदस्यों की संख्या 1029 थी।

लार्ड-सभा की रचना विभिन्न प्रकार के सदस्यों से मिलकर होती है जो निम्नलिखित सात श्रेणियों में बांटे जा सकते हैं—

राजवंश के सदस्य—ये लार्ड सभा के प्रथम श्रेणी के सदस्य होते हैं। इनकी संख्या बहुत थोड़ी लगभग 3-4 होती है। ये सदस्य लार्ड-सभा की बैठकों में प्राय शामिल नहीं होते।

आनुवंशिक या वंश परम्परागत पीयर द्वितीय श्रेणी के सदस्य होते हैं। लार्ड-सभा की सदस्यता का बहुसंख्यक भाग इसी वर्ग का है। जुलाई, 1966 में इन वंशानुगत लार्डों की संख्या 853 थी। इस प्रकार के सदस्यों में सेना, कला, संस्कृति अथवा शिक्षा आदि क्षेत्रों के विशिष्ट व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है। ऐसी सदस्यता वंश परम्परा में सदस्य के बड़े लड़के को प्राप्त होती है। इन सदस्यों की पाँच श्रेणियाँ हैं—बैरन (Baron), विस्काउण्ट (Viscount), अर्ल (Earl), मार्क्विस, (Marquis), और ड्यूक (Duke)। ये पीयर पहले स्वयं राजा द्वारा बनाये जाते थे, किन्तु अब इनकी नियुक्ति प्रधानमंत्री के परामर्श से राजा द्वारा की जाती है। वर्तमान काल में स्त्रियाँ भी लार्ड-सभा की सदस्या हो सकती हैं।

धार्मिक लार्ड भी लार्ड-सभा के सदस्य होते हैं। ये लोग पीयर नहीं होते वरन् धर्मगुरु (Lords of Spiritual) होते हैं। इनकी संख्या 26 होती है। इनमें से पाँच तो केण्टरबरी और यार्क आर्कबिशप तथा लन्दन डरहम और विन्चेस्टर के बिशप होते हैं। शेष 21 पदों पर इंगलैण्ड के ज्येष्ठ (Senior) बिशपों की नियुक्ति की जाती है।

स्काटलैंड के प्रतिनिधि पीयरों का निर्वाचन सन् 1707 के स्काटलैंड और इंगलैंड के एकीकरण कानून के उपबन्धों के अनुसार होता है। इस कानून द्वारा यह व्यवस्था की गई थी कि स्कॉटलैंड लार्ड-सभा के लिये 16 सदस्य भेजेगा जिनका निर्वाचन स्कॉटलैंड के पीयर करेंगे। अब 1963 की नयी व्यवस्था के अनुसार स्काटलैंड के सभी पियर लार्ड-सभा में बैठ सकते हैं। चूँकि एकीकरण अधिनियम में यह व्यवस्था नहीं थी कि नये पीयर भी होंगे, अतः पुराने पीयर धीरे धीरे समाप्त होते जा रहे हैं और एक समय ऐसा आयेगा जब लार्ड सभा से स्काटलैंड के प्रतिनिधि पीयरों का वर्ग ही समाप्त हो जायगा।

आयरलैंड के प्रतिनिधि पीयर भी लार्ड-सभा मे अब नही रहे हैं। सन् 1932 मे आयरलैंड के स्वतंत्र हो जाने के बाद से नवीन आयरिश पीयरो का मनोनयन बंद हो जाने से इनकी संख्या निरंतर घटती गई और सन 1958 मे केवल एक आयरिश पीयर रह गया तथा वह भी 1961 मे चल बसा।

आजीवन पीयर 1958 की 'Life Peerages Act' के अनुसार राजा द्वारा नियुक्त किये जाते है। सरकार पर ऐसा कोई प्रतिबंध नही लगाया गया है कि कितनी संख्या तक ऐसे पीयर मनोनीत किये जायेंगे ? इस वर्ग के अंतर्गत प्राय वयोवृद्ध नेताओ की नियुक्ति हुआ करती है। उक्त अधिनियम का प्रयोजन यह है कि इंगलैंड के प्रतिष्ठित नर नारियो को लार्ड-सभा का सदस्य बनाया जा सके। आजीवन पीयरो को कोई वेतन नही मिलता। उन्हे मार्ग व्यय अवश्य मिलता है।

विधि लार्ड या साधारण अपील लॉर्डो की संख्या 9 है। ये लार्ड जीवन भर के लिये चुने जाते हैं। इन लार्डों के द्वारा ही लार्ड-सभा सर्वोच्च अपीलीय न्यायालय के रूप मे कार्य करती है। सन् 1876 के अधिनियम की व्यवस्था के अनुसार इनकी नियुक्ति विधि-विशेषज्ञो, न्यायाधीशो आदि मे से की जाती है।

लार्ड-सभा के सदस्यो के उक्त वर्गों का देखने से स्पष्ट है कि इसकी रचना मे पैत्रिकाधिकार, नियुक्ति और निर्वाचन तीनो ही सिद्धान्तो का समन्वय किया गया है। अधिकांश सदस्य पैत्रिकाधिकार अथवा वंशानुगत रूप से सदस्यता प्राप्त करते हैं। स्काटलैण्ड के प्रतिनिधि पीयर चुनाव द्वारा सदस्य बनते हैं तो "धार्मिक" और धार्मिक लार्ड नियुक्ति के द्वारा।

एक बार लार्ड बनने पर वह आजीवन इस पद और उपाधि का उपभोग करता है। उसके देहान्त पर उसका ज्येष्ठ पुत्र इस पद और उपाधि का उत्तराधिकारी होता है। सन 1963 के पीयरएज एक्ट के अनुसार अब वंशानुगत लार्ड अपनी उपाधियो का परित्याग कर सकता है और लोकसभा के चुनाव लड़ सकता है। लार्ड सम्राट द्वारा प्रधानमंत्री के परामर्श से बनाए जाते हैं। सामान्यत सम्राट के जन्म दिवस पर, नववर्ष दिवस पर तथा राज्याभिषेक और संसद-विघटन के दिवस पर इस सम्मान का वितरण किया जाता है। वैसे जब प्रधानमन्त्री आवश्यक समझे, उसके परामर्श से सम्राट यह सम्मान प्रदान कर सकता है। लार्ड बनाए जाने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है।

विशेषाधिकार और निर्योग्यतायें

लार्ड-सभा के सदस्यो को विचार अभिव्यक्त करने, संसद के अधिवेशन बुलाने, सदन के बहुमत दल के निर्णयो के विरुद्ध संसद् की पत्रिकाओं म लिखित विरोध प्रकाशित करने आदि के विशेषाधिकार (Privileges) हैं, साथ ही उनकी कुछ निर्योग्यतायें (Disabilities) भी हैं, जैसे—वह संसदीय चुनाव मे मताधिकार

प्राप्त नहीं है, वे लोकसभा के चुनाव के लिए प्रत्याशी के रूप में खड़े नहीं हो सकते, आदि। 1963 के पीयरएज एक्ट के बन जाने के बाद उपाधि का परित्याग करके लोकसभा की सदस्यता निर्वाचन द्वारा ग्रहण की जा सकती है। पीयरएज का एक बार परित्याग कर देने पर निर्णय वापिस नहीं लिया जा सकता। संसदीय काम के लिए पीयरों को कोई वेतन नहीं मिलता, किन्तु यदि वे सब बैठकों में से एक तिहाई बैठकों में शामिल हों तो उनका यात्रा व्यय दिया जाता है।

गणपूर्ति और कार्य-प्रणाली

संसद के दोनों सदनों का प्रारम्भ और सत्रावसान साथ साथ ही होता है। लार्ड सभा का अधिवेशन सप्ताह में केवल चार दिन—सोमवार से गुरुवार तक होता है और वह भी लगभग 2 घण्टे प्रतिदिन। सदन में उपस्थिति बहुत ही कम होती है। सन 1957 के सुधार अधिनियम के परिणामस्वरूप अब औसतन उपस्थिति 120 हो गई है। सभा के कोरम की पूर्ति केवल 3 सदस्यों की उपस्थिति से हो जाती है। विधि पारित करते समय 30 सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक है।

लार्ड सभा के विवाद प्रायः उच्च-स्तरीय होते हैं। इसकी समिति पद्धति लोकसभा की समिति पद्धति से सरल है। एक समिति तो पूरे सदन की है और दूसरी एक स्थाई समिति है जो प्रथम समिति द्वारा पारित विधेयकों ■ संशोधन लाती है। सभा की समकालीन और प्रवर समितियां भी होती हैं जो विशेष प्रकार के कानूनों पर विचार करती हैं। स्थाई समितियों और समापन प्रस्ताव (Closure Motion) की व्यवस्था नहीं है। केवल दो स्थाई आदेश (Standing Orders) हैं। एक के अनुसार कोई भी सदस्य एक ही विषय पर दो बार भाषण नहीं दे सकता। दूसरे आदेश के अधीन वाद-विवाद विषय से अलग अथवा असम्बद्ध नहीं हो सकता।

संगठन (लार्ड सभा का पदाधिकारी)

लार्ड-सभा का सभापतित्व लार्ड चांसलर (Lord Chancellor) करता है। वह वूल सैक (Wool-sack—लार्ड चांसलर की विशिष्ट गद्दी) पर बैठकर कार्यवाहियों का निर्देशन करता है। पदेन सदन का अध्यक्ष (Speaker) होता है। राजा की तरफ से कुछ अन्य ऐसे पीयरों की नियुक्ति भी होती है जो अध्यक्ष की अनुपस्थिति में अध्यक्ष का काम करते हैं। उन्हें उपाध्यक्ष (Deputy Speaker) कहा जाता है। लार्ड चांसलर मन्त्रिमण्डल का सदस्य होता है, जिसकी नियुक्ति प्रधानमंत्री के परामर्श से राजा द्वारा की जाती है। सदन में अनुशासन सम्बन्धी अधिकार पूरी सभा को प्राप्त है, न कि लार्ड चांसलर को। सदस्यगण सभापति को नहीं बल्कि सदन को सम्बोधित करके तथा 'माई लार्ड्स' (My Lords) कह कर अपने भाषण शुरू करते हैं। लार्ड चांसलर को निर्णायक मत देने का अधिकार भी नहीं होता। उसकी शक्तियां लोकसभा के अध्यक्ष की शक्तियों से बहुत ही कम हैं।

वित्त विधेयक है या नहीं। लार्ड-सभा को धन विधेयकों में संशोधन करने का भी अधिकार प्राप्त नहीं है। लोकसभा द्वारा पारित होने के एक माह उपरान्त धन विधेयक निश्चित रूप की स्वीकृति हेतु भेज दिया जाता है, चाहे लार्ड-सभा उसे स्वीकार करे या न करे। यदि लार्ड-सभा किसी वित्तीय विधेयक को संशोधित करके भेजे तो भी लोकसभा को यह अधिकार है कि वह उन संशोधनों को स्वीकार करे अथवा अस्वीकार करे।

जहां तक अन्य विधेयकों का सम्बन्ध है, वे किसी भी सदन में प्रस्तुत किए जा सकते हैं। यद्यपि आजकल महत्वपूर्ण विधेयक अधिकांशतः लोकसभा में ही प्रस्तुत किए जाते हैं, किन्तु अनेक अवसरों पर वे लार्ड-सभा में भी प्रस्तुत किए गए हैं और उन पर उसने बड़ा उपयोगी कार्य किया है। लोकसभा लार्ड-सभा द्वारा प्रस्तावित संशोधनों को औचित्य के कारण ही स्वीकार करती है, अन्यथा अन्तिम निर्णय लोकसभा का ही चलता है। सन् 1949 के संशोधन अधिनियम के द्वारा यह निश्चित कर दिया गया है कि लार्ड-सभा लोकसभा द्वारा पारित किसी विधेयक को (Other than Money Bills) केवल एक बार अस्वीकृत कर सकती है, पर यदि लार्ड-सभा द्वारा अस्वीकृत ऐसे विधेयक को लोकसभा दूसरी बार पारित कर देती है, और इसी मध्य एक वर्ष का समय व्यतीत हो जाता है तो वह विधेयक राजा की स्वीकृति के पश्चात् कानून बन जाता है, चाहे लार्ड-सभा ने उसे स्वीकार किया हो या नहीं किया हो। एक वर्ष के समय का हिसाब लगाने की व्यवस्था यह है कि वह विधेयक के पहिले पारायण (Reading) के दूसरे वाचन की तिथि से लेकर उसके दूसरे पारायण के तीसरे वाचन की तिथि तक लगाया जाता है। पहिले 1911 के संसदीय अधिनियम के अनुसार लार्ड-सभा का यह अधिकार था कि वह सारे विधेयकों (Other than Money Bills) को दो वर्ष तक रोके रखे।

स्पष्ट है कि लार्ड-सभा की स्थिति आज देर करने वाली सभा की है, अन्यथा उसके पास विधि निर्माण सम्बन्धी अधिकार नहीं है। फिर भी वह अपने गम्भीर विचारों के सम्बन्ध में अपने विचारों के अनुरूप सरकार और जनता को प्रभावित निश्चित रूप से करती है।

संविधीय नियमों तथा आदेशों पर विचार

विधेयक सम्बन्धी लार्ड-सभा का एक अन्य कार्य संविधीय उपनियमों तथा आदेशों (Statutory rule and orders) पर विचार करना है। कार्यपालिका अधिकारियों को संसदीय अधिनियमों के अन्तर्गत विस्तृत नियम और उपनियम बनाने का अधिकार है तथा लार्डसभा उनकी वैधानिकता की जांच करती है। 1947 में लार्डसभा के इस अधिकार के विरुद्ध कुछ आवाजें उठाई गई थीं, किन्तु इस दिशा में और किये जाने को कोई प्रभावशाली काम नहीं हुआ।

लॉर्ड-सभा के पक्ष और विपक्ष में तर्क

(Arguments far and against the House of Lords)

लार्ड-सभा शक्ति एवं प्रभाव के विचार से आज अपना महत्व खो चुकी है। जनतन्त्र के विकास के साथ-साथ लोक-सभा की शक्ति के अत्यधिक बढ़ जाने से प्रायः यह प्रश्न उठता रहता है कि, अब लार्ड-सभा की आवश्यकता क्या है? अनेक राजनीतिज्ञ लार्ड-सभा का समूल नाश करना आवश्यक समझते हैं। कहते हैं कि ब्रिटिश राजनीतिक व्यवस्था में उसका अस्तित्व असंगति के रूप में है।

लार्ड-सभा के विषय में दूसरा मत यह है कि इसका बना रहना तो आवश्यक है, परन्तु इसका सुधार होना चाहिए। अधिकांश जनता का मत भी यही है।

लार्ड-सभा के विपक्ष में मत

लार्ड-सभा का विरोध सबसे अधिक मजदूर दल का है। मजदूर दल में प्रायः साइज (Sieyes) का यह कथन दोहराया जाता हुआ सुना जाता है कि "यदि द्वितीय सदन प्रथम सदन से सहमत नहीं होता तो उपद्रवी है, और यदि सहमत होता है तो व्यर्थ है।" जे आर क्लाइन्स (J R Clynes) के शब्दों में मजदूर दल का मत है कि "लार्ड सभा एक ऐसी संस्था है जिसको ठीक से सुधारा नहीं जा सकता। उसे समाप्त कर दिया जाना चाहिए।"

हमें देखना चाहिए कि इतनी पुरानी सभा आज किस आलोचना का शिकार बन रही है—

(1) अप्रजातान्त्रिक—लार्ड सभा अप्रजातान्त्रिक है, जिसके लगभग 90 प्रतिशत सदस्य बड़े-बड़े जागीरदार और कुलीन घराने के व्यक्ति हैं। ये सदस्य निर्वाचित नहीं होते बल्कि वंशानुगत रूप से सदस्यता प्राप्त करते हैं। संगठन की दृष्टि से उसमें समाज के सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व नहीं पाया जाता। उसमें केवल धनी मानी और उच्च व्यापारिक वर्ग का ही प्रतिनिधित्व है। ऑगस्टाइन बिरेल (Augustine Birrel) के शब्दों में 'लार्ड-सभा अपने अतिरिक्त किसी का प्रतिनिधित्व नहीं करती।"

(2) धनियों व निहित स्वार्थों का गढ़—लार्ड-सभा धनियों और निहित स्वार्थों का अड्डा है, जिसमें मालिकों, कम्पनियों के सचालकों का अधिक स्थान मिले हुए हैं। लार्ड सभा वस्तुतः महान उद्योगों और व्यापारिक संस्थाओं द्वारा नामित होती है। लास्कर के अनुसार "लार्ड-सभा धन एवं विशेषाधिकार का ही प्रतिनिधित्व नहीं करती बल्कि वह तो स्वयं धन और विशेषाधिकार का दुर्ग है।

(3) एक दल की प्रभुता—लार्ड-सभा में सदैव अनुदारवादी दल का ही प्रभुत्व बना रहता है। जबकि सामाजिक विचारों और भावनाओं के अनुसार दलीय स्थिति में परिवर्तन होते रहना लोकतन्त्र की एक प्रमुख विशेषता है। अन्तिम न लार्ड सभा को अनुदार दल की जागीर कहा है। आम निर्वाचनों में चाहे किसी भी दल की जीत

हो, लार्ड सभा पर नियन्त्रण प्रतिगामी तत्वो का ही बना रहता है क्योकि सदस्यता का मुख्य आधार निर्वाचन नहीं, उत्तराधिकार है। यही कारण है कि जब शासन-सत्ता रूढिवादी दल के हाथ मे होती है तो लार्ड सभा हर बात मे लोक सभा का समर्थन करती है किन्तु जब सरकार अन्य किसी दल की होती है तो यह लोकसभा के प्राय सभी कार्यों का विरोध करती है। मेरियट (Marriot) के शब्दो में "जब रूढिवादी दल की सरकार होती है तो लार्ड-सभा गूगे कुत्ते की तरह व्यवहार करती है और अन्य अवसरो पर खूखार भेडिये की तरह।"

(4) सदस्यों की अधिकता व उदासीनता—लार्ड सभा की कार्यप्रणाली मे भी कई दोष हैं। सदस्यो की सख्या इतनी अधिक है कि यदि उनम से अधिकाश सभा की कार्यवाही म भाग लें तो कार्य-सचालन ही कठिन हो जाए। पर इससे भी बडा दोष यह है कि व्यवहार मे सभा के अधिकाश सदस्य इसकी बठको मे अनुपस्थित रहते हैं और अपने विधायी कर्त्तव्यों के प्रति कोई रुचि प्रदर्शित नही करते। सन् 1919 के बाद केवल 12–13 अवसर ही ऐसे आये है जब उपस्थित सदस्य सख्या 200 से अधिक रही हो। आलोचको का तर्क है कि जब लार्ड सभा अपने उत्तरदायित्वो के प्रति जागरूक नही है तो उसे बनाये रखने का कोई लाभ नही है।

(5) दोषपूर्ण ससदीय प्रक्रिया—सदन की गण-पूर्ति (Quorum) केवल तीन सदस्यो से हो जाती है जबकि लोक-सभा की गण-पूर्ति की सख्या 40 (चालीस) है। विश्व के किसी भी द्वितीय सदन के इतने कम सदस्यो की उपस्थिति मे सभा की कार्यवाही नही चल सकती। इनके अतिरिक्त लार्ड-सभा का सगठन और अनुशासन भी दोषपूर्ण है। सभा के अध्यक्ष को सदस्यगणो को अनुशासित करने का अधिकार नही है। किसी भी सदस्य के विरुद्ध अध्यक्ष नहीं, वरन् पूर्ण सदन ही कोई कदम उठा सकता है। इसी कारण आलोचको ने इसे एक नियमबद्ध सदन नहीं, बल्कि एक 'गडबड घोटाला' सदन कहा है।

(6) विधायी और कार्यकारी शक्तियों की निरर्थकता—लार्ड-सभा का कार्यपालिका पर कोई नियन्त्रण नही है क्योकि मन्त्रि-मण्डल केवल लोक-सभा के प्रति उत्तरदायी है। विधि-निर्माण के क्षेत्र मे भी उसकी ज्योति अत्यन्त फीकी है। फिर एक पक्षीय एवम् प्रतिक्रियावादी स्वरूप के कारण इसके विधि सम्बन्धी सुझाव प्राय अव्यावहारिक एवम् अप्रगतिशील होते हैं। इसी कारण लास्की इस सभा को उठा देने के पक्ष में हैं।

(7) देर लगाने की शक्ति हानिकारक—लास्की एवम् लेसडान (Laski and Lansdawne) आदि आलोचको को कहना है कि लार्ड सभा कार्य को ठीक से नही कर रही है। यह विधेयक-अवरोध की शक्ति का प्रयोग करने मे निष्पक्ष नही रहती। लार्ड-सभा के सदस्य सदैव अनुदार दल का समर्थन करते हैं और मजदूर दल का विरोध। लार्ड-सभा की यह अवरोधन शक्ति कभी कभी तो अत्यन्त आक्षेप-

जाक हो जाती है क्योंकि इसका प्रयोग पूर्णत: पक्षपात और द्वेष से धारण किया जाता है। संकटकाल में लार्ड सभा अपनी इस शक्ति का दुरुपयोग से सरकार को कुछ समय के लिये पंगु बना देती है। अत: लार्ड-सभा की विलम्बकारी शक्ति हानिकारक है।

(8) **विधेयकों को दोहराने की शक्ति अनावश्यक**—लार्ड सभा का एक कार्य लोकसभा के उतावलपन को रोकना और विधेयकों को दोहराना है। परन्तु लास्की उसके इस कार्य की आलोचना दो कारणों से करता है। प्रथम तो, लार्ड सभा अपनी इस शक्ति का प्रयोग सदैव अनुदार दल की उपेक्षा में करती है और दूसरे, लार्ड-सभा एक निर्वाचित सदन नहीं है, अत: उसके विरोध को जनता का अनुमति नहीं रहती। इसके अतिरिक्त आज के प्रजातान्त्रिक युग में संसद के समक्ष विधेयक प्रस्तुत करने के पहिले दल-पत्र के द्वारा जनमत का ज्ञान प्राप्त कर लिया जाता है तथा रेडियो, टलीवीजन प्रेस आदि साधनों द्वारा उस पर काफी वाद-विवाद हो जाता है। ऐसी स्थिति में लार्ड-सभा द्वारा विधेयकों को दोहराने का कार्य अनावश्यक और शक्ति का कोरा अपव्यय है।

लार्ड-सभा का पक्ष

लार्ड-सभा की आलोचनाओं से यही लगता है कि यह एक व्यर्थ सदन है जिसे समाप्त करना चाहिए, किन्तु ऐसा सोचना ठीक नहीं है। इंगलैंड में जन साधारण का और राजनीतिज्ञों का मत यही रहा है कि लार्ड-सभा का अस्तित्व तो बना रहे पर इसके संगठन में समयानुकूल परिवर्तन की व्यवस्था कर दी जाय। समय समय पर जो सर्वदलीय सम्मेलन हुए हैं उनमें भी यही निश्चय दोहराया गया है कि लार्ड सभा में सुधार करके इसे जीवित रखा जा सकता है। यहाँ हम उन आधारों का उल्लेख जो लार्ड सभा को बनाए रखने के पक्ष में प्रस्तुत किए जाते हैं।

(1) **लोकतन्त्र की सुरक्षा**—लार्ड-सभा लोकतन्त्र की सुरक्षा के लिए जरूरी है ताकि व्यवस्थापन पर किसी एक संस्था अथवा दल का एकाधिकार नहीं रहे और लोगों की स्वतन्त्रता एवं उनके मौलिक अधिकारों की सुरक्षा भी बनी रहे। लोकतन्त्र की मांग है कि व्यवस्थापिका द्विसदनात्मक हो और एक सदन के व्यवस्थापन कार्य की देखभाल दूसरा सदन करता रहे। लार्ड-सभा की आवश्यकता इसलिए भी है कि ब्रिटेन में अमरिका की भाँति न तो न्यायिक पुनर्विचार (Judicial Review) की व्यवस्था है, न सोवियत रूस की तरह व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की व्यवस्था है और न ही स्विटजरलैंड के जनमत संग्रह का प्रावधान है। इस प्रकार की व्यवस्थाओं के अभाव में यह आवश्यक है कि एक सदन की तानाशाही को रोकने के लिए दूसरे सदन को बनाए रखा जाय।

उल्लेखनीय है कि क्रॉमवेल ने कुछ समय के लिए लार्ड-सभा को समाप्त किया था लेकिन इसके बिना वह काम नहीं चला सका और उसने लार्ड-सभा की पुनर्स्थापना की। पुनश्च, यह भी ध्यान रखने योग्य बात है कि संसार के अधिकांश

लोकतन्त्रात्मक देशो के विधानमण्डलो मे दो सदनो की ही व्यवस्था की गयी है। जिन देशो मे प्रारम्भ म दो सदन नहीं थे अथवा वहा बाद मे द्वितीय सदन को उठा दिया गया था, वहा दूसरे सदन को पुन स्थापित किया गया है।

(2) लोकसभा के जोश और उतावलेपन पर रोक—लार्ड-सभा इस दृष्टि से विशेष उपयोगी है कि यह लोकसभा के उतावलेपन और जोश को नियन्त्रित करती है तथा उसकी अशुद्धिया पर रोक लगाती है। काय की अधिकता, समय की कमी, दलगत दबाव, कानूनी बारिकियो के कम ज्ञान, आदि के कारण लोकसभा के सदस्य विधेयको पर पूरी तरह वाद-विवाद और विचार विमर्श नहीं कर पाते। किन्तु लार्ड-सभा के सदस्य अपने विस्तृत और लम्बे अनुभव के कारण गलत माग पर जाती हुई लोकसभा को सही माग दशन कर सकते हैं। आग एव जिंक (Ogg and Zink) का निष्कष है कि अनेक अवसरो पर द्वितीय सदन ने राष्ट्रीय इच्छा की व्याख्या प्रथम सदन से अधिक ठीक की है और कई बार देश को जल्दबाजी एव कम सोच विचार पूण कानूनो से बचाया है।

(3) विधि निर्माण मे सहायक—विधि निर्मात्री सदन क रूप मे लार्ड सभा की महत्वपूण भूमिका है। साधारण विधेयक पहले लार्ड-सभा मे ही प्रस्तावित किए जाते हैं और लोकसभा प्राय सामान्य वाद विवाद के बाद ही उन्हे पारित कर देती है। इस तरह लोकसभा के समय की बचत हो जाती है और उसका काम भी हल्का हो जाता है। लार्ड सभा निजी विधेयको के सम्बन्ध म भी महत्वपूण काय करती है। लार्डों क पास पर्याप्त समय रहता है, अत वे निजी विधेयको की सूक्ष्मता से परीक्षा कर सकते हैं और ससद को स्वीकृति क लिए भज सकते हैं। यदि लार्ड-सभा का उन्मूलन कर दिया जाय तो लोकसभा का काय बहुत अधिक, प्राय दुगुना हो जाएगा जिसे वह सम्भवत नहीं कर सकेगी।

(4) योग्यता का भण्डार—लार्ड-सभा एक गुणवन्त सदन है जिसमे आध्यात्मिक, बौद्धिक और भौतिक प्रतिभा वाले व्यक्ति सदस्य होते हैं। देश की सेवा वे प्रमुख सभासद करते हैं, जिन्होने उसकी समृद्धि का बनाया है, उसके महान् साम्राज्य का प्रबन्ध किया है और कूटनीति और शासन, युद्ध, शिक्षा आदि के क्षेत्र मे सवत्र ख्याति प्राप्त की है। अपनी विशाल योग्यता के बल पर लार्ड सभा सच्चे अर्थों में लोकसभा का पोषणालय (Nursery) है। फाइनर (Finer) ने लिखा है कि लार्ड सभा के सदस्य पक्षपात पूण राजनीति स पृथक रहकर अपनी सेवाए अर्पित करते हैं। उनके लिए यह सम्भव इसलिए है क्योकि वे सामान्य निर्वाचन पर आश्रित नही रहते और लोकसभा के सदस्यो की तरह कायभार से दबे न रहने के कारण उन्हे सोच विचार का पर्याप्त समय मिलता है।

राजनीतिज्ञो का मत है कि राजा लार्ड सभा के लिए सदस्यो को मनोनीत करके अपने अधिकार द्वारा ऐसे व्यक्तियो को लार्ड बनाए, जो देश के वयोवृद्ध राजनीतिज्ञ, विद्वान और वैज्ञानिक हो तथा निष्पक्ष रहकर देश की सेवा करने

की क्षमता रखते हो। यदि ऐसा किया गया तो लार्ड-सभा निःसन्देह एक ऐसी संस्था बन जाएगी जो देश की महान् सेवा कर सकेगी और आलोचना का पात्र नहीं रहेगी।

लार्ड सभा के सुधार के सुझाव
(Proposals for Reform of the House of Lords)

पक्ष और विपक्ष की कसौटी पर कसने के उपरान्त निष्कर्ष यही निकलता है कि लार्ड-सभा को समाप्त नहीं किया जाना चाहिए वरन् उसमें आवश्यक सुधार लाए जाने चाहिए। लार्ड-सभा के कटु आलोचक सिडनी एवं वेब भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि यद्यपि एक आदर्श विधान सभा में लार्ड-सभा के लिए कोई स्थान नहीं तथापि लोकसभा द्वारा पारित विधेयकों को किसी न किसी के द्वारा दुहराया जाना तथा सन्तुलित किया जाना आवश्यक है।

उपरोक्त कारणों से ही ब्रिटिश राजनीतिज्ञों का ध्यान लॉर्ड-सभा को मिटाने की जगह सुधारने की ओर अधिक आकर्षित हुआ है तथा समय समय पर इस सम्बन्ध में अनेक सुधार प्रस्तावित किए गये हैं। इनमें मुख्य निम्नलिखित हैं—

(1) वंश-परम्परानुसार पीयर बनाने की प्रथा समाप्त कर देनी चाहिए। उसके स्थान पर राजा को चाहिए कि वह योग्य और अतिशय प्रतिभावान व्यक्तियों को लार्ड-सभा का आजीवन सदस्य नियुक्त करे तथा इस कार्य में एक निर्वाचित समिति से सहायता ले।

(2) वर्तमान पीयर अपने में से कुछ को निश्चित संख्या में लार्ड-सभा का प्रतिनिधि चुन दें। धीरे धीरे इनका प्रतिनिधित्व हो जायगा और एक समय ऐसा आयेगा जब वंशानुगत पीयर वर्ग ही नहीं रहेगा।

(3) सदस्यों को कुछ निश्चित पारिश्रमिक दिया जाना चाहिये और पारिश्रमिक की मात्रा उनकी उपस्थिति पर निर्भर होनी चाहिये। ऐसा होने से सदस्य अपने उत्तरदायित्व के प्रति अधिक सक्रिय हो जायेंगे।

(4) सदस्यों को यह छूट होनी चाहिये कि वे लोक-सभा का सदस्य बनने के लिये लार्ड-सभा की सदस्यता का परित्याग कर सकें।

(5) इस प्रकार की व्यवस्था होनी चाहिये कि लार्ड-सभा विधेयकों को केवल निश्चित समय के लिये ही रोकने का अधिकार रखते हुए भी व्यवस्थापन कार्य में महत्वपूर्ण भाग ले सके और लोकसभा की सक्रिय सहयोगिनी बन सके।

ऊपर केवल प्रमुख सुझावों को गिनाया गया है जो समय समय पर लार्ड सभा के सुधार के लिए दिये जा चुके हैं। जहाँ तक इनके इतिहास का प्रश्न है, उन पर अनेक समितियों, आयोगों और सम्मेलनों द्वारा अब तक विचार किया जा चुका है। इनमें रोजबरी समिति, लायड जार्ज आयोग, ब्राइस आयोग, आदि प्रमुख हैं। सुधारों के अब तक के इतिहास ने यही प्रकट किया है कि जनता लार्ड-सभा

के विपक्ष मे नही वरन् उसमे सुधार लाने के पक्ष में हू । यदि निरन्तर प्रयास करने पर भी लार्ड-सभा का पुनर्गठन नही हो पाया है तो इसके कुछ मुख्य कारण ये रहे हैं—

(i) ब्रिटेन के राजनीतिक दलो मे अभी तक यह समझौता नही हो सका है कि लार्ड सभा का सुधार किस आधार तथा किन सिद्धान्तो के ऊपर किया जाए।

(ii) अभी तक कोई भी सतोषजनक सुधार योजना प्रस्तुत नही की जा सकी है।

(iii) ब्रिटिश जीवन मे परम्पराओ का भारी महत्व है और जिस प्रकार सविधान में परम्पराओ की अभेद्य स्थिति है, वही लार्ड-सभा के सम्बन्ध मे भी है।

(iv) राजतन्त्र मे द्वितीय सदन को पूर्ण सतोषजनक आधार पर बनाना एक कठिन कार्य है।

(v) लार्ड-सभा की शक्तिया पहले ही अत्यधिक क्षीण हो गयी हैं, अत उसमे सुधार करने के साथ साथ उसकी शक्तियो का पुनर्जीवित करने का कठिन प्रश्न भी जुडा हुआ है।

लोकसभा
(House of Commons)

लोकसभा ससार का सबसे पुराना प्रतिनिधि सदन है। इगलैंड के व्यवस्थापक अग के रूप मे यह इतना महत्वपूर्ण है कि बोलचाल मे हम उसे प्राय ससद् का पर्यायवाची मान लेते हैं।

लोकसभा की रचना

सन् 1948 के प्रतिनिधित्व सम्बन्धी कानून के पारित होने के बाद से लोकसभा अब पूर्णत एक प्रतिनिधि-सभा हो गई है। 1955 से इसकी कुल सदस्य सख्या 630 रही है जिसमे इगलैंड से 511, वेल्स से 36, स्कॉटलैंड से 71 तथा उत्तरी आयरलैंड से 12 प्रतिनिधि होते हैं। सभी सदस्य पृथक-पृथक निर्वाचन क्षेत्रो से "एक व्यक्ति एक मत" के आधार पर वयस्क मताधिकार द्वारा चुने जाते हैं। लोकसभा के सदस्यो को निश्चित वेतन मिलता है, साथ ही मुफ्त रेल यात्रा करने की सुविधा भी मिली हुई है। उनकी सदस्यता ससद के कार्यकाल के साथ साथ चलती है।

सदस्यता के लिए योग्यता

ब्रिटिश राज्य के सभी स्त्री-पुरुष, चाहे वे साम्राज्य के किसी भी भाग मे निवास करते हो निर्वाचन के लिए उम्मीदवार बन सकते है बशर्ते कि—

(i) उनका नाम किसी भी निर्वाचन क्षेत्र के मतदाताओ की सूची मे हो,

(ii) उनकी आयु नियमानुसार हो, एव

(iii) वे राष्ट्र तथा देश के प्रति निष्ठा की शपथ लेने को तैयार हो।

परन्तु निम्नलिखित व्यक्ति लोकसभा की सदस्यता के योग्य नहीं हैं—

(i) जो लार्ड-सभा के सदस्य हैं, किन्तु अभी हाल ही के एक निर्णय के अनुसार लार्ड-सभा का सदस्य लार्डशिप त्याग कर लोकसभा के लिए अब चुनाव लड़ सकता है।

(ii) जो नाबालिग है।

(iii) जो विदेशी, पागल दिवालिया या फौजदारी कानून के अनुसार दण्डित है।

(iv) जो पादरी, नगरों के मेयर और काउंटियों के शेरिफ हैं।

(v) जो क्राउन से वेतन पाने वाले तथा राजकीय सेवा में नियुक्त व्यक्ति हैं।

(vi) जो सरकारी ठेका या अन्य प्रकार से सरकार द्वारा लाभान्वित होते हैं।

लोकसभा का कार्यकाल

सामान्यतः ब्रिटिश लोकसभा का कार्यकाल पाँच वर्ष है। लेकिन एक तो इसे संकट-काल में बढ़ाया जा सकता है और दूसरे राजा को विशेषाधिकार है कि वह प्रधानमन्त्री की प्रार्थना पर अवधि के पूर्व भी उसे भंग करदे।

उन्मुक्तियाँ

संसद का अधिवेशन प्रारम्भ होने के 40 दिन पूर्व और संसद का अधिवेशन समाप्त होने के 40 दिन बाद तक की अवधि में किसी भी सदस्य को दीवानी मामले में बन्दी नहीं बनाया जा सकता। संसद में सदस्यों को भाषण की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। उनके द्वारा कहा गया कोई भी शब्द किसी कानूनी कार्यवाही का विषय नहीं बनाया जा सकता।

लोकसभा का संगठन (पदाधिकारी आदि)

नई संसद चुनाव के लगभग दो सप्ताह के भीतर ही बुला ली जाती है। जब पहली बार संसद् बुलाई जाती है तो लार्ड-सभा (House of Lords) का एक संदेशवाहक जिसे "जेंटिलमैन अशर आफ दी ब्लैक रॉड" (Gentleman Usher of the Black Rod) कहते हैं, सब सदस्यों को सदन से "लार्डसभा में जाने के लिए कहता है। वहाँ पर लार्ड चांसलर लोकसभा के सदस्यों को अपना अध्यक्ष (Speaker) चुनने के लिए कहता है। अध्यक्ष के अतिरिक्त सदन में अन्य पदाधिकारी भी चुन जाते हैं। इन संसद के अधिकारियों में मार्ग समिति का अध्यक्ष (Chairman of the Committee of the ways & means), उपाध्यक्ष (Deputy Speaker) प्रमुख होते हैं। स्थायी अधिकारियों में सदन का लिपिक (Clerk of the House) व सारजेंट एट आर्म्स (Sargent at arms) पादरी (Chaplain) प्रमुख होते हैं। सदन के लिपिक के कई काम हैं। यह सदन की आज्ञाओं पर हस्ताक्षर करता है, पार्लमेंट में आए हुए सदा प्रार्थनापत्रों का भी

जाने वाले विधेयकों को पृष्ठांकित (Endorse) करता है, सदन की कार्यवाही का लेखा रखता है और सरकारी पत्रिका (Official Journal) का अध्य्य की सहायता से तैयार कराता है। सार्जेन्ट एट आर्म्स का कार्य सदन की आन मान व शान को बनाए रखना है। वह सदन की सब आज्ञाओं को लागू करवाता है। द्वारपाल एवं संदेशवाहकों का संदेश देना है तथा सदन के अधिपत्रों (Warrants) पर अमल करता है।

लोकसभा की गणपूर्ति (Quorum) 40 सदस्यों से होती है। प्रचलित पद्धति के अनुसार लोकसभा का वर्ष में कम से कम एक अधिवेशन अवश्य होता है क्योंकि कुछ आवश्यक विधेयक एक बार में केवल एक ही वर्ष के लिए पास किए जाते हैं।

लोकसभा की बैठकें व कार्यवाही सम्बन्धी कुछ प्रमुख नियम

संसद की बैठकें वेस्ट मिनस्टर भवन (Palace of the West Minster) में होती है। दोनों सदन अलग अलग बैठते हैं। कुछ विशेष अवसरों पर दोनों सदनों की संयुक्त बैठक भी होती है, जैसे संसद् के उद्घाटन के समय तथा राजकीय संदेशों, भाषणों आदि को सुनने के लिए। लोकसभा की बैठकें सप्ताह में प्रथम 5 दिन होती हैं। शनिवार को साधारणतया बैठक नहीं होती। संकटकाल में संसद् का कभी भी आमन्त्रित किया जा सकता है।

लोकसभा की कार्यवाही अधिकांशतः परम्परा और अवसर पर आधारित है। फिर भी कुछ स्थायी आदेश हैं जिनमें सदन को सुचारु रूप से चलाने के नियम हैं। सरकार और विरोधी दल की न्यायसंगत मांगों का समझौता कराने के उपाय भी इन स्थायी आदेशों के अन्तर्गत हैं।

वाद विवाद संसद् का प्रमुख कार्य है। समय की बचत के दृष्टिकोण से इस पर कुछ प्रतिबन्ध लगाए गए हैं और वाद विवाद के प्रारम्भ व समापन के लिए कुछ नियमों का पालन किया जाता है। प्रथम तो विरोधी और सत्तारूढ़ दल के सचेतकों के बीच समझौता हो जाता है कि किस विषय पर कितना समय दिया जाए? यदि ऐसा समझौता नहीं हो पाता तो अवरोधक (The Closure), विभागशः अवरोधक (The Closure by Compartments), कंगारू समापन (Kangaroo Closure), गिलोटिन (The Guillotine), कार्यक्रम (The time Table), विभाजन (Division) आदि उपायों द्वारा वाद विवाद को समाप्त किया जा सकता है। वस्तुतः वाद-विवाद सदन का आवश्यक और महत्त्वपूर्ण कार्य है। एक दृष्टि से तो यह कार्य विधि निर्माण या वित्तीय नियन्त्रण से भी अधिक महत्वपूर्ण है। विनियोग और राजस्व सम्बन्धी प्रस्तावों पर सरकारी नीतियों की व्यापक आलोचना होती है। यदा कदा स्थगन प्रस्ताव अथवा कामरोको प्रस्ताव द्वारा सार्वजनिक महत्व के प्रश्न पर बहस प्रारम्भ की जाती है। इंगलैंड जैसे देश में वाद विवाद लोकतन्त्र के प्राण है।

लोकसभा की शक्तियाँ और उसके कार्य

(Powers and Functions of the House of Commons)

ब्रिटिश लोकसभा की शक्तियाँ महान् हैं। प्रायः यहाँ तक कह दिया जाता है कि इसकी शक्ति और महत्ता पर अधिक बोलना सूर्य को दीपक दिखलाना है। किन्तु इतना यशोगान सैद्धान्तिक अधिक है, व्यावहारिक कम। हमें ब्रिटिश संविधान में सिद्धान्त और व्यवहार का भेद प्रतीत करना है।

लोकसभा के व्यवस्थापन सम्बन्धी अधिकार व कर्तव्य

ब्रिटेन में संसद् का अर्थ है राजा, लार्ड-सभा एवं लोक-सभा। किन्तु व्यवहारतः इसकी शक्तियों का उपभोग लोकसभा ही करती है क्योंकि लौकिक सम्प्रभुता इसी में निहित है। लोक सभा ही मूलतः व्यवस्थापिका संस्था है जिसे साधारण और संविधानिक दोनों प्रकार के कानूनों के निर्माण करने का अधिकार है। विधि-निर्माण के क्षेत्र में अन्तिम निर्णय लोकसभा का ही चलता है लार्ड-सभा केवल विधेयकों के कानून बनने देने में कुछ विलम्ब कर सकती है। धन विधेयकों पर लार्ड-सभा को केवल 1 महीना और साधारण विधेयकों पर 1 वर्ष का स्थगन-निषेधाधिकार प्राप्त है। राजा की स्वीकृति देने की शक्ति औपचारिक मात्र है। लोकसभा देश के प्रत्येक स्थान, वस्तु और व्यक्ति के सम्बन्ध में कानून बना सकती है। उसकी शक्ति पर न्यायिक पुनर्विचार जैसा कोई बन्धन नहीं है।

लोकसभा की व्यवस्थापन शक्तियों का यह पक्ष सैद्धान्तिक अधिक है। क्योंकि उसकी व्यवस्थापन शक्तियाँ व्यवहारतः मन्त्रीमण्डल के हाथों में पहुँच गई हैं, परन्तु यह अवश्य है कि मन्त्रिमण्डल लोकसभा पर केवल तभी तक छाया रहता है जब तक वह लोकसभा के बहुमत दल का विश्वासपात्र है।

लोकसभा के वित्तीय अधिकार व कर्तव्य

राष्ट्रीय वित्त पर लोकसभा का एकछत्र नियन्त्रण है। वित्तीय विधेयकों की स्थापना लोकसभा में ही हो सकती है। उसको ही बजट के सम्बन्ध में एकाधिकार प्राप्त है। लार्ड-सभा वित्त-विधेयकों को अधिक से अधिक एक माह के लिये विलम्बित कर सकती है।

परन्तु वित्तीय क्षेत्र में भी लोकसभा की शक्तियों का व्यावहारिक पहलू दूसरा है। राजकीय बजट का निर्माण मन्त्रिमण्डल द्वारा ही किया जाता है। वित्त मंत्री (Chancellor or Exchequer) द्वारा ही उसे सभा में प्रस्तुत किया जाता है। कोई भी वित्तीय विधेयक राजमुकुट की सिफारिश पर ही लोकसभा में पेश किया जा सकता है और राजमुकुट की सिफारिश, व्यवहार में मंत्रीमण्डल की ही सिफारिश होती है। जब तक राजमुकुट की ओर से माँग न की गई हो, वह न तो कोई वित्तीय अनुदान पास कर सकती है और न कोई कर ही लगा सकती है। बजट

पेश हो जाने के बाद भी लोक सभा को उसमे कटौती करने या उसे अस्वीकार करने का ही अधिकार है। वह अपनी ओर से व्यय मे कोई वृद्धि नही कर सकती और न कोई नवीन व्यय या कर प्रस्तावित कर सकती है। मत्रिमण्डल दलीय बहुमत के कारण किसी भी वित्तीय विधेयक या बजट को प्राय उसी रूप मे पारित करा लेता है, जिस रूप मे वह उसे प्रस्तुत करता है।

फिर भी लोकसभा राष्ट्रीय वित्त का विभिन्न तरीको से नियमित करती है, जैसे अर्थोपाय अथवा उपायो और साधनो की समिति (The Committee of the Ways and Means) मे वाद विवादो तथा वित्तीय अधिनियम (Finance Act) द्वारा धन एकत्र करने पर नियत्रण रखती है, सप्लाई समिति (Appropriation Act) और कम्पट्रोलर तथा आडिटर जनरल के द्वारा धन के विनियोग पर नियत्रण रखती है, सावजनिक हिसाब-किताब की समिति के द्वारा हिसाब किताब की जाच करती है और प्रश्नो एव वाद विवादो के द्वारा व्यय करने के तरीको की आलोचना करती है।

लोकसभा क कायपालिका सम्बन्धी अधिकार एव कतव्य

मत्रिमण्डल के हाथ मे कायपालिका सम्बन्धी इतनी शक्तिया ह कि यदि उसे नियन्त्रित न किया जाये तो वह तानाशाह बन सकता है। इसीलिए लास्की ने लिखा है कि, "सरकार बनाना तथा उसे राज-काज करने का नियमित अधिकार प्रदान करना या न करना लोकसभा का ऐसा प्रमुख काय है जिस पर अन्य सब काय निभर करते है।" लोकसभा यदि सरकार को प्रशासन काय चलाने के लिए आवश्यक नियमित अधिकार प्रदान न करे और उसे अपना आवश्यक समथन न देती रहे तो सरकार का काम चलना असभव हो जायगा और सम्पूण प्रशासन यन्त्र ठप्प पड जायेगा। सैद्धान्तिक रूप से मन्त्रिमण्डल की स्थिति लोकसभा की एक समिति जैसी है। लोकसभा प्रश्न, आलोचना, स्थगन प्रस्ताव, निन्दा प्रस्ताव, अविश्वास, वित्तीय अधिकार आदि विभिन्न साधनो से उसे नियन्त्रित करती रहती है तथा उसके कार्यों का निरीक्षण करती है।

पर इस क्षेत्र मे भी व्यावहारिक दृष्टि से लोकसभा बहुत हद तक मन्त्रिमण्डल के हाथ मे खिलौना है। दलीय अनुशासन और बहुमत के कारण मत्रिमण्डल लोक सभा पर छाया रहता है और उसस अपनी इच्छानुसार प्रत्येक विधेयक पारित करवा लेता ह। व्यवहार मे नीति निर्माण सम्बन्धी अधिकाश निणय मन्त्रिमण्डल द्वारा ही किये जाते है, लोकसभा की स्वीकृति केवल औपचारिक होती ह। इसके अतिरिक्त लोकसभा मत्रिमण्डल से कुछ मामलो की जानकारी मात्र ही प्राप्त कर सकती है। लोकसभा के कटौती प्रस्तावो या स्थगन और अविश्वास प्रस्तावो का भी व्यावहारिक महत्व अधिक नही है क्योकि लोकसभा को अधिकाशत वही करना पडता है जो मन्त्रिमण्डल चाहता ह। अविश्वास प्रस्ताव पारित करने मे भी सदस्यो को यह भय

रहता है कि कहीं प्रधानमंत्री राजा से कहकर लोकसभा को ही भंग करा दे और इस प्रकार उन्हें पुनः असमय में ही, निर्वाचकों की दया का भिखारी बना दे।

लोकसभा द्वारा जनता की शिकायतों का निवारण

लोकसभा के सदस्य जनता के प्रतिनिधि हैं। वे जनता की शिकायतों को सदन के माध्यम से सरकार तक पहुँचाते हैं, और उनका निवारण करने के लिये उसे बाध्य करते हैं। वास्तव में लोकसभा का विरोधी-दल जनता की स्वतन्त्रता का रक्षक है। सदस्य विशेषकर, विरोधी दल के सदस्य, प्रश्न तथा पूरक प्रश्न पूछते हैं। ये प्रश्न डाकघर के किसी अधिकारी के दुर्व्यवहार, गाँव की गलियों की गन्दगी आदि से लेकर देश की परराष्ट्र एवं आर्थिक नीति जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर भी हो सकते हैं। लोकसभा के आलोचनात्मक कार्य के फलस्वरूप उदासीन एवं अक्षम प्रशासन से जनता का पर्याप्त संरक्षण प्राप्त होता है।

लोकसभा लोकतान्त्रिक शासन का वह आधारभूत स्तम्भ है जिसके बिना लोकतन्त्र चल ही नहीं सकता। लोकसभा के ही कारण राष्ट्र का शासन जनता के प्रतिनिधियों के माध्यम से जनता की अनुमति और सहमति से चलता रहता है।

संसदीय विपक्ष या प्रतिपक्षी दल
(Opposition in the Parliament)

ब्रिटिश संसदीय कार्य प्रणाली में विपक्ष भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि सरकारी पक्ष। विपक्ष भी उतना ही सुसंगठित है जितना कि सत्तारूढ़ पक्ष। विपक्ष का मुख्य कार्य है कि वह सत्तारूढ़ पक्ष की स्वस्थ आलोचना करके जनमत को अपनी ओर मोड़े तथा निर्वाचनों में विजय प्राप्त करके सत्तारूढ़ होने का प्रयत्न करे।

ब्रिटिश राजनीति की यह विशेषता है कि संगठित विपक्ष को राजकीय मान्यता प्रदान की गयी है और इस बात का पूरा ध्यान रखा गया है कि किसी भी निर्णय पर अल्प-मत को अपने विचार प्रकट करने का पर्याप्त अवसर और अधिकार मिले, ताकि शासन-कार्य की स्वस्थ और मार्ग-दर्शक आलोचना होती रहे। सरकार अपने ही विरुद्ध विपक्ष का अविश्वास का प्रस्ताव प्रस्तुत करने तक के लिए समय देती है। जिस मंत्री की विपक्ष आलोचना करना चाहता है, सरकार उसके मन्त्रालय के लिए धन-माँग (Vote of Supplies) करने का निश्चय करती है ताकि विपक्ष को उस पर प्रहार करने का अवसर मिल जाय।

सरकार विपक्ष का पूर्ण आदर करती है और उसे "राजा या रानी का विरोधी दल" (His or Her Majesty's Opposition) कहा जाता है। सदन का कार्यक्रम निश्चित करने से पहले सरकार विपक्ष की सम्मति प्राप्त करने का प्रयत्न करती है। सदन की समितियों में सभी दलों को स्थान देने का प्रयास किया जाता है। अल्प-मत या विपक्ष से यह आशा की जाती है कि उसका विरोध शान्तिमय और

सरकारी रूप से होगा। विपक्ष के नेता को सरकारी कोष से 2 हजार पौण्ड वार्षिक वेतन मिलता है तथा अन्य मन्त्रियों की भाँति एक कमरा दिया जाता है। राजा या रानी द्वारा संसद का उद्घाटन करते समय विपक्ष का नेता प्रधानमन्त्री के साथ खड़ा होता है। वास्तव में उसकी स्थिति वैकल्पिक प्रधानमन्त्री (Alternative Prime Minister) की होती है। ब्रिटेन में विपक्ष का महत्त्व इसलिए भी अधिक है कि वहाँ सामान्यतः दो ही महत्वपूर्ण दल हैं जिनके हाथ में सत्ता आती-जाती रहती है।

विपक्ष का संगठन

ब्रिटेन में विपक्ष के सब संसद्-सदस्यों का संसदीय दल के रूप में संगठन होता है। इसका नेतृत्व 'छाया मन्त्रिमण्डल' (Shadow Cabinet) करता है, जिसमें विपक्ष के नेता का स्थान सर्वोच्च होता है। शासक दल की तरह ही विपक्ष के भी अपने सचेतक (Whips) होते हैं। शासक दल के मन्त्रिमण्डल के समान ही विपक्ष का 'छाया मन्त्रिमण्डल' भी नियमित रूप से अपनी बैठकें करता है। 'छाया मन्त्रिमण्डल' में भी शासन के विविध विषय पृथक्-पृथक् व्यक्तियों के सुपुर्द होते हैं। इस प्रकार गैर-सरकारी तौर पर विपक्ष भी मन्त्रिमण्डल के रूप में संगठित रहता है। इस प्रकार के संगठन के दो विशेष महत्त्व हैं—एक तो विपक्षी दल को संगठित किया जाता है और दूसरे विपक्षी दल शासन को हाथ में लेने के लिये सदा तैयार रहता है। 'छाया मन्त्रिमण्डल' को विपक्ष की 'नीति समिति' (Policy Committee) अथवा कार्यकारिणी समिति (Executive Committee) कहा जाता है।

ब्रिटेन में प्रमुख राजनीतिक दल दो हैं—श्रमिक दल व अनुदार दल। श्रमिक दल का अनुदार दल की अपेक्षा अपने सदस्यों पर अधिक कठोर नियन्त्रण एवं अनुशासन है। संसदीय श्रमिक दल की बैठकें साप्ताहिक अथवा सप्ताह में दो बार होती हैं जिनमें सामान्य नीति के प्रश्नों पर निर्णय लिया जाता है और संसदीय समिति की रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है। संसदीय श्रमिक दल में लोक सभा के सदस्य प्रति-वर्ष एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष, एक सचेतक और बारह कार्यकारिणी के सदस्यों का चुनाव करते हैं। ये पन्द्रह सदस्य तथा तीन श्रमिक लॉर्ड्स (Peers) संसदीय श्रमिक दल की कार्यकारिणी समिति के सदस्य होते हैं। अध्यक्ष विपक्ष का नेता होता है, जिसका प्रतिवर्ष पुनर्निर्वाचन होता रहता है। यह समझा जाता है कि दल के सत्तारूढ़ होने पर वही प्रधानमन्त्री होगा।

अनुदार दल में नेता की स्थिति अत्यन्त शक्तिशाली होती है। निर्वाचन में दल की पराजय होने पर अनुदार प्रधानमन्त्री यदि लोक सभा का सदस्य रहता है, तो वही प्रायः विपक्ष का नेता बन जाता है। संसदीय दल द्वारा एक बार चुन लिए जाने पर पद मुक्त होने तक वह अपने पद पर बना रहता है। अनुदार नेता अपने साथियों को चुनने में स्वतन्त्र है और यदि वह चाहे तो एक उपनेता भी

कर सकता है। यदि दल का बहुमत न रहने पर अनुदार प्रधानमंत्री विरोधी पक्ष का नेता बन जाता है तो उपप्रधानमंत्री की स्थिति प्राय विरोधी पक्ष के उपनेता की होती है।

विपक्ष के कार्य

(1) आलोचना—विपक्ष का सबसे प्रमुख काय सरकार के कृत्यों की आलोचना करना और उसके दोषो को प्रकट करना है। विपक्ष सरकार को यह सूचित करता है कि देश के विभिन्न भागो मे सरकारी नीति और कार्यों की क्या प्रतिक्रिया है। वह सरकारी प्रस्तावो का रचनात्मक विरोध करता है और उस पर अपनी नीति एव कार्यक्रम मे संशोधन करने के लिए दबाव डालता रहता है।

(2) शासन की वैकल्पिक नीति का प्रचार—विपक्ष सरकारी नीतियो के दोष बतलाकर अपनी वैकल्पिक नीति का प्रचार करता है तथा जनमत को सरकार के विरुद्ध और अपने पक्ष मे करता है। वह सरकारी प्रस्तावो पर विभिन्न संशोधन रखता है तथा ससद म अपने दृष्टिकोण को विस्तार से प्रस्तुत करता है जिससे जनता को यह ज्ञात होता रहता है कि विपक्ष की शासन-नीति की रूपरेखा क्या है। जब जनता शासन की वैकल्पिक नीति को समथन देने लगती है तो विपक्ष शासन की बागडोर सम्भाल लेने मे सक्षम हो जाता है।

(3) शासन नीति को प्रभावित करना—विपक्ष अपनी रचनात्मक आलोचना और सूझ बूझ से सरकारी नीति तथा दृष्टिकोण को प्रभावित करता रहता है। सरकार इस बात के प्रति सतत जागरूक रहती है कि कही विपक्ष का दृष्टिकोण जनता पर हावी न हो जाए। अत वह अपनी प्रशासनिक नीतियो को यथासम्भव अधिकाधिक कल्याणकारी बनाती है। वह अपने कार्यों को ऐसा रूप देती है जिससे विपक्ष की आलोचना प्राणवान न रह पाये।

(4) लोकतन्त्र की सुरक्षा—उपरोक्त सभी कार्यों से विपक्ष लोकतन्त्र को सुरक्षा प्रदान करता है। वह सरकार की स्वेच्छाचारिता पर अकुश लगाता है और उसे बाध्य करता है कि वह सरकारी नीतियो को कल्याणकारी रूप प्रदान करे। इतना ही नहीं, विपक्ष जनता को राजनीतिक शिक्षा प्रदान करता है। विपक्ष की आलोचना सरकार को नियन्त्रित करती रहती है। विपक्ष के माध्यम से ही अल्पमत के विचारो का प्रभावशाली प्रकाशन होता है और सरकार सावधान रहती है कि विशुब्ध अल्पमत कही बहुमत मे न परिणत हो जाय।

विपक्ष का मूल्यांकन

प्राय कहा जाता है कि विपक्ष का एकमात्र उद्देश्य प्रत्येक उचित अनुचित बात का विरोध करना और येन केन प्रकारेण सत्ता को हथियाना होता है। लेकिन यह स्थिति भारत मे भले ही सही हो, ब्रिटिश राजनीतिक व्यवस्था म सही नहीं है। ब्रिटेन मे इस तथ्य को कभी विस्मृत नही किया जाता कि विपक्ष की स्थिति एक वैकल्पिक सरकार (Alternative Govt) की होती है और बहुमत दल द्वारा

जनता का विश्वास खो बैठने पर उसे (विपक्ष को) शासन की बागडोर सम्भालनी पडती है। इसी कारण विपक्ष सरकार की कोई निरथक आलोचना नही करता तथा ऐसी कोई बातें भी नही कहता जिन्हे वह स्वय सरकार बनाने के बाद पूरी न कर सके। ब्रिटेन मे विपक्ष एक पूर्ण उत्तरदायी दल की भाति काय करते हुए व्यवस्थापन काय की सही स्थिति पर प्रकाश डालता है।

ब्रिटेन मे विपक्ष का पूर्ण सम्मान किया जाता है। बहुमत दल को यह पूर्ण आशा रहती है कि विपक्ष का विरोध सदैव वैधानिक तथा क्रियात्मक ही होगा। ब्रिटेन मे विपक्ष अप्रत्यक्ष रूप से शासन सचालन मे भी भाग लेता है। उदाहरणार्थ, परम्परानुसार विपक्ष ही यह निणय करता है कि किन मत्रालयो की धन मागो पर वाद विवाद किया जाय। वह अध्यक्ष (Speaker) के पुन निर्वाचन मे प्रस्तावित नाम का समथन करता है। औपचारिक अवसरो पर सदन के नेता के उपरान्त विपक्ष को बोलने का अवसर मिलता है। सरकारी पक्ष और विपक्ष के सचेतक परस्पर वार्तालाप करके यह निणय करते है कि 'राजा या रानी को भेजे सदेश' मे से किन विषयो पर विचार-विमश किया जाय। विदेशी मामलो मे और विशेषकर किसी राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय सकट के उपस्थित होने पर प्रधानमन्त्री विपक्ष से निरन्तर सम्पर्क रखता है और उससे आवश्यक विचार-विमश करता रहता है। कभी-कभी विपक्ष के नेताओ को साम्राज्य-सुरक्षा-परिषद मे भी आमन्त्रित किया जाता है। कभी-कभी प्रधानमत्री विपक्षी नेता को अपने साथ अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनो में चलने को आमन्त्रित करता है। राष्ट्रीय सकट के समय विपक्ष और सरकारी दल एक हो जाते हैं तथा सयुक्त सरकार देश के शासन का सचालन करती है। वस्तुत सरकारी पक्ष और विपक्ष दोनो ही एक दूसरे के अस्तित्व का पूर्ण आदर करते हैं। ब्रिटिश ससद दोनो दलो के स्वस्थ और सम्मानजनक सघष की युद्धस्थली है जिसमे कोई एक-दूसरे का नाश नही चाहता बल्कि राष्ट्रीय सेवा करने के लिए सत्तारूढ होने की प्रतियोगिता करता रहता है।

ससदीय प्रतिनिधित्व
(Parliamentary Representation)

ब्रिटिश ससद् मे लाड सभा का स्वरूप एक प्रतिनिधित्व रहित सस्था का है और लोक सभा जनता का प्रतिनिधित्व करती है। सन 1948 के प्रतिनिधित्व कानून द्वारा यह व्यवस्था की गई है कि लोक सभा के सदस्यो की सख्या 613 से न तो बहुत अधिक और न बहुत कम रखी जायगी। सभी सदस्यगण सम्पूर्ण सयुक्त राज्य (United Kingdom) अर्थात् इगलैंड, स्कॉटलैंड, वेल्स एव उत्तरी आयरलैंड के विविध निर्वाचन क्षेत्रो से निर्वाचित होकर आते हैं। प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र से एक ही सदस्य चुने जाने की व्यवस्था है।

निर्वाचकों की योग्यतायें

सन 1949 के प्रतिनिधित्व अधिनियम के अनुसार लार्ड-सभा का निर्वाचन गुप्त मतदान पत्रों (Secret Ballots) द्वारा होता है। लार्ड सभा के सदस्य को छोड़कर, प्रत्येक स्त्री और पुरुष यदि वह 21 वर्ष की आयु पूरी कर चुका है और किसी प्रकार की कानूनी अयोग्यता के अन्तर्गत नहीं है, ब्रिटिश प्रजातन्त्र या आयर गणतन्त्र का नागरिक है, तो लार्ड सभा के निर्वाचन में मतदान का अधिकारी है। निर्वाचन के लिए अयोग्य घोषित व्यक्तियों में आयरलैंड के कुछ पीयरों को छोड़कर अन्य सब पीयर, इंगलैंड, स्कॉटलैंड, आयरलैंड व रोमन कैथोलिक चर्चों के पादरी व दिवालियों के अतिरिक्त वे व्यक्ति भी शामिल हैं जो न्याय अधिकारी, लोक सेवक, सैनिक, पुलिस सेवक, राष्ट्र मण्डल के बाहर के किसी देश के विधायक अथवा अन्य किसी सार्वजनिक पद के अधिकारी हैं। मतदान के लिये उस निर्वाचन क्षेत्र के निवासियों का मतदान सूचि में नाम दर्ज कराया जाता है जिसमें अमुक निर्वाचक 3 मास से रह रहा है।

निर्वाचन पद्धति व उसके गुण दोष

ब्रिटेन में जिस निर्वाचन पद्धति का प्रयोग है उसे साधारण बहुमत पर आधारित एक सदस्यीय निर्वाचन (Simple Majority with One Ballot) की प्रणाली कहा जाता है। सभी उम्मीदवारों में से जिसको सबसे अधिक मत प्राप्त होते हैं, उसी को विजयी घोषित कर दिया जाता है। निर्वाचन सम्बन्धी विवादों की सुनवाई के लिए उच्च न्यायालय अपने किंग्स (King's Bench) न्यायपीठ में से दो न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है। यदि सफल उम्मीदवार के विरुद्ध अभियोग सिद्ध हो जाता है तो उसका चुनाव रद्द कर दिया जाता है और अन्य चुनाव की व्यवस्था की जाती है।

ब्रिटेन में निर्वाचन अभियान का स्तर बहुत ऊँचा है। मतदाताओं को फुसलाना, उन्हें घूस देना, निर्वाचन केन्द्रों तक उन्हें मुफ्त सवारी में ले जाना, प्रचार के लिए किराये के प्रचारकर्त्ता नियुक्त करना आदि कार्य भ्रष्टाचार कहे जाते हैं और इनका प्रयोग करने वाले उम्मीदवार का चुनाव अवैध घोषित कर दिया जाता है।

ब्रिटिश निर्वाचन-पद्धति इस दृष्टि से बड़ी अच्छी है कि मतदाताओं और सदस्यों के बीच सीधा सम्पर्क बना रहता है। व्यय भी अपेक्षाकृत कम होता है और स्थानीय प्रतिभा को प्रोत्साहन मिलता है। सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसके परिणामस्वरूप ब्रिटेन में दो प्रमुख राजनीतिक दल रहे हैं, जिनमें से एक सत्तारूढ़ होता है और दूसरा विरोधी दल। इसी कारण ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल अधिकांशत स्थायी रहता है।

किन्तु इस निर्वाचन प्रणाली के कुछ निश्चित दोष भी हैं—

प्रथम, कभी कभी अत्यन्त कम संख्या के समर्थन से ही सदस्य निर्वाचित घोषित हो जाता है।

दूसरे, इस निर्वाचन प्रणाली के कारण लोकसभा में राजनीतिक दलों का प्रतिनिधित्व उनके उम्मीदवारों को प्राप्त कुल मतों के अनुपात में नहीं होता, विशेष रूप से अल्प संख्यक दलों का बहुत कम प्रतिनिधित्व हो पाता है।

तीसरे, मतदाताओं के मत में छोटे से परिवर्तन से भी स्थानों के वितरण में बड़ा परिवर्तन हो जाता है।

चौथे, ब्रिटिश आम चुनावों से जनमत का एक विचित्र विकृत स्वरूप दिखाई देता है। यदि तीन दल चुनाव लड़ रहे हों तो हो सकता है कि एक दल को यदि सबसे अधिक मत मिले हों तब भी वह लोकसभा की एक भी सीट न जीत पाया हो। ऐसा तब होता है जब दल के उम्मीदवारों की बहुत से चुनाव क्षेत्रों में बीच की स्थिति हो और विरोधी दलों के उम्मीदवार कभी अल्प बहुमत से जीत जाते हों और कभी भारी बहुमत से हार जाते हों। वह दल भी जिसका देश में अल्पमत हो, लोकसभा में काफी बहुमत प्राप्त कर सकता है। परिणाम यह होता है कि चुनाव एक प्रकार का जुआ बन जाता है।

पाँचवें ब्रिटिश निर्वाचन पद्धति बहुसंख्यक मतदाताओं को मताधिकार से वंचित कर देती है। यह अनुमान लगाया गया है कि कुल मतदाताओं का लगभग 60 से 70 प्रतिशत या तो घटनाओं को प्रभावित नहीं कर पाता या उसे उन नीतियों और सिद्धांतों का समर्थन करना पड़ता है, जिनसे उनका मतभेद होता है। साथ ही निर्विरोध चुनाव से भी अनेक मतदाताओं के मत छिन जाते हैं। इसी तरह असफल उम्मीदवारों के पक्ष में पड़ने वाले मत व्यर्थ चले जाते हैं। कुछ मतदाता अपने मताधिकार का प्रयोग ही नहीं करते क्योंकि उन्हें कोई भी उम्मीदवार पसंद नहीं आता। इसी तरह कुछ मतदाता अनिच्छा से ऐसे व्यक्ति के पक्ष में मत देते हैं जिनके मत से उनका मत नहीं मिलता।

छठे, ब्रिटिश चुनाव प्रणाली में निर्वाचन स्थानीय प्रभाव के कारण सङ्कुचित विचारों के आधार पर होता है। अतः निर्वाचित प्रतिनिधियों में स्थानीय महत्व की बातों पर अधिक ध्यान देने की प्रवृत्ति होती है।

ब्रिटेन की निर्वाचन पद्धति को सुधारने के लिए समय समय पर विभिन्न सुझाव दिये जाते हैं। इंगलैण्ड की आनुपातिक प्रतिनिधित्व सोसाइटी (Proportional Representation Society) के सदस्यों ने समस्या के समाधानार्थ एकाकी हस्तान्तरणीय (Single Transferable) मत–प्रणाली को अपनाने का सुझाव दिया है। यह प्रस्ताव किया जाता है कि बहुमत पर आधारित मत प्रणाली के दोषों को दूर करने के लिए 'एकत्रमत प्रणाली (Cumulative Vote System) अपना ली जाय। एक अन्य सुझाव 'सीमित मत-प्रणाली (Restrictive Vote System) को अपना लेने का है, किन्तु ये सभी विकल्प भी दोषमुक्त नहीं हैं। इन प्रस्तावों की

सबसे बड़ी बुराई यह है कि इनसे ब्रिटेन की द्वि दलीय प्रणाली समाप्त हो जाएगी और राजनीतिक दलों की वृद्धि होगी। परिणामस्वरूप देश की राजनीतिक स्थिरता में अंतर पड़ेगा और स्थायी मन्त्रिमण्डलों का बनना कठिन हो जायेगा। यही कारण है कि अंग्रेज अपनी वर्तमान प्रणाली को ही अधिक ठीक समझते हैं और यह मानते हैं कि दवाई बीमारी से भी बुरी है। आज संसार के अधिकांश देशों में ब्रिटिश-निर्वाचन पद्धति ही अपनाई जा रही है।

फिर यह भी नहीं भूलना चाहिए कि संसद् को विशुद्ध रूप से प्रतिनिधि संस्था बनाना लगभग असम्भव सा है। 630 व्यक्तियों की संसद करोड़ों व्यक्तियों की सम्पूर्ण विचारधाराओं को प्रतिबिम्बित नहीं कर सकती और विचारधाराओं के आधार पर निर्वाचन क्षेत्रों का विभाजन करना एक नितांत अव्यावहारिक कल्पना होगी। ऐसा कोई पृथक निर्वाचन क्षेत्र निर्मित होना असम्भव है जिसके अंतर्गत एक ही विचारधारा के निर्वाचकगण पाये जाते हों।

सर्वोपरि बात यह है कि निर्वाचित होने के बाद प्रतिनिधि किसी क्षेत्र विशेष अथवा किसी दल विशेष का ही प्रतिनिधि नहीं रहता बल्कि सम्पूर्ण देश का प्रतिनिधि हो जाता है, और सम्पूर्ण देश के हितों का ध्यान में रखकर ही कार्य करने की उससे आशा की जाती है। सरल शब्दों में सदस्यगण क्षेत्रीय आधार पर निर्वाचित होते हुए भी सम्पूर्ण देश के प्रतिनिधि होते हैं।

लोकसभा का अध्यक्ष
(Speaker of the House of Commons)

ब्रिटिश लोकसभा के अध्यक्ष को 'स्पीकर' (Speaker) कहा जाता है। यह ऐतिहासिक पद संसद् के प्रारम्भिक काल से ही चला आ रहा है। प्रमाण-पत्रों से ज्ञात होता है कि सन 1936 में सर थामस हंगरी फोर्ड (Sir Thomas Hungry Ford) ने पहले पहल इस उपाधि को वैधानिक रूप से ग्रहण किया था।

'स्पीकर' का शाब्दिक अर्थ है 'बोलने वाला'। उसे स्पीकर इसलिए कहा गया कि प्रारम्भ में राजा और प्रजा के बीच वह कड़ी का रूप था। वह जनता का प्रवक्ता था जिसके द्वारा राजा के समक्ष जनता की आवाज पहुंचाई जाती थी। उस समय लोकसभा केवल प्रार्थनापत्र भेजने वाली संस्था थी और स्पीकर का काम था कि लोकसभा के ऐसे प्रार्थनापत्रों को वह राजा के समक्ष प्रस्तुत करे और उनकी ओर से राजा के समक्ष बोले। अब राजतन्त्र के लोकतन्त्रीकरण के बाद से लोकसभा पहले के समान एक प्रार्थना करने वाली संस्था मात्र नहीं रही है वरन् लोक-सम्प्रभुता की प्रतीक बन गई है। अतः आज स्पीकर एक ऐसी संस्था का अध्यक्ष है जो लोक-सम्प्रभुता की प्रतीक और उसकी निरीक्षिका है।

सन् 1919 के लन्दन गजट के अनुसार लोकसभा के अध्यक्ष का पद कौंसिल के लार्ड प्रेसीडेंट (Lord President) के बाद आता है। वह वेस्ट मिंस्टर भवन

मे रहता है और पद मुक्त होने के बाद उसे पीयर (Peer) बनाया जा सकता है। स्पीकर के अधिकार और उसकी शक्ति को सभी दल मानते है।

अध्यक्ष की शक्ति अथवा उसकी मान्यता का आधार

ब्रिटिश सविधान मे लोकसभा के अध्यक्ष का पद महान गौरव और शक्ति का है। इस मान्यता के अनेक आधार है—

प्रथम, सदन म कार्यवाहियो के समुचित निष्पक्ष और न्यायपूर्ण सम्पादन के लिए एक अधिकारी की आवश्यकता होती है। अध्यक्ष इसकी पूर्ति करता है।

द्वितीय अध्यक्ष का पद एक गौरवपूर्ण और प्राचीन पद है जिसका ससद् के साथ ही निर्माण हुआ है। अध्यक्ष ससद द्वारा राजा से जीती हुई सार्वभौमिकता का प्रतीक है। भूतकाल मे भी वह लोकसभा का प्रतीक और रक्षक रहा तथा आज भी है।

तृतीय, अठारहवी शताब्दी मे अध्यक्ष पद को उच्च प्रशासकीय और न्यायिक पदो, यहा तक कि प्रधानमन्त्रित्व की प्राप्ति के लिए भी पहला कदम माना जाने लगा। फलस्वरूप इसका महत्व बहुत बढ गया।

चतुर्थ, निर्वाचित होने के बाद भी अध्यक्ष एक पूर्णत निर्दलीय व्यक्ति रहता है जो सदन के सभी दलो को समान रूप से बोलने का अवसर प्रदान करता है।

पचम, अध्यक्ष की सजधज और तडक भडक का भी इस पद की महत्ता और प्रभाव की वृद्धि मे पर्याप्त हाथ रहा है। वह रोबीला चोगा और भारी टोप पहनता है तथा ऊची पीठ वाली कुर्सी पर बैठता है। उसे करमुक्त दस हजार पौण्ड वार्षिक वेतन और निवृत्ति के बाद चार हजार पौण्ड वार्षिक पेंशन मिलने की व्यवस्था है। इन सब बातो से उसके प्रभाव का प्रसार होता है।

इरस्किन मे (Erskine May) ने ठीक ही लिखा है कि "लोकसभा का अध्यक्ष सदन की शक्ति, उसकी कार्यवाही और उसकी शान के सम्बन्ध मे सदन का प्रतिनिधि माना जाता है। वह सदन का अत्यन्त विशिष्ट व्यक्ति होता है।"

अध्यक्ष का निर्वाचन

प्रारम्भ मे राजा ही अध्यक्ष की नियुक्ति करता था किन्तु आज उसकी स्वीकृति महज औपचारिकता है। आजकल अध्यक्ष का निर्वाचन लोकसभा के सदस्यो द्वारा लोकसभा के प्रथम अधिवेशन के बाद ही के दिन सर्वप्रथम किया जाता है। प्रधानमन्त्री और प्रतिपक्षी दल के नेता परस्पर विचार करके किसी ऐसे व्यक्ति को अध्यक्ष पद के लिए खडा करते हैं जो सरकारी दल और प्रतिपक्षी दल दोनो को ही मान्य हो। परम्परागत प्रथा के अनुसार लोकसभा के सदस्य लार्ड सभा द्वारा आमन्त्रित किए जाने पर वहा पहुचते हैं और शान्ति से खडे हो जाते हैं। उस समय लार्ड चासलर घोषणा करता है कि क्राउन की इच्छा है कि वे किसी बुद्धिमान व्यक्ति को अपना अध्यक्ष चुन लें। तब लोकसभा के सदस्य अपने सदन मे वापिस आकर अध्यक्ष का

चुनाव करते हैं। व्यवहार में अध्यक्ष वही चुना जाता है जो सरकार को मान्य होता है। इसीलिए मुनरो ने लिखा है कि "साधारण सदस्यों द्वारा प्रस्ताव एवं अनुमोदन केवल इस वास्तविक बात को पूरा करने के लिए ही किया जाता है कि चुनाव मन्त्रिमंडल द्वारा न होकर पूरे सदन द्वारा हुआ है।"

चुनाव के बाद अध्यक्ष अपने पद की शपथ लेता है। अध्यक्ष के चुनाव का पुष्टिकरण बाद में सम्राट द्वारा होता है। उसका निर्वाचन लोकसभा की अवधि के लिए ही किया जाता है किन्तु परम्परा के अनुसार पुराने ही अध्यक्ष का निर्वाचन उस समय तक निर्विरोध रूप से होता रहता है जिस समय तक वह काम करने को तैयार हो। यह पद्धति इतनी मान्य है कि अध्यक्ष के निर्वाचन क्षेत्र से कोई अन्य उम्मीदवार प्रायः खड़ा नहीं होता। इसलिए कहा जाता है कि "एक बार अध्यक्ष सदैव के लिए अध्यक्ष" (Once a Speaker is always a Speaker)

अध्यक्ष के पद को निष्पक्ष रखने के लिए सामान्यतः निम्नलिखित प्रथाओं का पालन किया जाता है—

1 अध्यक्ष सम्पूर्ण संसद के लिये निर्वाचित होता है। वास्तव में वह केवल एक सत्र के लिये ही निर्वाचित होता है।

2 अध्यक्ष उस समय तक बार-बार चुना जाता है जब तक कि उसकी मृत्यु नहीं हो जाती या वह स्वयं त्याग पत्र नहीं देता।

3 अध्यक्ष का निर्वाचन सर्वसम्मति से होता है और उसे निर्वाचन लड़ना नहीं पड़ता। अध्यक्ष निर्वाचित होने के बाद अपने दलीय सम्बन्धों का परित्याग कर देता है।

4 उसे अपने निर्वाचन क्षेत्र को अपनी मुट्ठी में रखने की आवश्यकता नहीं होती।

5 वह वाद-विवादों में भाग नहीं लेता।

6 अध्यक्ष का निर्णायक मत होता है किन्तु इसका प्रयोग वह बहुत कम करता है, और जब करता है तो यथास्थिति को बनाये रखने के लिए ही।

अध्यक्ष के अधिकार और कर्तव्य

(क) लोकसभा का प्रतिनिधित्व—अध्यक्ष कई प्रकार से सदन के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है। वह निस्सन्देह सदन का क्रियाशील एवं सांवैधानिक प्रतिनिधि होता है। सदन के प्रतिनिधि के रूप में उसकी शक्तियाँ और कार्य ये हैं—

(1) अध्यक्ष सदन और राजा के बीच कड़ी का काम करता है। सदस्य उसके माध्यम से राजा के पास प्रतिवेदन और धन्यवाद या निन्दा का प्रस्ताव भेजते हैं। यदि सदन का शिष्टमण्डल राजा से भेंट करना चाहे तो उनके साथ अध्यक्ष का नेता के रूप में होना आवश्यक है। अध्यक्ष ही विस विधेयकों को राजा के सम्मुख स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करता है। राजा की ओर से यदि कोई संदेश सदन

अर्थात् लोकसभा को प्रेषित किये जाते हैं तो उन्हें भी अध्यक्ष ही पढकर सुनाता है। राजा की ओर से वही लार्डसभा के लिपिक (Clerk of the House) को रिक्त स्थानों की पूर्ति के लिए आदेश देता है। वही उनके लिए चुनावों की घोषणा करता है। लोकसभा और लार्डसभा की सम्मिलित बैठक के लिए जब लोकसभा के सदस्य जाते हैं तो उनका नेतृत्व भी अध्यक्ष को ही करना पडता है।

(ii) लोकसभा और लार्डसभा के पारस्परिक सम्बन्धों और व्यवहारों मे भी अध्यक्ष ही लोकसभा का प्रतिनिधित्व करता है। वही निश्चय करता है कि कोई विधेयक वित्त-विषयक है अथवा नही। वित्त–विधेयकों को लार्डसभा मे प्रस्तुत करना उसी का कर्त्तव्य है। वित्त–विधेयकों के बारे मे लार्डसभा की प्रतिक्रिया के औचित्य के बारे मे अध्यक्ष ही निर्णय करता है, अर्थात वही यह बताता है कि कहीं लोकसभा के अधिकारों पर आघात तो नही होता। यदि वह संशोधनों या परिवर्तनों को लोकसभा के अधिकारों पर आघात पहुँचाने वाले समझता है तो उन्हें हटा सकता है और अपने निर्णय की सूचना लार्डसभा को भेज सकता है।

(iii) बाह्य जगत मे भी अध्यक्ष ही लोकसभा का नेतृत्व करता है। जो संसदीय प्रतिनिधि मंडल विदेश जाते हैं उनका नेतृत्व प्राय उसे ही करना पडता है। लोकसभा के निर्णयों की सूचना बाह्य अधिकारियों को वही देता है और वही यह भी बतलाता है कि उन्हें किस प्रकार क्रियान्वित करना है। अध्यक्ष के माध्यम से ही लोकसभा को वे सूचनायें और याचिकायें प्राप्त होती हैं जो बाहर से उसे भेजी जाती हैं।

(ख) लोकसभा की अध्यक्षता—अध्यक्ष की वास्तविक और मुख्य शक्तियां लोकसभा की अध्यक्षता से सम्बन्धित है—

1 अध्यक्ष यह देखता है कि लोकसभा की प्रत्येक बैठक के प्रारम्भ मे आवश्यक उपस्थिति है अथवा नही।

2 वह सदन की बैठकों का सभापतित्व करता है और वाद-विवादों तथा सुव्यवस्था के नियमों की व्याख्या करता है। वही उन्हें लागू भी करता है।

3 बिना अध्यक्ष की आज्ञा के कोई भी सदस्य भाषण नही दे सकता और न किसी विधेयक के सम्बन्ध मे विचार ही प्रकट कर सकता है। अध्यक्ष ही निश्चित करता है कि कौनसा सदस्य बोलेगा। समस्त भाषण, वक्तव्य और प्रश्न उसी को सम्बोधित करके किये जाते हैं।

4 अध्यक्ष का एक महत्वपूर्ण कार्य यह है कि वह सदस्यों को पथ भ्रष्ट न होने दे। इसका सम्बन्ध वाद विवाद की उचित व्यवस्था तथा क्रम से है। वह देखता है कि सदस्यगण वाद-विवाद के मुख्य विषय से न हटें और अप्रासंगिक बात न करने लग जायें।

5 अध्यक्ष को निर्णायक मत (Casting Vote) देने का अधिकार है। प्रचलित प्रथा के अनुसार वह अपने इस अधिकार का प्रयोग यथा स्थिति (Status-

quo) के लिए अपना मत देकर करता है। यदि किसी प्रस्ताव द्वारा विषय पर लोकसभा की विचार-अवधि बढ़ाने का निश्चय हो तो वह अपने निर्णायक मत का प्रयोग "नहीं" के लिए करता है। यदि विचार-अवधि बढ़ाने का प्रस्ताव हो तो वह अपने मत का प्रयोग "हां" के लिए करता है ताकि अन्तिम निर्णय इस सम्बन्ध में सदन का ही करना पड़े।

6 वह किसी प्रश्न या कामरोको प्रस्ताव को ठुकरा सकता है, बशर्ते वह उन्हें सभा के नियमों के विरुद्ध समझता हो। यदि वह देखता है कि बहुत से संशोधन आये हुए हैं और समय बहुत कम है, तो वह महत्वपूर्ण संशोधनों को छोड़कर शेष को ठुकरा देता है। इसको "कंगारू समापन" (Kangaroo Closure) कहते हैं।

7 अध्यक्ष सारजेण्ट-एट आर्मस की सहायता से सदन में अनुशासन रखता है, अनुशासन भंग करने वाले को रोकता है, तथा अशिष्ट व्यवहार करने वाले को सदन से चले जाने तक के लिए बाध्य कर सकता है। अव्यवस्था बढ़ जाने पर वह सभा को स्थगित कर सकता है। गम्भीर दुराचार करने पर वह दोषी सदस्य को सत्र भर के लिए निलम्बित (Suspand) भी कर सकता है।

8 अध्यक्ष लोक-सभा में अल्पसंख्यकों के हितों का भी रक्षक होता है।

(ग) लोक-सभा सम्बन्धी प्रशासन—अध्यक्ष उस प्रशासनिक विभाग का प्रधान भी होता है जिसे लोक सभा के स्पीकर का विभाग कहा जाता है। इस विभाग में सदन का क्लर्क, लाइब्रेरियन, और कुछ अन्य सेवकगण होते हैं। इनके अतिरिक्त निजी विधेयकों के सम्बन्ध में निरीक्षक, कतिपय अधिकारी जिनका सम्बन्ध मतदान कार्यालय (Voting Office) से होता है एवं कुछ और व्यक्ति होते हैं। अध्यक्ष यह देखता है कि लोक सभा की कार्यवाही का प्रकाशन ठीक रूप से होता रहे।

कभी कभी अध्यक्ष को ऐसे सांविधानिक सम्मेलनों का सभापतित्व भी करना पड़ता है, जैसे 1914 का बकिंघम महल सम्मेलन (Buckingham Palace Conference of 1914) अथवा 1920 का स्पीकर सम्मेलन (Speakers Conference of 1920)।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ब्रिटिश अध्यक्ष की शक्तियां और उसके कर्तव्य अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। अध्यक्ष एक ऐसा आदर्श व्यक्ति है जिस पर सदन को पूर्ण विश्वास होता है। वह जो कुछ कहता है, सबको मान्य होता है। वास्तव में वह लोकतन्त्रात्मक परम्पराओं का प्रतीक और संरक्षक है।

ब्रिटिश समिति-प्रणाली

(The British Committee System)

विधि निर्माण के कठिन कार्य को भली प्रकार सम्पादित करने के लिए ब्रिटेन में समिति व्यवस्था का प्रादुर्भाव हुआ, और आज समितियां संसदीय शासन पद्धति का अनिवार्य अंग बन गई हैं। संसार की लगभग सभी व्यवस्थापिकाएं अपने

कार्यों को सुचारु रूप से चलाने के लिए, समय की बचत के लिए और विधेयकों का प्राथमिक तथा समुचित परीक्षण करने के लिए समितियों का प्रयोग करती है।

ब्रिटिश समिति-प्रणाली का प्रारम्भ रानी एलिजाबेथ प्रथम के समय हुआ, जब विधेयकों पर अच्छी तरह विचार करने के लिए उन्हें प्रवर-समितियों के सुपुर्द किया जाने लगा। इस प्रणाली का समुचित ढंग से सगठन सर्वप्रथम 1882 में किया गया। शनैः शनैः लोक कल्याणकारी राज्य के विचार के विकास के साथ-साथ समिति-प्रणाली अधिकाधिक व्यवस्थित और समुन्नत होती गयी तथा आज हालत यह है कि उनके बिना विधि-निर्माण के कार्य को ढंग से सम्पादित किया जाना ही अति कठिन है।

समितियों के प्रकार

ब्रिटेन में कई प्रकार की समितियाँ हैं, जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं—

(1) सम्पूर्ण सदन की समिति (The Committee of the Whole House)

(2) विशिष्ट अथवा प्रवर समितियाँ (Select Committees)

(3) स्थायी समितियाँ (Standing Committees)

(4) गैर-सरकारी विधेयक समितियाँ (Committees on Private Bills)

(5) संयुक्त या सम्मिलित समितियाँ (Joint Committees)

अब हम प्रत्येक प्रकार की समिति का अलग-अलग रूप से विवेचन करेंगे।

सम्पूर्ण सदन की समिति—यह सबसे प्रमुख समिति है। इसमें सदन के समस्त सदस्य सम्मिलित होते हैं। इसमें और सदन में अन्तर केवल यही होता है कि (i) सदन की अध्यक्षता अध्यक्ष करता है जबकि समिति की अध्यक्षता इसके (समिति) द्वारा निर्वाचित सभापति करता है। (ii) समिति का सभापति अध्यक्ष की कुर्सी पर नहीं बैठता, बल्कि टेबल के पास रखी सदन के लिपिक (Clerk) की कुर्सी पर बैठता है। (iii) अध्यक्ष की शक्ति की प्रतीक गदा (Mace) भी मेज से हटा कर उसके नीचे रख दी जाती है। (iv) सदन से भिन्न समिति में किसी प्रस्ताव के अनुमोदन की आवश्यकता नहीं रहती। (v) समिति में एक सदस्य चाहे जितनी बार बोल सकता है। सदन के समान इसमें बोलने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होता और न ही 'पूर्व प्रश्न' (Previous Question) का प्रस्ताव करके वाद विवाद को समाप्त किया जा सकता है।

सम्पूर्ण सदन की समिति में सभी विधेयकों पर विचार नहीं किया जाता। प्रमुखतः वित्त विधेयक ही विचारार्थ लिए जाते हैं। सभी वित्त विधेयकों के प्रायः दो भाग होते हैं—एक भाग का सम्बन्ध व्यय से होता है और दूसरे भाग का आय से। सम्पूर्ण सदन की समिति जब व्यय से सम्बन्धित भाग पर विचार करती है,

तब उसे "सम्भरण समिति" (Committee of Supply) कहा जाता है और जब आय से सम्बंधित भाग पर विचार करती है तब उसे उपाय व साधन समिति या अर्थोपाय समिति (Committee of Ways and Means) के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

धन-विधेयकों के अतिरिक्त निम्नलिखित विधेयक भी सम्पूर्ण सदन की समिति में भेजे जाते हैं—

(1) ऐसे विधेयक जो अस्थायी आदेश की पुष्टि करते हों एवं

(2) ऐसे विशेष विधेयक जिनके बारे में सदन यह निश्चित करता है कि वे सम्पूर्ण सदन की समिति के सामने रख जायें।

अन्य प्रकार के विधेयक विभिन्न समितियों में उनके क्षेत्रानुसार भेजे जाते हैं। जब समिति का कार्य समाप्त हो जाता है, तब सीमित वापिस सदन के रूप में बदल जाती है। अध्यक्ष की गदा (Mace) मेज पर रख दी जाती है, अध्यक्ष पुनः अपना स्थान ग्रहण कर लेता है और सदन का कार्य प्रारम्भ हो जाता है। स्मरणीय है कि कोई समिति स्थायी रूप से सदन के लिए नियुक्त नहीं की जाती। समिति एक अस्थायी निकाय होती है, जो आवश्यकतानुसार किसी भी दिन नियुक्त की जा सकती है।

विशिष्ट समितियाँ

धन सम्बन्धी विधेयकों के अतिरिक्त अन्य सार्वजनिक विधेयकों के लिए विशिष्ट या प्रवर समितियाँ होती हैं। ये दो प्रकार की हैं—तदर्थ विशिष्ट समितियाँ (Adhoc Selection Committee) तथा सत्रीय विशिष्ट समितियाँ (Sessional Select Committees)। तदर्थ समितियाँ अस्थायी होती हैं और विधेयक के विचार की समाप्ति के साथ ही इनका अस्तित्व समाप्त हो जाता है। सत्रीय विशिष्ट समितियाँ सदन द्वारा प्रत्येक सत्र के आरम्भ में नियुक्त की जाती हैं और सत्र के अन्त तक चलती हैं। इनमें से कुछ समितियों के नाम ये हैं—प्रवरण समिति (The Selection Committee), लोक लेखा समिति (The Committee of Public Accounts), स्थायी आदेश समिति (The Standing Order Committee), विशेषाधिकार सम्बन्धी समिति (The Committee of Privileges), परिनियत विलेख प्रवर समिति (The Selection Committee of Statutory Instruments)।

लोक सभा स्वयं निर्णय करती है कि कौन-कौन सी विशिष्ट समितियाँ बनाई जाएँ और वही उन समितियों के लिए सदस्यों के नामों का चयन करती है।

ये समितियाँ अत्यन्त शक्तिशाली होती हैं। उन्हें खुले अधिवेशन करने का अधिकार होता है। ये लोक-सभा में तथ्यों का संग्रह करती हैं, सबूतों की परीक्षा करती हैं, और अन्य प्रकार से सूचना प्राप्त करती हैं, जिससे सम्बन्धित विषय के बारे में उचित कदम उठाया जा सके। पर इनको यह अधिकार नहीं है कि किसी

व्यक्ति को अपने सामने उपस्थित होने को बाध्य कर सके अथवा उसके कागजात या अभिलेख तलब कर सके जब तक कि सदन उन्हें विशेष रूप से इसका अधिकार न दे दे। अन्य समितियां विधेयकों के सैद्धान्तिक पक्ष को नहीं देखती, वे केवल उनके प्रारूप सम्बन्धी पक्ष को ही देखती हैं। किन्तु विशिष्ट समितियां सार्वजनिक मामलों के विषय में जांच समिति का कार्य करती हैं। उन्हें यह देखने का भी अधिकार होता है कि किसी विधेयक में निहित सिद्धान्त कहां तक ठीक अथवा वांछनीय हैं। लोक सभा प्रायः इन समितियों के विचारों का सम्मान करती है।

स्थायी समितियां

विशिष्ट समितियों से अधिक महत्वपूर्ण स्थायी समितियां हैं। इनकी संख्या 4–5 है और वे A,B,C D E आदि के नाम से पुकारी जाती हैं। एक स्कॉटलैंड सम्बन्धी मामलों की समिति (Committee of Scottish Affairs) भी होती है। यह केवल उन्हीं विधेयकों पर विचार करती है जिनका सम्बन्ध स्काटलैंड से होता है। यह समिति अन्य समितियों के आकार से लगभग तीन गुनी होती है और इसमें कम से कम 10 तथा अधिक से अधिक 15 तक सदस्य होते हैं। इसके अतिरिक्त एक महा-समिति (Grand Committee) भी होती है। यह भी स्कॉटलैंड के मामले पर ही विचार करती है। इसी प्रकार वेल्स और मनमथ शायर (Wales and Manmouth Shire) के निर्वाचन क्षेत्रों के लिये 16 सदस्यों वाली वेल्स–महासमिति (Wales Grand Committee) भी होती है।

स्थायी समितियां प्रत्येक संसद् के निर्माण के पश्चात प्रथम अधिवेशन पर बना दी जाती हैं और तब तक रहती हैं जब तक कि उस संसद् का सत्र समाप्त न हो जाए। स्काटलैंड की समिति को छोड़कर A B,C,D,E स्थायी समितियां में से प्रत्येक के सदस्यों की संख्या 20 होती है, किन्तु किसी विशेष विधेयक के विचारार्थ इनमें 30 तक और सदस्य नियुक्त किये जा सकते हैं अर्थात 50 तक इनके सदस्यों की संख्या हो सकती है। नये सदस्यों की नियुक्ति तत्सम्बन्धी विधेयक के प्रति उनके ज्ञान और अनुभव के आधार पर होती है। एक चयन करने वाली समिति (Committee of Selection) इन समितियों का नामांकित करती है। सभी राजनीतिक दलों के सदस्य इन समितियों में उसी अनुपात से लिये जाते हैं जिस अनुपात में सदन में उनकी संख्या होती है। सदन का अध्यक्ष स्थायी समिति के लिये सभापति का चुनाव उन सभापतियों की सूचि में से करता है जिनका नामांकन चयन समिति करती है। इस सूची में कम से कम 10 नाम अवश्य होते हैं। स्थायी समिति के सभापति (चेयरमैन) की वही शक्तियां हैं जो सदन समिति के सभापति की होती है। साथ ही उसे यह भी अधिकार है कि वह वाद विवाद की समाप्ति का प्रस्ताव स्वीकार कर ले और किसी मुखबन्ध (Guillotine) के द्वारा वाद विवाद बन्द कर दे।

व्यवस्थापन का अधिकतर कार्य स्थायी समितियों के द्वारा ही होता है। अधिकाश विधेयक इन्ही समितियों के सुपुर्द कर दिये जाते हैं। ब्रिटिश स्थायी समितियों की यह एक विशेषता है कि उनका कार्यक्षेत्र निर्धारित अथवा विशिष्ट नहीं होता। उनका कार्य विधेयकों के प्रारूप मे सशोधन करना होता है और वे उनके सिद्धान्तों मे कोई परिवर्तन नहीं कर सकती। स्थायी समितिया विधेयक का रूप बदल सकती ह किन्तु उसे पूर्णत समाप्त नही कर सकती। प्रत्येक विधेयक को उन्हें पुन लोकसभा के समक्ष अपने प्रतिवेदन के साथ प्रस्तुत करना पडता है और यह लोक सभा की इच्छा पर है कि वह समितियों द्वारा प्रस्तावित सशोधनों को स्वीकार करे या न करे।

स्थायी समितियों द्वारा प्रस्तुत सशोधनो को लोक सभा प्राय स्वीकार कर ही लेती है, क्योकि उनके सुझाव बडे लाभकारी होते हैं। परन्तु स्थायी समितिया दोषमुक्त नही ह। जिन कारणो से इन समितिया की आलोचना की जाती हैं, वे प्रमुखतया ये ह—(i) समितियों की सदस्य सख्या इतनी अधिक हो जाती है कि य प्राय गम्भीर विचार के उपयुक्त नहीं रहती। (ii) समितियो पर कार्यभार इतना अधिक है कि 4–5 समितियों से काम नही चल सकता। (iii) समितियो के सदस्य विधेयकों के विषय म विशेषज्ञ नही होते।

सयुक्त समितिया

कभी-कभी लाडसभा और लोकसभा दोनों सदनो की सयुक्त समितिया की भी नियुक्ति हाती है। ये सयुक्त समितिया ऐसे विषयो पर विचार करती हैं और अनुसधान करती ह जिनके बारे मे दानो सदनों म उत्तेजना पाई जाती है। परन्तु ब्रिटिश ससदीय जीवन मे इनका प्रचलन बहुत ही कम है। इन समितियो का स्वरूप विशिष्ट समितियो के समान होता है।

गैर सरकारी विधेयक समितिया

गैर सरकारी विधेयको के परीक्षण के लिये गर सरकारी विधायको की समितिया हाती ह। इन समितियों की कार्य प्रणाली विशिष्ट या प्रवर समितियों जैसी है। इनकी नियुक्ति का भार चयन समिति (Committee of Selection) पर है। ये समितिया स्थायी होती ह। लोकसभा द्वारा निर्मित ऐसी समितियो म 4 तथा लाडसभा द्वारा निर्मित ऐसी समितियो मे 5 सदस्य होते ह। ये समितिया फ्रास व अमेरिका मे नहीं ह क्योकि वहां सार्वजनिक (Public) और व्यक्तिगत या गैर-सरकारी (Private) विधेयको मे कोई अन्तर नही है।

इन समितियों की शक्तिया बडी हाती ह। ये उन गैर-सरकारी विधेयको का परीक्षण करती ह जिनका द्वितीय वाचन (Second reading) मे विरोध किया जाता है। ये समितिया अर्ध-न्यायिक पद्धति (Quasi Judicial line) पर काम करती ह। ये विधेयको के रूप पर विचार करके उन्हें उन्नत बनाती ह और उनमें

अन्तर्निहित सिद्धान्तो पर विचार, करके उनकी वांछनीयता-अवांछनीयता के आधार पर आवश्यक फेर-बदल भी करनी है। प्रस्तावित व्यवस्था से लाभान्वित होने वाले लोगो को और उन लोगो का, जिन्हे हानि होने की सम्भावना हो, गवाही के लिये आमन्त्रित करने का भी इन्हे अधिकार है। ये लोग स्वय तथा अपने वकीलो के द्वारा अपना पक्ष समितियो के सम्मुख प्रस्तुत कर सकते है। यह निर्णय समितियां ही कर सकती हैं कि किसी विधेयक का निर्माण होना चाहिये या नही और यदि होना चाहिये तो उसका रूप क्या होगा ? समितियो का निर्णय प्राय अन्तिम होता है, क्योकि व्यवहार मे यही पाया गया है कि लोकसभा इन समितियो के प्रतिवेदन के विरुद्ध कार्य नही करती है।

समितियों के कार्य का मूल्यांकन

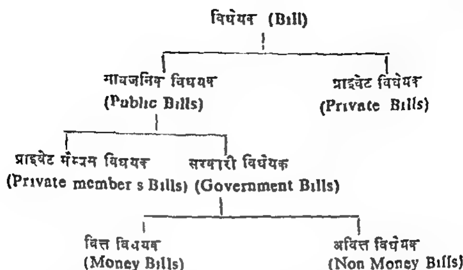
स्पष्ट है कि समितियो का कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है और ये लोकसभा के व्यवस्थापन कार्य मे बडी सहायक है। ब्रिटेन मे इन समितियो को सदन के लघु रूप की सज्ञा दी जाती है। परन्तु इससे यह आशय नही है कि व्यवस्थापन कार्य मे समितियो का कार्य मुख्य और ससद का कार्य गौण हो गया है। हरमन फाइनर के शब्दो मे "अपनी स्थिति एव अपने कार्य की दृष्टि से समितियां सम्पूर्ण सदन के अधीनस्थ है। उनकी शक्ति इतनी नही है कि वे विधेयको को जीवित रख सकें या उन्हे समाप्त कर सकें। सशोधनो की सफाई करने के लिये वे नीचे काम करने वाली सहायक परिचारिकायें हैं और उनका कार्य पूर्व निर्मित विधयक के द्वितीय वाचन, अपने प्रतिवेदन तथा विधेयक के तृतीय वाचन (जब उनके कार्य का पुनरावलोकन होता है) तक ही सीमित है।'

विधि निर्माण प्रक्रिया
(Legislative Process)

ब्रिटिश साम्राज्य के लिए कानूनो का निर्माण ससद का सबसे प्रमुख कार्य है। ससद देश के लिये व्यवस्थापन करती है जिसको देश की कार्यकारिणी क्रियान्वित करती है। ब्रिटेन की विधि निर्माण–प्रणाली का, जो अत्यन्त वैज्ञानिक रूप मे व्यवस्थित है लगभग सम्पूर्ण विश्व के विधान मण्डलो पर प्रभाव पड़ा है।

विधेयकों के प्रकार

ब्रिटिश विधेयको के विभिन्न प्रकार अग्रिम पृष्ठ की तालिका से स्पष्ट है—



प्रकट है कि समस्त विधेयक जिन्हें संसद प्राप्त करती है, स्थूल रूप में दो प्रकार के होते हैं—प्रथम, सार्वजनिक विधेयक और द्वितीय प्राइवेट या असार्वजनिक या व्यक्तिगत विधेयक। इन दोनों प्रकार के विधेयकों में अन्तर को समझ लेना चाहिए।

सार्वजनिक विधेयक—सार्वजनिक विधेयक वे होते हैं जिनका सम्बन्ध देश की सम्पूर्ण जनता से या जनता के बहुत बड़े भाग से हो। उदाहरणार्थ, जनता पर कर लगाने वाले विधेयक, प्रशासकीय विभाग को प्रारम्भ करने वाला विधेयक, मताधिकार सम्बन्धी विधेयक, अनिवार्य शिक्षा सम्बन्धी विधेयक आदि। ऐसे विधेयकों का *उद्देश्य किसी सार्वजनिक हित की साधना होता है।*

इन सार्वजनिक विधेयकों के पुनः दो प्रमुख भेद होते हैं—गैर सरकारी सदस्यों के विधेयक (Private member s Bills) एवं सरकारी विधेयक (Govern ment Bills)। जब कोई सार्वजनिक विधेयक प्राइवेट अर्थात व्यक्तिगत या गैर सरकारी सदस्य द्वारा रखा जाता है तो उसे गैर सरकारी सदस्यों का विधेयक कहा जाता है। इस प्रकार के विधेयकों का सरकारी सहयोग के अभाव में पारित होना बड़ा ही कठिन होता है। जब सार्वजनिक विधेयकों को सरकार द्वारा अर्थात मन्त्रिमण्डल के सदस्य द्वारा प्रस्तावित किया जाता है तो उन्हें सरकारी विधेयक कहा जाता है। इन विधेयकों को संसद से पारित कराना सरकार का उत्तरदायित्व होता है। सदन का अधिकांश समय इन्हीं विधेयकों को पारित करने में व्यतीत होता है।

सरकारी विधेयक भी दो श्रेणी में रखे जा सकते हैं—प्रथम वित्त विधेयक *और द्वितीय साधारण अथवा अवित्तीय* विधेयक। वित्त विधेयक मन्त्रिमण्डल के सदस्य द्वारा राजा की सिफारिश पर लोकसभा में प्रस्तावित किए जाते हैं। इन्हें लार्ड सभा में प्रस्तावित नहीं किया जा सकता। कौन सा विधेयक वित्त विधेयक

है और कौन सा नहीं, इसका निर्णय अध्यक्ष (Speaker) करता है। वित्त विधेयकों को छोड़कर जो अन्य सार्वजनिक विधेयक सरकार द्वारा प्रस्तावित होते हैं, वे अवित्त या साधारण विधेयक कहलाते हैं।

व्यक्तिगत या असार्वजनिक विधेयक—ये वे विधेयक हैं जिनका सम्बन्ध सम्पूर्ण देश की जनता से न होकर किसी स्थान विशेष की जनता से अथवा किसी संस्थान या संस्था से होता है और जो जनता के साम्पत्तिक अधिकारों में हस्तक्षेप नहीं करते। उदाहरणार्थ वह विधेयक जो किसी नगरपालिका या निगम से सम्बन्धित हो या विशेष प्रकार के मजदूरों के हितों के लिए हो या किसी विशेष स्थान पर सुधार योजना के लिए हो, व्यक्तिगत या असार्वजनिक विधेयक (Private Bill) कहलाता है। ऐसे विधेयक प्रायः नगरपालिकाओं और नगर-निगमों जैसी स्थानीय संस्थाओं द्वारा प्रार्थना पत्रों के माध्यम से प्रस्तुत किए जाते हैं। इनके पारित होने की भी उस समय तक उक्त कम सम्भावना रहती है जब तक कि सरकार उनका समर्थन नहीं करे। स्मरणीय है कि व्यक्तिगत सदस्यों के विधेयकों (Private Member s Bills) तथा व्यक्तिगत विधेयकों (Private Bills) में बहुत अन्तर है। व्यक्तिगत सदस्यों के विधेयक और सरकारी विधेयक सार्वजनिक विधेयकों के अन्तर्गत आते हैं जिनका प्रभाव सम्पूर्ण देश पर पड़ता है। इन विधेयकों के पारित होने के लिए संसद में एक भिन्न प्रक्रिया को अपनाया जाता है। व्यक्तिगत विधेयकों का सम्बन्ध सार्वजनिक हित से न होकर विशिष्ट हित से होता है। ये विधेयक न तो मन्त्रियों द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं और न साधारण संसद सदस्यों द्वारा, वरन प्रायः स्थानीय संस्थाओं द्वारा प्रार्थना पत्र भेजकर प्रस्तुत किये जाते हैं। इनको पारित करने के लिये संसद् में सार्वजनिक विधि निर्माण प्रक्रिया से भिन्न प्रक्रिया अपनायी जाती है।

सार्वजनिक विधेयकों (वित्त विधेयकों को छोड़कर) से
सम्बन्धित विधि निर्माण प्रक्रिया

इन विधेयकों की विधि निर्माण प्रक्रिया क्रमशः निम्नलिखित स्तरों (Stages) में पूरी होती है।

प्रस्तुतीकरण एवं प्रथम वाचन—सिद्धान्ततः ये दोनों बातें भिन्न-भिन्न हैं किन्तु ब्रिटेन में विधेयक का प्रस्तुतीकरण तथा प्रथम वाचन एक साथ ही होता है।

कोई भी सार्वजनिक विधेयक सैद्धान्तिक रूप में किसी भी संसद् सदस्य द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है, परन्तु व्यवहार में सभी महत्वपूर्ण सार्वजनिक विधेयक सरकार की ओर से किसी न किसी मन्त्री द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं। वित्त विधेयक अनिवार्यतः वित्त मन्त्री द्वारा ही प्रस्तुत होता है, और वह भी लोकसभा में ही। अन्य विधेयक संसद् के दोनों सदनों में से किसी भी सदन में प्रस्तावित किये जा सकते हैं। परन्तु महत्वपूर्ण विधेयकों को प्रायः लोकसभा में ही प्रस्तावित करने का चलन है।

विधेयकों को प्रस्तुत करने की तीन विधियां प्रचलित हैं—

(i) साधारण प्रस्तुतीकरण (Dummy Introduction),

(ii) दस मिनट के नियम का प्रस्तुतीकरण (Introduction under the Ten Minutes Rule), एवं

(iii) विधेयक की व्यवस्था पर प्रकाश डालने वाला प्रस्तुतीकरण (Introduction under the leave to introduce provision)

साधारण प्रस्तुतीकरण के अन्तर्गत विधेयक के प्रस्तावक को विधेयक प्रस्तुत करने से पूर्व कोई भाषण नहीं देना पड़ता। वह केवल विधेयक को प्रस्तुत करने की लिखित सूचना सदन के लिपिक (Clerk of the House) को दे देता है। तत्पश्चात अध्यक्ष विधेयक को विधिवत् प्रस्तुत करने के लिये उसे बुलाता है। वह आकर अपने विधेयक को सदन के लिपिक के पास जमा करा देता है और वह स्वयं अथवा लिपिक विधेयक के शीर्षक को पढ़ देता है। इस प्रकार विधेयक के प्रस्तुतीकरण की क्रिया पूरी हो जाती है। तत्पश्चात यह प्रस्ताव किया जाता है कि विधेयक को पहली बार पढ़ा हुआ (First Reading) समझा जाय और उसे छपवाने की आज्ञा दी जाय। सामान्यतः यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाता है और इस तरह विधेयक का प्रस्तुतीकरण एवं प्रथम वाचन समाप्त हो जाता है।

दस मिनट के नियम के प्रस्तुतीकरण का प्रयोग सरकार द्वारा विवादपूर्ण और महत्व के विधेयकों के लिये किया जाता है। प्रस्तावक की ओर विपक्ष के एक सदस्य को थोड़े-थोड़े समय में यह अवसर दिया जाता है कि प्रस्तावक विधेयक का उद्देश्य और उसका महत्व तथा विपक्ष उसकी आलोचना संक्षेप में सदन के सम्मुख प्रकट करें। तत्पश्चात यह प्रस्ताव रखा जाता है कि विधेयक का प्रथम वाचन पूरा समझा जाय और उसे छपवाने की आज्ञा प्रदान की जाय। इस प्रस्ताव के स्वीकार होने पर विधेयक का प्रस्तुतीकरण और प्रथम वाचन समाप्त हो जाता है।

विधेयक की व्यवस्था पर प्रकाश डालने वाले प्रस्तुतीकरण के अन्तर्गत प्रस्तावक अपने विधेयक के सिद्धान्तों और उनके लाभों को बतलाते हुए एक लम्बा भाषण देता है और यह प्रस्ताव रखता है कि सदन में विधेयक को प्रस्तुत करने की अनुमति दी जाय। विरोध करने वाले सदस्य प्रस्तावित विधेयक के सिद्धान्तों के दोषों को सदन के सम्मुख प्रकट करते हुए इस प्रस्ताव का विरोध करते हैं कि विधेयक को सदन में प्रस्तुत करने की अनुमति दी जाय। अतः में मतदान द्वारा निर्णय किया जाता है। यदि सदन का निर्णय प्रस्ताव के पक्ष में होता है तो सदन के समक्ष यह प्रस्तावित किया जाता है कि विधेयक का प्रथम वाचन (First Reading) पूरा समझा जाय और उसे छपवाया जाय। अधिक समय लगने के कारण इस विधि का अब प्रायः प्रयोग नहीं किया जाता।

द्वितीय वाचन—प्रथम वाचन के पश्चात जब विधेयक छप जाता है, तब वह सूची (Calender) पर आ जाता है। विधयक के दूसरे वाचन के लिये एक तारीख निश्चित कर दी जाती है। इस तारीख को प्रस्तावक यह प्रस्ताव करता है कि विधेयक को दूसरी बार पढा जाय।

द्वितीय वाचन (Second Reading) के समय विधयक पर वास्तविक वाद विवाद होता है। यह विधयक के जीवन-मरण का सग्राम होता है। इस वाचन म विधेयक के शीर्षक, उद्देश्य, प्रयोजन और सिद्धान्तो आदि पर खुल कर वाद विवाद किया जाता है। विधेयक के सिद्धान्त, और उनकी अच्छाइयो एव बुराइयो पर पूर्ण विचार किया जाता है। इस अवस्था मे कोई सशोधन नही हो सकता है। सदन सम्पूर्ण विधयक को स्वीकृत या अस्वीकृत कर देता है। यदि विधयक किसी मत्री द्वारा प्रस्तावित हो तो उसके अस्वीकृत हो जाने का तात्पर्य यह माना जाता है कि सदन का मत्रिमण्डल पर विश्वास नही रह गया है। परन्तु ऐसे अवसर प्राय बहुत ही कम आते हैं। द्वितीय वाचन के समय बहुमत की पूरी शक्ति इस बात पर केन्द्रित हो जाती है कि सरकारी पक्ष की हार न हो पाये। फिर भी सरकार विपक्ष की वजनदार आलोचना से प्रभावित अवश्य होती है और जिन सशोधनो को उचित समझती है, स्वय स्वीकार कर लेती है।

द्वितीय वाचन म विधेयक को अस्वीकार करने के लिये प्राय दो ढग प्रयोग मे लाये जाते हैं—प्रथम, सीधे तौर पर यह प्रस्ताव रख दिया जाता है कि अमुक विधेयक सिद्धान्त रूप से दोषपूर्ण है, अत उसे कानून न बनाया जाय, द्वितीय, विधेयक का प्रस्तावक जब यह प्रस्ताव करे कि विधेयक का दूसरा वाचन हो, तो विरोधी पक्ष की ओर से विधेयक को इतने समय बाद दूसरी बार पढने का सशोधन रख दिया जाय कि ससद का सत्र ही समाप्त हो जाए। यह विधेयक को नम्रतापूर्ण ढग से अस्वीकार करने की विधि है, जिसके द्वारा विधेयक स्पष्टत अस्वीकार भी नही किया जाता और समाप्त भी हो जाता है।

गैर सरकारी सदस्यो द्वारा प्रस्तुत विधेयक प्राय द्वितीय वाचन की स्थिति मे समाप्त हो जाते है। यदि उन्हे सरकारी समर्थन प्राप्त हो जाय तो बात अलग है।

समिति स्तर—द्वितीय वाचन के बाद विधेयक किसी समिति के सुपुर्द किया जाता है। यदि वह वित्त-विधेयक है तो सम्पूर्ण सदन की समिति मे भेजा जाता है, अन्यथा शेष सभी विधेयको को प्राय स्थायी समितियो मे से किसी एक मे अध्यक्ष द्वारा भेज दिया जाता है। कभी कभी विधेयक को किसी विशिष्ट समिति (Select Committee) को भी दे दिया जाता है और वहा से लौटने पर या तो सम्पूर्ण सदन की समिति मे या किसी स्थायी समिति मे जाता है।

समिति स्तर का भी विधेयक के जीवन म बडा महत्व है। समिति मे विधेयक के अग-प्रत्यग पर विचार किया जाता है और इसकी धाराओ व

विधयक पहले लोकसभा मे ही प्रस्तुत किये जाते हैं अत वहा विचार होने के उपरा त पुन लाड सभा मे भेज दिये जाते है। सदन का लिपिक विधेयक को दूसरे सदन मे ले जाता है। दूसर सदन म भी फिर वही सब स्तर प्रथम वाचन, द्वितीय वाचन, समिति स्तर, प्रतिवेदन स्तर तथा तृतीय वाचन दोहराये जाते हैं। अन्तर केवल इतना होता है कि लार्ड सभा मे समिति स्तर पर स्थायी समितियो और विशिष्ट समितियो का प्रयोग नही किया जाता, वरन सम्पूर्ण सदन की समिति का प्रयोग होता है। यदि लाड सभा विधेयक को स्वीकार कर लेती है, तो वह हस्ताक्षर के लिये राजा के पास भेज दिया जाता है, यदि वह विधेयक से असहमत होती है और उसमे सशोधन कर देती है तो विधेयक पुन लोकसभा मे लौट आता है। लोकसभा मे लिपिक (Clerk) प्रत्येक सशोधन को पढता है और मन्त्री उसके साथ, प्रस्ताव को स्वीकृत या अस्वीकृत किया जाय, इस आशय का प्रस्ताव रखता है। यदि प्रस्तावित सशोधनो को स्वीकार कर लिया जाता है तो विधेयक राजा की स्वीकृति के लिये भेज दिया जाता है। यदि दोनो सदनो मे मतभेद विद्यमान रहते हैं तो उन्हे दूर करने के लिये दो विधियाँ प्रयुक्त की जाती है—

(1) दोनो सदन के कुछ प्रतिनिधि, जो प्रबन्धक (Managers) कहलाते हैं अपने सम्मेलन द्वारा मतभेदो को समाप्त करने का प्रयास करते हैं। इस सम्मेलन मे लोकसभा के प्रबन्धको की सख्या लाड सभा के प्रबन्धको की सख्या की दुगुनी होती है। यह सम्मेलन स्वतन्त्र (Free) और अन्तरग (Closed) दोनो प्रकार का हो सकता है। स्वतन्त्र सम्मेलन मे प्रबन्धक मतभेदो के आधारो को मौखिक रूप से प्रस्तुत करके उनके पक्ष मे विस्तारपूर्वक विचार प्रकट कर सकते हैं। यद्यपि मतभेदो को सुलझाने का यह एक अच्छा ढग है, किन्तु 1836 से इसका प्रयोग नहीं हुआ है। अन्तरग सम्मेलन मे मतभेद के आधारो को एक लिखित बयान के रूप मे विरोधी सदन के प्रबन्धको द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रथा का प्रारम्भ सन 1851 मे हुआ था। इस उपाय से दोनो सदन अपने मतभेदो को लिखित सन्देशो द्वारा दूर कर सकते हैं।

(2) यदि उक्त ढगो से भी दोनो सदनों के मतभेद समाप्त न हो तो सन 1949 मे सशोधित 1911 के ससदीय अधिनियम के उपबन्धो के अनुसार "कार्यवाही करके लोकसभा विधेयक को पारित करा सकती है, जिसके अनुसार लार्ड सभा लोकसभा द्वारा पारित विधयक को अधिक से अधिक एक साल विलवित कर सकती है और उसके बाद राजा के हस्ताक्षर म विधेयक स्वत कानून बन जाता है।"

राजा की स्वीकृति—विधेयक के जीवन का अन्तिम स्तर राजकीय स्वीकृति (Royal–Assent) का होता है। यह स्तर केवल औपचारिक है। विधयक इस अन्तिम अवस्था मे राजा की स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किए जाते हैं और अध्यक्ष की उपस्थिति मे उनके शीर्षक लार्ड-सभा मे पढे जाते हैं। राजा के प्रतिनिधि द्वारा

घोषणा की जाती है कि "राजा ऐसा चाहते हैं।" और इस तरह राजकीय स्वीकृति का काम समाप्त हो जाता है तथा विधेयक कानून बन जाता है एवं उसे संविधि पुस्तक (Statute Book) में लिख दिया जाता है।

व्यक्तिगत सदस्यों के प्रस्तावों और विधेयकों से सम्बन्धित प्रक्रिया की विशेषताएं

कुछ सार्वजनिक विधेयक साधारण सदस्यों द्वारा अर्थात् गैर सरकारी या व्यक्तिगत सदस्यों द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं। इन पर विचार शुक्रवार को ही होता है। सदस्यगण अपने पर्चे लिपिक (Clerk) की सन्दूक में, जो मेज पर रखा रहता है, डाल देते हैं। लिपिक उन पर्चों का एक-एक करके खींचता है। जिसका पर्चा पहले खिंच आता है वही सदस्य अपना विधेयक सत्र के पहले शुक्रवार को प्रस्तुत करता है, दूसरे पर्चे वाला दूसरे शुक्रवार को और तीसरा तीसरे शुक्रवार को आदि। इस प्रकार लगभग सब शुक्रवार गैर-सरकारी सदस्यों (Private Members) के विधेयकों हेतु काम में आते हैं। स्पष्ट है कि इन सदस्यों के प्रस्तावों और विधेयकों के लिए संसद के कार्यक्रम में बहुत कम समय मिलता है। व्यक्तिगत सदस्यों के विधेयक ऐसे नहीं हो सकते जो सार्वजनिक धन के व्यय से सम्बन्धित हों।

असार्वजनिक (व्यक्तिगत) विधेयकों से सम्बन्धित विधि निर्माण प्रक्रिया

व्यक्तिगत विधेयक प्रायः नगरपालिकाओं और नगर निगमों जैसी स्थानीय संस्थाओं द्वारा प्रार्थना पत्रों के माध्यम से प्रस्तुत किए जाते हैं और इनका सम्बन्ध सार्वजनिक हित साधन से न होकर विशिष्ट हित साधन से होता है। व्यक्तिगत विधेयक का उद्देश्य किसी व्यक्ति को कोई निवृत्ति का अथवा अधिकार देना हो सकता है, या किसी स्थानीय संस्था को कोई कार्य करने की स्वीकृति देना हो सकता है, बशर्ते कि वह किसी व्यक्ति के सार्वजनिक या व्यक्तिगत अधिकारों में हस्तक्षेप न करे।

इन विधेयकों के पारित होने की निम्नलिखित प्रक्रियाएँ हैं—

(1) प्रत्येक विधेयक किसी भी सदन में प्रस्तुत किया जा सकता है और यह प्रायः संसद् के बाहर से व्यक्तियों अथवा संस्थाओं द्वारा भेजा जाता है।

(2) विधेयक प्रस्तावित करने के लिए मसविदे के साथ साथ एक याचना पत्र (Petition) भेजना अनिवार्य है। इसके भेजने से पूर्व उन व्यक्तियों को प्रकाशित सूचना देनी पड़ती है, जिनके निजी हितों पर इसका प्रभाव पड़ता हो। सूचना की प्रतिलिपि सम्बन्धित सरकारी विभाग को भेजनी पड़ती है। यह सब कार्यवाही करने से पूर्व विधेयक पर किसी प्रकार का विचार करना सम्भव नहीं होता।

विधेयक का प्रस्तुतीकरण चाहने वाला उतनी धन-राशि सरकारी कोष मे जमा करा देता है जितनी उसमे व्यय होने की सम्भावना हो।

(3) विधेयक से सम्बन्धित याचिका पर संसद् के दोनो सदनो के एक एक अधिकारी–जिन्हें 'असार्वजनिक विधेयको के प्रार्थना-पत्र का परीक्षक' (Examiner of Petition of Private Bills) कहते हैं—द्वारा देखा जाता है और उन विधेयक की तत्सम्बन्धी आवश्यकताओ की पूर्ति पर उनके द्वारा विचार किया जाता है। परीक्षक द्वारा प्रस्तावित विधेयक को नियमानुसार प्रमाणित कर देने के बाद विधेयक को संसद् के किसी भी सदन में प्रस्तुत कर दिया जाता है और उसका प्रथम वाचन हो जाता है।

(4) द्वितीय वाचन में विधेयक के सिद्धान्तो पर विस्तारपूर्वक विवाद होता है और यदि विधेयक बिना किसी विरोध के पारित हो जाता है तो उसे 'निर्विरोध विधेयको की समिति' (Committee of Unopposed Bills) में भेज दिया जाता है। यह समिति विधेयक की धाराओ पर विस्तार से विचार करती है और अपने प्रतिवेदन के साथ उसे सदन को लौटा देती है।

यदि द्वितीय वाचन मे विधेयक का विरोध होता है तो उसको व्यक्तिगत विधेयको की विभिन्न समितियो म से किसी एक समिति के सुपुर्द कर दिया जाता है। समिति विधेयक के विषय मे न्यायिक जाच (Judicial Enquiry) करती है। समिति अपनी जाच केवल विधेयक की प्रस्तावना (Preamble) तक ही सीमित रखती है और विधेयक के सिद्धान्तो पर ही पक्ष-विपक्ष के तर्कों को सुनती है। यदि समिति विधेयक को कानून बनाने के अयोग्य समझती है तो वह समाप्त समझा जाता है, किन्तु यदि समिति विधेयक सम्बन्धी सब बातों से सन्तुष्ट हो जाती है तो वह, विधेयक की धाराओ पर विस्तारपूर्वक विचार करने के उपरान्त, अपने प्रतिवेदन के साथ उसे सदन को वापस भेज देती है।

इसके बाद प्रतिवेदन स्तर पर द्वितीय वाचन व्यक्तिगत विधेयकों का उसी तरह होता है, जिस तरह सार्वजनिक विधेयको का। जिस विधेयक के पक्ष में समिति अपना प्रतिवेदन दे देती है, वह सदन म प्राय बिना किसी वाद विवाद के पारित हो जाता है। एक सदन से स्वीकृत होने के बाद दूसरे सदन म भेज दिया जाता है जहा भी प्राय इसे स्वीकार कर लिया जाता है। तत्पश्चात् राजकीय स्वीकृति के बाद वह कानून बन जाता है।

वित्त विधेयको से सम्बन्धित विधि निर्माण प्रक्रिया

वित्त विधेयक वे विधेयक होते हैं जिनका सम्बन्ध करो के आरोपण, परिवर्तन या रद्द करने से, और सार्वजनिक कोषो के नियोजन (Appropriation of the Public Funds) से होता है। वित्त विधेयको की एक विशिष्ट स्थिति होती है और ये अनिवार्यत लोकसभा मे ही प्रस्तावित किए जाते हैं। लोकसभा वित्त विधेयको को संशोधित या अस्वीकृत कर सकती है, किन्तु जब अनुदान के

लिए माग की जाए तब वह प्रार्थित राशि को कम या अस्वीकार तो कर सकती है, पर उसे बढ़ा नही सकती। वित्त विधेयकों पर लार्ड सभा का कोई वश नही होता। वित्त विधेयक लोकसभा मे उस समय तक प्रस्तावित नही किए जा सकते जब तक उन पर इस सम्बन्ध मे सम्राट की स्वीकृति प्राप्त न कर ली गई हो। इस तरह लोकसभा आय व्यय के चिट्ठे (Budget) की पूरी जाच करती है और वित्तीय नीति पर पूरा-पूरा नियन्त्रण रखती हैं।

वित्त विधेयकों की विधि निर्माण सम्बन्धी प्रक्रिया निम्न प्रकार से है—

(क) सभी वित्त-विधेयक राजा या रानी की सिफारिश पर सरकार की ओर से साधारणत वित्त मन्त्री के द्वारा लोकसभा मे प्रस्तुत किए जाते हैं।

(ख) द्वितीय वाचन मे सिद्धान्तो के स्वीकार होने के उपरान्त वित्त विधेयक सम्पूर्ण सदन की समिति (Committee of the Whole House) में विचारार्थ प्रस्तुत होते हैं। सम्पूर्ण सदन की समिति मे वित्तमन्त्री विधेयक के सम्बन्ध मे भाषण देता है और विधेयक पर वाद विवाद होता है। जब सम्पूर्ण सदन की समिति विधेयक के व्यय से सम्बन्धित भाग पर विचार करती है तब वह सम्भरण समिति (Committee of Supply) कहलाती है, और जब वह विधेयक के आय के साधनों से सम्बन्धित भाग पर विचार करती है, तब उसे अर्थोपाय या साधन समिति (Committee of Ways and Means) कहा जाता है।

(ग) वित्त विधेयक भी विधि निर्माण-प्रक्रिया की उन समस्त सीढ़ियों को पार करता है जो सार्वजनिक विधेयकों के लिए वर्णित की गई हैं।

(घ) लोकसभा से पारित होने के बाद वित्त विधेयक लार्ड-सभा मे जाते हैं जो उन्हें पारित करने मे अधिक से अधिक एक माह की देर कर सकती है। इस अवधि में लार्ड सभा यदि विधेयक को पारित नहीं करती तो भी विधेयक सम्राट या साम्राज्ञी के पास भेज दिया जाता है और उसके हस्ताक्षर होकर अधिनियम का रूप धारण कर लेता है।

अस्थायी आदेश

(Provisional Orders)

असार्वजनिक अथवा व्यक्तिगत विधेयकों के विधि निर्माण प्रणाली के दोषों को अस्थायी आदेश (Provisional Orders) द्वारा दूर करने का प्रयत्न किया गया है। ससद् विभिन्न सरकारी विभागों को यह अधिकार दे देती है कि व व्यक्तिगत हितों की पूर्ति अस्थायी आदेश जारी करके करते रहें ताकि लोगों को ससद का साधिकार भजन की आवश्यकता न पड़े। व्यक्तिगत हितों से सम्बन्धित लोग अपने प्रार्थना पत्र सम्बन्धित विभाग को देते हैं जिनमे यह बतलाया जाता है कि किस प्रकार से अस्थायी आदेश द्वारा उनकी आवश्यकता पूरी हो सकती है। आवश्यक जाच

पडताल के बाद विभाग आदेश जारी कर देते हैं जिन्हे बाद मे ससद् द्वारा स्वीकृत किया जाता है। जब अस्थायी आदेशों की सख्या पर्याप्त हो जाती है तो उन्हे एकत्र करके एक विधेयक के रूप मे विभागीय मन्त्री ससद् के सम्मुख प्रस्तुत कर देता है। इस विधेयक के पारित होने की प्रक्रिया व्यक्तिगत विधेयको जैसी होती है। प्रस्तुतीकरण और प्रथम वाचन के बाद द्वितीय वाचन होता है। तत्पश्चात उसे अर्थात् पुष्टिकरण विधेयक (Confirmation Bill) को निर्विरोध विधेयको की समिति के सुपुर्द कर दिया जाता है। समिति आवश्यक विचार विमर्श के बाद अपने प्रतिवेदन सहित विधेयक को ससद को लौटा देती है और तब सार्वजनिक विधेयक की प्रक्रिया द्वारा वह पारित कर दिया जाता है।

अस्थायी आदेश प्राय छ प्रकार के निकाले जाते ह। प्रथम, कुछ आदेशो को प्रभावी होने के लिये ससद् की स्वीकृति की आवश्यकता नही पडती। द्वितीय कुछ आदेश शुरू से ही प्रभावी हो जाते ह, परन्तु उन्ह ससद के समक्ष प्रस्तुत करना आवश्यक है। तृतीय, कुछ आदेश ऐसे ह जिन्ह प्रभावी बनाने के लिये 40 दिन पूर्व ससद के दोनो सदनो के सम्मुख लाना आवश्यक होता है। पचम, कुछ आदेश केवल तभी तक प्रभावी रहते हैं जब तक कोई बाहरी निकाय अपरित न कर। अन्तिम, कुछ आदेश हर हालत मे अस्थायी होते हैं और तब तक प्रभावी नही बनते जब तक वे अस्थायी आदेश पुष्टिकरण अधिनियम (Provisional Orders Confirmation Act) का अग बनकर ससद द्वारा पारित न हो जाय।

प्रदत्त व्यवस्थापन

(Delegated Legislation)

प्रदत्त व्यवस्थापन वे नियम और विनियम ह जिनका प्रभाव विधियो के समान होता है और जिन्ह ससद के दिये हुए अधिकार के आधार पर प्रशासनिक विभाग जारी करते ह। इनको प्रकारान्तर से सविधिगत आदेश (Statutory Instruments) कहा जा सकता है।

इगलैण्ड मे पहले जब प्रशासनिक क्रिया कलाप बहुत सीमित थे तो विधान-मण्डल सवसाधारण के प्रतिनिधियो द्वारा विधियां बनाते थे और विभागीय अधिकारी उन्ह लागू करते थे। इस तरह उस समय विधान मण्डल तथा प्रशासन के मध्य अधिकार क्षेत्र सम्बन्धी स्पष्ट विभाजन रेखा थी। शनै शनै प्रशासनिक कार्यों और सार्वजनिक समस्याओ म वृद्धि होती रही। आज स्थिति यह है कि ससद पर व्यवस्थापन सम्बन्धी विशाल-काय-भार आ पडा है। ससद् के पास प्राय इतना समय नही बचता है कि वह विभिन्न प्रकार के विधेयको पर पूरी तरह विचार कर सके। इसके अलावा ससद सदस्यो म इतनी प्राविधिक योग्यता भी नही होती कि वे विधेयकों पर आवश्यक सूक्ष्मता के साथ विचार करें।

इन कठिनाइयो के कारण अब बहुत कुछ विधि निर्माण शक्ति व्यवस्थापिका के

हाथों से खिसक कर कार्यकारिणी के हाथों में आ गयी है। आधुनिक काल में संसद् बहुत ही साधारण शब्दों में (In general terms) कानून पास कर देती है और उनके स्पष्टीकरण का काम कार्यकारिणी के कंधों पर आ पड़ता है, जिसे मन्त्रिगण प्रशासकीय अधिकारियों पर छोड़ देते हैं। इस तरह विभागों को यह छूट मिल जाती है कि वे विधि के सम्बन्ध में आवश्यक विनियम पास करें जिनका प्रभाव भी विधियों के समान ही होता है। सारांश यह हुआ कि आज संसद् द्वारा व्यवस्थापन सम्बन्धी अपने अधिकार एक बड़ी सीमा तक प्रशासनिक विभागों को सौंप दिये गये हैं। यही प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated Legislation) है।

ब्रिटेन में प्रदत्त व्यवस्थापन की प्रगति

प्रदत्त व्यवस्थापन की प्रवृत्ति संसदीय कार्यों के विकास के साथ साथ बढ़ती ही जा रही है। 17वीं और 18वीं सदियों में यह प्रवृत्ति बहुत कम थी किन्तु विशेषतया 1832 के बाद से कार्यपालिका विभागों को व्यवस्थापन की शक्तियां देने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। डा० जेनिंग्स के अनुसार ज्यों ज्यों समूहवाद (Collectivism) के विकास के कारण सरकारी शक्ति बढ़ती जाती है त्यों-त्यों प्रदत्त कानूनों की संख्या में भी वृद्धि होती जाती है। सन 1906 से केन्द्रीय सरकार को अनेक प्रत्यक्ष प्रशासकीय कार्य दे दिये जाने के बाद में विभागों द्वारा निर्मित नियमों और व्यवस्थाओं की संख्या बहुत ही बढ़ गयी है।

प्रदत्त व्यवस्थापन की बढ़ती हुई प्रवृत्ति का अनुमान इसी एक तथ्य से लगाया जा सकता है कि 1927 में संसद ने तो केवल 43 सविधियां (Statutes) पास की थी, लेकिन विभागों ने 1949 आदेश जारी किये थे। 1970 में तो यह प्रवृत्ति 1927 की तुलना में बहुत ही अधिक जोर पकड़े हुए है। प्रदत्त व्यवस्थापन के महत्व पर टिप्पणी करते हुए सेसिल टी कार (Cecil T Carr) ने लिखा है कि 'कानून की किताब उस वक्त तक अधूरी ही नहीं, भ्रमात्मक भी होती है जब तक कि उस प्रदत्त विधान के साथ मिलाकर न पढ़ा जाए, जिसके द्वारा उसका बहुत कुछ विस्तार और संशोधन हो जाता है।"

प्रदत्त व्यवस्थापन पर आवश्यक रोक

प्रशासकीय विभाग कानूनी सीमा के अन्तर्गत ही आदेश जारी कर सकते हैं। वे कानून को इस प्रकार तोड़ मरोड़ नहीं सकते कि उसका प्रयोजन ही समाप्त हो जाय। नागरिकों को कानून विरोधी किसी भी आदेश के विरुद्ध अपील करने का अधिकार होता है। न्यायालय ऐसे आदेश को अपने निर्णय के अनुसार अवैध घोषित कर सकते हैं। संसद-सदस्य भी सदन में ऐसे आदेशों की धज्जियां उड़ा सकते हैं। संसद् उस आदेश को समाप्त कर सकती है।

प्रदत्त व्यवस्थापन के कारण

(1) विधि-निर्माण का काम इतना बढ़ गया है कि समयाभाव के कारण संसद् उसे ठीक ढंग से निभा नहीं पाती।

(2) संसद के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह दिन प्रतिदिन की प्रशासकीय बारीकियों का पूर्ण ज्ञान रख सके।

(3) विभागीय अधिकारी ससद सदस्यों की तुलना में कानून की बारीकियों को समझने में अधिक दक्ष होते हैं।

(4) जनता की इच्छानुसार ससद नीति की रूप रेखा तो भली प्रकार बना सकती है किन्तु उनसे सम्बन्धित गूढ बातों का समझ कर आवश्यक आदेश प्रशासकीय विभाग ही जारी कर सकते हैं।

(5) ससद का अधिवेशन हर समय नहीं होता, अत आवश्यकता होने पर कार्यपालिका अपने ही उत्तरदायित्व पर नियम बना देती है और आदेश जारी कर देती है।

प्रदत्त व्यवस्थापन की आलोचना और मूल्यांकन

अनेक विद्वानों ने प्रदत्त व्यवस्थापन की निम्न आधारों पर आलोचना की है—

(1) प्रदत्त व्यवस्थापन ससद की सर्वोच्च शक्ति पर आघात करने वाला है।

(2) इस व्यवस्था द्वारा नौकरशाही की शक्ति का तेजी से विस्तार हो रहा है। यह 'नई निरकुशता' (New Despotism) है जिसके अधीन विभाग अपनी शक्ति का दुरुपयोग बड़ी सरलता से कर सकते हैं।

ऑग (Ogg) की मान्यता है कि "प्रदत्त व्यवस्थापन के विरोध का कोई मूल्य नहीं है क्योंकि जिस समय इस पर विचार करना आरम्भ किया जाता है, वह उसी समय समाप्त हो जाता है।"

समर्थकों का कहना है कि—

(1) इस व्यवस्था के कारण ससद को इतना समय मिल सकता है कि वह विधेयक के उद्देश्यों और सिद्धान्तों पर पूरा विचार-विमर्श कर सके।

(2) प्रदत्त व्यवस्थापन द्वारा अज्ञात भविष्य की परिस्थितियों के अनुसार ठीक समय पर जरूरत के मुताबिक कानून में, बिना किसी संशोधन के, काम चलाने की शक्ति मिल जाती है।

(3) प्रदत्त विधान द्वारा नये परीक्षण करने और उनसे प्राप्त अनुभवों से लाभ उठाने का अवसर मिलता है।

(4) तत्काल और आकस्मिक आवश्यकताओं के लिए आदेश जारी करने हेतु प्रदत्त विधान की व्यवस्था ही एकमात्र सुगम उपाय है।

(5) ससद में कानून प्राय जल्दबाजी में पास किये जाते हैं, अत असन्तोष-जनक रहते हैं। परन्तु विभागों द्वारा नियम विनियम खूब सोच विचार कर तैयार किये जाते हैं जो अधिक बोधगम्य और तर्कसम्मत होते हैं।

इन्हीं कारणों से लास्की का मत है कि "प्रदत्त विधान एक ऐसी प्रारम्भिक प्रक्रिया सम्बन्धी सुविधा है जो एक विधयात्मक राज्य (Positive State) के लिए नितान्त आवश्यक है।



राजनीतिक दल
(POLITICAL PARTIES)

"राजनीतिक दल अनिवार्य हैं।
कोई भी बड़ा स्वतन्त्र देश उनके बिना
नहीं रहा है। किसी ने भी यह नहीं दिखाया
है कि उनके बिना प्रतिनिधि सरकार कैसे काम कर सकती है?"

—लार्ड ब्राइस

आज के प्रजातान्त्रिक युग में राजनीतिक दल अपरिहार्य हैं। यद्यपि सभी राजनीतिक दलों को कानून के अन्तर्गत राजकीय मान्यता प्राप्त नहीं होती और वे आवश्यक रूप से सरकार के अंग भी नहीं होते, तथापि लोकतन्त्रात्मक शासन के सफल संचालन के लिए उनका होना अनिवार्य है। आधुनिक युग प्रत्यक्ष अथवा प्रतिनिधि प्रजातन्त्र का युग है। आधुनिक प्रजातन्त्रीय राज्यों के लिए राजनीतिक दलों की आवश्यकता को कम नहीं किया जा सकता। अपने वर्तमान महत्व के कारण ही उन्हें 'प्रजातन्त्र का प्राण' और 'सरकार का चतुर्थ अंग' कहा गया है। वास्तव में प्रजातन्त्र के लिए राजनीतिक दल प्रेरक-शक्ति हैं। उनके अभाव में प्रजातान्त्रिक सरकार सफलता के साथ कार्य नहीं कर सकती।

प्रजातन्त्र में विभिन्न विरोधी दलों का अस्तित्व इसलिए भी आवश्यक है कि सत्तारूढ़ दल की विफलता के बाद सत्ता को सम्भालने के लिए वे आगे बढ़ आयें। प्रजातन्त्र में बहुमत दल शासन चलाता है और विरोधी दल उसकी रचनात्मक आलोचना करके उसे सचेत करता है। वह शासक दल का निरीक्षण करके जनता को एक दल की निरंकुशता से बचाता है। इस प्रकार विरोधी दलों की उपस्थिति वैयक्तिक स्वतन्त्रता की रक्षा में सहायक है।

किन्तु आधुनिक युग का [illegible] राष्ट्र है। वहाँ राजनीतिक

दल के महत्व को इंगित करते हुए लास्की ने कहा है "राजनीतिक दल देश में कैसरशाही (Caesarism) से हमारी रक्षा करने के सर्वोत्तम साधन हैं।'

ब्रिटिश दल प्रथा का विकास

(The Development of the British Party System)

ब्रिटिश प्रजातन्त्र को कार्यान्वित करने में राजनीतिक दलों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग रहा है। राजनीतिक दलों के विकास ने राजतन्त्र का लोकतन्त्रीकरण करने में बड़ी सहायता पहुँचायी है। पहले राजा ही सरकार होता था और राजा तथा उसके दरबारी मित्र सरकार चलाते थे। सरकार द्वारा किये जाने वाले अत्याचार राजा के अत्याचार माने जाते थे। पर समय के साथ लोग यह समझ गये कि अत्याचारों के लिए राजा नहीं बल्कि उसके दरबारी अधिक उत्तरदायी हैं, अतः दरबारियों को दण्ड देना उचित होगा। धीरे धीरे जनता में यह विचार बल पकड़ता गया कि राजा को बनाये रख कर भी सरकार को राष्ट्रीय संसद के प्रति उत्तरदायी बनाने की चेष्टा करनी चाहिए। फलस्वरूप विभिन्न राजनीतिक कार्यक्रमों के आधार पर शासन सत्ता अपने हाथ में लेने के प्रयत्नों के कारण विभिन्न राजनीतिक दल अस्तित्व में आये। कालान्तर में लोग यह अच्छी तरह समझ गये कि राजनीतिक दल संसद के माध्यम से राजा की सरकार पर वांछित नियन्त्रण रखने में और आवश्यकता पड़ने पर उसे बदलने में सक्षम हो सकते हैं।

धीरे-धीरे राजनीतिक दल केवल धनिकों की वस्तु नहीं रहे बल्कि जनसाधारण में लोकप्रिय हो गये और उनके राष्ट्र-व्यापी संगठन बन गये। लोक-हितकारी राजनीतिक कार्यक्रमों के आधार पर चुनाव लड़े जाने लगे और प्रत्येक दल का यह प्रयत्न रहने लगा कि वह जनता का अधिक से अधिक समर्थन प्राप्त करके संसदीय बहुमत पायें। ब्रिटेन में जिस प्रणाली का विकास हुआ, उसने जनता में अनेक दलों को पनपने का अवसर नहीं दिया। वरन् ब्रिटेन में सदैव दो ही दलों की प्रधानता रही, और यदि दो से अधिक दल हुए भी तो उनका प्रभाव नगण्य सा रहा। आज भी वहां अनुदार दल और श्रमिक दल ही सर्वोपरि हैं। शेष दलों का महत्व नहीं के बराबर है।

उल्लेखनीय है कि ब्रिटेन में राजनीतिक दल स्टुअर्ट राजाओं और उनकी संसदों के बीच हुए संवैधानिक संघर्ष से पैदा हुए। प्रारम्भ में दल इतने राजनीतिक नहीं थे, बल्कि उनका रूप दलबन्दी का सा था। उनके तरीके बड़े असभ्य और उग्र थे। ब्रिटेन में मध्यकालीन युगों में ये दल आपस में संसद् में ही नहीं, अपितु युद्ध क्षेत्रों में भी लड़ा करते थे। पहिला अवसर चार्ल्स प्रथम के शासन काल में गृह युद्ध (Civil War) 1641–1649 का था। राजा के समर्थक कैवेलियर कहलाते थे जबकि संसद् के समर्थक राउण्डहैड्स् (Roundheads) कहे जाते थे। पुनर्स्थापन (The Restoration) ने कुछ समय के लिए इन दोनों के परस्पर मतभेदों का

ग्रस्त कर दिया, किन्तु रक्तहीन क्रान्ति (Glorious revolution) ने इनको पनः चमका दिया। जो व्यक्ति कभी जेम्स द्वितीय का और उसके पुत्र का समर्थन करते थे, वह टोरी (Tories) कहा जाने लगा और जो रक्तहीन क्रान्ति तथा हनोवर घराने (House of Hanover) का समर्थन करते थे, उन्हें ह्विग (Whigs) कहा जाने लगा। टोरियों ने बहुत हद तक कैवेलियर की परम्पराओं का अनुसरण किया जबकि ह्विग राउण्डहैड्स के मतों पर चले। परन्तु इस अवधि में राजनीतिक दलों के दृष्टिकोण में एक विशेष परिवर्तन हुआ। अब दल सरकार बदलने के लिए राजा का बदलना जरूरी नहीं समझने लगे बल्कि वे संसद पर नियन्त्रण करने की कोशिश करने लगे।

कालान्तर में ह्विग और टोरियों ने अपनी प्रकृति बदल ली और उन्होंने लगभग विशुद्ध राजनीतिक आचरण अपना लिया। कालान्तर में इन दलों के नामों में परिवर्तन हुआ। ह्विग और टोरी का स्थान क्रमशः उदार या लिबरल (Liberal) और अनुदार या कंजरवेटिव (Conservative) ने ले लिया। 1830 के बाद कुछ विराम कालों को छोड़कर उदार दल 1874 तक पदारूढ़ रहा और उसके बाद कतिपय अवसरों को छोड़ कर 1905 तक अनुदार दल के हाथ में सत्ता रही।

इसी बीच सन 1832, 1867 और 1884 के सुधार अधिनियमों ने ब्रिटिश राजनीतिक जीवन में एक नवीन तत्त्व का प्रवेश किया। इन अधिनियमों ने मताधिकार को बहुत उदार बना दिया तथा निर्वाचन प्रणाली के अनेक दोषों को दूर कर दिया। और श्रमजीवी वर्ग (Labour Party) को मत देने का अधिकार मिल गया जिससे एक नवीन राजनीतिक व्यवस्था का जन्म हुआ। यह श्रमिक दल (Labour Party) का प्रारम्भ था जो 1902 में अस्तित्व में आई। प्रथम महायुद्ध के समाप्त होते तक उसने उदार दल का स्थान लेना शुरू कर दिया। 1966 के निर्वाचनों में जहाँ श्रमिक दल ने 363 व उसके विरोधी अनुदार दल ने 253 स्थान जीते, वहाँ उदार दल को संसद में केवल 12 स्थान मिले।

ब्रिटिश दल-प्रणाली की विशेषताएं

(Characteristics of British Party System)

द्वि-दल प्रथा—ब्रिटेन में प्रारम्भ से ही प्रवृत्ति द्वि-दल प्रणाली की ओर है। चार्ल्स प्रथम के समय कैवेलियर तथा राउण्डहैड नामक दो दल थे, तत्पश्चात् ह्विग और टोरी दल प्रमुख रहे। तत्पश्चात् उन्नीसवीं शताब्दी में अनुदार और उदारवादी दल प्रमुख रहे और आज अनुदार तथा श्रमिक दल की प्रधानता है। ब्रिटिश जनता का मत रहा है कि द्विदलीय प्रणाली से मन्त्रिमण्डल में स्थिरता, स्फूर्ति और सावधानी का संचार होता है। इससे दो दलों के व्यक्तियों की [illegible] और उत्तरदायित्व की पूर्ति होती है तथा [illegible] दल [illegible] का दुरुपयोग नहीं कर पाता।

केन्द्रीयकरण—"वादी की एकरूपता और लघु भौगोलिक आकार के कारण ब्रिटिश दलों की प्रवृत्ति केन्द्रीयकरण की है। सम्पूर्ण दल ऊपर से नीचे तक एक सूत्र में आबद्ध रहता है। दलीय नेताओं तथा दल के केन्द्र का पूरे दल पर नियन्त्रण रहता है। राष्ट्रीय संगठन का सदैव अस्तित्व बना रहता है और उसका ध्यान मुख्यतः राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय बातों की ओर लगा रहता है। ब्रिटेन के विपरीत अमेरिका में दलों की विशेषता विकेन्द्रीकरण की है।

अनुशासन एवं साहचर्य—ब्रिटिश दल बहुत ही अनुशासित है। दल के सचेतक ही निश्चय करते हैं कि संसद में किन दलीय सदस्यों को कब और क्या बोलना है अथवा किन विषयों के पक्ष या विपक्ष में मत देना है? प्रत्येक दल की अपनी नीति है, अपना आदर्श और कार्यक्रम है। दलीय सदस्यों में साहचर्य की भावना प्रबल रूप से विद्यमान रहती है। दल की सदस्यता ऐच्छिक है किन्तु सदस्य दलीय सूत्र में आबद्ध रहने के कारण परस्पर अति निकट हो जाते हैं। दल का समर्थन दल को एक व्यक्तित्व का रूप दे देता है और उसे संगठित तथा अनुशासित बनाता है।

नेता का महत्त्व—ब्रिटेन में दल का नेता दल का केन्द्र स्थल और दल का प्रतीक माना जाता है। वह आधुनिक चुनाव प्रणाली रूपी नाटक में केन्द्रीय व्यक्तित्व की आवश्यकता की पूर्ति करता है। दल की नीतियों का दलीय नेता के व्यक्तित्व के माध्यम से अधिक स्पष्ट किया जा सकता है। मतदाता वस्तुतः किसी उम्मीदवार विशेष को नहीं वरन् भावी प्रधानमन्त्री को मत देता है और चुनाव बहुत कुछ नेता के व्यक्तित्व के इर्द-गिर्द लड़ा जाता है, न कि नीति और दल के आधार पर। दल के नेता की इस महत्त्वपूर्ण स्थिति को प्रत्येक संसद सदस्य समझता है और इसलिए वह नेता को पूर्ण समर्थन देता है।

संसद सदस्यों पर नियन्त्रण—सदस्यगण दल नियन्त्रण के समर्थन पर विजयी होते हैं। दलीय कार्यक्रम के आधार पर उन्हें मत मिलते हैं और जीत में दलीय नेता की लोकप्रियता का अधिक हाथ रहता है। अतः प्रत्येक सदस्य यह समझता है कि दलीय कार्यक्रम या नेता से पृथक स्वतन्त्र कदम उसके राजनीतिक अस्तित्व के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। परिणामस्वरूप वह दलीय नियमों और दलीय शासन के अधीन रहता है।

वर्ग प्रकृति एवं सैद्धान्तिक मतभेद—ब्रिटेन में राजनीतिक दलों का वर्ग के आधार पर सरलतापूर्वक पृथक्करण किया जा सकता है। उदार दल सभी वर्गों से मत प्राप्त करने की कोशिश करते हैं और अनुदार एवं मजदूर दोनों दल मध्यम वर्ग से मत की आशा करते हैं। किन्तु मजदूर दल स्पष्टतः मजदूरों का प्रतिनिधित्व करता है और बड़े व्यवसायियों तथा पूँजीपतियों को कमजोर बनाने के पक्ष में है। इसके विपरीत अनुदार दल सामान्यतः धनिक एवं कुलीन वर्गों का नेतृत्व करता है। स्पष्ट है कि दलों के बीच इतना व्यापक वैभिन्य रहता है कि मतदाता को

वास्तविक छाँट का अवसर मिलता है। दलों के मतभेद सैद्धांतिक होते हैं, केवल दलीय नहीं। मतदाता का सदस्य छाँटने के साथ-साथ कार्यक्रम की छाँट करनी होती है। मजदूर दल समाजवाद में विश्वास करता है तो अनुदार दल स्वतन्त्र एवं निजी उद्योगों का समर्थक है। मजदूर दल का विश्वास राष्ट्रीयकरण अथवा एकाधिकारी उद्योग के समाजीकरण अर्थात् उन पर राज्य के स्वामित्व की स्थापना में है जबकि उदार दल राजकीय केन्द्रीयकरण अथवा समाजवादी नौकरशाही का विरोधी है।

उच्च उद्देश्य, गम्भीर प्रकृति एवं सतत कार्यशीलता—ब्रिटिश राजनीतिक दलों के कार्यकर्ता उच्च उद्देश्यों से राजनीति में भाग लेते हैं, नैतिक सिद्धान्तों का पालन करते हैं और निरन्तर कार्यशील रहते हैं। वे व्यक्तिगत हितों और स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों के लिये सामान्यतः राजनीति में प्रवेश नहीं करते। लूट प्रथा तथा अवलम्बन का ब्रिटिश राजनीतिक व्यवस्था में अभाव-सा है। सामान्य निर्वाचन में जीत के बाद विद्यमान दल के स्वेच्छाधिकार में अमरिका के समान नौकरियों या धन की भरमार नहीं रहती। ब्रिटेन में राजनीतिक दल सामान्य निर्वाचनों के बीच भी सदैव कार्यशील रहते हैं इंगलैण्ड में किस दिन निर्वाचन हो जाएगा, यह कहना कठिन है। इसलिए दल आम निर्वाचन के प्रति सदैव तैयार रहते हैं। शोधकार्य करना, साहित्य तैयार करना, सभायें बुलाना, स्थानीय शाखाओं का संगठन करना स्थानीय शासन के चुनावों में भाग लेना, पार्लमेंट व मन्त्रिमण्डल के सदस्यों में सम्पर्क स्थापित करना आदि ऐसे कार्य हैं जिन्हें राजनीतिक दल अवकाश के समय करते हैं। अन्त में, ब्रिटिश राजनीतिक दलों का आचरण और व्यवहार बड़ा उच्च कोटि का होता है। वे ईश्वर की महत्ता में विश्वास करते हैं और अपनी क्रिश्चियन प्रवृत्ति का सरलता से परित्याग नहीं करते।

प्रमुख राजनीतिक दल

(Major Political Parties)

इस समय ब्रिटेन में प्रमुख राजनीतिक दल ये हैं—

(1) अनुदार या रूढ़िवादी दल (Conservative Party),

(2) श्रमिक दल (Labour Party), एवं

(3) उदारवादी दल (Liberal Party)।

अनुदार या रूढ़िवादी दल

जेनिंग्स (Jennings) के अनुसार "जब 1812 में व्हिग लोगों (Whigs) के प्रभुत्वकाल में सुधारवादी अधिनियम पारित हो गया तो टोरी दल के अनुयायियों ने यह आवाज बुलन्द की कि ब्रिटिश संविधान का अस्तित्व खतरे में है। उस समय उन्होंने उसकी रक्षा के रूप में अपने दल का नाम कंजरवेटिव अर्थात् रक्षा या रक्षा करने वाला दल रख लिया।"

नीति एवं कार्यक्रम—अनुदार दल आकस्मिक और आमूल परिवर्तनों का विरोधी है। वह परम्परागत संस्थाओं, प्रथाओं और विचारधाराओं की रक्षा करने के पक्ष में है। रूढ़िवादी दल परिवर्तन को बिल्कुल नहीं फेंक देता, बल्कि सावधानी पूर्ण एवम् मंथर (Slow) परिवर्तन पर जोर देता है और प्राचीन सामाजिक ढांचे को यथासम्भव ज्यों का त्यों रखना चाहता है। यह पूंजीवाद और ब्रिटिश साम्राज्यवाद का पोषक है। इसकी राष्ट्रीयता कट्टर राष्ट्रीयता है। यह विश्वास करता है कि अंग्रेज जाति अन्य सब जातियों में श्रेष्ठ है तथा अन्य जातियों को सभ्यता सिखाना उसका कर्त्तव्य है। ब्रिटिश राजमुकुट की छत्रछाया में ब्रिटिश साम्राज्य की सुरक्षा और उसका विस्तार करना इस दल का सर्वोपरि ध्येय रहा है। अनुदारवादी नेता चर्चिल अपने मन्त्रित्व-काल में भारत को स्वतन्त्रता देने का सदैव विरोध करते रहे और श्रमिक-दल की सरकार बनने पर ही भारत को स्वतन्त्रता मिल पाई। जिन राजनीतिक संस्थाओं को अनुदार या रूढ़िवादी दल बनाये रखना चाहता है वे हैं—राजमुकुट के विशेषाधिकार, लार्ड-सभा की स्वतन्त्रता, इंगलैड के चर्च की विशेष स्थिति, राष्ट्रीय एकता, शक्तिशाली नौकरशाही, गैर-सरकारी सम्पत्ति की राज्य के हस्तक्षेप से विमुक्ति, साम्राज्यवादियों और जमींदारों व पूंजीपतियों के हितों की रक्षा।

अनुदार दल, आर्थिक क्षेत्र में, वैयक्तिक सम्पत्ति और वैयक्तिक व्यवसायों पर आधारित समाज व्यवस्था का पोषक है। अतः स्वभावतः यह उद्योगों के समाजीकरण का विरोध करता है। अनुदारवादी ऐसी किसी आर्थिक व्यवस्था का समर्थन नहीं करते जिसके अन्तर्गत राजनीतिक, सामाजिक एवम् आर्थिक समानता का पक्ष लेते हुये उत्पादन के साधनों और व्यवसायों के राष्ट्रीयकरण का प्रतिपादन किया जाता हो।

अनुदार दल में टोरी लोग अब भी है और उन्होंने दल के दक्षिण पक्ष का निर्माण किया है। ये दक्षिण पक्षी पूर्ण अपरिवर्तनवादी अथवा रूढ़िवादी हैं, किन्तु दल के अधिकांश सदस्यों की मान्यता यह होती जा रही है कि पूंजीवादी व्यवस्था को अपने-आप को इस रूप में बदल लेना चाहिये कि उसे धनियों का ही नहीं अपितु सभी वर्गों का समर्थन प्राप्त हो जाए। उनकी यह भी इच्छा है कि प्रजातन्त्र की रक्षा हो और राज्य सामाजिक सेवाओं के मार्ग पर अग्रसर होता रहे। वे यह भी कहते हैं कि पूंजीवादी व्यवस्था के पालन-पोषण का यह अभिप्राय नहीं है कि समस्त उद्योगों पर व्यक्तिगत अधिकार स्थापित हो जाए, अपितु होना यह चाहिये कि सरकार उद्योगों के विकास के प्रति सहानुभूतिपूर्ण रुख रखे और आवश्यकतानुसार प्राइवेट उद्योगों को प्रशुल्क (Tariffs), आर्थिक सहायता (Subsidies) एवम् बाजार संगठन (Market Organisation) द्वारा मदद दे। राष्ट्रीय भावनाओं और उद्योगपतियों के हितों, इन दोनों से प्रभावित होकर

अनुदार दल अब बेकारी की समस्या के समाधानार्थ गृह-उद्योगों के संरक्षण को प्रोत्साहन देने लगा है।

श्रमिक दल के उद्देश्यों के कारण अनुदार दल के कार्यक्रम में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन दृष्टिगोचर हुए हैं। इस दल के युवक सदस्य चाहते हैं कि दल का कार्यक्रम उतना ही प्रगतिशील और ओजस्वी (*Progressive Vigorous*) बने जितना कि श्रमिक दल का है।

रूढ़िवादी दल अन्तर्राष्ट्रीयकरण के प्रस्तावों में दृढ विश्वास नहीं रखता। वह प्रबल और दृढ़ वैदेशिक नीति का समर्थक है। उसका मत है कि शान्ति रक्षा के लिए ब्रिटेन को अपनी सैनिक शक्ति और शस्त्रों की प्रचुरता पर निर्भर रहना चाहिये। रूस और अमेरिका के बीच चलने वाले शीत युद्ध में यह ब्रिटेन के दायित्व का समर्थक है।

सदस्यता—इस दल की सदस्यता प्राय धनीमानी वर्ग के लोगों की है। कुछ संख्या में उच्च माध्यमिक वर्ग के एसे व्यक्ति भी हैं जो श्रमिकों की अपेक्षा स्वयं को धनिकों के अधिक निकट समझते हैं और उनकी प्रवृत्ति पूँजीपतियों के साथ मिलने की है। संसद् में प्राय उच्च और माध्यमिक वर्ग के लोग ही अनुदार दल के सदस्य हैं। निर्वाचन में विजय के लिए अनुदार दल को निम्न माध्यमिक वर्ग एवं काम करने वाले वर्ग के मतदाताओं का भी आश्रय लेना पड़ता है।

संगठन—अनुदार दल का एक शक्तिशाली और सुदृढ़ संगठन है। इसका एक अखिल देशीय या राष्ट्रीय संगठन है जिसे नेशनल यूनियन आफ कंजरवेटिव एण्ड यूनियनिस्ट एसोसियेशन्स (National Union of Conservative and Unionist Associations) कहा जाता है। राष्ट्रीय संगठन का प्रमुख काम निर्वाचन क्षेत्रों में दलीय सभा की स्थापना करना, दल के सभी संगठनों के बीच सम्पर्क स्थापित करना और दल के केन्द्रीय कार्यालय से घनिष्ट सम्बन्ध बनाये रखना है। राष्ट्रीय संगठन का अधिवेशन साधारणत वर्ष में एक बार होता है, जिसमें दल के वार्षिक क्रिया-कलापों का सिंहावलोकन किया जाता है और आगामी वर्ष के लिए दलीय कार्यक्रम तैयार किया जाता है। इस वार्षिक अधिवेशन में केन्द्रीय कार्यालय के सदस्य, क्षेत्रीय संगठनों के प्रतिनिधि, प्रत्येक क्षेत्रीय संगठन और केन्द्रीय संगठन के प्रमाणित एजेन्ट तथा संस्थापक आदि भाग लेते हैं। इस सम्मेलन में दल का नेता प्राय भाग नहीं लेता, परन्तु वह एक सार्वजनिक सभा में भाषण देता है जो सम्मेलन समाप्त होने के तुरन्त बाद आयोजित की जाती है।

राष्ट्रीय संगठन की एक प्रबन्धक समिति होती है जिसे केन्द्रीय परिषद (Central Council) कहते हैं। यह वार्षिक सम्मेलन का संक्षिप्त रूप है। इसकी बैठक भी सामान्यत वर्ष में एक बार होती है, यद्यपि आवश्यकतानुसार विशिष्ट

बैठकें भी बुलाई जा सकती हैं। केंद्रीय परिषद राष्ट्रीय संगठन के पदाधिकारियों को चुनती है, कार्यकारिणी समिति के प्रतिवेदन पर विचार करती है और राष्ट्रीय संगठन के नियमों में संशोधन लाती है। यह दलीय एवं सार्वजनिक प्रश्नों पर प्रस्तुत प्रस्तावों पर विचार करती है और अपने निर्णय दल के नेता को भेजती है। केंद्रीय परिषद की सदस्यता लगभग 2000 है।

राष्ट्रीय संगठन की एक कार्यकारिणी समिति (Executive Committee) होती है जिसकी सदस्य संख्या लगभग 150 है। दल के संसदीय और सार्वजनिक संगठनों के प्रमुख पदाधिकारी या प्रतिनिधि इसके सदस्य होते हैं। समिति की बैठक साधारणतया दो मास में एक बार होती है। इसका एक सभापति होता है जिसका चुनाव यह स्वयं करती है। इसके प्रमुख कार्य हैं—राष्ट्रीय संगठन के पदाधिकारियों के चुनाव के लिए नामों का सुझाव देना, किसी क्षेत्रीय संगठन की कार्यकारिणी परिषद द्वारा प्रेषित किसी मतभेद अथवा विवाद पर निर्णय करना, आवश्यकता पड़ने पर अन्य राष्ट्रीय परामर्शदात्री समितियों की स्थापना करना, कार्यकारिणी समिति के सदस्यों द्वारा प्रस्तुत किसी प्रस्ताव अथवा मसले पर विचार विमर्श करना, वार्षिक सम्मेलन और केंद्रीय परिषद को अपनी कार्यवाहियों पर रिपोर्ट देना तथा केंद्रीय परिषद् की बैठकों के अन्तर्काल में उसके कार्यों को सम्पन्न करना।

राष्ट्रीय संगठन का एक अन्य छोटा निकाय सामान्य उद्देश्य समिति (General Purposes Committee) है, जिसमें लगभग 56 सदस्य होते हैं। इसकी बैठक साधारणतया प्रतिमास होती है। इसके प्रमुख कर्तव्य इस प्रकार हैं—कार्यकारिणी समिति को दिये गए अधिकारों को छोड़कर राष्ट्रीय संगठन के सब साधारण व असाधारण कार्यों को सम्पन्न करना, केंद्रीय परिषद और वार्षिक सम्मेलन की बैठकों का कार्यक्रम तैयार करना, प्रांतीय परिषदों, क्षेत्रीय संगठनों एवं केंद्रीय संघों द्वारा पारित प्रस्तावों पर विचार करना आदि।

अनुदार दल प्रांतीय और क्षेत्रीय संगठनों की दृष्टि से भी बड़ा सुव्यवस्थित व सुगठित है। इंगलैंड और वेल्स को दलीय संगठन की दृष्टि से 12 प्रांतों (Areas) में बांट दिया गया है। प्रत्येक प्रांतीय संगठन का एक प्रधान होता है। प्रधान के अतिरिक्त अध्यक्ष, कुछ उप प्रधान, कोषाध्यक्ष और सचिव इसके पदाधिकारी होते हैं। प्रांतीय संगठन की केंद्रीय परिषद् को प्रांतीय परिषद् (Area Council) कहा जाता है जो निर्वाचन क्षेत्रों और सदस्यों के प्रस्तावों पर विचार करती है। प्रांतीय संगठन का प्रधान प्रांत में निर्वाचन क्षेत्रों के संघ का नेता और प्रवक्ता होता है।

अनुदार दल में सबसे नीचे के स्तर पर प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र में एक क्षेत्रीय संगठन, जिसे निर्वाचन क्षेत्रीय संघ भी कह सकते हैं, होता है। इस क्षेत्रीय संगठन या निर्वाचन-क्षेत्रीय-संघ (Constituency Association) का काम

अपने क्षेत्र में दल का प्रचार करना और निर्वाचन के समय दल के प्रत्याशी के लिए समर्थन प्राप्त करना होता है। ये क्षेत्रीय संगठन दल के केन्द्रीय कार्यालय के परामर्श से संसद् की सदस्यता के लिए प्रत्याशियों का चयन भी करते हैं। क्षेत्रीय संगठनों के अतिरिक्त अनुदार दल के लगभग 1500 क्लब भी हैं। ये क्लब जनता से सम्पर्क रखते हैं और इनका एक-एक प्रतिनिधि अपने अपने क्षेत्र के क्षेत्रीय संगठन का सदस्य होता है।

अन्य दलों की तरह अनुदारवादी दल का एक केन्द्रीय कार्यालय (Central Office) भी है जो लन्दन में स्थित है। यह दल के नेता के प्रति उत्तरदायी होता है। इसे चलाने के लिए एक प्रधान संचालक होता है। यह कार्यालय दल के संगठन का केन्द्र है और इसकी क्रियाशीलता पर ही दल का संगठन व दल की उन्नति निर्भर है। आवश्यकतानुसार नये स्थानीय संगठनों की स्थापना करना, उनका मार्ग-निर्देशन करना, दलीय कार्यक्रम का प्रचार व प्रसार करना, दलीय साहित्य का सर्वत्र वितरण करना, निर्वाचन के समय दलीय उम्मीदवारों की सूची का प्रकाशन करना आदि इस केन्द्रीय कार्यालय के प्रमुख कार्य हैं।

अनुदार दल का संसदीय संगठन भी है, जिसका कार्य संसदीय दल के उद्देश्यों की साधना करना होता है। दल का संसदीय संगठन दल के नेता का निर्वाचन करता है। यदि दल शासक दल के रूप में प्रकट होता है, तो जिस व्यक्ति को वह अपना नेता निर्वाचित करता है, उसे राजा प्रधानमन्त्री नियुक्त करता है। जब दल शासक दल के रूप में नहीं होता, तब यह संगठन लोकसभा के लिए दल के नेता का चुनाव करता है। दल का संसदीय संगठन प्रत्येक सदन में होता है। लोकसभा में अनुदार दल के संगठन को '1922 की समिति (Committee 1922) के नाम से पुकारा जाता है। संसदीय संगठन और उसकी कार्यकारिणी समिति की साप्ताहिक बैठकें होती हैं, जिनमें व्यावसायिक समितियाँ रिपोर्ट प्रस्तुत करती हैं, सचेतक (Whips) आगामी सप्ताह के कार्यक्रम की घोषणा करते हैं और दल एवं सरकार की नीति पर विचार किया जाता है। दल का सचेतक सदस्यों को अनुशासनबद्ध रखता है। लॉर्ड-सभा में दलीय संगठन महत्त्वपूर्ण नहीं है। इसमें अनुदार दल का प्रभाव स्थायी रूप से है, अतः उसे संगठन अथवा अनुशासन की कोई चिन्ता नहीं रहती।

अनुदार दल में दल के नेता का बड़ा महत्त्व है। उसे महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त होती हैं। वह किसी के प्रति उत्तरदायी नहीं होता। वही दल की नीति का निर्माण और उसकी व्यवस्था करता है। दल सत्तारूढ़ हो अथवा विरोधी पक्ष में, अपने मुख्य साथियों का वह स्वयं चुनता है। दल के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, कोषाध्यक्ष आदि उसी के द्वारा मनोनीत होते हैं। इस तरह दल कार्यालय (Central Office) उसके अधीन होता है। दल के वार्षिक सम्मेलन के प्रस्ताव नियमित रूप से उसको भेजे जाते हैं, परन्तु वे उसे बाध्य नहीं कर सकते। मुख्य सचेतक (Chief whip) की

नियुक्ति भी वही करता है। चूंकि मरय स्वत्व ससदीय दल पर नियत्रण करता है, अत उसके माध्यम से नेता ससदीय दल पर अपना प्रभुत्व बनाये रखता है।

1965 से पूव अनुदार दल मे नेता का औपचारिक चुनाव करने की परिपाटी नही थी, परन्तु 1965 म यह नियम अपना लिया गया कि अनुदार दल मे भी श्रमिक दल के समान नेता के चुनाव की परिपाटी अपनायी जानी चाहिये। उल्लेखनीय है कि एक बार नेता चुन लिये जाने पर इच्छा पय त वह इस पद पर बना रहता है, जब तक कि उसका स्वास्थ्य अथवा उसके विरुद्ध दलीय असतोष उसे पद-त्याग करने पर विवश न कर दे अथवा उसकी मृत्यु ही न हो जाए। सत्तारूढ होने की दशा मे अनुदार दल और श्रमिक दल के नेताओ की स्थिति लगभग समान है क्योकि दल का नेता ही प्रधानमन्त्री पद पर आसीन होता है और स्वेच्छानुसार अपने मन्त्रिमण्डल का निर्माण करता है। परन्तु अनुदार दल जब विपक्षी दल के रूप मे होता है तब भी नेता लोक सभा के सदस्यो मे से अपने छाया मन्त्रिमण्डल (Shadow Cabinet) के सदस्यो का चयन करता है, जबकि श्रमिक दल मे ऐसा नही है। यहा दल के सदस्य प्रति वर्ष नेता और छाया मन्त्रि-मण्डल का चुनाव करते है।

उदारवादी दल (Liberal Party)

उदारवादी दल आज ब्रिटेन का मुख्य राजनीतिक दल नही रहा है। उसका स्थान श्रमिक दल ने ले लिया है। फिर भी इस दल के सदस्य अपनी योग्यता और अपने नेतृत्व के गुणो के कारण ब्रिटेन मे सम्मान के पात्र हैं।

उदारवादी दल अग्रेजी नाम "लिबरल पार्टी" (Liberal Party) का हिन्दी रूपान्तर है। लिबरल पार्टी के नाम से यह दल केवल 19वी शताब्दी मे ही अस्तित्व म आया, परन्तु उदारवादियो का कहना है कि उनके दल का अस्तित्व गृह युद्ध और स्वर्णिम क्रान्ति के समय स चला आ रहा है और वे ह्विग्स (Whigs) के उत्तराधिकारी हैं। ह्विग पार्टी मे जिस परम्परागत दृष्टिकोण को उदारवादी दल ने लिया, उसके बारे मे श्री बेली (Baili) का कहना है कि "विगत तीन शताब्दियो मे ह्विग दल अथवा उदारवादी दल (जो नाम इस दल का 19वा शताब्दी मे हो गया था) कई पहलुओ से गुजर चुका है। कभी यह धनिको का दल रहा है तो कभी यह पद-दलितो का सरक्षक रहा है, कभी इसने शाति का दल और कभी कठोर प्रतिकार करने वाले दल का रूप धारण किया है। कभी यह युद्धमार्ग का समयक रहा है तो कभी आर्थिक नियोजन का प्रबल पोषक रहा है, कभी यह साम्राज्यवाद का दल रहा है तो कभी इसने केवल छोटे से इगलैंड का समर्थन किया है। साधारणत यह सहिष्णुता का समर्थक रहा है, परन्तु कुछ अवधियो में विकट असहिष्णुता की भी रही है।'

नीति और कार्यक्रम—उदार दल का विचार है कि परिवर्तन प्रकृति का नियम है और इसलिए "नए अनुभव को स्वीकार किया जाय तथा स्वतन्त्र विकास

को समर्थन दिया जाय।" यह दल परम्परा के पक्ष में नहीं है, अपितु बदलती हुई परिस्थितियों के साथ-साथ सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तनों के पक्ष में है। उदार दल स्थापित अधिकारों को छोड़ मानव के अधिकारों पर विशेष बल देता है। इस दल के संविधान की प्रस्तावना में कहा गया है कि "उदार दल का उद्देश्य एक ऐसे स्वतन्त्र जनतापूर्ण समाज की रचना करना है जिसमें प्रत्येक नागरिक को स्वतन्त्रता सम्पत्ति और सुरक्षा प्राप्त हो तथा कोई भी दरिद्रता, अज्ञान अथवा बेरोजगारी का दास नहीं होगा।'

यह दल व्यक्ति की सब प्रकार की स्वतन्त्रता का समर्थक है। दल ने व्यवहार में भी सदैव इस कार्यक्रम पर आचरण किया, जिसमें व्यक्ति की स्वतन्त्रता की रक्षा होती रही। इसने धार्मिक क्षेत्र में व्यक्ति की स्वतन्त्रता का समर्थन करते हुए विशेषकर नान कनफर्मिस्ट्स (Non Conformists) को स्वतन्त्रतापूर्वक धार्मिक पूजा करने के सम्बन्ध में और उन्हें कतिपय धार्मिक एवं सामाजिक निर्योग्यताओं से मुक्ति दिलाने के बारे में सराहनीय प्रयास किये। इस दल ने राजनीतिक स्वतन्त्रता का समर्थन करते हुए उन राजनीतिक सुधारों को लाने के प्रयास किये जिनमें सभी लोगों को समान मताधिकार प्राप्त हो सके, लोक प्रिय आधार पर निर्वाचित लोक-सभा को पूर्ण अधिकार मिले और उसे अन्तिम प्रभुसत्ता प्राप्त हो। 1911 का संसदीय अधिनियम उदार दल की जीत थी जिसके परिणामस्वरूप व्यवस्थापन क्षेत्र में लोक-सभा को अन्तिम निर्णय करने का अधिकार प्राप्त हुआ।

आर्थिक क्षेत्र में उदारवादी दल उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन देकर जनसाधारण का आर्थिक स्तर ऊँचा उठाना चाहता है। वह स्वतन्त्र व्यापार और स्वतन्त्र प्रतियोगिता के पक्ष में है। उसने 'यदभाव्यम नीति (Laissez-faire) का समर्थन किया है और शासन की ओर से प्रतिबन्ध लगाने का विरोध किया है। परन्तु कुछ अवसरों पर दल के द्वारा ऐसे सामाजिक और आर्थिक सुधारों का भी समर्थन किया गया है जो व्यक्तिवाद और यदभाव्यम नीति से मेल नहीं खाते और अब तो उदारवादी यह भी मानने लगे हैं कि एक आवश्यक स्वतन्त्रता श्रमिकों की स्वतन्त्रता भी है जिसकी व्यवस्था होनी ही चाहिए। उनका यह आग्रह अवश्य है कि राजकीय नियन्त्रण आवश्यकता से अधिक नहीं होना चाहिये।

उदारवादियों के लिए पूँजीवाद अथवा समाजवाद की समस्या का उतना महत्व नहीं है जितना समझा जाता है। न तो उन्हें अनुदारदलीय नीति ही पसन्द है जिसके कारण पूँजीवाद को प्रोत्साहन मिलता है और न उन्हें समाजवादी नीति ही पसन्द है जो समष्टिवादी राजकीय नियन्त्रण द्वारा व्यक्ति की स्वतन्त्रता का ही समाप्त कर देना चाहता है।

श्रमिकों के कल्याण के लिए उदारवादी सम्पत्ति विस्तार के पक्षपाती हैं। ये चाहते हैं कि श्रमिकों को उद्योगों और व्यवसायों में भागीदार बनाया जाना

चाहिये । वे यह भी चाहते हैं कि उद्योगो का प्रजातन्त्रीकरण हो और प्रत्येक उद्योग का प्रबन्ध एक औद्योगिक परिषद (Industrial Council) के हाथो मे दे दिया जाय जिसमे श्रमिको और मालिको दोनो के प्रतिनिधि हो ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उदारवादी समाजवादी न होते हुए भी समाजवाद की दो मुख्य बातो को मानते हैं—प्रथम, उन सभी उद्योगो का समाजीकरण या राष्ट्रीयकरण किया जाना चाहिये, जिनका प्रबन्ध राज्य सुगमता व श्रेष्ठता से कर सकता हो, और द्वितीय, उद्योगो से श्रमिको के हितो का उचित सरक्षण दिया जाना चाहिये । उदारवादियो का दावा है कि वे किसी वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व नही, अपितु समस्त राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

उदारवादी आधुनिक भूमि व्यवस्था के पक्ष मे नही है । वे चाहते है कि भूमि उन लोगो से छीन ली जाय जो स्वय खेती नही करते, और उन्हे दे दी जाय जो स्वय करते हैं । वे यह भी चाहते है कि जिन लोगो को उत्तराधिकार मे भारी सम्पत्ति प्राप्त है उन पर भारी कर लगाया जाय ।

विदेश नीति के सम्बन्ध मे उदारदल चाहता है कि राष्ट्रो और देशो को साम्राज्य के अन्तर्गत अधिकाधिक अधिकार प्रदान किये जाए । यह स्मरणीय है कि उदारदलीय मन्त्रिमण्डल ने ही आयरलण्ड को स्वशासन देने का प्रस्ताव किया था जिसका रूढिवादियो ने घोर विरोध किया था ।

एक समय था जबकि उदारदल अपनी उन्नति के शिखर पर था, किन्तु अब इसकी शक्ति मे निरन्तर ह्रास हो रहा है । इसके पतन का मुख्य कारण यह है कि इस दल के पास कोई स्पष्ट और सीधा कार्यक्रम नही है । यह पूजीवाद और समाजवाद के बीच का मार्ग ग्रहण करना चाहता है, अत इस के पक्ष मे न तो धनिक ही है और न श्रमिक ही ।

सदस्यता—जिस समय उदारदल अपनी उन्नति के शिखर पर था, उसमे कई प्रकार के सदस्य थे । उनमे पेशेवर, व्यापारी मध्यमवर्ग के नागरिक, छोटे-छोटे दुकानदार, कुछ धनिक कृषक और कुछ के श्रमिक शामिल थे । वर्तमान स्थिति मे इसे न तो उच्चवर्ग कुलीन-वर्ग का समर्थन प्राप्त है और न ही श्रमिक वर्ग का, क्योंकि कुलीन वर्ग आज अनुदार दल की सख्या का निर्माण करता है, जबकि श्रमिक वर्ग का आकर्षण श्रमिक दल है ।

सगठन—उदारवादी दल का एक राष्ट्रीय सगठन है जिसे 'राष्ट्रीय उदारवादी सघ' (National Liberal Federation) कहते है । इस सगठन की प्रतिवर्ष एक बार बैठक होती है, जिसे उदारवादी वार्षिक सम्मेलन (Liberal Annual Assembly) कहा जाता है । यह सम्मेलन दल के अधिकारियो को चुनता है, दल के क्रिया-कलापो का सिंहावलोकन करता है और दलीय नीति का निर्धारण करता है । सम्मेलन मे भाग लेने वाले सदस्यगण प्रमुखत ये होते हैं—सब उदारदली

संसद्सदस्य एवं पीयर, सब संसदीय प्रत्याशी, उदारदलीय परिषद (Liberal Council) के सदस्य, क्षेत्रीय संगठनों के प्रतिनिधि एवं यूनिवर्सिटी लिबरल सोसाइटियों के सदस्य गण।

दल के संगठन की सबसे निम्नस्तरीय इकाई क्षेत्रीय संगठन या निर्वाचन क्षेत्रीय संघ (Constituency Association) है। इन संगठनों के कार्य अपने क्षेत्रों में दलीय सिद्धांतों और विचारों का प्रचार करना, निर्वाचन के समय केन्द्रीय कार्यालय के परामर्श से दलीय सदस्यों को चुनना और उनकी सफलता के प्रयत्न करना आदि हैं।

अन्य दलों की भांति उदार दल का भी एक केन्द्रीय कार्यालय है, जिसे 'उदारवादी केन्द्रीय संगठन' (Liberal Central Association) कहा जाता है। इस केन्द्रीय संगठन के अधिकार अनुदारवादी दल के केन्द्रीय कार्यालय जैसे नहीं हैं। न तो यह प्रचार कार्य के लिए धन एकत्रित ही करता है और न क्षेत्रीय संगठनों की सहायता के लिए धन खर्च ही करता है। दलीय कोष पर अधिकार केन्द्रीय कार्यालय का नहीं अपितु प्रधानतः क्षेत्रीय संगठनों का होता है।

श्रमिक दल (Labour Party)

श्रमिक दल की स्थापना फरवरी सन 1899–1900 में ट्रेड यूनियन कांग्रेस के प्रस्ताव के परिणामस्वरूप हुई। उस समय इसका नाम श्रमिक प्रतिनिधित्व समिति (Labour Representation Committee) रखा गया, जिसे सन 1906 में बदल कर श्रमिक दल (Labour Party) कर दिया गया। 1920 में मार्क्सवादी विचारधारा के लोग इस दल से पृथक हो गए और उन्होंने साम्यवादी दल का निर्माण कर लिया। आज भी यह दल स्वयं को मार्क्सवाद अथवा साम्यवाद से पृथक रखे हुए है। लोकप्रियता की दृष्टि से यह दल निरन्तर प्रगति कर रहा है।

नीति और कार्यक्रम—श्रमिक दल एक नवीन सामाजिक ढांचे की रचना करना चाहता है। उसका घोषित उद्देश्य 'हाथ और मस्तिष्क के कार्य करने वाले श्रमिकों को व्यवसायों से पूरा लाभ दिलाना, जहां तक सम्भव हो सब उत्पादन, वितरण व विनिमय के साधनों की साझेदारी के आधार पर उसका अधिक से अधिक औचित्यपूर्ण वितरण करना तथा प्रत्येक व्यवसाय की सेवाओं से सम्भवतः अच्छे से अच्छा लोकप्रिय प्रशासन व नियन्त्रण की व्यवस्था करना है।'*

यद्यपि श्रमिक दल का ध्येय समाजवादी समाज की स्थापना करना है, किन्तु वह समाजवाद की अपेक्षा लोकतन्त्र को अधिक महत्त्व देता है। वह समाजवाद की स्थापना लोकतन्त्रीय विधि के द्वारा करना चाहता है।

श्रमिक दल पूंजीवाद के स्थान पर एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने के पक्ष में है जिसमें व्यक्तिगत सम्पत्ति के स्थान पर सम्पूर्ण राष्ट्र की सम्पत्ति जनता के हाथ में होगी। दूसरे शब्दों में वह व्यक्तिगत स्वामित्व के स्थान पर सामाजिक स्वामित्व के सिद्धांत का समर्थन करता है। यह दल महत्त्वपूर्ण व्यवसायों अथवा

उद्योग धन्धों का राष्ट्रीयकरण कर देना चाहता है। राष्ट्रीय महत्व के विशालकाय उद्योगों को छोड़कर, विशेष व्यवसायों में श्रमिक दल चाहता है कि स्वामित्व चाहे व्यक्तिगत भले ही रहे, किन्तु उन पर सरकार अवश्य होनी चाहिए, ताकि उनका संचालन राज्य के आर्थिक नियोजन के अनुसार हो सके। दल का मत है कि देश के आर्थिक नियोजन का संचालन लोकतन्त्रात्मक रीति से निर्वाचित सरकार द्वारा किया जाना चाहिए और नियोजन के नाम पर व्यक्ति की नागरिक स्वतन्त्रताओं का हनन् नहीं होना चाहिए।

श्रमिक दल सामाजिक समानता (Social equity) का प्रबल समर्थक है। यह समाज में समता और एकता पैदा करना चाहता है। वह समान शिक्षा, समान सम्पत्ति तथा समान राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक सुअवसरों का पक्षपाती है। इन उद्देश्य की पूर्ति के लिये ही वह पूंजीवादी ढांचे को लोकतान्त्रिक उपकरणों के सहारे से बदलना चाहता है।

कृषि के क्षेत्र में श्रमिक दल चाहता है कि आयात और पैदावार के वितरण में इस प्रकार अंकुश रखा जाए कि कृषक इस बात के प्रति आश्वस्त रहे कि उसे अपनी पैदावार का निश्चित मूल्य मिलेगा और उसके बदले में कृषक को अच्छी तरह से प्रबन्ध करना चाहिये तथा मजदूरों की स्थिति संतोषजनक रखनी चाहिये।

स्पष्ट है कि श्रमिक दल के कार्यक्रम को लोकतन्त्रात्मक समाजवादी कार्यक्रम की संज्ञा दी जाती है। श्रमिक दल की वास्तविक इच्छा यही है कि जन्म से मरण तक व्यक्ति को किसी प्रकार की राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक असमर्थता का शिकार न होना पड़े। अपनी इस इच्छा को कार्यरूप में परिणत देखने के लिये श्रमिक दल राज्य के लोक कल्याणकारी स्वरूप के पक्ष में है। साम्राज्य के सम्बन्ध में श्रमिक दल की यह इच्छा है कि वह उन सभी प्रदेशों को, जिनमें स्वशासन नहीं है, जल्दी से जल्दी दे दिया जाए। इस दिशा में इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये वह चाहता है कि उपनिवेशों के प्राकृतिक साधनों को विकसित और उन्नत किया जाए, उनमें सामाजिक सेवाओं का विकास किया जाए, तथा ट्रेड यूनियनों और सहकारी आन्दोलनों को उत्साहित किया जाए।

अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में श्रमिक दल साम्राज्यवाद का विरोधी है और उपनिवेशों को स्वशासन देने के पक्ष में है। इस दल का अन्तिम उद्देश्य है—संसार में विश्व समाजवादी सरकार (Socialist Commonwealth) की स्थापना करना, परन्तु उसकी वर्तमान नीति संयुक्त राष्ट्र संघ (United Nations) के माध्यम से संसार के राष्ट्रों में मधुर सम्बन्धों की स्थापना करना और विश्व शांति को बनाये रखना है।

सदस्यता—श्रमिक दल की सदस्यता अधिकांशतः उन व्यक्तियों की है जो श्रमिक हैं। उनमें से अधिकांश नगर के लोग हैं। महत्वपूर्ण सिद्धान्तों और

से यह दल ब्रिटेन की सामान्य जनता में भी बहुत अधिक लोकप्रिय है, क्योंकि श्रमिकों के अतिरिक्त अन्य कई प्रकार के व्यक्ति इसमें शामिल हैं। स्त्रियों के मताधिकार और अन्य अधिकारों का समर्थन करने के कारण यह दल ब्रिटेन में नारी वर्ग में भी काफी लोकप्रिय है। पर्याप्त संख्या में मध्यम वर्ग के लोग भी, जो पूंजीवादी समाज व्यवस्था के विरोधी हैं, श्रमिक दल का समर्थन करते हैं।

संगठन—श्रमिक दल किसी भी अन्य दल की अपेक्षा अधिक संगठित है। दल का संगठन संघीय आधार पर किया गया है। इसमें श्रमिक संघ, समाजवादी सभायें, जिनमें फेबियन सोसायटी, समाजवादी वकीलों की सोसायटी, समाजवादी डाक्टरों और अध्यापकों की सोसायटी, श्रमिकों की राष्ट्रीय सभा आदि प्रमुख हैं। राष्ट्रीय स्तर पर सर्वोच्च उपकरण श्रमिक दल सम्मेलन (Labour Party Conference) है, जिसका अधिवेशन साधारणतः वर्ष में एक बार होता है। अधिकार की दृष्टि से यह सबसे ऊंचे स्तर की संस्था है। यह अकेले ही दलीय विधान में परिवर्तन कर सकता है। इसमें स्थानीय निर्वाचन क्षेत्रों, ट्रेड यूनियनों, महिला सदस्यों और समाजवादी समितियों के निर्वाचित प्रतिनिधि होते हैं। ये दलीय नीति का निर्धारण करते हैं और राष्ट्रीय कार्यकारिणी का निर्वाचन करते हैं। अनुदार दल की तरह से श्रमिक दल का कोई नेता नहीं होता। संसदीय श्रमिक दल का नेता ही श्रमिक दल का नेतृत्व करता है।

श्रमिक दल की एक राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति (National Executive Committee) होती है। इसके द्वारा केन्द्रीय कार्यालय का संचालन और दल की नीति का निर्धारण होता है। इस समिति में 27–28 सदस्य होते हैं। इसी के द्वारा संसद के उम्मीदवारों का नामांकन होता है। इसे किसी भी सदस्य या संगठन को बहिष्कृत करने का अधिकार होता है, जिसकी अपील सम्मेलन (Labour Party Conference) को की जा सकती है। साधारणतया सम्मेलन द्वारा कार्यकारिणी समिति के निर्णयों और प्रस्तावों का अनुमोदन होता रहा है।

अन्य दलों की तरह श्रमिक दल का भी संसदीय संगठन है। दल के नेता का निर्वाचन प्रतिवर्ष यही संगठन करता है। यद्यपि नेता को ही नीति निर्धारण का अधिकार है, परन्तु उसे दलीय सम्मेलन और कार्यकारिणी समिति के निर्देशन में चलना पड़ता है।

अन्य राजनीतिक दल

उक्त तीनों दलों के अतिरिक्त ब्रिटेन में कुछ अन्य छोटे छोटे दल भी हैं, जिनमें प्रमुख साम्यवादी दल, फासीवादी दल तथा स्वतन्त्र श्रमिक दल। साम्यवादी दल की रूस में मंत्री होने के कारण जनता उसे पसन्द नहीं करती। फासीवादी दल का भविष्य भी कुछ उज्ज्वल नहीं है। स्वतन्त्र श्रमिक दल यद्यपि बहुत पुराना है किन्तु इसका महत्व भी प्रायः नगण्य है। यह पहिले श्रमिक दल से मिला-जुला रहता था, परन्तु सन 1931 में यह उससे अलग हो गया, क्योंकि इसकी दृष्टि में श्रमिक दल अधिक प्रगतिशील नहीं था।

।



कानून और न्याय

(LAW AND JUSTICE)

"सामान्य कानून सर्वश्रेष्ठ जन्माधिकार और मानव का सर्वोत्तम उत्तराधिकार है। सामान्य कानून का उद्भव एवं प्रसार वैधानिक इतिहास के एक मुख्य अनुच्छेद का निर्माण करता है।'

—ब्लकस्टोन

ब्रिटेन की कानूनी व न्यायिक व्यवस्था विश्व की सर्वोत्तम कानूनी और न्यायिक व्यवस्थाओं में से एक है। ब्रिटेन में जिस तरह राजतन्त्र का लोकतन्त्रीकरण हुआ है और लोकतन्त्रीय विधान का विकास हुआ है, उसी तरह कानूनी और न्यायिक व्यवस्था भी अनिराधन विकास का ही फल है। ब्रिटिश कानूनी और न्यायिक व्यवस्था पर लोकतान्त्रिक विकास का यह प्रभाव दो रूपों में दिखाई पड़ता है—प्रथम रूप यह है कि वहां कानून के कलेवर का अधिकांश निर्मित कानून के रूप में न होकर स्वयं विकसित कानून के रूप में है जिसे सामान्य कानून (Common Law) के नाम से पुकारा जाता है। यह सामान्य कानून ब्रिटिश लोक-जीवन के रीति रिवाजों पर आधारित है और ब्रिटिश लोक जीवन में गुथ गया है। प्रभाव का दूसरा रूप यह है कि ब्रिटिश कानूनी और न्यायिक व्यवस्था लोकतन्त्र के साथ ही पनपी तथा विकसित हुई है। अतः उसमें व्यक्ति के अधिकारों और उसकी स्वतन्त्रताओं की रक्षा के लोकतान्त्रिक सिद्धांतों को सर्वोपरि स्थान दिया गया है। ब्रिटेन में शासन व्यक्तियों का नहीं, अपितु कानून का है और न्यायाधीश कानून के शासन (Rule of Law) को लागू करने के लिए सतत प्रयत्नशील रहते हैं।

मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। परन्तु जब सरकार शिक्षा सचालन, किसी राष्ट्रीयकृत व्यवसाय का सचालन, श्रमिकों की दशा में सुधार आदि कार्यों का सम्पादन करती है तो उक्त अधिनियम के अनुसार यह माना जाता है कि सरकार "अपने स्वामित्व या व्यापारिक रूप' (Proprietory or business capacity) में कार्य कर रही है। अतः ऐसी दशा में यदि सरकार के कार्य से किसी का अहित होता है तो उसके लिए सरकार के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जा सकती है।

(ii) डायसी की तृतीय व्याख्या की अव्यावहारिकता—डायसी ने तीसरे पहलू में इस बात पर बल दिया है कि कानून का शासन ही, व्यक्ति के अधिकारों का रक्षक है और देश के न्यायालय सामान्यतः उसके अनुसार ही अपने निर्णयों द्वारा उन *अधिकारों की रक्षा करते हैं। वह संसदीय कानूनों या संविधियों से* प्राप्त अधिकारों की ओर ध्यान नहीं देता। आज वास्तविकता यह है कि संसदीय कानूनों का क्षेत्र इतना व्यापक हो गया है कि सामान्य कानून (Common Law) द्वारा प्रदत्त अधिकारों—वैयक्तिक स्वतन्त्रता का अधिकार, स्वरक्षा का अधिकार, विचार अभिव्यक्ति का अधिकार आदि को संसदीय कानूनों की शरण लेनी पड़ती है। आज अनेक व्यक्तिगत अधिकारों की रक्षा से सम्बन्धित निर्णय देश के न्यायालय सामान्य कानून के अन्तर्गत नहीं वरन प्रायः संसदीय कानूनों के अन्तर्गत देते हैं। उदाहरणार्थ, सरकार की ओर से लोगों की गिरफ्तारी की व्यवस्था सामान्य कानून (Common Law) के अनुसार नहीं वरन 'अपराधी न्याय अधिनियम, 1925' (Criminal Justice Act, 1925) जैसे संसदीय कानूनों के अनुसार भी चलती है। सार्वजनिक सभाओं का आयोजन करना व उनमें भाषण देना आदि अधिकार यद्यपि सामान्य कानूनों द्वारा सुरक्षित हैं, परन्तु 1936 के सार्वजनिक व्यवस्था अधिनियम (Public Order Act, 1936) के अनुसार भी उनके बारे में आवश्यक व्यवस्था की गई है। इसी प्रकार, सामान्य कानून का अंश होते हुए भी, बन्दी प्रत्यक्षीकरण (Habeas Corpus) या अपमानजनक लेख-कानून (Law of Libel) को अधिनियमों का रूप दिया गया है।

कानून के शासन के अन्य अपवाद—कानून के शासन के अन्य अपवादों में राजा और न्यायाधीश प्रमुख हैं। राजा कोई गलती नहीं करता–इस कानूनी सिद्धान्त के अनुसार राजा पर कोई दीवानी या फौजदारी अभियोग नहीं लगाया जा सकता। राजा कैसा भी कोई अपराध करे उसे न्यायालय में उपस्थित होने के लिए आदेश नहीं दिया जा सकता। उसे पागल करार देकर उसकी चिकित्सा करायी जा सकती है परन्तु ब्रिटिश कानून में किसी भी पद्धति में उसी के न्यायालय में उस पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। इसी प्रकार यदि *सम्पत्ति सम्बन्धी मामलों में या प्रजा के किसी* व्यक्ति की राजा द्वारा हानि हो जाए तो वह व्यक्ति केवल राजा से प्रार्थना कर सकता है, और राजा चाहे तो अपनी कृपा दृष्टि से न कि प्रार्थी के अधिकार को राजा के लिए, उस क्षति को पूरा कर सकता है। ब्रिटेन में न्यायाधीश भी कानून के

धारणा के अपवाद हैं। न्यायाधीश को अपने सरकारी काम में किसी व्यक्तिगत राय से दोषी नहीं ठहराया जा सकता। यदि न्यायाधीश अपने अधिकार-क्षेत्र से बाहर भी अनजान में कोई अपराध कर दे तो वैयक्तिक रूप से अपराधी नहीं ठहराया जा सकता।

ब्रिटिश कानून एवं न्याय-व्यवस्था की विशेषतायें
(Features of the British Law and Judicial System)

कानून एवं न्याय-व्यवस्था की दृष्टि से सम्पूर्ण देश में एकरूपता (Uniformity) का अभाव है। पूरे ग्रेट-ब्रिटेन में न्यायालयों की एक प्रकार की न्यायप्रणाली और उनका समान संगठन नहीं है। इंगलैण्ड और वहां की कानून व न्याय की व्यवस्था अलग तरह की है, स्काटलैण्ड की अलग तरह की और इसी तरह उत्तरी आयरलैण्ड की भी अलग तरह की है। फिर भी बहुत दिनों से [illegible] निकट सम्पर्क के कारण सभी भागों की कानून व न्याय की व्यवस्था में पर्याप्त समानता आ रही है और हम सम्पूर्ण संयुक्त राज्य (U.K.) की व्यवस्था की कुछ सामान्य विशेषताओं पर दृष्टिपात कर सकते हैं जो सब प्रकार की व्यवस्था के लिये सामान्य हैं।

है। फौजदारी कानून का सम्बन्ध पूरे समाज अथवा राज्य के विरुद्ध किये गये अपराधो से होता है जबकि दीवानी कानूनो का सम्बन्ध समाज के सदस्यो अर्थात व्यक्तियो के अधिकारो, उनके कर्त्तव्यो और दायित्वो से सम्बन्धित झगडो से होता है। फौजदारी कानून के अन्तर्गत अभियोग का सचालन (Prosecution) राज्य द्वारा किया जाता है जबकि दीवानी कानून के अन्तर्गत अभियोग व्यक्तियो की ओर से चलाये जाते हैं। फौजदारी न्यायालयो मे काम का तरीका अन्वेषण-सम्बन्धी (Enquisitorial) होने की अपेक्षा प्राय दोषी सम्बन्धी (Accusatorial) है।

न्यायिक पुनरावलोकन की व्यवस्था का न होना—*ब्रिटेन की ससद वहा* की प्रभु (Sovereign) है। उसके द्वारा पारित अधिनियमो का वैधानिक अथवा अवधानिक ठहराना ब्रिटिश न्यायालयो के अधिकार क्षेत्र मे नही है। ब्रिटिश न्यायालयो का कार्य ससद् के कानूनो के अनुसार न्याय-कार्य करना है। ब्रिटेन मे न्यायिक पुनरावलोकन की ही भाति व्यक्ति के मौलिक अधिकारो की भी वसी व्यवस्था नही है, जसी व्यवस्था अमेरिका अथवा भारत मे है फिर भी वहा व्यक्ति की स्वतन्त्रताओ की उतनी ही रक्षा होती है जितनी अमेरिका अथवा भारत मे, क्योकि सविधान की एक आधारभूत विशेषता है जिसे न्यायालय कानून के शासन को लागू करने के लिये सतत प्रयत्नशील रहते हैं।

जूरी-प्रथा—कानून के शासन की सफलता मे जूरियो का बडा हाथ है। वे जनमत और मानवता को सर्दव ध्यान मे रखते है और कभी-कभी न्याय के विरुद्ध भी जा सकते है या अभियुक्त को दण्ड देना अस्वीकार कर सकते है। ब्रिटेन की न्यायिक व्यवस्था का इतिहास बताता है कि जूरी नागरिको की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये देश के सकुचित और कठोर कानूनो पर समय-समय पर प्रहार करते रहे है। उन्होने अपनी निष्पक्षता, निडरता और समझदारी के लिए विशेष ख्याति प्राप्त की है। ब्रिटेन मे फौजदारी व दीवानी दोनो प्रकार के वादो मे जूरियो के प्रयोग की व्यवस्था पाई जाती है पर दीवानी मुकदमो मे प्राय जूरी का प्रयोग कम होता है।

न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता व निष्पक्षता—ब्रिटिश कानून एव न्याय-व्यवस्था मे न्यायाधीशो की स्वतन्त्रता और निष्पक्षता प्रशसनीय है। न्यायाधीशो पर कार्यपालिका का किसी प्रकार का नियन्त्रण नही रहता और न ही वह उनके काम मे किसी प्रकार का हस्तक्षेप कर सकती है। परिणामस्वरूप सबके साथ एक सा न्याय बरता जाता है। ब्रिटेन मे न्यायाधीशो को वेतन और पद की सुरक्षा प्राप्त है। ससद् के दोनो सदनो की प्रार्थना पर ही वे राजा द्वारा हटाये जा सकते है। पदोन्नति की व्यवस्था भी ऐसी नही है जिससे न्यायाधीशो की निष्पक्षता पर कोई प्रभाव पड सके।

शासन के अपवाद है। न्यायाधीश को अपने सरकारी काम में किसी से दोषी नहीं ठहराया जा सकता। यदि न्यायाधीश अपने अधिकार भी अनजाने में कोई अपराध कर दे तो वैयक्तिक रूप से अपराधी न सकता।

ब्रिटिश कानून एवं न्याय-व्यवस्था की विशेषत
(Features of the British Law and Judicial S

कानून एवं न्याय-व्यवस्था की दृष्टि से सम्पूर्ण दे (Uniformity) का अभाव है। पूरे ग्रेट-ब्रिटेन में न्यायालयों न्यायप्रणाली और उनका समान संगठन नहीं है। इंगलैण्ड और वेल्स न्याय की व्यवस्था अलग तरह की है, स्काटलैण्ड की अलग तर तरह उत्तरी आयरलैण्ड की भी अलग तरह की है। फिर भी चले आ रहे निकट सम्पर्क के कारण सभी भागों की कानून व न्या पर्याप्त समानता आ गई है और हम सम्पूर्ण संयुक्त राज्य (U K) कुछ ऐसी विशेषताओं पर दृष्टिपात कर सकते हैं जो सब प्रदेशों की सामान्य है।

असंहितावद्ध रूप—सम्पूर्ण संयुक्त राज्य में कानून का बद्ध (Codified) नहीं है, अपितु उस रूप में है जिसे सामान्य का Law) की संज्ञा दी जाती है और जिसे हम न्यायालयों के विभिन्न में देख सकते हैं। इसके अतिरिक्त असंहितावद्ध कानून का व औचित्यपूर्ण निर्णयों (Equity) में प्राप्य है।

स्मरणीय है कि अधिकांश कानून के असंहितावद्ध होने से लेना चाहिये कि संहितावद्ध कानून है ही नहीं। ज्यों ज्यों संसदीय अ विस्तार हो रहा है, त्यों त्यों ब्रिटिश कानून का एक बड़ा भाग और प्रदत्त व्यवस्थापन (Statute Law and Delegated Legisl में संहितावद्ध कानून का कलेवर धारण करता जा रहा है।

साधारण कानून और साधारण न्यायालयों की प्रभुता—ब्रिटे कानून और प्रशासनिक कानून में प्रभुता साधारण कानून की है साधारण न्यायालयों व प्रशासनिक न्यायालयों में प्रभुता साधारण है। अधिकांशतः बात यही है कि कानून का शासन प्रशासनिक अधि सामान्य नागरिकों में कोई भेद नहीं मानता। सभी को उन्हीं सामा में उपस्थित होना पड़ता है और सब के ऊपर वही सामान्य विधि ल फिर भी यह अवश्य है कि ब्रिटेन में धीरे-धीरे प्रशासनिक न्याय विकास होता जा रहा है।

फौजदारी व दीवानी कानूनों का अन्तर—ब्रिटिश कानून व में फौजदारी (Criminal) और दीवानी (Civil) कानून के अन्तर प

न्याय-भावना अथवा औचित्यपूर्ण विधि—सामान्य कानून की भूमि पर ही औचित्यपूर्ण निर्णय (Equity) की नींव पड़ी है। समय-समय पर न्यायाधीशों के सामने ऐसे अनेक मामले आये, जिनमें सामान्य कानून लागू नहीं हो सकता था और कभी-कभी अस्पष्ट न्याय तक हो जाता था। ऐसी परिस्थिति में असन्तुष्ट लोग न्यायाधीशों के निर्णयों के विरुद्ध राजा से अपील करते थे। राजा को अपना निर्णय स्वविवेक से मामले के औचित्य (Equity) के आधार पर ही देना पड़ता था। कालान्तर में जब ऐसी अपीलों की संख्या बढ़ गई तो राजा ने उन्हें अपने चांसलर के पास भेजना प्रारम्भ कर दिया। वह चान्सरी नाम के न्यायालय (The Court of Chancery) का प्रमुख होता था। इस न्यायालय का कार्य औचित्य के आधार पर कानून तथा न्याय में सामंजस्य स्थापित करना था। इसके द्वारा जो निर्णय दिए गए और उनसे कानून के जिस रूप का विकास हुआ, उन्हें औचित्यपूर्ण विधि (Equity) की संज्ञा दी गई। इसका उद्देश्य सामान्य कानून (Common Law) की त्रुटियों को दूर करके जनता को वास्तविक एवं सच्चा न्याय प्रदान करना था। इस पृष्ठभूमि में हम यह कह सकते हैं कि औचित्यपूर्ण विधि का आधार विवेक है और यह इस मान्यता पर आश्रित है कि न्याय का कार्य केवल कानून के सूखे ढांचे के अनुसार ही चलना नहीं है बल्कि सूखे ढांचे पर मांस चढ़ाने का कार्य करना भी है ताकि कानून सामाजिक नैतिकता के माप-दण्ड पर खरा उतर सके। चूंकि औचित्यपूर्ण विधि का उद्भव सामान्य कानून की भूमि पर हुआ है, अतः दोनों की अनेक बातें एक-सी हैं। दोनों ही का रूप असंहिताबद्ध कानून (Un codified Law) का है तथा दोनों ही न्यायाधीशों के निर्णयों के फलस्वरूप विकसित हुए हैं। महत्वपूर्ण अन्तर यही है कि जहां सामान्य कानून का उदय मूलतः प्रथाओं से हुआ है वहां औचित्यपूर्ण विधि का उदय विवेक तथा सामाजिक नैतिकता के आधार पर हुआ है।

संसदीय कानून—ब्रिटिश कानून का तीसरा प्रकार संसदीय कानून (Statute Law) का है। सामान्य कानून के साथ-साथ ही संसदीय कानून या संविधि का भी विकास हुआ। अन्तर यही है कि सामान्य कानून का रूप जहां विकसित कानून का है, वहां संसदीय कानूनों का रूप निर्मित कानून का। प्रारम्भ में संसदीय कानून या संविधियों का निर्माण राजाओं के द्वारा ही हुआ, परन्तु ज्यों-ज्यों राजाओं की शक्तियां कम होती गई, त्यों त्यों उनकी कानून निर्माण की शक्ति भी घटती गई और यह संसद के हाथ में पहुँचती गई। अब वर्तमान स्थिति यह है कि कानून निर्माता 'संसद् सहित राजा' (King in Parliament) हैं। संसदीय कानून ही एक प्रकार से पक्का कानून है। यही सर्वोपरि कानून है। जहां इसमें और सामान्य कानून में विरोध होता है, वहां इसे ही माना जाता है। इसका आशय यह नहीं है कि संसदीय कानून सामान्य कानून का निषेध करते हैं, वरन् ये तो उसे लचीला बनाते हैं और उसकी कमियों को पूरा करते हैं।

न्याय की शीघ्रता और प्रवीणता—ब्रिटेन में न्यायिक कार्यवाही शीघ्र होती है। मुकदमों के निर्णयों में प्रायः देर नहीं की जाती। इसके कुछ कारण हैं—प्रथम, उन आवश्यक सिद्धान्तों का अनुसरण किया जाता है जो न्याय व्यवस्था की प्रवीणता के लिए अनिवार्य हैं, जैसे, जूरी प्रथा, तथा न्यायालय में वकील रखने की प्रथा आदि। द्वितीय, ब्रिटिश न्यायाधीशों को वैधिक परिभाषाओं (Legal Technicalities) के निर्वचन में पर्याप्त स्वतन्त्रता मिली हुई है। तृतीय, न्यायिक कार्य-प्रणाली के नियम एक विशिष्ट 'न्यायिक नियम समिति' (Judicial Rule Committee) के द्वारा तैयार किये जाते हैं।

वकीलों की दोहरी प्रणाली—ब्रिटेन के वकील दो वर्गों में विभाजित हैं। प्रथम वर्ग में बैरिस्टर (Barrister) लोग आते हैं जिनका कार्य केवल न्यायालयों में मुकदमों के पक्ष अथवा विपक्ष में बहस करना ही होता है। द्वितीय वर्ग के वकील सोलीसिटर (Solicitors) कहलाते हैं जो न्याय चाहने वाले व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करके उनके मुकदमे तैयार करते हैं।

निःशुल्क कानूनी सहायता—अन्तिम उल्लेखनीय विशेषता निःशुल्क कानूनी सहायता की व्यवस्था है। जो व्यक्ति आर्थिक दृष्टि से निर्बल हो, वह दीवानी मामलों में उच्च न्यायालय (High Court) तथा अपील के न्यायालयों (Court of Appeal) के मामलों में इंगलैंड और वेल्स में तथा दौरा न्यायालय (Courts of Sessions) व शरिफ न्यायालयों (Shereif Courts) के मामलों में स्काटलैंड में कानूनी सहायता मिल सकती है। इसके अतिरिक्त कुछ विशिष्ट प्रकार के दीवानी मामलों में काउंटी न्यायालयों व दौरा न्यायालयों में कानूनी सहायता की व्यवस्था है।

ब्रिटिश कानून के प्रकार
(Kinds of British Law)

ब्रिटेन में तीन प्रकार के कानून हैं—

(1) सामान्य कानून (Common Law)

(2) न्याय भावना अथवा औचित्यपूर्ण विधि (Equity), और

(3) संसदीय कानून (Statute Law)

सामान्य कानून—यह सबसे प्राचीन ब्रिटिश कानून है जिसका आधार लगभग 800 वर्ष पुरानी प्रथाओं में मिलता है। सामान्य कानून का निर्माण न तो राजाओं द्वारा किया गया है और न संसद द्वारा ही। इसका निर्माण तो न्यायाधीशों ने किया है। इसका मूल वे प्रथायें हैं जिनके आधार पर न्यायाधीश समय-समय पर अपने निर्णय देते रहे हैं। ब्लैकस्टोन के शब्दों में "यह (सामान्य कानून) सर्वश्रेष्ठ जन्मसिद्ध अधिकार और मानव का सर्वोत्तम उत्तराधिकार है।"

न्याय-भावना अथवा औचित्यपूर्ण विधि—सामान्य कानून की भूमि पर ही औचित्यपूर्ण निर्णय (Equity) की नींव पड़ी है। समय-समय पर न्यायाधीशों के सामने ऐसे अनेक मामले आये, जिनमें सामान्य कानून लागू नहीं हो सकता था और कभी-कभी अस्पष्ट न्याय तक हो जाता था। ऐसी परिस्थिति में असन्तुष्ट लोग न्यायाधीशों के निर्णयों के विरुद्ध राजा से अपील करते थे। राजा को अपना निर्णय *स्वविवेक से मामले के औचित्य (Equity) के आधार पर ही देना पड़ता था।* कालान्तर में जब ऐसी अपीलों की संख्या बढ़ गई तो राजा ने उन्हें अपने चांसलर के पास भेजना प्रारम्भ कर दिया। वह चान्सरी नाम के न्यायालय (The Court of Chancery) का प्रमुख होता था। इस न्यायालय का कार्य औचित्य के आधार पर कानून तथा न्याय में सामंजस्य स्थापित करना था। इसके द्वारा जो निर्णय दिए गए और उनसे कानून के जिस रूप का विकास हुआ, उन्हें औचित्यपूर्ण विधि (Equity) की संज्ञा दी गई। इसका उद्देश्य सामान्य कानून (Common Law) की त्रुटियों को दूर करके जनता को वास्तविक एवं सच्चा न्याय प्रदान करना था। इस पृष्ठभूमि में हम यह कह सकते हैं कि औचित्यपूर्ण विधि का आधार विवेक है और यह इस भावना पर आश्रित है कि न्याय का कार्य केवल कानून के सूखे ढांचे के अनुसार ही चलना नहीं है बल्कि सूखे ढांचे पर मांस चढ़ाने का कार्य करना भी है ताकि कानून सामाजिक नैतिकता के माप-दण्ड पर खरा उतर सके। चूंकि औचित्यपूर्ण विधि का उद्भव सामान्य कानून की भूमि पर हुआ है अतः दोनों की अनेक बातें एक सी हैं। दोनों ही का रूप असंहितावद्ध कानून (Un codified Law) का है तथा दोनों ही न्यायाधीशों के निर्णयों के फलस्वरूप विकसित हुए हैं। महत्वपूर्ण अन्तर यही है कि जहां सामान्य कानून का उदय मूलतः प्रथाओं से हुआ है वहां औचित्यपूर्ण विधि का उदय विवेक तथा सामाजिक नैतिकता के आधार पर हुआ है।

संसदीय कानून—*ब्रिटिश कानून का तीसरा प्रकार संसदीय कानून (Statute* Law) का है। सामान्य कानून के साथ-साथ ही संसदीय कानून या सविधि का भी विकास हुआ। अन्तर यही है कि सामान्य कानून का रूप जहां विकसित कानून का है, वहां संसदीय कानूनों का रूप निर्मित कानून का। प्रारम्भ में संसदीय कानून या सविधियों का निर्माण राजाओं के द्वारा ही हुआ, परन्तु ज्यों-ज्यों राजाओं की शक्तियां कम होती गईं, त्यों त्यों उनकी कानून निर्माण की शक्ति भी घटती गई और यह संसद के हाथ में पहुँचती गई। अब वर्तमान स्थिति यह है कि कानून *निर्माता संसद् सहित राजा' (King in Parliament) हैं।* संसदीय कानून ही एक प्रकार से पक्का कानून है। यही सर्वोपरि कानून है। जहां इसमें और सामान्य कानून में विरोध होता है, वहां इसे ही माना जाता है। इसका आशय यह नहीं है कि संसदीय कानून सामान्य कानून का निषेध करते हैं, वरन् ये तो उसे लचीला बनाते हैं और उसकी कमियों को पूरा करते हैं।

न्याय की शीघ्रता और प्रवीणता—ब्रिटेन में न्यायिक कार्यवाही शीघ्र होती है। मुकदमों के निर्णयों में प्रायः देर नहीं की जाती। इसके कुछ कारण हैं—प्रथम, उन आवश्यक सिद्धान्तों का अनुसरण किया जाता है जो न्याय व्यवस्था की प्रवीणता के लिए अनिवार्य हैं, जैसे,जूरी प्रथा, सस्ता न्यायालय, वकील रखने की प्रथा आदि। द्वितीय, ब्रिटिश न्यायाधीश को वैधिक परिभाषाओं (Legal Technicalities) के निवचन में पर्याप्त स्वतन्त्रता मिली हुई है। तृतीय, न्यायिक कार्य-प्रणाली के नियम एक विशिष्ट 'न्यायिक नियम समिति' (Judicial Rule Committee) के द्वारा तैयार किये जाते हैं।

वकीलों की दोहरी प्रणाली—ब्रिटेन के वकील दो वर्गों में विभाजित हैं। प्रथम वर्ग में बैरिस्टर (Barrister) लोग आते हैं जिनका कार्य केवल न्यायालयों में मुकदमों के पक्ष अथवा विपक्ष में बहस करना ही होता है। द्वितीय वर्ग के वकील सोलीसिटर (Solicitors) कहलाते हैं जो न्याय चाहने वाले व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करके उनके मुकदमे तैयार करते हैं।

निःशुल्क कानूनी सहायता—अन्तिम उल्लेखनीय विशेषता निःशुल्क कानूनी सहायता की व्यवस्था है। जो व्यक्ति आर्थिक दृष्टि से निर्बल हो, उन्हें दीवानी मामलों में उच्च न्यायालय (High Court) तथा अपील के न्यायालयों (Court of Appeal) के मामलों में इंगलैण्ड और वेल्स में तथा दौरा न्यायालय (Courts of Sessions) व शैरिफ न्यायालयों (Sherrif Courts) के मामलों में स्काटलैंड में कानूनी सहायता मिल सकती है। इसके अतिरिक्त कुछ विशिष्ट प्रकार के दीवानी मामलों में काउण्टी न्यायालयों व दाण्डिक न्यायालयों में कानूनी सहायता की व्यवस्था है।

ब्रिटिश कानून के प्रकार

(Kinds of British Law)

ब्रिटेन में तीन प्रकार के कानून हैं—

(1) सामान्य कानून (Common Law)

(2) न्याय भावना अथवा औचित्यपूर्ण विधि (Equity), एवं

(3) संसदीय कानून (Statute Law)

सामान्य कानून—यह सबसे प्राचीन ब्रिटिश कानून है जिसका आधार लगभग 800 वर्ष पुरानी प्रथाओं में मिलता है। सामान्य कानून का निर्माण न तो राजाओं द्वारा किया गया है और न संसद द्वारा ही। इसका निर्माण तो न्यायाधीशों ने किया है। इसका मूल वे प्रथायें हैं जिनके आधार पर न्यायाधीश समय-समय पर अपने निर्णय देते रहे हैं। ब्लैकस्टोन के शब्दों में "यह (सामान्य कानून) सर्वश्रेष्ठ जन्माधिकार और मानव का सर्वोत्तम उत्तराधिकार है।"

न्याय-भावना अथवा औचित्यपूर्ण विधि—सामान्य कानून की भूमि पर ही औचित्यपूर्ण निर्णय (Equity) की नींव पड़ी है। समय-समय पर न्यायाधीशों के सामने ऐसे अनेक मामले आये, जिनमें सामान्य कानून लागू नहीं हो सकता था और कभी-कभी अस्पष्ट न्याय तक हो जाता था। ऐसी परिस्थिति में असन्तुष्ट लोग न्यायाधीशों के निर्णयों के विरुद्ध राजा से अपील करते थे। राजा को अपना निर्णय स्वविवेक से मामले के औचित्य (Equity) के आधार पर ही देना पड़ता था। कालान्तर में जब ऐसी अपीलों की संख्या बढ़ गई तो राजा ने उन्हें अपने चांसलर के पास भेजना प्रारम्भ कर दिया। वह चान्सरी नाम के न्यायालय (The Court of Chancery) का प्रमुख होता था। इस न्यायालय का कार्य औचित्य के आधार पर कानून तथा न्याय में सामंजस्य स्थापित करना था। इसके द्वारा जो निर्णय दिए गए और उनसे कानून के जिस रूप का विकास हुआ, उन्हें औचित्यपूर्ण विधि (Equity) की संज्ञा दी गई। इसका उद्देश्य सामान्य कानून (Common Law) की त्रुटियों को दूर करके जनता को वास्तविक एवं सच्चा न्याय प्रदान करना था। इस पृष्ठभूमि में हम यह कह सकते हैं कि औचित्यपूर्ण विधि का आधार विवेक है और यह इस मान्यता पर आश्रित है कि न्याय का कार्य केवल कानून के सूखे ढांचे के अनुसार ही चलना नहीं है बल्कि सूखे ढांचे पर मांस चढ़ाने का कार्य करना भी है ताकि कानून सामाजिक नैतिकता के माप-दण्ड पर खरा उतर सके। चूंकि औचित्यपूर्ण विधि का उद्भव सामान्य कानून की भूमि पर हुआ है, अतः दोनों की अनेक बातें एक सी हैं। दोनों ही का रूप असंहितावद्ध कानून (Uncodified Law) का है तथा दोनों ही न्यायाधीशों के निर्णयों के फलस्वरूप विकसित हुए हैं। महत्वपूर्ण अन्तर यही है कि जहां सामान्य कानून का उदय मूलतः प्रथाओं से हुआ है वहां औचित्यपूर्ण विधि का उदय विवेक तथा सामाजिक नैतिकता के आधार पर हुआ है।

संसदीय कानून—ब्रिटिश कानून का तीसरा प्रकार संसदीय कानून (Statute Law) का है। सामान्य कानून के साथ-साथ ही संसदीय कानून या संविधि का भी विकास हुआ। अन्तर यही है कि सामान्य कानून का रूप जहां विकसित कानून का है, वहां संसदीय कानूनों का रूप निर्मित कानून का। प्रारम्भ में संसदीय कानून या संविधियों का निर्माण राजाज्ञा के द्वारा ही हुआ, परन्तु ज्यों-ज्यों राजाओं की शक्तियां कम होती गईं, त्यों-त्यों उनकी कानून निर्माण की शक्ति भी घटती गई और यह संसद के हाथ में पहुंचती गई। अब वर्तमान स्थिति यह है कि कानून-निर्माता 'संसद सहित राजा' (King in Parliament) है। संसदीय कानून ही एक प्रकार से पक्का कानून है। यही सर्वोपरि कानून है। जहां इसमें और सामान्य कानून में विरोध होता है, वहां इसे ही माना जाता है। इसका आशय यह नहीं है कि संसदीय कानून सामान्य कानून का निषेध करते हैं, वरन् ये तो उसे लचीला बनाते हैं और उसकी कमियों को पूरा करते हैं।

ब्रिटिश न्याय-व्यवस्था का संगठन
(Organisation of the British Judiciary)

ब्रिटेन की आधुनिक न्याय-व्यवस्था सन् 1870 के बाद के अधिनियमों द्वारा विनियमित होती है। इससे पहले यहां के न्यायालयों में एकरूपता का पूर्ण अभाव था। देश में विभिन्न प्रकार के न्यायालय बिखरे हुए थे और उनके कार्य क्षेत्र सुनिश्चित नहीं थे। दीवानी न्यायालयों, फौजदारी न्यायालयों, इक्विटी न्यायालयों, धार्मिक न्यायालयों आदि के कार्य-क्षेत्र स्पष्ट नहीं थे और न्यायिक व्यवस्था बड़े जटिल रूप में थी। देश के इन समस्त न्यायालयों को एक सूत्र में बांधने के लिए और इनके संगठन एवं कार्य पद्धति में समानता लाने के लिए संसद् ने 1873 और 1879 में जूडीकेचर अधिनियम (Judicature Act) पारित किये। देश के सब न्यायालयों को एक ही सर्वोच्च न्यायालय की विभिन्न शाखाओं का रूप दे दिया गया। परन्तु फिर भी अब तक सम्पूर्ण ब्रिटेन में एक-से न्यायालय नहीं पाये जाते। इंगलैण्ड और वेल्स में तो एक से ही न्यायालय है, किन्तु स्काटलैण्ड में भिन्न प्रकार के हैं तथा उत्तरी आयरलैंड में भी भिन्न प्रकार के ही हैं। हम पहले इंगलैंड और वेल्स के न्यायालयों का वर्णन करेंगे और तत्पश्चात् स्काटलैंड व आयरलैंड के न्यायालयों के संगठन को भी संक्षेप में देखेंगे।

इंगलैण्ड और वेल्स के विधि न्यायालय

इंगलैंड और वेल्स में एक से ही न्यायालय हैं। ये तीन प्रकार के हैं—

(1) दीवानी न्यायालय (Civil Courts)—ये न्यायालय नागरिकों के आपसी मामलों का निपटारा करते हैं, जैसा कि भारत में होता है।

(2) फौजदारी न्यायालय (Criminal Courts)—ये उन मामलों का निबटारा करते हैं, जिनका सम्बन्ध सार्वजनिक कानून के उल्लंघन से होता है और जिनमें कानूनी कार्यवाही का संचालन राज्य की ओर से किया जाता है।

(3) प्रिवी परिषद् की न्यायिक समिति (Judicial Committee of the Privy Council)—यह समिति ब्रिटिश उपनिवेशों और ब्रिटेन के अधीनस्थ राज्यों से आने वाली अपीलें भी सुनती है। इसमें इंगलैंड के धार्मिक न्यायालयों से आने वाली अपीलें भी सुनी जाती हैं। इसके सदस्य प्रायः वे ही होते हैं जो न्याय के उच्चतम न्यायालय (Supreme Court of Judicature) के रूप में बैठते हैं और लार्ड-सभा के सदस्य होते हैं। इसमें कम से कम एक न्यायाधीश किसी उपनिवेश या उस राज्य से आता है, जहां से अपीलें भेजी गई हैं।

यह स्मरणीय है कि दीवानी व फौजदारी दोनों ही न्यायालयों के अनेक उपविभाग हैं। केन्द्रीय अथवा उच्चतर न्यायालय अधिकांशतः लन्दन में हैं जबकि स्थानीय एवं छोटे न्यायालय देश भर में बिखरे हुए हैं। दीवानी और फौजदारी दोनों ही प्रकार के मामलों का शीर्ष स्थलीय न्यायालय लार्ड सभा (House of

Lords) है। लार्ड सभा न्यायालय के रूप में लार्ड चान्सलर की अध्यक्षता में बैठती है और इसमें केवल न्यायकर्ता लार्ड ही सम्मिलित होते हैं। इसी प्रकार उपनिवेशों और अधीनस्थ राज्यों से आई हुई अपीलें सुनने के लिए प्रिवी परिषद् की न्याय समिति बैठती है।

इंगलैंड की वर्तमान न्यायपालिका का संगठन निम्न रेखाचित्र से भली प्रकार समझ में आ जाएगा।

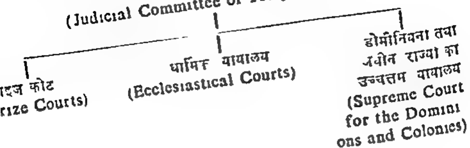
(1) फौजदारी न्यायालय (Criminal Courts)

लार्ड-सभा (House of Lords)
(राज्य का सर्वोच्च न्यायालय)
|
आपराधिक मामलों में अपील का न्यायालय
(Court of Criminal Appeal)
|
- क्वार्टर सेशन्स (Quarter Sessions)
  - पैटी सैशन्स (Petty Sessions)
  - कारोनर्स कोर्ट (Coroners Court)
- हाइकोर्ट के एसाइजेज (Assizes of High Court) (सिर्फ बड़े-बड़े अपराधों के लिए)

(2) दीवानी न्यायालय (Civil Courts)

लार्ड सभा (House of Lords)
(राज्य का सर्वोच्च न्यायालय)

अपील का न्यायालय
(Court of Appeal)
न्याय का उच्च न्यायालय
(High Court of Justice)
|
- हाई कोर्ट के ऐसाइजेस (Assizes of High Court)
- सम्राट की न्याय मंडली (King s Bench Division)
  - क्वार्टर सैशन्स (Quarter Sessions)
  - काउण्टी न्यायालय (County Courts)
- चान्सरी डिवीजन (Chancery Division)
- प्रोबेट, तलाक (Probates, Divorce and Admiralty) Division)



फौजदारी न्यायालय (Criminal Courts)

फौजदारी न्यायालयों में उन अभियोगों की सुनवाई होती है जो सार्वजनिक कानून के उल्लंघन से सम्बन्धित होते हैं, उदाहरणार्थ हत्या, चोरी, डकैती, लड़ाई आदि। फौजदारी न्यायालयों का ढांचा इस प्रकार है—

(1) पैटी सैशन्स या कोर्ट आफ समरी जूरिस्डिक्शन (Petty Sessions Court of Summary Jurisdiction)—ये न्यायालय सबसे छोटे न्यायालय हैं और इनमें स्थानीय मजिस्ट्रेट जो 'शान्ति न्यायाधीश' (Justices of Peace) कहलाते हैं, न्याय करते हैं। ये अवैतनिक (Honorary) होते हैं। लन्दन और अन्य बड़े-बड़े नगरों में ये प्राय वैतनिक (Stipendiary) भी होते हैं। इन शान्ति न्यायाधीशों की लार्ड चांसलर नियुक्त करता है। इनका क्षेत्राधिकार केवल काउण्टी तक ही सीमित है। प्रत्येक काउण्टी कई जिलों में विभक्त होती है और प्रत्येक जिले में एक एक पैटीसेशन्स का न्यायालय होता है। पैटी सैशन्स के न्यायालय में एक न्यायाधीश भी मुकदमा सुनता है और दो या अधिक मिलकर भी मुकदमे सुनते हैं। एक न्यायाधीश मामूली फौजदारी मुकदमे ही सुनता है। जब दो या अधिक न्यायाधीश मुकदमे सुनते हैं तो उनके न्यायालय को 'Court of Summary Jurisdiction' कहा जाता है और यह न्यायालय 6 महीने तक का कारावास और 50 पौण्ड से लेकर 100 या किसी किसी संगीन मामले में 500 पौण्ड तक जुर्माना कर सकते हैं। कुछ संगीन मामलों में कारावास की अवधि 1 वर्ष तक की हो सकती है।

(2) कोरोनर्स कोर्ट (Coroner's Court)—यह न्यायालय वास्तव में न्यायालय नहीं है। इसमें एक कोरोनर (Coroner) होता है जो प्राय डाक्टर या वकील होता है। यह काउण्टी अथवा बरो परिषद (County or Borough Council) द्वारा नियुक्त किया जाता है। यह जूरी की सहायता से अथवा उसके बिना भी अपना कार्य करता है। उसका कार्य किसी व्यक्ति की रहस्यमय, आकस्मिक

अथवा अप्राकृतिक मृत्यु के कारणों का पता लगाना है। इसकी नियुक्ति जीवन भर के लिए की जाती है।

(3) क्वाटर सेशन्स (Quarter Sessions)—ये न्यायालय सब काउण्टियों (Counties) में और सब नगरों (Boroughs) में होते हैं। इनमें छोटे न्यायालयों की अपीलें आती हैं और ये प्रायः उन मामलों की सुनवाई करते हैं जिनमें मृत्यु दण्ड की आवश्यकता होती है या जो मामले अत्यधिक पेचीदे होते हैं परन्तु हत्या, देशद्रोह, कपट-लेखन आदि के मामले इनके क्षेत्र में नहीं आते। न्यायालयों का सत्र 3 मास होता है और ये वर्ष में प्रायः 4 बार न्याय कार्य करते हैं।

(4) एसाइजेज (Assizes)—इन न्यायालयों का रूप उच्च न्यायालय (High Court) की शाखाओं का होता है। ये भ्रमणशील न्यायालय हैं। इनके न्यायाधीश वर्ष में तीन या चार काउण्टियों या नगरों में जाकर फौजदारी या दण्ड सम्बन्धी मामले सुनते या निर्णय देते हैं। इन न्यायालयों में गम्भीर मामलों की सुनवाई होती है। कत्ल आदि के मुकदमों की ये सीधी सुनवाई कर सकते हैं। उनको क्वाटर सेशन्स से आई हुई अपीलें सुनने का अधिकार है। इनके अधिकार क्षेत्र में मौलिक मामले भी आते हैं।

(5) क्राउन न्यायालय (Crown Courts)—लीवरपूल तथा मैनचेस्टर में कार्य की अधिकता के कारण दो विशेष न्यायालयों की स्थापना की गई है, जिन्हें क्राउन न्यायालय कहा जाता है। ये न्यायालय इन स्थानों में क्वाटर सेशन्स का भी कार्य करते हैं और दक्षिण लंकाशायर के लिए ऐसाइजेज न्यायालय का भी कार्य करते हैं।

(6) अपील का न्यायालय (Court of Criminal Appeal)—क्वाटर सेशन्स, ऐसाइजेज और क्राउन न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध अपील, फौजदारी की अपील न्यायालय (Court of Criminal Appeal) में सुनी जाती हैं। फौजदारी की अपील कानूनी आधार पर अभियुक्त की ओर से भी हो सकती है और अभियोक्ता की ओर से भी। अपील न्यायालय में लार्ड चीफ जस्टिस (Lord Chief Justice) तथा उच्च न्यायालय की सम्राट बेंच मण्डली (King's Bench Division) के कम से कम तीन न्यायाधीश होते हैं। साधारणतः इस न्यायालय के निर्णय अन्तिम होते हैं।

दीवानी न्यायालय (Civil Courts)

दीवानी न्यायालयों में नागरिकों के पारस्परिक मामलों को तय किया जाता है, उदाहरणार्थ, लोगों में सम्पत्ति विषयक विवाद, मान हानि विवाद आदि दीवानी न्यायालयों का ढांचा इस प्रकार है—

(1) काउण्टी न्यायालय (County Courts)—ये न्यायालय दीवानी मामलों में सबसे निम्न स्तर के न्यायालय हैं। इनकी संख्या लगभग 400 है और

इनकी स्थिति ऐसी है कि सभी क्षेत्रों के लिए न्यायालय अधिक दूरी पर नहीं पड़ते। एक न्यायाधीश के दौरा क्षेत्र में एक या एक से अधिक न्यायालय आते हैं। कार्य अधिक होने पर अतिरिक्त न्यायाधीशों की नियुक्ति भी कर दी जाती है। काउन्टी न्यायाधीशों की नियुक्ति लार्ड चांसलर के परामर्श पर सम्राट द्वारा की जाती है। काउन्टी न्यायालय किसी निश्चित स्थान पर नहीं रहता वरन् भ्रमण करता रहता है।

काउन्टी न्यायालयों के न्याय क्षेत्र में वे सब मुकदमे आते हैं, जिनमें दावे की रकम 400 पौण्ड या इससे कम होती है या भूमि पर अधिकार प्राप्ति के मुकदमों में उस भूमि का मूल्य 100 पौंड वार्षिक होता है। इस सीमा से ऊपर के मुकदमों की सुनवाई सम्बन्धित पक्षों की सहमति से काउन्टी न्यायालयों में ही हो सकती है अथवा उन्हें उच्च न्यायालयों में भेजा जा सकता है। आजकल काउन्टी न्यायालयों का क्षेत्राधिकार बहुत बढ़ गया है। ये कुछ मामलों में दिवालिया सम्बन्धी मुकदमे सुन सकते हैं, जहां कम्पनी की पूंजी 1,000 पौंड से अधिक नहीं हो। मान हानि आदि से सम्बन्धित मामलों की सुनवाई काउन्टी न्यायालयों में नहीं हो सकती।

(2) न्याय या उच्च न्यायालय (High Court of Justice)—यह न्याय के सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court of Judicature) का ही एक भाग होता है। इसका न्याय क्षेत्र प्रारम्भिक व अपील सम्बन्धी दोनों ही प्रकार का होता है और इसके अन्तर्गत दीवानी के समस्त तथा फौजदारी के कुछ मामले आते हैं। इसमें 'लार्ड चीफ जस्टिस' और लगभग 30 अन्य न्यायाधीश होते हैं। सुविधा के लिए इस न्यायालय के तीन विभाग कर दिये गये हैं—

(i) राजा या रानी का बेंच विभाग (King or Queen's Bench Division),

(ii) चांसरी विभाग (Chancery Division), एवम्

(iii) वसीयत, वैवाहिक सम्बन्ध विच्छेद व समुद्र विभाग (Probate, Divorce and Admiralty Division)

उक्त तीनों विभाग मिलकर, सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court of Judicature) कहलाते हैं, यद्यपि ये सब सदा अलग-अलग ही अपना न्याय कार्य करते हैं। रानी का बेंच विभाग साधारण दीवानी मामलों की सुनवाई करता है। चांसरी विभाग मुख्यतः औचित्यपूर्ण निर्णय नैसर्गिक विधि (Equity) के मामलों की सुनवाई करता है। वसीयत, वैवाहिक, सम्बन्ध-विच्छेद व समुद्र विभाग, जैसा कि नाम से स्पष्ट है, वसीयत, वैवाहिक सम्बन्ध विच्छेद अथवा तलाक एवं समुद्र के मामलों की सुनवाई करता है।

यद्यपि विभिन्न विभागों के विभिन्न कार्य क्षेत्र हैं तथापि कोई भी न्यायाधीश किसी भी विभाग में काम कर सकता है और एक विभाग से दूसरे विभाग में मुकदमे जा सकते हैं। यदि मुकदमे की मालियत काउन्टी न्यायालय के क्षेत्राधिकार

से बाहर हो तो उच्च न्यायालय के किसी विभाग मे सुनवाई होती है । प्रारम्भिक स्तर के मामलो मे न्यायाधीश सुनवाई करते है, अपील के मामलो म प्राय तीन न्यायाधीश सुनवाई करते है और कुछ मामलो म दो न्यायाधीशो द्वारा तथा बहुत कम मामलो म एक न्यायाधीश द्वारा मुकदमे सुने जाते है ।

(3) अपील का न्यायालय (Court of Appeal)—यह न्यायालय काउन्टी न्यायालय और उच्च न्यायालय की अपीलें सुनता है । यह भी सर्वोच्च न्यायालय का ही एक भाग है । इसमे 'लार्ड चासलर तथा अन्य 'लार्ड जस्टिस' होते है, जो लार्ड चासलर द्वारा मनोनीत किये जाने पर राजा या रानी द्वारा नियुक्त किये जाते है । मास्टर ऑफ राल्स (Master of Rolls) इसका अध्यक्ष होता है । लार्ड जस्टिसो की सख्या 8 होती है । इस न्यायालय मे अपीलें केवल विधि तथा तथ्य (Fact) के प्रश्न पर ही होती है ।

(4) राज्य का सर्वोच्च न्यायालय लार्ड सभा (House of Lords)—लार्ड सभा इगलैण्ड म न्याय का सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court of Judicature) है । यह न्यायालय इगलण्ड की न्याय व्यवस्था का केन्द्र है जिसको दीवानी और फौजदारी दोनो ही प्रकार के क्षेत्राधिकार प्राप्त है । उच्च न्यायालय और अपील न्यायालय दोनो सर्वोच्च न्यायालय के दो विभाग है ।

जब अपील के अन्तिम न्यायालय के रूप मे लॉर्ड सभा काय करती है तो उसम केवल 9 साधारण अपील लार्ड स (Lords of Appeal in Ordinary) भाग लेते है और न्यायालय की गणपूर्ति (Quorum) कम से कम तीन न्यायाधीशो से होती है। इसके अतिरिक्त लॉर्ड सभा के वे सदस्य भी न्याय काय म भाग ले सकते हैं, जो न्यायिक क्षेत्र म उच्च पद प्राप्त हो या रहे हो । जब लॉर्ड सभा न्यायालय के रूप मे बठती है तो मुकदमो की सुनवाई व्यवस्थापिका भवन के एक समिति कक्ष (Committee Room) म होती है और लॉर्ड चासलर उसका अध्यक्ष होता है ।

प्रिवी कौंसिल की न्यायिक समिति

(Judicial Committee of Privy Council)

दीवानी और फौजदारी न्यायालयो के अतिरिक्त ब्रिटेन म एक अन्य न्यायालय भी है जिसको 'The Judicial Committee of Privy Council' के नाम से पुकारा जाता है । इसके समक्ष ब्रिटिश साम्राज्य के अधीनस्थ प्रदेशो के उच्चतम न्यायालयो द्वारा किये गये निणयो के विरुद्ध अपील की जाती है । इसके अतिरिक्त कतिपय अन्य अपीलें भी इसमे सुनी जाती है—

(क) ब्रिटेन के चच के न्यायालयो (Ecclesiastical Courts) के निणय के विरुद्ध अपील ।

(ग) आइल ऑफ दी मैन तथा इंग्लिश चैनल के द्वीपों के न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों के विरुद्ध अपील।

(घ) प्राइज न्यायालय (Prize Courts) के निर्णयों के विरुद्ध अपील।

इस न्यायिक समिति में 30 न्यायाधीश होते हैं। लार्ड चांसलर, प्रिवी कौंसिल का लार्ड प्रेसीडेंट तथा हाउस ऑफ लार्ड्स के अपील लॉर्ड्स इसके सदस्य अवश्य होते हैं। इनके अतिरिक्त अन्य व्यक्ति भी इसमें न्यायाधीश नियुक्त किये जाते हैं। इस समिति के द्वारा निर्णयों की घोषणा नहीं की जाती। यह न्यायिक समिति केवल राजा को विशेष अभियोग के विषय में विशेष प्रकार का निर्णय देने का परामर्श देती है। इसके निर्णयों के विरुद्ध कहीं भी अपील नहीं की जा सकती है। इस न्यायालय में बहुमत के द्वारा एक सर्व सम्मत निर्णय दिया जाता है। इसके निर्णयों में विरोधी मत का कोई उल्लेख नहीं होता। यह न्यायालय अपने पूर्व निर्णयों से प्रतिबंधित नहीं होता।

स्काटलैंड के विधि न्यायालय : फौजदारी न्यायालय

स्काटलैंड में गम्भीर फौजदारी मामलों की सुनवाई पूर्ण प्रक्रिया (Solemn Procedure) द्वारा होती है। न्यायाधीश अभियोग की सुनवाई जूरी के साथ करते हैं। फौजदारी साधारण मामलों की सुनवाई सरसरी प्रक्रिया (Summary procedure) के अनुसार की जाती है जिसमें न्यायाधीश बिना जूरी के न्याय कार्य करते हैं। स्काटलैंड में फौजदारी न्यायालयों का ढांचा मुख्यतः इस प्रकार है—

बर्ग न्यायालय—स्काटलैंड में बर्ग या पुलिस न्यायालय (Burgh or Police Courts) सबसे नीचे स्तर पर हैं। ये अत्यन्त साधारण मामलों की सुनवाई करते हैं।

जस्टिस ऑफ पीस न्यायालय—बर्ग न्यायालय से ऊपर के स्तर पर जस्टिस ऑफ पीस न्यायालय (Justice of Peace Courts) हैं। इनमें वयस्क व्यक्तियों के विरुद्ध सरसरी प्रक्रिया (Summary Procedure) के अनुसार अभियोगों की सुनवाई की जाती है।

शैरिफ न्यायालय—जस्टिस ऑफ पीस न्यायालय से ऊपर के स्तर पर शैरिफ न्यायालय (Sheriff Courts) हैं जिनमें शैरिफ लोग न्यायाधीशों का कार्य करते हैं। शैरिफ न्यायालय फौजदारी व दीवानी दोनों ही प्रकार के मामलों की सुनवाई करते हैं। इनका न्याय क्षेत्र बड़ा व्यापक है।

उच्च-न्यायालय—शैरिफ न्यायालयों से ऊपर के स्तर का न्यायालय स्कॉटलैंड में उच्च न्यायालय (High Court of Judiciary) है। प्रारम्भिक न्याय क्षेत्र का यह सबसे ऊंचा न्यायालय है। इसका कार्यालय एडिनबरा में है, यद्यपि इसके न्यायाधीश दौरे पर न्याय कार्य करने जाते हैं। लार्ड जस्टिस जनरल (Lord Justice General) जो दौरा न्यायालय (Court of Sessions) का भी अध्यक्ष होता है, लार्ड जस्टिस क्लर्क (Lord Justice Clerk) और 13 लार्ड कमिश्नर्स (Lord Commissioners) जो दौरा न्यायालय के न्यायाधीश भी होते हैं, में से

कोई भी उच्च न्यायालय में न्यायाधीश की हैसियत से मामलों की सुनवाई कर सकता है।

फौजदारी अपील—स्काटलैंड में फौजदारी के मामलों की अपील की व्यवस्था यह है कि उच्च न्यायालय के व्यक्तिगत न्यायाधीशों या शरिफ न्यायालय के अभियोग की पूर्ण प्रक्रिया (Solemn Procedure) द्वारा जिन मामलों का निर्णय किया गया हो, उन निर्णयों के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील हो सकती है। यदि अपील का आधार कानूनी हो तो उच्च न्यायालय की आज्ञा या व्यक्तिगत न्यायाधीश के प्रमाण पत्र के बिना ही अपील की जा सकती है। लेकिन दूसरे मामले में अपील तभी सम्भव है जब या तो उच्च न्यायालय इसके लिए अनुमति दे दे या व्यक्तिगत न्यायाधीश यह प्रमाण पत्र दे दे कि मामला अपील के योग्य है। किसी भी अपील की सुनवाई के लिये उच्च न्यायालय के तीन या तीन से अधिक न्यायाधीश बैठते हैं और वे जो भी निर्णय देते हैं वह अन्तिम होता है। सरसरी प्रक्रिया (Summary Procedure) द्वारा दण्ड प्राप्त व्यक्ति भी उच्च-न्यायालय में अपील कर सकते हैं, परन्तु उनकी अपील केवल कानून और प्रक्रिया के आधार पर ही हो सकती है।

स्काटलैंड के दीवानी न्यायालय

शरिफ न्यायालय—इन न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र में प्रायः सभी साधारण दीवानी मामले आ जाते हैं। शरिफ और उप शरिफ (Sheriff and Sub-Sheriff) न्याय-कार्य का संपादन करते हैं। 5 पौण्ड से कम मूल्य के झगड़े जस्टिस ऑफ पीस न्यायालय निपटा सकते हैं।

सेशन न्यायालय—इस न्यायालय (Court of Sessions) का न्याय क्षेत्र सर्वव्यापी है किन्तु यह एडिनबरा में ही रहकर न्याय कार्य करता है। विवाह-विच्छेद के मामलों में इसका एकाधिकार है। इस न्यायालय के दो भाग हैं—आउटर हाउस (Outer House) तथा इनर हाउस (Inner House)। आउटर हाउस का अधिकार क्षेत्र प्रारम्भिक है जबकि इनर हाउस प्रमुखतः अपील का न्यायालय है। इनर हाउस के निर्णय के विरुद्ध लार्ड सभा में अपील की जा सकती है।

स्काटिश भूमि न्यायालय—स्काटलैंड में स्काटिश भूमि न्यायालय (Scottish Land Court) एक विशिष्ट प्रकार का न्यायालय है जो भूमि-सम्बन्धी कुछ मामलों की सुनवाई करता है और सेशन न्यायालय के न्यायाधीश के पद के स्तर का कोई भी न्यायाधीश इस न्यायालय की अध्यक्षता कर सकता है।

उत्तरी आयरलैंड न्याय व्यवस्था

उत्तरी आयरलैंड के न्यायालयों का संगठन तथा उनकी न्याय व्यवस्था इंगलैंड और वेल्स के समान है, केवल स्थानीय आवश्यकतानुसार उनमें कुछ परिवर्तन कर दिए गए हैं। एक सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court of Judicature) इसके दो भाग हैं—उच्च-न्यायालय (High Court of Justice) और

न्यायालय (Court of Appeal)। इसके अतिरिक्त फौजदारी अपील न्यायालय (Court of Criminal Appeal) है। उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र प्रारम्भिक भी है। इसके भी तीन विभाग हैं—चान्सरी विभाग (Chancery Division), रानी का बेंच विभाग (Queen's Bench Division) और दौरा न्यायालय (Circuit Court) अर्थात् ऐसाइजज (Assizes) विभाग। लार्ड चीफ जस्टिस उच्च न्यायालय का अध्यक्ष होता है। इसके अतिरिक्त अन्य दो साधारण न्यायाधीश होते हैं। अपील न्यायालय में लार्ड चीफ जस्टिस व दो लार्ड चीफ ऑफ अपील होते हैं।

उपर्युक्त उच्च स्तरीय न्यायालयों के अतिरिक्त उत्तरी आयरलैंड में निचले स्तर के न्यायालय काउन्टी कोर्ट्स (County Courts) व पेटी सेशन्स (Petty Sessions) होते हैं। काउन्टी न्यायालय में न्यायाधीशों की संख्या 5 होती है जब कि पेटी सेशन्स के न्यायालय प्रायः एक न्यायाधीश के ही होते हैं। विशेष अभियोग के लिए इसमें दो न्यायाधीश भी न्याय कार्य कर सकते हैं। इनका न्याय क्षेत्र सरसरी का होता है।

10

स्थानीय स्वशासन
(LOCAL SELF GOVERNMENT)

"इंगलैण्ड के नागरिकों की स्वतन्त्रता का सबसे बड़ा श्रेय उसकी
स्थानीय संस्थाओं को है। अपने पूर्वज सैक्सनों के समय से
अंग्रेज लोगों ने अपने ही द्वार पर नागरिकों के अधिकारों
और कर्त्तव्यों का ज्ञान प्राप्त किया है।"

—ग्लैडस्टोन

ब्रिटिश स्थानीय शासन की प्रमुख बातें उसका स्वरूप

ब्रिटेन में स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं का बहुत अधिक महत्व है और इन्हीं के द्वारा वहाँ के प्रजाजन अपनी स्वतन्त्रता का उचित उपभोग करते आये हैं। स्थानीय मामलों में उनकी स्वतन्त्रता उनके गौरव का विषय है। ब्रिटिश शासन के एकात्मक होने से स्थानीय संस्थाओं का महत्व और अधिक बढ़ जाता है, क्योंकि ग्राम के नागरिक जितनी दिलचस्पी स्थानीय मामलों में लेते हैं उतनी केन्द्रीय मामलों में नहीं लेते।

आधुनिक ब्रिटिश स्थानीय शासन प्रणाली का अध्ययन करते समय हमें तीन प्रमुख बातें स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती हैं—

1 यह प्रथा अधिकांशतः अतीत की आभारी है और बहुत प्राचीन काल से ही इंगलैण्ड में स्वशासन किसी न किसी रूप में चलता आ रहा है।

2 ब्रिटिश स्थानीय शासन व्यवस्था समयानुकूल परिवर्तित होती रही है, यह स्थिर नहीं रही है। इंगलैण्ड की स्थानीय संस्थाओं का निरन्तर विकास होता रहा है और आधुनिक काल में तो इनमें इतने अधिक परिवर्तन हो गये हैं कि उनका प्राचीन स्वरूप बहुत कुछ बदल गया है।

3. स्थानीय संस्थायें अपने अधिकारों की बहुत कुछ रक्षा करती हुई अधिकाधिक स्वतन्त्र होने का प्रयास करती हैं, तथापि उन पर केन्द्र का नियन्त्रण बढ़ता हो जा रहा है और पिछले 75 वर्षों में उन पर संसद् का नियन्त्रण पर्याप्त बढ़ गया है। फिर भी स्थानीय शासन सफलतापूर्वक कार्य करता चला जा रहा है।

ब्रिटिश स्थानीय शासन का संक्षिप्त ऐतिहासिक अवलोकन

इंगलैण्ड अखिल विश्व में स्थानीय लोकतन्त्र का जन्मदाता है। इंगलैण्ड की वर्तमान स्थानीय शासन व्यवस्था ऐंग्लो सैक्सनकालीन व्यवस्था से सम्बद्ध है। उस समय से अब तक इसका क्रमबद्ध रूप से निर्बाध विकास होता रहा है। सैक्सन राजाओं के समय में शाइर (Shires), हण्ड्रेड्स (Hundreds) तथा बरो (Boroughs) थे और ये नार्मन विजय के बाद काउण्टी (County), मनर (Manor) तथा म्यूनिसिपैलटियों (Municipalities) में परिवर्तित हो गये। इसी बीच में पैरिशों (Parishes) की स्थापना हो गई और उन्होंने टाउनशिप्स् (Townships) का स्थान ले लिया। इस प्रकार इंगलैण्ड में स्थानीय स्वशासन की ये संस्थायें—काउण्टी, बरो तथा पैरिश अठारहवीं शताब्दी तक चलती रहीं। इनके संगठन और कार्य क्षेत्र में ट्यूडर व स्टुअर्ट सम्राटों ने कोई विशेष हस्तक्षेप नहीं किये। काउण्टी का शासन जस्टिस आफ दी पीस (Justice of the Peace) करते थे, और बरो का शासन उसका फ्रीमन (Freeman) करता था। बरो और पैरिश का शासन-संगठन लोकतन्त्रात्मक था और लोग अपने अफसरों को स्वयं ही चुनते थे।

परन्तु अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में व्यावसायिक क्रान्ति (Industrial Revolution) ने सारी परिस्थिति बदल दी। लोग गांव छोड़ कर नगरों में जाने लगे और नगरों में सफाई, शिक्षा, स्वास्थ्य, निर्धन-सहायता तथा नगर-सुधार-समस्याएं उपस्थित हो गईं। इन विभिन्न नवीन समस्याओं का सामना करने के लिये संसद् भी तत्पर हुई। उसने पुरानी संस्थाओं को हटाना उचित नहीं समझा, और नई-नई संस्थायें स्थापित कीं, जिनसे उन समस्याओं का हल हो। पुरानी संस्थाओं को रखते हुए नई-नई संस्थाओं की स्थापना का परिणाम यह हुआ कि नई और पुरानी संस्थाओं का कार्यक्षेत्र घपले में पड़ गया और ठीक-ठीक विभाजन नहीं हो पाया। स्थानीय संस्थाओं की संख्या में बहुत वृद्धि हो गई और उनके कार्यक्षेत्र का भी बहुत विस्तार हो गया। अब स्थानीय शासन को सुधारने व पुनर्गठित करने पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। सन् 1835 में संसद् में म्युनिसिपल कारपोरेशन एक्ट (Municipal Corporation Act) पारित किया जिसके द्वारा बरोज (Boroughs) की प्रशासन व्यवस्था का संगठन हुआ। सन् 1888 में स्थानीय सरकार अधिनियम (Local Governments

Act) पारित हुआ जिसके द्वारा काउण्टियों के प्रशासन की व्यवस्था सगठित हुई। सन् 1894 के एक अधिनियम के अनुसार ग्राम और नगरीय जिलो (Urban and Rural Districts) का सगठन हुआ। सन् 1929 और 1933 के स्थानीय शासन अधिनियमो (Local Government Acts) के द्वारा स्थानीय निकायो को केन्द्र से सहायता मिलने लगी और उनके अधिकारो की कानूनी व्याख्या हो गई। सन् 1936 के सार्वजनिक स्वास्थ्य और निवास अधिनियम ने स्थानीय अधिकारियो के कार्यों को और भी स्पष्ट कर दिया। 1950 के स्थानीय सरकारी अधिनियम ने स्थानीय सरकार के क्षेत्रो और अधिकारो के परिवर्तन और निरीक्षण के लिए व्यवस्था स्थापित की और काउण्टी सेवाओ को कुछ जिम्मेदारी सौपने का प्रबन्ध किया तथा स्थानीय सरकार की आर्थिक व्यवस्था मे परिवर्तन किया। इस प्रकार इगलैड और वेल्स के स्थानीय स्वशासन का ढाँचा पूरा हुआ।

स्मरणीय है कि विकास का यह क्रम मुख्यत इगलैड और वेल्स का है। स्काटलैण्ड और उत्तरी आयरलैंड के स्थानीय प्रशासन का विकास क्रम इससे भिन्न रहा है।

ब्रिटिश स्थानीय शासन की विशेषतायें

(Characteristics of British Local Self Govt.)

विकासशील—ब्रिटिश स्थानीय शासन का वर्तमान रूप सदियो के क्रमिक विकास का फल है। लोगो की राजनीतिक चेतना व विकास के साथ साथ इसने प्रगति की है। यद्यपि विकास की यह प्रक्रिया अधिकाशत अनियन्त्रित और अनियोजित रही है तथापि स्थानीय शासन की सस्थाओ ने अपने महत्व और उपयोगिता को पूरी तरह बनाये रखा है। इसके अतिरिक्त उनकी वर्तमान व्यवस्था मे प्राचीनता के भी पर्याप्त दर्शन होते है। वर्तमान मे उनके प्राचीन स्वरूप की विद्यमानता यह अनुभूति करा देती है कि वे इतिहास की निधि है।

लिखित कानून द्वारा रचना—ब्रिटिश स्थानीय शासन की रचना लिखित कानूनो द्वारा हुई है। ससद् ने समय समय पर अधिनियम पारित करके स्थानीय सस्थाओ के सविधान और उत्तरदायित्वो का स्वरूप निर्धारित किया है। वे ऐसा कोई कार्य नही कर सकती जिसे करने के लिए कानून द्वारा उन्हे शक्ति नही सौपी गयी हो।

विकेन्द्रीकरण—ब्रिटिश स्थानीय स्व शासन की तीसरी विशेषता विकेन्द्रीकरण की है। वर्तमान व्यवस्था मे काउण्टी बरोज को पूर्णत स्वतन्त्र निकाय बनाया गया है। कुछ अपवादो को छोडकर काउण्टी द्वारा शेष भाग की सेवा की जाती है। नगरपालिका बरोज को भी अधिकाश स्वतन्त्र शक्तियाँ प्राप्त है। उनके क्षेत्र मे कुछ कार्य काउण्टी परिषद् द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं। पर विकेन्द्रीकरण का यह रूप सैद्धान्तिक अधिक है व्यावहारिक कम। फाइनर के शब्दो मे "हमारे यहा

विकेन्द्रीकरण नहीं है, वरन पूर्ण स्वतन्त्रता का एक छोटा भाग है, जो कि मुख्यत राष्ट्रीय इच्छा पर आधारित संगठित एकीकरण के साथ मिलकर इसे स्वतन्त्र इच्छा द्वारा स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल क्रियान्वित करने का प्रयास करता है। इस व्यवस्था को क्या नाम दिया जाना चाहिए, हम नहीं जानते।'

समन्वयात्मक एकीकरण का विकास—ब्रिटेन में राष्ट्रीय एवं स्थानीय सत्ताओं के बीच समन्वय की दृष्टि से एकीकरण का जन्म हो रहा है। यह एकीकरण वर्तमान परिस्थितियों की एक अनिवार्य उपज है। केन्द्रीय सरकार की अतिशय नियन्त्रण की माग और स्थानीय सरकारों की अतिशय स्वतन्त्रता की माग के बीच पहले जैसे विरोध की स्थिति नहीं रही है। आज दोनों सरकारें एक दूसरे की सहायक और हिस्सेदार बन गयी हैं। दोनों ने राष्ट्रीय जीवन को उन्नत बनाना अपना उद्देश्य स्वीकार कर लिया है।

समिति व्यवस्था का प्रयोग—ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन में समिति व्यवस्था का इतना प्रयोग किया जाता है कि समितियों को स्थानीय सरकार के वास्तविक कारखाने कहा जाने लगा है। ये समितियां मुख्यतया पांच प्रकार की होती हैं—स्थानीय समितियां (Standing Committees), सुझावदात्री समितियां (Persuasion Committees), विशेष एवं सामयिक समितियां (Special and Adhoc Committees), कानूनी समितियां (Statutory Committees), और उप समितियां (Sub Committees)। इन विभिन्न समितियों द्वारा स्थानीय सत्तायें अपने विविध उत्तरदायित्वों को सम्पन्न करती हैं। वित्तीय समितियों द्वारा विभिन्न स्थानीय निकायों के बीच समन्वय स्थापित किया जाता है।

दलीय राजनीति—सैद्धान्तिक रूप से अनुचित होते हुए भी दलीय राजनीति स्थानीय शासन में पूरी तरह प्रवेश कर गयी है। स्थानीय सत्ताओं में दलीय राजनीति का सक्रिय रूप एक स्पष्ट तथ्य है। उनमें राजनीतिक दल भली प्रकार संगठित रूप में प्राप्त होते हैं। फिर भी कुछ स्थानीय संगठन राजनीतिक दलों के हस्तक्षेप में विशेष प्रभावित नहीं रहते, उदाहरणार्थ देहाती क्षेत्र के कुछ संविधान।

एकरूपता की कमी—ब्रिटिश स्थानीय शासन व्यवस्था में एकरूपता की कमी है। एक इकाई दूसरी से संविधान और बनावट की दृष्टि से पर्याप्त भिन्न है। इकाइयों के नियम और उपनियम भी अलग अलग हैं। कोई स्थानीय निकाय जनसंख्या के आधार पर तो कोई प्रदेश के आधार पर और कभी कोई वित्त या किसी अन्य आधार पर संगठित किया जाता है। फिर भी आधुनिक प्रवृत्ति एकरूपता स्थापित करने की है। इस प्रयास के मूल में यह भावना छिपी है कि विभिन्न स्थानीय संस्थाओं के अधिकार क्षेत्र के निवासियों का जीवन स्तर केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्धारित स्तर से नीचा न हो।

ब्रिटिश स्थानीय शासन एव केन्द्रीय सरकार : पर्यवेक्षण एव नियन्त्रण

(Local Govt and Central Govt Supervision and Control)

स्थानीय शासन सत्ताये अपने आप म कोई पूणत पृथक् अस्तित्व नही रखती, वरन केन्द्रीय सरकार का ही एक आवश्यक और अभिन्न अग होती हैं। उनके द्वारा किये जाने वाले कार्यों और निणयो पर केन्द्रीय सरकार के नियमो और अधिनियमो का पर्याप्त प्रभाव रहता है तथा विरोध की सूरत मे केन्द्रीय इच्छा को प्राथमिकता दी जाती है। पर उचित यही समझा जाता है कि केन्द्रीय सरकार अनुचित नियन्त्रण से बचे और स्थानीय सस्थाओ को उनके काय क्षेत्र म यथा सम्भव पूण स्वतन्त्रता दे।

कई बार सदेह किया जाता है कि केन्द्रीय नियन्त्रण के रहने पर स्थानीय स्वायत्तता नही रह सकती, अत स्थानीय शासन सस्थाओ को पूणत स्वतन्त्र छोड दिया जाए। लेकिन व्यावहारिकता का तकाजा है कि उपयोगी और आवश्यक केन्द्रीय नियन्त्रण अवश्य ही रहे क्योकि केन्द्र पर ही सम्पूण देश के प्रशासन का मूलत उत्तरदायित्व होता है और यदि स्थानीय शासन सत्ताओ को पूरी तरह नियन्त्रण विहीन छोड दिया गया तो प्रशासनिक अव्यवस्था फैल सकती है तथा स्थानीय सस्थाओ की कार्य कुशलता समाप्त हो सकती है। केन्द्रीय नियन्त्रण की अनिवायता निम्नलिखित कारणो से स्पष्ट है—

(i) स्थानीय शासन के साधन सीमित होते है, और वह केन्द्रीय शासन के अनुदानो के अभाव मे अपने दायित्वो का सतोषजनक रूप से पालन नही कर सकता।

(ii) स्थानीय शासन का अनुभव सीमित होता है और उसके पास सभी आवश्यक सूचनायें भी सग्रहीत नही हो पाती। केन्द्रीय नियन्त्रण के माध्यम से ही वह अधिक योग्य बन पाता है क्योकि देश भर की स्थानीय सत्ताओं के अनुभवो का मूल्याकन किया जा सकता है।

(iii) केन्द्रीय शासन सम्पूण राष्ट्र के हितो को ध्यान म रखते हुए स्थानीय शासन सस्थाओ को अप्रतिबन्धित स्वेच्छा का अधिकार नही दे सकता।

(iv) स्थानीय सत्तायें अनेक होती है जिनमे समन्वय तथा एकरूपता लाने के लिए और उनकी गलत नीतियो को मिटाने के लिए केन्द्रीय शासन का नियन्त्रण आवश्यक है।

(v) स्थानीय समाज मे शक्ति सम्पन्न स्वार्थ सिर न उठायें, इसलिए भी केन्द्रीय हस्तक्षेप जरूरी है।

(vi) अनेक स्थानीय सवायें ऐसी हैं जिनके कुशल संचालन पर सम्पूण देश का कल्याण निभर करता है, जैसे जन-स्वास्थ्य, शाति, सुरक्षा, शिक्षा, यातायात

आदि इन सेवाओ म समान और उच्च स्तर बनाये रखने के लिए केद्रीय शासन का उचित नियत्रण जरूरी है।

अ त म हम सर मैकनेल्टी (Sir A S MacNalty) के शब्दो म कह सकते हैं कि "स्थानीय सेवाओ के उचित निर्देशन, एकीकरण और समन्वय के लिए केन्द्रीय सत्ता के नियन्त्रण के किसी य त्र का होना परम आवश्यक है। ऐसा न होने पर विभिन्न जिलो मे इन सेवाओ का स्तर और प्रसार असमान रहेगा तथा यह कुल जनसख्या के लिए अन्यायपूर्ण होगा।"

ब्रिटेन म स्थानीय शासन पर के द्र का नियन्त्रण और उसका रूप

पहले ब्रिटिश स्थानीय सस्थाये शिक्षा, गैस, बिजली आदि का प्रबन्ध बिना केन्द्रीय नियन्त्रण और सहायता के सम्पन्न कर सकती थी, किन्तु आज इन कार्यों का राष्ट्रीय महत्व हो गया है और केन्द्रीय शासन पर यह उत्तरदायित्व है कि वह इन सेवाओ के प्रबन्ध की उपयुक्तता देखे। इसके अतिरिक्त ब्रिटेन मे शासन का रूप एकात्मक होने से भी यह स्वाभाविक है कि स्थानीय प्रशासनिक इकाइया अपने कार्यक्षेत्र मे यथा सम्भव स्वत त्र होते हुए भी के द्र के उचित नियन्त्रण मे रहें।

ब्रिटेन मे हम पाते हैं कि केन्द्रीय शासन ही अपनी तरफ से स्थानीय प्रशासनिक इकाइयो की स्थापना करता है और उन्हे अपनी ओर स काय करने की कुछ शक्तिया प्रदान करता है तथा साथ ही उन पर नियत्रण रखने की आवश्यक शक्ति सतत अपने लिय भी सुरक्षित रखता है। ब्रिटेन मे शासन सम्बन्धी सर्वोच्च शक्ति ससद मे निहित है और उसी के द्वारा स्थानीय सस्थाओ की स्वतन्त्रता की सीमा निश्चित की जा सकती है। स्थानीय सस्थाओ के शासन प्रबन्ध की देखभाल केन्द्रीय सरकार के विभिन्न शासन विभाग करते हैं।

परन्तु इस सबस यह भ्रम नहीं होना चाहिये कि ब्रिटेन मे केन्द्रीय शासन और स्थानीय शासन सस्थाओ के उद्देश्यो या उद्देश्यो म भिन्नता है। उन दोनो का अतिम उद्देश्य एक ही है अर्थात यह है कि देश पर अच्छे से अच्छे ढग से शासन करना और जनता को अधिक से अधिक सुख पहुचाना। इसलिय वे दोनों बडे सामजस्य से काम करते है। ब्रिटेन म स्थानीय शासन सस्थाओ पर केन्द्रीय नियत्रण न तो यूरोप के समान कठोर है और न अमरिका की तरह बिल्कुल ढीला है।

के द्र स्थानीय सस्थाओ की इकाइयो पर जिन विभिन्न ढगो से नियत्रण करता है, उनका विवेचन हम निम्न प्रकार स कर सकते हैं—

व्यवस्थापन सम्बन्धी—केन्द्रीय नियन्त्रण का सर्वाधिक मौलिक रूप वह है जो ससद द्वारा लागू किया जाता है। ससद का स्थानीय सत्ताओ के क्षेत्र को विनिर्मित करने का व्यापक अधिकार है। स्थानीय सत्ताए उन्ही शक्तियो का प्रयोग करती हैं और उन्ही कर्त्तव्यो का सम्पन्न करती हैं जो केन्द्रीय ससद द्वारा उन्हे सौपी जाय। ससद का अधिकार है कि वह स्थानीय प्रशासन की नवीन इकाइयों की स्थापना करने के लिए वर्तमान इकाइयो का समाप्त करने के लिए

और उनके क्षेत्र तथा कार्यों के निर्धारण के लिए आवश्यक कानून बनाए। संसद को यह भी अधिकार है कि स्थानीय प्रशासनिक इकाइयों के कार्यों पर समुचित नियंत्रण के लिए आवश्यक नियमों के निर्माण का अधिकार केन्द्रीय शासन को दे दे।

वित्तीय नियन्त्रण—स्थानीय प्रशासनिक संस्थाएं अपनी आर्थिक व्यवस्था के लिए बहुत-कुछ केन्द्र पर निर्भर हैं। केन्द्र आर्थिक सहायता देने पर यह देखता है कि सहायता का प्रयोग ठीक ढंग से हो रहा है अथवा नहीं। केन्द्रीय शासन के प्रतिनिधि स्थानीय निगमों के कार्यों का निरीक्षण करके जो प्रतिवेदन सरकार को प्रस्तुत करते हैं उसके आधार पर केन्द्र आर्थिक अनियमितताओं को दूर करने, आर्थिक प्रबन्ध अपने हाथ में लेने या स्थानीय प्रशासनिकों को भी निलम्बित करके कोई अन्य प्रबन्धक या आयोग नियुक्त करने का कदम उठा सकता है। वास्तव में अपने वित्तीय अनुदानों के बल पर केन्द्रीय शासन स्थानीय प्रशासन पर पर्याप्त नियन्त्रण और दबाव रख सकता है।

प्रशासनिक नियन्त्रण—स्थानीय स्वशासन की इकाइयों पर केन्द्रीय नियन्त्रण विभिन्न विभागों द्वारा लागू किया जाता है। उदाहरणार्थ स्वास्थ्य विभाग, जल व्यवस्था, सफाई व स्वास्थ्य आदि के क्षेत्र में, यातायात विभाग, सड़कों व बन्दरगाह के क्षेत्र में और शिक्षा विभाग, प्रारम्भिक, माध्यमिक शिक्षा एवं प्राविधिक शिक्षा के क्षेत्र में स्थानीय निकायों पर नियन्त्रण रखते हैं। नियन्त्रणकारी विभाग सम्बन्धित विषयों में स्थानीय निकायों को आवश्यक सूचना देते हैं, उनके विरुद्ध शिकायतों की सुनवाई करते हैं, निकायों और व्यक्तियों के बीच के झगड़ों का निपटारा करते हैं, निकायों के संगठन और कार्य-प्रणाली से सम्बन्धित नियम बनाते हैं तथा यह देखते हैं कि निकाय कहीं अपनी शक्ति का दुरुपयोग न करें।

यह स्मरणीय है कि ब्रिटेन में केन्द्र स्थानीय प्रशासनिक इकाइयों पर वांछित और आवश्यक नियंत्रण ही रखता है। केन्द्रीय विभागों का कार्य मुख्यतः यह देखना है कि स्थानीय निकाय अपने अधिकारों का उचित प्रयोग करें, कर्तव्यों का ठीक ढंग से पालन करें और कानूनों का समुचित क्रियान्वयन करें। हरमन फाइनर के शब्दों में "केन्द्रीय शासन अनावश्यक रूप से पगडालू बन कर नहीं रहता। वह स्थानीय प्रशासन की इकाइयों की स्वतन्त्रता का सम्मान करता है और अच्छा यही समझता है कि हस्तक्षेप की आवश्यकता के बिना वे अपनी स्वतन्त्रता का उचित प्रयोग कर सकें।" आज इस बात पर अधिक जोर दिया जाता है कि केन्द्रीय शासन का नियंत्रण उन कार्यों तक सीमित कर दिया जाय जो अच्छी सरकार के लिए महत्वपूर्ण हैं तथा इस नियंत्रण का व्यवहार और प्रयोग इस रूप में किया जाय कि स्थानीय सत्ताओं को यथासम्भव अधिक से अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त हो सके।

स्थानीय शासन का वर्तमान संगठन
(The Present Structure of the Local Govt.)

स्थानीय प्रशासन सुविधा की दृष्टि से पांच प्रमुख क्षेत्रों में विभाजित है—

(क) काउण्टी

(ख) बरो (Borough), काउण्टी बरो तथा म्युनिसिपल बरो

(ग) नगर जिला (Urban District)

(घ) ग्राम्य जिला (Rural District)

(ङ) परिश (Parish)

शासन की दृष्टि से सम्पूर्ण देश लगभग 114 काउंटियों में विभाजित है। इनमें से प्रत्येक काउण्टी को ग्राम्य व नगर जिलों में विभक्त किया गया है तथा ग्राम्य और नगर जिलों को ग्रामीण एवं नगरीय परिशों में बांटा गया है। इस तरह स्थानीय स्वशासन-व्यवस्था की सबसे छोटी इकाई परिश है और सबसे बड़ी काउण्टी। यदि किसी काउण्टी के अन्दर किसी क्षेत्र को अलग चार्टर मिल जाता है तो वह बरो कहलाता है।

ब्रिटिश स्थानीय शासन में कोई स्थानीय शासन संस्था या अधिकारी व्यक्ति कानूनी अधिकार के बिना कोई कार्य नहीं कर सकता। उसकी इच्छा कानून की सीमा से प्रतिबंधित रहती है। दूसरे, स्थानीय शासन स्वतन्त्र हैं, श्रेणीबद्ध नहीं हैं। प्रत्येक इकाई को अपने अधिकार क्षेत्र में इच्छानुसार काम करने की स्वतन्त्रता है, केवल शर्त यह है कि उसकी सब कार्यवाही सद्भावना से होनी चाहिये।

(1) काउण्टी (County)—काउण्टी स्थानीय शासन का सबसे बड़ा तथा सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र है। काउण्टी दो प्रकार की है—(क) ऐतिहासिक काउण्टी (Historic County), और (ख) प्रशासकीय काउण्टी (Administrative County)।

(क) ऐतिहासिक काउण्टी—ऐतिहासिक काउण्टियां इंगलैण्ड और वेल्स में लगभग 52 हैं। न्यायिक-प्रशासन ही इनका क्षेत्र है। इनका महत्व इसलिये भी है कि इन्हें नगरीय निर्वाचन क्षेत्र माना जाता है। ये स्थानीय प्रशासन की इकाइयां नहीं होतीं, अतः इनकी कोई प्रबन्धकारिणी समिति नहीं होती और कोई स्थानीय प्रशासन सम्बन्धी कार्य भी नहीं होता। इनमें एक शरिफ, एक लार्ड लेफ्टिनेंट और एक जस्टिस आफ पीस रहता है। इन सबकी नियुक्ति राजमुकुट द्वारा होती है।

(ख) प्रशासकीय काउण्टी—स्थानीय स्वशासन की दृष्टि से प्रशासनिक काउण्टियों का महत्व है। सन् 1688 के स्थानीय सरकार अधिनियम (Local Government Act) के अनुसार 62 प्रशासकीय काउण्टियों की स्थापना हुई। लन्दन की काउण्टी को मिलाकर इनकी कुल संख्या 63 है। प्रत्येक प्रशासकीय काउण्टी में एक काउण्टी-परिषद होती है जिसमें सभापति, 'एल्डरमैन' तथा

'काउन्सिलर' होते हैं। कौंसिलर्स का चुनाव करते समय सारे काउण्टी को निर्वाचन क्षेत्रों में बाँट दिया जाता है और प्रत्येक क्षेत्र से एक प्रतिनिधि चुना जाता है। इसलिए जनसंख्या के अनुसार प्रत्येक काउण्टी कौंसिलर्स की संख्या भिन्न भिन्न है। लन्दन काउण्टी में ये कौंसिलर्स (परिषद सदस्य) अपनी संख्या के छठें हिस्से के बराबर अपने में से ही ऐल्डरमैन चुन लेते हैं। अन्य काउण्टियों में 'एल्डरमैन' की संख्या कौंसिलर्स की एक तिहाई होनी है। ये एल्डरमैन बाहर के व्यक्ति भी चुने जा सकते हैं। कौंसिलर्स 3 साल तक और ऐल्डरमैन 6 साल तक अपने पद पर रहते हैं। दोनों को मत देने का समान अधिकार है तथा दोनों मिलकर अपने में से किसी एक को या अन्य किसी को बाहर से परिषद का सभापति चुनते हैं। अध्यक्ष का चुनाव सिर्फ एक साल के लिए होता है तथा वह "जस्टिस ऑफ पीस (Justice of Peace) का कार्य करता है। परिषद अपने सभापति का वेतन तथा अपने सदस्यों को परिषद् कार्य करने के लिए यात्रा-व्यय भी दे सकती है।

परिषद् के सदस्यों का चुनाव प्रति तीन वर्ष बाद होता है। मतदान का आधार वयस्क मताधिकार नहीं है, बल्कि वही मतदाता हो सकता है जो निश्चित कर देता है या जिसके पास निश्चित भूमि है। परिषद् का दिन प्रतिदिन का कार्य वैतनिक कर्मचारियों द्वारा संचालित होता है। परिषद में समितियाँ होती हैं।

काउण्टी-परिषद् वर्ष में कम-से-कम चार बार अपनी सभा करती है। इसके अधिकार विस्तृत हैं और काम विभिन्न हैं। यह ग्राम जिलों की कौंसिल के काम की देखभाल करती है। बड़ी सड़कों की मरम्मत, आश्रमों, बाल-अपराधियों के चरित्र सुधारना, स्कूलों व औद्योगिक स्कूलों को खोलना, पुलिस का इन्तजाम करना, परिषद् के भवनों की देख रेख करना आदि काम इस परिषद् (Council) को करने पड़ते हैं। शिक्षा का काम केवल इसी को करना पड़ता है। वृद्धावस्था की पेंशन का भी काम यही करती है और यही कर लगा सकती है।

कार्य की सुविधा के लिए काउण्टी परिषद् को विभिन्न समितियों में विभक्त कर दिया गया है, जैसे—(1) वित्त-समिति, (2) शिक्षा-समिति, (3) निर्धनता-निवारण समिति, (4) जन स्वास्थ्य समिति (5) गृह-निर्माण समिति, (6) कृषि-समिति, (7) प्रसूता तथा शिशु-कल्याण समिति (Maternity and Child Welfare Committee), (8) स्थानीय निवृत्तिका (पेंशन) समिति, (9) कर-निर्धारक समिति, (10) मानसिक विकृति वालों की देख-भाल करने वाली समिति, और (11) दुकान अधिनियम समिति (Shop Act Committee)।

चूँकि प्रत्येक काउण्टी में छोटी छोटी पुलिस की इकाइयों के रहने की सम्भावना नहीं है अतः क्वार्टर सेशन्स व काउण्टी-परिषद् की संयुक्त समिति बनती है, जिसे पुलिस की शक्तियाँ प्राप्त हैं।

काउण्टी के प्रशासन कार्य के लिए स्थाई कर्मचारी होते हैं, जो राजनीतिक दलों के सम्बन्धों से मुक्त होते हैं। कर्मचारियों में प्रमुख काउण्टी लिपिक, कोषाध्यक्ष

स्वास्थ्य अधिकारी, सर्वेक्षक (Surveyor) होते हैं। इन सब कर्मचारियों की नियुक्ति काउण्टी परिषद द्वारा होती है और इन्हीं के ऊपर काउण्टी के प्रबन्ध की कुशलता निर्भर करती है। वस्तुतः स्थानीय काउण्टी प्रशासन बड़ा दक्ष होता है और इस दक्षता का प्रमुख कारण परिषद् के स्थाई कर्मचारी वर्ग का ऊँचा स्तर ही है। उनका कार्य काल सुरक्षित होता है और उन्हें प्रतिवर्ष अपनी नौकरी को स्थिर रखने के लिए तिकड़म नहीं भिड़ानी पड़ती।

(2) बरो (Borough)—स्थानीय शासन में बरो का विशेष महत्व है। इनकी जनसंख्या अधिक होती है। प्रत्येक बरो एक आज्ञा पत्र (Charter) द्वारा स्थापित होता है जिसे प्राप्त करने के लिए अनेक महत्वपूर्ण बातें करनी पड़ती हैं। बरो प्रायः तीन प्रकार के माने गये हैं—(क) संसदीय बरो (ख) म्युनिसीपल बरो, एवं (ग) काउण्टी बरो।

(क) संसदीय बरो—ये लोकसभा के सदस्यों के लिए निर्वाचन की इकाइयां हैं। इनका स्थानीय शासन से कोई सम्बन्ध नहीं होता, जैसा कि ऐतिहासिक काउण्टियों का होता है।

(ख) म्युनिसीपल बरो—वह प्रशासकीय काउण्टी का ही एक भाग है परन्तु अलग चार्टर मिल जाने से इस काउण्टी की सब शक्तियां प्राप्त होती हैं और यह काउण्टी के नियंत्रण से मुक्त हो जाता है। जब इसकी जनसंख्या 75 हजार से अधिक हो जाती है तब यह स्वास्थ्य मन्त्रालय को अर्जी देकर काउण्टी बरो का पद प्राप्त कर लेता है।

(ग) काउण्टी बरो—जैसा कि ऊपर बताया गया है किसी बरो की आबादी 75 हजार से अधिक होने पर वह काउण्टी बरो बना दिया जाता है एवं काउण्टी बरो को काउण्टी की शक्तियां दे दी जाती हैं। यद्यपि वह काउण्टी का ही एक भाग होता है परन्तु उसकी शक्ति और अधिकार पृथक होते हैं।

म्युनिसिपल बरो और काउण्टी बरो दोनों के समान ही कार्य हैं और समान शक्तियां हैं—

बरो का शासन-प्रबन्ध बरो-परिषद द्वारा होता है जिसमें मेयर, काउंसिलर्स तथा ऐल्डरमैन होते हैं। काउंसिलर्स की अवधि 3 वर्ष होती है तथा एक तिहाई प्रतिवर्ष निवृत्त हो जाते हैं। एल्डरमन 6 वर्ष के लिये चुने जाते हैं। काउंसिलर्स और ऐल्डरमन मिलकर अपने आप में से या बाहर से एक मेयर चुन लेते हैं जिसकी अवधि एक वर्ष होती है। मेयर, बरो में अत्यन्त प्रतिष्ठित व्यक्ति होता है, वह परिषद् की बैठकों में सभापति बनता है और बरो के सब जलसों और सम्मेलनों में बुलाया जाता है। उसका पद वैतनिक नहीं होता, परन्तु अनेक बरो में उसे वेतन दिया जाता है। मेयर की पत्नी मेयरैस कहलाती है और उनसे समस्त सामाजिक जीवन में भाग लेने की आशा की जाती है। यदि मेयर अविवाहित या विधुर है तो उसकी रिश्तेदार मेयरेस का काम करती है।

बरो-परिषद् के कार्य वैधानिक और कार्यपालिका सम्बन्धी दोनो प्रकार के होते हैं। वह अपने कर्मचारी नियुक्त करती है और अपने विभिन्न भागो मे सफाई, जल का प्रबन्ध, सडकें, शिक्षा, पुलिस, स्वास्थ्य आदि की देख भाल करती है। कार्य की सुविधा के लिए प्रत्येक बरो मे समितिया होती ह, जैसे वित्त समिति, शिक्षा-समिति, निधनता-निवारण समिति, वृद्धावस्था निवृत्तिका (पेंशन) समिति, अग्नि रक्षा समिति, पुलिस सम्बन्धी देखभाल समिति आदि। बरो परिषद् का विधायी काय यह है कि वह अपने उपनियम (Bye Laws) बनाती है, किन्तु इसके लिये स्वास्थ्य-विभाग से उसे स्वीकृति लेनी पडती है। कार्यभार के अनुसार बरो परिषद् की बैठकें मासिक, पाक्षिक अथवा साप्ताहिक होती है।

(3) नगर जिला (Urban Districts)—जब किसी ग्राम-जिला अथवा प्रशासकीय काउण्टी के किसी भाग की जनसख्या अधिक हो जाती है तब काउण्टी-परिषद उस नगर जिला बना देती है। नगर जिलो की इगलड म वतमान सख्या लगभग 572 है। इनके भी वही काय ह जो ग्राम जिलो के है। यदि किसी नगर जिले की जनसख्या 20 हजार से अधिक हो जावे तो उसे प्रारम्भिक शिक्षा के ऊपर नियत्रण का अधिकार भी मिल जाता है। 25 हजार की आबादी पर वहा एक अवैतनिक मजिस्ट्रेट नियुक्त कर दिया जाता है। ये कौंसिलें अपना अध्यक्ष खुद चुनती ह और काय सुविधा के लिए अपनी कमेटी बना लेती है। नगर–जिले व बरो म कोई विशेष अन्तर नही होता, केवल म्यूनिसिपल कारपोरेशन एक्ट के अन्तगत उसे बरो का रूप नही दिया जाता। बरो और नगर जिले की कासिल का ढाचा एक समान ही होता है। नगर जिले का प्रबन्ध करने वाली समिति का काय राजमार्गो की देख-रेख, मकानो का प्रबन्ध, सफाई, सार्वजनिक स्वास्थ्य, पानी की व्यवस्था, गैस, बिजली व ट्राम मार्गों आदि की देख रेख का प्रबध करना है।

(4) ग्राम जिला (Rural Districts)—जितने ग्राम पैरिश ह वे सब ग्राम जिलो मे सगठित हैं। इन ग्राम जिलो की अपनी-अपनी प्रतिनिधि परिषदें हैं। इन परिषदो म 300 निवासियो वाले पैरिश का एक प्रतिनिधि होता है। इन प्रतिनिधियो का निर्वाचन 3 साल के लिए होता है और एक-तिहाई प्रतिनिधि प्रति वर्ष पद निवृत हो जाते ह और उनके स्थान पर नए प्रतिनिधियो का चुनाव हो जाता है। चुनाव शलाका पद्धति द्वारा होता है, हाथ उठा कर नहीं। परिषद् की बैठक एक माह म एक बार अवश्य होती है। यह अपना काय समितियो की सहायता से करती है। जिला परिषद् का अध्यक्ष परिषद् के सदस्यो म या बाहर से भी चुना जाता है। सफाई, जल, जन स्वास्थ्य आदि का प्रबन्ध, छोटी सडको की देख भाल करना, कुछ लाईसेंसो का देना, आदि काम य परिषदे करती है। किन्तु आधुनिक काल मे जब जबसे इगलड का ग्राम्य रूप शहरी रूप म बदलता जा रहा है, तबसे इन परिषदों का महत्व भी घटता जा रहा है। यदि परिषदें कम-से-कम कार्यवाही को करने मे लापरवाही दिखाती हैं तो केन्द्रीय सरकार उनके काम म हस्तक्षेप कर सकती है।

(5) पैरिश (Parish)—पैरिश ब्रिटिश स्थानीय शासन का सबसे छोटा अंग है। देश का प्रत्येक निवासी किसी न किसी पैरिश में रहता है। पैरिश की जनसंख्या अलग-अलग है। जिस परिश की जनसंख्या 300 या इससे अधिक होती है, वहा साधारणतया एक परिषद् बना दी जाती है, जिसकी सदस्य संख्या 5 से 15 तक होती है। ये सदस्य तीन वर्ष के लिए चुने जाते हैं। चुनाव हाथ उठाकर होता है। 300 से कम आबादी वाले पैरिशों का प्रबन्ध कर दाताओं की एक समिति द्वारा होता है जिसमें सभी कर-दाता भाग लेने के अधिकारी होते हैं, या उसके प्रबन्ध के लिए काउण्टी परिषद की अनुमति से एक पैरिश परिषद् (Parish Council) की स्थापना की जा सकती है तथा उसके अन्तर्गत कई पैरिश सम्मिलित हो सकते हैं। 300 से अधिक जनसंख्या वाले पैरिशों का प्रबन्ध आवश्यक रूप से 5 से 15 सदस्यों तक की परिषदों द्वारा होता है। पैरिश-परिषद के अधिकार निम्न प्रकार के और बहुत कुछ विम्नत हैं, पर उन पर जिला परिषद और काउण्टी-परिषद्—इन दो उच्चाधिकारी संस्थाओं का नियन्त्रण रहता है। स्थानीय लोगों के अधिकारों की रक्षा करना, सड़कों के दानों ओर वन पथ मार्गों की मरम्मत करना, पानी, प्रकाश व सफाई का प्रबन्ध करना, प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था करना आदि कार्य पैरिशों के कार्य-क्षेत्र हैं। पैरिश को कर लगाने का भी अधिकार है, पर कर 1 पौण्ड पर 3 पेंस से अधिक नहीं होना चाहिए। पैरिश के हिसाब किताब की जांच जिला लेखा परीक्षक (District Auditors) करते हैं। पैरिश का एक महत्वपूर्ण अधिकार यह प्राप्त है कि प्रबन्ध ठीक न हो। पर यह ग्राम्य जिला परिषद या काउण्टी परिषद् से आवेदन कर सकती है।

यह उल्लेखनीय है कि पैरिश कई प्रकार के होते हैं। कुछ पैरिश धार्मिक (Acclesiastical) होते हैं कुछ भूमि-कर (Land Tax) के होते हैं और तीसरे प्रकार के पैरिश दीवानी (Civil) होते हैं। स्थानीय स्वशासन के प्रसंग में दीवानी परिशों का ही महत्व है। दीवानी परिश ग्रामीण और नगरीय दोनों प्रकार के होते हैं। नगरीय परिश अब नगर जिला समितियों में मिला दिये गये हैं जबकि ग्रामीण पैरिश अब भी स्थानीय स्वशासन की महत्वपूर्ण कड़ी है।

लन्दन का शासन

(Government of London)

लन्दन का स्थानीय शासन उसके ऐतिहासिक विकास, उसके आकार और कुछ अन्य कारणों से इंगलैंड में अपने ढंग का अनुपम है। वस्तुतः प्राचीन काल से ही लन्दन देश के शेष भाग से पृथक समझा जाता रहा है। विशेषतया इसी कारण लन्दन का अपना विशेष स्थानीय शासन है और उसकी अपनी विशेष समस्यायें एवं योजनायें हैं। शासन प्रबन्ध के लिए लन्दन तीन प्रमुख इकाइयों में बटा हुआ है जो कि जनसंख्या, क्षेत्रफल में एक दूसरे से बहुत ही भिन्न हैं और उनका शासन

सगठन भी एक-दूसरे से पृथक है। इन तीनो इकाइयो को लन्दन नगर (The City of London), लन्दन काउन्टी (The County of London) एव लन्दन मेट्रोपोलिटन पुलिस डिस्ट्रिक्ट (London Metropolitan Police District) कहते है।

1 लन्दन नगर—यह क्षेत्र वतमान राजधानी का एक बहुत छोटा अग है। इसका क्षेत्रफल एक वगमील है और यह आधुनिक जातन्त्र की अपेक्षा मध्यकालीन का ही अधिक प्रतिनिधित्व करता है। यह आधुनिक राज्य का केवल प्राचीन रूप है, जिसकी पुरानी सीमाये और पुरान ढग की सरकार विल्कुल नहीं वदली।

लन्दन नगर का स्थानीय शासन एक कार्पोरेशन अथवा निगम (The Corporation of the City of London) के द्वारा होता है। कार्पोरेशन अपना काय एक महापौर या नगर-प्रमुख (Lord Mayor) एव तीन समितियो के द्वारा करता है। ये समितिया निम्नलिखित है—

(क) कोट आफ एल्डरमन (Court of Aldermen)—इसमे नगर प्रमुख अर्थात् लाड मेयर और 26 विशिष्ट सदस्य (Aldermen) होते है। ये जीवन भर के लिए चुने जाते है। इस समिति का काय दलालो को लाइसेंस देना और नगर के अभिलेखो (*Records*) का सुरक्षित रखना है।

(ख) कोट आफ कॉमन कौसिल (Court of Common Council)—यह नगर की वास्तविक प्रशासकीय सस्था है, जिसमे कोट आफ एल्डरमन के–26 सदस्य तथा लगभग 206 अन्य सभासद् (Councillors) होते हैं जो प्रतिवर्ष चुने जाते हैं। यह सस्था या समिति नगर के लिए उपविधिया (Bye laws) बनाती है और अग्नि-रक्षा, नालियो, पानी, सावजनिक स्वास्थ्य और शहर की रेलो को छोडकर सब काम करती है। यह पुलो की देख-भाल करती है और पुलिस, सिविल कोट व फौजदारी अदालतो आदि का निरीक्षण करती है। यह अपनी सुविधा के लिए कई समितिया बना लेती है।

(ग) कोट ऑफ कॉमन हाल (Court of Common Hall)—इसमे कार्ट ऑफ एल्डरमैन के सदस्य तथा नगर की प्रमुख कम्पनियो के प्रतिनिधि (Liverymen) सम्मिलित हाते हैं। यह समिति अथवा परिषद् प्रतिवष एक शरिफ (Sheriff) और उन दो एल्डरमनो का चुनाव करती है, जिनम स कोट ऑफ एल्डरमन एक लॉड मेयर चुनते है।

लॉड मेयर बडी शान शौकत का व्यक्ति होता है। वह उपयुक्त तीनो परिषदों का सभापति होता है और उसे 10,000 पौण्ड वार्षिक वेतन मिलता है।

उसे कोई स्वतंत्र अधिकार नहीं मिले हुए हैं। वह नगर के किसी पदाधिकारी की नियुक्ति नहीं करता और न ही कोई अन्य कार्यकारी कर्त्तव्य करता है। उत्सवों में नगर का प्रतिनिधित्व करना उसी का काम है।

2 **लन्दन काउण्टी**—लन्दन के स्थानीय स्वशासन की दूसरी इकाई लन्दन काउण्टी है। इसके क्षेत्र का क्षेत्रफल लगभग 117 वर्गमील और इसकी जनसंख्या लगभग 40 लाख है। लन्दन की इस प्रशासकीय काउण्टी का शासन प्रबन्ध लन्दन काउण्टी समिति (London County Council) के हाथ में है। इस समिति अथवा परिषद में 124 निर्वाचित सदस्य और 20 एल्डरमैन होते हैं। सदस्य 3 वर्ष के लिये चुने जाते हैं और चुने जाने के बाद अपने में से या बाहर से एल्डरमन चुनते हैं, जो 6 वर्ष तक अपने पद पर बने रहते हैं, केवल प्रति 3 वर्ष बाद उनमें से आधे हट जाते हैं। परिषद के निर्वाचित सदस्य और एल्डरमन मिलकर अपने में से किसी व्यक्ति को सभापति चुनते हैं। सदस्यों (Councillors) और एल्डरमैनों को समान अधिकार मिले होते हैं केवल शिष्टाचार की दृष्टि से ही उनमें भेद होता है। इस काउण्टी परिषद के कर्त्तव्य और अधिकार प्राय वैसे ही हैं, जैसे अन्यत्र बरो काउण्टी परिषद के होते हैं। परिषद स्वयं प्रशासकीय संस्था है और स्वयं अपने कर्मचारियों को नियुक्त करती है। परिषद् का अधिक समय सामान्य शासन-सिद्धान्तों का निश्चित करने में ही व्यतीत हो जाता है। इन सिद्धान्तों एवं नियमों को कार्यान्वित करने का भार समितियों पर छोड़ दिया जाता है। काउण्टी परिषद अपने क्षेत्र की सफाई, स्वास्थ्य, सड़कों, पुलों, अग्नि-सुरक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, गृह निर्माण, शिक्षा, सार्वजनिक मेला मनोरंजन गृहों, ट्राम मार्गों आदि से सम्बन्धित कार्यों के लिये उत्तरदायी है। सरकारी सहायता, कर, किराया व विद्यालयों का शुल्क, स्थानीय कर आदि परिषद् की आय के प्रमुख साधन हैं। परिषद जिन विभिन्न समितियों के माध्यम से अपना कार्य करती है, उनकी संख्या 18 है। इन समितियों के सभापति व उप सभापतियों को परिषद चुनती है। अधिकांश समितियाँ अपनी उप समितियाँ भी बना लेती हैं। परिषद् की एक कार्यकारिणी समिति (Executive Committee) है, जिसके सदस्य उपर्युक्त 18 समितियों के सभापति होते हैं।

लन्दन की प्रशासकीय काउण्टी में 28 नगर (Borough) हैं। इन पर लंदन काउण्टी परिषद (London County Council) की देख रेख रहती है। इनका प्रबन्ध भी समितियों या परिषदों (Councils) के द्वारा होता है। प्रत्येक परिषद में पूर्ववत् सदस्य, एल्डरमन और अध्यक्ष होते हैं। इनका कार्य मुख्य सड़कों का निर्माण करना व उनकी मरम्मत करना तथा अपने क्षेत्र में सफाई स्वास्थ्य प्रकाश, शिक्षा, पुस्तकालय स्नानागार आराम, मजदूरों के मकान आदि से सम्बन्धित कार्य करना होता है। अन्य शब्दों में, ये बरो समितियाँ लंदन काउण्टी समिति की पूरक की तरह कार्य

करती हैं और उन समस्त कार्यों मे, जो काउण्टी के कार्य-क्षेत्र के होते है, काउण्टी की सहायता करता है ।

3 लन्दन मेट्रोपोलिटन पुलिस डिस्ट्रिक्ट—लदन नगर के चारो ओर मेट्रोपोलिटन पुलिस डिस्ट्रिक्ट है, जिसका क्षेत्रफल लगभग 700 वर्ग मील है। इस इकाई का स्थानीय प्रशासन से कोई सम्बन्ध नही है। इसका सम्बन्ध केवल पुलिस प्रशासन व शान्ति एव व्यवस्था बनाये रखने के कार्य से है। लदन नगर की पुलिस अलग है। पुलिस लदन की समस्त काउण्टियो की देखभाल करती है। इसका प्रधान एक पुलिस कमिश्नर । उक्त मेट्रोपोलिटन पुलिस डिस्ट्रिक्ट की स्थापना राबर्ट पील ने सन 1829 म की थी।

स्थानीय शासन संस्थाओं के कार्य और सेवाएं
(Functions and Services of Local Administrative Institutions)

स्थानीय सस्थाए साधारण कानूनो द्वारा प्रदत्त शक्तियो के अधीन विभिन्न सार्वजनिक कार्यों अथवा विशेष शक्तिया पाने पर अतिरिक्त सेवाओ की व्यवस्था करती है। इन सस्थाओ के उत्तरदायित्व सामान्यत इनके पथक पथक रूप पर निर्भर करते है। उदाहरणार्थ, इगलैड मे वेल्स तथा उत्तरी आयरलैण्ड म काउण्टी बरो परिषदें सभी प्रकार के काम करती है जबकि काउण्टी व काउण्टी जिला परिषदें केवल कुछ विशिष्ट प्रकार के काम ही करती है, और पेरिश की स्थानीय सस्थाए बहुत ही सीमित काम करती हैं। इन सभी द्वारा सामान्यत जिन सेवाओ की व्यवस्था की जाती है, उन्हे हम तीन समूहो म रख सकते है--

(1) पर्यावरण सम्बन्धी सेवाए (Environmental Services)—इनका उद्देश्य नागरिको के पर्यावरण को सुधारना व अच्छा बनाना । इन सेवाओ म उल्लेखनीय ये है—पानी के बहाव व नदी नालियो की व्यवस्था, मार्गों की रोशनी, गदगी को हटवाना व उसका उचित प्रयोग करना, अच्छे पानी की व्यवस्था, खाद्य पदार्थों का निरीक्षण, वातावरण की सफाई, पार्कों और मनोरजनस्थानो की व्यवस्था, सार्वजनिक कण्टको (Public Nuisances) को रोकना आदि।

(2) रक्षा सेवाए (Protective Services)—इन सेवाओ म नागरिको की अग्नि से रक्षा, पुलिस व्यवस्था व नागरिक प्रतिरक्षा आदि सम्मिलित है।

(3) व्यक्तिगत सेवाए (Personal Services)—इन सेवाओ का उद्देश्य व्यक्तियो की श्रेष्ठ शारीरिक, मानसिक व नैतिक शक्तियो को विकसित करना है। जच्चाखान, शिशु कल्याण, शिक्षा, गृह निर्माण मनोविनोद की व्यवस्था आदि के काय इन सेवाओ म आते है। सेवाओ के इसी समूह म कुछ स्वास्थ्य सेवाए, बूढो और अपाहिजो की सेवा, पुस्तकालयो, अजायबघर व कला-गैलेरियो आदि की व्यवस्था भी सम्मिलित है। कुछ स्थानीय सस्थाए व्यापार काय भी करती है तथा यातायात, सचार, बन्दरगाहो की व्यवस्था आदि कार्यो का लाभ प्राप्ति के आधार पर सम्पादन किया जाता है। परन्तु ऐसा अब बहुत कम होता है।

ब्रिटिश स्थानीय शासन की यह विशेषता है कि पुलिस स्थानीय संस्थाओं के अधीन है। ब्रिटेन में प्रारम्भिक व माध्यमिक शिक्षा स्थानीय शासन संस्थाओं के हाथों में ही है। सार्वजनिक उपयोगिताओं की सेवाओं के लिये मुख्यतः ये ही संस्थाएं उत्तरदायी हैं।

स्थानीय निकायों के आर्थिक साधन

(Resources of Local Bodies)

स्थानीय निकायों की आय का सबसे प्रमुख स्रोत केन्द्रीय सरकार द्वारा दी जाने वाली आर्थिक सहायता है। पहले केन्द्रीय खजाने से विशेष कामों के लिए ही विशेष अनुदान दिये जाते थे, परन्तु अब सामान्य अनुदान देने की व्यवस्था की गई है।

स्थानीय करों, ऋणों, व्यापारिक आय, किराये, शुल्क आदि अन्य अनेक साधनों से भी स्थानीय निकायों को बहुत कुछ आय होती है, परन्तु कुल व्यय का लगभग 1/3 भाग प्राय सरकारी अनुदान से ही पूरा हो पाता है। स्थानीय करों में वे कर शामिल होते हैं, जिन्हें स्थानीय निकाय भूमि व भवनों के मालिकों और किरायदारों पर लगाते हैं। स्थानीय निकाय बड़े खर्चों जैसे जमीन प्राप्त करने, इमारतें खड़ी करने और इसी प्रकार के अन्य स्थायी कामों के लिए धन का प्रबन्ध करने को ऋण ले सकती हैं। इन कर्जों के लिए गृह निर्माण विभाग और स्थानीय सरकार के मन्त्रालय से स्वीकृति लेनी पड़ती है।

एक स्थानीय निकाय के वित्तीय मामलों पर उसकी वित्तीय समिति नियन्त्रण रखती है और गृह निर्माण एवं स्थानीय सरकार के मन्त्रालय द्वारा नियुक्त लेखा परीक्षकों (Auditors) द्वारा या कि ही मामलों में लेखा परीक्षकों की व्यावसायिक फर्म द्वारा उनकी लेखा-परीक्षा (Audit) की जाती है, यद्यपि यह अन्तिम प्रणाली अधिकतर प्रयोग में नहीं लायी जाती।

EXERCISES

Chapter—1

1 Describe the different sources of the British Constitution Discuss the main elements that go to make the British Constitution
ब्रिटिश संविधान के विभिन्न स्रोतों का वर्णन कीजिए। उन तत्त्वों का विवेचन कीजिए जो ब्रिटिश संविधान का निर्माण करते है।

2 Examine briefly the landmarks in the development of the British Constitution
ब्रिटिश संवैधानिक विकास के सीमा चिन्हों की संक्षिप्त समीक्षा कीजिए।

3 "The British Constitution is the result of development and not of design' Discuss
"ब्रिटिश संविधान विकास का परिणाम है, न कि रचना का।" समीक्षा कीजिए।

4 Critically examine the nature of the British Constitution
ब्रिटिश संविधान की प्रकृति की आलोचनात्मक समीक्षा कीजिए।

5 Briefly describe the salient features of the British Constitution
ब्रिटिश संविधान की विशेषताओं का संक्षेप मे वर्णन कीजिए।

6 What is meant by 'Rule of Law' in Great Britain ? What recent developments seem to threaten its existance ?
ग्रेट ब्रिटेन मे 'विधि शासन' से क्या अभिप्राय है ? वर्तमान मे ऐसी कौनसी बातें हो गई है जो इसके प्रति खतरनाक हैं ?

Chapter—2

1 What is the importance of 'Constitutional Conventions' in the working of the British Constitution ? Explain with examples
'सांविधानिक अभिसमयों' का ब्रिटेन के संविधान के कार्यान्वयन मे क्या महत्त्व है ? उदाहरण देकर समझाइये।

2 Distinguish between the Laws and Conventions of the Constitution Why do Conventions arise and what is the sanction behind them? Give some important Conventions of British Constitution
सांविधानिक कानून और अभिसमयों में क्या अन्तर है? अभिसमयों का उदय क्यों होता है और उनका पालन क्यों किया जाता है? ब्रिटिश संविधान के प्रमुख अभिसमयों का वर्णन कीजिए।

Chapter-3

1 State briefly what do you understand by the term 'Crown' in the British Constitution and distinguish it from the King
'क्राउन' शब्द से आप क्या समझते हैं? सम्राट और क्राउन में क्या अन्तर है?

2 Examine the position and functions of the Crown in the British Constitution
ब्रिटिश संविधान में क्राउन की स्थिति और कृत्यों का वर्णन कीजिए।

3 Discuss the position of the monarch in the British Constitution Why does monarchy survive?
ब्रिटिश सम्राट की स्थिति की विवेचना कीजिये। सम्राट पद अभी तक अस्तित्व में क्यों है?

4 "The King can do no wrong" Explain the meaning and implication of the statement
'सम्राट भूल नहीं कर सकता।' इस कथन का अर्थ और महत्व बतलाइये।

5 Discuss the utility of monarchy in Britain
ब्रिटेन में राजतंत्र की उपयोगिता का वर्णन कीजिए।

6 "The Government of the United Kingdom is in ultimate theory an absolute monarchy, in form a limited monarchy and in actual character a democratic republic" Explain
'ब्रिटिश शासन सिद्धान्ततः निरंकुश राजतंत्र, स्वरूप में सीमित राजतंत्र और व्यवहार में लोकतंत्रात्मक गणतंत्र है।' इस कथन की विवेचना कीजिए।

Chapter—4

1 What are the features of the Cabinet system of Government? How far they are present in Britain?
मंत्रिमण्डलात्मक पद्धति की सरकार के कौन कौन से लक्षण हैं? वे कहाँ तक ब्रिटेन में विद्यमान हैं?

2 Examine the position and functions of the Privy Council in Britain
ब्रिटेन मे प्रिवी परिषद् की स्थिति तथा कृयो का वणन कीजिए।

3 Explain the structure, role and functions of the Cabinet in the British Constitution
ब्रिटिश सविधान म उसकी मत्रिमण्डल के सगठन, कृत्य तथा स्थिति का वर्णन कीजिए।

4 Examine critically the statement that "the Cabinet in Britain is the steering wheel of the ship of the State and the steersman is the Prime Minister
'ब्रिटिश मन्त्रि मण्डल राज्यरूपी जहाज का यन्त्र है और प्रधानमत्री उस यन्त्र का चालक'। इस कथन की विवेचना कीजिए।

5 'Today it is not the House of Commons which controls the Cabinet but the Cabinet which controls the House' Explain and account for this development
'वतमान युग म लोक सभा मन्त्रि मण्डल पर नियन्त्रण नही रखती, बल्कि मन्त्रिमण्डल ही लोक-सभा पर नियन्त्रण रखता है।' इस विकास की व्याख्या कीजिए एव कारण बतलाइए।

6 Is there Cabinet dictatorship in Britain ? Give reasons in support of your answer
क्या ब्रिटेन म मन्त्रि-मण्डलीय अधिनायकत्व है ? अपने उत्तर की पुष्टि म तर्क दीजिए।

Chapter—5

1 Describe the powers, functions and position of the British Prime Minister Is he 'The first among the equals ?'
ब्रिटिश प्रधानमत्री की शक्तियो, कृत्यो और स्थिति का वर्णन कीजिए। उसे क्यो 'समकक्षो म प्रथम' कहा जा सकता है ?

2 'The fact cannot be got around, however, that to all interests and purposes the powers of pulse is no longer in the Parliament but rather in the cabinet Discuss
'तथ्य तो यह है कि सभी दृष्टियो स शक्ति अब ससद् के हाथ म नही रही, अपितु मन्त्रि-मण्डल के हाथ मे चली गई है।' विवेचना कीजिए।

Chapter—6

1 ब्रिटिश संविधान मे विशेषज्ञो तथा अविशेषज्ञो के कृत्यो की आलोचनात्मक विवेचना कीजिए।

2 "The British Parliament is a tool in the hands of the ministers and the ministers are as tools in the hands of the Permanent officials" Examine
'ब्रिटिश संसद मन्त्रियो के हाथ मे और मन्त्री स्थायी कर्मचारी वर्ग के हाथ मे खिलौने के समान है।' इस कथन की विवेचना कीजिए।

Chapter—7

1 How far it is correct to call the sovereignty of the British Parliament a myth ? Account for the progressive decline of the actual powers of the British Parliament
'ब्रिटिश संसद की सम्प्रभुता' को भ्रम कहना कहाँ तक उचित है ? ब्रिटिश संसद् की शक्तियों के ह्रास का कारण बतलाइये।

2 Discuss the composition, functions and powers of the House of Lords and critically examine its utility in the British Constitutional system
लार्डसभा की रचना, कृत्य तथा शक्तियो का वर्णन और ब्रिटिश सांविधानिक व्यवस्था मे इसकी उपयोगिता की परीक्षा कीजिये।

3 'The House of Lords should be either ended or amended' Comment upon this statement
'लार्डसभा का या तो अन्त होना चाहिए या सुधार।' इस कथन की समीक्षा कीजिए।

4 Describe the composition, powers and functions of the House of Commons in England
ब्रिटिश लोक सभा की रचना, अधिकारो तथा कृत्यो का वर्णन कीजिए।

5 Explain the procedure for the passing of Laws in England and compare the same with that in the U S A
ब्रिटेन मे प्रचलित विधि निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन कीजिये और उसकी तुलना अमरिकन प्रक्रिया से कीजिए।

6 Critically examine the committee system in England and compare it with that of America
ब्रिटिश समिति पद्धति की आलोचनात्मक विवेचना कीजिए तथा अमेरिकन पद्धति से इसकी तुलना कीजिए।

7 'What is meant by 'Delegated Legislation' ? Account far its growth in Great Britain in modern time and discuss its merits and demerits
'प्रदत्त विधायन' से आप क्या समझते हैं ? इसके विकास के कारणो का विवेचन कीजिए और गुण और दोषो का वणन भी कीजिए ।

8 How is the Speaker of the British House of Commons elected ? Describe his powers and functions Compare and contrast them with those of the Speaker of the House of Representatives in U S A
ब्रिटिश लोक सभा के अध्यक्ष का निर्वाचन कसे होता है ? इसके अधिकारों तथा कृत्या का वणन कीजिये । इनकी तुलना स रा अमेरिका की प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष की शक्तिया व कृत्यो से कीजिए ।

Chapter—8

1 Mention the main features of the British party system and compare them with those of America and France
ब्रिटिश दल प्रथा की प्रमुख विशेषताओ का उल्लेख कीजिए और अमेरिका तथा फ्रास से उनकी तुलना कीजिए ।

2 Describe the organisation, aims and methods of parties in Britain
ब्रिटिश राजनीतिक दलो के सगठन, उद्देश्य तथा कार्य-पद्धति की विधि का वणन कीजिए ।

3 ' What advantages has the two party system given to Britain ? Whar are the reasons for its strength ?
द्वि–दलीय पद्धति की प्रधानता से ब्रिटेन को क्या लाभ हुए हैं ? ब्रिटेन मे इस पद्धति के स्थायित्व के क्या कारण हैं ?

4 Describe the parliamentary organisation of the British Political Parties What is the relationship between it and the party organisation outside parliament ?
ब्रिटिश दलो के ससदीय सगठन का वणन कीजिए । दल के वाह्य सगठन से उसका कसा सम्बन्ध है ?

Chaper--9

1 Point out the main features of judicial system in Br
ब्रिटिश न्याय व्यवस्था की विशेषताओ का वणन कीजिए ।

2 What is meant by 'Rule of Law'? How far does it guarantee the rights of the people?
'कानून के शासन' का क्या अर्थ है ? यह नागरिकों के अधिकारों को कहां तक सुरक्षित रखता है ?

Chapter—10

1 Describe briefly the importance of Local Administration Give an account of the gradual growth of British System of Local Government Also discuss the salient features of this system in Britain
स्थानीय शासन के महत्व पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए। ब्रिटेन में स्थानीय शासन के क्रमिक विकास को बतलाते हुए उसकी विशेषताओं को प्रकट कीजिए।

2 Describe the chief organs of Local–Self Government in Britain and their functions How does the Central Government exercise control over these local bodies?
ब्रिटेन की स्थानीय संस्थाओं के मुख्य अंगों तथा उनके कर्त्तव्यों का वर्णन कीजिए। उन पर केन्द्रीय सरकार किस तरह से नियन्त्रण स्थापित करती है ?

3 Write short note on the Government of London
लन्दन की सरकार पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

4 Discuss the functions and reasources of Local Government in Britain
ब्रिटेन में स्थानीय शासन के कार्यों और साधनों की विवेचना कीजिए।

SELECTED READINGS

1 Bagehot : The English Constitution
2 Bailey British Parliamentary Democracy
3 Dicey : Introduction to the Law of the Constitution
4 Jennings The British Constitution
5 Laski Parliamentary Government in England
6 Lowell The Government of England
7 Ogg & Zink Modern Foreign Governments
8 Wheare Modern Constitution
9 Amos The English Constitution
10 Carter : *Government of Great Britain*
11 Greaves : The British Constitution
12 Keith : British Cabinet System
13 Marriot Mechanism of the Modern State
14 Martin The Magic of Monarchy
15 Munro : The Governments of Europe
16 Ogg English Government and Politics
17 Standard, H : The Two Constitutions
18 Finer Governments of Greater European Powers
19 Finer The British Civil Services
20 Taylor The House of Commons at Work
21 Bailey Political parties and the Party system in Britain
22 Bulmer The Party system in Great Britain
23 Makenzie British Political Parties

24	Barker	Britain and the British People.
25	Briers and Others	Papers on Parliament A Symposium
26	Neumann	European and Comparative Governments
27	Jennings	Law of the Constitution
28	Robsen	: Administrative Law in England
29	Robsen	Britain, An Official Hand-Book, 1963 ed
30	Maud	: Local Government in Modern England
31	Finer	: English Local Government
32	Jackson	Local Government in England and Wales
33	Robsen	*The Development of Local* Government
34	Clarke	: The Local Government of the United Kingdom
35	Cole	Local and Regional Government

अमेरिका का संविधान

(THE AMERICAN CONSTITUTION)

"जैसे अमेरिका अंग्रेजी बन गया वैसे ही उपनिवेशों में अंग्रेजी संस्थायें
अमेरिकी बन गईं। इन संस्थाओं ने पृथक पृथक उपनिवेशों के
राजनैतिक जीवन की नयी स्थितियों व नई सुविधाओं के
अनुकूल अपने आपको ढाल लिया। ये उपनिवेश प्रारम्भ
में कठिनाइयों से लड़े, फिर विस्तृत हुये और
अन्त में विजयी हुये। इन्होंने बिना अंग्रेजी
स्वभाव छोड़े अमेरिकन रूप व
रंग प्राप्त कर लिया।"

—वुड्रो विलसन

"अमेरिका का विधान सब कुछ काट छांट के बाद भी संसार के समस्त
विधानों से श्रेष्ठ है, क्योंकि इसकी योजना अति सुन्दर है, यह
जनता की आवश्यकताओं के अनुकूल है, यह सरल और
संक्षिप्त है, इसकी भाषा शुद्ध है और इसमें सिद्धान्तों
की निश्चितता के साथ साथ विस्तृत विवरणों
के लिये लचीलापन है।"

—लार्ड ब्राइस

1

अमेरिका के संविधान का विकास व स्वरूप

(GROWTH AND NATURE OF THE CONSTITUTION OF THE U S A)

"हमारा यह अटल निश्चय है कि मृतकों का मरना व्यर्थ नहीं जायेगा।
ईश्वर के अधीन इस जाति में स्वतन्त्रता का नया जन्म होगा
और ऐसी सरकार जो जनता की होगी, जनता के
द्वारा होगी और जनता के लिए होगी,
इस पृथ्वी से समाप्त नहीं
होने पावेगी।"

—अब्राहम लिंकन

संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान वर्तमान लिखित संविधानों में सबसे प्राचीन है। इसका जन्म उस समय हुआ था जबकि फ्रांस में 'राजतन्त्र' रोम में 'पवित्र साम्राज्य (Holy Empire), कुस्तुन्तुनिया में सुल्तान खलीफा (Sultan Caliph), पीकिंग में 'स्वर्ग आदेश' (Mandate of Heaven) से विभूषित सम्राट और जापान में 'मत साम्राज्य (Hermit Empire) था। किन्तु ये सभी राज्य वर्षों पूर्व अतीत के गर्भ में विलीन हो गये, जबकि अमेरिका का संविधान सदियों के झंझावतों को झेलते हुए आज भी सिर उठाये आदर्श प्रस्तुत कर रहा है।

अमेरिकन संविधान की उत्पत्ति और उसका विकास

(Origin and Development of the American Constitution)

संयुक्त राज्य अमेरिका की वर्तमान शासन-पद्धति का आधार सन 1787 में फिलाडेलफिया कान्फ्रेंस द्वारा निर्मित संविधान है, जो सन 1789 का संविधान कहलाता है। पूर्णतः निर्मित और लिखित संविधान होते हुए भी विगत लगभग 180 वर्षों में यह निरन्तर विकासमान रहा है। यह संविधान अस्तित्व में कैसे आया—इसके पीछे एक लम्बी कहानी है —

उपनिवेश निर्माण

कोलम्बस द्वारा अमरिका के विशाल महाद्वीप की खोज करने के बाद धीरे धीरे यूरोप की जातियों ने इस प्रदेश की भूमि पर अपने उपनिवेश कायम करना शुरू कर दिया। प्रारम्भ में अंग्रेज आगमनकारियों की ही प्रधानता रही, परन्तु धीरे धीरे विभिन्न कारणों से, जर्मनी, पुर्तगाल, आयरलैण्ड, स्कॉटलैण्ड, स्विटजरलैण्ड, स्पेन, फ्रांस आदि से भी लोग विशाल संख्या में अमरिका आकर उसके विविध भागों में बस गये। यूरोपवासियों की बाढ़ अमरिका में निरन्तर आती ही गई। फलस्वरूप जहाँ 1690 में अमरिका की जनसंख्या लगभग 2½ लाख था, वहाँ 1775 में वह लगभग 25 लाख हो गई।

इंग्लैण्ड और यूरोप से आये हुए लोग अपनी भाषा, संस्कृति और विचार धारायें अपने साथ लाये। इन सभी लोगों के परस्पर घुलने मिलने से अमरिका में एक नवीन संस्कृति का उदय हुआ जिसमें इंग्लैण्ड और यूरोप दोनों की संस्कृतियों के बीज थे। व्यवस्था प्रिय होने के कारण अधिकांश लोगों ने यह उचित समझा कि उपनिवेशों की स्थापना के लिए इंग्लैण्ड की मातृ सरकार से आज्ञा प्राप्त कर ली जाय। इंग्लैण्ड के राजा ने प्रपत्रों (Charters) के रूप में विविध व्यक्तियों और संस्थाओं को इस प्रकार की आज्ञायें प्रदान की। फलस्वरूप उपनिवेशों की स्थापना का सिलसिला जारी हुआ और सन 1776 तक अमरिका में अलग अलग 13 उपनिवेशों की स्थापना हुई जो आन्तरिक मामलों में स्वशासित होते हुए भी इंग्लैण्ड के आधिपत्य में थे।

इस प्रकार जिन उपनिवेशों की स्थापना अमरिका में हुई, वे मुख्यतः तीन प्रकार के थे —सम्राट के उपनिवेश (Royal or Crown Colonies) स्वाम्याधीन उपनिवेश (Proprietory Colonies), एवं चार्टर या अधिकार पत्र प्राप्त उपनिवेश (Charter colonies)। सम्राट के उपनिवेशों की संख्या सबसे अधिक थी। ये उपनिवेश पूरी तरह सम्राट के नियन्त्रण में थे। सम्राट के प्रतिनिधि के रूप में इनमें गवर्नर नियुक्त होते थे। स्वाम्याधीन उपनिवेशों का शासन ऐसे व्यक्तियों के अधिकार में था जिन्होंने शासन करने का अधिकार प्राप्त कर लिया था। इनका शासन प्रबन्ध अपना था किन्तु सम्राट को विधि पर वीटो (Veto) का अधिकार था। चार्टर-उपनिवेश कम्पनियों द्वारा बसाये गये थे। ये ब्रिटिश शासन के नियन्त्रण में थे और इंग्लैण्ड की विधियों के प्रतिकूल विधि निर्माण नहीं कर सकते थे। स्पष्ट है कि तीनों प्रकार के उपनिवेशों की स्थिति में परस्पर कुछ अन्तर था। पर सबकी सामान्य बात यह थी कि अपनी आन्तरिक नीति का निर्णय करने में यद्यपि वे पर्याप्त रूप से स्वतन्त्र थे, किन्तु इनके वैदेशिक मामले व सेना एवं युद्ध सम्बन्धी मामले तथा कस्टम (Custom) सम्बन्धी विषयों का संचालन इंग्लैण्ड की सरकार द्वारा होता था।

स्वतन्त्रता की ओर

भली प्रकार बस जाने के उपरान्त उपनिवेशों के निवासियों में शनैः-शनैः सामाजिक और राजनीतिक चेतना जागृत होती गई तथा इंग्लैण्ड से उनका भावात्मक सम्बन्ध पहले के समान घनिष्ठ नहीं रहा। अब उनमें पूर्ण स्वतन्त्रता पर आधारित पूर्ण स्वशासन की इच्छा बलवती होने लगी और इंग्लैण्ड का नाम मात्र का आधिपत्य भी उन्हें खटकने लगा। विभिन्न प्रशासकीय और आर्थिक कारणों से ब्रिटेन के विरुद्ध उपनिवेशवासियों का असन्तोष बढ़ता गया। सन् 1963 में फ्रांस के विरुद्ध सप्त वर्षीय युद्ध में विजय प्राप्त करने के बाद इंग्लैण्ड ने चाहा कि अमेरिका के उपनिवेश इस युद्ध का व्यय वहन करने में भागीदार बने। ब्रिटिश सरकार ने इच्छा प्रकट की कि उपनिवेशों की रक्षा और शासन प्रबन्ध पर होने वाले खर्च का कुछ भाग उन्हें (उपनिवेशों को) स्वयं को उठाना चाहिए।

उक्त निश्चय के अनुसार जब ब्रिटिश सरकार ने उपनिवेश वासियों पर नये-नये कर लगाना शुरू किया तो उनमें विद्रोह की खुली भावना भड़क उठी। ब्रिटिश संसद द्वारा आरोपित करों का चुकाना अस्वीकार करते हुए उन्होंने नारा लगाया कि "बिना प्रतिनिधित्व के कोई कर नहीं" (No Taxation without Representation) अर्थात ब्रिटिश संसद, जिसमें हम (उपनिवेशों का) प्रतिनिधि भेजने का अधिकार नहीं है, हमारे ऊपर कर नहीं लगा सकती। उपनिवेश वासियों की आवाज को साम (Sam), जॉन एडम्स (John Adams), पैट्रिक हेनरी (Patric Henry) थामस जैफरसन (Thomas Jafferson) जैसे क्रान्तिकारियों ने बुलन्द बनाया। अब इंगलैण्ड द्वारा आरोपित अवांछित कानूनों व आज्ञाओं का खुला उल्लंघन किया जाने लगा। ब्रिटिश सम्राट ने दमनकारी रुख अपनाया जिससे उपनिवेशों में रोष का सागर उमड़ उठा।

मसाच्यूसेट्स के निवासियों ने क्रान्ति का नेतृत्व किया। उनके प्रयत्नों के फलस्वरूप सन् 1774 में 12 उपनिवेशों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन फिलाडेल्फिया नगर में हुआ, जिसे "प्रथम महाद्वीपीय कांग्रेस" (The First Continental Congress) कहा जाता है। कांग्रेस द्वारा एक महाद्वीप संगठन (Continental Association) की स्थापना की गई जो क्रान्तिकारियों का संगठन हो गया। सन् 1775 में द्वितीय महाद्वीपीय कांग्रेस (The Second Continental Congress) हुई। जार्जिया के शामिल होने से इस बार विद्रोह में कुल 13 उपनिवेश शामिल हो गए। यह कांग्रेस विशेष रूप से महत्वपूर्ण थी, क्योंकि मार्च, 1781 तक यह तत्कालीन उपनिवेशों की सरकार के आधिकारिक अंग (Official Organ) के रूप में कार्य करती रही। इस तरह यह अमेरिका की प्रथम राष्ट्रीय सरकार थी।

स्वतन्त्रता की घोषणा

स्थिति इतनी तेजी से बदली कि स्वतन्त्रता का साकार स्वप्न दिखाई देने लगा। जब इंग्लैण्ड ने उपनिवेशों के सभी प्रयासों ... सिद्ध हो गए, तो ...

वाशिंगटन के नेतृत्व म तेरह के तेरह उपनिवेशो ने अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी और इगलड के विरुद्ध युद्ध की शुरूआत करते हुए 4 जुलाई सन् 1776 को ब्रिटिश सम्राट के प्रति अपनी स्वामिभक्ति का त्याग कर दिया। वे स्वतन्त्र और प्रभुसत्ता-सम्पूर्ण राज्य बन गये।

स्वतन्त्रता की घोषणा के तुरन्त बाद ही उपनिवेशवासियो ने सबसे पहले अपना ध्यान सगठित होकर युद्ध करने पर दिया। यह युद्ध लगभग 6 वर्षों तक चला और अन्त मे उपनिवेशो की जीत हुई। इगलड म लार्ड नार्थ की सरकार ने त्यागपत्र दे दिया तथा नयी सरकार ने निश्चय किया कि स्वतन्त्रता की घोषणा (The Declaration of Independence) के आधार पर शान्ति सधि कर ली जाए। 1783 म सन्धि पर विधिवत् हस्ताक्षर हो गये जिसमे यह मान लिया गया कि सभी 13 उपनिवेश पूर्णतया स्वतन्त्र तथा प्रभुतासम्पन्न राज्य होगे।

सघीय व्यवस्था की स्थापना, 1776

1783 मे उक्त सधि पर हस्ताक्षर होने से पूर्व 12 जून,1776 को, महाद्वीपीय काग्रेस ने प्रत्येक उपनिवेश से एक एक सदस्य लेकर एक समिति का निर्माण किया था जिसका कार्य एक ऐसे सघ (Confederation) के सविधान का विचार करना था जिसके अन्तर्गत एक होकर सभी उपनिवेश स्वाधीनता सग्राम को चला सकें और आन्तरिक व्यवस्था बनाए रख सके। नवम्बर 1777 मे महाद्वीपीय काग्रेस ने (जो सभी उपनिवेशीय राज्यो की सम्मिलित सस्था थी) स्थायी सघ के निर्माण से सम्बधित धाराओ को स्वीकार कर लिया। पहली मार्च 1781 तक सभी राज्यो म सघ या सवग की इन धाराओ (Articles of Confederation) पर अपनी स्वीकृति दे दी और उसी दिन ये धाराए लागू हो गयी। ये धाराए अथवा अनुच्छेद ही सयुक्तराज्य अमरिका के 'प्रथम सविधान' थे। उल्लेखनीय है कि इस सघीय व्यवस्था को अस्थाई रूप से तो लागू सन 1777 म ही कर दिया गया था ताकि युद्ध म बाधा न पहुँचे।

उपरोक्त सविधान के अन्तर्गत एक ऐसी केन्द्रीय सरकार की स्थापना की गयी जिसके अधिकार निश्चित और सीमित थे। सविधान की प्रथम धारा के अनुसार सघ का नाम सयुक्तराज्य अमरिका रखा गया। एक अन्य धारा के अनुसार प्रत्येक राज्य की स्वतन्त्रता और सत्ता की रक्षा स्वीकृत की गयी। प्रभुसत्ता राज्यो म निहित रखी गयी और केन्द्रीय सरकार की शक्ति सीमित मानी गया। सघीय शक्तियो का कार्यान्वित करने के लिए एक काग्रेस की स्थापना की गयी जिसम प्रत्येक राज्य के प्रतिनिधि सम्मिलित किए गये। यह आवश्यक रखा गया कि प्रत्येक राज्य कम से कम दो और अधिक से अधिक सात प्रतिनिधि भेज किन्तु प्रत्येक राज्य को केवल एक मत देने का अधिकार (One State One Vote) हो। यह भी व्यवस्था की गयी कि किसी प्रस्ताव की स्वीकृति के लिए 13 राज्यो म से

9 का बहुमत आवश्यक होगा। काग्रेस का रूप एकसदनीय (Unicameral) रखा गया। महाद्वीपीय काग्रेस की अपेक्षा इस सवर्ग या सघ की काग्रेस के अधिकार निश्चित और स्पष्ट रख गये जिनके आधार पर वह सभी राज्यो का सामान्य हित साधन कर सकती थी।

सघीय व्यवस्था की असफलता और उसके दुष्परिणाम

उपरोक्त व्यवस्था के कारण सघ वस्तुत , बहुत ही निर्बल था। उसके पास वास्तविक शक्ति का सर्वथा अभाव था। काग्रेस को कार्यपालिका सम्बन्धी कोई अधिकार प्राप्त न थे। इस बात की भी व्यवस्था नही थी कि यदि कोई राज्य केन्द्र के आदेश या उसके द्वारा की हुई सन्धियो के दायित्वो का पालन न करे तो केन्द्र क्या कारवाई कर सकेगा? केन्द्रीय अथवा सघीय सरकार को यह अधिकार भी नही था कि वह कर लगा सके तथा राज्यो के बीच होने वाले व्यापार का नियन्त्रण कर सके।

इन निर्बलताओ के कारण सघ की व्यवस्था स्थायी सिद्ध न हो सकी। कुछ ही समय म राज्यो के पारस्परिक सहयोग का अन्त हो गया। सघीय व्यवस्था उन्हे कोई वास्तविक एकता प्रदान नही कर सकी। वस्तुत सघ की स्थिति प्रारम्भ से ही उस बालू की रस्सी के समान थी जो किसी को बाध सकने मे असमर्थ थी। गुनरा के शब्दो म "इस सघ की दुर्बलता यह थी कि इसके पास व चार वस्तुए नही थी जो प्रत्येक राष्ट्रीय सरकार के पास होनी चाहिए अर्थात् कर एकत्रित करने, ऋण देन, व्यापार का नियन्त्रण करने तथा सेना एकत्रित करके रक्षा की पूर्ण व्यवस्था की शक्ति। ये शक्तिया सन 1787 के नये सविधान द्वारा काग्रेस को दी गयी।"

सघीय व्यवस्था की दुर्बलता के कारण शीघ्र ही अनेक कठिनाइया पैदा हो गयी। राज्यो म अशान्ति फल गयी और कई जगह पर विद्रोह भी हो गये। चारो तरफ असन्तोष, आर्थिक परेशानिया, ईर्ष्या और प्रादेशिकता का बोलबाला हो गया।

फिलाडेल्फिया सम्मेलन और नये सविधान का निर्माण

शीघ्र ही यह स्पष्ट हो गया कि सन् 1776 की सघीय व्यवस्था म आवश्यक परिवर्तन किए जाने चाहिए। इस दृष्टि से सविधान की धाराओ म सुधार के जो भी प्रयत्न किए गये व सफल न हो सके और राज्यो मे गृह युद्ध छिड जाने का भय उत्पन्न हो गया। इस स्थिति का अनिवार्य परिणाम यह हुआ कि केन्द्र को शक्तिशाली बनाने के लिए और विधान म तुरन्त परिवर्तन करने के लिए सम्पूर्ण देश मे एक आन्दोलन सा उठ खडा हुआ। जार्ज वाशिंगटन ने स्पष्ट शब्दो म कहा "एक राष्ट्र के रूप मे हम अधिक दिनो तक तब तक जीवित नही रह सकते जब तक किसी स्थान पर एक ऐसी सत्ता की स्थापना न करें जो इतनी शक्ति के साथ राज्य सरकारो, विभिन्न राज्यो म कार्य कर रही हैं।'

जाज वाशिंगटन का मत धीरे-धीरे जनता का मत हो गया और 1787 म काग्रेस ने सघीय नियमावली का सशोधित करने तथा सघ को दृढ बनाने की दृष्टि से एक सम्मेलन बुलाने का प्रस्ताव पारित किया। फलस्वरूप मई, 1787 फिलाडेलफिया मे महान सम्मेलन हुआ जिसम 12 राज्यो के 55 प्रतिनिधि आए। केवल रोड द्वीप (Rhode Island) न अपना कोई प्रतिनिधि नही भेजा। सम्मेलन का सभापतित्व जाज वाशिंगटन ने किया। प्रतिनिधियो ने सारी समस्या को बड़े अच्छे ढग स सुलझाना आरम्भ किया। उनका उद्देश्य एक सुदृढ केन्द्रीय सरकार की स्थापना करना था जिसके साथ साथ राज्यो की भी अधिकाधिक व्यक्तिगत स्वतन्त्रता स्थापित रहे।

फिलाडेलफिया सम्मेलन म विचार-विमर्श के दौरान यह स्पष्ट हो गया कि 1776 के सघीय ढाचे म सुधार मात्र से काम नही चलेगा वरन एक पूर्णत नवीन सावैधानिक ढाचा तैयार करना होगा जिसम स्वशासित राज्यो और शक्तिशाली केन्द्र की शक्ति का उचित सामजस्य होगा। लगभग 4 माह के बाद 17 सितम्बर, 1787 को सवसम्मति से एक प्रलेख (Document) बन पाया जिसम नूतन शासन विधान स्वीकार किया गया। यह निश्चय किया गया कि इसे लागू करने के लिए 13 म स कम स कम 9 राज्यो का सम्मेलन उसे अलग अलग स्वीकार कर ले।

इसके बाद ही सविधान म की गयी प्रशासनिक व्यवस्था को लेकर राज्यो म गम्भीर मतभेद व्याप्त हो गया और 1787 के अन्त तक केवल 3 राज्यो की स्वीकृति प्राप्त हो सकी। वास्तव म सम्पूर्ण देश दो दलो म बट गया। एक दल के लोग सघ विरोधी (Anti-Federalists) थे। व केन्द्र को अधिक शक्तिशाली बनाने के पक्ष म नही थे और चाहते थे कि केन्द्रीय शासन स्वतन्त्र राज्यो का एक शिथिल सगठन मात्र बना रहे। दूसरे दल के लोग सघ समथक (Federalists) थे जो केन्द्रीय सरकार को पर्याप्त रूप स शक्तिशाली बनाना चाहते थे। नये प्रस्तावित सविधान का बहुत स लोगो द्वारा इस आधार पर भी विरोध किया गया कि उसम अधिकार पत्र (Bill of Rights) की व्यवस्था नही की गयी थी और इस कारण लोगो की स्वतन्त्रता का खतरा पैदा हो सकता था। सघात्मक शासन के समथको (Federalists) ने सविधान म अधिकार-पत्र (Bill of Rights) की बात न केवल मान ली वरन् सविधान म प्रथम दस नये सशोधन करके उसे लागू भी कर लिया। परिणाम यह निकला कि उन राज्यो ने भी अब प्रस्तावित सविधान को स्वीकार कर लिया जिन्होने अब तक कोई निणय नही किया था। 21 जून, 1788 तक नये सविधान को राज्यो की आवश्यक सख्या द्वारा स्वीकृति दे दी गयी और तब सघ (Confederation) की काग्रेस न एक विधि द्वारा यह आज्ञा दी कि नये सविधान के अनुसार निर्वाचन हो तथा नयी सरकार 4 माच, 1789 स देश का शासन भार सम्भाल ले। अब निर्वाचन हुए, सीनेट के सभासद और काग्रेस के

प्रतिनिधिगण चुने गए तथा जाज वाशिगटन के राष्टपतित्व म नयी सरकार न कायभार सम्भाला। इस प्रकार पुराना मघ या सवग (Confederation)समाप्त हो गया और नया मघ अस्तित्व म आया।

आज अमरिका के सयुक्त राज्य म 50 राज्य सम्मिलित ह जो उमी सविधान से बधे हुए ह जिसे सन 1789 का सविधान कहा जाता है। अमेरिकावासियो का अपन इस सविधान म बडा प्यार है।

अमेरिकन सविधान का स्वरूप अथवा उसकी विशेषताएँ

(Salient Features of the American Constitution)

(1) लिखित सविधान—अमेरिकन सविधान आधुनिक युग का प्राचीनतम लिखित और निर्मित सविधान (A Written and Inacted Constitution) है। यद्यपि इसम सशोधन और परिवतन होत रहे ह, तथापि सम्पूर्ण सविधान एक क्रमवद्ध विधान के रूप मे है जिसे आधे घण्टे म पढ कर समाप्त किया जा सकता है।

यह एक छोटा प्रलेख है, जिसमे शासन के मूल सिद्धान्तो शासन के विभिन्न अगो के कार्यों और कायक्षेत्रो, नागरिको के अधिकारो आदि को लिपिवद्ध किया गया है। इसका यह आशय नही है कि सविधान का अलिखित अग है ही नहीं। ब्रिटिश सविधान की भाति इसम भी अनेक परम्पराओ और अभिसमयो का प्रवेश हो गया है। ये परम्पराए या अभिसमय उसी रूप म मान्य ह जिस रूप म मूल सविधान। किसी *व्यक्ति का राष्ट्रपति पद के लिए दो बार से अधिक निर्वाचित न होना,* मन्त्रिमण्डल की व्यवस्था सीनेट की सौहार्द्रता (Senetorial Courtesy), दल पद्धति, राष्ट्रपति का प्रत्यक्ष निर्वाचन आदि क सम्बन्ध म सविधान मौन है।

(2) सक्षिप्त सविधान—लिखित होने के साथ ही अमरिकन सविधान अति सक्षिप्त भी है। इसम केवल ७ अनुच्छेद हैं। कुल चार हजार शब्दो का यह सविधान दस बारह पृष्ठो म छपा हुआ है और इसे कोई भी आधे घण्टे मात्र म पढ सकता है। सविधान इतना सक्षिप्त इसलिए है कि इसम आधारभूत सिद्धान्तो (Fundamentals) का प्रतिपादन किया गया ह और विस्तार की बातो को परम्परा अथवा प्रशासनिक आज्ञाओ द्वारा निर्णीत किए जान के लिए छोड दिया गया है। सविधान निर्माताओ न इस एक 'स्ट्रेट जकेट' (Strait Jacket) के रूप म तयार नही किया था वरन् उन्होने केवल उसका ढाचा तैयार किया था जिसे भावी सन्तानो न रक्त मास देकर पूर्ण जीवन दिया है।

सविधान की इस सक्षिप्तता का प्रभाव हम कई दिशाओ म स्पष्ट दिखाई देता है—

(1) कानून व परम्पराओ दोनो से ही सवधानिक ढाचे का निरूपण। जिसम परम्पराओ का कलेवर कम तथा कानूनो का अधिक है।

(ii) संविधान अनेक बातों के विषय में मौन है। उदाहरणार्थ, बैंकों, बजट निर्माण, कृषि, श्रम, शिक्षा आदि के सम्बन्ध में संविधान में कोई व्यवस्था नहीं की गयी है।

(iii) तीसरा प्रभाव संविधान के भारी विकास पर पड़ा है जो तीन रूपों में प्रकट हुआ है—(क) संक्षिप्तता के कारण संविधान का महत्व बढ़ गया है क्योंकि जिन विषयों पर यह मौन है उनके बारे में समय-समय पर दिये गये न्यायिक निर्णय संविधान के अंग बन जाते हैं और संविधान का विकास होता रहता है, (ख) इस संक्षिप्तता के फलस्वरूप निहित शक्तियों के सिद्धान्त (Doctrine of Implied Powers) का उदय हो गया है एवम् (ग) इस संक्षिप्तता के कारण ही लाभदान की प्रणाली (Spoil System) का उदय हुआ है। इस प्रणाली का यद्यपि आज भी प्रचलन है किन्तु इसका प्रभाव पहले के समान नहीं रहा है।

(iv) इस संक्षिप्तता ने संविधान को स्थायित्व प्रदान करने में मदद की है।

(3) **निर्मित संविधान**—यह एक पूर्णतया निर्मित संविधान है जिसकी रचना एक सभा द्वारा हुई थी जो इसी कार्य के लिये निश्चित रूप से फिलाडेलफिया में 1787 में बुलाई गई थी। निर्मित संविधानों में विकास का और विकसित संविधानों में निर्माण का कुछ न कुछ तत्व आवश्यक रूप से विद्यमान रहता है। अमेरिका के निर्मित संविधान में भी विकास के तत्व मौजूद हैं। एक निश्चित समय पर निर्मित होने के पश्चात् इस संविधान में समय और आवश्यकताओं के अनुसार विकास होता रहा है और ऐसी अनेक परम्परायें विकसित हुई हैं जिन्होंने संविधान के स्वरूप का निर्धारण किया है। यह विकास कांग्रेस के व्यवस्थापन, संविधान के संशोधन और न्यायिक निर्णयों के द्वारा भी हुआ है।

(4) **कठोर संविधान**—यह कठोर या अचल (Rigid) संविधान है जिसमें संशोधन साधारण विधि-निर्माण करने की प्रक्रिया द्वारा नहीं हो सकते हैं, जैसे कि इंगलैंड में होते हैं। इंगलैण्ड के विपरीत अमेरिका में विधि निर्माण करने वाले निकायों में और संविधान में संशोधन करने वाले निकायों में बहुत कुछ अन्तर है। अमेरिका में संवैधानिक संशोधनों की एक विशेष पद्धति है, जो जटिल और धीमी है। यही कारण है कि पिछले लगभग 180 वर्षों में संविधान में केवल 25 ही संशोधन हो पाये हैं।

संशोधन प्रक्रिया—संविधान में संशोधन करने के लिए दो विधियाँ हैं, जिनमें (1) संशोधन प्रस्तावित किये जाते हैं एवं (2) प्रस्ताव का पुष्टिकरण किया जाता है। पुष्टिकरण के बाद ही संशोधन वैधानिक रूप में मान्य होता है। इन दोनों विधियों का विश्लेषण निम्न प्रकार में है—

संविधान के संशोधन का प्रस्ताव दो प्रकार से किया जा सकता है—

(क) कांग्रेस स्वयं ही संशोधन का प्रस्ताव कर सकती है, यदि दोनों सदनों

मे पृथक 2 दो–तिहाई बहुमत उसकी आवश्यकता को स्वीकार करता हो।

(ख) दो तिहाई राज्यो की व्यवस्थापिकायें भी काग्रेस से सशोधन की प्राथना कर सकती हैं। ऐसा किये जाने पर काग्रेस को इन सशोधनो का प्रस्ताव करने के लिये एक सम्मेलन बुलाना पडता है।

सशोधन किसी भी विधि से प्रस्तावित किय गये हो, वे मा य उसी अवस्था म हो सकते हैं जबकि उ हे निम्नलिखित विधिया मे से किसी एक द्वारा पुष्टिकरण प्राप्त हो जाए—

(क) तीन चौथाई राज्यो की व्यवस्थापिकाये उनका पुष्टिकरण कर दें, अथवा।

(ख) इस उद्देश्य के लिए बुलाया गया तीन-चौथाई राज्यो का सम्मेलन (Convention) उसका पुष्टिकरण कर दे।

स्पष्ट है कि सघीय सरकार और उप राज्य दोना ही का सविधान के सशोधन मे हाथ रहता है और यह सशोधन-रीति सरल भी नही है।

पुष्टिकरण सम्बन्धी समय की सीमायें—काग्रेस सशोधनो के प्रस्ताव को प्रस्तुत करते समय सीमा भी निश्चित कर सकती है कि अमुक अवधि तक यह पूण हो जावे। वतमान समय म प्रत्येक दशा म 7 साल की अवधि निश्चित कर दी गई है जिसे सर्वोच्च यायालय ने भी मान लिया है। यदि सात वर्षों तक कोई सशोधन स्वीकृत नही किया जा सके तो वह विफल हो जाता है।

सशोधन की सीमा—सविधान की प्रथम धारा की 9 वी उपधारा के पहिले व चौथे उपब धो पर किसी सवधानिक सशोधन का प्रभाव नही पड सकता। सयुक्तराज्य अमेरिका म प्रत्येक राज्य को सीनट मे दो प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है और इस सम्ब ध मे भी कोई सशोधन राज्य की अपनी इच्छा के विरुद्ध स्वीकार नही किया जा सकता। इसके अतिरिक्त कोई भी राज्य किसी भी विषय पर न तो विरुद्ध राय देग और न दो राज्य मिलकर ही कोई बात तय करेंगे–जब तक कि उन राज्या की धारा सभाये उनके सम्ब ध मे स्वीकृति न दे दे।

(i) सविधान मे सशोधन की इस प्रणाली क आधारो पर एक व्यक्ति भी सशोधन मे रुकावट डाल सकता है। उदाहरण के लिये, यदि सीनेट म 100 सदस्यों म से 85 उपस्थित हो, जिसम स 56 सशोधन के पक्ष मे मत दें और 29 उसके विरोध म मत प्रकट करे तो वह सशोधन सीनेट म दो–तिहाई सख्या पक्ष म न होने से स्वीकार नही समझा जा सकता, चाह प्रतिनिधि सभा म वह दो तिहाई मत से पास हो चुका हो।

(ii) सशोधन प्रणाली अत्य त म थर है। यह बडी टढी और लम्बी है।

(iii) यह बहुमत शासन की निरकुशता का उदाहरण है। सशोधन के प्रस्ताव के सम्ब ध म 34 सीनेटर दोना सदनो के बहुमत को रद्द कर सकते हैं।

(ii) संविधान अनेक बातों के विषय में मौन है। उदाहरणार्थ, बैंकों, बजट निर्माण, कृषि, श्रम, शिक्षा आदि के सम्बन्ध में संविधान में कोई व्यवस्था नहीं की गयी है।

(iii) तीसरा प्रभाव संविधान के भारी विकास पर पड़ा है जो तीन रूपों में प्रकट हुआ है—(क) संक्षिप्तता के कारण संविधान का महत्व बढ़ गया है क्योंकि जिन विषयों पर यह मौन है उनके बारे में समय-समय पर दिये गये न्यायिक निर्णय संविधान के अंग बन जाते हैं और संविधान का विकास होता रहता है, (ख) इस संक्षिप्तता के फलस्वरूप निहित शक्तियों के सिद्धान्त (Doctrine of Implied Powers) का उदय हो गया है एवम् (ग) इस संक्षिप्तता के कारण ही लाभदान की प्रणाली (Spoil System) का उदय हुआ है। इस प्रणाली का यद्यपि आज भी प्रचलन है किन्तु इसका प्रभाव पहले के समान नहीं रहा है।

(iv) इस संक्षिप्तता ने संविधान को स्थायित्व प्रदान करने में मदद की है।

(3) **निर्मित संविधान**—यह एक पूर्णतया निर्मित संविधान है जिसकी रचना एक सभा द्वारा हुई थी जो इसी कार्य के लिये निश्चित रूप से फिलाडेलफिया में 1787 में बुलाई गई थी। निर्मित संविधानों में विकास का और विकसित संविधानों में निर्माण का कुछ न कुछ तत्व आवश्यक रूप से विद्यमान रहता है। अमेरिका के निर्मित संविधान में भी विकास के तत्व मौजूद हैं। एक निश्चित समय पर निर्मित होने के पश्चात् इस संविधान में समय और आवश्यकताओं के अनुसार विकास होता रहा है और ऐसी अनेक परम्परायें विकसित हुई हैं जिन्होंने संविधान के स्वरूप का निर्धारण किया है। यह विकास कांग्रेस के व्यवस्थापन, संविधान के संशोधन और न्यायिक निर्णयों के द्वारा भी हुआ है।

(4) **कठोर संविधान**—यह कठोर या अचल (Rigid) संविधान है जिसमें संशोधन साधारण विधि-निर्माण करने की प्रक्रिया द्वारा नहीं हो सकते हैं, जैसे कि इंगलैंड में होते हैं। इंगलैण्ड के विपरीत अमेरिका में विधि निर्माण करने वाले निकायों में और विधान में संशोधन करने वाले निकायों में बहुत कुछ अन्तर है। *अमेरिका में संवैधानिक संशोधनों की एक विशेष पद्धति है, जो जटिल और धीमी* है। यही कारण है कि पिछले लगभग 180 वर्षों में संविधान में केवल 25 ही संशोधन हो पाये हैं।

संशोधन प्रक्रिया—संविधान में संशोधन करने के लिए दो विधियाँ हैं, जिनमें (1) संशोधन प्रस्तावित किये जाते हैं एवं (2) प्रस्ताव का पुष्टिकरण किया जाता है। पुष्टिकरण के बाद ही संशोधन वैधानिक रूप से मान्य होता है। इन दोनों विधियों का विश्लेषण निम्न प्रकार से है—

संविधान के संशोधन का प्रस्ताव दो प्रकार से किया जा सकता है—

(क) कांग्रेस स्वयं ही संशोधन का प्रस्ताव कर सकती है, यदि दोनों सदनों

मे पृथक 2 दो–तिहाई बहुमत उसकी आवश्यकता का स्वीकार करता हो।

(ख) दो तिहाई राज्यो की व्यवस्थापिकायें भी काग्रेस से सशोधन की प्रार्थना कर सकती हैं। ऐसा किये जाने पर काग्रेस को इन सशोधनो का प्रस्ताव करने के लिये एक सम्मेलन बुलाना पडता है।

सशोधन किसी भी विधि से प्रस्तावित किय गये हो, व मान्य उसी अवस्था मे हो सकते है जबकि उन्हे निम्नलिखित विधियो मे से किसी एक द्वारा पुष्टिकरण प्राप्त हो जाए—

(क) तीन-चौथाई राज्यो की व्यवस्थापिकायें उनका पुष्टिकरण कर दें, अथवा।

(ख) इस उद्देश्य के लिए बुलाया गया तीन चौथाई राज्यो का सम्मेलन (Convention) उसका पुष्टिकरण कर दे।

स्पष्ट है कि सघीय सरकार और उप राज्य दोनो ही का सविधान के सशोधन म हाथ रहता है और यह सशोधन रीति सरल भी नही है।

पुष्टिकरण सम्बन्धी समय की सीमायें––काग्रेस सशोधना के प्रस्ताव को प्रस्तुत करते समय सीमा भी निश्चित कर सकती है कि अमुक अवधि तक यह पूर्ण हो जाव। वर्तमान समय म प्रत्येक दशा म 7 साल की अवधि निश्चित कर दी गई है जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने भी मान लिया है। यदि सात वर्षों तक कोई सशोधन स्वीकृत नही किया जा सके तो वह विफल हो जाता है।

सशोधन की सीमा––सविधान की प्रथम धारा की 9 वी उपधारा के पहिले व चौथे उपबन्धो पर किसी सवधानिक सशोधन का प्रभाव नही पड सकता। सयुक्तराज्य अमरिका म प्रत्येक राज्य को सीनेट मे दो प्रतिनिधि भजने का अधिकार है और इस सम्बन्ध मे भी कोई सशोधन राज्य की अपनी इच्छा के विरुद्ध स्वीकार नही किया जा सकता। इसके अतिरिक्त कोई भी राज्य किसी भी विषय पर न तो विरुद्ध राय देंगे और न दो राज्य मिलकर ही कोई बात तय करेंगे–जब तक कि उन राज्यो की धारा सभाये उनके सम्बन्ध मे स्वीकृति न दे दे।

(i) सविधान म सशोधन की इस प्रणाली क आधारो पर एक व्यक्ति भी सशोधन मे रुकावट डाल सकता है। उदाहरण के लिये, यदि सीनेट म 100 सदस्यो मे से 85 उपस्थित हो, जिसमे से 56 सशोधन के पक्ष मे मत दें और 29 उसके विरोध म मत प्रकट करें तो वह सशोधन सीनेट म दो–तिहाई सख्या पक्ष मे न होने से स्वीकार नही समझा जा सकता, चाहे प्रतिनिधि सभा मे वह दो दिहाई मत से पास हो चुका हो।

(ii) सशोधन प्रणाली अत्यन्त मन्थर है। यह बडी टेढी और लम्बी है।

(iii) यह बहुमत शासन की निरकुशता का उदाहरण है। सशोधन के प्रस्ताव के सम्बन्ध म 34 सीनेटर दोनो सदनो के बहुमत को रद्द कर सकते हैं।

(7) प्रतिनिधि सत्तात्मक गणराज्य—अमरिकन संविधान की एक अन्य विशेषता है—प्रतिनिधि सत्तात्मक गणराज्य (Representative Republic) का होना। प्रतिनिधि सत्तात्मक राज्य में जनता प्रतिनिधियों के द्वारा शासन करती है, देश के बड़े आकार के कारण वह प्रत्यक्ष रूप से शासन कार्य में भाग नहीं ले सकती। गणराज्य के अन्तर्गत राज्य का अध्यक्ष वंशानुगत राजा नहीं बल्कि निर्वाचित राष्ट्रपति होता है। संयुक्त राज्य अमरिका में यह दोनों ही बातें विद्यमान हैं। वहां जनता अपने प्रतिनिधियों को चुनती है, जो निश्चित अवधि तक शासन का सञ्चालन करते हैं, और साथ ही राष्ट्रपति भी जनता द्वारा निर्वाचित होता है। राज्यों की शासन प्रणाली भी प्रतिनिधिमूलक और गणतन्त्रात्मक है। यद्यपि राज्यों के अपने अलग संविधान हैं, किन्तु संघीय संविधान और राज्यों का गणतन्त्रात्मक शासन की गारन्टी दी गई है। संविधान में प्रत्येक राज्य को विदेशी आक्रमण, सुरक्षा तथा राज्य के उचित प्राधिकारी द्वारा मांग किये जाने पर आन्तरिक विद्रोह के समय सहायता की गारन्टी दी गई है।

(8) संघीय स्वरूप—संयुक्त राज्य अमरिका का संविधान सभी दृष्टिकोणों से संघात्मक है।

प्रारम्भ में अमेरिकन संघ में तेरह राज्य थे, आज ५० हैं जो स्थाई रूप से संघ में सम्मिलित हैं। संघात्मक पद्धति के अनुसार केन्द्रीय और राज्यों की शक्तियां संविधान में निर्धारित की गई हैं। साधारणतः यह सिद्धान्त अपनाया गया है कि राष्ट्रीय महत्व के विषय संघीय सरकार को और स्थानीय महत्व के विषय राज्यों की सरकार को सौंपे गये हैं, अवशिष्ट शक्तियां राज्य के पास हैं, यद्यपि आधुनिक काल में संघीय सरकार की शक्तियां अनेक कारणों से बढ़ती ही जा रही हैं। शासन के तीनों अंगों में न्यायपालिका सर्वोच्च है। व्यवस्थापिका के ऊपरी सदन सीनेट में संघ के सभी राज्यों का समान प्रतिनिधित्व प्राप्त है। संविधान में निर्देश है कि इस व्यवस्था को भंग करने वाला कोई भी संशोधन वैध नहीं समझा जायेगा। संशोधन प्रक्रिया का राज्यों में प्रस्तावना करने में और उसके पुष्टीकरण करने में पर्याप्त अधिकार प्राप्त हैं। अन्त में संघीय संविधान के अनुरूप अमरिका का संविधान लिखित एवं दुष्परिवर्तनशील है।

(9) न्यायिक सर्वोच्चता—अमरिका के संविधान की एक अन्यतम विशेषता न्यायिक प्रभुता (Judicial Supremacy) का सिद्धान्त है।

प्रथम, सर्वोच्च न्यायालय के पास संविधान की व्याख्या करने की महत्वपूर्ण शक्ति है। संविधान के नियमों के बारे में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय अन्तिम होता है। द्वितीय सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनरावलोकन (Judicial review) का अधिकार है, जिसके द्वारा वह विधान मंडल के बनाये गये किसी भी ऐसे कानून को जो सांविधानिक नियमों के विरुद्ध हो और नागरिकों की स्वतन्त्रता

तथा उनके अधिकारों पर कुठाराघात करता हो, अवैध घोषित कर सकता है और उन्हें देश में लागू होने से रोक सकता है। इस प्रकार का कोई कानून कांग्रेस ने ही नहीं वरन राज्यों के विधान मंडलों ने भी बनाया है या कार्यपालिका ने लागू किया है, तो भी उसे सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रोका जा सकता है। ब्रिटेन, फ्रांस और सोवियत संघ में न्यायालय को न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति प्राप्त नहीं है। इन देशों में विधान-मण्डल की सर्वोच्चता (Legislative Supremacy) के सिद्धान्त को अपनाया गया है।

(10) मौलिक अधिकारों का समावेश—अमेरिकन सविधान भारतीय सविधान की भांति ही जनता के अनेक मौलिक अधिकारों की गारन्टी देता है। जनता को भाषण और प्रकाशन की स्वतन्त्रता है। शान्तिपूर्वक एकत्र होने तथा कष्टों के निवारण के लिए सरकार को याचिका प्रस्तुत करने का अधिकार स्वीकार किया गया है। कोई सरकार बिल आफ अटण्डर (Bill of Attainder) को पास नहीं कर सकती जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को बिना मुकदमा चलाये फांसी दी जा सके। किसी भी व्यक्ति को न तो मनमाने ढंग से पकड़ा ही जा सकता है और न कैद ही किया जा सकता है। युद्ध अथवा विद्रोह के समय के अतिरिक्त कभी भी बंदी प्रत्यक्षीकरण लेख (Writ of Habeas Corpus) से इन्कार नहीं किया जा सकता। प्रत्येक अभियुक्त यह माग कर सकता है कि उस पर निष्पक्ष जूरी द्वारा सार्वजनिक न्यायालय में मुकदमा चलाया जाये। किसी भी व्यक्ति से अत्यधिक जमानत नहीं मांगी जा सकती और न ही कानूनी कार्यवाही की अनुपस्थिति में किसी व्यक्ति का जीवन, उसकी स्वतन्त्रता और सम्पत्ति छीनी जा सकती है। मूल वंश, रंग लिंग अथवा दासत्व की पूर्व दशाओं के आधार पर किसी व्यक्ति को मताधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता। प्रत्येक व्यक्ति को आने जाने और व्यवसाय करने की स्वतन्त्रता है तथा समान कानूनी संरक्षण प्राप्त है यह भी व्यवस्था है कि सरकार बिना उचित मुआवजा दिये किसी नागरिक की व्यक्तिगत सम्पत्ति हस्तगत नहीं कर सकती। जनता को शस्त्र रखने और लेकर चलने का अधिकार है।

सविधान के एक और सशोधन में यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि सविधान के अन्तर्गत मौलिक अधिकारों की गणना करने का यह अर्थ कदापि नहीं हो सकता कि जनता ने शेष अधिकारों का परित्याग कर दिया है। वास्तव में शेष अधिकार जनता में निहित हैं और उनकी किसी प्रकार भी अप्रतिष्ठा नहीं की जा सकती।

सुरक्षा की दृष्टि से सविधान में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष अनेक ऐसे उपबन्ध हैं जो नागरिक अधिकारों पर सीमाएं लगाते हैं। युद्ध के समय या शांति और सुव्यवस्था के लिये उन्हें प्रतिबन्धित किया जा सकता है।

(11) शक्ति पृथक्करण तथा नियंत्रण एवम् सतुलन की प्रणाली—अमेरिकन सविधान की एक प्रमुखतम विशेषता शक्ति का पृथक्करण और नियंत्रण व सतुलन प्रणाली है। सविधान के निर्माता लॉक एवम् मान्टेस्क्यू के राजनीतिक सिद्धान्तों से अत्यधिक प्रभावित थे। वे इस विचार से सहमत थे कि व्यक्ति-स्वातन्त्र्य के लिये

व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका की शक्तियों का पृथक्करण किया जाए। सरकार के ये तीनों अंग परस्पर स्वतन्त्र हों ताकि वे एक दूसरे की निरंकुशता को रोक सकें अथवा परस्पर नियन्त्रण करते हुए सरकार पर संतुलन स्थापित कर सकें। अतः शक्ति पृथक्करण और परस्पर नियन्त्रण तथा संतुलन अमेरिकन शासन-व्यवस्था की मुख्य विशेषता बन गई और संविधान निर्माताओं ने अमेरिकन संविधान में शक्ति-पृथक्करण सम्बन्धी व्यवस्था कर दी। तदनुसार कांग्रेस विधि निर्माण करती है, राष्ट्रपति विधि लागू करता है और सर्वोच्च न्यायालय उन विधियों की संवैधानिकता का परीक्षण करता है। कोई भी विभाग दूसरे विभाग के कार्यों को हथिया नहीं सकता। एक विभाग अपनी शक्ति को दूसरे विभाग को प्रत्यायोजित (Delegate) अथवा हस्तान्तरित (Transfer) नहीं कर सकता। संविधान के संरक्षक के रूप में देश का सर्वोच्च न्यायालय सदा इस बात के लिए प्रयत्नशील रहता है कि उपर्युक्त मान्यता बनी रहे।

अमरिकन संविधान में शासन के तीनों विभागों को केवल अलग-अलग ही नहीं किया गया है, अपितु उन्हें अधिक से अधिक एक दूसरे को स्वतन्त्र करने की व्यवस्था भी की गई है। तीनों विभाग अपने अपने क्षेत्र में सम्प्रभु एवं स्वतन्त्र हैं तथा एक दूसरे के प्रति उत्तरदायी नहीं हैं। राष्ट्रपति जनता का प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित प्रतिनिधि है और कांग्रेस उसे उसके कार्यकाल की अवधि में साधारणतया नहीं हटा सकती। कांग्रेस के पास केवल महाभियोग (Impeachment) का हथियार है जिसे काम में लेना अत्यन्त दुष्कर है। इसी प्रकार कांग्रेस की स्थिति भी स्वतन्त्र है क्योंकि राष्ट्रपति उसका विघटन नहीं कर सकता। न्यायपालिका की भी स्वतन्त्रता की यही स्थिति है। यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या कांग्रेस निश्चित करती है और उनकी नियुक्ति राष्ट्रपति करता है, परन्तु एक बार पदासीन हो जाने के बाद उन न्यायाधीशों का महाभियोग की कठिन प्रक्रिया का सहारा लिये बिना पदच्युत नहीं किया जा सकता।

नियन्त्रण व संतुलन प्रणाली—यद्यपि अमेरिकन संविधान निर्माताओं ने शासन के तीनों विभागों को पृथक् २ कर दिया, फिर भी उन्हें यह विदित था कि तीनों विभागों के मध्य परस्पर सम्बन्ध तथा सम्पर्क स्थापित करना भी सफल शासन के लिए परमावश्यक है। अतः उपर्युक्त शक्ति विभाजन को व्यावहारिक बनाने के लिए उन्होंने संविधान में नियन्त्रण और संतुलन प्रणाली (System of Checks and Balances) की व्यवस्था की। इसके अनुसार शासन के तीनों अंगों की शक्तियों के लिये ऐसा प्रबन्ध कर दिया गया कि वे एक दूसरे पर इस तरह नियन्त्रण बनाये रखें जिससे शक्ति का संतुलन बना रहे। यदि कोई विभाग कभी अपने उत्तरदायित्व का ज्ञान खो बैठे तो दूसरा विभाग उसे सचेत कर कार्य करने के लिए मजबूर कर दे।

अमेरिकन संविधान में नियन्त्रण और संतुलन की इस प्रणाली को कुछ उदाहरणों द्वारा भली प्रकार समझा जा सकता है। अमेरिकन राष्ट्रपति संसार का

सबसे अधिक शक्तिशाली कार्यपालक कहा जाता है। किन्तु उनकी सम्भावित निरंकुशता पर नियन्त्रण रखने के लिए कांग्रेस को कुछ अधिकार दिये गये हैं। कांग्रेस प्रतिवर्ष देश का बजट स्वीकार करती है और राष्ट्रपति का कर्तव्य है कि वह उस स्वीकृत बजट के अनुसार राष्ट्र के धन का उपयोग करे। राष्ट्रपति सर्वोच्च सेनाध्यक्ष और परराष्ट्र नीति का सचालक होने के नाते कभी भी देश को युद्ध में झोंक सकता है, किन्तु संविधान में व्यवस्था है कि राष्ट्रपति द्वारा की गयी युद्ध की घोषणा का कांग्रेस द्वारा पुष्टिकरण होना चाहिए। इसी तरह राष्ट्रपति द्वारा की गयी सन्धियाँ भी तभी मान्य होती हैं जब सीनेट दो तिहाई बहुमत से उनकी पुष्टि कर दे। अन्त में कांग्रेस का यह भी अधिकार है कि वह शक्तियों का दुरुपयोग करने वाले राष्ट्रपति को महाभियोग की कार्यवाही द्वारा हटा दे।

कहीं कांग्रेस निरंकुश न बन जाए, इसलिए राष्ट्रपति के हाथों में भी विशेष शक्तियाँ सौंपी गयी हैं। कांग्रेस द्वारा पारित विधेयक तभी कानून बन सकते हैं जब उन्हें राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त हो। राष्ट्रपति को निषेधाधिकार की व्यापक शक्तियाँ प्राप्त हैं। यद्यपि यह व्यवस्था है कि कांग्रेस अस्वीकृत विधेयक को पुनः दो तिहाई बहुमत से पारित कर दे तो राष्ट्रपति को उस पर अनिवार्य रूप से सहमति देनी पड़ेगी, तथापि यह एक अति कठिन प्रक्रिया है। विधेयक को दुबारा इतने प्रबल बहुमत से पारित करना टेढ़ी खीर है। इसके अतिरिक्त कांग्रेस को अपने उन सभी विधेयकों की स्वीकृति के लिए पूर्णतः राष्ट्रपति पर निर्भर रहना पड़ता है, जिन्हें वह अपने अधिवेशन के अन्तिम १० दिनों में पारित करती है।

व्यवस्थापिका और कार्यपालिका निरंकुश न हो जावें, इसके लिए न्यायपालिका का नियन्त्रण है। सर्वोच्च न्यायालय की पुनरावलोकन की शक्ति बड़ा जबरदस्त हथियार है। न्यायपालिका अपनी शक्तियों का दुरुपयोग न करे, इसके लिए सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों पर महाभियोग की कार्यवाही की व्यवस्था है।

स्पष्ट है कि अमरिकन संविधान शक्ति पृथक्करण और नियन्त्रण एवं सन्तुलन प्रणाली का उत्कृष्ट उदाहरण है।

संवैधानिक विकास की रीतियाँ

(Process of Constitutional Development)

अमरिका का आज का संविधान सिर्फ 1787 ई० का लिखित प्रलेख नहीं है वरन् समय और परिस्थिति की माँग के अनुसार विभिन्न साधनों के आधार पर यह पर्याप्त विकसित हो चुका है। मुनरो के शब्दों में "1787 ई० के निर्माताओं ने उस भवन की नींव मात्र उठायी थी, जिसमें खिड़की, दरवाजे व खम्भे इत्यादि का निर्माण उनकी सन्तान ने किया है।" हमें देखना चाहिए कि संविधान में विकास और परिवर्तन के कौन से प्रमुख साधन हैं—

(1) न्यायिक व्याख्याएं (Judicial Interpretations)—संविधान का विकास करने में न्यायपालिका के निर्णयों का योग देखते हुए व्याख्याकारों ने यहां तक कह डाला है कि "सर्वोच्च न्यायालय अविरल गति से चलने वाली एक संवैधानिक परिषद (Continuous Constitutional Convention) है। वस्तुतः संविधान के अनुच्छेद की व्याख्या करने का कार्य शनैः शनैः सर्वोच्च न्यायालय ने पूरी तरह अपने हाथ में ले लिया है और आज उसके निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य हैं। न्यायाधीशों ने संविधान के मूल लेखों की स्वतन्त्र रूप में व्याख्या करके और उन व्याख्याओं का अपनी शब्दावली में प्रयुक्त करके यह सब कुछ किया है। उदाहरणार्थ सर्वोच्च न्यायालय ने ही संविधान की धाराओं को परिभाषित करके पूर्ण शक्तियां राष्ट्रपति को प्रदान की हैं। इसी प्रकार उसने वाणिज्य सेना, संचार परिवहन आदि शब्दों की उदार व्याख्यायें करके कांग्रेस के संवैधानिक अधिकारों को काफी व्यापक बनाया है।

(2) प्रशासकीय निर्णय (Administrative Decisions)—न्यायिक निर्णयों के अतिरिक्त प्रशासकीय निर्णयों ने भी अमेरिकन संविधान के विकास में काफी योग दिया है। विभिन्न विभागाध्यक्षों और प्रशासकीय अधिकारियों द्वारा संविधान की धाराओं के आधार पर स्वतन्त्र निर्णय लिये जाते हैं जिन्हें प्रायः न्यायिक मान्यता मिल जाती है। इसके अतिरिक्त ब्रिटेन की भांति अमेरिका में भी प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated Legislation) की प्रथा प्रभावशाली है। कांग्रेस कानून का सिद्धान्त और ढांचा तैयार कर देती है तथा प्रशासकीय क्षेत्र को यह अधिकार देती है कि वह कानून की कमियों की पूर्ति विनियमों एवं आज्ञाओं द्वारा करे। मुनरो ने इन नियमों और उप नियमों को "संविधान रूपी मुख्य तने की शाखायें" कहा है।

(3) संवैधानिक संशोधन (Constitutional Amendment)—समय-समय पर संवैधानिक संशोधनों द्वारा मौलिक संविधान का रूप बदलता और विकसित होता रहा है। अब तक हुए २५ संशोधनों ने संविधान का बहुत कुछ विस्तार कर दिया है। उदाहरणार्थ, संशोधनों के फलस्वरूप ही सीनेट के सदस्यों के लिये प्रत्यक्ष निर्वाचन-पद्धति का प्रावधान हुआ है, नागरिकों के अधिकार पत्र को संविधान में सम्मिलित किया गया है और महिलाओं को मताधिकार मिला है।

राजनीतिज्ञों और नागरिकों की व्याख्यायें (Interpretation by Politicians and Citizens)—संविधान के विकास में राजनीतिज्ञों और सामान्य नागरिकों की व्याख्याओं का भी भाग रहा है। उदाहरणार्थ राजनीतिक दलों और लाखों अमेरिकन मतदाताओं ने राष्ट्रपति के निर्वाचन की पद्धति को बदल दिया है। आज राजनीतिक दल अमेरिकन शासन व्यवस्था के अभिन्न अंग बन गये हैं।

संवैधानिक अभिसमय (Conventions)—ब्रिटेन की भांति ही अमेरिका में भी संविधान की मौलिक रूपरेखा में विविध रीतियों और परम्पराओं ने इतना

परिवर्तन कर दिया है कि बिना उन्हें समझे सविधान को भली प्रकार नहीं समझा जा सकता। कुछ प्रमुख अमेरिकन सवैधानिक अभिसमय निम्नलिखित हैं--

(i) सविधान मे दल प्रणाली की चर्चा नहीं है किन्तु व्यवहार मे दल प्रणाली इतनी महत्वपूर्ण बन गई है कि उसके अभाव मे अमरिकन शासन व्यवस्था का पालन ही सम्भव नहीं है।

(ii) सविधान मे राष्ट्रपति के निर्वाचन की अप्रत्यक्ष पद्धति है, किन्तु प्रथाओं ने उसे प्रत्यक्ष निर्वाचन का रूप दे दिया है।

(iii) मन्त्री मण्डलीय व्यवस्था भी प्रथा अथवा परम्परा का ही परिणाम है।

(iv) प्रतिनिधि सदन की प्रक्रिया, स्पीकर की शक्तियां, महत्व आदि भी प्रथाओं पर आधारित है।

(v) अभिसमय द्वारा ही यह नियम बन गया है कि प्रतिनिधि सदन के सदस्य उसी निर्वाचन क्षेत्र के निवासी हो जहां से वे चुनाव लड रहे हो।

(vi) धन विधेयको का प्रतिनिधि सभा मे प्रस्तावित होना भी प्रथा पर ही आधारित है।

(vii) सचालन समिति (Steering Committee) बहुमत के फ्लोर लीडर तथा काकस (Cauces) का विकास भी अभिसमयो द्वारा ही हुआ है।

यह सही है कि सवैधानिक अभिसमयो द्वारा शासन की वास्तविक कार्य पद्धति व्यवहार मे आई है।

सविधियो की व्याख्या (Statutory Elaboration)--सविधान निर्माताओं ने तो केवल सविधान की रूपरेखा का निर्माण किया था। उन्हें विस्तृत करने का कार्य सरकार के लिये छोड दिया था। फलस्वरूप बाद के वर्षों मे सरकारी व्याख्याओं ने सविधान को कुछ से कुछ बना दिया है। आज हम सविधान के पृष्ठो मे अमेरिकन शासन प्रणाली का पूरा ज्ञान प्राप्त नहीं होता। असली बात तो सविधियो की पुस्तकों और प्रशासकीय नियमावली के बडे बडे पोथो मे मिलती हैं। उदाहरणार्थ, सविधान काग्रेस की समितियों के बारे मे मौन है और आधुनिक विधि निर्माण प्रक्रिया की विभिन्न बातो के बारे मे भी कुछ नहीं कहता। इन सबकी व्यवस्था काग्रेस द्वारा ही की जाती है। काग्रेस ने सविधियो द्वारा सविधान का भारी विकास किया है और बीयर्ड के शब्दो मे "सर्वोच्च न्यायालय भी यह घोषणा कर चुका है कि वह काग्रेस द्वारा की गई व्याख्याओं का बहुत आदर करेगा तथा उनको तभी अमान्य ठहरायेगा जब वे स्पष्ट रूप से बहुत ही गलत हो।

2

अमेरिका की संघ व्यवस्था

(THE AMERICAN FEDERAL SYSTEM)

'यह (संयुक्त राज्य अमेरिका) सदा अक्षुण्ण
बने रहने वाले राज्यों का संघ है।"

—बियर्ड

अमेरिकन संविधान एक ऐसा संघीय संविधान है जिसका अनुकरण अन्य संघीय संविधान वाले देशों ने किया है और जिसके आधार पर संघीय संविधानों के गुणों तथा दोषों का विवेचन किया जाता है।

संघीय व्यवस्था अपनाये जाने के कारण

प्रथम, वर्तमान संविधान के निर्माण के पहिले से ही अमेरिका महाद्वीप में अनेक उपनिवेश अलग अलग राज्यों के रूप में विद्यमान थे जिनमें अपने पृथक अस्तित्व के प्रति मोह था। लेकिन तत्कालीन परिस्थितियों का तकाजा था कि विविध राज्य अलग-अलग रहते हुए एक हों। ऐसा न होने पर उनका अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता था। चूंकि ये दोनों बातें संघात्मक शासन-व्यवस्था में ही पूरी हो सकती थी, अतः अमेरिकन संविधान निर्माताओं और अमेरिका की जनता ने यही उचित समझा कि संघीय व्यवस्था अपनायी जाये।

द्वितीय, उस समय आजकल की भांति आवागमन व सन्देशवाहन के साधन विकसित न थे। इस परिस्थिति में, अपने देश के क्षेत्रफल की विशालता के कारण, अमेरिकावासियों ने संघीय व्यवस्था का अपनाना आवश्यक समझा।

तृतीय, तत्कालीन राजनीतिक दल स्थानीय और विकेन्द्रीकृत अधिक थे, राष्ट्रीय व केन्द्रीयकृत कम। अतः वे केन्द्र की अपेक्षा राज्यों को शक्तिशाली बनाये रखने के पक्ष में थे। अतः यह स्वाभाविक था कि देश की शासन व्यवस्था का रूप संघात्मक हो।

चौथे, संविधान निर्माता व्यक्तिगत अधिकारों और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के प्रबल समर्थक थे और संघात्मक व्यवस्था ही इनकी रक्षा का ...

क्योंकि यह राष्ट्रीय और राज्य सरकारो के बीच शक्ति का विभाजन करके दोहरी सुरक्षा प्रदान करता है।

उपरोक्त सभी कारणो का यह सम्मिलित प्रभाव हुआ कि अमरिकन जनता ने सम्पूर्ण देश के लिए सघात्मक शासन व्यवस्था को ही उचित समझा जो निरतर सफलता की सीढिया चढती गई। प्रारम्भ म जहा केवल 13 राज्य सघ म थ वहा अब 51 राज्य हो गये है और व सभी समान अधिकारो का उपभोग करते हैं।

अमेरिका की सघीय व्यवस्था के आवश्यक तत्व

(Essentials of American Federal System)

सघीय शासन व्यवस्था वह है जिसम दो स्वतन्त्र राज्य मिलकर, समान उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक सघ सरकार की स्थापना करते है। य समान हित वाले विषयो को एक केन्द्रीय सत्ता के सुपुर्द कर देते है जिस पर सम्पूर्ण देश के शासन की जिम्मेदारी होती है। इस केन्द्रीय या सघीय सरकार कहते है। इस तरह सघीय व्यवस्था म द्वैध शासन होता है—एक केन्द्रीय शासन और दूसरा राज्यो या प्रान्तो का शासन। दोनो ही की अलग अलग शासन व्यवस्था होती है। प्राय प्रत्येक नागरिक की भी दो प्रकार की भक्ति होती है—एक सघीय शासन के प्रति और दूसरी राज्य सरकार के प्रति। इसके अतिरिक्त सविधान की सर्वोपरिता होती है। राज्य और सघ दोनो ही इस सविधान का सर्वोच्च मानते है जिसके अन्तगत सघ की रचना हुई है। सघ निर्माण की अन्तिम आवश्यकता एक स्वतन्त्र और सर्वोच्च न्यायालय का अस्तित्व है जो सघ सरकार और राज्य सरकारो के बीच उठ खडे होने वाले विवादो का निर्णय कर सके। अन्त म फाइनर (Finer) के शब्दो म 'सघ राज्य वह राज्य है जिसम अधिकार और शक्ति का एक भाग स्थानीय क्षेत्रो म निहित होता है और दूसरा भाग एक केन्द्रीय सस्था म, जो स्वय स्थानीय क्षेत्रो के स्वैच्छिक सम्मिलन से निर्मित होती है। इन दोनो म से किसी को दूसरे के अधिकार और शक्ति का अपहरण करने का अधिकार नही होता।' अमरिकन शासन-व्यवस्था म सघात्मक सविधान के ये सभी लक्षण उपस्थित है।

राज्यों की स्वतन्त्रता और राष्ट्रीय एकता का सामजस्य

अमरिका महाद्वीप मे वर्तमान सविधान बनने से पहले अनेक उपनिवेश विद्यमान थे। सुरक्षा की दृष्टि से वे सघ के रूप म एक होकर भी अपने पृथक अस्तित्व को बनाये रखना चाहते थे। फलस्वरूप सयुक्त राज्य का जो सघ बना उसम आज भी राज्यो की स्वतन्त्रता और राष्ट्रीय एकता सामजस्य पूर्ण रूप से विद्यमान है।

द्वैध शासन तथा शक्तियों का वितरण

सघीय व्यवस्था के अनुरूप सयुक्त राज्य अमरिका म दो प्रकार की सरकारें हैं—सघ सरकार और राज्य सरकार। सविधान एक सतत् सघीय सविधान है क्योंकि इसका सघात्मक स्वरूप समाप्त नही किया जा सकता। इसी तरह किसी

राज्य के अस्तित्व को भी नहीं मिटाया जा सकता। इसके अतिरिक्त दोनों सरकारों के पृथक शासन-यन्त्र हैं। प्रत्येक राज्य का अपना संविधान है, केवल शर्त यह है कि सरकार का स्वरूप गणतन्त्रात्मक हो और राज्य का संविधान संघीय संविधान की व्यवस्थाओं के अनुकूल हो। पुनश्च, दोनों सरकारें अपने अस्तित्व के लिए एक दूसरे पर नहीं, बल्कि संविधान पर आश्रित हैं।

संघीय और राज्य सरकारों के मध्य शक्ति वितरण की समुचित व्यवस्था है जिसमें संघीय सरकार का पद अधिक महत्वपूर्ण और शक्ति सम्पन्न है। संविधान द्वारा शक्तियों का विभाजन निम्नलिखित आधार पर हुआ है—(1) संघ सरकार की अनेक महत्वपूर्ण शक्तियाँ स्पष्ट रूप से संविधान में दी गयी हैं, (ii) संघ सरकार को कुछ निहित शक्तियाँ (Implied Powers) भी प्राप्त हैं, (iii) कुछ शक्तियाँ राज्यों के लिए आरक्षित (Reserved) हैं, (iv) कुछ शक्तियाँ समवर्ती हैं, अर्थात् उनका प्रयोग संघीय एवं राज्य सरकारें दोनों ही कर सकती हैं, (v) कुछ शक्तियों की मनाही संघ सरकार के लिए की गयी है, एवं (vi) कुछ शक्तियों की मनाही राज्य सरकारों के लिए की गई है।

शक्तियों के उपरोक्त वितरण में गणना तथा अवशेष के सिद्धान्त (Principle of Enumeration and Rasiduam) को काम में लाया गया है। केन्द्रीय सरकार के अधिकार निश्चित कर दिये गये हैं और अवशिष्ट शक्तियाँ विभिन्न राज्यों को प्राप्त हैं। राष्ट्रीय महत्व के विषय संघीय सरकार के कार्यक्षेत्र में ही रखे गये हैं क्योंकि उन पर सम्पूर्ण देश के लिए समान नीति आवश्यक होती है।

संघ और राज्यों में मतभेद

संविधान और उसके अन्तर्गत बनाये गये कानून, संयुक्त राज्य अमेरिका की सत्ता के अधीन की गयी अथवा की जाने वाली सन्धियाँ राज्य के सर्वोच्च कानून हैं। यदि कभी संघ और राज्यों के बीच किसी प्रश्न पर कोई विवाद उठ खड़ा हो तो उसका अन्तिम निर्णय सर्वोच्च न्यायालय करता है। किसी समय किसी शक्ति अथवा अधिकार के सम्बन्ध में मतभेद उपस्थित हो जाने पर वह शक्ति उस समय तक राज्य की होती है जिस समय तक यह निश्चित नहीं हो जाता कि उस शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार राज्य का नहीं है अथवा उस पर केन्द्रीय सरकार का अधिकार है।

दोहरी नागरिकता

संयुक्त राज्य अमेरिका के संघ की स्थापना के बाद यद्यपि राज्यों के निवासी संघ के नागरिक बन गये, तथापि उनकी अपने अपने राज्य की नागरिकता का भी लोप नहीं किया गया, इस प्रकार दोहरी नागरिकता का उदय हुआ एक संघ की और दूसरी राज्य की। आज अमेरिका के निवासी राज्यों के भी नागरिक हैं और संघ के भी।

संविधान की सर्वोपरिता

संविधान की छठी धारा की दूसरी उप धारा ने स्पष्ट रूप से निश्चि-

सर्वोपरिता प्रतिष्ठित कर दी है। जब कभी संघ सरकार के अथवा किसी उप राज्य के कानून का संविधान से विरोध पाया जाता है, तो संविधान की विजय होती है क्योंकि इस विरोध में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय अन्तिम होता है। संविधान देश की सर्वोच्च विधि है। संविधान ही संघ सरकार तथा राज्य सरकारों की शक्तियों का स्रोत है। वही शासन शक्तियों का विभाजन करता है। अतः शक्तियों के अतिक्रमण का अर्थ संविधान पर अतिक्रमण है। संविधान की व्यवस्था संघ सरकार और राज्य सरकारों के लिये पूजनीय वस्तु है। व संविधान का परिपालन पूरी तरह से होता है या नहीं, यह देखने के लिये ही न्यायपालिका को उसका संरक्षण का कार्य सौंपा गया है। संविधान की पवित्रता बनाये रखने के लिये संशोधन की प्रक्रिया को भी बड़ा कठोर रखा गया है।

स्वतन्त्र एवं सर्वोच्च न्यायपालिका

संविधान की धारा 3 (अ) के अनुसार संयुक्त राज्य की न्याय शक्ति एक सर्वोच्च न्यायालय और समय समय पर काग्रेस द्वारा स्थापित न्यायालयों को सौंप दी गई है। सर्वोच्च न्यायालय संविधान की रक्षा करता है और उसका स्पष्टीकरण करता है। संविधान के प्रतिकूल समझने पर वह किसी भी कानूनी कार्य अथवा आदेश को अवैधानिक ठहरा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय स्वयं ही इस दिशा में कोई कार्य नहीं करता। वह अपना कार्य तभी करता है जबकि उसके लिये कोई पक्ष उसके समक्ष आवेदन करे।

अन्य सहायक तत्व

दो अन्य गौण तत्व भी अमरिका की संघीय व्यवस्था में विद्यमान हैं। संघीय व्यवस्था में संघ का निर्माण करने वाली इकाइयों को उचित महत्व देने के लिये प्रायः दो व्यवस्थाओं का अनुसरण किया जाता है– प्रथम व्यवस्थापिका के ऊपरी सदन में राज्यों का समान प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाना है एवं द्वितीय, संघ का निर्माण करने वाली इकाइयों का संविधान के संशोधन में उचित भाग दिया जाता है। अमरिका की संघीय व्यवस्था में ये दोनों ही व्यवस्थायें विद्यमान हैं। काग्रेस के ऊपरी सदन सीनेट में सभी राज्यों को अपने दो दो प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। इसके अतिरिक्त वे अपने दो तिहाई बहुमत से संशोधन प्रस्तावित कर सकते हैं। साथ ही कोई भी संशोधन पारित भी तभी समझा जाता है जबकि राज्यों की 3/4 संख्या उसकी पुष्टि कर दे।

लॉर्ड लेल्डेन के शब्दों में हम दोहरा सकते हैं कि अमरिकन संघीय व्यवस्था एक "आदर्श संघीय व्यवस्था" (A True Federal Model) है।

अमेरिकन संघीय व्यवस्था तथा निहित शक्तियों का सिद्धान्त

(The American Federal System and the Doctrine of Implied Powers)

सिद्धान्त का उदय

संयुक्त राज्य अमरिका का संविधान अत्यन्त संक्षिप्त है। इसमें विधान की

एक मोटी रूप रेखा मात्र ही दी गई है। इसके विस्तार को समयानुकूल एव आवश्यकतानुसार करने के लिए छोड दिया गया है। सघीय सरकार की शक्तिया निश्चित रूप से वर्णित और स्थिर की हुई हैं। परन्तु इन शक्तियो की सूची बडी सामान्य है। उसम ऐसी विभिन्न शक्तियो की कोई चर्चा नही है जिनका प्रयोग किये बिना सघ अपनी उन शक्तियो का प्रयोग पूरी तरह नही कर सकता, जिनकी चर्चा सघीय सूची म है। इस स्थिति का परिणाम यह हुआ है कि समय समय पर सविधान म प्रदत्त अपनी मुख्य शक्तियो के उपयोग के लिए आवश्यक अन्य शक्तिया का भी सघीय सरकार अपन हाथ म इस आधार पर लेती गई कि व शक्तिया भी सविधान म वर्णित मूल शक्तियो म निहित ह। इससे अमेरिका म उस सिद्धान्त का उदय हुआ, जिसे हम निहित शक्तियो के सिद्धान्त (Doctrine of Implied Powers) के नाम से जानते ह। इसका उदय एक परम्परा के रूप म हुआ है जिसे आगे चलकर सर्वोच्च न्यायालय के निणयानुसार मान्यता प्राप्त हो गई। इस तरह वह अमेरिकन सावैधानिक व्यवस्था का अभिन्न अग बन गया।

निहित शक्तियो का अभिप्राय और सविधान के विकास मे उनका योगदान

सर्वोच्च न्यायालय के निणयो स स्पष्ट हुआ कि सविधान निर्माताओ ने काग्रेस को एसे समस्त कानूनो के निर्माण की शक्ति दी है जो सवैधानिक उपबन्धो के अनुसार काग्रेस की शक्तियो का, तथा शासन और विभागो की शक्तियो का कार्यान्वित करन के लिए आवश्यक और उचित हो। इस प्रकार निहित शक्तियो का अभिप्राय उन शक्तियो से हुआ जो सघीय सरकार की मूल शक्तियो का कार्यान्वित करने के उद्देश्य स उनम निहित मानी जाए। ध्यान देने योग्य बात यह है कि सघीय सरकार की इन निहित शक्तियो का रूप किन्ही नवीन शक्तियो का नही है बल्कि ये तो वे ही शक्तिया है जो मौलिक शक्तियो म निहित ह अथवा मौलिक शक्तियो का अग है। ये निहित शक्तिया मौलिक शक्तियो को कार्यान्वित करने की साधन मात्र है।

ये निहित शक्तिया निश्चित रूप से ऐसी होनी चाहिए जिनका सम्बन्ध किसी न किसी मूल शक्ति क क्रियान्वयन से हो। ऐसा न होने पर उनको निहित शक्तियो की सज्ञा नही दी जा सकती। कोई शक्ति निहित शक्ति है अथवा नही, इसका अतिम निणय करने की शक्ति न्यायपालिका के पास है।

निहित शक्तियो के इस सिद्धान्त ने अमेरिकन सविधान के विकास म महत्वपूर्ण योग दिया है। इसका प्रयोग अनेक बार हो चुका है। ऐसा करन म न्यायाधीशो न सविधान की उन धाराओ की व्याख्या करते हुए, जिनसे राष्ट्रीय सरकार को विधायनी शक्तिया प्राप्त होती हैं, सावैधानिक शक्तियो के उदार व वहत अर्थ लगाये हैं। परिणामस्वरूप केन्द्रीय सरकार की शक्तियो म महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। इसके कुछ उदाहरण निम्नलिखित ह—

(1) सविधान की आठवीं धारा के अनुसार "राष्ट्रीय सरकार को वदेशिक तथा अन्तरराज्यीय व्यापार करने के सम्बन्ध में कानून बनाने की शक्ति" मिली है। सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी व्याख्याओं द्वारा वाणिज्य शब्द का बहुत व्यापक अर्थ लगाया है और उसने काग्रेस के रेलो, मोटरो, तार व टेलीफोन कम्पनियों, हवाई यातायात जहाजरानी रेडियो प्रसार स्टेशनो स्टाक एक्सचेंज आदि अनेक विषयो में सम्बन्धित कानून बनाने के अधिकार को वैध माना है।

(2) सविधान ने काग्रेस को सैनिको को एकत्रित करने और उन्हे आवश्यक सामग्री देने की व्यवस्था की है। इन शब्दो द्वारा दी गई शक्ति के अन्तर्गत काग्रेस ने लाखो व्यक्तियो की फौज सगठित करने के लिए केवल युद्ध-काल में ही नहीं वरन शान्तिकाल में भी कानून बनाये है। सेनाओ को आवश्यक सामग्री देने का भी विस्तृत अर्थ लगाया है और यहा तक कि सेना को भोजन देने के लिए जनता के खान पान में कमी करने का कानून भी काग्रेस पास कर सकती है।

(3) सविधान की एक धारा के अनुसार काग्रेस को सर्व-साधारण के कल्याण के लिए विधि निर्माण करने का अधिकार प्रदान किया गया है। सामान्य कल्याण की भावना का दायित्व इतना व्यापक है कि उसके अन्तर्गत विस्तृत निहित शक्तिया काग्रेस को प्राप्त हो सकती है। यही कारण है कि काग्रेस ने रोजगार और वृद्धावस्था पेन्शन की व्यवस्था जैसा कार्य अपने हाथ में ले लिया है।

(4) सविधान के अनुसार काग्रेस को यह अधिकार दिये गये हैं कि वह सयुक्त राज्य की ओर से ऋण ले सकती है। अपने इस अधिकार के द्वारा काग्रेस ने सघीय बैंक स्थापना करने की, सहयोगी ऋण समितियो की स्थापना करने की और राष्ट्रीय ऋणो की देख भाल करने की शक्तिया हस्तगत करली है।

स्पष्ट है सविधान में बिना सशोधन किये हुए ही निहित शक्तियो के सिद्धान्त द्वारा अनेक सशोधन हो गये है और विभिन्न कानूनो का निर्माण हो गया है।

निहित शक्तियों के प्रतिबंध निर्णायक काग्रेस नहीं वरन सर्वोच्च न्यायालय

व्यावहारिक रूप से काग्रेस को निहित शक्तियों के सिद्धान्त के आधार पर भी शक्ति स्वेच्छानुसार और सरलता से प्राप्त नहीं हो जाती, क्योंकि यदि इस सम्बन्ध में कोई विवाद न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर दिया जाए तो न्यायालय ही उन शक्ति विशेष के विषय में यह निर्णय देगा कि वह निहित शक्ति है अथवा नहीं और उसका निर्णय सभी पक्षो के लिये अनिवार्यत मान्य होगा। मुनरो ने लिखा है अनेक ऐसे अवसर आये है जब काग्रेस के निहित शक्ति सम्बन्धित दावे को उसने अस्वीकार कर दिया है।

निहित शक्तियो के सिद्धा त का प्रभाव

प्रथम, सघीय सरकार का सविधान प्रदत्त कर्त्तव्यो को पूरा करने मे बडी सहायता मिलती है।

दूसरे, सविधान क विकास म बडी सहायता मिली है। उसम परिस्थितिया की माग के अनुसार आवश्यक परिवतन बहुत कुछ सम्भव हो सके है।

तीसरे, केन्द्रीय सरकार की शक्तिया म भारी वृद्धि हुई है और राज्या के स्वशासन के अधिकार पर व्यापक आघात हुआ है।

चौथे, यायपालिका का प्रभाव और महत्त्व बढा है।



3

विधान–मण्डल (काग्रेस)
THE LEGISLATURE (CONGRESS)

"प्रशासन क बढ़ते हुए विशिष्ट क्षेत्र और फलत शासन की बढ़ती हुई शक्ति की परिस्थिति मे, यह अनिवाय है कि शासन के कृत्यो पर नियत्रण रखने क लिये और उनमे सामजस्य रखने के निमित्त कोई व्यवस्था होनी चाहिये । यह काग्रेस ही कर सकती है और मेरे विचार म काग्रेस का भविष्य इसी मे है कि वह अपना सगठन इसी उद्देश्य से करे ।"

—रोलैंड यग

अमेरिकन व्यवस्थापिका अर्थात काग्रेस द्विसदनात्मक सस्था है । इसका प्रथम सदन प्रतिनिधि सभा (House of Representatives) और द्वितीय सदन सीनेट (Senate) के नाम से पुकारा जाता है । निचला सदन (प्रतिनिधि सभा) उच्च सदन (सीनेट) की अपेक्षा कम शक्तिशाली है । सीनेट को ससार का सवाधिक शक्तिशाली द्वितीय सदन माना जाता है ।

अमेरिकन शासन म, काग्रेस अति शक्तिशाली होते हुए भी ब्रिटिश ससद की तरह सर्वोच्च नही है क्योकि उसके द्वारा निर्मित कानून सविधान विरोधी होने पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अवैधानिक घोषित किये जा सकते हैं । साथ ही वह उन विषयो पर जो, राज्यो के पास हैं कानून बनाने का अधिकार नही रखती । इसके अतिरिक्त अमेरिका म शक्ति सतुलन का सिद्धात इतना व्यापक है कि शासन का कोई अग चाह कर भी तानाशाह नही बन सकता ।

काग्रेस की शक्तिया और कर्त्तव्य
(Powers and Functions of The Congress)

1 विधायी शक्तिया

ये निम्नलिखित पाच भागो म विभाजनीय है—

(1) अभिव्यक्त शक्तियां (Expressed Powers) —ये वे शक्तिया हैं

जिनका सविधान म स्पष्ट रूप स उल्लेख है—उदाहरणार्थ, कर लगाने एव वसूल करने की, युद्ध की घोषणा करने की, डाकघरो की स्थापना करने की, वैदेशिक एव अन्तराष्ट्रीय सम्बन्धो का सचालन करने की विदेशी मुद्रा का मूल्य निर्धारण करने की शक्तिया आदि ।

(ii) निहित शक्तिया (Implied Powers) —ये वे शक्तिया है जो अभिव्यक्त शक्तियो मे निहित होती हैं। अभिव्यक्त शक्तियो के प्रयोग के लिये ये आवश्यक है । सर्वोच्च न्यायालय की व्याख्याओ ने अभिव्यक्त शक्तियो म से गर्भित शक्तियो का स्पष्टीकरण किया है । उदाहरणार्थ सविधान म लिखा है कि 'काग्रेस को वाणिज्य व्यवसाय का नियन्त्रण करने का अधिकार है । परन्तु सर्वोच्च न्यायालय ने निहित अर्थ की लगभग १०० से भी अधिक निर्णयात्मक व्याख्यायें दी है । उनके द्वारा काग्रेस को बडे विस्तृत अधिकार मिल गये हैं ।

(iii) समवर्ती शक्तिया (Concurrent Powers) —ये वे शक्तिया हैं जिन पर राज्य के विधान मण्डलो और काग्रेस दोनो को विधि निर्माण करने का अधिकार है। ये शक्तिया निश्चयात्मक रूप से लिख दी गई है । सविधान के अनुसार जो शक्तिया सघ को प्रदान नही की गयी है, वे राज्यो की है अथवा जनता की ।

(iv) निर्देशात्मक एव अनिर्देशात्मक शक्तिया (Mandatory and Permissive Powers) —सविधान द्वारा काग्रेस को दिये गये अधिकार अधिकाशत अनिर्देशात्मक है अर्थात काग्रेस चाहे तो उन्हें प्रयोग म ला सकती है और चाहे तो नहीं। उदाहरणार्थ काग्रेस को ऋण लेने का अधिकार है, परन्तु यह आवश्यक नही है कि वह ऋण ले ही । काग्रेस को कुछ अधिकार वास्तव म ऐसे भी प्राप्त है जो निर्देशात्मक है, उदाहरणार्थ सविधान द्वारा सर्वोच्च न्यायालय को अपीलीय अधिकार प्राप्त हैं और काग्रेस के नियमो के अन्तर्गत आने पर ही किसी मामले की अपील सर्वोच्च न्यायालय के सामने उपस्थित की जा सकती है । यदि काग्रेस इस अधिकार का प्रयोग करती है तो न्याय का मामला खटाई म पड जाएगा क्योंकि काग्रेस हर जगह अपनी टाग अडाती रहेगा । परन्तु काग्रेस की इच्छा है कि अपनी विचार-शक्ति का प्रयोग करके वह कोई भी ऐसा काम न करे जिनसे शासन के अन्य विभागो की व्यवस्था खराब हो जाए ।

(v) सशोधन की शक्तिया (Powers of Amendment) —सविधान तब तक सशोधित नहीं किया जा सकता जब तक कि सशोधन काग्रेस के दो तिहाई बहुमत द्वारा स्वीकार न हो जाए । सविधान का एक शब्द भी काग्रेस की स्वीकृति के बिना नहीं बदला जा सकता ।

काग्रेस की मूल शक्तिया विधायी क्षेत्र म ही हैं । यद्यपि कानून निर्माण करने का कार्य काग्रेस और राष्ट्रपति दोनो के द्वारा होता है, क्योंकि समस्त विधेयक काग्रेस द्वारा पारित किये जाकर राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिये भेज जाते हैं और राष्ट्रपति के हस्ताक्षर हो जाने के उपरान्त ही वे कानून का रूप धारण कर पाते हैं।

राष्ट्रपति को कांग्रेस द्वारा पारित किये हुए विधयकों को निषेध (Veto) करने का अधिकार है, परन्तु कांग्रेस विधयक को दो तिहाई बहुमत से पुनः पास करके उस निषेधाधिकार को प्रभावहीन कर सकती है। संविधानिक संशोधन के विषय में राष्ट्रपति का निषेधाधिकार लागू नहीं होता।

2 देश की सुरक्षा का अधिकार—कांग्रेस की देश की रक्षा करने से सम्बन्धित शक्तियां प्रायः असीमित हैं। इन पर संविधान में केवल एक ही प्रतिबंध है और वह यह है कि राष्ट्रपति प्रधान सेनापति होगा तथा सेना के नियोजन का वर्ष से अधिक नहीं किये जायेंगे। कांग्रेस सेनाओं का निर्माण और उनकी व्यवस्था कर सकती है। वह जल सेना तथा नागरिक दलों का निर्माण कर सकती है और राज्यों की सेना के संगठन की भी व्यवस्था कर सकती है। कांग्रेस ही युद्ध की घोषणा करती है। वह प्रत्येक समय व्यक्ति को राष्ट्रीय सुरक्षा में भाग लेने को बाध्य कर सकती है। वही देश की सेना के व्यय के लिये धन स्वीकार करती है। वही यह निश्चय करती है कि सेना कितनी संख्या में रखना उपयोगी होगा और सेना को किन शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित किया जाए। राज्य भी सेना के क्षेत्र में कांग्रेस के अधीन हैं क्योंकि वे शांति के समय भी बिना कांग्रेस की अनुमति के स्थायी सेना अथवा जहाज नहीं रख सकते।

3 महाभियोग लगाने का अधिकार—कांग्रेस को राष्ट्रपति, उप राष्ट्रपति एवं संघीय सरकार के अन्य मुख्य व उच्च पदाधिकारियों पर तथा न्यायाधीशों पर महाभियोग चलाने का अधिकार प्राप्त है। अभियोग प्रतिनिधि सभा द्वारा चलाये जाते हैं और सीनेट उनका निर्णय करती है। यदि सीनेट का निर्णय महाभियोग के पक्ष में हो तो अपराधी पदाधिकारी को अपना पद त्याग करना पड़ता है। कांग्रेस के दोनों सदनों को अपने अपने सदनों के सदस्यों के विरुद्ध भी कार्यवाही करने का अधिकार प्राप्त है।

4 निर्वाचन सम्बन्धी अधिकार—राष्ट्रपति और उप राष्ट्रपति के निर्वाचन के समय किसी व्यक्ति को पूर्ण बहुमत प्राप्त न होने पर कांग्रेस को उनमें से राष्ट्रपति चुनने का अधिकार है। कांग्रेस को सीनेटरों और प्रतिनिधियों के चुनाव के समय स्थानों और विधि के सम्बन्ध में भी कानून बनाने की शक्ति है। कांग्रेस ही अपने सदस्यों की निर्वाचन सम्बन्धी योग्यता निश्चित करती है और निर्णय करती है कि कोई चुनाव वैध है या अवैध। इसके अतिरिक्त वह सीनेट और प्रतिनिधि सभा के निर्वाचन को रद्द कर सकती है यदि वह ऐसा करना न्याय संगत समझे।

5 संधियों की पुष्टि का अधिकार—सीनेट राष्ट्रपति द्वारा प्रस्तावित संधियों की पुष्टि करती है और चतुर राष्ट्रपति उनको वास्तविक रूप में स्वीकृत करने से पूर्व सीनेट का समर्थन प्राप्त कर लेते हैं। बिना सीनेट की स्वीकृति के राष्ट्रपति किसी संधि या युद्ध की घोषणा नहीं कर सकता। राष्ट्रपति विल्सन द्वारा की गई 1919 की वरसाय की संधि को सीनेट ने मानने से इन्कार कर दिया था।

6 कायपालिका सम्बन्धी शक्तिया—शक्ति विभाजन क सिद्धान्त के होते हुए भी काग्रेस बहुत हद तक कार्यकारिणी के विभागो पर नियन्त्रण करती ह । वह विनियमनो द्वारा मन्त्रीमण्डल की छोटी से छोटी बात का विनियमन कर सकती है, जसे विभागो की सख्या नियत करना, उनके आन्तरिक सगठन की व्याख्या करना, मन्त्रियो और अन्य उच्चाधिकारियो का वतन नियत करना, कायक्षेत्र नियत करना आदि । राष्ट्रपति द्वारा की जाने वाली नियुक्तियो म भी काग्रेस का हाथ होता है । समस्त उच्च वर्गीय नियुक्तियो के लिये, जो राष्ट्रपति द्वारा की जाती हैं, सीनेट की अनुमति लेना आवश्यक है अन्यथा वे नियुक्तिया मान्य नही हो सकती । इनके अतिरिक्त 'सीनट के प्रति शिष्टाचार (Senatorial Courtesy)' की माग है कि राष्ट्रपति को किसी राज्य म केवल उन व्यक्तियो को नियुक्त करना चाहिये, जिनको उस राज्य से सम्बन्धित उसके दल का सीनटर पसन्द करे ।

7 वित्तीय अधिकार—काग्रेस को कर लगाने, वसूल करने और चुकाने का अधिकार है । वह देश की सुरक्षा और सामान्य हित के लिए नियोजन (Appropriation) कर सकती है । काग्रेस द्वारा लगाये गये सब कर सारे देश के लिये एक ही सकते है, किन्तु राज्यो के आयात पर वह कर नही लगा सकती । यद्यपि व्यवहार म राष्ट्रीय बजट राष्ट्रपति के सरक्षण मे तैयार किया जाता है, परन्तु इसको पारित काग्रेस ही करती है । काग्रेस को ही उसम सशोधन करने का अधिकार है । कभी कभी तो वह उसमे ऐसे परिवतन कर देती है कि उसका वास्तविक स्वरूप ही बदल जाता है । अपने इस अधिकार के प्रयोग द्वारा काग्रेस प्रशासकीय विभागो पर अपना पर्याप्त नियन्त्रण और प्रभाव रखती है ।

धन नियोजन करने की काग्रेस की शक्ति प्राय असीमित है । एक अपवाद केवल यह है कि सेना के नियोजन एक साथ दो वर्ष से अधिक समय क लिये नही किये जा सकते । देश की मौद्रिक व्यवस्था (Monetary System) का विनिमय पूर्ण रूप से काग्रेस के हाथ म है । वह सिक्के ढलवा सकती है, उनका मूल्य निर्धारण कर सकती है और विदेशी सिक्को का मूल्य निश्चित कर सकती है । काग्रेस को यह भी अधिकार है कि वह देश के धन को अन्य राज्यो की सहायता के लिये व्यय करे और अन्य देशों को ऋण के रूप म धन द ।

8 व्यापार-व्यवसाय सम्बन्धी शक्तियाँ—काग्रेस को विदेशी व्यापार और अन्तर्राज्यीय व्यापार के सम्बन्ध म अनेक अधिकार प्राप्त ह । वह उनको नियन्त्रण करने के लिये कानूनो का निर्माण कर सकती है । सम्पूर्ण राज्य के लिये वह दिवालियेपन के बारे म एक से कानून बना सकती है । वह माप-तोल को नियमित करने, कापीराइट और पटेन्ट के नियमो की व्यवस्था करने, कारखानो मे मजदूरो के काम की दशा निश्चित करने आदि के सम्बन्ध म नियम बना है । वाणिज्य शब्द का अर्थ बडा व्यापक लिया गया है और उसम प

साधन तथा समागम की सब महत्वपूर्ण शाखायें, जैसे रेल, तार, डाक आदि शामिल हैं।

9 राज्य सम्बन्धी शक्ति—नये राज्यों का संघ में सम्मिलित करने और विभिन्न राज्यों में प्रादेशिक परिवतन करने का अधिकार भी काग्रेस को ही प्राप्त है। प्रारम्भ में संयुक्त राज्य संघ के अन्तगत १३ राज्य थे जबकि आज उनकी संख्या ५० है। यह काग्रेस के द्वारा ही किया गया है।

10 न्यायिक शक्तियां—काग्रेस न्यायिक काय भी करती है। काग्रेस की प्रतिनिधि सभा, राष्ट्रपति, उप राष्ट्रपति और दूसरे संघीय अधिकारियों पर महाभियोग लगा सकती है और उनकी जाच सीनेट करती है। काग्रेस संघीय कानूनों के विरुद्ध अपराधों की व्याख्या कर सकती है परन्तु उसे सामान्य अपराधों की व्याख्या करने का अधिकार नहीं है, क्योंकि यह राज्यों के क्षेत्र में आता है। वही यह निश्चय करती है कि सर्वोच्च न्यायालय में कितने न्यायाधीश होंगे। उनकी नियुक्ति में भी सीनेट की स्वीकृति आवश्यक होती है। कुछ प्रतिबंधों के अन्तगत काग्रेस न्यायाधीशों का वेतन भी नियत कर सकती है और पुनर्विचार अधिकार क्षेत्र (Appellate Jurisdiction) की व्यवस्था कर सकती है। निम्नवर्गीय संघीय न्यायालयों का निर्माण भी काग्रेस की स्वीकृति से ही किया जाता है और वही इन न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र की व्याख्या करती है।

संक्षेप में, अमरिकी काग्रेस की बहुमुखी और विविध शक्तियों की यह रूपरेखा है अन्यथा उसकी शक्तियां वस्तुत बहुत महान हैं।

सीनेट
(Senate)

शक्ति और सम्मान की दृष्टि से सीनेट का विशेष महत्व है। वह काग्रेस के प्रथम सदन से भी अधिक शक्तिशाली है। समय के साथ सीनेट की शक्तियों में इतनी वृद्धि हुई है कि उसे आज विश्व के द्वितीय सदनों में सर्वाधिक शक्ति सम्पन्न कहा जाता है।

रचना, निर्वाचन, पदाधिकारी आदि

अमरिकन सीनेट का निर्माण राज्यों की समानता के संघीय सिद्धान्त के आधार पर हुआ है। सीनेट में प्रत्येक राज्य को समान प्रतिनिधित्व मिला हुआ है। सभी राज्य अपने-अपने यहां से दो प्रतिनिधि चुनकर सीनेट के लिए भेजते हैं। इस समय अमेरिकन संघ में 50 राज्य हैं, अत सीनेट के सदस्यों की संख्या 100 है।

सीनेट का सदस्य होने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति कम से कम 9 वर्ष से संयुक्त राज्य अमरिका में निवास करता हो, उसकी आयु 30 वर्ष से कम न हो और वह उस राज्य का निवासी हो जिससे उसका निर्वाचन हुआ है।

निर्वाचित होने पर सीनेट का सदस्य अमेरिकन शासन के किसी वैधानिक पद को ग्रहण नही कर सकता।

सीनेट के सदस्यो की अवधि 6 वष है, किन्तु प्रति दूसरे वर्ष एक-तिहाई सदस्य अपने पद को रिक्त कर देते है और उनका स्थान नव निर्वाचित सदस्य ग्रहण करते है। सविधान के 17वें सशोधन के अनुसार अब सीनेटरो का निर्वाचन अप्रत्यक्ष के स्थान पर प्रत्यक्ष हो गया है। एक व्यक्ति एक बार सीनेटर होने पर भी अगले बार पुन चुनाव लड सकता है।

अमेरिका का उप राष्ट्रपति सीनेट का पदेन (ex officio) सभापति होता है। उसे वाद विवाद म भाग लेने का अधिकार नही है और न ही मतदान करने का। समान मत आने पर उसको निर्णायक मत (Casting Vote) देने का अधिकार है। उसकी अनुपस्थिति म अध्यक्ष पद ग्रहण करने के लिए सीनेट के सदस्य अस्थायी अध्यक्ष (President pro tempore) का निर्वाचन करते है। सीनेट के सचिव, सारजन्ट एट आमस आदि अन्य पदाधिकारी भी होते है।

सीनेट की शक्तियाँ एव काय

सीनेट की शक्तियो को मुख्यत तीन भागो मे बाटा जा सकता है—व्यवस्थापन सम्बन्धी, कायपालिका सम्बन्धी एव न्यायपालिका सम्बन्धी।

1 **व्यवस्थापन सम्बन्धी शक्तियाँ**—काग्रेस के दोनो सदन समान पदेय है और व्यवस्थापन के क्षेत्र म उनकी शक्तियाँ समान है।

कोई भी विधेयक उस समय तक कानूनी किताब म स्थान नही पा सकता जब तक वह सीनेट की स्वीकृति प्राप्त नही कर लेता। वित्त विधेयक यद्यपि प्रतिनिधि सभा म ही प्रस्तावित किये जाते है, किन्तु सीनेट उन्हें स्वीकृति प्रदान करने का अधिकार रखती है उनम सशोधन कर सकती है अथवा उन्हें रद्द कर सकती है। सीनेट वित्त विधेयक की प्रारम्भिक धारा (Enacting Clause) म कोई भी सशोधन नही कर सकती, परन्तु न्य विधेयक म वह इतना सशोधन कर सकती है कि विधेयक का रूप ही बदल जाए। कुछ वष हुए सीनेट ने एक आयात निर्यात -कर सम्बन्धी विधेयक म से उसका नाम छोडकर सभी कुछ काट दिया था। एक अन्य अवसर पर एक विधेयक म उसने 847 सशोधन लगा दिए थे।

साधारण विधेयक—किसी भी सदन मे प्रस्तावित किए जा सकते हैं। इस सम्बन्ध म दोनो सदनो को समान अधिकार प्राप्त है। दोनो सदनो द्वारा स्वीकार होने पर ही कोई विधेयक कानून बन सकता है। यदि मतभेद हो तो दोनो सदनो की सयुक्त समिति द्वारा उसे दूर किया जाता है, जहा सीनेट ही सदा लाभदायक स्थिति म रहती है।

सांविधानिक विधेयकों के विषय मे भी दोनो सदनो की स्थिति समान है। दोनो ही सदनो म सविधान के सशोधन सम्बन्धी विधेयक

सक्ते हैं और प्रत्येक एसे विधयक को पारित समझा जाने के लिए यह आवश्यक है कि उसे दोनो सदन अपने–अपन दो-तिहाई बहुमत स सहमति प्रदान करें।

2 **कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियां**—कार्यपालिका सम्बन्धी महत्वपूर्ण शक्तियो न सीनट को ससार के समस्त उच्च सदनो से अधिक शक्तिशाली स्थिति प्रदान की है। उनमे महत्वपूर्ण शक्ति **सधियों को पुष्टि** करने सम्बन्धी है। राष्ट्रपति द्वारा विदेशो के साथ की गई सधिया तब तक पूर्ण नहीं समझी जाती जब तक उन्हें सीनेट अपन दो–तिहाई बहुमत स अनुमोदित न कर दे। इस शक्ति ने उस राष्ट्र के वैदेशिक मामलो के नियन्त्रण और निर्देशन म काफी हाथ द दिया है और विदेश नीति के सम्बन्ध म राष्ट्रपति की शक्ति की भागीदार बना दिया है।

प्राय कहा जाता है कि राष्ट्रपति क प्रशासकीय समझौतो की प्रथा के कारण इस शक्ति का महत्व घट गया है। राष्ट्रपति प्रशासकीय समझौता को गुप्त रख सकता है, परिणामस्वरूप उसके वैदेशिक मामलो पर सीनेट का नियन्त्रण ढीला हो जाता है। पर यह विचार अतिशयोक्तिपूर्ण है। राष्ट्रपति यदि एसे प्रशासकीय समझौते कर ले जो सीनट को अवाछित हो तो राष्ट्रपति बहुत समय तक उन्हें कायम नही रख सकता और यह पूर्ण सम्भव है कि सीनट कानून द्वारा उस प्रथा का ही समाप्त कर द।

सीनेट की दूसरी कार्यपालिका सम्बन्धी शक्ति राष्ट्रपति द्वारा की हुई **नियुक्तियों के पुष्टिकरण** की है। इस पुष्टिकरण क लिए केवल साधारण बहुमत की आवश्यकता होती है। नियुक्तियो के विषय म, यदि सीनेट अपन निश्चय पर दृढ हो तो, राष्ट्रपति सीनट के बताये हुए मार्गों पर चलता है। व्यवहार म साधारणतया सीनेट राष्ट्रपति द्वारा प्रस्तावित नियुक्तियो का अनुमोदन कर देती है पर विशेष मामलो म उन्हें रद्द भी कर सकते हैं।

तीसरी शक्ति विविध विभागो के विरुद्ध **शक्तियों की जाच** से सम्बन्धित है। इस बारे मे सीनट का निर्णय अन्तिम होता है। सीनट को सब प्रकार क कार्यों मे जाच पडताल (Investigations) करन का अधिकार है। सीनेट द्वारा की जाने वाली खोजें बहुत भयानक होती ह। बहुत से अधिकारी विरोधी कांग्रेस सदस्यो स बहुत घबराते ह। सीनट की खोजें बहुत प्रसिद्धि पाती ह और बहुधा इन कार्यवाहियो को न्यूज रील (News real) बनाई जाती ह या इन्हें टलीविजन कमरो म लिया जाता है।

सीनट का यह भी अधिकार है कि वह राष्ट्रपति स किसी विदेशी शक्ति से किसी विषय पर वार्ता करने की प्रार्थना करें। परन्तु आरम्भन शक्ति (Initiative) सीनट के पास न होकर राष्ट्रपति क पास होती है।

सीनेट की अन्तिम कार्यपालन सम्बन्धी शक्ति युद्ध की घोषणा के समय की है। इस विषय म प्रतिनिधि सभा क साथ सीनट भी युद्ध की घोषणा किए जाने से पहले उस अपनी स्वीकृति प्रदान करती है। न्यायतिक रूप स सीनट की शक्ति

यद्यपि प्रतिनिधि सभा के समकक्ष ही है परन्तु सन्धियो के पुष्टिकरण की शक्ति के कारण सीनेट का महत्व इस शक्ति के बारे में भी प्रतिनिधि सभा से बढ जाता है।

(3) न्याय सम्बन्धी शक्तियां—सीनेट को समस्त महाभियोगो को सुनने का एकाधिकार प्राप्त है। सीनेट राष्ट्रपति, उप-राष्ट्रपति, राजदूत, मन्त्रि मण्डल के सदस्यो, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो एवं अन्य उच्च सिविल अफसरो के अभियोगो के मुकदमे सुनने के लिए न्यायालयो का कार्य करती है। दोषारोपण प्रतिनिधि सभा के प्रस्तावो द्वारा सीनेट के समक्ष रखा जाता है और दो-तिहाई बहुमत से सीनेट इन महाभियोगो के निर्णय देती है। महाभियोग की सुनवाई के समय सीनेट का अध्यक्ष सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश होता है और कोरम के लिए दो तिहाई सदस्यो की उपस्थिति आवश्यक है। महाभियोग की जांच करने की प्रक्रिया में सीनेट सभी कार्य, जैसे आदेश जारी करना, गवाहो को बुलाना उन्हें शपथ दिलाना, आदि करती है।

(4) अन्य अधिकार—सीनेट संविधान के संशोधन में भाग लेती है, संघ में नये राज्य के प्रवेश को स्वीकृति देती है और राष्ट्रपति एवं उप राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिए किये गये मतदान की गणना करती है। यदि उप राष्ट्रपति के निर्वाचन मे किसी व्यक्ति का पूर्ण बहुमत प्राप्त न हुआ हो तो दो सर्वाधिक मत पाने वाले प्रत्याशियो में से किसी एक को उप-राष्ट्रपति निर्वाचित करती है। सीनेट ही अपने निर्वाचनो, निर्वाचन-विवरणो और सदस्यो की योग्यताओ की नियामक है।

सीनेट की महत्वपूर्ण स्थिति को प्रकट करते हुए कहा जा सकता है कि "कुछ एसे मामले होते है जिन्हें राष्ट्रपति और सीनेट निम्न सदन की स्वीकृति प्राप्त किये बिना भी कर सकती है और एसे काम भी है जिन्हें निम्न सदन और राष्ट्रपति सीनेट की स्वीकृति प्राप्त किये बिना कर सकते है, लेकिन एसे काम बहुत कम है जिन्हें निम्न सदन और राष्ट्रपति सीनेट की स्वीकृति प्राप्त किये बिना कर सकते हो।" लार्ड ब्राइस के शब्दो में सीनेट ने शासन के बीच एक गम्भीरता का केन्द्र स्थापित करके संविधान के निर्माताओ द्वारा इसे बनाने के उद्देश्य की पूर्ति कर दी है। इसने एक ओर तो प्रतिनिधि सदन के जनतन्त्र में सहज उतावलेपन को रोकने की कोशिश की है और दूसरी ओर राष्ट्रपति की राजतन्त्रीय भावनाओ को रोकने की कोशिश की है। और इस प्रकार इसने दोनो ओर प्रतिबन्ध लगाये है दोनो के मध्य में आने की वजह से सीनेट दोनो ही की प्रतिद्वन्द्वी या विरोधी हो गई है। अब कांग्रेस बिना सीनेट के कुछ नहीं कर सकती है। इसके विरोधी होने पर राष्ट्रपति भी कुछ नही कर सकता। यह सीनेट का नकारात्मक कार्य कहा जाता है, परन्तु इसके सकारात्मक कार्य भी अनेक हैं और उनकी वजह से इसे काफी सफलता मिली है और इसने काफी आदर पाया है।

(1) संविधान निर्माताओं की इच्छा—संविधान निर्माता सीनेट को संघीय शासन प्रणाली की रीढ़ की हड्डी (Backbone) बनाना चाहते थे। राष्ट्रपति द्वारा शक्तियों का स्वच्छाचारी प्रयोग न हो, इसके लिए सीनेट को कतिपय ऐसी शक्तियाँ प्रदान की गई कि वह निरंकुश न बन सके और उचित सतुलन बना रहे। इसी तरह प्रतिनिधि सभा की मनमानी पर अंकुश रखने के लिए व्यवस्थापन के क्षेत्र में भी सीनेट को प्रतिनिधि सभा का समान पदी बनाया गया और यह व्यवस्था की गई कि सभी प्रकार के विधेयक कानून तभी बन सकेंगे, जबकि उन पर दोनों सदनों की सहमति हो जाए। स्पष्ट है कि संविधान निर्माताओं ने सीनेट को एक ऐसे सतुलन चक्र का स्थान देना चाहा जो राष्ट्रपति और प्रतिनिधि सभा दोनों को अपनी सीमाओं में रख सके। उनकी इच्छा का यह स्वाभाविक परिणाम हुआ कि आज सीनेट संसार के सभी द्वितीय सदनों से अधिक शक्तिशाली है।

(2) प्रतिष्ठित सदन और प्रभावशाली रंगमंच—सीनेट कानून बनाने वाले लोगों का प्रतिष्ठित सदन है। वह राज्यों का राजनीतिक इकाइयों के रूप में प्रतिनिधित्व करता है। आज की स्थिति में सीनेट के सदस्य राज्यों के प्रतिनिधि नहीं वरन समस्त राष्ट्र के प्रतिनिधि हैं। प्रतिनिधि सभा में स्थानीय हितों का प्रभुत्व रहा है परन्तु सीनेट में ऐसा नहीं है। इससे द्वितीय सदन को स्वभावतः प्रथम सदन से श्रेष्ठता मिल गई है और उसका सम्मान भी बढ़ गया है।

(3) राष्ट्रपति पद के बाद अमरिका में सीनेट ही सबसे प्रभावशाली रंगमंच (Effective Platform) है। राष्ट्रपति की ही तरह प्रमुख सीनेटरों के भाषणों और विचारों को समाचार पत्रों में प्रथम पृष्ठ पर स्थान दिया जाता है। सीनेटरों के विचार जनमत को पर्याप्त रूप से प्रभावित करते हैं। सीनेटर सरकार की किसी भी धाधली को प्रकाश में लाकर जनमत को सरकार के विरुद्ध करने की क्षमता रखते हैं। इसके अतिरिक्त वे किसी भी रहस्यपूर्ण विषय पर कार्यपालिका से सूचना माँग सकते हैं। फलस्वरूप सीनेट के प्रभाव में पर्याप्त वृद्धि हुई है।

(4) आकार एवं रचना—सीनेट सगठन भी उसके सम्मान का एक सहायक अंग है। प्रतिनिधि सभा की अपेक्षा सीनेट एक छोटा सदन है। प्रतिनिधि सभा में 435 सदस्य होते हैं जबकि सीनेट में 100 सदस्य हैं। सीनेट के छोटे आकार के कारण उसमें प्रत्येक सदस्य का अपना महत्त्व होता है। एक छोटा सा गुट, यहाँ तक कि एक सदस्य भी कभी कभी इसकी कार्यवाही में निर्णयात्मक भाग लेता है।

(5) स्थायित्व और स्थिरता—सीनेट के सदस्यों की अवधि 6 वर्ष की होती है, अतः वे पर्याप्त समय तक प्रशासन का अनुभव प्राप्त करके प्रशासन की कुशलता प्रदान करते हैं। प्रायः सीनेटर दूसरी और तीसरी बार भी निर्वाचित होते रहते हैं और इस लम्बी अवधि के कारण वे बहुधा ज्ञान के भण्डार होते हैं। कार्यकाल की अधिकता के कारण प्रतिभाशाली लोग सीनेट में जाने का प्रयत्न करते हैं। प्रतिनिधि सभा के योग्य सदस्य जब वहाँ सम्मान प्राप्त कर लेते हैं तो

सीनेट मे चुन लिए जाते हैं। अपनी स्थिरता के कारण यह आकस्मिक परिवर्तनो के विरुद्ध एक रुकावट का काम करती है। ब्राइस के शब्दो मे, "सीनेट सरकार की कार्यकारिणी मशीनरी को स्थिरता से सम्हाले रखने मे बहुत कुछ सहायता करती है। यह सार्वजनिक भावना के झकोरे से आसानी से प्रभावित नही होती।"

(6) विशिष्ट क्रिया प्रणाली—सीनेट की क्रिया प्रणाली भी उसकी शक्ति का स्रोत है। सीनेट की कार्य विधि ऐसी है कि उसमे सदस्यो के बोलने का समय प्राय निश्चित नहीं किया जाता। सीनेटर जब एक बार बोलने खडा हो जाता है, तब जितनी देर चाहे वह सीनेट मे बोल सकता है। यद्यपि 1917 से यह नियम बन गया है कि सीनेट का दो तिहाई बहुमत किसी भी सीनेटर को एक घण्टे से अधिक बोलने से रोक सकता है, परन्तु इस नियन्त्रण का प्राय बहुत कम प्रयोग किया जाता है। भाषण की स्वतन्त्रता ने सीनेट को पर्याप्त सम्मान प्रदान किया है, क्योकि इसमे सदन के द्वारा किसी महत्वपूर्ण प्रश्न पर स्वतन्त्रतापूर्वक विचार किया जा सकता है।

(7) दल नियन्त्रण का अभाव—व्यवस्थापिका के सदस्यो की घटती हुई शक्ति और प्रभाव के पीछे प्राय दलीय अनुशासन का बहुत बडा हाथ है। इसके कारण सदस्य-गण की स्वतन्त्रता जाती रहती है। परन्तु सीनेट मे दल सगठन, दल-नेतृत्व तथा दलीय अनुशासन का अभाव है। सीनेट के सदस्य स्वतन्त्रतापूर्वक किसी भी समय और किसी भी विषय पर बोल सकते है। वे व्यक्तिगत रूप से यह निश्चय करते है कि कौनसा रास्ता अपनाया जाए अथवा किस पक्ष को मत दिया जाए। इसके अतिरिक्त सीनेट के सदस्य को किसी वर्ग विशेष अथवा सस्था का तनिक भी भय नही होता। वे न केवल सरकार की अपितु सर्वोच्च न्यायालय की आलोचना करने मे भी नही हिचकते।

(8) मन्त्रिमण्डलीय व्यवस्था का अभाव—मन्त्रि-मण्डलीय व्यवस्था के अभाव से भी अप्रत्यक्ष रूप से सीनेट को विशेष शक्तिशाली बनाने मे मदद पहुचाई है। अन्य देशो के प्रथम सदन द्वितीय सदन की तुलना मे इसलिये अधिक शक्तिशाली हो जाते है कि वे मन्त्रि मण्डल को बना या मिटा सकते है, परन्तु अमेरिका मे ऐसी कोई बात नही है।

(9) नियन्त्रणकारी कार्य-कारिणी एवम् न्यायिक शक्तियाँ—सीनेट के पास महत्वपूर्ण कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तिया है। वह राष्ट्रपति की निरकुशता पर रोक का कार्य करती है, उसका सधियो एव नियुक्तियो मे अतिम शब्द रहता है। जान हे (John Hay) के अनुसार 'सधि का सिनेट मे भजना एक बैल को अखाडे मे भेजने के समान है। वहा से उसके अग-भग हुए बिना जीवित लौटने की आशा कभी नही की जा सकती।" न्यायिक शक्तियो के रूप मे सीनेट एक प्रमुख जाँच निकाय (Investigating Body) का कार्य करती है। सीनेट द्वारा की

जाने वाली खोजें इतनी भयानक होती हैं कि बहुत से अधिकारी विरोधी कार्येन सदस्यों के प्रश्नों से बहुत घबराते हैं। इसके अतिरिक्त सीनेट को ही समस्त महाभियोगों को सुनने का अधिकार प्राप्त है और उसके निर्णय अन्तिम होते हैं।

(10) प्रत्यक्ष निर्वाचन—सीनेट का गौरव का एक अन्य कारण उसके सदस्यों के प्रत्यक्ष निर्वाचन की व्यवस्था है। 1913 से हुए प्रतिनिधि सभा और सीनेट दोनों ही निर्वाचन प्रत्यक्ष होने लगे हैं। अतः अब दोनों ही संस्थाओं के सदस्य स्वयं को जनता का प्रतिनिधि कहने के अधिकारी हैं।

सीनेट आज सरकार के गुरुत्वाकर्षण का केन्द्र (A Gentre of Cravity in the Government) है और राज्य के योग्य एवं महत्वाकांक्षी व्यक्तियों को अपनी ओर आकृष्ट करती है।

सीनेट के विपक्ष में बहुत कुछ कहा जाता है—

प्रथम, सीनेट धनी वर्ग का क्लब (Richmen's Club) है। संयुक्त राज्य अमेरिका में पूँजीपति ही राजनीतिक व्यवस्था के वास्तविक स्वामी हैं। सीनेट उनका प्रतिनिधित्व करती है।

दूसरे, सीनेट में सभी राज्यों के दो-दो प्रतिनिधि हैं, परन्तु यह प्रतिनिधित्व लोकतन्त्र की भावना के अनुकूल नहीं है क्योंकि इस प्रकार सीनेट राज्यों की प्रतिनिधि संस्था हो जाती है, जनता की नहीं।

तीसरे, सीनेट कार्य विधि का भी आदर्श नहीं कहा जा सकता। इसके नियुक्ति सम्बन्धी अधिकार के परिणामस्वरूप राष्ट्रपति को दल के सदस्यों का मुँह जोहना पड़ता है। सन्धि के अनुसमर्थन के अधिकार ने परराष्ट्र नीति को नकारात्मक बना दिया है। यह भी अनुचित है कि किसी भी सदस्य पर भाषण के विषय में कोई प्रभावी रोक नहीं है और वह जितने समय तक सीनेट में विचारणीय विषय पर बोलना चाहे, बोल सकता है।

चौथे, प्रतिनिधि सभा के समान पदों के रूप में इसके अस्तित्व के कारण सदा एक बड़ी कठिनाई उपस्थित हो सकती है, जब दोनों सदनों में किसी विधेयक पर गतिरोध पैदा हो जाय। संविधान में ऐसा गतिरोध को दूर करने के लिए कोई व्यवस्था नहीं दी गई है। प्रायः विरोध की अवस्था में सीनेट की स्थिति अधिक दृढ़ रहती है।

पाँचवें, सीनेट जितना समय नष्ट करती है उतनी बहुत कम विधान सभायें नष्ट करती हैं।

छठे अधिकार होते हुए भी प्रशासन के सम्बन्ध में सीनेट का कोई उत्तरदायित्व नहीं होता, जो अनुचित है।

सातवें, जब कभी नियुक्तियों का प्रश्न आता है तो सीनेट संगठित और संयुक्त रूप में कार्य करने का आदेश अपने सदस्यों को देती है जिसके कारण सीनेट के प्रति शिष्टाचार (Senatorial Courtesy) जैसी प्रथा का चलन है। इसे न्यायसंगत नहीं कहा जा सकता।

आठवें, सीनेट अनेक बार अपने अधिकारो का दुरुपयोग करने को तैयार रही है। साथ ही यह अपने विशेषाधिकारो के प्रति आवश्यकता से अधिक भावुक रहती है। सीनेट के इतिहास मे एेसे अवसर आये है जब इसने देश के हित की अपेक्षा राष्ट्रपति की नीति का भग्न (Wreck) करना ही अपना उद्देश्य और लक्ष्य समझा है। अपनी स्वतन्त्रता दिखाने के लिए यह कितनी ही बार लापरवाही से भी कार्य करने लगती है।

परन्तु उपयुक्त दोषो के बावजूद सीनेट एक सफल, विशाल और अद्वितीय द्वितीय सदन के रूप मे उभरी है और इसने अपने निर्माताओ के उद्देश्य की पूर्ति की है। अमरिकन शासन व्यवस्था मे सीनेट ही एक ऐसा सदन है, जो व्यावहारिक एव कारगर रूप मे राष्ट्रपति के अधिकारो का नियत्रण रख सकने मे समर्थ हो सका है। सीनेट अमरिकन प्रशासन यत्र की धुरी है। यदि उसे निकाल दिया जाये तो अमेरिकन शासन व्यवस्था धाराशाही हो जायेगी। अमेरिकन सीनेट को हटाने का अर्थ सघीय सरकार की आतें निकाल देना है। सर हैनरी मेन के शब्दो मे, "जब से आधुनिक लोकतन्त्र का ज्वार चढा है, तब से जितनी भी सस्थाओ का जन्म हुआ है उनमे यही केवल एकमात्र पूर्णतया सफल सस्था रही है।"

प्रतिनिधि सभा

(The House of Representatives)

पटमन के अनुसार—"प्रतिनिधि सभा लघु (Miniature) रूप मे अमरिकन राष्ट्र है। यह अमरिकन जीवन की सुन्दर तस्वीर है जिसमे वहा की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा स्वाभाविक विभिन्नताओ, उग्रताओ तथा मध्यमावस्थाओ का पूर्ण चित्रण है। इसके सदस्य विभिन्न राज्यो से जनसख्या के आधार पर चुने जाने के कारण इसमे अमेरिका के जीवन की विविध रूपता दिखाई देती है।" यह एक ऐसा प्रथम सदन है जो ससार के अन्य सब प्रथम सदनो की तुलना मे कम शक्तिशाली है।

प्रतिनिधि सभा की रचना

सविधान मे मुख्यत केवल इतना लिखा गया है कि प्रतिनिधि सभा का प्रत्येक प्रतिनिधि कम से कम 30 हजार लोगो का प्रतिनिधित्व करेगा और प्रत्येक राज्य का कम से कम एक प्रतिनिधि अवश्य होगा, उन्हे उस राज्य की जनसख्या 30 हजार से कम ही क्यो न हो।

प्रारम्भ मे प्रतिनिधि सभा के सदस्यो की सख्या 65 थी, किन्तु बाद मे जनसख्या के अनुसार यह बढती गई। सन 1960 की जनगणना के अनुसार सदस्य सख्या 435 निश्चित कर दी गई है।

सदस्यो की योग्यतायें, उनका निर्वाचन, कार्यकाल, वेतन आदि—सदस्य बनने के लिए आवश्यक है कि व्यक्ति कम से कम 7 वर्ष से सयुक्त राज्य

का निवासी हो, उसकी आयु कम से कम 25 वर्ष की हो, निर्वाचन के समय वह उस राज्य का निवासी हो जहा से वह चुनाव लड रहा हो और उन विशेष निवास योग्यताओ को भी रखता हो जो राज्य विशेष निधारित करे। सविधान ने कुछ निर्योग्यतायें भी उपबधित की हैं—(क) कोई व्यक्ति सयुक्त राज्य की सेवा म रहते हुए कांग्रेस के किसी सदन का सदस्य उस समय तक नही हो सकता, जब तक वह उस पद पर आसीन हो, एव (ख) कोई भी सदस्य अपनी सदस्यता काल म किसी ऐसे सार्वजनिक पद पर नियुक्त नही हो सकता जिसका निमाण उसी काल में हुआ हो अथवा जिस पद का वेतन उसी सदस्यता काल म वह सदस्य अपनी व्यवस्थापिका की सदस्यता के प्रभाव के कारण बढवा ले।

प्रतिनिधि सभा के सदस्य प्रति दूसरे वर्ष चुने जाते हैं, अर्थात् सभा का कायकाल केवल 2 वर्ष का है। प्रतिनिधि सभा का राज्यो म जनसख्या के आधार पर चुनाव होता है। चुनाव प्रत्यक्ष होता है। प्रत्यक वयस्क स्त्री पुरुष को मत देने का अधिकार है।

प्रतिनिधि सभा के सदस्यो को अन्य विभिन्न भत्तो के अतिरिक्त 22, 500 डालर प्रतिवर्ष वेतन दिया जाता है। भत्तो मे स्टेशनरी, यात्रा, सचिव का वेतन आदि प्रमुख हैं। सदस्यो को बहस के समय वाद विवाद की स्वतन्त्रता होती है। सदन की कार्यवाही मे भाग लेने जाते समय, सदन के अन्दर या सदन से वापस आते समय उन्हें महा-अपराध, देशद्रोह या शान्ति भग करने के अपराध के अतिरिक्त किसी अन्य अपराध के लिए गिरफ्तार नही किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त सदन के अन्दर अपने भाषण म या विवाद के समय कही गई किसी बात के लिए सदन के बाहर उत्तरदायी नही ठहराया जा सकता और न ही इस सम्बन्ध म कोई न्यायालय आपत्ति कर सकता है।

सीनेट के समान प्रतिनिधि सभा ही सदस्यो की योग्यतायें निर्धारित करने के लिए उत्तरदायी है। प्रतिनिधि सभा अपने 2/3 बहुमत से किसी भी सदस्य को बाहर निकाल सकती है।

सभा के अध्यक्ष को स्पीकर (Speaker) कहते हैं जिनका निर्वाचन सभा के सदस्य स्वय करते हैं। अमरिकन स्पीकर न केवल दलबन्दी म फसा रहता है वरन वह प्रतिनिधि सभा के बहुमत दल का नेता भी होता है।

प्रतिनिधि सभा की शक्तियाँ और उसके कार्य

प्रतिनिधि सभा की शक्तिया और उनके कार्य सीनेट के समान व्यापक नही है। कुछ क्षेत्रो म यद्यपि वह सीनेट के समकक्ष है किन्तु अन्य क्षेत्रो म वह सीनेट से बहुत कम शक्तिशाली है।

(1) व्यवस्थापन सम्बन्धी शक्तियाँ—इस क्षेत्र म सीनेट एव प्रतिनिधि सभा को समान शक्तिया प्राप्त हैं, केवल वित्त विधेयको का प्रस्तुतीकरण इसम ही हो सकता है, सीनेट म नहीं। इस सभा म सभी प्रकार के विधेयक प्रस्तुत किये जा

सकते हैं और कोई भी विधेयक तब तक काग्रेस द्वारा पारित नही समझा जा सकता जब तक सीनेट के समान ही प्रतिनिधि सभा की सहमति भी उस पर प्राप्त न हो जाए। इस क्षेत्र मे ब्रिटिश लोकसभा स्पष्टत प्रतिनिधि सभा से अधिक शक्तिशाली है क्योकि उसे व्यवस्थापन क्षेत्र मे अन्तिम निणय का अधिकार प्राप्त है। सवैधानिक विधेयको के सम्बन्ध म भी सभा की शक्ति सीनेट के ही समकक्ष है।

दोनो सदना म यदि किसी बात पर मतभेद हो जाता है तो उसका निणय दोनो सदना की एक सम्मिलित समिति द्वारा किया जाता है और यदि सम्मिलित समिति म कोई समझौता नही हो पाता तो अन्त मे सीनेट की ही विजय होती है।

दोनो ही सदना को सयुक्त रूप से युद्ध की घोषणा करने का भी अधिकार है।

(2) कायपालिका सम्बन्धी शक्तिया—सीनेट की तुलना म प्रतिनिधि सभा की कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तिया नही के बराबर हैं। सधिया के पुष्टिकरण, राष्ट्रपति द्वारा की गई नियुक्तियो की स्वीकृति एव विविध विभागो की जाच-पडताल आदि मे सम्बन्धित कायकारी शक्तिया केवल सीनेट को ही प्राप्त हैं, प्रतिनिधि सभा को नही। परन्तु उसे यह महत्वपूण अधिकार अवश्य है कि विशेष परिस्थिति म वह राष्ट्रपति का निर्वाचन कर सकती है। जब राष्ट्रपति पद के लिए निर्वाचन लडने वाले प्रत्याशी को निर्वाचको की पूण सख्या का बहुमत प्राप्त न हो तो प्रतिनिधि सभा सबसे अधिक मत पाने वाले तीन प्रत्याशियो मे से एक को राष्ट्रपति-पद के लिए छाट सकती है।

प्रतिनिधि सभा अपने सदस्यो की योग्यता की जाच पडताल करती है और उनके चुनावो की वैधानिकता की भी परीक्षा करती है।

(3) न्यायिक शक्तिया—न्यायिक क्षेत्र म प्रतिनिधि सभा को केवल महाभियोग से सम्बन्धित अधिकार प्राप्त है। राष्ट्रपति, उप राष्ट्रपति एव अन्य उच्च अधिकारियो पर महाभियोग चला सकती है। वह इन पर महा-अभियोग का आरोप ही लगा सकती है, परन्तु शेष सब कुछ अथात् अभियोग को सुनने, अभियोग की जाच करने एव उस पर निणय देने का अधिकार सीनेट को प्राप्त है। इसके अतिरिक्त प्रतिनिधि सभा अपने सदस्यो के विरुद्ध अनुशासनात्मक कायवाही भी कर सकती है और किसी भी एसे व्यक्ति को सजा दे सकती है, जिसके व्यवहार से सदन की कायवाही म प्रत्यक्ष हस्तक्षेप अथवा व्यवधान पडता हो।

प्रतिनिधि सभा के कम शक्तिशाली होने के कारण

(1) यदि किसी विधयक पर दोनो सदनो म मतभेद का सुल्झाने के लिए बुलायी गई दोनो सदनो की सम्मिलित समिति म कोई समझौता नही हो पाता तो सीनेट की विजय होती है। वित्त विधेयको म भी सीनेट उनम सशोधन करने के अधिकार द्वारा किसी भी वित्त विधेयक म महत्वपूण परिवतन कर सकती है अथवा

एक प्रकार से नया प्रस्ताव ही रख देती है। इस प्रकार से प्रतिनिधि सभा के इस अधिकार का कोई विशेष महत्व नहीं रह जाता कि वित्त विधेयक सबसे पहले प्रतिनिधि सभा में ही प्रस्तुत हो।

(2) राष्ट्रपति द्वारा उच्चवर्गीय नियुक्तियों पर सीनेट की स्वीकृति आवश्यक होती है न कि प्रतिनिधि सभा की। विदेशों से की जाने वाली संधियों में भी सीनेट की दो तिहाई पुष्टि होना अनिवार्य है, न कि प्रतिनिधि सभा की। अपनी इस शक्ति द्वारा सीनेट राष्ट्र के वैदेशिक मामलों में महत्त्वपूर्ण भाग लेती है। प्रतिनिधि सभा इस किसी भी गौरव से वंचित है।

(3) प्रतिनिधि सभा केवल महा अभियोगों का आरम्भ कर सकती है जबकि महा अभियोगों को सुनना, उनकी जाँच करना और उन पर निर्णय देना आदि सब कुछ सीनेट का अधिकार है। इस तरह प्रतिनिधि सभा की शक्ति इस क्षेत्र में भी सीनेट की अपेक्षा अत्यधिक गौण है। इसके अतिरिक्त केवल सीनेट को ही यह अधिकार है कि वह प्रत्येक मामले में आवश्यक जाँच-पड़ताल या खोजबीन करे।

(4) अमेरिका में शक्ति विभाजन का सिद्धांत लागू होने से व्यवस्थापिका और कार्यपालिका परस्पर स्वतन्त्र हैं। फिर भी सीनेट नियुक्तियों, संधियों, जाँच पड़तालों एवं महा अभियोगों के क्षेत्र में अपने विशेष अधिकारों द्वारा कार्यपालिका (राष्ट्रपति) पर पर्याप्त अंकुश रख पाती है, जब कि प्रतिनिधि सभा इस क्षेत्र में पिछड़ी हुई है।

(5) प्रतिनिधि सभा में ऐसे सर्वमान्य नेता का अभाव होता है, जो सदन के समक्ष राष्ट्रीय नीति की रूप रेखा प्रस्तुत कर सके और विधायी प्रस्ताव उसके सम्मुख रख सके। अधिकृत नेता के अभाव में प्रतिनिधि-सभा की शक्तियाँ बहुत कम हो जाती हैं।

(6) प्रतिनिधि सभा में दलीय एकता का अभाव भी उसकी दुर्बलता का एक मुख्य कारण है। सीनेट में सदस्यगण अधिकांशतः पारस्परिक एकता के सिद्धान्त को लेकर काम करते हैं, जबकि प्रतिनिधि सभा में ऐसी एकता नहीं दिखाई देती। सदस्यगण स्थानीय हितों को अधिक महत्त्व देते हैं, क्योंकि उनका निर्वाचन स्थानीय नियमों के अनुसार होता है।

(7) प्रतिनिधि सभा की अवधि केवल दो वर्ष की होती है। जिस प्रकार से इस सभा के नये चुनाव होते हैं उससे यह अवधि और भी कम हो जाती है। सभी को तो ग्यारह महीने बाद ही सदस्यों को चुनाव लड़ना पड़ जाता है। अतः ऐसी अवस्था में प्रतिनिधि सभा महत्वपूर्ण कार्यों को सीनेट पर ही छोड़ देती है जो एक स्थाई सदन है और जिसके सदस्यों का कार्यकाल 6 वर्ष का है।

(8) अमरिका मे ऐसी द्विसदनीय व्यवस्था का अस्तित्व है जिसम व्यवस्थापन के क्षेत्र म दोनों सदनो को समान अधिकार प्राप्त है। यहा दाना सदनो की सहमति से ही कोई विधेयक पारित हो सकता है, जबकि इगलैड म लार्ड सभा के विरोध के होते हुए भी लोक सभा द्वारा पारित विधेयक अन्त म पारित हो जाता है। अमेरिका म प्रतिनिधि सभा व्यवस्थापन के क्षेत्र म अंतिम निर्णय नही रखती। उसके द्वारा पारित विधेयक तब तक कानून नहीं बन सकता जब तक कि सीनेट भी उन्हें स्वीकार नहीं करले।

(9) अमेरिका का उच्च सदन (सीनेट) भी जनता द्वारा निर्वाचित होता है, अत वह निर्वाचित प्रतिनिधि सभा से कम महत्वपूर्ण अस्तित्व नही रखता।

(10) प्रतिनिधि सभा म विचार विनिमय अधिक नहा हो पाता अत इसके निर्णय अधिकाशत उतने विवेकपूर्ण नहीं होते जितने कि सीनेट के होते है।

(11) प्रतिनिधि सभा एक विशाल सदन है जिसके 435 सदस्य है। वहा राजनीतिक दलो की चाले इतनी अधिक काम करती है कि उन पर नियन्त्रण करना और उन पर ठीक अनुशासन स्थापित करना कठिन हो जाता है। इसके विपरीत सीनेट एक छोटा सदन है जिसम कुल 100 सदस्य है। ये सदस्य अनुभवी, योग्य और शासन के कार्यों का समझने वाले होते है। साथ ही ये अपने अपने राज्य के राजनीतिक दलो के नेता भी होते हैं।

उपयुक्त सभी कारणों से प्रतिनिधि सभा न केवल सीनेट की अपेक्षा कम शक्तिशाली है, अपितु विश्व के अन्य निचले सदनो से भी कम प्रभावपूर्ण है। अमेरिका मे सीनेट का अद्वितीय अस्तित्व है और सविधान द्वारा उसे इतनी अधिक शक्तिया प्राप्त है कि प्रतिनिधि सभा उसके सामने लगभग महत्वहीन रह गयी है। पर यह समझ लेना भ्रामक होगा कि प्रतिनिधि सभा का अमेरिका के शासन नियन्त्रण म कोई प्रभाव नही है। वस्तुत प्रतिनिधि सभा ही जनता की सही रूप म प्रतिनिधि संस्था है और लोकसत्ता की प्रतीक है। व्यवस्थापन का कार्य, बजट निर्माण और युद्ध की घोषणा की स्वीकृति आदि से सम्बंधित उसके प्रमुख कार्यों के महत्व को कम नही आका जा सकता।

इगलैड के समान ही अमरिका म भी निचले सदन का अध्यक्ष स्पीकर (Speaker) कहलाता है। परन्तु इंगलैण्ड के अध्यक्ष की अपेक्षा अमेरिका का अध्यक्ष बहुत अधिक शक्तिशाली है। पद के प्रभाव की दृष्टि से वह राष्ट्रपति के बाद दूसरा व्यक्ति माना जाता है और उत्तराधिकार के रूप म उपराष्ट्रपति के बाद राष्ट्रपति का पद अध्यक्ष को ही मिलता है।

अध्यक्ष का निर्वाचन

सिद्धान्त मे तो प्रतिनिधि सभा ही अपने अध्यक्ष का चुनाव करती है, परन्तु व्यवहार म दलीय कॉकस (Caucus) द्वारा यह निश्चय कर लिया जाता है कि कौन व्यक्ति अध्यक्ष बनेगा। विविध राजनीतिक दल अपनी अपनी दलीय बैठकों म अध्यक्ष

पद के लिए अपने अपने प्रत्याशी चुन लेते हैं। बाद में जब प्रतिनिधि सभा की बैठक अध्यक्ष का निर्वाचन करने के लिये होती है तो सब दल अपने अपने प्रत्याशी का नाम प्रस्तावित करते हैं। मतदान के बाद जिसे बहुमत मिलता है, वह अध्यक्ष माना जाता है।

अध्यक्ष के अधिकार एवं कर्तव्य

संविधान अध्यक्ष के अधिकारों एवं कार्यों का वर्णन नहीं करता, अत: उसके अधिकारों में समय समय पर उतार-चढ़ाव आता रहा है। आरम्भ में उसका पद अधिक शक्तिशाली नहीं था परन्तु समय के साथ इस पद का प्रभाव एवं शक्ति बहुत अधिक बढ़ गई। वह सदन के तानाशाह की स्थिति में आ गया और विधेयकों के जीवन मरण का विधाता बन बैठा। अन्त में अध्यक्ष की यह स्थिति डेमोक्रेटिक दल के विरोध का शिकार बनी और सन 1910-11 में यह दल अध्यक्ष की शक्तियों को कम करने पर तुल गया। 1910 में अध्यक्ष कैन के विरुद्ध सभा में विद्रोह हुआ और अध्यक्ष के अनेक महत्वपूर्ण अधिकार छीन लिए गये। वाद विवाद के नियमों में कई परिवर्तन हुए। अध्यक्ष को नियम निर्मात्री समिति से हटा दिया गया और स्थाई समितियों का चुनाव प्रतिनिधि सभा करने लगी। अध्यक्ष की स्वीकृति का अधिकार (Power of Recognition) भी छीन लिया गया। इन क्रांतिकारी संशोधनों के परिणामस्वरूप अध्यक्ष पहले के समान शक्तिशाली नहीं रहा। परन्तु फिर भी अपनी स्थिति और अपने विशेष कर्तव्यों के कारण वह विशिष्ट शक्तियों का स्वामी बना रहा। आज अध्यक्ष जिन शक्तियों का उपयोग करता है, वे निम्नानुसार हैं—

सभापतित्व करना और बोलने की व्यवस्था करना—अध्यक्ष प्रतिनिधि सभा की बैठकों का सभापतित्व करता है। वही सभा की बैठकों का आरम्भ और समाप्त करता है तथा सदस्यों को भाषण देने की अनुमति प्रदान करता है। उसके आदेश पर ही सदस्य अपने विचार व्यक्त कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में वह दलीय पक्षपात से ऊपर उठा हुआ नहीं रहता।

अनुशासन और व्यवस्था बनाये रखना—सदन के अनुशासन, सम्मान और उसकी व्यवस्था बनाये रखने का मुख्य दायित्व अध्यक्ष का ही है। इस दायित्व का निर्वाह करने के लिए उसे अधिकार है कि वह सदस्यों को मौखिक चेतावनी दे सके। सदन में अशांति और अव्यवस्था होने पर वह अपना गैवल (Gable) लटका कर लोगों का अनुशासित होने के लिए संकेत कर सकता है। यदि कोई सदस्य अनुशासन भंग करने पर ही उतारू हो तो अध्यक्ष उसका नाम लेकर उसे झिड़क सकता है और अत्यन्त अव्यवस्था की स्थिति में वह उस समय तक सदन की कार्यवाही स्थगित कर सकता है जब तक उसका नियमन माना नहीं जाता। वह एक सैनिक अधिकारी (Sergant at Arms) को भी शान्ति स्थापित करने के लिए आदेश दे सकता है, लेकिन ग्रेट ब्रिटेन की लोकसभा के अध्यक्ष के समान वह किसी

सदस्य को किसी प्रकार से दंडित करने का अधिकार नहीं रखता और न ही सदस्य को सभा भवन से बाहर निकल जाने की आज्ञा दे सकता है। ऐसी आज्ञा तो स्वयं सभा ही दे सकती है।

नियमों की व्यवस्था और उनको कार्यान्वित करना—अध्यक्ष का तीसरा प्रमुख कर्त्तव्य नियमो की व्याख्या करना व उन्हें लागू करना है। परन्तु वह इस अधिकार के प्रयोग में स्वच्छाचारी नहीं बन सकता, क्योंकि उसे नियम निर्मात्री समिति (Committee of Rules) द्वारा बनाये गये नियमों के अन्तर्गत ही कार्य करना पड़ता है। फिर भी, जहां नियमो की व्यवस्था अस्पष्ट अथवा अपर्याप्त हो वहां अध्यक्ष को अपने विवेक से बहुत कुछ काम करने का अधिकार है। स्मरणीय है कि किसी नियम पर की गई अध्यक्ष की व्यवस्था को सदन का बहुमत अमान्य घोषित कर सकता है। अत ब्रिटिश अथवा भारतीय अध्यक्ष की भांति अमरीकन अध्यक्ष का निर्णय अंतिम नहीं होता।

नियमों की व्यवस्था के अधीन अध्यक्ष प्रश्नों पर मत लेता है सदन द्वारा पारित अधिनियमों, भाषणों, संयुक्त प्रस्तावों, विटो, वारण्टो और समनों (Summons) पर हस्ताक्षर करता है। वह कार्य के क्रम (Order of Business) तथा मतदान के फल की घोषणा करता है।

अन्य अधिकार—मुख्य पदाधिकारी के रूप में अध्यक्ष बराबर मतों की स्थिति में अथवा जब गुप्त मतदान होता हो तब अपना मत दे सकता है। परन्तु दलीय व्यक्ति होने के कारण उसका मत अपने दल के पक्ष में ही होता है। अध्यक्ष को यह भी अधिकार है कि वह प्रतिनिधि सभा के सदस्य के रूप में सभा की कार्यवाही में भाग ले और वाद विवाद में हिस्सा बटावे। सदन की सूची के विषय में प्राथमिकता का निर्णय करना उसी का काम है। 1911 तक अध्यक्ष ही समस्त स्थाई समितियों और नियम समितियों के सदस्यों की नियुक्ति करता था, परन्तु अब वह केवल प्रवर समितियां और उन कांग्रेस की समितियां नियुक्त करता है जिनके लिये प्रतिनिधि सभा उनका कहे। ब्रिटिश परम्परा के विपरीत उसे यह अधिकार है कि वह अपना पद हस्तांतरित कर सके। परन्तु ऐसा वह केवल तीन दिन के लिए ही कर सकता है। वह किसी भी सदस्य से यह आग्रह कर सकता है कि वह उसका पद तीन दिन के लिए सभाले।

प्रतिनिधि सभा को ब्रिटिश लोकसभा के अध्यक्ष से तुलना

(1) ब्रिटेन में लोकसभा का अध्यक्ष दलीय सिद्धान्त पर नहीं चुना जाता, जबकि अमरीका में प्रतिनिधि सभा का अध्यक्ष दलीय आधार पर निर्वाचित होता है।

(2) अध्यक्ष निर्वाचन के पश्चात निर्दलीय व्यक्ति (Non Party man) हो जाता है किन्तु अमरीका में वह तब भी दलीय व्यक्ति (Party man) बना रहता है।

(3) ब्रिटिश अध्य त सदन की कार्यवाही म निष्प त होकर काय करता है, जबकि अमरिकन अध्यक्ष कभी भी निष्पक्ष नहीं होता।

(4) ब्रिटन म अध्यक्ष सक्रिय दलीय राजनीति म कभी भी भाग नहा लता जबकि अमरिकन अध्यक्ष सदन म अपन दल का नेतृत्व करता है और अपन दल क विधेयका तथा प्रस्तावा का पास करवान म याग प्रदान करता है। वह विरोधी दल के विधयका तथा प्रस्तावा क पास हान म रुकावटें डालता है। वह वास्तव म सीनट के सभापति तथा राष्ट्रपति से परामर्श करता है। यदि य एक राजनीतिक दल क हात है ता इस प्रकार का प्रयत्न करता है कि कार्यपालिका द्वारा प्रस्तावित प्रस्ताव तथा विधयक शीघ्रातिशीघ्र प्रतिनिधि सभा द्वारा पारित कर दिय जाय।

(5) प्रतिनिधि सभा का अध्य त लाकसभा क अध्य त की भाति निर्विरोध नहीं चुना जाता और उस चुनाव लडना पडता है और अपन निर्वाचको का भी ध्यान रखना पडता है।

(6) प्रतिनिधि सभा का अध्य त नियमा का निमाण और क्रियान्वयन बहुत कुछ अपन विवक क आधार पर करता है। जबकि ब्रिटिश लाकसभा का अध्यक्ष अपने कर्त्तव्यो की पूर्ति क लिए नियमानुसार निष्पक्ष रूप स काय करता है।

(7) ब्रिटिश लोकसभा का अध्यक्ष किसी भी सदस्य को उसका 'नाम' लेकर निलम्बित कर सकता है, जबकि प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष को यह अधिकार नही है।

किन्तु दोनो अध्यक्षा म कुछ समानतायें भी है। ब्रिटन के अध्यक्ष की तरह अमेरिका म भी अध्यक्ष प्रतिनिधि सभा का सभापति होता है, वह बैठको म अध्यक्ष का पद ग्रहण करता है, सभा म अनुशासन रखता है, विवादग्रस्त प्रश्नो को तय करता है, सदन के कार्यक्रम बनाता है तथा उसकी सीमा निर्धारित करता है। प्रतिनिधि सभा म अध्यक्ष का बहुत बडा महत्व है। फार्इनर क शब्दो मे 'अध्यक्ष पद का महत्व राष्ट्रपति के पद क बाद दूसरे नम्बर पर ही आता है। ब्रिटन म अध्यक्ष के पास इतनी शक्ति नही हाती जितना कि प्रभाव। अमेरिका म अध्यक्ष का इतना प्रभाव नही होता जितनी उसको वास्तविक शक्ति होती है।'

अमेरिका मे विधि-निर्माण-प्रक्रिया
(The Law making Process in America)

संयुक्त राज्य अमेरिका म किसी भी विधयक का पारित हाने से पूव निम्न-लिखित स्थितिया म स गुजरना पडता है।

(1) प्रस्तावना (Introduction)
(2) छाट व प्रथम वाचन (Sorting and First Reading)
(3) समिति स्थिति (Committee Stage)

(4) कलेण्डर अवस्था (Calender Stage)
(5) द्वितीय वाचन (Second Reading)
(6) ततीय वाचन (Third Reading)
(7) विधेयक दूसरे सदन म (Bill in the other house)
(8) विधेयक राष्ट्रपति के सम्मुख (Bill before the President)

प्रस्तावना या प्रस्तुतीकरण

अमेरिकन काग्रेस म भी ब्रिटिश ससद की भाँति ही विधि निर्माण प्रक्रिया की प्रारम्भावस्था विधेयक के प्रस्तुतीकरण की है। वित्त विधेयक को छोडकर अन्य कोई भी विधेयक काग्रेस के किसी भी सदन म प्रस्तुत किया जा सकता है। वित्त विधेयक सर्व प्रथम केवल प्रतिनिधि सभा मे ही प्रस्तुत किया जा सकता है। विधेयक—(क) काग्रेस के किसी भी सदस्य के द्वारा, (ख) काग्रेस की किसी भी स्थाई समिति द्वारा, अथवा (ग) राष्ट्रपति या किसी कार्यकारी अधिकारी के कहने पर निर्मित काग्रेस की विशेष समिति के द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है।

विधेयक का प्रस्तुत करने की प्रणाली भी अत्यन्त साधारण है, जो इस प्रकार है—

(क) यदि सदस्य सीनेट म विधेयक को प्रस्तावित करना चाहते है तो वह उसकी एक प्रति सचिव की मेज पर रखे सन्दूक पर डाल देते हैं।

(ख) यदि सदस्य विधेयक को प्रतिनिधि सभा म प्रस्तावित करना चाहते हैं तो उसकी प्रति लिपिक (Clerk) की मेज पर रखे हुए सन्दूक पर डाल देते हैं, जिसे 'हूपर' (Hooper) कहते हैं।

दोनो दशाओ म अन्तर केवल यही है कि सीनेट म उक्त व्यक्ति को 'सचिव' कहा जाता है और प्रतिनिधि सभा म उसे 'क्लर्क'।

प्रस्तावित विधेयक उस समय तक जीवित रहता है जब तक कि उसका निबटारा नही होता अथवा जब तक वर्तमान काग्रेस समाप्त नहीं होती। यदि काग्रेस-कार्यकाल म विधेयक निबटाया नही जाता, तो उसके प्रस्तावक को उसे दूसरी काग्रेस म पुन प्रस्तावित करना पडता है। सदन म समस्त प्रस्तावित विधेयकों को एक क्रमिक सख्या प्रदान कर दी जाती है और प्रत्येक प्रस्तावित विधेयक पर प्रस्तावक का नाम लिख दिया जाता है।

अमेरिका मे विधेयक की प्रस्तुतीकरण की यह प्रक्रिया इगलैड की प्रक्रिया स भिन्न है—

प्रथम, इगलैड की प्रक्रिया अमरिका की प्रक्रिया जितनी सरल नही है। इगलैड म विधेयक का प्रस्तुतीकरण दो विधियो स होता है, जिनम एक साधारण प्रस्तुतीकरण (During Introduction) और दूसरी दस मिनट के प्रस्तुतीकरण (Introduction Under ten minutes Rule) की अवधि कहलाती है।

अमरीका की प्रस्तुतीकरण की अवधि इंगलैंड की पहली प्रकार की अवधि से मेल नहीं खाती है, जिसके अन्तर्गत विधेयक के प्रस्तावक को विधेयक पर केवल अपने हस्ताक्षर करने पड़ते हैं और उस पर एक शब्द भी कहने की आवश्यकता नहीं होती।

द्वितीय, अमरीका में विधेयकों का विभाजन इस प्रकार का नहीं है जैसा कि ब्रिटेन में है। ब्रिटेन में तीन प्रकार के विधेयक—सार्वजनिक, व्यक्तिगत सदस्यों द्वारा प्रस्तावित सार्वजनिक विधेयक एवं असार्वजनिक विधेयक—संसद के सामने प्रस्तावित किये जाते हैं और इन तीनों ही प्रकार के विधेयकों के पारित होने की प्रक्रिया एक दूसरे से भिन्न है। किन्तु संयुक्त राज्य अमरीका में समस्त विधेयक गैर सरकारी अर्थात् सदस्यों के ही होते हैं।

छाट व प्रथम वाचन

यह विधेयक के जीवन का दूसरा चरण है। प्रस्तुतीकरण के बाद सदन का लिपिक विधेयकों को विषयवार छाँट लेता है। तत्पश्चात वह उन्हें सरकारी सूचना के रूप में छपवा लेता है। इस प्रकार विधेयक का प्रथम वाचन समाप्त हो जाता है।

अमरीका की व्यवस्थापन प्रक्रिया की प्रथम वाचन की तुलना यदि ब्रिटिश व्यवस्थापन की प्रक्रिया के प्रथम वाचन से की जाए, तो अनेक अन्तर दिखाई देते हैं—(1) ब्रिटेन में विधेयक की छपाई तभी होती है जब प्रस्तुतकर्ता का यह प्रस्ताव सदन द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है कि विधेयक का प्रथम वाचन हो और उसे छपवाने की आज्ञा दी जाए, एवं (ii) ब्रिटेन में प्रस्तुतीकरण और प्रथम वाचन सम्मिलित होते हैं जबकि अमरीका में समय की दृष्टि से दोनों अलग-अलग होते हैं।

समिति अवस्था

अमरीका में विधेयक के जीवन का तीसरा चरण समिति अवस्था का है। प्रथम वाचन के बाद विधेयक उस विषय की समिति के पास जाता है, जिस विषय से सम्बन्धित वह विषय होता है। अमरीका में समितियाँ विषयवार बनाई जाती हैं। यदि विवाद उत्पन्न हो जाए कि विधेयक किस समिति को सुपुर्द किया जाना है तो निर्णय सदन का अध्यक्ष करता है। उसके निर्णय के विरुद्ध सदन से अपील भी की जा सकती है।

समिति अवस्था विधेयक के जीवन और मरण की स्थिति होती है। समितियाँ विधेयकों के स्वरूप और उससे सम्बन्धित मामलों में सामग्रियाँ एकत्र करती हैं। पूर्ण जाँच पड़ताल के बाद समिति एक गोपनीय बैठक में यह निश्चित करती है कि विधेयक पर उसे क्या निर्णय देना है। वह अपने निर्णय अग्रलिखित रूपों में से किसी भी एक रूप में दे सकती है।

(क) विधेयक के प्रस्तावित रूप को स्वीकार करे बिना किसी संशोधन के लिए अपना प्रतिवेदन दे सकती है।

(ख) विधेयक पर संशोधन सहित प्रतिवेदन दे सकती है।

(ग) विधेयक को पूर्ण रूप से बदल सकती है, केवल उसके प्रस्तावित स्वरूप और विषय वस्तु को छोड़ कर।

(घ) विधेयक पर कोई प्रतिवेदन न दे कर उसकी हत्या कर सकती है। समिति द्वारा ऐसा किये जाने को विधेयक को कबूतर के दरबे में डाल देना [Pigeon Holding] कहा जाता है।

अमरीका में चूंकि सभी विधेयक साधारण सदस्यों द्वारा प्रस्तावित होते है, अतः वे प्रायः सब तरह से पूर्ण नही होते। परिणाम यह निकलता है कि वहां लगभग 90 प्रतिशत से भी अधिक विधेयकों के जीवन का अन्त समिति अवस्था में ही हो जाता है। कांग्रेस को यद्यपि यह अधिकार है कि वह एसे किसी भी विधेयक को, जिस पर समिति ने कोई प्रतिवेदन देना उचित नही समझा है, अपने समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत करा ले, तथापि व्यवहार में एसा प्रायः बहुत कम किया जाता है। जब कभी किसी विधेयक पर समिति के सदस्यगण एक मत नही होते तो व्यवस्था यह है कि बहुमत और अल्पमत दोनों के ही प्रतिवेदनों के साथ विधेयक कांग्रेस को लौटाया जाता है। समिति के प्रतिवेदन भी छाप कर विधेयक के साथ सदस्यों को दिये जाते है।

इस सम्बन्ध में अमरीकन व्यवस्थापन प्रक्रिया और ब्रिटन की व्यवस्थापन-प्रक्रिया में अनेक अन्तर है —(i) ब्रिटेन में द्वितीय वाचन के पश्चात विधेयक को समिति में भेजा जाता है, जबकि अमरीका में उसे प्रथम वाचन के बाद ही समिति के सुपुर्द कर दिया जाता है, (ii) ब्रिटेन में संसद ही विधेयकों के सिद्धान्तों पर विचार द्वारा निर्णय करती है जबकि अमरीका में विधेयकों के सिद्धान्तों और उसकी उपयोगिता आदि पर विचार व निर्णय पहले समिति में ही हो सकता है और कांग्रेस को अवसर बाद में मिलता है (iii) ब्रिटन में समितियां उतनी समर्थ और शक्तिपूर्ण नहीं जितनी अमरीका में, एवं (iv) ब्रिटन में समितियां आवश्यकतानुसार बनती हैं। वे विषयवार नहीं होतीं, और अधिकांशतः पूर्ण स्थाई भी नहीं होतीं। यहां कुछ समितियां होती हैं जिनमें विधेयक के विषय के अनुसार कुछ विशेषज्ञ और जोड़ दिये जाते हैं। किन्तु अमरीका में समितियों का निर्माण विषयवार और स्थाई रूप से किया जाता है, अतः उनमें विशेषज्ञों को जोड़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

सूचीकरण अथवा कलेण्डर अवस्था

विधेयक के जीवन का चौथा चरण सूचीकरण का आता है। इस स्तर पर विधेयक को अग्रलिखित पांच सूचियों (Five Calendar) में से किसी एक में रख दिया जाता है।

(1) संघीय सूची (Union Calendar)—इसमें राजस्व विनियोग तथा सार्वजनिक सम्पत्ति से सम्बन्धित विधेयक, जिन पर पूर्ण से प्रतिवेदन दिया जाता है आता है।

(2) सदन सूची (House Calendar)—इसमें प्रथम श्रेणी की सूची में आने वाले विधेयकों को छोड़कर अन्य सभी सार्वजनिक विधेयक, जिनका सम्बन्ध वित्त से नहीं होता, आते हैं।

(3) सम्पूर्ण सदन सूची (Calendar of the Whole House)—इसमें वे विधेयक रखे जाते हैं जो स्थानीय विषय व निजी निगमों आदि से सम्बन्धित होते हैं, अर्थात सार्वजनिक या सम्पूर्ण राष्ट्रीय हितों से सम्बन्धित नहीं होते।

4 सहमति सूची (Consent Calendar)—जिन विधेयकों में कोई विरोध नहीं होता उनको किसी भी सूची से निकाल कर इस सूची में रखा जा सकता है अर्थात जो विधेयक राष्ट्रीय महत्व के होते हैं और जिन्हें सर्वसम्मति से पारित किया जाना होता है, वे इसमें आते हैं।

(5) निवर्तन सूची (Discharge Calendar)—इसमें वे विधेयक रखे जाते हैं जिन्हें सदन के बहुमत द्वारा समितियों के पास से निकाला जाता है। यदि कोई विधेयक समिति के पास 30 दिन तक रहा हो तो उसका प्रस्तावक सदन के बहुमत से उस विधेयक को समिति के पास से निकाल सकता है।

द्वितीय वाचन

विधेयकों का वर्गीकरण होकर और उन्हें उचित सूची में रखे जाने के बाद नियत दिनांक को सदन उन पर विचार करता है। इसके लिए सदन सम्पूर्ण सदन की समिति (Committee of the Whole House) के रूप में परिवर्तित हो जाती है और अध्यक्ष (Speaker) उठ जाता है। ऐसा प्रत्येक विधेयक के विषय में होता है। सम्पूर्ण सदन की समिति विधेयक के सिद्धान्तों व स्वरूप पर पूरी तरह विचार करती है। इस द्वितीय वाचन की अवस्था में सदस्यगण विधेयक के पक्ष और विपक्ष में बोलते हैं और उसमें संशोधन के सुझाव रख सकते हैं। प्रतिनिधि सभा में प्रत्येक सदस्य को बोलने का एक बार अवसर दिया जाता है और कोई भी सदस्य एक विधेयक पर एक घण्टे से अधिक नहीं बोल सकता है। सीनेट में इस प्रकार का कोई प्रबन्ध नहीं है। वहाँ कोई भी सदस्य कितनी ही बार व कितने ही समय तक बोल सकता है। विधेयक का वास्तविक विवेचन और परीक्षा इस द्वितीय वाचन के समय ही होता है।

विधेयक के द्वितीय वाचन के विषय में भी अमरिकन व ब्रिटिश व्यवस्थापन प्रणाली में अन्तर है—(i) अमरिका में द्वितीय वाचन से पूर्व समिति अवस्था आती है जबकि ब्रिटेन में द्वितीय वाचन के बाद, (ii) ब्रिटेन में द्वितीय वाचन में विधेयक के सिद्धान्त स्वीकार किये जाते हैं और तत्पश्चात् केवल उनका रूप ठीक करने के

लिए उसे समिति को सौंपा जाता है, किन्तु अमेरिका मे प्रथम वाचन के उपरात ही विधेयक को समिति को सौंप दिया जाता है जिसे विधेयक के सिद्धान्तो और रूप म भी परिवर्तित करने का अधिकार होता है। (iii) अमेरिका की तरह ब्रिटेन मे कलेण्डर व्यवस्था नही है, (iv) अमेरिका मे प्रस्तावित होने के उपरात बजट प्रतिनिधि सभा की उपाय व साधन समिति (Ways and Means Committee) मे विचार के लिए भी चला जाता है जबकि ब्रिटन म लोकसभा ही सम्पूर्ण सदन की समिति (Committee of the Whole House) के रूप मे बजट पर विचार प्रस्तुत करती है, (v) ब्रिटेन मे ससद के निचले सदन अर्थात लोकसभा के सदस्यो पर भाषण सम्बन्धी कोई प्रतिबन्ध नही है जबकि अमेरिकन काग्रेस के निचले सदन प्रतिनिधि सभा के सदस्यो का भाषण सम्बन्धी वह स्वतन्त्रता प्राप्त नही है, जो ऊपरी सदन (Senate) के सदस्यो को प्राप्त है, एव (vi) ब्रिटेन मे द्वितीय वाचन में विधेयक के सिद्धान्तो पर ही विचार होता है, जबकि अमेरिका में केवल विधेयक के सिद्धान्तो वलिक उसके रूप पर भी पूर्ण विचार होता है।

तृतीय वाचन

विधेयक के जीवन का छठा स्तर ततीय वाचन का होना है। यह वाचन केवल औपचारिक होता है। विधेयक के सिद्धान्त पर केवल मोटे रूप से ही विचार किया जाता है। उसकी धाराओ, उपधाराओ, वाक्यो और शब्दो पर कोई विचार नहीं किया जाता। यदि कोई सदस्य विधेयक के पूरे पढे जाने की माग न करे तो केवल विधेयक का शीर्षक (Title) ही पढ दिया जाता है। इसके बाद अध्यक्ष सदन का अन्तिम निर्णय लेता है। इसकी चार रीतियां हैं--मौलिक मतदान, खड़े होकर, गणको द्वारा, एव 'हा' या 'ना' द्वारा।

ब्रिटन व अमरिका मे व्यवस्थापन प्रणाली का ततीय वाचन लगभग एक सा है, केवल मतदान के ढगो के विषय म अन्तर है। ब्रिटेन म मतदान प्राय गणको के द्वारा अथवा खडे होकर होता है। अमरिका मे खड होकर व 'हा' या 'ना' वाले ढग का अधिक प्रयोग किया जाता है।

विधेयक दूसरे सदन मे

विधेयक के जीवन का सातवा चरण वह है जब तृतीय वाचन के बाद विधेयक दूसर सदन मे भेजा जाता है। दूसर सदन म भी विधेयक को प्राय उन्हीं अवस्थाओ से गुजरना पडता है, जिन अवस्थाओ म उसे पहले वाले सदन म गुजरना पडा था। दूसरा सदन विधेयक को पहले वाले सदन को पुन विचारार्थ लौटा सकता है और उसे किसी समिति को भेज सकता है, जहा विधेयक पूर्णत समाप्त भी हो सकता है।

यदि किसी विधेयक के सम्बन्ध म दोनो सदनो म गत्यावरोध या अवरोध पैदा हो जाए तो एक सम्मेलन समिति (Conference Committee) बनाई जाती है

जिमम दाना मदना क वरावर वरावर प्रतिनिधि हान है। यह समिति विवाद ग्रस्त विषया पर गुप्त रूप म वाद विवाद करती है और ममाधान करने क उपाया पर विचार करती है। यदि ममिति समाधान करन म मफल रहती है तो उमक सदस्य अपन अपन सदनो के समक्ष उम प्रस्तुत करत ह। यदि प्रत्यक सदन समिति द्वारा प्रस्तावित सुझावा का स्वीकार कर लता है, ता विधयक दाना सदना द्वारा स्वीकृत मान लिया जाता है। किन्तु यदि ये सुझाव स्वीकृत नहा हाते हैं ता विधयक का वहीं अन्त हो जाता है। यह भी सम्भव है कि यदि सम्मलन-समिति निश्चित हल ज्ञात न कर सक तो एसी दशा म भी विधयक का अन्त हो जाए।

इस सम्बन्ध म ब्रिटिश व अमरिकन प्रणाली म भिन्नता है। अमरिका म कोई भी विधेयक दोना सदना के मतक्य के विना पारित नहा हो सकता, जबकि ब्रिटेन म दाना सदना क मतभद की अवस्था में लाड सभा वित्त विधयका को अधिक से अधिक एक माह तक और अन्य विधयको का अधिक स अधिक एक साल के लिये रोक सकती है। वहा विधयका के पारित होने म अन्तिम शब्द लोकसभा का होता है, लाड सभा इस दृष्टि स असहाय है।

विधयक राष्ट्रपति के समक्ष

दोना मदना की स्वीकृति के पश्चात विधेयक का राष्ट्रपति के हस्ताक्षरो क लिए भेज दिया जाता है और उसकी स्वीकृति मिल जाने पर वह अधिनियम का रूप धारण कर लेता है। विधयक के सम्बन्ध म राष्ट्रपति के पास तीन विकल्प हाते हैं– पहला विकल्प यह है कि वह 10 दिन के भीतर विधयक पर अपनी स्वीकृति दे दे। दूसरा विकल्प यह है कि वह विधेयक का अस्वीकार करद और कारण बताते हुए उसे काग्रेस का पुन विचाराथ लौटा दे। विधेयक उसी सदन को लौटाया जाता है, जिसन उस प्रारम्भ किया था। किन्तु यदि काग्रेस के दाना सदन अपन दो तिहाई बहुमत से विधयक का पुन स्वीकृत कर दें ता राष्ट्रपति को उसे आवश्यक रूप से स्वीकार करना पडता है। इस प्रकार राष्ट्रपति को विधेयक की स्वीकृति के विषय म अन्तिम रूप स केवल विलम्ब करन का निषधाधिकार प्राप्त है। तीसरा विकल्प यह है कि राष्ट्रपति तटस्थ रहन क उद्देश्य से विधेयक पर न तो हस्ताक्षर करता है और न उस लौटाता ही है। ऐसी दशा म विधयक स्वत स्वीकृत मान लिया जाता है और कानून बन जाता है। यह उल्लेखनीय है कि यदि राष्ट्रपति विधयक को न लौटाये और 10 दिना के अन्दर काग्रेस का अधिवेशन समाप्त हा जाए, ता वह विधयक राष्ट्रपति द्वारा विना अस्वीकार किए हुए ही अस्वीकृत हा जाता है। इस राष्ट्रपति का जेबी निषधाधिकार (Pocket Veto) कहा जाता है। यह अधिकार वैधानिक न होकर केवल परम्परागत है।

काग्रेस के अधिवशन की समाप्ति के वाद सभी कानूना, प्रस्तावा, सधियों आदि का सविधि पुस्तक (Statute Book) म सगृहीत कर दिया जाता है। राज्य सचिव (Secretary of State) विधियो को घोषित करता है।

उल्लेखनीय है कि ब्रिटेन मे ससद द्वारा पारित विधेयको को सम्राट की स्वीकृति मिल ही जाती है। उसका निषेधाधिकार केवल नाम मात्र को ही है जबकि अमेरिकन राष्ट्रपति का निषेधाधिकार वास्तविक है और वह उसका प्रयोग भी बहुत अधिक करता है।

अमेरिका की समिति प्रणाली
(Committee System in the U S A)

आधुनिक विधि निर्माण म गति और सुचारुता लाने के लिए समितिया का प्रयोग कितना अधिक होने लगा है, कहने की आवश्यकता नहीं। अन्य देशो की व्यवस्थापिकाओ के समान ही अमेरिकन कांग्रेस मे भी समिति व्यवस्था का अपना विशेष महत्व है। अमरिकन समितियो की शक्ति ब्रिटन की समितियो से अधिक है क्योकि अमेरिका म अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली है, जहा कार्यपालिका और कांग्रेस का प्रत्यक्ष सम्बन्ध न होने से व्यवस्थापन का पूरा दायित्व कांग्रेस के सदस्यो पर ही है और कांग्रेस की समितियो को ही अधिकाशत यह दायित्व निभाना पडता है। दूसरे शब्दो मे, व्यवस्थापन के सम्बन्ध मे जो काय मन्त्रिमण्डल करता है, अमेरिका मे वही काय समितिया करती है।

कांग्रेस मे समितिया काय व गठन

अमरिकन कांग्रेस के प्रतिनिधि सभा और सीनेट दानो सदनो मे पृथक्-पृथक् रूप से समितिया की व्यवस्था की गई है। इन समितियो की नियुक्ति सदन स्वय करता है। उनमे बहुमत दल और अल्पमत दल दोनो के ही सदस्य होते हैं। समितिया के बारे म सविधान म कोई उल्लेख नही है। इनकी उत्पत्ति और इसका विकास आवश्यकताओ का परिणाम है। अमेरिका मे प्राय निम्नलिखित महत्वपूर्ण समितिया पायी जाती है—

1 स्थाई समितिया (Standing Committees)
2 नियम समिति (Committe of Rules)
3 प्रवर समितिया (Select Committees)
4 सम्पूर्ण सदन की समिति (Committee of the Whole Hou e)
5 सम्मेलन समिति (Cenference Committees) एव
6 सयुक्त समितिया (Joint Committees)।

स्थाई समितियाँ—इनका अमरिकन समिति व्यवस्था म अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। ब्रिटन की तुलना म ये सख्या मे अधिक हैं, किन्तु इनम सदस्य सख्या अपेक्षाकृत कम है। साधारणत इनमें 12 स लेकर 30 तक सदस्य होते हैं यद्यपि कुछ समितिया म सख्या कभी-कभी 50 तक रही है। स्थाई समितिया की नियुक्ति सदन स्वय करता है पर वास्तव में निणय राजनीतिक दल अपनी शक्ति के आधार पर करते हैं। सदन तो केवल अनुमोदन करता है। इन समितिया के सभापति बहु-

मत दल के प्रमुख नेता होते हैं। सन 1946 तक अमेरिकन स्थाई समितियों की संख्या 47 थी पर 1946 के विधायी पुनर्गठन द्वारा इनकी संख्या प्रतिनिधि सभा में 19 तथा सीनेट में 15 कर दी गई है। प्रत्येक स्थाई समिति अपने-अपने सदन में व्यवस्थापन के निश्चित विभाग की देख रेख करती है। अनेक समितियां उप समितियों से भी काम लेती हैं जिनमें से कुछ स्थाई होती हैं। प्रतिनिधि सभा और सीनेट की समितियों का नामकरण लगभग समान है।

अमेरिकन कांग्रेस की यह स्थाई समितियां व्यवस्थापन क्षेत्र में बहुत ही महत्वपूर्ण काम करती है। कांग्रेस के दोनों सदनों में विगत वर्षों में लगभग 10 हजार से 15 हजार के बीच विधयक प्रस्तुत किए जाते रहे हैं और इन सारे विधेयकों पर विचार करना कांग्रेस के लिए कठिन ही नहीं, असंभव सा है। इतने भारी बोझे को हल्का करना इन स्थाई समितियों का ही काय है। ये ही कांग्रेस का अधिकांश व्यवस्थापन काम करती हैं।

नियम समिति (Committee of Rules)—इस महत्वपूर्ण समिति में लगभग 12 सदस्य होते हैं। इसका मुख्य काय कांग्रेस की काय विधि के सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार के नियमों का निर्माण करना होता है। सत्र के प्रत्येक सत्रकाल के प्रारम्भ में यह काय विधि सम्बन्धी नियमों का प्रस्तावित करती है। सदन को अध्यक्ष को यह अधिकार होता है कि विशेष परिस्थितियों में वह उन नियमों को न भी माने। ये नियम प्रत्येक नए सदन के निर्माण के साथ प्राय बदल जाते हैं।

नियम समिति ही विधेयकों के छांटने का काम करती है और यह निर्णय भी लेती है कि कौनसा विधयक विचार विमर्श के लिए प्रस्तुत किया जाय। समितियों द्वारा प्रतिवेदन या रिपोर्ट किए गए विधेयकों को नियम समिति के पास भेजा जाता है। यह समिति जिन विधयकों को महत्वपूर्ण ठहरा देती है उन पर सदन आसानी से विचार कर लेता है। इस प्रकार यह समिति सदन और स्थायी समितियों के बीच मध्यस्थता का काय करती है। इसके पास विधेयकों को विलम्ब में डालने की शक्ति भी है। इसे अधिकार है कि महत्वपूर्ण काय के लिए समय समय पर यह सदन के कार्यों में हस्तक्षेप करे और आवश्यक होने पर नियम को आड लेकर नए प्रस्ताव प्रस्तुत करे। वाग एवं रे ने लिखा है कि "यह स्वयं ही किसी विधयक को प्रस्तुत कर सकता है और दूसरे दिन ही सदन की कार्यवाही के लिए उसे रख सकती है तथा विषय समिति के पास बिना भेजे हुए ही उस पास तक करवा सकती है।'

प्रवर या विशिष्ट समितियां (Select Committees)—इन समितियों की नियुक्ति समय समय पर किसी विशेष उद्देश्य से की जाती है और सदस्यों की नियुक्ति सदन का अध्यक्ष करता है। अपना काम पूरा करते ही ये समाप्त हो जाती हैं। इनकी सदस्य संख्या निश्चित नहीं है।

सम्पूर्ण सदन की समिति (Committee of the Whole House)—यह समिति वित्त विधेयको सहित अन्य महत्वपूर्ण एव विवादग्रस्त विषयो पर विचार विमर्श करती है। यह समिति वस्तुत सदन के सब सदस्यो की होती है। जब कोई सदस्य ऐसी समिति के लिये प्रस्ताव रखता है तो सदन समिति का रूप धारण कर लेता है। सदन और समिति म अन्तर केवल इतना ही होता है कि सदन की बैठक मे सदन का अध्यक्ष सभापतित्व करता है जब कि समिति की बैठक मे वह नही बैठता। उसके स्थान पर समिति के द्वारा चुना हुआ कोई व्यक्ति सभापतित्व करता है। मेस (Mace) जो अध्यक्ष का अधिकार चिन्ह होता है, मेज के नीचे रख दिया जाता है। सम्पूर्ण सदन समिति की गणपूर्ति के लिए केवल 100 सदस्यो का होना आवश्यक है। इसम भाषण की सीमा केवल पाच मिनिट प्रति व्यक्ति प्रति विधेयक निर्धारित होती है जब कि सदन की बैठक म एक विधेयक पर एक व्यक्ति एक घट तक बोल सकता है। सम्पूर्ण सदन समिति का प्रयोग अधिकाशत प्रतिनिधि सभा म ही होता है, सीनेट उसका प्रयोग बहुत ही कम करती है।

सम्मेलन समिति (Conference Committee)—इस समिति का निर्माण उस समय किया जाता है जब किसी विधेयक पर काग्रेस के दोनो सदनो मे मतभेद होता है। इस समिति म दोनो सदनो म से बराबर बराबर सख्या म सदस्य लिये जाते है—प्राय तीन तीन सदस्य, किन्तु विशेष दशा म पाच पाच सदस्य भी लिये जाते है। ये सभी सदस्य मिलकर मतभेद सुलझाने का प्रयत्न करते है। मतभेद को सुलझाने के अपने प्रयत्नो की समाप्ति के बाद सम्मेलन समिति स्वय ही समाप्त हो जाती है। समिति की बैठकें गुप्त होती है और इसकी कार्यवाही का कोई लेखा नही रखा जाता। सैद्धान्तिक रूप से समिति विधेयको के केवल विवादग्रस्त भागो पर ही विचार करती है, परन्तु व्यवहार म अन्य भागो पर भी विचार करके यह इस बात का प्रयत्न करती है कि दोनो सदनो के मतभेद किसी प्रकार समाप्त हो जाय। सम्मेलन समिति म प्रत्येक सदन एक इकाई के रूप मे मत देता है। सदस्यो को अपने-अपने सदनो से भी आदेश दिये जा सकते है। प्राय सीनेट के सदस्य ही जो परिपक्व राजनीतिज्ञ होते है और जिन्हे ससदीय अनुभव होता है, अन्त मे सफल होते हैं।

सयुक्त समितिया (Joint Committees)—ऐसे विषयो की जाच के लिये जिनम सयुक्त कार्यवाही की आवश्यकता हो या जिन पर दोनो सदनो का समवर्ती अधिकार क्षेत्र हो, उनको तय करने के लिए काग्रेस द्वारा सयुक्त समितियो का निर्माण किया जाता है। कार्य की समाप्ति पर ये समितिया भी समाप्त हो जाती हैं।

सचालन समिति (Steering Committee)—अमेरिका मे कार्यपालिका और व्यवस्थापिका का पृथक्करण होने से ब्रिटेन की तरह मन्त्रिमण्डल विधि निर्माण

कुछ भाग नही करता । 'अत' प्रेहा पर सचालन समिति का निमाण किया जाता है जिसका काय वहुमत दल की तरफ स विधि निमाण के काय का करना होता है। इस समिति का चयन सदन क वहुमत दल द्वारा अपन दल के सदस्यो म स किया जाता है और सदन के वहुमत दल का नेता इसका अध्यक्ष होता है। वहुमत दल की ओर से यही समिति विधेयको को सदन म प्रस्तुत करती है और अपने दल के समथन के बल पर उन्हे सदन म पारित भी करती है।

मूल्याकन -

... समितियो के महत्व को दर्शाते हुए अध्यक्ष Thomas B Reed का मत है कि "समितिया सदन की आख कान हाथ और कभी-कभी वुद्धि का काय भी करती है।' राष्ट्रपति विल्सन न समितियो को 'लघु व्यवस्थापिकाए (Little Legislatures) कहा है।

अमरिका की समिति व्यवस्था पर्याप्त प्रभावशाली होते हुए भी कुछ प्रमुख दोष लिये है--(i) एक समिति के काय और दूसरी समिति के काय के बीच प्राय सामजस्य नही होता। अत समितियो द्वारा एक ही विषय पर अपने कानूनो मे परस्पर सघष, विरोध तथा भ्रम फलन की गु जाइश रहती है। (ii) समितिया सदन के सब मतो का प्रतिनिधित्व नही करती। यद्यपि सभी समितिया प्राय द्वि दलीय होती ह किन्तु वे बहुधा विशिष्ट हितो की साधना करने वाली बन जाती है। (iii) अनेक समितिया प्राय निष्क्रिय रहती ह। उनके पास बहुधा कोई कार्य नही रहता।

समितियों का अध्यक्ष

अमरीका म समितियो के अध्यक्ष का पद विशेष महत्व का होता है। वह ज्येष्ठता के आधार पर समिति का अध्यक्ष बनता है और समिति की बैठक बुलाने तथा समिति के विभिन्न कमचारियो क चयन की कायवाही करता है। समिति के अन्तगत नियुक्त की जाने वाली उप समितियो के सदस्यो की भी नियुक्ति उसी के हाथ म है। सदन म वही विधेयको का सचालन करता है। यद्यपि सद्धान्तिक रूप में समिति को यह अधिकार है कि वह अध्यक्ष द्वारा शक्ति प्रयोग पर नियन्त्रण रखे, लेकिन व्यवहार म बहुत कम समितिया ही ऐसी ह जो अपने अध्यक्ष पर नियन्त्रण रख पाती हैं। समितियो के अध्यक्ष न केवल अपनी अपनी समितियो और अपनी-अपनी शक्तियो का स्वतन्त्र प्रयोग करते हैं बल्कि व परस्पर एक दूसरे से स्वतन्त्र रहते हुए काय करते हैं, व लाभप्रद और समतावद्ध कानूनो को स्वीकार करने के लिये परस्पर कोई सम्पक नही करते और एक मत होने का कोई प्रयास नही करते। उनम एक सहकारी सस्थान के रूप म काय करने का किसी प्रकार का विचार नही होता। इसके अतिरिक्त व निष्पक्षता का कोई ध्यान न रखते हुए पूणत अपने दलीय हितो की साधना व निहित स्वार्थो की पूर्ति म लगे रहते हैं।

ब्रिटिश व अमेरिकन समिति व्यवस्था पर एक तुलनात्मक दृष्टि

(1) स्थायी समितियो की सख्या ब्रिटेन और अमेरिका में भिन्न भिन्न है। ब्रिटेन म स्थायी समितियां लोकसभा म केवल 5 हैं, जबकि अमेरिका म प्रतिनिधि सभा में इनकी सख्या 10 तक है। समितियो के सदस्यो की सख्या म भी दोनो देशो म अन्तर पाया जाता है। ब्रिटिश समितियो के सदस्यो की सख्या प्राय 20 से 30 तक होती है और आवश्यकतानुसार अस्थायी सदस्य सम्मिलित होकर उनकी सख्या 30 से 50 तक हो जाती है। पर तु अमेरिका म यह सदस्य सख्या प्राय 30 से अधिक नही हो पाती। हा, कुछ विशेष अवस्थाओ मे अवश्य बढ जाती है। ब्रिटेन की तरह अमेरिका म अतिरिक्त सदस्यो को लेने की व्यवस्था नही है। अमेरिकन समितियो म केवल नियमित सदस्य ही रहते है।

(2) ब्रिटेन म जहा सभी स्थायी समितिया सदैव क्रियाशील रहती ह, वहा अमेरिका म केवल कुछ ही स्थायी समितिया कार्यशील रह पाती ह। 12 से लेकर 15 तक समितिया तो इस प्रकार की हैं कि जिनके पास प्राय कोई कार्य नही रहता।

(3) ब्रिटेन की लोकसभा म विभिन्न समितियो का चुनाव "चयन समिति (Selection Committee) के द्वारा होता है, जबकि अमेरिका म दलो के नेता समितियो के लिए एक समिति को चुनते हैं और यह समिति विभिन्न दलो के सदस्यो को चुनती है। इसके अलावा समितियो मे सदस्य-सख्या सदन के दलो के सदस्यो की सख्या के अनुपात मे होती है। परन्तु यह समानता अवश्य है कि दोनो ही जगह सिद्धान्तत सदन ही समितियो का निर्माण करते हैं।

(4) अमेरिका म स्थायी समितियो के निर्माण के आधार विषय होते ह और उसी विषय के अनुसार, जिसे वह समिति निपटाती है, उसका नामाकन किया जाता है। पर तु ब्रिटेन मे समितियो का निर्माण विषयवार नही होता। वहा किसी भी समिति म कोई भी विधेयक भेजा जा सकता है। इसके अतिरिक्त वहा वर्णमाला के क्रमानुसार समितियो का नाम 'ए', 'बी', 'सी', 'डी' आदि रख दिया जाता है।

(5) ब्रिटिश समितियो म सदस्यो की ज्येष्ठता या वरिष्ठता (Seniority) पर इतना विचार नही होता, जितना अमेरिका म। यही नही, समिति के अध्यक्ष की नियुक्ति भी दोनो देशो म भिन्न प्रकार से की जाती है। अमेरिका म समिति के अध्यक्ष की नियुक्ति बहुमत दल की वही एजेन्सी करती है जो समिति के बहुमत दल के सदस्यो की सूची बनाती है। इसके विपरीत ब्रिटेन म यह काम चयन समिति करती है। वह कुछ नियुक्तियो का एक पैनल (Panel) बना देती है और वे लोग मिलकर अपने म से अध्यक्ष चुनते ह। ब्रिटेन म सदस्यो की व्यक्तिगत योग्यताओ को ही महत्व दिया जाता है न कि ज्येष्ठता को। ब्रिटिश समितियो के अध्यक्ष निष्पक्ष

होकर काय करते है, अत वहा यह आवश्यक नही होता कि समिति का अध्यक्ष बहुमत दल का ही हो।

(6) अमरिका मे समितियो का स्थान व्यवस्थापन क्षेत्र मे बहुत ही महत्वपूर्ण है। उन्हे विधेयका का अन्त करने तक का अधिकार है यह भी आवश्यक नही है कि वे विधेयक की रिपोट सदन को दें। ब्रिटन म समितिया विधेयक के साथ जीवन और मौत का खेल नही खल सकती। उनके लिये यह भी जरूरी है कि वे सदन को प्रत्येक विधेयक की रिपोट दें।

(7) अमरिका मे समितिया का स्वय हो उप समितिया (Sub Commitees) बनान का अधिकार है, परन्तु ब्रिटन मे समितिया एसा नहीं कर सकती।

(8) अमरिका के समान ब्रिटन म कोई सम्मेलन समिति, नियम समिति और सचालन समिति नही पाई जाती दूसरी ओर, ब्रिटन की तरह सत्रीय समितिया और व्यक्तिगत विधयक समितिया (Sessional Commiteees and Private Bills Committees) अमेरिका म नही पाई जाती।

(9) ब्रिटन म लोकसभा की समितियो के अध्यक्षो को विशष प्रसिद्धि प्राप्त नही होती, क्योकि राजनीतिक दृष्टि से वे तटस्थ होते ह। इसके विपरीत अमरिका म समितिया क अध्यक्ष दलगत राजनीति म फसे रहते ह और उन्हें इतनी प्रमुखता प्राप्त होती है कि महत्वपूण विधयको के नाम तक समितिया के अध्यक्षा के नामो पर रख दिय जाते ह।

(10) ब्रिटन म सरकारी विधयक, गर सरकारी विधयक एवम गर सरकारी सदस्या के विधयक पथक–पथक समितिया में भज जाते ह। परन्तु अमरिका में गर सरकारी और सरकारी विधयका के मध्य इस प्रकार का कोई अन्तर नही है। वहा सरकारी विधयक भी गर सरकारी सदस्या द्वारा प्रस्तावित किय जाते ह।

इस तुलनात्मक विवरण से स्पष्ट है कि अमेरिका में ब्रिटेन की अपक्षा समितिया की शक्ति बहुत अधिक है। व एक प्रकार से विधायिनी शक्ति के यत्र में तत्र का काम करती है। यह कहना युक्तियुक्त है कि ब्रिटेन में विधि निर्माण सम्बन्धी नतत्व कायपालिका को प्राप्त है, जबकि अमेरिका में विभिन्न समितिया का।



राष्ट्रपति
(THE PRESIDENT)

"एक बार प्रकट की गई यह शंका कि राष्ट्रपति 'निरंकुश शासक' हो जाएगा, निर्मूल सिद्ध हो गई है। राष्ट्रीय मस्तिष्क में अमेरिका की सरकार के सिद्धान्तों की जड़ें इतनी गहराई तक पहुँच गई हैं कि उनके उल्लंघन करने का प्रयत्न करते ही देश में असंतोष का तूफान उठ खड़ा होगा।"

—ब्राइस

संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति का पद, विश्व की कार्यपालिकाओं में शक्ति और सम्मान की दृष्टि से अत्यन्त महत्व और प्रभाव का पद माना जाता है। ब्रिटिश प्रधानमन्त्री देश का वास्तविक शासक ही है, संवैधानिक नहीं। परन्तु अमेरिका के राष्ट्रपति में ये दोनों ही बातें हैं।

योग्यतायें, पदावधि, वेतन, पदच्युति आदि

संविधान में राष्ट्रपति पद की योग्यताओं का उल्लेख इस प्रकार है—(क) वह संयुक्त राज्य अमेरिका का जन्मजात नागरिक हो, (ख) ३५ वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो, एवम् (ग) कम से कम १४ वर्ष तक अमेरिका में रह चुका हो। इन सांविधानिक योग्यताओं के अतिरिक्त राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार का व्यावहारिक रूप से निर्धारण राजनीतिक दल करते हैं। वे ऐसे व्यक्ति को ही छाँटते हैं जो अधिकाधिक मतदाताओं को अपने पक्ष में करने में सफल हो सके।

संविधान के अनुसार राष्ट्रपति का कार्यकाल ४ वर्ष है। इस अवधि में वह स्वयं त्यागपत्र देकर अथवा मृत्यु हो जाने पर अथवा महाभियोग द्वारा ही अपने पद से पृथक हो सकता है या किया जा सकता है। महाभियोग प्रतिनिधि सभा के बहुमत के प्रस्ताव से चलाया जाता है और उसकी सुनवाई सीनेट द्वारा होती है। सुनवाई के समय सीनेट की अध्यक्षता सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश करता है। दो-तिहाई बहुमत से सीनेट राष्ट्रपति को अपराधी घोषित कर सकता है। अब तक किसी भी राष्ट्रपति के विरुद्ध महाभियोग सिद्ध नहीं किया जा सका है। यह अभियोग देशद्रोह, घूसखोरी अथवा अन्य गम्भीर अपराधों के कारण ही लगाया जा सकता है।

संविधान में राष्ट्रपति पद पर एक ही व्यक्ति के पुनर्निर्वाचन के सम्बन्ध में प्रारम्भ में कुछ नहीं कहा गया था। अब १९५१ के एक संशोधन के अनुसार यह व्यवस्था कर दी गई है कि कोई भी व्यक्ति राष्ट्रपति दो बार से अधिक नहीं हो सकता। राष्ट्रपति का कार्यकाल ३६६ दिन वाले वर्ष के पश्चात् आने वाले वर्ष की २० जनवरी की दोपहर को समाप्त होता है।

राष्ट्रपति के वेतन भत्ता आदि के सम्बन्ध में संविधान मौन है। इनका निश्चय कांग्रेस ही करती है जिसे राष्ट्रपति के कार्यकाल में घटाया या बढ़ाया नहीं जा सकता। १९४९ से अमरिकन राष्ट्रपति को १ लाख डालर वार्षिक वेतन दिया जाता है। अन्य खर्चों के लिये ५० हजार डालर वार्षिक और मिलता है जिस पर आय-कर नहीं लगता। रहने के लिए १७ एकड़ भूमि पर घिरे हुए "व्हाइट हाउस" (White House) नामक सुन्दर भवन मिला हुआ है। इनके अतिरिक्त राष्ट्रपति को और भी विपुल सुविधायें मिली हुई हैं। अगस्त १९५८ के एक विधेयक के अनुसार भूतपूर्व राष्ट्रपतियों को और उनकी विधवाओं को पेंशन की व्यवस्था कर दी गई है।

राष्ट्रपति देश के प्रधान के रूप में कहीं भी आ जा सकता है। किसी भी अपराध के लिए उसे गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है और किसी भी न्यायालय में उस पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। केवल महाभियोग ही एक अपवाद है। इसे चलाने का अधिकार भी केवल कांग्रेस को ही प्राप्त है।

उत्तराधिकार के सम्बन्ध में व्यवस्था यह है कि राष्ट्रपति का पद रिक्त हो जाने पर उप राष्ट्रपति उत्तराधिकारी होता है और यदि दोनों ही नहीं हों तो कांग्रेस ही निर्णय करती है कि कौन अधिकारी राष्ट्रपति पद पर कार्य करेगा। १९४७ में राष्ट्रपति और उप राष्ट्रपति के उत्तराधिकार का एक नया क्रम कांग्रेस द्वारा निर्धारित कर दिया गया है।

राष्ट्रपति का निर्वाचन
(Election of the President)

राष्ट्रपति का निर्वाचन आज अमरिका के राजनीतिक जीवन की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण बात बन गई है। संविधान निर्माताओं ने यह कभी नहीं चाहा था कि राष्ट्रपति का निर्वाचन एक ऐसा जटिल और खर्चीला कार्य हो जिससे सम्पूर्ण देश में उथल-पुथल मच जाए। उन्होंने यह कल्पना भी नहीं की थी कि करोड़ों मतदाता अमरिकन राष्ट्रपति को चुनने का निर्णय करेंगे। वास्तव में अमेरिकन संविधान निर्माताओं को दो बातों का विशेष भय था—पहला भय यह था कि यदि राष्ट्रपति कांग्रेस के सदस्यों द्वारा निर्वाचित किया गया तो उस पर कांग्रेस का प्रभुत्व बना रहेगा और दूसरा भय यह था कि यदि राष्ट्रपति को जनता प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित करेगी तो इस बात की सम्भावना रहेगी कि उत्साही राजनीतिज्ञ (Demagogues) इस पद पर पहुंच जाए। अतः इन दोनों ही भयों

से मुक्त रहने के लिए संविधान-निर्माताओं ने राष्ट्रपति पद को भरने के लिए दोनों में से किसी भी रीति को न अपनाकर एक ऐसी रीति अपनाई जो गड़बड़ और दुर्व्यवस्था का यथासम्भव कम से कम मौका दे। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए संविधान निर्माताओं ने संविधान में राष्ट्रपति की जो निर्वाचन पद्धति दी वह इस प्रकार है—

"प्रत्येक राज्य अपनी व्यवस्थापिका के आदेशानुसार कुछ निर्वाचक चुने और उन निर्वाचकों की संख्या उस राज्य की सीनेट तथा प्रतिनिधि सभा के प्रतिनिधियों के बराबर होगी। समय आने पर निर्वाचक अपने अपने राज्य में एक स्थान पर एकत्र हों और लिखित रूप में अपने वोट दो व्यक्तियों को दें जिनमें कम से कम एक उस राज्य का निवासी न हो जिस राज्य की ओर से वे नियुक्त हुए हैं। इसके बाद वोटों को सन्दूक में मोहर लगाकर सीनेट के अध्यक्ष के पास भेज दिया जाये जो कांग्रेस के दोनों सदनों की उपस्थिति में उनको गिने और परिणाम की घोषणा करे। जिस व्यक्ति को सबसे अधिक वोट प्राप्त हुए हों वही राष्ट्रपति बने बशर्ते कि वह सब व्यक्तियों में से पूर्ण बहुमत से निर्वाचित हो। उससे कम वोट पाने वाला व्यक्ति उसी प्रकार बहुमत पाने पर उप राष्ट्रपति बने।" यह भी व्यवस्था की गई है कि मत-गणना के परिणामस्वरूप यदि किसी भी प्रत्याशी को आवश्यक बहुमत प्राप्त न हो तो राष्ट्रपति के निर्वाचन का प्रश्न प्रतिनिधि सभा को भेज दिया जाये जो सबसे अधिक मत पाने वाले उन तीन प्रत्याशियों में से राष्ट्रपति का चयन करें जिनके नाम सीनेट के अध्यक्ष द्वारा उसके पास भेजे जाए। प्रतिनिधि सभा इस प्रकार जब राष्ट्रपति का चुनाव करे तो सभा के सदस्य राज्यवार मतदान करें और उनके मतों की गणना "एक राज्य एक मत" के आधार पर हो। उप राष्ट्रपति के विषय में आवश्यकता पड़ने पर ऐसा ही सीनेट में किया जाये।

अमेरिकन संविधान निर्माताओं ने 'हुल्लड़ और अव्यवस्था (Tumult and disorder) को टालने की दृष्टि से निर्वाचकगण (Electoral Club) की पद्धति को अपनाकर अप्रत्यक्ष निर्वाचन (Indirect election) की व्यवस्था की। प्रथम दो निर्वाचन संवैधानिक उपबन्ध के वास्तविक अर्थ के अनुकूल सम्पन्न हुए, लेकिन तृतीय निर्वाचन (१७९६ ई०) में कुछ तथा चौथे निर्वाचन (१८०० ई०) के समय स्पष्ट परिवर्तन हो गये और आज तो व्यवहार में राष्ट्रपति का निर्वाचन अप्रत्यक्ष निर्वाचन रहा ही नहीं है। ग्रिफिथ (Griffith) के कथनानुसार, "राष्ट्रपति का निर्वाचन अब 'प्रथाओं' का एक ऐसा ढांचा बन गया है जिसका संविधान में कोई सम्बन्ध नहीं है, पर जिसके कारण मूल उद्देश्य बहुत कुछ बदल गया है।"

राष्ट्रपति का निर्वाचन आज केवल सिद्धान्ततः अप्रत्यक्ष है, अन्यथा व्यवहार में वह पूर्णतः प्रत्यक्ष निर्वाचन (Direct election) बन गया है क्योंकि राष्ट्रपति पद के निर्वाचक मंडल के सदस्यों का चुनाव अब राज्यों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा न होकर सीधे जनता द्वारा होता है और जनता जिस दल के व्यक्तियों को राष्ट्रपति

पद के निर्वाचक मडल के लिए चुन देती है, उसी दल का प्रत्याशी राष्ट्रपति बनता है। वर्तमान समय मे देश मे दो शक्तिशाली राजनीतिक दल विद्यमान हैं। ये दोनो ही दल राष्ट्रपति पद के लिए अपने-अपने प्रत्याशी खडे करते हैं और जनता निर्वाचक मडल के सदस्य को चुनकर ही प्राय यह निश्चित कर देती है कि किस दल का प्रत्याशी राष्ट्रपति होगा।

वर्तमान मे व्यवहार मे राष्ट्रपति का निर्वाचन निम्न रीति से होता है—

(1) प्रत्याशियो का नामाकन और प्रचार—राष्ट्रपति निर्वाचन की सबसे पहली और महत्वपूर्ण सीढी प्रत्याशियो का नामाकन है। राष्ट्रपति के निर्वाचन के पूर्व जनवरी के महीने मे प्रत्येक राजनीतिक दल एक राष्ट्रीय सम्मेलन (National Convention) बुलाता है। प्रत्येक दल का राष्ट्रीय सम्मेलन राष्ट्रपति और उप राष्ट्रपति पदो के लिए अपने अपने दल के उम्मीदवारो को नामाकित (Nominate) करता है।

उप राष्ट्रपति पद के लिए प्राय उसी व्यक्ति का लिया जाता है जो राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी के निवास के राज्य से भिन्न राज्य का निवासी हो। प्राय ऐसा भी किया जाता है कि यदि राष्ट्रपति पद का प्रत्याशी देश के एक भाग का निवासी है तो उप राष्ट्रपति पद का प्रत्याशी देश के दूसरे भाग का निवासी होता है।

राष्ट्रपति और उप राष्ट्रपति पद के प्रत्याशियो का नामाकन कर देने के उपरान्त तुरन्त ही दल अपने-अपने उम्मीदवारो के पक्ष मे देश व्यापी प्रचार प्रारम्भ कर देते हैं। राष्ट्रपति के चुनाव की यह लडाई दुनिया की सबसे बडी राजनीतिक लडाई समझी जाती है।

(2) राष्ट्रपतीय निर्वाचकों का निर्वाचन—राष्ट्रपति के निर्वाचन की दूसरी सीढी राष्ट्रपतीय निर्वाचको (Presidential Electors) का निर्वाचन है। प्रारम्भ मे निर्वाचक राज्यो की व्यवस्थापिकाओ द्वारा निर्वाचित होते थे। बाद मे इस प्रणाली को त्याग दिया गया और एक नई प्रणाली का प्रयोग किया जाने लगा जिसके अनुसार प्रत्येक राजनीतिक दल या तो अपनी प्राथमिक सभाओ (Primaries) या राज्यो के सम्मेलनो (State Conventions) द्वारा प्रत्येक राज्य मे निर्वाचक मडल के लिए अपने उम्मीदवार खडा करती है। प्रत्येक राज्य से निर्वाचक मंडल मे उतने ही सदस्य होते हैं जितने उसके काग्रेस के सीनेटर और प्रतिनिधि होते हैं। निर्वाचक मडल के सदस्यो का निर्वाचन व्यक्तिगत न होकर सामूहिक होता है। परिणाम यह निकलता है कि जिस दल को किसी राज्य मे जनता के मतो का बहुमत प्राप्त होता है, उसी दल के सब प्रत्याशी राष्ट्रपति के निर्वाचक मडल के सदस्य चुन जाते हैं। दूसरे शब्दो मे यह कहा जा सकता है कि निर्वाचक मण्डल के सदस्यो के लिए किये जाने वाले मतदान परोक्ष रूप मे राष्ट्रपति के लिए ही होता है क्योकि जिस दल के लोगो को जनता निर्वाचक मण्डल के लिए चुनती है, वे स्वाभाविक रूप से उसी दल के राष्ट्रपति-पद के प्रत्याशी को अपना मत देते हैं।

तत्पश्चात नवम्बर माह के प्रथम सोमवार के बाद आने वाले मंगलवार को (जो निर्वाचन का दिन होता है) सब मतदाता अपने अपने राज्य मे एकत्र होकर इन निर्वाचको के लिए अपना अपना मत देते हैं। इस निर्वाचन मे प्रत्याशियो की योग्यता पर प्राय कुछ ध्यान नहीं दिया जाता, केवल उनका किस दल से सम्बन्ध है, इसी का विशेष ध्यान रखा जाता है। स्पष्ट है कि वह दल जो राज्य मे बहुमत प्राप्त करता है, समस्त निर्वाचको को निर्वाचन-मण्डल मे भेज देता है। इस प्रकार राष्ट्रपतीय निर्वाचको का निर्वाचन ही, जो कि प्रत्यक्ष होता है, राष्ट्रपति का निर्वाचन निश्चित कर देता है। संविधान द्वारा निश्चित राष्ट्रपति के निर्वाचन-पद्धति की शेष सीढ़िया केवल औपचारिक मात्र हैं।

(3) निर्वाचकों द्वारा राष्ट्रपति के लिए मतदान—निर्वाचित होने पर ये निर्वाचक अपने-अपने राज्यो की राजधानी मे एकत्र होते हैं और दिसम्बर माह के दूसरे बुद्धवार के बाद आने वाले पहिले सोमवार को राष्ट्रपति व उपराष्ट्रपति के लिए मतदान करते है।

(4) मतगणना व परिणाम—तत्पश्चात् सभी राज्यो के मतपत्रो को प्रमाणित करके सील किये हुए लिफाफो मे सीनेट के अध्यक्ष के पास वाशिंगटन भेज दिया जाता है वहा सीनेट के अध्यक्ष द्वारा व लिफाफे काग्रेस के दोनो सदनो के सदस्यो के सामने खोले जाते हैं, मतगणना की जाती है और परिणाम की घोषणा की जाती है। जो प्रत्याशी निर्वाचको के मतो का पूर्ण बहुमत प्राप्त कर लेता है, उसे निर्वाचित घोषित कर दिया जाता है।

यदि मतगणना का परिणाम ऐसा निकलता हो जिसमे किसी भी प्रत्याशी को आवश्यक बहुमत प्राप्त नही होता, तो राष्ट्रपति के निर्वाचन का कार्य प्रतिनिधि सभा करती है। प्रतिनिधि सभा प्रथम अधिकतम मत पाने वाले उन तीन प्रत्याशियो मे से एक को राष्ट्रपति चुन लेती है, जिनके नाम सीनेट का अध्यक्ष उसके पास भेजता है। यहा यह बात ध्यान मे रखने की है कि इस निर्वाचन मे सदस्य व्यक्तिगत रूप से मतदान नही करते। प्रत्येक राज्य के प्रतिनिधियो से मिलकर उस राज्य का एक प्रतिनिधि मण्डल बनता है और प्रत्येक मण्डल केवल एक ही मत देता है। गणपूर्ति (Quorum) के लिए दो तिहाई राज्यो की उपस्थिति आवश्यक है। उप राष्ट्रपति पद के विषय मे आवश्यकता पडने पर ऐसा ही सीनेट द्वारा किया जाता है।

पद व शपथ-ग्रहण—निर्वाचित राष्ट्रपति व उप-राष्ट्रपति, संविधान के बीसवें संशोधन के अनुसार, 20 जनवरी को दोपहर के समय पद ग्रहण करते हैं। अमेरिका के मुख्य न्यायाधीश शपथ ग्रहण कराते हैं।

यदि किसी कारणवश राष्ट्रपति का निर्वाचन पूरा न हुआ हो अथवा वा... पद ग्रहण न कर पाये तो उसके स्थान पर उप राष्ट्रपति कार्य भार ...

यदि उप-राष्ट्रपति भी उस दिन कार्यभार न सम्हाले तो काँग्रेस को यह अधिकार होता है कि वह इसका उचित प्रबन्ध करे।

राष्ट्रपति के निर्वाचन प्रणाली की आलोचना

(i) राष्ट्रपति का निर्वाचन वास्तव में रुपये का खेल है जिसके पीछे भ्रष्ट पद्धतियाँ छिपे रूप में सक्रिय रहती है। विशेष प्रकार के उम्मीदवारों के प्रति भूल और छिपे तौर पर पूर्व धारणाएँ सक्रिय रहती है, अवांछनीय चालें चली जाती है और नकली उम्मीदवार खड़े किये जाते है। बाद में मौका आते ही पहले से सोचे समय उम्मीदवार का नाम प्रस्तावित हो जाता है।

(ii) दलो के राष्ट्रीय सम्मेलनो का वातावरण भी तनातनीपूर्ण, उलझन भरा और गर्म रहता है।

(iii) निर्वाचन के समय छल-कपट अफवाहों, अनुचित षडयन्त्रो आदि का काफी जोर रहता है।

(iv) राष्ट्रपतीय निर्वाचकों के चुनाव मे जिस दल को बहुमत प्राप्त होता है, उसे उस राज्य के सभी निर्वाचको को चुनने का अधिकार मिलता है। इसका दूषित स्वरूप यह है कि यदि किसी राज्य मे किसी दल को 49 प्रतिशत भी मत मिल तो भी वह अपने दल का एक भी निर्वाचक रखने का अधिकारी नही होता। यह पर्याप्त सम्भव है कि राष्ट्रपति को जनता का बहुमत मिले भी और न भी मिले, किन्तु निर्वाचकों का बहुमत उसके पक्ष मे होगा। लिंकन और विलसन के चुनाव मे यही स्थिति थी।

(v) यह भी अनुचित है कि एक बार साधारण जनता द्वारा निर्वाचक मण्डल के चुन लिये जाने के बाद निर्वाचक मण्डल के सदस्य इस बात के लिए स्वतन्त्र रहते हैं कि वे किसी भी प्रत्याशी के पक्ष मे मतदान करें। अनेक ऐसे अवसर आए है कि जब दल के निर्वाचक मण्डल के सदस्यो ने दूसरे दल के राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी को मत दिया है।

(vi) यह भी सम्भव है कि निर्वाचक मण्डल के मतदान के फलस्वरूप किसी भी प्रत्याशी को आवश्यक बहुमत प्राप्त न हो और ऐसी स्थिति मे जब निर्वाचन का अन्त प्रतिनिधि सभा द्वारा किया जाए तो परिणाम उससे भिन्न निकले जो सामान्यत होना चाहिए। यह आलोचना अधिक व्यावहारिक नही है। अब तक केवल एक बार सन 1824 मे ही ऐसा हुआ था जबकि चार प्रत्याशियो मे से किसी को भी आवश्यक बहुमत नही मिला।

(vii) अमरिकन राष्ट्रपति के निर्वाचन प्रणाली का जो व्यावहारिक रूप बन गया है, उसके कारण पद पर अयोग्य व्यक्तियो का आना सम्भव है। निर्वाचक दल के इशारे पर मत देता है न कि उम्मीदवार की योग्यता देखकर। लास्की ने इन निर्वाचको की तुलना कठपुतलियो से की है जो दल की इच्छानुसार कार्य करते हैं।

यह आलोचना आंशिक रूप से ही सत्य है क्योंकि विगत पचास साठ वर्षों में राष्ट्रपति पद पर अद्भुत योग्यता रखने वाले अनेक राष्ट्रपति आए हैं।

निर्वाचन प्रणाली में सुधार के सुझाव

राष्ट्रपति की निर्वाचन पद्धति में जो कतिपय दोष विद्यमान हैं, उन्हें दूर करने के लिये समय-समय पर निम्नलिखित सुझाव दिये जाते रहे हैं—

(1) राष्ट्रपति का प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा निर्वाचन हो, चूंकि यह तरीका सरल, प्रजातान्त्रिक एवं बहुमत के अनुकूल है।

(2) राज्य निर्वाचकों का चुनाव पूरे राज्य (State at large) के आधार पर न करके क्षेत्रों (Districts) के आधार पर करें।

(3) निर्वाचक गण और निर्वाचकों का अंत कर दिया जाए, परन्तु निर्वाचक मत की पद्धति व्यवहार में रहे। राज्यों में राष्ट्रपतीय निर्वाचन के पर्चे (Presidential election bullet) रहें जो लोकप्रिय मत के आधार पर प्रत्याशियों को दिये जाएं।

(4) प्रत्येक राज्य में प्रत्यक्ष एवं व्यस्क मताधिकार के आधार पर मतदान हो, तथा राष्ट्रपति पद के लिये प्रत्याशियों को प्राप्त लोकप्रिय मतों के अनुपात में निर्वाचक मत (Electoral vote) मिलें।

यद्यपि ये सुझाव अमेरिकावासियों के समक्ष एक-एक कर के रखे जा चुके हैं, परन्तु किसी भी सुझाव के प्रति जनता का सन्तोषजनक समर्थन प्राप्त नहीं हो सका है।

राष्ट्रपति की शक्तियां और उसका अधिकार

(Powers and Functions of the President)

आज राष्ट्रपति के अधिकारों और कर्त्तव्यों का क्षेत्र आश्चर्यजनक रूप से व्यापक है। उसकी ये विशाल शक्तियां वस्तुतः अनेक स्रोतों का परिणाम हैं। प्रथम स्रोत संविधान है। यद्यपि संविधानिक उपबंध थोड़े और संक्षिप्त हैं, लेकिन उनमें जिस ढंग से राष्ट्रपति की शक्तियां और उसके विशेष अधिकारों को परिभाषित किया गया है, उससे राष्ट्रपति की शक्तियों का भारी प्रसार हुआ है। कांग्रेस को यह सत्ता प्राप्त नहीं है कि वह राष्ट्रपति की संविधानिक शक्तियों को छीन सके या कम कर सके। दूसरा स्रोत न्यायिक निर्णय हैं जिनके द्वारा राष्ट्रपति की शक्तियों के क्षेत्र को उन स्थलों पर परिभाषित किया गया है जहां संविधान अस्पष्ट या अत्यन्त संक्षिप्त है। इन परिभाषाओं से राष्ट्रपति को अनेक निहित शक्तियां (Implied Powers) मिली हैं। तीसरा स्रोत कांग्रेस के अधिनियम हैं जिनसे समय समय पर राष्ट्रपति को स्व विवेक की शक्तियां (Discretionary Powers) मिली हैं। चौथा स्रोत परम्परायें एवं प्रथायें हैं। इनके द्वारा भी राष्ट्रपति की शक्तियों में पर्याप्त वृद्धि हुई है।

यद्यपि अमेरिकन राष्ट्रपति महान् शक्तियों का स्वामी है, तथापि वह संविधान की परिसीमाओं (Limitations) के अन्दर कार्य करता है और किसी भी दशा में संविधान का उल्लंघन नहीं कर सकता। अधिक से अधिक वह इतना कर सकता है कि अपनी शक्तियों के प्रयोग के अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कर ले। राष्ट्रपति की विशाल शक्तियों और अधिकारों को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत प्रकट कर सकते हैं—

कार्यपालिका शक्तियाँ
(Executive Powers)

राष्ट्रपति की समस्त कार्यपालिका शक्तियों को अध्ययन की सुविधा से विभिन्न उप-शीर्षकों के अन्तर्गत प्रकट करना उपयोगी होगा—

(i) **शासन संचालन और विधि का पालन कराने की शक्तियाँ**—राष्ट्र का प्रमुख शासक होने के नाते राष्ट्रपति ही संघीय सरकार के प्रशासन सम्बन्धी समस्त कार्यों के लिए अन्तिम रूप से उत्तरदायी है। प्रशासकीय विभागों का संगठन और विस्तार तो कांग्रेस करती है पर उनके पुनर्गठन और कार्यों का निरीक्षण करना राष्ट्रपति के अधिकार में है। वह देखता है कि संविधान, संविधियों और न्यायिक निर्णयों का पालन समस्त देश में हो रहा है या नहीं। शासन के सफल संचालन के लिए उसे विभिन्न आदेश, नियम, उपनियम आदि जारी करने का अधिकार है। वह किसी भी विभाग के अधिकारी से किसी भी विषय पर प्रतिवेदन अथवा सम्मति माँग सकता है।

राष्ट्रपति का कर्तव्य है कि वह कांग्रेस द्वारा निर्मित कानूनों को पूरी तरह लागू कराए चाहे वह उनसे सहमत हो अथवा नहीं। किसी भी कानून की वांछनीयता अथवा अवांछनीयता का निर्णय करने का कार्य कांग्रेस का है और उसकी वैधता या अवैधता का परीक्षण करने का कार्य न्यायपालिका का है।

राष्ट्रपति को पद ग्रहण करते समय शपथ लेनी पड़ती है कि वह संयुक्त राज्य अमरिका के संविधान की रक्षा और उसका पालन करेगा। अतः इस शपथ को निभाने के लिए राष्ट्रपति सदैव सचेष्ट रहता है। यदि किसी ओर से राष्ट्रपति को खुले विरोध का सामना करना पड़ता तो उसे अधिकार है कि वह राष्ट्रीय सेना को उस विरोध का सामना करने के लिए प्रयोग में लाए।

(ii) **नियुक्ति सम्बन्धी शक्तियाँ**—इन शक्तियों के माध्यम से राष्ट्रपति को संघीय अधिकारों की निष्ठा और कांग्रेस के सदस्यों की सक्रिय सहायता प्राप्त होती है। संविधान राष्ट्रपति को अधिकार देता है कि वह कांग्रेस के निश्चयों और कानूनों को क्रियान्वित करने के लिए आवश्यकतानुसार नियुक्तियाँ करे। इनमें उच्चवर्गीय नियुक्तियाँ भी शामिल हैं और निम्न वर्गीय भी। उच्च-वर्गीय पदों की नियुक्तियाँ राष्ट्रपति और सीनेट दोनों की स्वीकृति से होती हैं जबकि निम्नवर्गीय पदों को राष्ट्रपति अपनी इच्छा से ही भर सकता है उच्च वर्गीय पदों में मन्त्री अथवा सचिव, विभागों

म अमरिकन राजदूत, वाणिज्य दूत, विशष दूत, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश, सुरक्षा समिति तथा सर्वोच्च परिषद के सदस्य, केन्द्रीय शासन के अध्यक्ष आदि बडे-बड अधिकारियों के पद सम्मिलित होते ह । इन सभी की नियुक्तिया के सम्ब ध म संविधान के अनुसार सीनेट की स्वीकृति आवश्यक है । व्यवहार म प्राय सीनेट इन पर अस्वीकृति नहीं देती । न्यायालय क न्यायधीशा की नियुक्ति पर अथवा किसी अन्य महत्वपूण नियुक्ति पर निश्चय ही सीनेट वडे वाद विवाद के वाद स्वीकृति देती है । एसे भी अवसर आए हैं जब सीनेट ने कुछ नियुक्तियो पर अपनी अस्वीकृति प्रदान की है ।

निम्नस्तरीय पदा पर नियुक्तिया करन का अधिकार यद्यपि राष्ट्रपति का है तथापि सुविधा की दृष्टि स राष्टपति ने यह भार विभिन्न विभागा के अध्यक्षो पर डाल दिया है ।

उल्लेखनीय है कि उच्च स्तरीय नियुक्तियो के विषय म सीनेट के अनु समथन का जा प्रतिब ध है, उसका प्रभाव व्यवहार म राष्ट्रपति की नियुक्ति सम्बन्धी शक्ति पर विशेष नही पडता । इसका प्रमुख कारण उस प्रथा का प्रचलन है, जिसे सीनट की 'शालीनता या सौहार्दता' (Senetorial Courtesy) कहा जाता है । इस प्रथा के अनुसार सीनट के सदस्य राष्ट्रपति द्वारा सघीय प्रशासन म की गयी नियुक्तिया को इसलिए स्वीकार कर लेते हैं कि राष्ट्रपति राज्या म उनकी पसद के व्यक्तिया का नियुक्त कर द । इस परम्परा का लाभ वे सीनेटर भी उठा सकत हैं जो राष्ट्रपति के दल क नही हैं । सीनेट और राष्ट्रपति की इस पारस्परिक लन देन की प्रथा के प्रचलन ने सविधान निर्माताओ के उस उद्देश्य को लगभग समाप्त ही कर दिया है, जिसकी पूर्ति के लिए उन्होने नियुक्तिया पर सीनट की सहमति की व्यवस्था की थी ।

राष्ट्रपति कुछ नियुक्तिया उस समय भी कर सकता है जब सीनेट का अधिवेशन नही हो रहा है । एसी नियुक्तिया 'अन्तरिम नियुक्तिया (Recess appointments) कहलाती है । पर सीनेट का सत्र आरम्भ हाते ही राष्ट्रपति का इन नियुक्तियो के लिए उसस स्वीकृति लेनी पडती है । यदि सीनेट स्वीकृति देन से इन्कार कर दे तो राष्ट्रपति सीनेट का अधिवेशन समाप्त हान के बाद इन नियुक्तिया का पुनर्जीवित कर सकता है । अन्तरिम नियुक्तिया की इस शक्ति के कारण राष्ट्रपति का प्रभाव क्षेत्र बहुत कुछ बढ गया है । राष्ट्रपति अपन इस अधिकार का दुरुपयाग न करने लगे, इसके लिए यह अकुश लगा दिया गया है कि यदि राष्ट्रपति एसी किसी जगह पर नियुक्ति करता है, जा सीनट के अधिवशन काल म विद्यमान थी, ता उस पर नियुक्त व्यक्ति को तब तक वेतन नही मिलेगा जब तक उसकी नियुक्ति की पुष्टि सीनट विधिवत न कर दे ।

(iii) पदच्युति की शक्तियां—इस सम्बन्ध मे सविधान मौन है तथापि काग्रेस द्वारा अन्तिम रूप से यही निणय किया गया है कि केवल राष्ट्रपति का

पूण अधिकार हागा कि वह किसी को भी पदच्युत करे, और इसक लिए सीनेट की अनुमति आवश्यक नही हाती। पर इस सम्बन्ध म निम्नलिखित तीन वर्ग अपवाद हैं, अर्थात् इन वर्गों के अधिकारियो को राष्ट्रपति स्वय पदच्युत नही कर सकता—

(क) सर्वोच्च न्यायालय के न्यायधीश, जिन्हे केवल महाभियोग द्वारा ही हटाया जा सकता है।

(ख) काग्रेस द्वारा स्थापित विभिन्न आयोगा और बोर्डों के सदस्य, जिन्हे काग्रेस द्वारा निर्धारित नियमो के अनुसार ही अलग किया जा सकता है।

(ग) लोक सेवा नियमा (Civil Service Rules) के अनुसार हुई नियुक्तिया, जिन्हे केवल तभी विमुक्त किया जा सकता है जब उनके द्वारा लोक-सेवा की कार्यकुशलता म बाधा पड ।

वस्तुत राष्ट्रपति के हाथ मे राष्ट्र के सम्पूण प्रशासनिक ढाचे पर नियत्रण रखने की इतनी अधिक शक्ति है कि वह उसके बल पर लोगो को स्वयमेव त्यागपत्र देने पर बाध्य कर सकता है। यह तथ्य भी स्मरणीय है कि सर्वोच्च न्यायालय के निणय द्वारा निश्चित किया गया है कि सीनेट अथवा काग्रेस राष्ट्रपति का, किसी अधिकारी को पदच्युत करने के लिए विवश नही कर सकती।

(iv) सनिक शक्तिया—युद्ध और शाति दोनो ही समय के लिए राष्ट्रपति सयुक्त राज्य अमेरिका की सेना का प्रधान सेनापति है। इस नाते वही उच्च सनिक अधिकारियो की नियुक्तिया करता है पर इन नियुक्तियो के लिए सीनेट का अनुसमर्थन आवश्यक हाता है। युद्ध काल म राष्ट्रपति सभी प्रकार के सनिक अधिकारियो को बखास्त करने का अधिकार रखता है। वह आवश्यकता पडने पर सभी सेनाओ का काय करने का आदेश दे सकता है। सरकार के प्रदत्त विरोध की स्थिति म, सघ के परि नियमो के अन्तगत, वह सयुक्त राज्य की सनिक शक्ति का प्रयाग कर सकता है। देश की प्रतिरक्षा और शत्रु को पराजित करने के उद्देश्य से वह प्रत्यक्ष कायवाही करने का अधिकारी है। वह अमेरिकन सनाओ को विश्व के किसी भी स्थान पर भेज सकता है। यद्यपि राष्ट्रपति काग्रेस की स्वीकृति के बिना युद्ध की घोषणा नही कर सकता तथापि युद्ध को समाप्त करने तथा निलम्बित करने का अधिकार केवल राष्ट्रपति का ही है। यद्यपि सीनेट की सम्मति से ही वह युद्ध की घोषणा कर सकता है, किन्तु अपनी व्यापक शक्तियो और प्रभाव के कारण ऐसी परिस्थितिया पदा कर सकता है अथवा सेना को ऐसी व्यवस्था म खडा कर सकता है कि युद्ध अनिवाय हो जाय।

सेना के प्रमख के रूप म राष्ट्रपति का यह अधिकार है कि युद्धकाल म जिन प्रदेशा पर विजय प्राप्त की जाय, उन पर वह इच्छानुसार शासन करे। विजित प्रदेशो का शासन एक अधिनायक की भाति वह उस समय तक चलाता है जब तक काग्रेस नागरिक प्रशासन की व्यवस्था न कर दे।

(v) वदेशिक विषयो से सम्बन्धित शक्तिया—वदेशिक अथवा अन्तर्राष्ट्रीय मामलो म राष्ट्रपति ही देश का सबसे प्रमुख प्रवक्ता है। राष्ट्रीय विदेश नीति तथा उसके परिणामो का उत्तरदायित्व उसी पर है। सर्वोच्च न्यायालय ने राष्ट्रपति के इस अधिकार को स्वीकार किया है, बशर्ते कि उसका प्रयोग सवधानिक उपबन्धो के अनुसार हो।

राष्ट्रपति का राजदूतो और विदेशो मे अपने देश के प्रतिनिधियो को नियुक्त करने का अधिकार है। विदेशी राजदूता, वाणिज्य दूतो और विशेष दूतो के प्रमाण-पत्र वही स्वीकार करता है और इस प्रकार विदेशी सरकारो को मान्यता देता है। किसी राष्ट से असन्तोष प्रकट करने के लिए वह उस राष्ट्र के राजनीतिक प्रतिनिधि को हटा सकता है अथवा सम्बन्धित राष्ट्र से माग कर सकता है कि वह अपने प्रतिनिधि अथवा राजदूत को वापिस बुला ले। राष्ट्रपति ही विदेशो से सन्धिया सम्पन्न करता है और उन पर हस्ताक्षर करता है। यद्यपि इन सन्धियो अथवा समझौतो पर सीनेट क दो तिहाई मत के अनुसमर्थन (Ratification) की आवश्यकता पडती है, तथापि सन्धि का प्रारूप तयार करने और उसके बारे म सम्बन्धित विदेशी राष्ट्र से वार्ता करने आदि का काय राष्ट्रपति का ही है। व्यावहारिक दृष्टि से वही विदेश नीति की रचना और घोषणा करता है। विदेश नीति का रूप अक्सर स्वय राष्ट्रपति पर ही निभर करता है।

प्रशासकीय अथवा कायपालिका समझौते (Executive Agreement) करने का राष्ट्रपति का एकाधिकार है। इन पर सीनेट की स्वीकृति प्राप्त नही करनी होती। इन्हें राष्ट्रपति किसी भी अन्य देश के साथ अपने अधिकार से ही कर लेता है। उदाहरण के लिए, द्वितीय महायुद्ध काल म विध्वसक समुद्री अड्डो के बारे म और ब्रिटिश उपनिवेश का पटट पर लेने के सम्बन्ध म जो समझौते ब्रिटेन से किये गय थे, व प्रशासकीय समझौते ही थे।

वदेशिक सम्बन्धो के सचालन मे राष्ट्रपति विदेशो से आवश्यकतानुसार गुप्त समझौत भी कर लता है। अपने व्यापक प्रभाव और अधिकार क्षेत्र के कारण वह गुप्त रूप से किसी विदेश को अपने साथ और अपने को किसी विदेश के साथ किसी नीति विषय पर चलने के लिए वचनबद्ध कर सकता है।

(vi) स्वविवेकीय शक्तिया—इन शक्तियो के बल पर राष्ट्रपति किसी व्यक्ति अथवा व्यक्ति समूह को किसी काम को करने से रोक सकता है अथवा किसी काम को करने के लिए बाध्य कर सकता है। इस शक्ति के प्रयोग म न्यायालय रुकावट नही डालता। वस्तुत राष्ट्रपति इतनी व्यापक शक्तियो का स्वामी है कि न्यायालय भी अपने निणय को कार्यान्वित कराने म राष्ट्रपति पर ही निभर है।

विधायी शक्तिया (Legislative Powers)

सविधान निर्माताओ का प्रयत्न यह रहा था कि कायपालिका के अधिकारो का व्यवस्थापन म कोई हाथ न रहे, किन्तु आज यह देखकर विस्मय होता है कि

सर्वोच्च कार्यपालिका अधिकारी अथवा राष्ट्रपति का विधि निर्माण में बहुत बड़ा हाथ है। व्यवस्थापन कार्यों में भाग लेने की शक्ति राष्ट्रपति ने संविधान के इन शब्दों से ग्रहण कर ली है—"राष्ट्रपति समय समय पर राष्ट्र की स्थिति के सम्बन्ध में काग्रेस को सूचना देता रहेगा और साथ ही उनके विचार के लिए वह व्यवस्थाओं की स्थापना की सिफारिश भी करता रहेगा जिनको वह आवश्यक तथा उपयोगी समझता हो।

व्यवस्थापन के क्षेत्र में राष्ट्रपति का निम्नलिखित मुख्य अधिकार हैं—

(i) **सन्देश भेजने का अधिकार**—राष्ट्रपति काग्रेस को आन्तरिक और बाह्य परिस्थिति का ज्ञान कराने के लिए सन्देश भेज सकता है और यह सुझाव भी दे सकता है कि क्या किया जाना चाहिए। सन्देश काग्रेस के क्लर्क के पास मौखिक या लिखित रूप में भेजा जा सकता है। राष्ट्रपति अपने सन्देश में उपायों सुझावों और विधेयकों तक का वर्णन कर देता है। ये सन्देश राष्ट्रपति की नीति का स्पष्ट करते है और काग्रेस इन्हें अपनी कार्यवाही में प्राथमिकता देती है। राष्ट्रपति के सन्देश सामाचार पत्रो में प्रकाशित होते हैं जिनके द्वारा वह लोकमत को प्रभावित करता है और फलस्वरूप काग्रेस राष्ट्रपति के सन्देशों के अनुसार आचरण करने को बाध्य हो जाती है। वैधानिक रूप से काग्रेस राष्ट्रपति के सन्देश मानने को बाध्य नहीं है किन्तु व्यवहार में इन सन्देशों के अनुसार ही वह अपना विधायी कार्य प्रारम्भ करती है। इसमें कोई संशय नहीं है कि बहुत से कानूनों का सूत्रपात केवल राष्ट्रपति के सन्देशों से ही होता है।

(ii) **प्रशासकीय आदेश**—हाल ही में यह प्रथा चल पड़ी है कि राष्ट्रपति ऐसे प्रशासकीय आदेश जारी करता है जिनका कानूनों के समान ही बल होता है। सामान्यत सरकार के कामों को स्वरूप और विस्तार का निर्णय करने वाले सामान्य कानून काग्रेस द्वारा बनाए जाते हैं लेकिन उनके सम्बन्ध में उपनियमों का निर्माण राष्ट्रपति करता है।

(iii) **विशेष अधिवेशन बुलाने का अधिकार**—संविधान राष्ट्रपति को काग्रेस के विशेष अधिवेशन को आमन्त्रित करने की शक्ति देता है। यह विशेष अधिवेशन कुछ दिनों तक चल सकता है अथवा उस समय तक चल सकता है जब तक कि नियमित अधिवेशन आरम्भ न हो। राष्ट्रपति काग्रेस से नियमित अधिवेशन में अधिक काल तक बैठने के लिए माग कर सकता है ताकि कानून बनाये जा सकें और यदि वह इन्कार करे तो अपने विशेष अधिवेशन बुलाने के साधन का प्रयोग कर सकता है।

(iv) **विलम्बनकारी निषेधाधिकार**—राष्ट्रपति काग्रेस द्वारा बनाये गये विधेयकों पर हस्ताक्षर करने से इन्कार कर सकता है। परन्तु यह प्रतिबन्ध या निषेध (Veto) केवल विलम्बनकारी होता है, पूर्ण नहीं (Only suspensive veto, not absolute)। व्यवस्था यह है कि कोई भी विधेयक राष्ट्रपति के

अनुमति के बिना कानून का रूप धारण नहीं कर सकता। कांग्रेस के दोनों सदनों द्वारा स्वीकार किया जाकर अनुमति के लिये जो विधेयक राष्ट्रपति के पास आया हो, उसे राष्ट्रपति अपने आक्षेपों सहित दस दिनों (रविवारों को छोड़कर) के भीतर वापिस लौटा सकता है। यह राष्ट्रपति का निलम्बनकारी निषेधाधिकार अथवा नियमित निषेधाधिकार (Suspensive or Regular Veto) कहलाता है। इस प्रकार लौटाये गये विधेयक तब तक कानून नहीं बन सकते, जब तक कि कांग्रेस के दोनों सदनों में दो-तिहाई बहुमत से उनके उसे पास न हो जाए। यदि विधेयक कांग्रेस द्वारा पुनः पास कर दिया जाता है तो फिर राष्ट्रपति उसे नहीं रोक सकता। राष्ट्रपति का निलम्बनकारी निषेधाधिकार बहुत काम का है क्योंकि इससे वह जल्दबाजी में किये हुए व्यवस्थापन पर फिर से विचार करने के लिये कांग्रेस को बाध्य कर सकता है।

(४) जेबी निषेधाधिकार—विधेयकों के सम्बन्ध में राष्ट्रपति को एक अन्य प्रकार का भी निषेधाधिकार प्राप्त है जिसे जेबी निषेधाधिकार (Pocket Veto) कहा जाता है। व्यवस्था यह है कि जब कांग्रेस का सत्र चल रहा हो, उसमें यदि राष्ट्रपति के पास कोई विधेयक स्वीकृति के लिए आता हो और राष्ट्रपति की टेबिल पर ही दस दिन पड़ा रह जाता हो तो वह स्वतः ही कानून बन जाता है चाहे राष्ट्रपति ने उस पर निगाह भी न डाली हो, परन्तु यदि कोई विधेयक राष्ट्रपति के पास कांग्रेस-सत्र के अंत के निकट भेजा जाता है और दस दिन की अवधि की समाप्ति के पूर्व ही सत्र विघटित हो जाता है तब राष्ट्रपति उस विधेयक पर कोई कार्यवाही न करके उसकी हत्या कर सकता है। दूसरे शब्दों में यदि कांग्रेस के सत्र के अन्तिम दस दिनों में वह किन्हीं भी विधेयकों को बिना स्वीकृति या अस्वीकृति दिये पड़े रहने देता है, तो उन्हें कांग्रेस फिर अपने दो-तिहाई बहुमत से भी पारित नहीं कर सकती, क्योंकि उसका सत्र समाप्त हो जाता है। परिणाम यह होता है कि वे विधेयक बिना अस्वीकृति के ही अस्वीकृत हो जाते हैं। इस प्रकार कोई कार्यवाही न करके ही (By mere inaction) विधेयक को समाप्त करने का अधिकार राष्ट्रपति का जेबी निषेधाधिकार (Pocket Veto) कहलाता है।

राष्ट्रपति की निषेध शक्ति का वर्णन करते हुए फाइनर ने कहा है कि "यह एक ऐसी शक्ति है जिसमें कुछ व्यय नहीं करना पड़ता और जिसके प्रयोग करने से सफलता की आशा तो रहती है, दण्ड का भय नहीं रहता। देश के विधान मण्डल में लड़ी हुई व्यवस्था सम्बन्धी लड़ाई को कांग्रेस का कोई भी पक्ष केवल इतनी ही देर में हार सकता है जितनी देर में राष्ट्रपति ने कुछ दूसरे व्याख्यात्मक शब्द लिखने में लगाये। इस 'न' का उल्लंघन पुनर्विचार द्वारा दो तिहाई मत से ही हो सकता है जो कांग्रेस की बहुलता और दोनों सदनों में पक्षों की विभिन्नता के कारण सम्भव नहीं है।"

स्मरणीय है कि राष्ट्रपति की निषेध शक्तियों का प्रयोग प्रस्तावित संवैधानिक संशोधनों पर नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त सम्पूर्ण विधेयक का वीटो किया जाता है, अंश का नहीं।

(vi) संरक्षण शक्तियां—राष्ट्रपति अपनी विशाल संरक्षण शक्ति द्वारा काँग्रेस से अपने विधेयकों का समर्थन करा सकता है। राष्ट्रपति द्वारा बहुसंख्यक नियुक्तियां की जाती हैं और काँग्रेस सदस्य अपने दल के अनुयायियों के लिए नौकरियां चाहते हैं। इनको नौकरियां दिलवाने के लिये बहुधा राष्ट्रपति का समर्थन करते हैं।

(vii) जनता से अपील—राष्ट्रपति राष्ट्र का सम्मानित नेता होता है। जब वह काँग्रेस को अपने विरुद्ध समझता है तो वह जनता से सीधे अपील करके काँग्रेस में अपने विरोधियों के विरुद्ध लोकमत बनाने की सफल चेष्टा कर सकता है। अमरिका में राष्ट्रपतियों ने कई बार इस शस्त्र का उपयोग काँग्रेस को सही पथ पर लाने के लिये किया है।

वित्तीय शक्तियां (Financial Powers)

संविधान के अनुसार वित्त सम्बन्धी अधिकार यद्यपि काँग्रेस को ही प्राप्त है, परन्तु व्यवहार में वित्तीय क्षेत्र में भी काँग्रेस तथा राष्ट्रपति के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। बजट के सम्बन्ध में नीति निर्धारण या दोनों सदनों के मध्य सहयोग के लिए कोई प्रभावशाली निकाय नहीं है, अतः व्यवस्थापिका नेतृत्व के लिए मुख्यतः कार्यपालिका पर निर्भर करती है। सन 1921 के बजट एवं अकाउण्टिंग अधिनियम (Budget and Accounting Act of 1921) ने राष्ट्रपति को बजट का निर्देशक बनाकर व्यवहारतः उसे सरकार का व्यावसायिक मैनेजर (Business Manager) बना दिया है। राष्ट्रपति राष्ट्रीय वित्त के बारे में काँग्रेस को पूरी सूचना देता है। वही आगामी वर्ष के लिए नियोजित योजना तैयार करके उसे प्रस्तावित करता है और नये करों को प्रस्तावित करता है। बारत बजट राष्ट्रपति के संरक्षण में तैयार किया जाता है और काँग्रेस उसे बहुधा पारित कर देती है। इस प्रकार वित्तीय क्षेत्र में भी आज काँग्रेस का नेतृत्व बहुत कुछ राष्ट्रपति के हाथ में आ गया है। फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि वह इस क्षेत्र में मनमानी शक्तियों का प्रयोग कर सकता है। अनेक ऐसे अवसर आये हैं जब काँग्रेस ने राष्ट्रपति द्वारा प्रस्तावित आंकड़ों में कटौतियां और परिवर्तन किये हैं।

न्यायिक शक्तियां (Judicial Powers)

प्रधान प्रशासनाधिकारी होने के कारण राष्ट्रपति को अपराधी को क्षमादान करने, उसके प्राणदण्ड को स्थगित करने के विशेषाधिकार हैं। अपने क्षमादान के अधिकारों का प्रयोग यद्यपि राष्ट्रपति काँग्रेस एवम् न्यायालयों से पूर्ण स्वतन्त्र होकर करता है, तथापि इनके प्रयोग में उस पर दो वैधानिक सीमायें

है—1 जिस व्यक्ति को महाभियोग द्वारा दण्डित किया गया हो, राष्ट्रपति उसे क्षमा नही कर सकता, एव 2 राष्ट्रपति केवल उन्ही मामलो म अपने क्षमादान के अधिकारो का प्रयोग कर सकता है, जिनमे अपराध सघीय कानूनो के विरुद्ध किया गया हो, न कि किसी राज्य के कानून के विरुद्ध ।

यदि अपराधी राष्ट्रपति को क्षमादान के लिय प्राथना पत्र भेजे तो राष्ट्रपति उस प्राथना पत्र पर निम्नलिखित कोई भी कायवाही कर सकता है—

1 पूण अथवा बिना शत क्षमादान, 2 शर्तो के आधार पर क्षमादान, 3 बिना क्षमा किये अभिवचन (*Parole*) पर मुक्ति, 4 दण्ड घटा देना, 5 प्राण-दण्ड का स्थगित करन अथवा बिना विधिवत् स्थगन के दण्ड देने म विलम्ब करना, एवम् 6 कोई भी कायवाही करने से इन्कार कर देना ।

राष्ट्रपति एस अपराधियो का सामूहिक क्षमादान भी दे सकता है जिन्हे व्यक्तिगत रूप म नही अपितु सघीय कानून का भग करने के अपराध मे एक साथ दण्डित किया गया हो । राष्ट्रपति क्षमादान के अपने अधिकार का प्रयोग याय विभाग की सिफारिश के अनुसार ही करता है । साधारणतया राष्ट्रपति का कार्य सिफारिश को लागू करना मात्र होता है, परन्तु जो कुछ भी किया जाता है उसका अतिम उत्तरदायित्व राष्ट्रपति पर ही होता है और इस दशा मे वह काग्रेस एव न्यायालयो से पूर्ण स्वतन्त्र होता है ।

दलीय नेता और राष्ट्र नेता के रूप में

राष्ट्रपति को दलीय नेता और राष्ट्रीय नेता के रूप मे महती शक्तिया स्वत प्राप्त हो जाती हैं । सविधान निर्माताओ ने राष्ट्रपति को दलगत स्थिति से ऊपर रखने की योजना बनाई थी, परन्तु वे सफल न रह । १९वी शताब्दी के आरम्भ मे दल पद्धति का अभ्युदय हो जान के बाद से राष्ट्रपति दल के नेता और प्रत्याशी के रूप मे निर्वाचित होने लगे और आज तो राष्ट्रपति द्वारा दल का नेतृत्व ब्रिटिश प्रधानमन्त्री के दलीय नेतृत्व के कार्यक्रम से कम महत्वपूर्ण नही रह गया है । दल के नेता के रूप म ही वह निर्वाचित होता है और दल के अनुयायी उसके सलाहकार होते हैं । अपनी विधायी योजनाओ के लिये राष्ट्रपति अपन दल के काग्रेस सदस्यो पर निभर करता है । सम्पूण देश म राष्ट्रपति ही दल का एक मात्र सर्वोच्च प्रतिनिधि होता है और दलीय नीतियो के क्रियान्वयन के लिए सम्पूण राष्ट्र की आखें उसकी तरफ लगी रहती हैं । राष्ट्रपति का दल के सर्वोच्च नेता और निदशक की स्थिति प्राप्त हुई है । इस स्थिति म वह दल की राष्ट्रीय समिति का अध्यक्ष हो जाता है और काग्रेस एव अय पदो के लिय प्रत्याशियो का चयन मुख्यत उसी के हाथ मे चला जाता है ।

राष्ट्रपति केवल अपन दल का ही नेता नही होता, बल्कि वह राष्ट्र का नेता होता है । ब्रिटिश सम्राट की भाति वह अपने राष्ट्र का प्रतीक है और अमरिकन राजनीतिक जीवन की धुरी है । उसे देश का भाग्य विधाता तथा रक्षक कहा

जाता है। वह सभी मामलों में राष्ट्र का प्रवक्ता है। महत्वपूर्ण एवं नाजुक मामलों में वही राष्ट्र का भाग्य निर्णायक है। राष्ट्रपति के व्यक्तिगत और सार्वजनिक व्यवहार सारे राष्ट्र के लिये गहरी अभिरुचि का विषय बन जाते हैं। असल में वह राष्ट्रीय राजनीति के रंगमंच का केन्द्र बिन्दु है। उसमें राष्ट्रीय जीवन की एकता को रखने की शक्ति है।

संकटकालीन शक्तियां (Emergency Powers)

युद्ध, आन्तरिक अशान्ति अथवा आर्थिक संकट से उत्पन्न राष्ट्रीय संकटों के समय राष्ट्रपति अपार शक्तियों का स्वामी हो जाता है। जब तक संकटकाल रहता है तब तक जितने भी अधिकारों की वह मांग करता है और जितने भी अधिकारों का वह प्रयोग करता है वे उसे प्राप्त हो सकते हैं। 17 मार्च, 1954 को राष्ट्रपति आइजनहावर ने घोषणा की थी कि यदि अमेरिका का राष्ट्रपति देश पर आक्रमण होने पर उसका सामना करने और आक्रान्ता को पीछे हटाने के लिये तत्काल कार्य वाही नहीं करता है (चाहे युद्ध घोषित करने के लिये उस समय कांग्रेस की स्वीकृति मिल सकती हो या न मिल सकती हो) तो वह मृत्यु दण्ड पाने योग्य है। फिर भी राष्ट्रपति की संकटकालीन शक्तियों पर तीन प्रतिबन्ध पर्याप्त प्रभाव रखते हैं—

1 संकट वास्तविक होना चाहिये,
2 संकट से सम्बन्धित कांग्रेस का कोई पूर्व कानून न हो एवं
3 संकट की आकस्मिक उत्पत्ति के कारण कांग्रेस को समुचित कदम उठाने का अवसर न मिल पाया हो।

राष्ट्रपति की शक्तियों में वृद्धि के कारण

1 वर्तमान युग में राज्य के कार्यों में आशातीत वृद्धि हो गयी है और अमरिका जैसे महान राज्य के कार्यों में विस्तार का तो अनुमान लगाना ही कठिन है। अतः ऐसे महान् राज्य का वास्तविक प्रमुख होने के कारण राष्ट्रपति की शक्ति और बढ़ना स्वाभाविक है।

2 अमरिका में कांग्रेस की अपेक्षा राष्ट्रपति आन्तरिक तथा बाह्य संकटों का मुकाबला करने में अधिक सफल और साहसी तथा दृढ़ निश्चयी सिद्ध हुए हैं। फलस्वरूप राष्ट्रपति के अधिकारों में स्वतः वृद्धि हुई है।

3 दलीय व्यवस्था के विकास के कारण और निर्वाचन के प्रत्यक्ष हो जाने के कारण भी राष्ट्रपति की शक्ति और प्रतिष्ठा बढ़ी है।

4 प्रचार साधनों के विकास तथा आधुनिक आविष्कारों ने राष्ट्रपति को जनता के निकट सम्पर्क में ला दिया है। प्रेस, रेडियो, टेलीविजन आदि द्वारा वह जनता से सीधे अपील कर सकता है। इनके माध्यम से उसने सही अर्थों में अपने को लोक नेता सिद्ध कर दिखाया है। इन वैज्ञानिक साधनों के फलस्वरूप राष्ट्रपति के प्रभाव में पर्याप्त वृद्धि हुई है। चार्ल्स बीयर्ड ने लिखा है कि 'यान्त्रिक आविष्कार,

सवैधानिक सशोधन म उदकर राष्ट्रपति की शक्तियो म क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सकते ह ।"

5 अमेरिकन जनता सकटपूर्ण स्थिति म सदा ऐसे व्यक्ति का नेतत्व चाहती है जो सम्पूर्ण देश को एकवद्ध कर सके। अमेरिकन शासन व्यवस्था म ऐसा व्यक्ति राष्ट्रपति के अतिरिक्त और कोई नही हो सकता। अत यही मा यता जोर पकड रही है कि राष्ट्रपति को अधिक शक्तिशाली होना चाहिए।

6 अमेरीका के राजनीतिक मच पर ऐसे राष्ट्रपति हो गये है जो सावि-धानिक उपबन्ध की सरल व्याख्या से सतुष्ट नही रह पाये और जिन्होने अपनी शक्तियो की बृहत व्याख्या की। उन्होने राष्ट नेता के रूप म देश हित के लिए प्रत्येक क्षेत्र म हस्तक्षप किया।

7 आधुनिक युग म प्रशासनिक जटिलताओ के बढ जाने के कारण काग्रेस कार्यपालिका स नेतत्व की आशा करने लगी है। फलस्वरूप राष्ट्रपति के प्रभाव और शक्ति मे स्वभावत वद्धि हुई है।

8 सविधान म वदेशिक मामलो के सम्बन्ध म राष्ट्रपति को व्यापक अधिकार दिये गये है। सविधान-निर्माताओ का सम्भवत यह विचार था कि राष्ट्रपति के पास इतने अधिकार होने ही चाहिए कि आवश्यक पडने पर परिस्थितियो के अनुरूप तेजी से काय कर सके और समस्याओ का सामना कर सके। वदेशिक क्षेत्र मे अमरीका को जो आज विशाल दायित्व निभाने पड रहे है, उन्हें काग्रेस या सीनेट पूरी तरह नही निभा सकती। इन परिस्थितियो म यह स्वाभाविक है कि राष्ट्रपति अधिकाधिक शक्तिशाली बनता जाय।

9 स्वाट्ज (Swartz) ने कहा है कि 1949 और 1956 के पुनगठन अधिनियम (Re-organisation Act of 1949 and 1956) के अधीन शक्ति के उपयोग ने राष्ट्रपति का अमरीकन प्रशासन के प्रधान के रूप मे अपनी स्थिति अधिक दृढ और विस्तृत करने का अवसर प्रदान किया है।

10 अन्त म, न्यायपालिका न उदारतापूर्वक सविधान की व्याख्या करके राष्ट्रपति की शक्तियो मे वद्धि की है।

अमेरिकन राष्ट्रपति एव ब्रिटिश प्रधानमन्त्री

(The American President and the British Prime Minister)

दोनो ही सांविधानिक सीमाओ और व्यवहार-पद्धति म बधे हुए अत्यधिक शक्ति का उपभोग करते हैं। दोनो की अन्य अलग परिस्थितिया है, अलग अलग प्रणालिया हैं। शक्ति और अधिकारो में राष्ट्रपति प्रधानमन्त्री से कम भी है और अधिक भी।

चुनाव कार्यकाल एव उत्तरदायित्व—दोनो ही अपने अपने राज्य मे निर्वाचित प्रतिनिधि हैं। ब्रिटिश प्रधान-मन्त्री जनता की अप्रत्यक्ष पसन्द (Ch

होता है । निर्वाचक गण उसके दल को मत देकर उसे पद पर आसीन करते हैं। अमेरिकन राष्ट्रपति जनता द्वारा प्रत्य । रूप से चुना जाता है, किन्तु वह अधिक ध्यान आकर्षित करता है ।

ब्रिटिश प्रधान मन्त्री का कार्यकाल ससद के विश्वास पर निर्भर है जबकि राष्ट्रपति का कार्यकाल चार वर्ष सुनिश्चित है । प्रधानमन्त्री अपने मन्त्रिमण्डल सहित ससद के प्रति उत्तरदायी है । उसकी स्थिति बडी नाजुक है और उसे जब म ही त्यागपत्र रखे रहना पडता है । राष्ट्रपति का काग्रेस के प्रति ऐसा कोई उत्तर दायित्व नहीं है । वह काग्रेस की आलोचना और अविश्वास की परवाह नही करता। काग्रेस केवल महाभियोग सिद्ध करके ही उसे हटा सकती है, जो अत्यन्त ही कठिन है ।

अधिकार एव काय—इस क्षेत्र म कही प्रधान मन्त्री का पलडा भारी है तो कही राष्ट्रपति का ।

(क) राष्ट्रपति अपने मन्त्रिमण्डल का सर्वेसर्वा होता है । मनोनयन और पदच्युति के सम्बन्ध म उनका एकाधिकार है । राष्ट्रपति की मन्त्रि परिषद एक परामर्शदात्री सस्था के रूप म है जिसके परामर्श को मानना या ठुकराना पूर्णत राष्ट्रपति की इच्छा पर है। यह भी अनिवार्य नही है कि वह मन्त्रिपरिषद से परामर्श ले । दोनो का सम्बन्ध बहुत कुछ स्वामी और सेवक सा है । दूसरी ओर प्रधानमन्त्री की मन्त्रिपरिषद के सदस्यो म गणना 'बराबर वालो म प्रथम' की है । वह मन्त्रिपरिषद का स्वामी नही अपितु एक मान्य नेता होता है जिसे महत्वपूर्ण विषयो पर अपने मन्त्रियो की सलाह लेनी पडती है और उस सलाह की इज्जत करनी पडती है । प्रधानमन्त्री को अनेक अवसरो पर मन्त्रिपरिषद के बहुमत के दृष्टिकोण को अपनी इच्छा के विरुद्ध अपनाना पडता है क्योकि प्रभावशाली मन्त्रियो से टकराने पर उसका नेतृत्व और पद दोनो ही खतरे मे पड सकते हैं । किसी मन्त्री से त्यागपत्र मागने से पहले उसे अपनी मजबूती का आकना पडता है ।

(ख) विधि निर्माण के क्षेत्र मे राष्ट्रपति की शक्ति प्रधानमन्त्री से कही कम है । इस क्षेत्र म प्रधानमन्त्री और उसका मन्त्रिमण्डल ही एक प्रकार से व्यवस्थापिका का काय करता है । राज्य की विधायी नीति और कार्यों का पथ प्रदर्शन करना, विधेयको को ससद म प्रस्तावित करना और बहुमत के बल पर वहा से पारित कराना प्रधानमन्त्री तथा उसके सहयोगियो का काम है । सैद्धान्तिक रूप से ससद कानून का काम करती है पर व्यावहारिक रूप म यह काय प्रधानमन्त्री और उसके मन्त्रिमण्डल का हो गया है । व्यवस्थापिका म बहुमत के विश्वास का भोक्ता प्रधानमन्त्री व्यवहार म व्यवस्थापिका म बहुत दल के विश्वास का भोक्ता प्रधानमन्त्री व्यवहार म व्यवस्थापिका का स्वामी बना रहता है और सभी इच्छित विधेयको को वहा से पारित कराने म सक्षम होता है । उसका यह क्षेत्र ऐसा व्यापक है कि अमरीकन राष्ट्रपति उसकी कल्पना भी नही कर सकता । अमरीकन राष्ट्रपति के पास ऐसी कोई विधायी शक्तिया नही हैं । वह व्यवस्थापिका का भाग ही नही है । न वह किसी

कानूनी कार्यवाही मे भाग ले सकता है और न इच्छित विधयको का काग्रेस से पारित ही करा सकता है। वह केवल काग्रेस से सिफारिश कर सकता है और काग्रेस को पूण अधिकार है कि वह उसकी सिफारिश को माने या ठुकरा दे। अमरीका की जनता बुरे कानूनो के लिय अपने राष्टपति को दोषी नहीं मानती जबकि ब्रिटन की जनता उनके ल्यि प्रधानमन्त्री को ही दोषी ठहराती है।

(ग) आर्थिक क्षत्र म भी ब्रिटिश प्रधानमन्त्री को ही अधिक शक्तिया प्राप्त हैं। वित्तमन्त्री बजट का प्रधान मन्त्री की देख रेख म तैयार करता है और लोक सभा म उसे पारित कराने का पूण उत्तरदायित्व प्रधानमन्त्री और उसके सहयोगियों का है। यदि बजट मे नाममात्र के सशोधन किये भी जाते है तो वे प्रधानमन्त्री की सहमति से ही किये जाते है। किन्तु अमरीका मे राष्ट्रपति का वित्तीय क्षेत्र मे एसा कोई हाथ नही है। यद्यपि वहा भी बजट राष्टपति की देख रेख म तैयार किया जाता है किन्तु काग्रेस के समक्ष न तो वह स्वय उसे प्रस्तुत कर सकता है और न उसके मन्त्री ही। राष्ट्रपति को ब्रिटिश प्रधानमन्त्री की भाति यह भरोसा नही होता कि बजट काग्रेस द्वारा अपन मूल रूप म पारित हो जायेगा। अमरीकन राष्ट्रपति के बजट को पास करना या ठुकरा देना पूरी तरह से काग्रेस के हाथ म है जबकि ब्रिटेन म प्रधानमन्त्री बहुमत के बल पर लोकसभा से उसे इच्छानुसार पारित करा लेता है।

(घ) अधिशासी क्षेत्र म अवश्य अमरीकन राष्ट्रपति की स्थिति ब्रिटिश प्रधान मन्त्री से कुछ अधिक दृढ है। अमरीकन राष्ट्रपति प्रधान दडाधिकारी और स्थल, जल व वायु सेना का प्रधान सनापति है। वह सीनेट की सहमति से उच्चवग की सेवाओ के अधिकारियो की नियुक्ति करता है। उन्हे पदच्युत करने का भी उसे अधिकार है और इस विषय म उसे सीनेट की स्वीकृति की भी आवश्यकता नही होती। निम्न वर्गीय नियुक्तिया वह स्वविवेक से करता है। इस प्रकार उसे विशाल सरक्षण शक्ति प्राप्त है। राज्य के कानूनो के उचित पालन होने का उत्तरदायित्व भी उसी पर है। वह अपन विवेक से अध्यादेश जारी कर सकता है एव प्रशासकीय समझौता कर सकता है। सीनेट की सहमति से वह सन्धिया सम्पन्न करता है। अपन व्यापक अधिकारो के बल पर वह ऐसी परिस्थितिया उत्पन्न कर सकता है कि राष्ट्र अनिवायत युद्ध मे फस जाय। सकट काल म राष्ट्रपति एक प्रकार से पूर्ण तानाशाह बन जाता है।

ब्रिटिश प्रधानमन्त्री के हाथ मे कायकारिणी शक्तिया तो होती ही हैं किन्तु साथ ही वह लोकसभा का नेता भी होता है और उसे यह अधिकार भी प्राप्त है कि वह एक अतिशय विरोधी एव अवाछित लोकसभा को सम्राट से कह कर भग करा दे। चूकि लोकसभा के सदस्य गण नव निर्वाचन का खतरा मोल लेना पसन्द नही करते अत व प्राय प्रधानमन्त्री का विरोध एक सीमा तक ही करते हैं। यह बात अमरीकन

राष्ट्रपति पर लागू नहीं होती। यह केवल मात्र कार्यपालिका का अंग है, न वह कार्य में दखल देता है और उस कार्य में कोई भाग लेने की शक्ति ही प्राप्त है।

एक और भी दृष्टि से ब्रिटिश प्रधानमन्त्री राष्ट्रपति से अधिक शक्ति सम्पन्न है और वह यह है कि उस पर किसी प्रकार के संवैधानिक बन्धन विशेष प्रभाव नहीं डालते। यदि वह संविधान विरोधी कोई कार्य भी करे तो ब्रिटेन का सर्वोच्च न्यायालय उसे अवैध घोषित नहीं कर सकता। किन्तु इसके विपरीत अमरीकन राष्ट्रपति को पूर्णतः संवैधानिक सीमाओं के अन्तर्गत ही शासन करना पड़ता है व यथा सर्वोच्च न्यायालय उनके कार्यों को अवैध घोषित कर सकता है।

कार्यपालिका की उपर्युक्त शक्तियों तथा व्यावहारिक तुलना के बाद हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि किन्हीं मामलों में अमरीकन राष्ट्रपति ब्रिटिश प्रधान मन्त्री से निकृष्ट है तो अन्य क्षेत्रों में वह उससे अधिक शक्तिशाली है। सचाई तो यह है कि प्रधानमन्त्री और राष्ट्रपति के पद की महत्ता बहुत कुछ उनके व्यक्तित्व पर आधारित है। राजनीति एक ऐसा खेल है जहां निजी व्यक्तित्व की महत्ता बड़ा भाग अदा करती है।

राष्ट्रपति का मन्त्रि-मण्डल
(Cabinet of the President)

ब्रिटेन की भांति ही अमरीका में मन्त्रिमण्डल है किन्तु दोनों की स्थितियों में आकाश-पाताल का फर्क है। ब्रिटेन में मन्त्रि मण्डल ऐसे सहयोगियों का समूह है जो व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी हैं और एक साथ तैरते या डूबते हैं। प्रधानमन्त्री उसका नेतृत्व करता है, किन्तु उसकी स्थिति सहयोगियों में प्रथम की होती है। इसके विपरीत अमरिकन राष्ट्रपति का मन्त्रिमण्डल उसका परिवार मात्र है जिसके सदस्यों की बात को मानना या ठुकरा देना पूरी तरह उसकी मर्जी पर है। यद्यपि अपने मन्त्रियों अर्थात् सचिवों की नियुक्ति पर वह सीनेट की स्वीकृति लेता है किन्तु यह केवल मात्र औपचारिकता है। राष्ट्रपति मन्त्रियों को कभी भी पदच्युत कर सकता है और इसका उसकी स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वस्तुतः दोनों का सम्बन्ध मालिक और सेवक जैसा है।

कानूनी स्थिति

अमेरिकन संविधान में किसी मन्त्रि मण्डल या मन्त्रिपरिषद् का उल्लेख नहीं है। केवल अनुच्छेद धारा २ में लिखा गया है कि "राष्ट्रपति सरकार के विविध प्रशासकीय विभागों के प्रधान पदाधिकारियों से उन विषयों पर लिखित रूप में परामर्श ले सकता है जिनका उन विभागों के साथ सम्बन्ध है।" यह व्यवस्था करते हुए संविधान निर्माताओं में से अधिकांश का विचार था कि सीनेट के सदस्य ही राष्ट्रपति के परामर्शदाता के रूप में कार्य करेंगे। इस विचार का कारण यह था कि सीनेट उस समय एक छोटी सी संस्था थी जिसमें २६ सदस्य थे। दुर्भाग्य-

वश, सीनेट द्वारा परामर्श लेने की परम्परा चल नहीं सकी क्योंकि सीनेट ने राष्ट्रपति की इच्छाओं का खुलकर तिरस्कार किया। हार कर, वाशिंगटन ने शासन के प्रमुख अधिकारियों से महत्वपूर्ण प्रश्नों पर सलाह लेना शुरू कर दिया। सन् १७९१ के बाद तो उन्होंने प्रमुख विभागाध्यक्षों का प्रायः नियमित सम्मेलन प्रारम्भ कर दिया। उनसे नीति निर्धारण के प्रश्नों पर भी सलाह ली जाने लगी। ये ही विभागाध्यक्ष बाद में सामूहिक रूप में मन्त्रि मण्डल (Cabinet) कहे जाने लगे। सम्भवतः सन् १७९३ से सर्वप्रथम उनके लिये मन्त्रि मण्डल (Cabinet) शब्द का प्रयोग होने लगा। धीरे धीरे यह स्थायी व्यवस्था या संस्था के रूप में स्थापित हो गया।

प्रकट है कि अमेरिकन मन्त्रिमण्डल किसी संवैधानिक कानून की उपज नहीं है। टैफ्ट (Taft) ने उसकी सही स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है कि "मन्त्रि मण्डल केवल राष्ट्रपति की इच्छा का उत्पादन है। वह एक ऐसी संस्था है जिसका कोई कानूनी या संवैधानिक आधार नहीं है। उसका अस्तित्व केवल प्रथागत है। यदि राष्ट्रपति उसे समाप्त करना चाहे तो वह कर सकता है।" फिर भी व्यावहारिक रूप में आज मन्त्रि मण्डल की स्थिति सरकार के एक महत्वपूर्ण अंग की बन चुकी है।

नियुक्ति एवं संगठन

राष्ट्रपति के मन्त्रियों को सचिव (Secretaries) कहा जाता है। वर्तमान में इनकी संख्या ११ है। ये विभिन्न प्रशासकीय विभागों के अध्यक्ष होते हैं। अपने मन्त्रियों की नियुक्ति पर राष्ट्रपति को सीनेट की स्वीकृति लेनी होती है, किन्तु सीनेट प्रायः राष्ट्रपति द्वारा की हुई नियुक्ति को अस्वीकार नहीं करती है। राष्ट्रपति के मन्त्री न काँग्रेस के सदस्य होते हैं और न ही उसके प्रति उत्तरदायी। राष्ट्रपति अपने मन्त्रि मण्डल के गठन में पूर्ण स्वतन्त्र है, तथापि व्यवहार में उसे कुछ बातों का ध्यान रखना पड़ता है—

(i) यदि किन्हीं एक दो व्यक्तियों ने राष्ट्रपति के निर्वाचन में इस आधार पर महत्वपूर्ण सहयोग दिया हो कि उन्हें मन्त्रि-मण्डल में लिया जाएगा तो राष्ट्रपति उन्हें प्रायः अपने मन्त्रि मण्डल में स्थान देता है।

(ii) राष्ट्रपति यथासम्भव अपने दल के प्रमुख लोगों को मन्त्रि-मण्डल में प्रतिनिधित्व देता है ताकि दलगत एकता बनी रहे।

(iii) राष्ट्रीय संकट के समय कभी कभी महत्वपूर्ण स्तम्भों को भी मन्त्रि-मण्डल में शामिल करना पड़ता है।

(iv) राष्ट्रपति भौगोलिक प्रदेशों तथा विभिन्न प्रमुख वर्गों को भी प्रतिनिधित्व देने का प्रयास करता है।

(v) राष्ट्रपति ऐसे ही व्यक्तियों को मन्त्रिमण्डल में स्थान देने का प्रयत्न करता है जो मिलकर एक साथ कार्य कर सकें।

मन्त्रि-मण्डल के सभी सदस्यों का पद साधारण रूप से समान होता है, तथापि विदेशी सचिव को अन्य सहयोगियों की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान मिला हुआ है। १६४७ के राष्ट्रपति पद के उत्तराधिकार कानून द्वारा भी उसका स्थान अन्य सहयोगियों में प्रथम रखा गया है।

राष्ट्रपति और मन्त्रि मण्डल का पारस्परिक सम्बन्ध

मन्त्रि मण्डल राष्ट्रपति के सलाहकारों की एक समिति मात्र है जिसे आलोचकों ने उसका परिवार तक कह दिया है। मन्त्रियों की नियुक्ति पर राष्ट्रपति को सीनेट से स्वीकृति लेनी पड़ती है, किन्तु सीनेट प्रायः राष्ट्रपति की इच्छा का विरोध नहीं करती। कोई भी नया राष्ट्रपति शपथ लेने के बाद ही अपने मन्त्रि मण्डल के सदस्यों के नाम घोषित कर देता है और वे लोग सामान्यतया तब तक अपने पदों पर काम करने की अपेक्षा रखते हैं जब तक कि राष्ट्रपति अपने पद पर रहता है। राष्ट्रपति जब चाहे तब उन्हें पदच्युत कर सकता है और ऐसा करने में उसे सीनेट की स्वीकृति की कोई आवश्यकता नहीं होती। ऑग के शब्दों में, "मन्त्रीमण्डल के मन्त्री को यह समझ लेना चाहिए कि वह राष्ट्रपति की छन छाया में ही जवित रह सकता है।' अमरीका में वास्तविक कार्यपालक केवल एक ही व्यक्ति अर्थात् राष्ट्रपति है और मन्त्रिमण्डल के दूसरे सदस्य तो केवल उसके सहायक मात्र हैं। उनका उत्तरदायित्व पूर्णतः राष्ट्रपति के प्रति ही है। प्रा० लास्की ने लिखा है "अमरीकन मन्त्रिमण्डल यूरोप के प्रतिनिधि शासन के आधार पर स्थापित मन्त्रिमण्डल से बिल्कुल भिन्न है। संविधान के अनुसार अमरीकन मन्त्रिमण्डल के सदस्य कांग्रेस के किसी भी सदन के सदस्य नहीं होते और न वे किसी वाद विवाद में भाग ले सकते हैं। मन्त्रिमण्डल के अधिकारी एकमात्र राष्ट्रपति के सलाहकार हैं। वे कांग्रेस को सूचना दे सकते हैं। वे किसी बैठक में अपनी नीति का समर्थन करने के लिए उपस्थित हो सकते हैं। वे जनता में भाषण दे सकते हैं। परन्तु इतना सब कुछ होने पर भी अमरीकन मन्त्रिमण्डल के सदस्य राष्ट्रपति की भावना की उदारता पर निर्भर हैं। यह बात स्पष्ट है कि मन्त्रिमण्डल का कोई भी सदस्य राष्ट्रपति से विमुख नहीं हो सकता, और यदि वह ऐसा करता है तो उसके लिए सिवाय त्याग पत्र देने के दूसरा कोई मार्ग नहीं रहता। मन्त्रिमण्डल के सदस्य अपनी बैठक में काफी बहस कर सकते हैं और राष्ट्रपति को अपना मतभेद प्रकट कर सकते हैं, परन्तु जब राष्ट्रपति कोई बात निश्चयात्मक रूप से कह देता है तब सबको उसे स्वीकार करना ही पड़ता है। मन्त्रिमण्डल के समस्त सदस्यों को उसके आदेशों का पालन करना ही पड़ता है। राष्ट्रपति अपना निर्णय मन्त्रिमण्डल के समक्ष प्रस्तुत करके उनसे परामर्श ले सकता है, उनसे परामर्श करके अपना निर्णय दे सकता है और उसका निर्णय अन्तिम होता है, चाहे समस्त सदस्य उसके निर्णय के विरुद्ध क्यों न हों। राष्ट्रपति लिंकन द्वारा समर्थित एक प्रस्ताव का जब उसके सातों मन्त्रियों ने विरोध किया तो उसने कहा था कि "सात प्रस्ताव के विपक्ष में हो

और एक प्रस्ताव के पक्ष हो, और जीत एक की ही होती है (Seven nayes one ayes and ayes have it) ।"

स्पष्ट है कि अमेरिका मे मन्त्रिमण्डल मात्र एक सलाहकार मण्डल है और वहा एक मात्र राष्ट्रपति की इच्छा ही शासन करती है। हर विषय मे राष्ट्रपति की ही शक्ति और उसके ही गौरव तथा उत्तरदायित्व की झलक मिलती है। अमरीकन मन्त्रिमण्डल की बैठको का वस्तुत वह महत्व नही है जो ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल की बैठको का है। यह आवश्यक नही है कि राष्ट्रपति अपने मन्त्रि-मण्डल की बैठको को नियमित रूप से बुलावे ही। वह जब आवश्यक समझता है, मन्त्रिमण्डल की बैठक बुला लेता है। इन बैठको की कार्यवाही प्राय गुप्त होती है, उनका कोई लेखा नही रखा जाता। प्रत्येक विभाग के मामलो के विषय मे राष्ट्रपति विभागीय मन्त्रियो के साथ पृथक पृथक वार्ता करता है। अत पूरे मन्त्रि-मण्डल की बैठको मे प्राय सामान्य नीति से सम्बन्धित प्रश्न ही विचारार्थ आ पाते हैं और इसमे भी उद्देश्य केवल राय जानने के अतिरिक्त और कुछ नही होता।

मन्त्रिमण्डल के किसी सदस्य के त्याग पत्र का राष्ट्रपति की स्थिति पर कोई प्रभाव नही पडता। ब्रिटेन मे या फ्रास मे जब मन्त्रिमण्डल का कोई सदस्य त्याग पत्र देता है तो प्रधान मन्त्री का सिर चकरा जाता है और उसके प्रधान मन्त्रित्व तक का खतरे मे पड जाने का डर रहता है। लेकिन अमरीका मे राष्ट्रपति को कभी कोई ऐसी परेशानी नही होती, क्योकि वह जानता है कि मन्त्रिमण्डल का कोई भी सदस्य जिसे वह पदच्युत करता है, राष्ट्रपति की स्थिति को खतरे मे नही डाल सकता। वह समझता है कि मन्त्रिमण्डल तो उसका एक प्रकार से सेवक है जिसकी शक्ति को घटाना बढाना उसके हाथ मे है।

स्पष्ट है कि मन्त्रि-मण्डल का रूप सिर्फ वही है जो राष्ट्रपति उसे देना चाहता है। कांग्रेस ने सीनेट को यद्यपि मन्त्रियो की नियुक्ति की स्वीकृति का अधिकार दिया है, लेकिन व्यवहार मे यह केवल औपचारिता मात्र है। हा, कांग्रेस को यह प्रभावशाली अधिकार अवश्य है कि वह मन्त्रि मण्डल के सदस्यो के अधीनस्थ विभिन्न विभागो मे सुधार और परिवर्तन कर सकती है, किसी भी विभाग का अन्त कर सकती है, उनके कार्यो की जाच के लिए समितिया नियुक्त कर सकती है और उसके अध्यक्ष के विरुद्ध महाभियोग भी चला सकती है।

अमरिकन मन्त्रि मण्डलीय प्रणाली के सुधार के उपाय

अमेरिकन मन्त्रि-मण्डल की उपरोक्त निर्बल स्थिति से उबारने के लिए विद्वानो ने समय-समय पर अनेक सुझाव दिये हैं, जैसे (i) मन्त्रि मण्डल के सदस्यो को यह अधिकार दिया जाए कि वे कांग्रेस के दोनो सदनो मे भाग ले सकें, चाहे उनको मत-दान का अधिकार न हो, (ii) मन्त्रिमण्डल के सदस्य अपनी इच्छानुसार

जब चाहें प्रतिनिधि सभा की कार्यवाही में उपस्थित रह सकें और वहाँ अपने विचार प्रकट कर सकें, (iii) संयुक्त व्यवस्थापिका–कार्यकारिणी परिषद या मन्त्रिमण्डल का निर्माण किया जाए ताकि शासन के दोनो विभागों में प्रभावशाली ढंग से कानूनी सम्बन्ध स्थापित हो सके आदि।

प्रा० कारविन ने यह सुझाव दिया था कि राष्ट्रपति का अपने मन्त्रि-मण्डलीय सदस्य कांग्रेस के प्रमुख सदस्यों में से चुनने चाहियें। कुछ अन्य उल्लेखनीय सुधार प्रस्ताव हमन फाइनर ने दिये हैं, जो इस प्रकार हैं—

1 राष्ट्रपति और उसके मन्त्रिमण्डलीय साथी जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित हों तथा मन्त्रिमण्डल का प्रत्येक सदस्य राष्ट्रपति कहलाये। इस प्रकार ग्यारह राष्ट्रपतियों का एक नवीन मन्त्रिमण्डल निर्वाचित किया जाये और इन सबका निर्वाचन राष्ट्रपति के साथ ही हो।
2 सीनेट का सभापति राष्ट्रपति न हो।
3 मन्त्रिमण्डल के सब सदस्य प्रशासनिक कार्य से ही सम्बद्ध हों।
4 मन्त्रिमण्डल के सभी सदस्यों का निर्वाचन काल चार वर्ष हो।
5 कांग्रेस के दोनों सदन भी राष्ट्रपति के समानान्तर चार वर्ष के लिए ही निर्वाचित हों।
6 राष्ट्रपति को यह अधिकार मिले कि वह मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को पदच्युत कर कांग्रेस के सदस्यों में से नये सदस्य चुन सके।
7 मन्त्रिमण्डल में उसी व्यक्ति को लिया जाए जो कांग्रेस के किसी सदन का सदस्य हो, अथवा उसका चार वर्ष तक सदस्य रह चुका हो।

राष्ट्रपति और कांग्रेस
(The President and the Congress)

संयुक्त राज्य अमेरिका में अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली है और इसीलिए कांग्रेस एवं राष्ट्रपति दोनों एक दूसरे से स्वतन्त्र हैं। संविधान के अनुसार स्वतन्त्रता की जो स्थिति राष्ट्रपति और कांग्रेस दोनों को प्राप्त है, वह उन्हें परस्पर अति के निकट नहीं आने देती, चूँकि दोनों ही जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं, अतः वे स्वयं को एक दूसरे से अधिक महत्वपूर्ण समझते हैं और अपने अपने अधिकारों और सम्मान के लिए एक दूसरे के प्रति विशेष सतर्क रहते हैं। शक्ति विभाजन की सांविधानिक व्यवस्था के कारण दोनों ही अपने-अपने क्षेत्र में एक दूसरे से स्वतन्त्र रहते हैं और न व्यवस्थापिका कार्यपालिका को भंग कर सकती है (महाभियोग की प्रक्रिया को छोड़कर) और न कार्यपालिका ही व्यवस्थापिका को भंग करने का अधिकार रखती है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति अपने पद पर राष्ट्रीय निर्वाचन के परिणामस्वरूप आता है, अतः अधिकांश समस्याओं पर उसका दृष्टिकोण राष्ट्रीय होता है। इसके विपरीत कांग्रेस उन सदस्यों की संस्था है, जो अपने अपने राज्यों से क्षेत्रीय आधार

पर निर्वाचित होते है। फलस्वरूप समस्याओ पर उनके विचार क्षेत्रीय दृष्टिकोण से प्रभावित रहते है। ऐसी स्थिति म राष्ट्रपति और काग्रेस दोनो के मध्य प्रत्यक्ष सामजस्य प्राय नही हो सकता।

परन्तु इसका यह अभिप्राय नही है कि राष्ट्रपति और काग्रेस उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव के समान विलग रहते हैं। शक्ति विभाजन और पारस्परिक स्वतन्त्रता के होते हुए भी शासन के इन दो प्रमुख अगो म समन्वय पाया जाता है और साथ ही नियन्त्रण एव सन्तुलन प्रणाली के माध्यम से यह व्यवस्था भी देखन को मिलती है कि एक का दूसर के स्वच्छाचारिता पर नियन्त्रण रहे। काग्रेस और राष्ट्रपति के पारस्परिक सम्बन्धो और एक दूसर के पारस्परिक नियन्त्रणो आदि का अध्ययन हम निम्नलिखित शीर्षको के अन्तर्गत भली प्रकार कर सकते है—

प्रशासकीय क्षेत्र मे काग्रेस व राष्ट्रपति

राष्ट्रपति राज्य का अध्यक्ष है, राज्य की सर्वोच्च कार्यपालिका है। परन्तु कार्यपालक शक्तियो का वह एकछत्र स्वामी नही है, उनके प्रयोग म काग्रेस राष्ट्रपति की सहभागिनी है। मुख्य कार्यपालक के रूप मे राष्ट्रपति राज्य के विभिन्न उच्च एव निम्न वर्गीय पदो पर नियुक्तिया करता है परन्तु केवल निम्नवर्गीय नियुक्तिया ही वह पूर्णत स्वच्छा स कर सकता है उच्चवर्गीय नियुक्तियो पर सीनेट की स्वाकृति आवश्यक होती है। व्यवहार म सीनेट प्राय राष्ट्रपति की नियुक्तियो को अस्वीकृत नही करती किन्तु महत्वपूर्ण नियुक्तिया पर वह निश्चय ही बडा वाद-विवाद करती है और उसन अनक बार एसी नियुक्तियो पर अपनी अस्वीकृति भी दी है। इसी तरह बहुत से पदो का जब काग्रेस द्वारा सृजन किया जाता है, तब भी उन पर नियुक्ति के लिए सीनेट की स्वीकृति आवश्यक हो सकती है, यदि काग्रेस एसा निश्चय कर। फिर नियुक्तियो के सम्बन्ध म राष्ट्रपति को व्यावहारिक रूप से प्राय 'सीनेट की शालीनता' (Senatorial Courtesy) की प्रथा का पालन करना पडता है और वह विभिन्न नियुक्तिया, जो विभिन्न राज्यो म की होती है, सीनेटरो की सिफारिशो के अनुसार ही कर देता है। पुनश्च, यद्यपि राष्ट्रपति को, जब सीनेट का अधिवेशन नही हो रहा हो अन्तरिम नियुक्तिया (Recess Appointments) करने का अधिकार है, लेकिन सीनेट का सत्र आरम्भ होने पर उसे इन नियुक्तियो के लिए सीनेट की स्वीकृति लेनी होती है। चू कि राष्ट्रपति सीनेट का अधिवेशन समाप्त होते ही उन नियुक्तियो को पुनर्जीवित कर सकता है जो सीनेट ने ठुकरा दी हो अत उसकी मनमानी पर अकुश रखने के लिए यह व्यवस्था है कि राष्ट्रपति यदि एसी किसी जगह पर नियुक्ति करता है, जो सीनेट के अधिवेशनकाल म विद्यमान थी, तो उस पर नियुक्त व्यक्ति को तब तक वेतन नही मिलेगा, जब तक उसकी नियुक्ति की सीनेट द्वारा विधिवत पुष्टि न हो जाय।

लेकिन जहा उच्च पदो पर नियुक्तियो के सम्बन्ध म काग्रेस के उच्च सदन सीनेट की स्वीकृति का प्रतिबन्ध राष्ट्रपति पर लगा हुआ है, वहा कुछ वर्गो के पदो

को छोड़कर (सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश, कांग्रेस द्वारा स्थापित आयोगों आदि के सदस्यों तथा लोकसेवा के नियमों के अनुसार नियुक्त पदाधिकारी) अन्य अधिकारियों को राष्ट्रपति स्वेच्छा से हटा सकता है और ऐसा करने में उसे सीनेट की स्वीकृति की आवश्यकता नहीं होती। इस प्रकार पदच्युति के अपने इस अधिकार के बल पर राष्ट्रपति एक विरोधी सीनेट पर उससे सहयोग रखने का दबाव डाल सकता है। कांग्रेस के सदस्य अपने मित्रों और रिश्तेदारों की नियुक्तियों के लिए सदैव लालायित रहते हैं और इसीलिए वे राष्ट्रपति का अनावश्यक विरोध नहीं करते।

पर राष्ट्र नीति के संचालक के रूप में राष्ट्रपति विदेशों से संधियां करता है और आवश्यकता पड़ने पर युद्ध का संचालन भी करता है। परन्तु अपने इन कार्यों के सम्पादन में भी वह किसी न किसी रूप में कांग्रेस पर निर्भर है। संधियाँ देश पर लागू तभी हो सकती हैं जबकि सीनेट $\frac{2}{3}$ बहुमत से उनकी पुष्टि कर दे। सीनेट की विदेशी मामलों की समिति राष्ट्रपति की पर राष्ट्र नीति पर सदैव निगाह रखती है और राष्ट्रपति को उसकी राय का उचित आदर करना पड़ता है। इसी तरह विदेशों के साथ युद्ध की घोषणा करने से पूर्व भी राष्ट्रपति के लिए यह आवश्यक होता है कि वह कांग्रेस के दोनों सदनों की सम्मिलित स्वीकृति प्राप्त करले। परन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिए कि कांग्रेस इस क्षेत्र में राष्ट्रपति को पूरी तरह नियन्त्रित रखती है। अपनी महान शक्तियों के बल पर और एक राष्ट्र के वास्तविक प्रधान के रूप में राष्ट्रपति ऐसे कूटनीतिक सम्बन्ध बना सकता है या ऐसी विषम परिस्थितियां पैदा कर सकता है अथवा सेना को ऐसी अवस्था में खड़ा कर सकता है कि युद्ध अनिवार्य हो जाय। आधुनिक समय में राष्ट्रपति की युद्ध करने की शक्ति ने वास्तविक रूप में कांग्रेस के युद्ध की घोषणा के अधिकार को निगल लिया है। फिर भी अन्ततोगत्वा कांग्रेस के एक दृढ़ निश्चय के सामने उसे झुकना पड़ता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि राष्ट्रपति कार्यपालन सम्बन्धी कार्यों पर कांग्रेस का पर्याप्त प्रभाव रहता है और उसके अनेक कार्य ऐसे हैं जिनमें कांग्रेस सहभागिनी रहती है, परन्तु साथ ही कांग्रेस इतनी शक्ति सम्पन्न भी नहीं है कि वह कार्यपालन सम्बन्धी कार्यों में राष्ट्रपति का नेतृत्व करे।

व्यवस्थापन क्षेत्र में कांग्रेस व राष्ट्रपति

संविधान के शक्ति विभाजन के अनुसार व्यवस्थापन के क्षेत्र में कांग्रेस का एकाधिकार है और राष्ट्रपति का उससे कोई प्रयोजन नहीं है। परन्तु वास्तविकता यह है कि व्यवहार में राष्ट्रपति एक बड़ी सीमा तक कांग्रेस के व्यवस्थापन कार्य का सहभागी है। स्वयं संविधान में एक स्थल पर यह उल्लिखित है कि "राष्ट्रपति समय समय पर संघ की स्थिति के बारे में कांग्रेस को सूचना देगा और ऐसे प्रस्तावों

की सिफारिश उसके विचारार्थ करेगा, जिन्हें वह आवश्यक समझे।" स्पष्टतः इस व्यवस्था के अनुसार राष्ट्रपति को अधिकार है कि वह समय समय पर, आन्तरिक व बाह्य परिस्थिति का ज्ञान कराते हुए कांग्रेस को अपने लिखित या मौखिक संदेश भेजता रहे। चूंकि प्रशासन के क्षेत्र में और वैदेशिक मामलों में राष्ट्रपति का अनुभव प्रायः बड़ा गहन होता है और देश का वह मुख्य कार्यपालक होता है, अतः कांग्रेस राष्ट्रपति के इन सन्देशों को पर्याप्त महत्व देती है और प्रायः बहुत से कानूनों का सूत्रपात राष्ट्रपति के इन्हीं सन्देशों से होता है। राष्ट्रपति कांग्रेस को भेजे जाने वाले अपने सन्देश में देश की सामान्य दशा का विवेचन करते हुए कांग्रेस को सुझाव देता है कि विद्यमान परिस्थितियों या समस्याओं का सामना करने के लिए सामान्यतया किस प्रकार का व्यवस्थापन आवश्यक है। अपने सन्देश के अन्तर्गत राष्ट्रपति विशिष्ट कानूनों के निर्माण का भी सुझाव भेजता है। यद्यपि सिद्धान्त रूप में अथवा सांविधानिक दृष्टि से कांग्रेस राष्ट्रपति के संदेशों व सुझावों को मानने न मानने के लिए स्वतन्त्र है तथापि व्यवहार में वह उन्हें अपनी कार्यवाहियों में प्राथमिकता देती है। बिना किसी गम्भीर कारण के कांग्रेस राष्ट्रपति के प्रस्तावों को प्रायः ठुकराने का साहस नहीं करती, क्योंकि उसे भी अनेक बातों के लिए राष्ट्रपति पर निर्भर रहना पड़ता है।

कांग्रेस द्वारा राष्ट्रपति के संदेशों का प्रायः आदर ही होता रहा है। यदि कांग्रेस राष्ट्रपति के संदेशों की अवहेलना करे तो राष्ट्रपति सीधे जनता से अपील करके और अन्य प्रकार से लोकमत को प्रभावित कर सकता है और तब जनता कांग्रेस के सदस्यों को राष्ट्रपति की इच्छानुसार आचरण करने के लिये बाध्य कर सकती है। अब यह प्रथा पूरी तरह स्थापित सी हो गई है कि राष्ट्रपति नियमित रूप से कांग्रेस को संदेश भेजता है और व्यवस्थापन का अधिकांश कार्य कांग्रेस द्वारा राष्ट्रपति के सन्देशों के आधार पर ही किया जाता है।

व्यवस्थापन कार्यक्रम में अपनी इच्छा थोपने की दृष्टि से राष्ट्रपति अनेक प्रकार से सक्षम रहता है। प्रथम, प्रमुख कांग्रेस सदस्यों की इच्छा के अनुकूल नियुक्तियां करके वह उन्हें व्यवस्थापन सम्बन्धी कार्य के लिये अपने अनुकूल बना सकता है। दूसरे, विरोधी कांग्रेस सदस्यों को वह उनके द्वारा दिये हुए लाभों को छीन लिये जाने का भय दिखाकर (उदाहरणार्थ उच्च पदों पर नियुक्त उनके मित्रों व रिश्तेदारों आदि को पदच्युत करने की धमकी देकर) भी अपने अनुकूल बना सकता है। तीसरे, कांग्रेस के प्रमुख सदस्यों से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करके और उन्हें आन्तरिक प्रशासनिक आवश्यकताओं व वैदेशिक सम्बन्धों की समस्याओं से अवगत कराकर भी राष्ट्रपति कांग्रेस सदस्यों को इस बात के लिये तैयार कर सकता है कि वे उसकी इच्छानुकूल व्यवस्थापन करने की दिशा में अग्रसर हों। चौथे, एक प्रमुख राजनीतिक दल का सर्वोच्च नेता होने के नाते भी वह अपनी इच्छानुकूल

व्यवस्थापन कराने में पर्याप्त सक्षम है। राष्ट्रपति जिस दल का नेता होता है, उसी दल के सदस्य भी कांग्रेस के सदस्य होते हैं और कभी कभी तो उसी दल के सदस्यों का कांग्रेस में बहुमत भी होता है। चूंकि दलीय नेता के रूप में राष्ट्रपति द्वारा इच्छित अधिकांश व्यवस्थापन प्रायः दलीय कार्यक्रम के अनुसार होता है अतः कांग्रेस में उसके दल के सदस्य स्वयं इस बात के लिये प्रयत्नशील रहते हैं कि उनके नेता राष्ट्रपति द्वारा सुझाया हुआ व्यवस्थापन कार्यक्रम कांग्रेस द्वारा कार्यान्वित हो जाये।

कांग्रेस के व्यवस्थापन के अधिकार को राष्ट्रपति अपनी निषेध शक्ति (Veto Power) द्वारा भी नियन्त्रित करता है। विधि निर्माण कार्य कांग्रेस का है, परन्तु कांग्रेस द्वारा पारित कोई भी विधेयक कानून तभी बन सकता है जबकि राष्ट्रपति उस पर हस्ताक्षर करदे। राष्ट्रपति कांग्रेस द्वारा पारित विधेयक पर अपना निलम्बन प्रतिषेध (Suspensory Veto) लगा सकता है, किन्तु कांग्रेस के दोनों सदनों द्वारा $\frac{2}{3}$ बहुमत से उस विधेयक को पुनः पास कर देने पर राष्ट्रपति उसे रोक नहीं सकता। लेकिन व्यवहार में यह देखा गया है कि राष्ट्रपति द्वारा वीटो किये गये विधेयकों में से प्रायः एक प्रतिशत विधेयक भी दुबारा कांग्रेस द्वारा पारित नहीं किया जा सका। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति अधिवेशन के अन्त के निकट भेजे गये विधेयकों को Pocket Veto कर सकता है। राष्ट्रपति Veto शक्ति का प्रयोग करके ही नहीं प्रत्युत उसे प्रयुक्त करने की धमकी देकर भी कांग्रेस पर अपना प्रभाव डाल सकता है। वस्तुतः देश के विधान मण्डल में लड़ी हुई व्यवस्था सम्बन्धी लड़ाई का कांग्रेस का कोई भी पक्ष केवल इतने समय में हार सकता है, जितनी देर में राष्ट्रपति 'नहीं' एवं कुछ दूसरे व्याख्यात्मक शब्द लिखे। परन्तु जहां राष्ट्रपति कांग्रेस का विरोध करने की ठान लेता है वहां कांग्रेस भी पर अपनी नियन्त्रण शक्ति द्वारा एवं विधेयकों को दुबारा पारित करने की शक्ति द्वारा राष्ट्रपति को सीमा में रहने को विवश कर सकती है। संविधान के अनुसार वित्त सम्बन्धी अधिकार पूर्णतः कांग्रेस को ही प्राप्त हैं। व्यवहार में यद्यपि बजट राष्ट्रपति के संरक्षण में तैयार किया जाता है किन्तु उसे स्वीकार अस्वीकार या कम करना पूर्णतः कांग्रेस पर निर्भर है। इस प्रकार राष्ट्रपति द्वारा चाहे गये धन में कमी करके कांग्रेस उनकी सारी योजनाओं पर तुषारापात कर सकती है और प्रशासनिक क्षेत्र में उसे असफल बना सकती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि व्यवस्थापन क्षेत्र में जहां राष्ट्रपति कांग्रेस के निर्णयों पर पर्याप्त प्रभाव डालता है, वहां कांग्रेस भी सदैव इस स्थिति में रहती है कि वह राष्ट्रपति के स्वेच्छाचारी आचरण पर रोक लगा सके। पर अत्यन्त दुराग्रही राष्ट्रपति का दोष सिद्ध करने के लिये कांग्रेस के पास महाभियोग का हथियार रहता है, यद्यपि व्यवहार में यह अस्त्र असफल ही सिद्ध हुआ है और अब तक किसी भी राष्ट्रपति को अपराधी नहीं ठहराया जा सका है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रपति और कांग्रेस दोनों संवैधानिक व्यवस्थाओं और प्रथाओं के अनुसार एक दूसरे के कार्यों को प्रभावित करते हैं और अपने सम्बन्धों में, अवरोध व संतुलन प्रणाली के कारण अन्योन्याश्रित हैं। फिर भी व्यवहार में अपनी विशेष स्थिति के कारण कांग्रेस की अपेक्षा राष्ट्रपति का अधिक महत्व और शक्ति प्राप्त है। आधुनिक समय में राष्ट्रपति के अधिकारों में निरंतर वृद्धि हुई है। थियोडोर रूजवेल्ट, वुडरो विल्सन और आइजन हावर जैसे शक्तिशाली राष्ट्रपतियों के कार्यकाल में राष्ट्रपति कांग्रेस का नहीं वरन् कांग्रेस राष्ट्रपति का अनुगामिनी रही है। राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने 12 वर्ष के कार्यकाल में 631 विधेयकों पर अपने निषेधाधिकार का प्रयोग किया जिनमें से केवल 9 विधेयकों को ही कांग्रेस ने पुनः पारित किया। राष्ट्रपति टू्मैन ने 251 बार निषेधाधिकार का प्रयोग किया जिनमें केवल 12 को कांग्रेस ने नहीं माना। राष्ट्रपति आइजन होवर ने यद्यपि निषेधाधिकार का प्रयोग केवल 137 बार किया, लेकिन उनके द्वारा निषिद्ध विधेयकों में से एक को भी फिर से कांग्रेस ने पारित नहीं किया।

उपराष्ट्रपति

(Vice President)

संयुक्त राज्य अमेरिका की शासन व्यवस्था में उपराष्ट्रपति का महत्वपूर्ण स्थान नहीं है। उसका कार्य उसी समय प्रारम्भ होता है जिस समय राष्ट्रपति का अपना पद किसी भी कारण से रिक्त हो जाता है। उपराष्ट्रपति के निर्वाचन की विधि उसी प्रकार की है जैसी राष्ट्रपति की। राष्ट्रपति के निर्वाचक दो वोट देते हैं—एक राष्ट्रपति के लिए और दूसरा उपराष्ट्रपति के लिए। जिस व्यक्ति को पूर्ण बहुमत प्राप्त होता है वही उपराष्ट्रपति बनता है, किन्तु इस सम्बन्ध में बात यह है कि उसके पक्ष में आधे से अधिक मत आने चाहिए। यदि किसी को भी पूर्ण बहुमत प्राप्त नहीं होता तो सीनेट दो उम्मीदवारों में से एक को चुन लेती है और वह व्यक्ति उपराष्ट्रपति पद पर आसीन हो जाता है। वह निश्चय करने के लिए कि कौन उपराष्ट्रपति हो, सीनेट के कम से कम दो तिहाई सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक है तथा उपराष्ट्रपति को कुल सदस्यों के आधे से अधिक मत प्राप्त होना जरूरी है। इस बात का ध्यान रखा जाता है कि राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति एक ही राज्य के तो नहीं है।

उपराष्ट्रपति के पद के उम्मीदवार में निम्न योग्यतायें होनी चाहिये—

(क) संयुक्त राज्य अमेरिका का वह जन्मजात नागरिक हो।

(ख) उसकी आयु 35 वर्ष से अधिक हो।

(ग) वह कम से कम 14 वर्ष से संयुक्त राज्य अमेरिका में निवास करता हो।

उपराष्ट्रपति पद के उम्मीदवार का निश्चय करने के लिए दो बातो का ध्यान रखा जाता है—

(क) उपराष्ट्रपति उस भौगोलिक भाग का निवासी न हो जिस भौगोलिक भाग का निवासी राष्ट्रपति है। यदि राष्ट्रपति उत्तर या पूर्व का है तो उपराष्ट्रपति दक्षिण या पश्चिम का निवासी होना चाहिए।

(ख) उपराष्ट्रपति और राष्ट्रपति दोनो एक पार्टी के विंग्ज (Wings) से सम्बन्धित नही हो वरन भिन्न भिन्न विंग्ज के हो।

जहा तक उपराष्ट्रपति के अधिकारो और कार्यों का सम्बन्ध है, वे महत्वपूर्ण नही है। उपराष्ट्रपति को प्राय दो मुख्य कार्यों को पूरा करना पडता है—प्रथम, यदि राष्ट्रपति की मृत्यु के कारण अथवा अन्य किसी कारण उसका पद रिक्त हो जाय तो शेष अवधि के लिये उसका कार्य भार सम्भालना। द्वितीय उपराष्ट्रपति को कुछ शक्ति प्रदान करने के लिये संविधान निर्माताओ ने उसे सीनेट का अध्यक्ष (Chairman) बनाया है। परन्तु सीनेट मे भी वह केवल निर्णायक मत ही दे सकता है किसी अन्य मतदान मे वह भाग नही ले सकता क्योकि वह सीनेट का सदस्य न होकर बाहर का व्यक्ति होता है। सीनेट के अध्यक्ष के रूप मे उपराष्ट्रपति को यह लाभ है कि वह विधि निर्माण क्षेत्र मे होने वाले कार्य कलापो को जान सकता है। चूकि उपराष्ट्रपति द्वारा प्रशासन की नीतियो और योजनाओ से परिचित होना लाभप्रद ही है, अत भूतकाल मे रहकर उपराष्ट्रपति को मन्त्रिमण्डलीय बैठको मे निमन्त्रित किया जाता रहा और राष्ट्रपति रूजवेल्ट के समय से तो उसे प्राय नियमित रूप से मन्त्रिमण्डल मे आमन्त्रित किया जाता है। राष्ट्रपति आइजनहावर के काल से उपराष्ट्रपति का पद अधिक सशक्त हुआ है और अधिक सम्मानजनक व प्रभावशाली भी। 1949 से उपराष्ट्रपति राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद का सदस्य भी होता है। 1954 मे यह घोषणा भी की गई कि जब कभी राष्ट्रपति परिषद की बैठको से अनुपस्थित होगे तो उपराष्ट्रपति ही इसका सभापतित्व करेगा। राष्ट्रपति के अस्वस्थ होने की दशा मे उपराष्ट्रपति ही मन्त्रिमण्डल की बैठको का सभापतित्व करता है। अब शनै शनै उपराष्ट्रपति के पद का महत्व बढता जा रहा है और उपराष्ट्रपति को एक राजनीतिक एव प्रशासकीय पदाधिकारी के रूप मे विकसित करने के प्रयास किये जा रहे हैं। उपराष्ट्रपति का 45 हजार डॉलर प्रतिवर्ष वेतन मिलता है और नियमानुसार दूसरे भत्ते दिये जाते हैं।

5

अमेरिका की न्यायपालिका
(THE AMERICAN JUDICIARY)

"यदि अदालतें कानून के वास्तविक अर्थों और
परिचालन की व्याख्या और अर्थ निर्धारण
करें तो ये मृत अक्षरों के समान हैं।"

—एलेग्जैण्डर हेमिल्टन

अमरिकन सविधान निर्माताओं की सम्भवत सबसे अधिक गौरवपूर्ण देन एक ऐसे सघीय न्यायालय की स्थापना है जो सब प्रकार से स्वतन्त्र और शक्तिशाली होने के अतिरिक्त सविधान मे एक विशेष महत्व रखता हो। सविधान निर्माताओं का विचार था कि एक ऐसे सघीय न्यायिक शक्ति की स्थापना की जानी चाहिए जो सघीय व्यवस्थापिका तथा न्यायपालिका की शक्ति म सामजस्य बनाये रखे और ऐसी राष्ट्रीय न्यायपालिका के रूप म कार्य करे जो न केवल स्वय अपने म पूर्ण हो बल्कि सघ एव राज्यो के अन्य सभी न्यायालयो से उच्चतर हो तथा देश की कानूनी व्यवस्था के लिए अन्तिम रूप से उत्तरदायी हो। सविधान निर्माताओं की मान्यता थी कि एक ऐसा सवमान्य मध्यस्थ' अवश्य होना चाहिए जो समस्त राज्य और सघ के हितो से ऊपर हो तथा निष्पक्ष रूप से इनके झगडो को निपटाये।

अत यही सब सोच समझ कर अमरिकन सविधान की तीसरी धारा मे यह व्यवस्था की गयी कि "न्याय सम्बन्धी शक्ति एव सर्वोच्च न्यायालय और उन अन्य नीचे के न्यायालयो मे निहित होगा, जिनकी स्थापना व प्रतिष्ठा काग्रेस विधि द्वारा समय-समय पर करेगी।' इस अनुच्छेद के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना का 'आदेशित (Mandatory) बनाया गया और निम्न न्यायालयो की स्थापना का उत्तरदायित्व काग्रेस की मर्जी पर छोड दिया गया। सविधान म उन सब बातो की भी स्पष्टत व्यवस्था कर दी गयी जिनके द्वारा न्यायपालिका की

सर्वोच्चता और नम्रता कायम रह सके। उदाहरणार्थ, सविधान की तीसरी उपधारा के दूसरे भाग में यह उल्लेख कर दिया गया कि सघीय न्यायपालिका की शक्ति सर्वोपरि और सब व्यापक होगी। न्यायपालिका की निष्पक्षता बनाये रखने के लिए यह व्यवस्था की गयी कि न्यायाधीशों का कार्यकाल स्थाई होगा तथा नियुक्ति के समय निश्चित किये हुए वेतन को उनके कार्यकाल में घटाया नहीं जा सकेगा।

सघीय न्यायालयो का सगठन
(Composition of Federal Judiciary)

सघीय न्यायालय दो प्रकार के है—

1 व्यवस्थापिक न्यायालय एव
2 सवैधानिक न्यायालय

व्यवस्थापक न्यायालय (Legislative Courts)

ये वे न्यायालय हैं जिनकी स्थापना काग्रेस अपनी विधायिनी शक्ति द्वारा करती है। इन न्यायालयो द्वारा सविधान की तीसरी धारा में उल्लिखित न्यायिक शक्ति का उपभोग नहीं किया जाता। उनका कार्य तो उन कानूनो के क्रियान्वयन में प्रशासन को सहयोग देना है जिन्हें काग्रेस अपनी निहित शक्ति (Implied Power) अथवा प्रदत्त शक्ति (Delegated Power) का प्रयोग करने के लिए बनाती है। कोलम्बिया जिला तथा उन प्रदेशो के लिए, जिन पर सयुक्त राज्य अमरिका का अधिशासन है काग्रेस द्वारा न्यायालयो की स्थापना की गयी है।

इन व्यवस्थापिका न्यायालयो के कुछ प्रमुख प्रकार निम्नवत हैं—

दावा न्यायालय (Court of Claims)—1855 में स्थापित इस न्यायालय में सघीय शासन के विरुद्ध नागरिको के दावो की सुनवाई होती है।

आयात निर्यात शुल्क न्यायालय (Court of Customs)—इसमे आयात-निर्यात शुल्क एकत्रित करने वाले अधिकारियो के निर्णयो के विरुद्ध अपीलें सुनी जाती है।

आयात निर्यात तथा पेटेण्टस अपील न्यायालय (Court of Customs and Patents Appeal)—यह न्यायालय आयात निर्यात शुल्क और पेटेण्टस के निर्णयो के विरुद्ध तथा सीमा कर आयोग (Tariff Commission) की आज्ञाओं के विरुद्ध अपीलो की सुनवायी करता है।

कर न्यायालय (Tax Court)—इसमे कर सम्बन्धी विवादो की सुनवाई होती है।

व्यवस्थापक न्यायालयो (Legislative Courts) और सवैधानिक न्यायालय (Constitutional Courts) में प्रमुख अन्तर ये हैं—

(i) दोनों की उत्पत्ति के स्रोत भिन्न है। उनके द्वारा सुनवाइ किए जाने वाले मामले भी भिन्न होते है। व्यवस्थापक न्यायालय उन मामलों की सुनवाई करते हैं जिनका सम्बन्ध अन्तराष्ट्रीय व्यापार, सार्वजनिक धन का व्यय, करों की वसूली आदि से होता है। संवैधानिक न्यायालय उन विवादों का निर्णय करते हैं जिनकी चर्चा संविधान के तीसरे अनुच्छेद में की गयी है।

(ii) संवैधानिक न्यायालयों के न्यायाधीश आजीवन न्यायाधीश रह सकते है जबकि व्यवस्थापक न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति निश्चित अवधि के लिए होती है।

संवैधानिक न्यायालय (Constitutional Courts)

इन न्यायालयों की स्थापना संविधान के अनुच्छेद तीन द्वारा की गयी है। ये न्यायालय तीन श्रेणियों में विभक्त है —

(क) जिला न्यायालय (District Courts)

(ख) संघीय अपील न्यायालय (Federal Courts of Appeal)

(ग) सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court)

जिला न्यायालय—संघीय न्यायालयों में ये सबसे नीचे स्तर के न्यायालय हैं। सम्पूर्ण देश लगभग 91 जिलों में विभाजित है जिनमें 91 जिला न्यायालय काम करते है। प्रत्येक राज्य में एक जिले का होना अनिवार्य है। न्यायाधीशों की नियुक्ति अटार्नी जनरल की सलाह से राष्ट्रपति द्वारा की जाती है जिस पर सीनेट की स्वीकृति आवश्यक है।

सामान्यत जिला न्यायालयों मे एक ही न्यायाधीश अभियोगों का निर्णय करता है जिसके विरुद्ध अपील उचित अपील न्यायालय मे की जाती है। किन्तु यदि किसी अभियोग मे संघीय परिनियमों की संवैधानिकता को चुनौती दी जाय तो तीन न्यायाधीशों द्वारा निर्णय आवश्यक है। अपील सीधी सर्वोच्च न्यायालय को की जा सकती है।

संघीय अपील न्यायालय—देश में इस प्रकार के ग्यारह न्यायालय हैं जो अपने-अपने क्षेत्र में कार्य करते हैं। पहले इनके न्यायाधीश न्याय-कार्य के लिए दौरा करते थे, किन्तु अब ऐसा बहुत कम होता है। संघीय न्यायालयों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य सर्वोच्च न्यायालय के कार्यभार को हल्का करना है। प्रत्येक संघीय अपील के न्यायालय में तीन से लेकर छः न्यायाधीश होते हैं। जिलों न्यायाधीशों का भी सहयोग लिया जाता है। इनका न्याय क्षेत्र अपीलीय है। इनमें जिला न्यायालयों और संघीय अभिकरणों के निर्णयों के विरुद्ध अपील की जाती है। सर्वोच्च न्यायालय को उनके निर्णय के पुनरावलोकन का अधिकार है।

सर्वोच्च न्यायालय
(The Supreme Court)

न्यायालयों की व्यवस्था में सबसे उच्च स्तर का न्यायालय सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) है। इसकी व्यवस्था स्वयं संविधान में की गई है। इसकी स्थापना सन् 1789 के न्याय पालिका अधिनियम द्वारा की गई थी। अमरिका में संविधान की सर्वोच्चता है, और इसीलिए उसकी व्याख्या करने वाली शक्ति के रूप में अमरिका के सर्वोच्च न्यायालय ने नूतन महत्ता पा ली है। सर्वोच्च न्यायालय संघ में उस न्यायिक सत्ता की आवश्यकता का प्रतीक है, जिसका जिम्मा संविधान के निर्वचन का और केन्द्र तथा राज्यों के अथवा राज्यों के पारस्परिक झगड़ों को निपटाने का काम है। इस शक्ति के कारण उसकी बड़ी प्रतिष्ठा है। अमरिकन सर्वोच्च न्यायालय कांग्रेस या राज्यों के विधान मण्डलों द्वारा पास किये गये अधिनियमों को अवैध घोषित कर सकता है। अमरिकन नागरिक उसे अपने अधिकारों के संरक्षक के रूप में देखते हैं। हस्किन (Haskin) के शब्दों में "सर्वोच्च न्यायालय वहाँ के शासन नियन्त्रण का सन्तुलन चक्र है जबकि शासन के अन्य विभाग जनमत के धीमे और तेज धक्कों से हिला दिये जाते हैं, तब वह अपने न्यायिक-सन्तुलन को कायम रखता है। उसका कर्तव्य है कि हर समय और हर परिस्थिति में देश के सर्वोच्च कानून के रूप में वह संविधान को कायम रखे।" समस्त जनता की भलाई के लिए इस शक्ति का कार्यान्वित होना आवश्यक है।

रचना

संविधान में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या निश्चित नहीं की गई है। प्रारम्भ में इसके न्यायाधीशों में एक मुख्य न्यायाधीश तथा पाँच अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति की गई थी। सन् 1801 में इन संख्या को 5, 1807 में 7, 1837 में 9, 1863 में 10 और 1866 में पुनः 7 कर दिया गया। अन्त में 1869 में कांग्रेस द्वारा 9 न्यायाधीशों की व्यवस्था की गई और उस समय से यह संख्या अब तक स्थिर चली आ रही है यद्यपि इसमें परिवर्तन आ जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं होगी। इस संख्या के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय की रचना एक मुख्य न्यायाधीश और 8 अन्य न्यायाधीशों से होती है।

न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है किन्तु इन नियुक्तियों की पुष्टि सीनेट द्वारा होना आवश्यक है। सीनेट राष्ट्रपति द्वारा की गई नियुक्ति को अस्वीकृत कर सकती है। उदाहरणार्थ 1930 में जान पार्कर के मनोनयन को रद्द कर दिया गया था। न्यायाधीशों की नियुक्तियां करते समय राष्ट्रपति प्रायः न्यायालय के वर्गीय, धार्मिक एवं दलीय गठन को ध्यान में रखता है।

न्यायाधीश जब तक सदाचारी रहते हैं, अपने पद पर बने रहते हैं। यदि किसी न्यायाधीश ने 10 वर्ष तक निरन्तर सर्वोच्च न्यायालय की सेवा की है तो 70 वर्ष की आयु प्राप्त होने पर पूर्ण वेतन सहित वह अवकाश ग्रहण कर सकता

है। भारत में न्यायाधीश 65 वर्ष की अवस्था के बाद पद निवृत्त हो जाते हैं और स्विट्जरलैण्ड में उनका कार्यकाल सिर्फ 6 वर्ष है। अमरीकन न्यायाधीशों पर इस प्रकार का कोई प्रतिबन्ध नहीं है कि वे राजनीति में भाग न लें, किन्तु यथार्थ में वे राजनीतिक गतिविधियों से बाहर ही रहते है।

सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का वार्षिक वेतन 25 हजार डालर है। मुख्य न्यायाधीश को अन्य न्यायाधीशों से 500 डालर वार्षिक अधिक मिलता है। यह वेतन कांग्रेस ने अधिनियम द्वारा निश्चित किया है और किसी भी न्यायाधीश के कार्यकाल में उसमें कमी नहीं की जा सकती। वेतन के अतिरिक्त न्यायाधीशों को अनेक प्रकार के भत्ते मिलते हैं।

किसी भी न्यायाधीश को उसकी इच्छा के विरुद्ध त्याग पत्र देने को मजबूर नहीं किया जा सकता, किन्तु यदि वह रिश्वत लेता है अथवा कोई संगीन अपराध करता है तो उसे महाभियोग (Impeachment) द्वारा हटाया जा सकता है। राष्ट्रपति को किसी न्यायाधीश को उसके पद से हटाने का अधिकार नहीं है। अब तक महाभियोग के केवल 9 मामले चले हैं जिनमें से केवल 4 को ही महाभियोग के आधार पर दण्डित किया जा सका है। स्वेच्छा से अवकाश ग्रहण करने के मामले भी आधे से कम ही हुए हैं।

न्यायाधीशों की योग्यता के सम्बन्ध में संविधान मौन है। किन्तु प्राय ऐसे व्यक्तियों को न्यायाधीश नियुक्त किया जाता है जो ख्याति प्राप्त वकील, कानून के प्राध्यापक, सार्वजनिक व्यक्ति तथा प्रशासकीय अभिकरणों के परामर्शदाता रह चुके हों।

कार्य प्रणाली

सर्वोच्च न्यायालय का कार्य अक्टूबर में प्रारम्भ होता है और मई के मध्य तक शेष हो जाता है। इस प्रकार केवल आठ महीने कार्य होता है। शीत और पतझड़ के समय दो सप्ताह की छुट्टी रहती है, मंगलवार, बुधवार, वृहस्पतिवार और शुक्रवार को मुकदमे सुने जाते है। शनिवार को न्यायाधीश आपस में मिलकर उन पर विचार विनिमय करते हैं। निर्णय बहुमत से लिया जाता है और सोमवार को सुना दिया जाता है। मुकदमे की सुनवाई तथा निर्णय के लिए 6 न्यायाधीशों की गणपूर्ति (Quorum) आवश्यक है। निर्णय के पक्ष में मत देने वाले किसी भी न्यायाधीश को निर्णय लिखने के लिए कहा जा सकता है, अत सभी न्यायाधीश सभी मुकदमों में काफी सचेत रहते हैं। यद्यपि मुकदमे का निर्णय बहुमत से होता है तथापि बहुमत के निर्णय के विरुद्ध कोई न्यायाधीश भिन्न मत (Dissenting opinion) भी दे सकता है। भिन्न मत होने वाले का निर्णय यद्यपि महत्वहीन होता है, फिर भी कभी कभी प्रचार के फलस्वरूप जन मत पर इसका पर्याप्त प्रभाव पड़ता है और इस प्रकार अन्त में वह देश की विधियों को प्रभावित करता है।

सर्वोच्च यायालय के विचारों तथा निणयों को 'सयुक्त राज्य रिपोर्ट्स' (United States Reports) म प्रकाशित किया जाता है जो सविधानिक कानून के एतिहासिक विकास और वतमान स्थिति का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं।

सर्वोच्च यायालय की काय-प्रणाली म एसा भी होता है कि कभी-कभी पुराने निणयों को उलट दिया जाता है और उनके स्थान पर पूणत नवीन निणय व सिद्धान्तो का प्रतिपादन कर दिया जाता है। अब तक अनेक एस मामल हो चुके है जिनम सर्वोच्च यायालय ने अपन पुरान निणयों को बदल दिया है।

क्षेत्राधिकार एव काय

सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार क्षत्र की सविधान म स्पष्ट रूप से व्याख्या कर दी गई है। तदनुसार इसके अधिकार क्षत्र और कार्यों का विवचन हम निम्नलिखित शीषकों म कर सकते हैं—

1 प्रारम्भिक अथवा मौलिक क्षत्राधिकार
(Original Jurisdiction)
2 अपीलीय क्षत्राधिकार
(Appellate Jurisdiction)
3 न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार
(Power of Judicial Review)
4 सविधान तथा नागरिक अधिकारों का सरक्षक तथा अभिरक्षक
(Custodian and guardian of the Constitution and the rights of Citizens)
5 अन्य अधिकार
(Miscellaneous Powers)

(1) प्रारम्भिक अधिकार क्षत्र (Original Jurisdiction)—सर्वोच्च न्यायालय का प्रारम्भिक अधिकार क्षत्र अत्यन्त सीमित है। सविधान म स्पष्टत- कहा गया है कि 'उन सब मामलो म जिनका सम्बन्ध राजदूतो से, राज्य के मन्त्रियों से अथवा अन्य दूतावास अधिकारियों से है और उन सब मामलो म जिनम कोई राज्य एक पक्ष है, सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार क्षत्र प्रारम्भिक होगा।' यद्यपि कांग्रेस इस अधिकार क्षत्र को घटा बढ़ा नहीं सकती फिर भी वह कानून और अपन विवेक के अन्तगत उक्त मामलो के लिए नीचे के न्यायालयों म सुनवाई की अनुमति दे सकती है।

यद्यपि सविधान म ऐसे मामलो पर, जिनका सम्बन्ध राजदूतो, वाणिज्य दूतो अथवा अन्य प्रकार के विदेशी राज्यो के प्रतिनिधियो स है, प्रारम्भिक अधिकार क्षत्र प्रदान करता है, परन्तु आधुनिक युग म ऐसे झगड़े राष्ट्रीय न्यायालय म प्राय नही उठाये जाते हैं क्योंकि ये अन्तराष्ट्रीय विधि तथा प्रथाओं के अन्तगत आते हैं।

अन्य न्यायालयों द्वारा केवल उन मामलों की सुनवाई हो सकती है जिनका सम्बन्ध राजनयिक छूट (Diplomatic Immunity) के अन्तर्गत न आने वाले दूतीय अधिकारियों से है और जिनमें राज्य एक पक्ष है। ऐसी दशा में भी ऐसे मामलों की सुनवाई तभी हो सकती है जबकि दूसरा पक्ष कोई और राज्य हो।

(2) अपीलीय अधिकार क्षेत्र (Appellate Jurisdiction)—सर्वोच्च न्यायालय में अधिकांश मुकदमे पुनर्विचार अर्थात् अपील के लिए आते हैं। दूसरे शब्दों में राज्यों के उच्च न्यायालयों और निम्न संघीय न्यायालयों के निर्णय के विरुद्ध की गई अपीलों पर विचार करना ही सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य कार्य है। यह ध्यान रखने योग्य बात है कि अमरीका में सर्वोच्च न्यायालय में उन सभी मामलों की अपील नहीं हो सकती जिनमें निम्न न्यायालयों के निर्णय से किसी पक्ष को असन्तोष हो। साथ ही ऐसा भी नहीं है कि राज्यों के उच्चतम न्यायालयों के सभी निर्णयों के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील की जा सके। सर्वोच्च न्यायालय के अपील सम्बन्धी न्याय क्षेत्र को स्पष्ट करते हुए मुनरो ने लिखा है कि "केवल उस दशा को छोड़ कर जिसमें—(क) राज्य के उच्चतम न्यायालय ने राज्य के किसी ऐसे कानून को वैध घोषित कर दिया हो जिस पर संघीय संविधान के विरुद्ध होने का आरोप लगा हो, अथवा (ख) उसने किसी संघीय कानून अथवा संधि को अवैध घोषित कर दिया हो, किसी भी पक्ष को राज्य के संघीय न्याय क्षेत्र के विरुद्ध अपील करने का अधिकार नहीं है।" फिर भी उन मामलों में जिनमें राज्य के उच्चतम न्यायालय ने अपील की अनुमति दे दी हो, अपील सीधी सर्वोच्च न्यायालय में की जा सकती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सर्वोच्च न्यायालय का अपीलीय क्षेत्राधिकार केवल संविधानिक मामलों में है और साधारण मामलों में सर्वोच्च न्यायालय में अपील तभी होती है जब कि राज्य के उच्चतम न्यायालय ने इसकी अनुमति दे दी हो।

न्यायिक समीक्षा या पुनरावलोकन का अधिकार (Power of Judicial Review)—संयुक्त राज्य अमरिका में सर्वोच्च न्यायालय के महान् प्रभाव और सम्मान का आधार वह शक्ति है जो उसे न्यायिक पुनरावलोकन (Judicial Review) के सम्बन्ध में प्राप्त है। इस शक्ति के अधीन वह संविधान की व्याख्या करता है और कांग्रेस तथा राज्यों की व्यवस्थापिकाओं के कानूनों एवं अन्य प्रशासनिक आज्ञाओं की वैधानिकता एवं अवैधानिकता का निर्णय करता है जैसी कि भ्रान्त धारणा है, सर्वोच्च न्यायालय को अकेले पुनरावलोकन या समीक्षा का अधिकार प्राप्त नहीं है। प्रत्येक राज्य के उच्च न्यायालय को इस प्रश्न पर अन्तिम निर्णय देने का अधिकार होता है कि राज्य का अमुक कानून संविधान के अनुकूल है अथवा नहीं और संघीय जिला न्यायालय तथा अपील न्यायालय नाना किसी संघीय कानून, राज्य-कानून या राज्य के संविधान की किसी धारा व्यवस्था को संघीय संविधान के प्रतिकूल घोषित कर उसे लागू करने से अस्वीकार कर सकते हैं। लेकिन संघीय संविधान के विरुद्ध होने

के सब अभियोगो का अन्तिम निर्णय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा ही किया जाता है। यद्यपि इस मामले सघीय निम्न न्यायालयो और राज्य के उच्च न्यायालयो म भी प्रस्तुत किए जा सकते है परन्तु उनका निर्णय अन्तिम नही होता। उनके विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय मे अपील की जा सकती है। प्रो० ब्रोगन (Prof Brogn) ने लिखा है कि "सर्वोच्च न्यायालय की सत्ता को हम एक राजनीतिक सस्था और एक ऐसे तृतीय सदन के रूप म समझ सकते हैं जो कार्यपालिका और विधानमण्डल के कार्यों को विशेष सिद्धान्तो के अनुसार नियमित करता है।'

न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति का आधार—कुछ विचारको के अनुसार न्यायिक पुनरावलोकन की इस शक्ति का कोई सवैधानिक आधार नही है। सविधान निर्माता का भी ऐसा कोई विचार नही था कि न्यायपालिका को इस प्रकार की किसी शक्ति से विभूषित किया जाए। राष्ट्रपति जेफरसन ने कहा था कि यदि न्याय पालिका काग्रेस एव राष्ट्रपति अर्थात् व्यवस्थापिका एव कार्यपालिका के कार्यों का पुनरावलोकन करने का अधिकार का प्रयोग करती है तो न केवल यह शक्ति पृथ-क्करण के सिद्धान्त का ही उल्लघन है, वरन सविधान निर्माताओ के विचारो का भी अनादर है।

परन्तु अधिकाश विचारको का निश्चित मत है कि सविधान की दो धाराओ म न्यायपालिका की वह शक्ति अप्रत्यक्ष रूप मे निहित है, जिसका उपयोग करते हुए वह काग्रेस एव राष्ट्रपति के कार्यों का अर्थात् व्यवस्थापिका व कार्यपालिका के कार्यों का न्यायिक पुनरावलोकन कर सकता है। य दो धारायें है—(i) सविधान की चौथी धारा की दूसरी उपधारा, एव (ii) सविधान की तीसरी धारा की दूसरी उपधारा। सविधान की चौथी धारा की दूसरी उपधारा म उल्लिखित है कि "यह सवि-धान और सयुक्त राज्य क वे कानून, जो उसके अनुसार बनाये जाये, एव वे सधिया, जो सयुक्त राज्य क अधिकार के अन्तर्गत की गई हो या की जाये, देश के सर्वोच्च कानून होगे।' सविधान की धारा तीन की उपधारा दो म कहा गया है कि "कानून और औचित्य क अनुसार न्यायपालिका की शक्ति के क्षेत्र म व सभी मामले आयेंगे, जो इस सविधान, सयुक्त राज्य के कानूनो एव उनके अन्तर्गत की गई अथवा की जान वाली सधियो से अन्तर्गत उत्पन्न हो।

सविधान की चौथी धारा स्पष्टत प्रतिपादित करती है कि सविधान को देश का सर्वोच्च व आधारभूत कानून माना जाना चाहिये। तीसरी धारा का आशय है कि व सभी मामले, जो उस आधारभूत कानून के अन्तर्गत उत्पन्न होगे, न्यायिक शक्ति क क्षेत्राधिकार म होगे। इस प्रकार इन दोनो ही धाराओ का निष्कर्ष यह है कि सविधान की सर्वोच्चता बनी रह और किसी भी प्रकार उसका उल्लघन न हो—यह देखना न्यायपालिका का कर्तव्य है। न्यायपालिका अपने इस कार्य को उचित रूप से तभी सम्पादित कर सकती है जब वह सविधान और व्यवस्थापिका के कानूनो की व्याख्या करने म एव सविधान की व्याख्या के प्रतिकूल पाये जाने

वाले कानूनों को अवैधानिक घोषित करने की अधिकारिणी हो।' न्यायिक पुनरावलोकन की यह शक्ति संविधान की धारा 6 (खंड 8) द्वारा भी समर्पित होती है जिसमें न केवल यह कहा गया है कि 'संविधान और इसके अन्तर्गत निर्मित संयुक्त राज्य के समस्त कानून तथा संयुक्त राज्य की ओर से की गई या की जाने वाली समस्त संधियां इस देश के सर्वोच्च कानून होंगे' वरन यह भी स्पष्टत कह दिया गया है कि "प्रत्येक राज्य में न्यायाधीश उन्हें मानने के लिये बाध्य होंगे, उनसे असंगत राज्य के संविधान या कानूनों को नहीं।' स्पष्ट है कि संविधान राष्ट्रीय सर्वोच्चता (National Supremacy) के सिद्धान्त को मान्यता देता है जिसके अनुसार राष्ट्रीय संविधान और कानूनों के विपरीत अन्य किसी भी कानून या कार्य को अधिक मान्यता नहीं दी जाएगी। इसका स्वाभाविक अर्थ यह निकलता है कि कोई कार्य या कानून संवैधानिक है अथवा नहीं, इसकी जांच न्यायपालिका करने की अधिकारिणी होगी। संविधान के उपबन्धों के अतिरिक्त संविधान निर्माताओं तथा विधिवेत्ताओं ने भी संघीय न्यायालय की पुनरावलोकन की शक्ति का समर्थन किया है।

मुख्य न्यायाधीश मार्शल ने 1803 में 'मारबरी बनाम मडीसन' (Marburry v/s Madison) नामक प्रसिद्ध मुकदमे में न्यायिक पुनरावलोकन की शक्तियों की स्पष्ट रूप से व्याख्या की और अपना निर्णय देते हुए बताया कि संविधान समस्त देश का सर्वोच्च कानून है तथा न्यायाधीशों का यह प्रमुख कर्तव्य है कि वे इसी के अनुरूप निर्णय दें एवं जब कभी कांग्रेस द्वारा पारित कोई अधिनियम देश के सर्वोच्च कानून अर्थात संविधान के विरुद्ध पाया जाय तो न्यायालय का कर्तव्य है कि वह संविधान को प्रथम स्थान दे। इस निर्णय के बाद से ही अमरीकन न्याय व्यवस्था में यह सुनिश्चित हो गया है कि न्यायपालिका को न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार है।

स्मरणीय यह है कि न्यायपालिका न्यायिक पुनरावलोकन के समय व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका के कार्यों और संविधान के शाब्दिक रूप पर ही विचार नहीं करती बल्कि उसकी आत्मा पर भी विचार करती है। इसके अतिरिक्त न्यायपालिका केवल किसी कानून या संविधान की किसी व्यवस्था के प्रतिकूल होने पर, अवैध ही घोषित कर सकती है अपने निर्णय को क्रियान्वित करना उसके अधिकार की बात नहीं है। उस निर्णय पर अमल करना कार्यपालिका का कर्तव्य है।

न्यायिक पुनरावलोकन का प्रभाव—अमरीका के राजनीतिक जीवन पर न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति का पर्याप्त संवैधानिक प्रभाव पड़ा है—

(1) इस शक्ति के आधार पर ही सर्वोच्च न्यायालय ने राज्य विधान-मण्डलों और संघीय कांग्रेस द्वारा निर्मित सकड़ों नियमों को अवैधानिक घोषित

करके न्यायिक सर्वोपरिता (Judicial Supremacy) का सिद्धान्त प्रतिष्ठित किया है।

(ii) इसके आधार पर राज्यों की तुलना में संघ की स्थिति सुदृढ़ हो गयी है। किन्तु साथ ही इस शक्ति ने राज्यों के अधिकारों की रक्षा करने में भी सहायता प्रदान की है।

(iii) इसका व्यापक प्रभाव राज्य के पुलिस अधिकार (Police Powers) पर पड़ता है जिसमें सार्वजनिक सुरक्षा, जनकल्याण, स्वास्थ्य, नैतिकता आदि सामाजिक विषय सम्मिलित हैं।

(iv) इसने सामाजिक विधायन के क्षेत्र में संघीय सरकार के अधिकारों को प्रभावित किया है।

(v) इस शक्ति के बल पर सर्वोच्च न्यायालय ने केवल संविधान की आत्मा और भाषा का ही निर्वाचन नहीं किया है बल्कि नीतियों का निर्धारण भी किया है। इसीलिए न्यायाधीशों को संविधान का नया निर्माता (New Makers of the Constitution) तक कह दिया गया है। अनेक अवसरों पर संघीय न्यायालयों ने राज्यों की प्रान्तीयता की संकीर्ण प्रवृत्ति को रोक कर राष्ट्रीय एकता को समृद्ध बनाया है।

न्यायिक पुनरावलोकन की आलोचना—सर्वोच्च न्यायालय की इस शक्ति के महान प्रभाव और महत्व के होते हुए भी विपक्ष में अनेक बातें कही गयी हैं—

(i) सर्वोच्च न्यायालय ने इस शक्ति के आधार पर व्यवस्थापिका के कार्यों को इतना अधिक अपना लिया है कि प्रतिनिधि सभा जनता की इच्छा को स्वतन्त्र रूप से व्यक्त नहीं कर सकती। इस शक्ति के सहारे सर्वोच्च न्यायालय अनिर्वाचित उच्चतर व्यवस्थापिका बन बैठा है और उसका रूप एक तृतीय व्यवस्थापिका सदन का हो गया है। ग्रोगन के शब्दों में 'सर्वोच्च न्यायालय कार्यपालिका तथा व्यवस्थापिका के कार्यों को एक तृतीय सदन के रूप में नियमित करने लगा है और अपने मौलिक कार्यों को समुचित ढंग से नहीं निभा पाता।'

(ii) इस शक्ति के बल पर राज्यों के विभिन्न कानूनों की वैधता पर विचार करते समय सर्वोच्च न्यायालय इनके सामान्य औचित्य पर भी विचार कर लेता है। यह उचित नहीं है क्योंकि उसको तो केवल उनकी वैधता अवैधता पर ही विचार करना चाहिए।

(iii) सर्वोच्च न्यायालय की नीति में अथवा इसके निर्णयों में एकरूपता का अभाव रहा है। ऐसा देखा गया है कि संघीय न्यायालय के निर्णय कभी उदार रहे हैं तो कभी संकीर्ण और कभी संघ के पक्ष में। अनेक अवसर ऐसे आए हैं जब निर्णय विशुद्ध वैधता या अवैधता पर आधारित न होकर न्यायाधीशों की अपनी मान्यताओं और उनके अपने राजनीतिक और सामाजिक विचारों पर आधारित रहे हैं।

(iv) न्यायिक पुनरावलोकन की व्यवस्था आधुनिक सामाजिक और आर्थिक दशाओं के लिए अनुपयुक्त है। न्यायिक समीक्षा की शक्ति के सहारे कई अवसरों पर न्यायपालिका निहित स्वार्थों का संरक्षण करती है और प्रगतिशील एवं लोकतन्त्रात्मक नीतियों का विरोध करते हुए कुलीनतन्त्र का पक्ष लेती है।

(v) न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति के बल पर कांग्रेस द्वारा कठोर परिश्रम से निर्मित विधि न्यायपालिका द्वारा कभी-कभी अवांछित रूप में नष्ट कर दी जाती है। फलस्वरूप जनता के प्रतिनिधियों के प्रयासों का कोई साकार फल नहीं निकलता।

उपर्युक्त आलोचनाओं के प्रकाश में यह मांग की जाती है कि न्यायिक अत्याचार से बचने के लिए सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति पर रोक लगाई जानी चाहिए अन्यथा देश की प्रगति रुक जाने और लोक-कल्याणकारी कार्यों का प्रतिपादन न हो सकने का भय विद्यमान रहेगा। यह भी सम्भव है कि समय-समय पर व्यवस्थापिका और कार्यपालिका तथा न्यायपालिका में संघर्ष की परिस्थितियां पैदा हों। भूतकाल में ऐसा हुआ है।

यह उत्साहवर्द्धक संकेत है कि जनता की प्रतिक्रिया ने सर्वोच्च न्यायालय की विरोधी प्रवृत्ति पर कुछ अंकुश लगाया है। इसीलिए न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति का प्रयोग भूतकाल की तुलना में कम होता जा रहा है। प्रारम्भ में न्याया-धीशों की प्रवृत्ति प्रतिक्रियावादी अधिक थी किन्तु अब प्रवृत्ति यह है कि कांग्रेस के विधान क्षेत्र में कम-से-कम हस्तक्षेप किया जाय। ऐसा प्रतीत होता है कि विधायन क्षेत्र में सर्वोच्च न्यायालय ने कांग्रेस के नेतृत्व को स्वीकार कर लिया है। न्याया-धीश डगलस (Justice Douglas) के अनुसार तो न्यायिक सर्वोच्चता की स्थिति अब समाप्त हो गयी है।

4 संविधान तथा नागरिक अधिकारों का रक्षक एवं अभिभावक—सर्वोच्च न्यायालय अमरीकन जनता के अधिकारों, स्वतन्त्रताओं तथा संविधान का रक्षक एवं संघीय व्यवस्था का अभिभावक है। यह संविधान की अन्तिम व्याख्या करता है और इस प्रकार उसका अन्तिम निर्वचन करता है। संविधान के विकास में इसकी सांविधानिक व्याख्याओं द्वारा उसने बहुत सहयोग प्रदान किया है। निहित शक्तियों का विकास करके उसने केन्द्र की शक्तियों में वृद्धि की है। इसीलिए जेम्स बैक ने कहा है, 'सर्वोच्च न्यायालय केवल एक न्यायालय मात्र नहीं है वरन् यह विशेष अर्थों में एक सतत् संविधान निर्मात्री सभा है।

इस न्यायालय ने अमरीका के नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा की है। यह निषेध आदेश, परमादेश, उत्प्रेषण, प्रतिषेध-अधिकार पृच्छा आदि द्वारा मौलिक अधिकारों एवं संविधान की रक्षा करता है।

5 **अन्य अधिकार**—सर्वोच्च न्यायालय अन्य छोटे मोटे काय भी करता है। उदाहरणार्थं निम्न श्रेणी के कर्मचारियों, जैसे संदेशवाहक, स्टेनोग्राफर आदि की नियुक्ति करता है, दीवानी एव फौजदारी कार्य विधेयकों का निर्देशन करता है और अपनी आज्ञाओं को लागू करता है। आदेश (Writs) के माध्यम से इस काय को किया जाता है। सर्वोच्च न्यायालय के कार्यों के सम्बन्ध म यह उल्लेखनीय है कि उस परामर्श देने का अधिकार नहीं है, जो अधिकतर भारतीय सर्वोच्च न्यायालय को प्राप्त है।

उपर्युक्त विवरण स यही निष्कर्ष निकलता है कि सयुक्त राज्य अमरिका के सर्वोच्च न्यायालय ने बेजोड दायित्व प्राप्त कर ली है और उसे देश के संविधान का चौथा पहिया कहने मे कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

6

राजनीतिक दल
(POLITICAL PARTIES)

"एक से अधिक राजनीतिक दलो का अस्तित्व ही
सच्चे लोकतन्त्र की पहिचान है।"

—लास्की

अमरिकन सविधान-निर्माताओ की कल्पना, इच्छा आकाक्षा के सवथा विरुद्ध आज राजनीतिक दल अमरिका के शासन सचालन म वैधानिक सस्थाओ से भी अधिक महत्वपूण हो गये हे। मुनरो के शब्दो म "सविधान निर्माताओ ने जिस शिला को अस्वीकृत कर दिया था, वही शिला शासन पद्धति का प्रमुख कोना बन गई है।" राजनीतिक दल वास्तव म अमेरिकन सावधानिक ढाचे को मानस और रुधिर प्रदान करके *गतिशील तथा कायकारी बनाए हुए हैं।* वे अमेरिका मे प्रभावशाली ढग से प्रजातान्त्रिक तरीका पर सरकार चलाने का काय करते हैं। वे अमेरिकन राजनीतिक जीवन का अविछिन्न अग बन गये हैं और अमेरिका के सम्पूण राजनीतिक जीवन पर छा रहे हैं। उन्होने एक प्रकार से अमेरिका के सविधान म परिवर्तन-सा कर दिया है। उन्ही के प्रभाव से राष्ट्रपति का चुनाव, जो पहले अप्रत्यक्ष था, अब प्रत्यक्ष रूप से होने लगा है। कायपालिका और व्यवस्थापिका के बीच की खाई को कम करके शक्ति विभाजन तथा नियत्रण और सचालन के सिद्धान्तो के कुपरिणामो को रोकने म राजनीतिक दलो का महत्वपूण योग है। दलो के द्वारा ही राज्य सरकारो और केन्द्रीय सरकार के मध्य सम्वन्ध स्थापित किये जाते हैं।

अमेरिका मे राजनीतिक दलो का उदय

अमरिकन सविधान निर्माता दलीय व्यवस्था म विश्वास नही करते थे। यद्यपि वे दलो को निरकुश दृष्टि से देखते थे और ऐसी शासन व्यवस्था का निर्माण करना चाहते थे जो राजनीतिक दलो की गुटबन्दियो से मुक्त हो, तथापि उन्हे यह

आशंका भी थी कि जिस प्रकार के लोकतन्त्र की वे स्थापना करने जा रहे थे, उसमें राजनीतिक दलों का विकास अवश्य हो जाएगा। इतना ही नहीं फिलाडेल्फिया सम्मेलन में ही दलों का अंकुर भी फूट चुका था। प्रतिनिधि दलीय आधार पर विभाजित होने लगे थे, भले ही उन्होंने ऐसा अनुभव न किया हो। फिलाडेल्फिया सम्मेलन में प्रतिनिधिगण दो गुटों में विभक्त थे—संघवादी और संघ-विरोधी (Federalists and Anti federalists)। संघवादी संघीय सरकार को शक्तिशाली बनाना चाहते थे जबकि संघ विरोधी राज्य सरकारों को शक्तिशाली बनाने के पक्ष में थे।

इस पृष्ठभूमि में यह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी कि प्रथम राष्ट्रपति वाशिंगटन के शासन काल में ही अमरिका में राजनीतिक दलों का स्पष्ट प्रस्फुटन हो गया। हैमिल्टन के अधीन एक दल ऐसी कार्य नीति का समर्थक था जिसमें यह माना गया था कि संघीय सरकार शक्तिशाली हो तथा व्यापक अधिकारों का प्रयोग करे। इस कार्य नीति के समर्थकों को संघवादी (Federalist) कहा जाने लगा। दूसरी ओर वे लोग थे जिनकी श्रद्धा राज्य सरकारों के पक्ष में थी। थामस जेफरसन के नेतृत्व में इन्होंने अपने-आपको रिपब्लिकन या डेमोक्रेटिक रिपब्लिकन (Republican or Democratic Republican) कहना आरम्भ कर दिया। ये ही आज के डेमोक्रेटिक दल के पूर्वज थे। संघवादियों और रिपब्लिकनों में परराष्ट्र नीति, कानून निर्माण आदि के प्रश्नों पर तो मतभेद थे ही, साथ ही संविधान की व्याख्या करने में भी ये एकमत नहीं थे। इस प्रकार स्पष्ट रूप से दो भिन्न दल जन्म ले चुके थे जिनके अपने अपने नेतागण थे और जिनके सिद्धान्तों तथा विचारों में परस्पर अन्तर था।

फिर भी अभी तक राजनीतिक दल देश के राजनीतिक मंच पर अपने पूर्ण रूप में प्रकट नहीं हुए थे। वाशिंगटन ने अपने मन्त्रि मण्डल में दोनों गुटों के नेताओं हैमिल्टन और जेफरसन को स्थान दिया तथा दोनों गुटों की खाई को पाटने का प्रयत्न किया। किन्तु राजनीतिक दल के जो अंकुर प्रस्फुटित हो चुके थे, वे वृक्षों का रूप धारण करने से रुक नहीं सके। सन 1796 के राष्ट्रपति के चुनाव के समय दलबन्दी स्पष्ट उभर आई जिसमें संघवादियों (Federalists) ने राष्ट्रपति भवन (White House) में प्रवेश किया। अगले चुनावों में सत्ता जेफरसन के अनुयायियों के हाथ में पहुँच गई। धीरे धीरे संघवादियों को इतनी क्षति पहुँची कि सन 1815 के बाद कुछ ही समय में वे राजनीतिक रंग मंच से लुप्त हो गये।

किन्तु अब रिपब्लिकन डेमोक्रेटिक दल दो गुटों में विभक्त हो गया—एक गुट नेशनल रिपब्लिकन (National Republican) कहलाया और दूसरा डेमोक्रेटिक रिपब्लिकन (Democratic Republican)। सन 1852 से 1859 तक नेशनल रिपब्लिकन दल का पूर्ण विघटन हो गया। उसके अवशेषों में से एक नये दल का जन्म हुआ जिसका नाम रिपब्लिकन दल (Republican Party) रखा गया।

प्रकार मौलिक रिपब्लिकन दल के अवशेष पर वर्तमान दोनों राजनीतिक दलों उदय और विकास हुआ—रिपब्लिकन दल तथा डमोक्रेटिक दल ।

सन 1860 म रिपब्लिकन दल के हाथ म शासन सत्ता आई और लिंकन ष्ट्रपति निर्वाचित हुए । इसके बाद स ही अब तक लगभग 110 वर्षों म रिपब्लिकन र डेमाक्रेटिक दल के बीच ही शासन का उलट फेर होता रहा है । अमेरिका म दोनों ही दल लगभग समान रूप से शक्तिशाली सिद्ध हुए हैं । लोकमत कभी एक के म तो कभी दूसरे के पक्ष म होता रहता है ।

अमेरिका म उपर्युक्त दोनों दलों की ही प्रधानता है, तथापि यह आशय हीं है कि तीसरा दल कभी पैदा ही नहीं हुआ । समय-समय पर विशेष उद्देश्यों लेकर अनेक दल पैदा हुए लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर सगठित न हो सकने के रण कालान्तर मे न समाप्त होते गये । यदि आज किसी अन्य दल का अस्तित्व भी तो केवल नाममात्र का है ।

द्विदल प्रणाली के उदय के परिणाम

1 कभी कभी यह विचित्र स्थिति पैदा हो जाती है कि राष्ट्रपति क निर्वाचन एक दल और काग्रेस के निर्वाचन म दूसरा दल विजयी हो जाता है । फिर भी सौभाग्यवश ऐसा बहुत कम होता है । सन् 1848 के बाद सन 1956 म ही ऐसा अवसर आया था कि राष्ट्रपति के निर्वाचन म रिपब्लिकन दल की जीत हुई जब के काग्रेस के दोनों सदनों पर डेमोक्रेटिक दल का नियन्त्रण रहा ।

2 दोनों ही दलों क समान रूप से शक्तिशाली होने के कारण दोनों म स्वस्थ राजनीतिक प्रतियोगिता चलती रहती है । इस स्वस्थ लोकतान्त्रिक राजनीतिक प्रतियोगिता का ही यह परिणाम है कि दोनों दलों के कार्यक्रमों और नीतियों मे कोई महत्वपूर्ण अन्तर नहीं पाया जाता ।

राजनीतिक दलों के अतिरिक्त अमेरिकन राजनीतिक क्षेत्र म अनेक संघ, क्लब, गुट, समुदाय समितियाँ, सगठन और अन्य प्रकार की संस्थायें समय समय पर जन्म लेती रहती हैं जो यथा शक्ति समकालीन राजनीति मे प्रभावशील बनने का प्रयत्न करती हैं और प्रस्तावित कानून या सरकारी नीति का समर्थन अथवा विरोध करती हैं ।

दलीय कार्यक्रम

(Party Issues or Programme)

अमरिकन राजनीतिक दलों म कोई महत्वपूर्ण सैद्धान्तिक मतभेद नहीं पाये जाते । अतएव इनका कोई निश्चित ध्येय और कार्यक्रम नहीं रहा है । प्रजातन्त्रीय और प्रतिनिधि शासन के बारे म दोनों का समान मत रहा है और दोनों ही दल एक सी शासन पद्धति म विश्वास रखते हैं । फिर भी समय-समय पर उनम कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों पर मतभेद पैदा होता रहा है ।

कुछ समय से रिपब्लिकन दल का कार्यक्रम यह रहा है—देश के समस्त राज्यो के बीच सुदृढ संगठन, सयुक्त राष्ट्र संघ का समर्थन, सोवियत रूस एव साम्यवाद के विरोध म वृद्धि, राष्ट्रवादी चीन का अधिक से अधिक सहायता देना, सैनिक तैयारी, साम्यवादी चीन की मान्यता का निरोध करना, श्रमिको के लिए बीमा और सामाजिक बीमे की योजनायें, उत्पादकों तथा श्रमिकों के हितों में आयकर की नीति उद्योगों के राष्ट्रीयकरण का विरोध आदि। दूसरी ओर डेमोक्रेटिक दल के कार्यक्रम म भी लगभग इसी तरह के लक्ष्य सम्मिलित हैं—निजी उद्योगों का समर्थन संघ सरकार का समर्थन और राज्यों म जाति भेद का अन्त, सयुक्त राष्ट्र संघ का समर्थन, साम्यवाद का विरोध, साम्यवाद के समर्थकों का सरकारी पदों से हटाना, सोवियत संघ को प्रसन्न करने की नीति का विरोध, उत्तर एटलांटिक संधि का समर्थन, पिछड़े देशों को आर्थिक सहायता, साम्यवादी चीन को मान्यता न देना, आदि। स्पष्ट है कि दोनों ही दलों की वैदेशिक तथा आर्थिक नीति म कोई विशेष अन्तर नही है। इसीलिए ब्राइस ने कहा है कि "अमेरिका के राजनीतिक दल दो बोतलों के समान है जो खाली हैं और जिन पर अलग अलग लेबल लगे हुए हैं।" फाइनर के अनुसार "अमेरिका मे केवल एक दल रिपब्लिकन एवं डेमोक्रेटिक है जो आदतों और पद की होड के द्वारा दो समान भागों म विभाजित है और जिसमे से एक का नाम रिपब्लिकन तथा दूसरे का डेमोक्रेटिक है।"

मेकार्थी का विचार है कि इस शताब्दी म डेमोक्रेटिक दल ने आन्तरिक और वैदेशिक मामलों म नये निर्णय किये हैं। इसने राष्ट्र संघ का प्रस्ताव रखा और सयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना म भाग लिया। इसने सामाजिक सुरक्षा के कार्यक्रम का स्थापित और विकसित किया एव श्रमिक प्रबन्धक सम्बन्धो के विषय म कतिपय आधारभूत कानून बनाये। मेकार्थी के मतानुसार डेमोक्रेटिक दल की तुलना म रिपब्लिकन दल परिवर्तन और नवीन बातों को स्वीकार करने म अपेक्षाकृत धीमा रहा है।

दलीय संगठन
(Organisation of the American Parties)

अमरिका के दोनों प्रधान दलों का संगठन प्राय समान-सा है। दोनों ही दलों का संगठन राष्ट्रीय, राज्यीय और स्थानीय स्तरों पर है।

राष्ट्रीय या केन्द्रीय स्तर पर दलीय संगठन

केन्द्र और राज्य दोनों ही स्तरों पर दलों का संगठन बड़ा सुव्यवस्थित है। दल अपनी चार इकाइयों द्वारा कार्य करते हैं। केन्द्र म ये चारों इकाइयाँ निम्नानुसार हैं

राष्ट्रीय सम्मेलन—केन्द्रीय-स्तर पर एक संस्था राष्ट्रीय सम्मेलन (National Convention) कही जाती है जिसके सदस्यों की संख्या लगभग 1,400 सदस्यों तक होती है। यह राष्ट्रीय दल का सर्वोच्च अंग होता है। यह विभिन्न विधियों से

निर्वाचित एक विशाल प्रतिनिधि संस्था है जिसमें राज्यों के प्रतिनिधि होते हैं। जिस वर्ष राष्ट्रपति का निर्वाचन होता है, उसी वर्ष इसका अधिवेशन होता है। दूसरे शब्दों में, सामान्यतः यह सम्मेलन प्रति चौथे वर्ष होता है। इसे केवल राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति पदों के लिए उम्मीदवारों को मनोनीत करने और चुनाव आन्दोलन के लिए दलीय कार्यक्रम निर्धारित करने का ही नहीं, बल्कि दल के मूलभूत संगठन और नियमों के 'विधान' को भी नियन्त्रित करने का अधिकार होता है। कांग्रेस की सदस्यता के प्रत्याशियों के विषय में यह सम्मेलन कुछ नहीं करता। साथ ही कांग्रेस के सदस्यों को यह इस बात के लिए बाध्य भी नहीं कर सकता कि वे दलीय कार्यक्रम का ही समर्थन करें।

राष्ट्रीय समिति—दल के सामान्य कार्य संचालन के लिए प्रत्येक दल की एक स्थाई कार्यकारिणी समिति होती है जिसे राष्ट्रीय समिति (National Committee) कहा जाता है। रिपब्लिकन दल की राष्ट्रीय समिति में प्रत्येक राज्य और प्रत्येक क्षेत्र के 2 प्रतिनिधि होते हैं—एक पुरुष और एक महिला। डेमोक्रेटिक दल में भी यही व्यवस्था है, केवल अन्तर यह है कि उसमें पनामा नहर क्षेत्र और वर्जीनिया आइलैंड के भी प्रतिनिधि होते हैं। राष्ट्रीय समिति के प्रतिनिधि सामान्यतः राष्ट्रीय सम्मेलन के लिये राज्यों से निर्वाचित प्रतिनिधि मण्डलों द्वारा चुने जाते हैं।

राष्ट्रीय समिति का मुख्य कार्य अपने में से दो कार्यकारिणी समितियों का निर्माण करना है, जो उसके लगभग सभी कार्यों का संचालन करती हैं। इन समितियों के नाम हैं—कांग्रेसीय आंदोलन समिति (Congressional Compaign Committee) तथा सीनेट निर्वाचन आन्दोलन समिति (Senatorial Compaign Committee)। इन समितियों के मुख्य कार्य हैं—राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाना, दल के व्यय के लिए कोष एकत्रित करना, राज्य के प्रतिनिधियों की संख्या निश्चित करना, प्रतिनिधि आगार एवं सीनेट के निर्वाचन कार्य का संचालन करना, आदि। राष्ट्रपति के निर्वाचन में राष्ट्रीय समिति स्वयं भाग लेती है। इस निमित्त वह प्रत्येक चौथे वर्ष राष्ट्रीय सम्मेलन का आमन्त्रित करती है, डेमोक्रेटिक दल की राष्ट्रीय समिति में लगभग 108 सदस्य होते हैं और रिपब्लिकन दल की समिति में लगभग 147।

राष्ट्रीय अध्यक्ष—राष्ट्रीय संगठन की एक अन्य इकाई राष्ट्रीय अध्यक्ष (National Chairman) होता है, जो राष्ट्रीय समिति द्वारा राष्ट्रपति व उप राष्ट्रपति पद के प्रत्याशियों के निर्वाचन के बाद प्रत्येक 4 वर्ष बाद चुना जाता है लेकिन व्यवहार में राष्ट्रीय अध्यक्ष प्रायः वही व्यक्ति होता है जिसे मनोनीत राष्ट्रपति चाहता है। समिति तो केवल उसके द्वारा प्रस्तावित व्यक्ति के नाम का पुष्टिकरण मात्र करती है।

राष्ट्रीय अध्यक्ष का प्रमुख कार्य राष्ट्रपति पद के निर्वाचन के अभियान का संचालन करना होता है। दल के, राज्य के और क्षेत्रों के संगठनों से उसका निकट सम्पर्क रहता है। अब उसकी शक्ति व्यवहार में कम होती जा रही है।

राष्ट्रीय समिति सचिवालय—अमेरिका मे दलीय मगठन के काय का वास्तविक मचान्न बहुत कुछ उन लोगा की बुद्धिमता पर निार करता है जा राष्ट्राय ममिति क मचिवान्य म न्गे हाते ह । प्रत्यर दल के मचिवान्य का मगठन भिन्न भिन्न है और उनक काय भी विविध प्रकार के हैं । सचिवालय ही नताओ का आ स दिए जान नाग नापणा का तयार करता है । यही दल के धन का एकत्र करता है और उमका हिमाब रखता है । मचिवालय का देश की राजनीति के उतार चढाव पर ध्यान रखना पडता है । स्थानीय और राज्य के दलीय मगठना स पत्र व्यवहार करना आदि सचिवालय के काय म ही मम्मिलित है ।

राज्य स्तर पर सगठन

राज्य स्तर पर भी दोना दलो का मगठन समान सा ह । हर राज्य म दोना दलो की एक राज्य केन्द्रीय समिति (State Central Committee) है जिमका आकार और निर्माण विभिन्न राज्यो म विभिन्न प्रकार स है । अनक राज्यो की केन्द्रीय समितिया म केवल राज्य की काउण्टी समितियो के चेयरमन ही होत हैं । इन समितियो के सदस्य सामान्यतया प्रारम्भिक इकाइयो द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित किय जाते है और इनम स्त्री तथा पुरुष सदस्यो की मख्या समान रखी जाती है । राजकीय केन्द्रीय समिति द्वारा राज्य के समस्त दलीय मगठनो पर नियन्त्रण होता है । वह धन एकत्र करती है तथा छोटे पदो के लिए दलीय उम्मीदवारो का नामाकन करती है । इसकी भी अपनी एक कायकारिणी समिति और अपना कोषाध्यक्ष होता है । समिति के अध्यक्ष पद के लिए नामाकन दल के गवनर या किसी प्रसिद्ध दलीय नेता द्वारा किया जाता है ।

स्थानीय स्तर पर सगठन

दलो का निम्नतम सगठन स्थानीय सगठन कहलाता है जिसे विभागीय सगठन (Precinct Organisation) भी कहत हैं । जहा तक इस सगठन का प्रश्न है अमेरिका की दलीय व्यवस्थाओ म समानता नही पाई जाती । फिर भी स्थानीय मगठन इस प्रकार ह—

1 प्रिसिंक्ट समिति (Precinct Committee)
2 वाड समिति (Ward Committee)
3 काउण्टी समिति (County Central Committee)
4 नगर समिति (Town Committee)

इस स्तर पर सबसे छोटी इकाई प्रिसिंक्ट समिति है जिसकी देश भर म सख्या लगभग सवा लाख है । प्रत्यक मतदान समिति (Precinct Committee) म प्राय 100 स लेकर 500 तक मतदाता होते ह । हर समिति म हर दल का एक नेता और एक कप्तान होता है जिसे समिति अधिकारी भी कहा जाता है और जिसकी नियुक्ति कभी कभी उच्चतर दलीय सगठन द्वारा की जाती है किन्तु वसे सामान्यत Precinct के मतदाताओं द्वारा ही होती है । इन्हा मतदान समितियो की काय कुश-

ल्ता पर दल की हार या जीत निभर करती है। वास्तव मे ये दलीय व्यवस्था के प्राण हैं। शहरी क्षेत्रा म वार्ड समितिया भी हाती है जो शहरी मतदान समितिया के काय का सचालन करती हैं। वाड मतदान और अन्य शहरी दलीय सगठन की इकाइयों के कार्यों के निरीक्षण हतु हर दल की नगर समिति (City Committee) हाना है। ग्रामीण सगठन की इकाइया का क्रम इस प्रकार है—

1 ग्रामीण मतदान म समितिया (Rural Precinct Committees)— यह सबसे छोटी इकाइ है।

2 ग्राम एव कस्बा समितिया (Village and Township Committees) इनके द्वारा ग्रामीण मतदान समितिया के कार्यो का निरीक्षण किया जाता है।

ग्रामीण और शहरी क्षेत्रा की दलीय इकाइया के ऊपर काउण्टी सगठन है जिसका सचालन काउण्टी समिति द्वारा किया जाता है। इस काउण्टी समिति म चेयरमन तथा एक केन्द्रीय काउण्टी समिति होती है जिसका काय नीचे की स्थानीय इकाइया के कार्यों का निरीक्षण करना होता है। समिति का चेयरमैन बडा प्रभावशाली व्यक्ति होता है और वह कुछ एसे पदो की नियुक्ति भी करता है जिनका राजकीय या सघीय सेवाओं से सबध होता है। ये काउण्टिया सारे देश म लगभग तीन हजार स भी अधिक हैं। इन सबके ऊपर जिला सगठन होता है। हर जिले म हर दल की एक जिला समिति हाती है।

अमरिका म अनेक एसे चुनाव होते हैं, जिनमे विजयी होने के लिए व्यक्ति का किसी न किसी दल से निर्वाचित होना आवश्यक है। महत्वपूण पद जिनके लिए निर्वाचन होता है, ये हैं—राष्ट्रपति का, कांग्रेस का, राज्यो के गवनरो का, न्यायाधीशो का। इन पदो की प्राप्ति के लालच से ही लोग दलो मे घुसते हैं और कठोर श्रम करते हैं, यह सोच कर कि कही एसा न हो कि झमेले म तो फस जायें और प्राप्ति कुछ न हो।

अमेरिकन दल पद्धति की विशेषताए
(Features of American Party System)

विश्व के अन्य देशो की अपेक्षा यहा के दल स्वरूप और कायप्रणाली मे भिन्न हैं, अत इनकी मुख्य विशेषताओ को देख लेना रोचक होगा।

कठोर सगठन—अमेरिका में दलीय सगठन बडा कठोर, नियन्त्रित और केन्द्रित होता है। दल प्रणाली करीब-करीब एक मशीन बन गई है जिसने जनता को अपनी मुट्ठी म दबा लिया है। अनेक लोग प्रतियोगिता की भावना से कार्य करते हैं। कुछ लोग दलीय भावना से इनम काय करते है परन्तु अधिकाश लोग इसलिए इनमे काय करते हैं कि उन्हे कोई नौकरी मिल जावगी। दलीय सघर्ष म लागो का स्थायी स्वाथ होता है। प्र० फाड के अनुसार "अमरिका म जितने आदमी दलीय सगठनो पर काय करते है उतन शष सभी सभ्य ससार के किसी भी देश म काम नही करते।'

परम्पराओ एव प्रथाओ पर आधारित—अमरिकी दलीय व्यवस्था भी ब्रिटिश दलीय व्यवस्था की भाति परम्पराओ और प्रथाओ पर आधारित है। सविधान निर्माताओ ने दलीय व्यवस्था को शरारत, भ्रष्टाचार और अनतिकता फैलाने वाला तत्व कह कर सविधान से निकाल दिया था। किन्तु दलीय व्यवस्था को बनाये रखने की उनकी यह आशा पूर्ण नहीं हो पाई और आज तो इस व्यवस्था के अभाव मे अमरिकी शासन का सम्पूर्ण ढाचा लडखडा कर गिर पडेगा। ब्राइस ने स्पष्ट लिखा है कि, दल का सगठन सविधान द्वारा स्थापित कानूनी सरकार के साथ-साथ एक दूसरी ही सरकार बना हुआ है जिसका कानून मे कहीं जिक्र तक नहीं है।'

वर्गीय मतभेद—अमेरिकन दलो मे सैद्धान्तिक मतभेद न होकर वर्गीय मतभेद है। वहा राजनैतिक दलो मे विचारधारा के स्थान पर परम्परा एव भौगोलिक प्रभाव का आधार अधिक है। कोई अमरिकन किसी दल को प्राय इस कारण नहीं अपनाता है कि वह दल उसकी विचारधारा के अनुकूल है, अपितु इसलिए ग्रहण करता है कि उसके पिता या सम्बन्धियो ने उसे अपना रखा है या वह दल उसके समाज जाति व्यवसाय या धर्म के साथ जुडा है। वस्तुत अमेरिका दल हितो के गुट है सिद्धान्तो के समूह नहीं। इसके अतिरिक्त दलो का वर्गी आधार आर्थिक व्यवस्था पर निर्भर है। अमरिकन उद्योगपतियो के अपने अपने सगठन है और इनका यह एक प्रमुख कार्य है कि धन व्यय करके किसी एक राजनीतिक दल पर अपनी सत्ता जमाये रखी जाए।

द्विदल प्रणाली—अमरिकन दलीय व्यवस्था द्वि दलीय है। अन्य दल यदि मैदान मे आते भी है तो निर्वाचन मे सफलता के निकट नहीं पहुच पाते। अमेरिकन राजनीति मे देश व्यापी तीसरे दल के निर्माण के समस्त प्रयत्न विफल हो चुके है। इसका प्रमुख कारण यह है कि छोटे छोटे दल जिस कार्यक्रम को लेकर उठते है वह उक्त दोनो दलो के द्वारा अपना लिये जाते है। इसके अतिरिक्त छोटे छोटे दलो के पास योग्य नेतृत्व और आर्थिक दृढता की भी कमी रहती है। एक अन्य बात यह भी है कि अमरिका मे जाति भेद, वर्ग भेद, धर्म भेद आदि का कोई महत्व नहीं है, अत यहा अन्य दल नहीं पनप पाते।

मौलिक सैद्धांतिक मतभेदों का न होना—अमरिका के राजनीतिक दलो मे मौलिक सैद्धांतिक मतभेद लगभग नहीं है और न ही उनका कोई सुपरिभाषित सामाजिक उद्देश्य है। दोनो ही दलो की मुख्य नीतिया लगभग समान है।

दलीय नेता का महत्व—अमरिका मे दल के नेता का महत्व ब्रिटिश दलीय नेता की तुलना मे बहुत ही कम है। कोई भी अमरिकन दल का एक मात्र और सर्वोच्च नेता नहीं हो सकता। ब्रिटिश नेता के समान वह दल का भाग्य विधाता नहीं होता और न ही दल के अनुयायी निर्विरोध रूप से उसका अनुसरण ही करते है। फिर भी वर्तमान प्रवृत्ति दलीय नेता की महत्ता बढाने की ओर है। अब राष्ट्रपति पद के लिए नेता निर्माण ने महत्व ग्रहण कर लिया है।

स्थानीय हितो को महत्व—अमेरिका की दल प्रणाली म स्थानीय हितो को पर्याप्त महत्व प्रदान किया जाता है चाहे वहा के दलो के सगठन का रूप केन्द्रीकरण का हो या विकेन्द्रीकरण का हो। दलो का राष्ट्रीय स्तर पर सगठन नहीं के बराबर है, परन्तु विकेन्द्रीकृत सगठन उनकी शक्ति और प्रभाव को बढाने वाला है, कम करने वाला नही। इसका मुख्य कारण यही है कि अमेरिका के राजनीतिक दल स्थानीय और राष्ट्रीय हितो के विषय में समझौतावादी प्रवृत्ति स काम लेते हैं। परिणामस्वरूप दलो का सगठन पक्का बना रहता है।

अमेरिकन दल प्रणाली की आलोचना

(1) अमरिकन दल व्यवस्था का रूप विकेन्द्रीकरण का है। अमरिकन दलो के स्थानीय, राज्यीय और केन्द्रीय सगठनो म उस सामन्जस्य के दर्शन नही होते, जो एक सुसगठित दल म होना चाहिए। फलस्वरूप दल शासन को जनता के प्रति उत्तरदायी बनाने के अपने प्रमुख काय का निवहन नही कर पाता। मतदान के समय का दलीय दायित्व भी समाप्त होता जाता है जिसस अमरिकन लोकतन्त्र की आत्मा कुप्रभावित होती है।

(2) अमेरिका की शासन प्रणाली म दल प्रणाली से अधिक उलझन म डालने वाली और कोई सस्था नही है। 'दलीय सगठनो म स्थानीयवाद एव गुटवाद की भावना, दलो म निश्चित एव स्पष्ट कायक्रम, नीतियो तथा सिद्धान्तो का अभाव, सदस्यो म दलीय अनुशासन का अभाव, व्यवस्थापिका म दल के द्वारा निर्धारित किये हुए प्रस्तावो के समथन के लिए उद्देश्यो म दल के प्रति निष्ठा का न होना या बहुत कम होना आदि बातें अमरिकन राजनीतिक दलो को 'स्वार्थों का एक गुट बना देती है। एक अस्थायी नता के चारो ओर समथको का एक दल एकत्रित हो जाता है जो उस पर यथा-उचित प्रभाव डालने का प्रयत्न करता है।

(3) अमरिकन दलीय व्यवस्था म स्पाइल सिस्टम' (Spoil System) की दूषित प्रथा पायी जाती है। अमरीका म अनेक पद ऐस है जो अस्थाई होते है। जब कभी राष्ट्रपति दूसरे दल का होता है तो एक बहुत बडी सख्या म पदाधिकारियो एव कर्मचारियो को उनके पद से हटाना पडता है और उनके स्थान पर राष्ट्रपति अपने दल के सदस्यो की नियुक्ति करता है। इस प्रकार की जो नियुक्तियां की जाती है, उनका आधार योग्यता अथवा अनुभव न होकर मुख्य रूप स दलबदी होना है। परिणामस्वरूप प्रशासनिक कुशलता घटती जाती है। प्रशासकीय पदाधिकारी भी प्रशासन की कुशलता की दृष्टि से नहा वरन दलीय सम्बन्धो के निर्वाह की दृष्टि से काय करते हैं।

उपर्युक्त दोषो के बावजूद भी अमरिका म द्विदलीय प्रणाली सफलतापूर्वक चल रही है। इसी कारण मुनरो न कहा है 'जब द्विदलीय प्रणाली ठीक ढग स काय करती रही है, तो तीसरे तथा चौथे दल की कोई आवश्यकता नही है।'

राष्ट्रीय संघीय संविधान पर निर्भर नहीं है। इन संविधानों के आधारभूत सिद्धांत एक हैं जो इंग्लैंड में बसने वाले अपने साथ लाये थे। भूमि के विस्तार, जनसंख्या, भौगोलिक स्थिति एवं आर्थिक अवस्था आदि की दृष्टि से राज्यों में पारस्परिक विभिन्नताएं हैं।

राज्यों के संविधान
(States' Constitutions)

प्रमुख विशेषताएँ

अमरिका के सभी राज्यों के संविधान मोटे रूप से एक से होते हुए भी विवरण की बातों में परस्पर भिन्न हैं। फिर भी सभी संविधानों में प्रायः निम्नलिखित मुख्य विशेषतायें पायी जाती हैं—

1 *राज्यों के संविधान संघीय संविधान से बिल्कुल पृथक हैं। उनकी शक्ति* का स्रोत पृथक पृथक राज्यों की जनता है।

2 संघीय संविधान की तरह राज्यों के संविधान भी लिखित हैं। प्रत्येक राज्य को अपने संविधान के निर्माण, उन्मूलन और उसके संशोधन करने की पूर्ण स्वतन्त्रता है।

3 *प्रायः सभी संविधानों में अधिकार पत्र की व्यवस्था है, जिसमें कुछ नागरिक* अधिकारों तथा स्वतन्त्रताओं की सुरक्षा की गई है।

4 संविधानों में शासन के ढांचे की रूप रेखा दी गई है और व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका की व्यवस्था की गई है।

5 प्रत्येक राज्य में द्वि-सदनीय व्यवस्थापिका की व्यवस्था है।

6 सामान्यतः सभी संविधानों में शक्ति विभाजन के सिद्धान्त को स्थान दिया गया है। राज्यपालों, न्यायाधीशों तथा विधान-मण्डल के सदस्यों के निर्वाचन *की व्यवस्था की गई है।*

7 राज्य की शक्तियां एवं दायित्वों का वर्णन किया गया है। राज्य सरकारों की शक्तियां मौलिक (Original) हैं और संघीय सरकार की शक्तियां प्रदत्त या प्रत्यायोजित (Delegated)।

8 प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के साधनों -जनमत संग्रह (Referendum), *आरंभक (Initiative), प्रत्याहरण (Re call) की व्यवस्था है।*

9 स्थानीय शासन की व्यवस्था भी है।

10 राज्यों की पृथक नागरिकता है। इस प्रकार कहना चाहिए कि संयुक्त राज्य में दोहरी नागरिकता है—संयुक्त राज्य का और राज्य की।

11 राज्य संविधान में संघीय संविधानों के सदृश अध्यक्षात्मक शासन पद्धति को अपनाया गया है। कार्यपालिका व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नहीं है और न्यायपालिका को न्यायिक पुनर्विलोकन करने का अधिकार है।

12 प्राय सभी सविधानो म एक धारा इस उद्देश्य की भी दी गई है कि सविधान म सशोधन कसे किया जायेगा।

राज्य का शासन-सगठन
(Administrative Organs of States)

राज्यो की शासन व्यवस्था के भी तीन प्रधान अग है—

1 कायपालिका (The Executive)

2 व्यवस्थापिका (The Legislature)

3 न्यायपालिका (The Judiciary)

कायपालिका (राज्यपाल)

राज्यो की कायपालिका क अ तगत राज्यपाल उपराज्यपाल, राज्य सचिव, महा न्यायवादी लेखा परीक्षक, कोषाध्यक्ष तथा निरीक्षक होते हैं। राज्य की वास्त विक कायपालिका शक्ति राज्यपाल (Governor) होता है। राज्य शासन म राज्यपाल (Governor) की वही स्थिति है जो सघ शासन मे राष्ट्रपति की है। राज्यपाल के बारे म सक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है—

योग्यतायें—राज्यपाल के पद पर आसीन होने वाले व्यक्ति की (क) आयु कम से कम 30 वष हो, (ख) वह सयुक्त राज्य अमेरिका का नागरिक हो, एव (ग) वह उस राज्य म कम से कम 5 वष स रहता हो।

निर्वाचन—अमेरिका म मिसीसिपी राज्य को छोडकर सभी राज्यो म राज्यपाल जनता द्वारा वयस्क मताधिकार के आधार पर प्रत्यक्ष रीति से बहुमत के द्वारा निर्वाचित होते है। समान मतो की प्राप्ति की दशा मे अन्तिम निणय राज्य की व्यवस्थापिका करती है।

कायकाल—राज्यपाल का कायकाल विभिन्न राज्यो मे भिन्न भिन्न है। वह अपने पद पर 2 स 4 वष तक काय करता है। उसका पुनर्निर्वाचन भी हो सकता है। वह राज्य के व्यवस्थापन विभाग के प्रति उत्तरदायी नही होता, कि तु महाभियोग द्वारा उस हटाया जा सकता है। नीचे का सदन महाभियोग लगाता है और ऊपर का सदन महाभियोग की सुनवायी करता है। कभी कभी महाभियोग की सुनवाई ऊपरी सदन का सभापति करता है। महाभियोग का प्रयोग अभी तक बहुत कम हो पाया है, क्योकि उसकी प्रक्रिया अत्य त जटिल है। कुछ राज्यो म प्रत्याहरण (Recall) द्वारा भी राज्यपाल को पद से हटाया जा सकता है। इस व्यवस्था के अ तगत यदि कुछ निश्चित सख्या मे मतदाता प्राथना करें तो किसी राज्यपाल को समय से पहले पद से हटाय जान के विषय मे मत-सग्रह किया जा सकता है।

राज्यपाल की शक्तियां

राज्यपाल की शक्तिया विविध प्रकार की हैं —

कायपालिका व्यवस्था—सविधान के अनुसार राज्यपाल (Governor) राज्य का सर्वोच्च प्रशासक है जिसका यह कत्तव्य है कि वह इस बात का प्रब ध करे

कि कानून सत्य निष्ठा से लागू किया जाए। इस रूप में वह प्रशासक का मुख्य निर्देशक तथा निरीक्षक होता है लेकिन इस विषय में उसे जो अधिकार प्राप्त हैं वे बड़े अपर्याप्त हैं। अपने आदेशों का पालन करवाने के लिए अधिकांशतः उसे अपने अधीनस्थ कर्मचारियों एवं प्रधान, अन्य प्रशासनाधिकारियों पर जैसे उप राज्यपाल (Lt Governor), अभिलेख मन्त्री, कोषाध्यक्ष, महान्यायवादी (Attorney General), शिक्षा सचालक, आडिटर और कन्ट्रोलर जनरल, स्थानीय निर्वाचित काउण्टी अधिकारी, सरकारी वकील, विभिन्न राज्य न्यायालयों के जनता द्वारा निर्वाचित न्यायाधीशों आदि पर निर्भर रहना पड़ता है। इन अधिकारियों पर राज्यपाल का प्रत्यक्ष और प्रभावशाली नियन्त्रण नहीं होता। राज्यपाल के साथ ही निर्वाचित ये शासनाधिकारी समझते हैं कि वे राज्यपाल की अपेक्षा जनता के प्रति विशेष उत्तरदायी हैं।

राजकीय नियुक्तियों के सम्बन्ध में राज्यपाल को यद्यपि व्यापक शक्तियाँ प्राप्त हैं, किन्तु उनकी व्यापकता नियमित नियुक्ति प्रणाली के प्रचलन से काफी कम हो गई है। वस्तुतः राज्यपाल उन्हीं पदों पर नियुक्ति कर सकता है जिनकी संविधान में उसके द्वारा नियुक्ति की जाने की व्यवस्था की गई है या जिनकी नियुक्ति अथवा निर्वाचन के सम्बन्ध में वहाँ कोई व्यवस्था नहीं की गई है। कुछ पदों पर व्यवस्थापिका से प्राप्त अधिकारों के अन्तर्गत वह नियुक्ति कर सकता है, परन्तु इस पर अनेक प्रतिबन्ध लगे हुए हैं। किसी भी स्थिति में राज्यपाल उन अधिकारियों की नियुक्ति नहीं करता जो विभागों के अध्यक्ष होते हैं और जो राज्यपाल के साथ ही स्वतन्त्र रूप से एक निश्चित कार्यकाल के लिये चुने जाते हैं। यह प्रतिबन्ध राज्यपाल की शक्तियों पर एक बड़े अंकुश का कार्य करता है क्योंकि इस बात की सदैव सम्भावना रहती है कि ये अधिकारी राज्यपाल से सहयोग न करें और इस प्रकार वह कठिनाइयों में पड़ जाए तथा राज्य के शासन में गतिरोध और संघर्ष पैदा हो जाए। अटोरनी जनरल (Attorney General), कंट्रोलर्स (Controllers), ऑडिटर्स (Auditors) व सुपरिन्टेन्डेंट (Superintendents) आदि की नियुक्ति राज्यपाल करता है किन्तु इनका पुष्टिकरण राज्य की सीनेट द्वारा होना आवश्यक है।

अपने अधीनस्थ अधिकारियों पर राज्यपाल का नियन्त्रण इस कारण और भी कम हो जाता है कि प्रशासन अधिकारियों को निर्देशित करने और उन्हें पदच्युत करने का उसका अधिकार भी नगण्य ही है। मुख्य निर्वाचित अधिकारियों को केवल महाभियोग द्वारा ही पदच्युत किया जा सकता है। चूँकि यह प्रक्रिया अत्यधिक जटिल है अतः इसके द्वारा पदच्युति के मामले बहुत ही कम होते हैं। जहाँ राज्यपाल को कुछ अधिकारियों को पदच्युत करने का अधिकार दिया भी गया है वहाँ यह प्रतिबन्ध है कि राज्यपाल उन्हें केवल सीनेट की स्वीकृति से ही पदच्युत कर सकता है, अन्यथा नहीं। साधारणतः राज्यपाल जिन अधिकारियों को नियुक्त

करता है उन्हें हटा भी सकता है, परन्तु जिनकी नियुक्ति वह सीनेट की स्वीकृति से करता है उन्हें सीनेट की स्वीकृति से ही हटाया जा सकता है।

राज्यपाल के संघीय सरकार (Federation) के प्रति भी कुछ कर्तव्य हैं। राज्यपाल ही संघीय सरकार द्वारा प्रेषित आदेशों को प्राप्त करता है और वही संघीय सरकार एवं राज्य सरकार के मध्य माध्यम का कार्य करता है। जब कभी संघीय सरकार राज्य का सहयोग प्राप्त करना चाहती है तो वह सम्बन्धित सरकार के राज्यपाल को ही लिखती है।

सैनिक शक्तियाँ— राज्यपाल राज्य की सीनेट और राज्य रक्षक सेना का नाममात्र का मुख्य सेनापति होता है। उसकी सैनिक शक्तियां अब पहिले के समान नहीं रही हैं क्योंकि रक्षा का विषय अब संघीय हो गया है। फिर भी उन राष्ट्रीय संरक्षकों (Home Guards) पर उसका नियन्त्रण रहता है, जिन्हें आपातकालीन स्थिति में नियमित सैनिक कार्य करने के लिये बुलाया जा सकता है। राज्यपाल का आन्तरिक सेना (Military) पर भी नियन्त्रण रहता है और वह आन्तरिक गड़बड़ के समय उसे कार्य पर लगा सकता है। हड़ताल आदि के समय भी राज्य की सेना का शान्ति व्यवस्था की स्थापना के लिये प्रयोग राज्यपाल कर सकता है। सैनिक कार्यों में राज्यपाल की सहायता उसका एडजूटेण्ट जनरल (Adjutant General) व उसके अधीन कर्मचारी करते हैं।

विधायी एवं वित्तीय शक्तियाँ— राज्यपाल को कुछ विधायी अधिकार भी प्राप्त हैं। वह संविधान-मंडल के विशेष निर्वाचनों के लिये आदेश दे सकता है, राज्य के विभिन्न बोर्डों और आयोगों का सदस्य होता है, विधानमण्डल में संदेश भेज सकता है और राज्य के लिये आवश्यक विधियों को स्वीकृत करने की सिफारिश कर सकता है। अपने नियुक्ति सम्बन्धी अधिकार के कारण वह विधान मंडल के सदस्यों को प्रभावित कर सकता है। राज्यपाल विधानमंडल द्वारा स्वीकृत विधियों के विषद रूप से नियम उप-नियम व बना सकता है। उसे विधानमंडल द्वारा पारित किसी अधिनियम का पुनर्विचार के लिये भेजने का अधिकार प्राप्त है। वह अधिनियम के किसी अंश का निषेध कर सकता है। अध्यादेश जारी करने का भी वह अधिकारी है। इसके अतिरिक्त राज्यपाल व्यवस्थापिका में भाषण दे सकता है और उसके द्वारा जनता को अपना संदेश पहुँचा सकता है।

राज्यपाल को महत्वपूर्ण वित्तीय अधिकार प्राप्त हैं। विगत 30 या 40 वर्षों में अनेक राज्यों में राज्य के राजस्व और विनियोग (राज्य के बजट का तैयार करना) के सम्बन्ध में राज्यपाल के अधिकारों में बहुत वृद्धि हुई है। अनेक राज्यों में उसे बजट प्रस्तुत करने का अधिकार दिया गया है और इसीलिये उसको अथवा उनके प्रति उत्तरदायी अधिकारियों और कतिपय अधिकारियों को यह कार्य सौंपा गया है कि वे विभिन्न विभागों और संस्थाओं से बजट तैयार कराने से सम्बन्धित सभी आवश्यक जानकारी प्राप्त करें। राज्यपाल द्वारा प्रस्तुत बजट के प्रारूप के

आधार पर ही विधान मंडल प्राय राज्य का बजट स्वीकार करता है। व्यय विनियोग विधयक पर राज्यपाल को किसी भी मत पर निषेधाधिकार लागू करने का अधिकार प्राप्त है। वित्तीय मामलों में राज्यपाल की स्थिति वस्तुत पर्याप्त महत्वपूर्ण और प्रभावशाली है क्योंकि राज्य का प्रमुख प्रशासनाधिकारी होने के नाते उससे अधिक किसी को भी प्रशासकीय विभागों की आवश्यकताओं का ज्ञान सम्भवत नहीं हो सकता।

न्यायिक शक्तियां—न्यायिक क्षेत्र में राज्यपाल को क्षमादान आदि देने का अधिकार है ताकि न्यायपालिका की ओर से की हुई त्रुटियों के विरुद्ध वह जनता की रक्षा कर सके। अपने क्षमादान के अधिकार का प्रयोग राज्यपाल एक परामर्शदात्री समिति के परामर्श के अनुसार करता है।

यह स्पष्ट है कि राज्य के संविधान के अनुसार राज्यपाल का कार्य प्रमुख कार्यपालक (Chief Executive) के रूप में सामान्य रूप से राज्य के प्रशासन की देखभाल करना है। कुछ राज्यों में संघीय परम्परा को अपनाते हुए राज्यपाल को यह अधिकार दिया गया है कि वह विविध विभागों के अध्यक्षों से प्रशासन सम्बन्धी प्रतिवेदन माग सके।

राज्यों के प्रशासनिक विभाग साधारणत ये होते हैं—1 बजट निर्माण अथवा वित्त विभाग, 2 आय अथवा कर विभाग, 3 सार्वजनिक सुरक्षा विभाग, 4 सैनिक विभाग, 5 कृषि विभाग, 6 स्वास्थ्य विभाग, 7 बीमा विभाग, 8 स्वच्छता विभाग, 9 राजकीय मार्ग विभाग, 10 राजकीय संस्थायें, 11 लोक-कल्याण विभाग, आदि।

कुछ विभाग उप विभागों में भी बटे रहते हैं और उनके अधीक्षक विभागाध्यक्ष के अधीन तथा उनके प्रति उत्तरदायी होते हैं। कुछ विभागों का प्रबन्ध विविध परिषदों या समितियों के द्वारा या उनके परामर्श के अनुसार होता है।

व्यवस्थापिका

एक दो राज्यों को छोडकर अन्य सभी राज्यों में द्विसदनीय व्यवस्थापिका है। कहीं उसे व्यवस्थापिका (Legislature) कहा जाता है, तो कहीं साधारण सभा (General Assembly), कहीं व्यवस्थापिका का साधारण अधिकरण (General Court) भी कहा जाता है। सभी राज्यों में ऊपरी सदन को सीनेट कहा जाता है, लेकिन नीचे के सदन को कहीं तो प्रतिनिधि सदन (House of Representative) के नाम से, कहीं केवल सभा (Assembly) के नाम से, कहीं प्रतिनिधि सभा (House of Delegates) और कहीं साधारण सभा (General Assembly) के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

सीनेट का आकार निचले सदन से छोटा होता है। इसमें सामान्यत निचले सदन के सदस्यों के एक तिहाई व्यक्ति सदस्य होते हैं। सीनेट की सदस्यता जहां 6 से लेकर 67 सदस्या तक की है वहां निचले सदन की सदस्य संख्या 35 से लेकर

400 तक है। इस प्रकार यदि सीनेट की सदस्यता का औसत 37 सदस्य का आता है तो निचले सदन के सदस्यों का औसत 120 का आता है।

प्रतिनिधि सभा अर्थात् निचले सदस्यों का निर्वाचन जनता द्वारा होता है और सीनेट के सदस्यों का निर्वाचन समान प्रतिनिधित्व के आधार पर काउण्टी के द्वारा। अधिकांशत राज्यों मे प्रतिनिधि सभा के सदस्यों का कार्यकाल दो वर्ष और सीनेट के सदस्यों का कार्यकाल चार वर्ष का है। साथ ही अधिकांश राज्यों म सीनेट की अध्यक्षता उप-राज्यपाल (Lt Governor) करता है।

राज्य की व्यवस्थापिकाओं को प्राय वे सभी अधिकार प्राप्त हैं जो संघीय सरकार को प्रदत्त नहीं हैं। संघीय राज्य की व्यवस्थापिका को अपने कार्यक्षेत्र के सभी विषयों पर कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है। इन अधिकारों में कर लगाना, कुछ करों का समाप्त करना, संविधान के संशोधन प्रस्ताव पर मत देने आदि प्रमुख है। कानून निर्माण सम्बन्धी अधिकारों म व्यवस्थापिका के दोनों ही सदन समकक्ष है। परम्परा के अनुसार साधारण विधेयक किसी भी सदन में प्रस्तावित हो सकता है, किन्तु धन विधेयक की प्रथम प्रस्तावना प्रतिनिधि सभा अर्थात् निचले सदन म ही होती है। सीनेट को समस्त विधेयकों के सम्बन्ध म परिवर्तन करने का अधिकार प्राप्त है। दोनों सदनों द्वारा पारित विधेयक राज्यपाल की स्वीकृति पाकर अधिनियम बन जाते हैं। यदि राज्यपाल विधेयक को पुन विचारार्थ लौटा देता है और व्यवस्थापिका दूसरी बार निर्धारित मतों द्वारा उसे स्वीकार कर देती है तो बिना राज्यपाल की स्वीकृति प्राप्त हुए ही वह विधेयक अधिनियम का रूप धारण कर लेता है। निर्धारित बहुमत विभिन्न राज्यों म भिन्न-भिन्न है। यदि दोनों सदनों मे विधेयक की स्वीकृति पर मतभेद विद्यमान रहता है तो विधेयक समाप्त हो जाता है।

राज्यपाल या अन्य उच्चाधिकारियों पर महाभियोग चलाने के अधिकार भी दोनों सदन को सम्मिलित रूप से है। निचले सदन द्वारा महाभियोग लगाया जाता है और उच्च सदन न्यायालय के रूप मे उसकी सुनवायी करता है व उस पर निर्णय देता है।

सभी व्यवस्थापिकाओं की भाँति राज्य व्यवस्थापिका भी समितियों का व्यापक प्रयोग करती है। निचले सदन मे समितियों की नियुक्ति दलीय नेताओं के परामर्श मे अध्यक्ष (Speaker) द्वारा की जाती है अथवा दल के अन्तरंग मण्डल से ही इस सम्बन्ध म निर्णय कर लिया जाता है। सीनेट म या तो बहुमत दल के नेता की सिफारिश पर ऊपरी सदन समितियों के सदस्य चुनता है या अध्यक्ष (Lt Governor) या अस्थायी अध्यक्ष इस कार्य को सम्पन्न करता है।

न्यायपालिका

संयुक्त राज्य अमरिका म दो प्रकार के न्यायालय समानान्तर रूप मे कार्य करते हैं। एक प्रकार के न्यायालय वे हैं जो संघीय कानूनों को क्रियान्वित करते

हैं और दूसरे प्रकार के न्यायालय व है जो राज्यो के कानूनो को क्रियान्वित करते है। अमेरिका की इस व्यवस्था के विपरीत भारतवर्ष मे केवल एक ही प्रकार के न्यायालय केन्द्रीय और स्थानीय दोनो ही प्रकार के कानूनो को क्रियान्वित करते है।

जहा तक राज्यो के कानूनो के क्रियान्वयन का प्रश्न है, अमेरिका के प्रत्येक राज्य मे अपने-अपने सविधान के अन्तर्गत न्यायपालिका स्थापित है, अत प्रत्येक राज्य की न्याय व्यवस्था बिल्कुल पृथक और स्वतत्र है। राज्य के न्यायालय सघीय न्यायालयो के आधीन नही होते प्रत्युत् वे एक पृथक न्यायपालिका के अग होते हैं जिन्हे अपने अधिकार क्षेत्र म पूरी स्वतन्त्रता व शक्ति रहती है। सामान्य सगठन की दृष्टि से ये न्यायालय सघीय न्यायालयो से बहुत कुछ मिलते हैं। सघीय और राज्यीय दोनो न्याय प्रणालियो म छोटे बडे न्यायालय होते हैं जिनके कार्य और अधिकार एक दूसरे से भिन्न, कम या अधिक होते हैं। राज्यो के न्यायालय प्राय दो बडी बातो मे सघीय न्यायालय से भिन्न है। पहिला महत्वपूर्ण भेद तो यह है कि राज्य न्यायपालिका के न्यायाधीश प्राय जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं जबकि सघीय न्यायालय के न्यायाधीशो को कार्यपालिका नियुक्त करती है। केवल 10 राज्य ऐसे हैं जिनके न्यायाधीश निर्वाचित न होकर कार्यपालिका द्वारा नियुक्त होते हैं। दूसरा प्रमुख भेद यह है कि प्रत्येक राज्य म न्याय पद्धति भिन्न भिन्न है, अत सब राज्यो मे न्याय-व्यवहार म समानता नही पाई जाती।

राज्यो मे न्यायाधीशो पर व्यवस्थापिका का निचला सदन अभियोग लगा सकता है और सीनेट अर्थात् उच्च सदन अभियोग की जाच करके उन्हें दोषी ठहरा सकता है और उनके पद से हटा सकता है। 12 राज्यो म यह प्रथा प्रचलित है कि व्यवस्थापिका म तत्सम्बन्धी प्रस्ताव पारित होने से ही किसी न्यायाधीश का पदच्युत किया जा सकता है। 9 राज्यो में राज्यपाल व्यवस्थापिका की प्रार्थना पर न्यायाधीशो को हटा सकता है। कुछ राज्यो मे जनता न्यायाधीशों को प्रत्याहरण (Re call) कर सकती है। इसके लिये पदच्युत करने की प्रार्थना पर जनता का प्रत्यक्ष मत लिया जाता है। इन राज्यो में न्यायालयो के कुछ निर्णयो को भी जनमत से वापिस लिया जा सकता है।

अमेरिका म राज्यो के न्यायालयो की व्यवस्था का वर्णन मोटे रूप से हम निम्नलिखित शीर्षक के अन्तर्गत कर सकते हैं—

1 सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court)—राज्यो की न्याय व्यवस्था के अन्तर्गत शीर्ष पर सर्वोच्च न्यायालय होता है जो राज्य के न्यायिक मामलों म सबसे ऊचा न्यायालय है और जिसके निर्णय के विरुद्ध कोई अपील नहीं की जा सकती। इसम साधारणत 5 से 7 न्यायाधीश कार्य करते हैं जो प्राय निर्वाचित होते हैं। परन्तु राज्य म सर्वोच्च न्यायालय मुख्य रूप से अपील का न्यायालय होता है और निम्न न्यायालयो के निर्णयो के विरुद्ध अपीलो की सुनवाई करता है। सर्वोच्च

न्यायालय केवल कानून के आधार पर अपील के मामलों की सुनवाई करता है। वे निम्न न्यायालयों के निर्णयों को मान्य अथवा अमान्य ठहराते हैं। इनके निर्णय प्रकाशित किए जाते हैं और वे निम्न न्यायालयों का मार्गदर्शन करते हैं। प्रत्येक राज्य के सर्वोच्च न्यायालय उस राज्य के संविधान की व्याख्या करने का अंतिम अधिकारी होता है। कुछ राज्यों में यह व्यवस्था भी है कि सर्वोच्च न्यायालय राज्यपाल अथवा व्यवस्थापिका द्वारा मांगे जाने पर आवश्यक परामर्श प्रदान करे।

2 माध्यमिक न्यायालय (Intermediary Courts)—सर्वोच्च न्यायालय के बाद माध्यमिक न्यायालयों का स्थान है। प्रत्येक राज्य में यह न्यायालय भी प्रमुख अपील का न्यायालय होता है। इन माध्यमिक न्यायालयों को कुछ राज्यों में अपील न्यायालय (Courts of Appeal) तो कुछ राज्यों में उच्चतर न्यायालय (Supreme Courts) कहते हैं। इनमें प्राय तीन से लेकर 9 न्यायाधीश कार्य करते हैं, जो साधारणत निर्वाचित होते हैं। माध्यमिक न्यायालयों का संगठन एवम उनकी कार्य प्रणाली सर्वोच्च न्यायालय जैसी है।

3 जिला या काउण्टी न्यायालय (District and County Courts)—माध्यमिक अथवा अपील न्यायालयों के नीचे जिला अथवा काउण्टी न्यायालय होते हैं। इनका काम अभियोगों की सुनवाई करना है। इनमें हत्या, रिश्वतखोरी, मार-पीट, हानि आदि के मुकदमों की सुनवाई होती है। ये न्यायालय व्यवस्थापिका द्वारा निर्धारित जिला की सीमा में कार्य करते हैं। विविध राज्यों में इन्हें जिला न्यायालय काउण्टी न्यायालय, उच्चतर न्यायालय तथा सरकिट न्यायालय (Circuit Courts) आदि नामों से पुकारा जाता है। इनका न्याय क्षेत्र प्रारम्भिक व अपीलीय दोनों है।

4 छोटे न्यायालय (Justices Courts)—राज्य की न्याय व्यवस्था में सबसे नीचे के स्तर के न्यायालय जस्टिसों के न्यायालय (Justices Courts) हैं। इनमें शान्ति न्यायाधीश (Justices of Peace) न्यायिक कार्य करते हैं। ये न्यायालय दीवानी और फौजदारी के छोटे मुकदमों की सुनवाई करते हैं।

5 विशेष न्यायालय—उपर्युक्त न्यायालयों के अतिरिक्त नगर न्यायालय (Municipal Courts) होते हैं। ये न्यायालय विशेष रूप से घनी आबादी वाले क्षेत्रों में न्यायिक कार्य करते हैं। इन न्यायालयों में अनेक न्यायाधीश कार्य करते हैं जो फौजदारी, दीवानी तथा अन्य ऐसे ही प्रकारों का कार्य करते हैं।

अमेरिकन राज्यों में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र

(Direct Democracy in the States of America)

संयुक्त राज्य अमेरिका और इसके अन्तर्गत राज्यों के शासन में प्रतिनिधि रत्तात्मक प्रणाली स्वीकार की गई है जिसके अनुसार प्रशासन पर जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों का अधिकार रहता है। किन्तु कुछ ऐसे भी राज्य हैं जिन्होंने प्रत्यक्ष प्रजातन्त्रीय शासन व्यवस्था को स्वीकार किया गया है। इस शासन व्यवस्था

मे कानून निर्माण और प्रशासकीय पदाधिकारियों की नियुक्ति का कार्य जनता स्वयं प्रत्यक्ष रूप से करती है। प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के तीन साधन है—

1 आरम्भण (Initiative)

2 प्रत्याहरण (Recall)

3 जन-निर्देश (Referendum)

आरम्भण एवं निर्देश की प्रथा अधिकांश राज्यो मे है किन्तु प्रत्याहरण की प्रथा केवल कुछ ही राज्यो मे पाई जाती है।

1 आरम्भण (Initiative)—आरम्भण द्वारा सयुक्त राज्य के 14 राज्यो के सविधानो मे सशोधन हो सकते हैं। जनता प्रत्यक्ष रूप से विधि निर्माण की अधिकारिणी होती है। सशोधन करवाने के इच्छुक व्यक्ति सशोधन का प्रारूप तैयार कर लेते है और तत्पश्चात उस पर एक निश्चित सख्या मे मतदाताओ के हस्ताक्षर कराके वह राज्य के पदाधिकारियो के समक्ष प्रस्तुत कर दिया जाता है। सयुक्त राज्य के 19 राज्यो के मतदाताओ को आरम्भण के अतर्गत यह अधिकार प्राप्त है कि वे जिस कानून को पास करवाना चाहते है उसे विधान मडल के सामने रखें। विधान मडल के द्वारा स्वीकार कर लिये जाने पर वह कानून बन जाता है। किन्तु यदि विधान मडल उसको अस्वीकार कर देता है तो वह कानूनी प्रस्ताव मतदाताओ के समक्ष उपस्थित किया जाता है और बहुमत द्वारा स्वीकार कर लिये जाने पर कानून का रूप धारण कर लेता है। इस प्रकार बनाया गया कानून विधान मडल द्वारा पारित अधिनियम ही समझा जाता है, यद्यपि बाद मे विधान मडल को यह अधिकार है कि वह उसे रद्द कर दे। किन्तु जहा तक सविधान मे सशोधन करने वाले प्रस्ताव का प्रश्न है, उसे रद्द करने का अधिकार विधान मण्डल को नही है।

2 प्रत्याहरण (Recall)—राज्यो के विधानमडल राज्यपाल एव अन्यान्य सरकारी पदाधिकारियो का निर्वाचन अथवा नियुक्ति एक निश्चित अवधि के लिए होती है किन्तु प्रत्याहरण के अतर्गत जनता का यह अधिकार है कि वह अवाछित पदाधिकारियो को उनकी अवधि से पूर्व ही हटा दे। इसके लिए प्रक्रिया यह है कि जनता की एक निश्चित सख्या हस्ताक्षर करके पदाधिकारी को हटाने की माग करती है। तत्पश्चात् इस प्रस्ताव पर मतदाताओ के मत लिये जाते हैं। यदि मतदाताओ का बहुमत प्रस्ताव का समर्थन करता है तो पदाधिकारी को पद त्याग करना होता है और मतदाता रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये दूसरे व्यक्ति का निर्वाचन करते हैं। यह व्यक्ति उतने समय के लिये पदासीन रहता है जितने समय के लिये प्रत्याहरण किये गये व्यक्ति को कार्य करना था।

3 जन-निर्देश (Referendum)—जननिर्देश के अतर्गत जनता को यह अधिकार है कि वह विधानमण्डल द्वारा स्वीकृत अधिनियम के सम्बन्ध मे जनता की राय प्राप्त करने की माग करे। इसके लिए जनता के कुछ भाग द्वारा एक आवेदन-पत्र उपस्थित किया जाता है और तब प्रस्ताव जनता के सामने रखा जाता है।

जनता बहुमत से उस प्रस्ताव के पक्ष अथवा विपक्ष म अपना निणय देती है । जन निदेश का महत्व इसी से प्रकट होता है कि विधानमडल द्वारा अधिनियम पारित होते ही उसे लागू नही किया जाता बल्कि कुछ समय के लिये इस बात की प्रतीक्षा की जाती है कि यदि जनता चाहे तो इस सम्बन्ध मे जन निदेश भेज दे । यहा यह स्मरणीय है कि अति आवश्यक समझे जाने वाले अधिनियमो को तुरन्त भी लागू किया जा सकता है किन्तु ऐसे अधिनियमो का विधान मण्डलो के दो तिहाई सदस्यो द्वारा पारित होना अनिवार्य है ।

उपरोक्त प्रजातन्त्रीय व्यवस्था की उपयोगिता के सम्बन्ध मे विद्वानो की विभिन्न धारणायें हैं । कुछ के मत म यह इसलिये उपयोगी है कि इसके द्वारा जनता प्रत्यक्ष रूप से अपनी वास्तविक इच्छा प्रकट कर पाती है और शासन पर नियन्त्रण रखती है । इसके साथ ही जनता और व्यवस्थापन विभाग का सम्पर्क बना रहता है । यह सम्पर्क मतदाताओ को दलबन्दी के विनाशकारी एव विकृत प्रभाव से मुक्त रखता है । किन्तु अनेक विद्वान प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की इस उपयोगिता के बारे म सदेहशील है । उनका कथन है कि साधारण व्यक्ति मे ज्ञान की कमी होती है और उचित-अनुचित का निणय करने जैसा उनका बौद्धिक स्तर नही होता है । इस कारण वह अपने अधिकारो का उचित प्रयोग नही कर सकती । इसके अतिरिक्त एक विशाल जनसख्या वाले देश मे व्यावहारिक रूप से भी इस प्रथा की सफलता अत्यन्त सदिग्ध है ।

—०—

8

स्थानीय शासन

(LOCAL SELF GOVERNMENT)

"स्थानीय स्वशासन की संस्था सरकार के किसी अन्य भाग का अपेक्षा अधिक शिक्षाप्रद है।"

—लास्की

स्थानीय स्वशासन से लोकतन्त्र का प्रशिक्षण मिलता है, अत इसे लोकतन्त्र की प्रथम पाठशाला कही है। इसके माध्यम से लोगो म प्रशासन के प्रति रुचि उत्पन्न होती है और उनका सहयोग बढता है। इससे प्रशासन मे दक्षता उत्पन्न होती है क्योकि स्थानीय क्षेत्रो के प्रतिनिधि अपने क्षेत्र की समस्याओ को अच्छी तरह समझते हैं और केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय अधिकारियो की अपेक्षा उनको अच्छी तरह हल कर सकते हैं। अमेरिका मे स्थानीय शासन का जो रूप है, वह अमेरिकन लोकतन्त्रीय परम्परा के बहुत कुछ अनुकूल है।

अमेरिकन शासन की विशेषतायें

1 अमेरिका मे स्थानीय शासन को व्यावसायिक दृष्टि स देखा जाता है। कौंसिल मनेजर योजना का विकास इसका अच्छा प्रमाण है।

2 राज्य स्तर से नीचे प्रशासन की इकाइया एक प्रकार से राज्य शासन की प्रतिनिधि हैं। उनकी शक्तिया और सगठन की परिभाषा राज्य के कानूनो द्वारा की गई है।

3 स्थानीय शासन का गठन न केवल प्रत्येक राज्य म भिन्न प्रकार का है बल्कि एक ही राज्य मे कई स्थानो पर कई प्रकार के स्थानीय निकाय उपलब्ध हैं।

4 विभिन्न राज्यो म विभिन्न इकाइया कहा तक स्वायत्तता का उपभोग करें, इस सम्बन्ध म अलग-अलग राज्यो मे अलग अलग स्तर हैं।

जनता बहुमत से उस प्रस्ताव के पक्ष अथवा विपक्ष मे अपना निणय देती है । जन निदेश का महत्व इसी से प्रकट होता है कि विधानमडल द्वारा अधिनियम पारित होते ही उसे लागू नही किया जाता बल्कि कुछ समय के लिये इस बात की प्रतीक्षा की जाती है कि यदि जनता चाहे तो इस सम्बन्ध मे जन निदेश भेज दे । यहा यह स्मरणीय है कि अति आवश्यक समझे जाने वाले अधिनियमो का तुरन्त भी लागू किया जा सकता है किन्तु ऐसे अधिनियमो का विधान मण्डलो के दो तिहाई सदस्यो द्वारा पारित होना अनिवाय है ।

उपरोक्त प्रजातन्त्रीय व्यवस्था की उपयोगिता के सम्बन्ध मे विद्वानो की विभिन्न धारणायें है । कुछ के मत म यह इसलिये उपयोगी है कि इसके द्वारा जनता प्रत्यक्ष रूप स अपनी वास्तविक इच्छा प्रकट कर पाती है और शासन पर नियन्त्रण रखती है । इसके साथ ही जनता और व्यवस्थापन विभाग का सम्पक बना रहता है । यह सम्पक मतदाताओ को दलव दी के विनाशकारी एव विकृत प्रभाव से मुक्त रखता है । किन्तु अनेक विद्वान प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की इस उपयोगिता के बारे म सदेहशील है । उनका कथन है कि साधारण व्यक्ति म ज्ञान की कमी होती है और उचित-अनुचित का निणय करने जैसा उनका बौद्धिक स्तर नही होता है । इस कारण वह अपने अधिकारो का उचित प्रयोग नही कर सकती । इसके अतिरिक्त एक विशाल जनसख्या वाले देश म व्यावहारिक रूप से भी इस प्रथा की सफलता अत्यन्त सदिग्ध है ।

—०—

8

स्थानीय शासन

(LOCAL SELF GOVERNMENT)

"स्थानीय स्वशासन की संस्था सरकार के किसी अन्य भाग की अपेक्षा अधिक शिक्षाप्रद है।"

—लास्की

स्थानीय स्वशासन से लोकतन्त्र का प्रशिक्षण मिलता है, अतः इसे लोकतन्त्र की प्रथम पाठशाला कहा है। इसके माध्यम से लोगों में प्रशासन के प्रति रुचि उत्पन्न होती है और उनका सहयोग बढ़ता है। इससे प्रशासन में दक्षता उत्पन्न होती है क्योंकि स्थानीय क्षेत्रों के प्रतिनिधि अपने क्षेत्र की समस्याओं को अच्छी तरह समझते हैं और केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय अधिकारियों की अपेक्षा उनको अच्छी तरह हल कर सकते हैं। अमेरिका में स्थानीय शासन का जो रूप है, वह अमेरिकन लोकतन्त्रीय परम्परा के बहुत कुछ अनुकूल है।

अमेरिकन शासन की विशेषतायें

1 अमेरिका में स्थानीय शासन को व्यावसायिक दृष्टि से देखा जाता है। कौंसिल-मनेजर योजना का विकास इसका अच्छा प्रमाण है।

2 राज्य स्तर से नीचे प्रशासन की इकाइयाँ एक प्रकार से राज्य शासन की प्रतिनिधि हैं। उनकी शक्तियों और संगठन की परिभाषा राज्य के कानूनों द्वारा की गई है।

3 स्थानीय शासन का गठन न केवल प्रत्येक राज्य में भिन्न प्रकार का है बल्कि एक ही राज्य में कई स्थानों पर कई प्रकार के स्थानीय निकाय उपलब्ध हैं।

4 विभिन्न राज्यों में विभिन्न इकाइयाँ कहाँ तक स्वायत्तता का उपभोग करें, इस सम्बन्ध में अलग-अलग राज्यों में अलग अलग स्तर हैं।

5 विभिन्न राज्यों में कई प्रकार की स्थानीय संस्थायें हैं, बल्कि स्थानीय समुदाय को भी यह निर्धारित करने की स्वतन्त्रता है कि वह अपने यहाँ किस प्रकार की संस्थायें रखेंगे।

स्थानीय शासन की इकाइयाँ

अमरीकन स्थानीय शासकीय संस्थायें ब्रिटिश परम्परा की देन हैं। औपनिवेशिक काल में ही ये संस्थायें विद्यमान थीं, लेकिन समय के साथ अनेक परिवर्तन हुए और नवीनतम प्रणालियाँ का जन्म हुआ। आज अमरीका में इतनी अधिक स्थानीय शासनिक इकाइयाँ हैं तथा उनमें परस्पर इतनी विभिन्नता है कि विदेशी उन्हें देख कर चक्कर में पड़ जाता है।

संयुक्त राज्य अमरिका में स्थानीय शासन संस्थाओं को सामान्यतः दो वर्गों में बाँटा जाता है—नगर शासन (City Government) एवं ग्राम्य शासन (Rural Government) स्थानीय शासन की सबसे बड़ी इकाई काउन्टी (County) है। समस्त देश में लगभग तीन हजार काउन्टियाँ हैं। इन तीन हजार काउन्टियों में से अधिकतर पुनः दस हजार कस्बे (Towns) या उपनगर (Townships) बनाये गये हैं और इन दस हजार कस्बों या उपनगरों में से लगभग सोलह हजार नगर प्रशासनिक इकाइयाँ (Urban Municipalities) बनाई गयी हैं, जिन्हें नगर (Cities) कहते हैं। स्थानीय शासन की इन नियमित इकाइयों के अतिरिक्त अमरिका में लगभग आठ हजार अन्य प्रकार की (Miscellaneous) इकाइयाँ हैं, जिन्हें विशेष जिले (Special Districts) कहा जाता है। ये इकाइयाँ विशेष प्रकार के कार्य करती हैं, जैसे सिंचाई अथवा मल प्रवाह (Irrigation and Sewage) के काम आदि। इनके अतिरिक्त अमरिका में लगभग एक लाख शिक्षा क्षेत्र या शिक्षा सम्बन्धी जिले हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण अमरिका में डेढ़ लाख के आस-पास स्थानीय शासनिक निकाय हैं जिनके नाम सभी राज्यों में एक से नहीं हैं।

काउण्टी (County)—यह स्थानीय शासन की सबसे बड़ी इकाई है। इनकी संख्या लगभग तीन हजार है। प्रत्येक राज्य काउण्टियों में बाँटा गया है। सभी काउण्टियों का क्षेत्रफल समान नहीं है। फिर भी साधारणतः, एक काउण्टी का क्षेत्रफल लगभग एक हजार वर्ग मील है। प्रायः प्रत्येक काउण्टी का प्रशासन एक समिति अथवा परिषद् (Council or Board) चलाती है, जिसमें चार से लेकर पचास तक सदस्य होते हैं। दो तिहाई काउण्टी परिषदों या समितियों (County Boards or Councils) में, 6 से कम ही सदस्य रहते हैं। काउण्टी परिषद या समिति का काम नियम बनाना है। वह काउण्टी शासन के कतिपय प्रशासनिक अधिकारों का भी प्रयोग करती है। काउण्टी शासन में समिति या परिषद के अतिरिक्त कुछ प्रशासनिक अधिकारी भी होते हैं, जैसे शेरिफ (Sheriff), लिपिक (Clerk), अभियोग संचालक वकील (Prosecutor Attorney) तथा मृत्युन्वानिक (Coroner) आदि। ये सब अधिकारी निर्वाचित होते हैं और उन प्रशासनिक कार्यों का सम्पादन करते हैं

जिन्हें परिषद अथवा समिति स्वयं नहीं करती। काउण्टी के न्यायाधीश भी अलग निर्वाचित होते हैं या नियुक्त किये जाते हैं।

टाउन (Town)—अमेरिका के कई राज्यों में काउण्टी को पुनः विभाजित कर टाउनों (Towns) और नगरों (Cities) में बाँट दिया गया है। टाउन देहाती स्थानीय शासन के मुख्य निकाय हैं और नगर (Cities) शहरी स्थानीय शासन के मुख्य निकाय हैं। टाउन या कस्बा को वास्तव में एक ग्राम या देहात ही समझा जाना चाहिए जिसके साथ साथ आसपास की भूमि या प्रदेश सम्बद्ध रहता है। टाउनों में ही देहाती स्थानीय शासन का क्रियात्मक स्वरूप देखने को मिलता है और वहीं हमको वास्तविक प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के दर्शन होते हैं। टाउन का शासन एक कस्बा या टाउन समिति (Town Council) द्वारा चलाया जाता है, जिसमें सभी अधिकारी मतदाता भाग लेते हैं। इस समिति की बैठक प्रायः वार्षिक होती है, लेकिन आवश्यकता पड़ने पर अधिक बैठकें भी आयोजित हो सकती हैं। ये समितियाँ नियम बनाने और बजट स्वीकार करने के लिए होती हैं। ये अपने अपने क्षेत्र के लिए विशिष्ट व्यक्तियों की एक परिषद (Board of Selectmen), जिसे टाउन समिति (Town Council) भी कहते हैं तथा एक शिक्षा परिषद (School Board) का निर्वाचन भी करती हैं। इसके अतिरिक्त ये कुछ अन्य अधिकारियों का भी चयन करती हैं। इन सभी का कार्य टाउन सभा (Town Meeting) के कार्यकाल के लम्बे विराम काल में स्थानीय शासन को चलाना होता है।

टाउनशिप (Township)—संयुक्त राज्य अमेरिका में कुछ भागों में ग्राम स्वशासन की इकाइयाँ टाउनशिप (Township) कहलाती हैं। टाउनशिप का प्रबन्ध छोटी सी निर्वाचित परिषद (Board) द्वारा होता है जिसके प्रमुख अध्यक्ष को नगर प्रमुख (Mayor) या सभापति (Chairman) कहा जाता है। मेयर निर्वाचित भी हो सकता है और परिषद के सदस्यों में से भी हो सकता है तथा उसको विशेष अधिकारों से सज्जित भी किया जा सकता है। टाउनशिप की परिषद एक नियम निर्मात्री संस्था है, जो कर्मचारियों को नियुक्त करती है और बजट स्वीकार करती है।

नगर (City)—अमरिका में स्थानीय शासन की सबसे अधिक क्रियाशील और दिलचस्प इकाइयाँ नगर (Cities) हैं जिन्हें म्युनिसिपैलिटियाँ (Municipalities) में सगठित कर लिया गया है। टाउन एवं टाउनशिप की तरह नगर भी काउण्टी के नगरीय उपविभाग होते हैं। इनकी संख्या लगभग 16 हजार है। अमेरिका में नगर की (City) प्रायः वही स्थिति है जो इंग्लैंड में बरो (Burrough) या काउण्टी बरो (County Burrough) की है। नगर इकाइयों में वास्तव में देहाती स्थानीय प्रशासनिक इकाइयों की अपेक्षा कहीं अधिक स्वशासन रहता है।

प्रत्येक नगर का शासन प्रबन्ध एक अधिकार पत्र (Charter) के अनुसार होता है, जिसे या तो राजकीय व्यवस्थापिका द्वारा प्रदान किया जाता है या जिसे नगर सभा अपने नगर-स्वशासन के अधिकार के अन्तर्गत स्वयं बनाती है। नगर के

5 विभिन्न राज्यो म न केवल अनेक प्रकार की स्थानीय सस्थायें हैं, वल्कि स्थानीय समुदाय को भी यह निर्धारित करने की स्वतन्त्रता है कि वे अपने यहा किसी प्रकार की सस्थायें रखेंगे।

स्थानीय शासन की इकाइयां

अमरिकन स्थानीय शासनिक सस्थायें ब्रिटिश परम्परा की देन हैं। औपनिवेशिक काल म ही ये सस्थायें विद्यमान थी, लकिन समय के साथ अनेक परिवतन हुए और नयी नयी प्रणालिया का जन्म हुआ। आज अमरिका म इतनी अधिक स्थानीय शासनिक इकाइया हैं तथा उनम परस्पर इतनी विभिन्नता है कि विदेशी उन्हें देख कर चक्कर म पड जाता है।

सयुक्त राज्य अमेरिका म स्थानीय शासन सस्थाओ को सामान्यत दो वर्गों मे बाटा जाता है—नगर शासन (City Government) एव ग्राम्य शासन (Rural Government) स्थानीय शासन की सबसे बडी इकाई काउण्टी (County) है। समस्त देश म लगभग तीन हजार काउण्टिया हैं। इन तीन हजार काउण्टिया म से अधिकतर पुन दस हजार कस्बे (Towns) या उपनगर (Townships) बनाये गये हैं और इन दस हजार कस्बा या उपनगरा मे से लगभग सोलह हजार नगर प्रशासनिक इकाइया (Urban Municipalities) बनाई गयी हैं, जिन्हें नगर (Cities) कहते है। स्थानीय शासन की इन नियमित इकाइया के अतिरिक्त अमेरिका म लगभग आठ हजार अन्य प्रकार की (Miscellaneous) इकाइया हैं, जिन्हें विशष जिले (Special Districts) कहा जाता है। ये इकाइया विशष प्रकार के काय करती हैं, जैसे सिंचाई अथवा मल प्रवाह (Irrigation and Sewage) के काय आदि। इनके अतिरिक्त अमेरिका म लगभग एक लाख शिक्षक क्षेत्र या शिक्षा सम्ब धी जिले है। इस प्रकार सम्पूण अमेरिका म डेढ लाख के आसपास स्थानीय शासनिक निकाय है जिनके नाम सभी राज्यो मे एक से नही है।

काउण्टी (County)–यह स्थानीय शासन की सबसे बडी इकाई है। इनकी सख्या लगभग तीन हजार है। प्रत्येक राज्य काउण्टियो म बाटा गया है। सभी काउण्टियो का क्षेत्रफल समान नही है। फिर भी साधारणत, एक काउण्टी का क्षत्रफल लगभग एक हजार वग मील है। प्राय प्रत्यक काउण्टी का प्रशासन एक समिति अथवा परिषद् (Council or Board) चलाती है, जिसम चार स लेकर पचास तक सदस्य हाते हैं। दो तिहाई काउण्टी परिषदो या समितिया (County Boards or Councils) म, 6 स कम ही सदस्य रहते है। काउण्टी परिषद या समिति का काय नियम बनाना है। वह काउण्टी शासन के कतिपय प्रशासनिक अधिकारो का भी प्रयोग करती है। काउण्टी शासन मे समिति या परिषद के अतिरिक्त कुछ प्रशासनिक अधिकारी भी हाते है, जैसे शैरिफ (Sheriff), लिपिक (Clerk), अभियोग सचालक वकील (Prosecutor Attorney) तथा मृत्युन्वानिक (Coroner) आदि। ये सब अधिकारी निर्वाचित होते हैं और उन प्रशासनिक कार्यों का सम्पादन करते हैं

जिन्हें परिषद अथवा समिति स्वय नही करती । काउण्टी के न्यायाधीश भी अलग निर्वाचित होते है या नियुक्त किये जाते हैं ।

टाउन (Town)—अमरिका के कई राज्यो म काउण्टी को पुन विभाजित कर टाउनो (Towns) और नगरो (Cities) म बाट दिया गया है । टाउन देहाती स्थानीय शासन के मुख्य निकाय हैं और नगर (Cities) शहरी स्थानीय शासन के निकाय ह । टाउन या कस्बा को वास्तव म एक ग्राम या देहात ही समझा जाना चाहिए जिसके साथ साथ आसपास की भूमि या प्रदेश सम्बद्ध रहता है । टाउनो मे देहाती स्थानीय शासन का क्रियात्मक स्वरूप देखने को मिलता है और वही पर वास्तविक प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के दर्शन होते ह । टाउन का शासन एक कस्बा या टाउन समिति (Town Council) द्वारा चलाया जाता है, जिसमे सभी अधिकारी मतदाता भाग लेते ह । इस समिति की बैठक प्राय वार्षिक होती है, लेकिन आवश्यकता पडने पर अधिक बैठकें भी आयोजित हो सकती है । ये समितियां नियम बनाने और बजट स्वीकार करने के लिए होती ह । ये अपने अपने क्षेत्र के लिए निर्वाचित व्यक्तियो की एक परिषद (Board of Selectmen), जिसे टाउन समिति (Town Council) भी कहते ह तथा एक शिक्षा परिषद (School Board) का निर्वाचन भी करती ह । इसके अतिरिक्त ये कुछ अन्य अधिकारियों का भी चयन करती हैं । इन सभी का कार्य टाउन सभा (Town Meeting) के कार्यकाल के लम्बे विराम काल मे स्थानीय शासन को चलाना होता है ।

टाउनशिप (Township)—संयुक्त राज्य अमेरिका म कुछ भागो म ग्राम शासन की इकाइयां टाउनशिप (Township) कहलाती ह । टाउनशिप का शासन एक छोटी सी निर्वाचित परिषद (Board) द्वारा होता है जिसके प्रमुख अध्यक्ष को नगर प्रमुख (Mayor) या सभापति (Chairman) कहा जाता है । मेयर निर्वाचित भी हो सकता है और परिषद के सदस्यो म से भी हो सकता है तथा उसको विशेष अधिकारो से सज्जित भी किया जा सकता है । टाउनशिप की परिषद एक नियम निर्मात्री संस्था है, जो कर्मचारियो को नियुक्त करती है, और बजट स्वीकार करती है ।

नगर (City)—अमेरिका मे स्थानीय शासन की सबसे अधिक क्रियाशील और व्यवस्थित इकाइयां नगर (Cities) ह जिन्हें म्यूनिसिपैलिटियो (Municipalities) में संगठित कर लिया गया है । टाउन एव टाउनशिप की तरह नगर भी काउण्टी के क्षेत्रीय उपविभाग होते ह । इनकी संख्या लगभग 16 हजार है । अमेरिका मे नगर (City) प्राय वही स्थिति है जो इंग्लैड म बरो (Burrough) या काउण्टी बरो (County Burrough) की है । नगर इकाइयां म वास्तव म देहाती स्थानीय प्रशासनिक इकाइयों की अपेक्षा कहीं अधिक स्वशासन रहता है ।

प्रत्येक नगर का शासन प्रबन्ध एवं अधिकार पत्र (Charter) के अनुसार होता है, जिसे या तो राजकीय व्यवस्थापिका द्वारा प्रदान किया जाता है या जिसे नगर सभा अपने नगर-स्वशासन के अधिकार के अन्तर्गत स्वय बनाती है । नगर के

लिए इस अधिकार-पत्र का वही महत्व है जो किसी राज्य या सम्पूर्ण देश के लिए संविधान का है। अधिकारों पत्रों (Charters) के द्वारा साधारणत तीन प्रकार के स्थानीय शासनों की स्थापना होती है, जिन्हें इन नामों से पुकारा जाता है—

1 मेयर कौंसिल फार्म (Mayor Council Form),

2 कमीशन फार्म (Commission Form), एव

3 कौंसिल मैनेजर फार्म (Council Manager Form)

1 **मेयर कौंसिल फार्म (Mayor Council Form)**—इसमें विभिन्न क्षेत्रों से जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों की एक परिषद (Council) होती है। उसका अध्यक्ष मेयर होता है। इसके भी दो मुख्य रूप होते हैं —शक्तिहीन मेयर (Weak Mayor) और शक्तिशाली मेयर (Strong Mayor)। प्रथम प्रकार के मेयर की शक्तियाँ बहुत ही कम होती हैं। वह परिषद का सभापति होता है। प्रशासन के सब विभाग किसी न किसी आयोग (Commission) या परिषद (Board) के अधीन होते हैं जिनके सदस्य या तो प्रत्यक्ष रूप में जनता द्वारा चुने जाते हैं या कौंसिल द्वारा। मेयर कुछ मुख्य-मुख्य पदों की नियुक्ति करता है, पर यह आवश्यक है कि उनका पुष्टिकरण कौंसिल द्वारा किया जाए। कुछ विषयों में मेयर को निषेधाधिकार (Veto) प्राप्त होता है, लेकिन कौंसिल उसके निषेध को दो तिहाई बहुमत से समाप्त कर सकती है। सिद्धान्त रूप से मेयर का कार्य विभिन्न विभागों का नियन्त्रण और निरीक्षण करना है लेकिन व्यवहार में वह ऐसा नहीं कर पाता, क्योंकि उसे पर्याप्त अधिकार प्राप्त नहीं हैं। दूसरे प्रकार के अर्थात् शक्तिशाली मेयर टाइप (Strong Mayor Type) के स्थानीय शासन का आधार शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त है। कौंसिल नीति का निर्धारण करती है और मेयर जो जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं, कार्यपालिका शक्ति रखते हैं। मेयर ही महत्वपूर्ण अधिकारियों को नियुक्त करता है और उन्हें अपने अधिकार से हटा भी सकता है। नगर इकाई के सभी कर्मचारियों की नियुक्ति उसी के द्वारा होती है और नगर के बजट पर उसका नियन्त्रण होता है। उसे कौंसिल के निर्णयों पर कुछ प्रतिबन्ध के अधिकार भी होते हैं। इस प्रकार शक्तिशाली मेयर (Strong Mayor) वस्तुत नगर के प्रशासन का अध्यक्ष होता है।

2 ***कमीशन फार्म (Commission Form)***—नगर की इकाई का यह वह रूप है जहाँ एक आयोग नगर शासन सम्भालता है। इसके द्वारा अशक्त मेयर वाले नगर के शासन की कमियाँ दूर हो जाती हैं और शासन का रूप सरल हो जाता है। नगर इकाई के इस रूप में नगर की व्यवस्थापन और प्रशासन सम्बन्धी शक्तियाँ एक छोटे आयोग में निहित रहती हैं, जिसके सदस्य लगभग पाँच होते हैं और जिन्हें जनता चुनती है। इनमें से एक आयोग का सभापति अथवा मेयर होता है। सम्पूर्ण आयोग नीति निर्धारण करता है और आयोग का प्रत्येक सदस्य एक प्रशासनिक विभाग का अध्यक्ष होता है, अर्थात् नगर का सम्पूर्ण प्रशासन उतने ही विभागों में बाँट दिया जाता है, जितने सदस्य नगर के आयोग में होते हैं और आयोग का प्रत्येक

सदस्य एक विभाग का काय भार अपने पास रखता है। इस पद्धति के दो मुख्य लाभ हैं—प्रथम, इसम शक्तियो और उत्तरदायित्वो का विभाजन नही होता, एव द्वितीय, पाच या सात व्यक्ति सामजस्य के साथ काय कर सकते हैं यह बात 50 60 या अधिक व्यक्तियो के लिए लागू नही हो सकती। लेकिन साथ ही इस पद्धति के दोप भी हैं। पहला दोप यह है कि आयोग क सदस्यो की सख्या इतनी कम है कि उसम जनता का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नही हो सकता। दूसरा दोप यह है कि इसमे सभी सदस्यों की शक्तिया समान होती है और कोई भी सदस्य अर्थात कमिश्नर दूसरो से बडा नही होता जो सब क कार्यों म समन्वय रख सके। वस्तुत इस पद्धति का सबसे बडा दोप यह है कि यदि आयोग के सदस्यो के बीच किसी प्रश्न पर गतिरोध पैदा हो जाए तो उसे कोई नही सुलझा सकता।

नगर प्रशासन का यह रूप अत्य त बडे नगरो म लोकप्रिय नही है और ऐसे किसी भी नगर मे प्राय इस पद्धति को नही अपनाया गया है जिसकी जनसख्या 50 हजार से अधिक है। हा, 25 हजार के आसपास की आबादी वाले छोटे नगरो में यह पद्धति अवश्य लोकप्रिय है।

3 **कौंसिल मनेजर फाम (Council Manager Form)**—सन 1908 में इस प्रकार की एक सस्था थी, परन्तु अब यह व्यापक रूप स नगरो मे प्रचलित है। इस पद्धति मे नीति निर्धारण का कार्य तो कौंसिल करती है तथा प्रशासन का उत्तरदायित्व एक विशेष योग्यता प्राप्त कुशल अधिकारी मनेजर पर होता है। मैनेजर साधारणत कौंसिल द्वारा नियुक्त किया जाता है। नियुक्ति के बाद दैनिक प्रशासन के लिए वह लगभग पूणत उत्तरदायी होता है। कौंसिल मनेजर फार्म वस्तुत कमीशन फाम का ही सशोधित रूप है और इसका मुख्य लाभ कुशल प्रशासन है। अमेरिका म प्रचलित उपयुक्त सभी नगर प्रशासन प्रणालियो म कौंसिल मैनेजर फाम सबसे अधिक सफल प्रणाली मानी जाती है। इसकी सफलता का मुख्य कारण यही है कि इस प्रणाली म नीति निर्माण एव प्रशासन को अलग कर देने से प्रशासन मे विशेष कुशलता आ जाती है।

स्थानीय शासन का काय क्षेत्र

अमेरिका म स्थानीय शासन के अन्तर्गत सामान्यत पुलिस, अग्निरक्षा, स्वास्थ्य एव सफाई, सावजनिक माग शिक्षणालयो का सचालन, सावजनिक उपयोगिता के काम, चुनाव कराना आदि विभिन्न काय आते हैं। स्थानीय शासन ग्रामीण क्षेत्रो मे कम विकसित है तथा नगरीय क्षेत्रो म अधिक विकसित है। लेकिन दोनो का काय-क्षेत्र लगभग एक सा है। स्थानीय प्रशासन के अनेक कार्यों म राज्य सरकारें भी प्राय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भाग लेती हैं। वस्तुत स्थानीय शासन अमेरिकन शासन व्यवस्था का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अग है जो राज्य की विभिन्न जातियों व वर्गों की सुख शांति के लिये आवश्यक है।

स्थानीय शासन की अथव्यवस्था आय के साधन

वतमान काल म स्थानीय प्रशासन का व्यय अत्यधिक बढ गया है। यह

अनुमान लगाया गया है कि केवल विगत 50 60 वर्षों में ही स्थानीय प्रशासन का व्यय 1200 गुना अधिक हो गया है। व्यय की इस वृद्धि का सबसे प्रमुख कारण जनसंख्या में वृद्धि है। दूसरा मुख्य कारण स्थानीय सेवाओं की व्यापकता और उसके स्तर का बढ़ जाना है। आज पूर्वापेक्षा इन बातों की अधिक माग है कि स्कूलों की संख्या अधिक हो, सडकें पक्की हों और पुलिस एव अग्नि सुरक्षा आदि से सम्बन्धित सेवाए अधिक कुशल हों।

इस बढते हुए व्यय की पूर्ति करना एक विकट समस्या है, क्योंकि जनता एक तरफ तो अधिकाधिक सेवाए और सुविधाए प्राप्त करना चाहती है और दूसरी तरफ कम से कम कर वहन करना चाहती है। दोनों मांगों के बीच सामजस्य स्थापित करने की समस्या सदैव उपस्थित रहती है। स्थानीय शासन का प्रयास यही रहता है कि सेवाओं का स्तर भी ऊचा हो और जनता पर कर भार भी इतना अधिक न बढ़े कि वह उसे सहन न कर सके

जनसंख्या निरतर ग्रामों से नगरों की ओर बढती जा रही है, अत स्थानीय शासन के नगर निकायों के कार्य, उत्तरदायित्व और व्यय बहुत बढ़ गये है। नगर निकायों के आय के प्रमुख साधन इस प्रकार हैं—ये विभिन्न प्रकार के कर अथवा रेट लगाते है और इन्हें राज्य तथा सघ सरकार से विभिन्न योजनाओं के लिये आर्थिक सहायता भी मिलती है। कर लगाने में नगर निकायों को राज्य के कानूनों के अनुसार ही चलना पडता है। सामान्यत राज्य सरकार इस सम्बन्ध में कुछ प्रतिशत निश्चित कर देती है और उसके भीतर ही नगर निकाय कर लगा सकते है। करों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण सम्पत्ति कर है। भूमि, मकान, मशीन, पशु, व्यक्तिगत सामान आदि सभी प्रकार की सम्पत्ति पर यह कर लगाया जा सकता है। घर का सामान, धार्मिक संस्थाओं की सम्पत्ति आदि पर निकायों का कर नहीं लगता है। सम्पत्ति कर के अतिरिक्त नगर निकायों की आय का प्रमुख स्रोत आय कर भी है। निर्वाचन कर, व्यापार कर, आमोद प्रमोद कर, आदि विभिन्न करों के द्वारा भी नगर निकायों को आय होती है। नगर निकायों की आय का एक साधन जुर्माने व फीस है। विभिन्न व्यवसायों के लिये लाइसेंस देने, सार्वजनिक उपयोगिता के कार्यों के सचालन आदि से भी स्थानीय शासनिक संस्थाओं को आय होती है।

अमेरिकन स्थानीय शासन के सम्बन्ध में अन्तिम उल्लेखनीय बात यह है कि ब्रिटेन के समान ही इस पर भी केन्द्रीयकरण की काली छाया अधिकाधिक घनी होती जा रही है। सघीय और राज्य सरकारें स्थानीय शासनिक इकाइयों को पर्याप्त मात्रा में आर्थिक सहायता देती हैं और बदले में उन पर पर्याप्त नियत्रण रखती हैं। सहायता प्राप्त करने वाली इकाइयों को सहायता की राशि का प्रयोग में लाने के लिये कुछ शर्तों का पालन करना आवश्यक होता है। राज्य सरकारें स्थानीय निकायों के सुधार के लिये और उनकी कार्य कुशलता को बढ़ाने के लिये उनके कार्यों पर आवश्यक देख रेख रखती हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

Chapter 1

1 *Summarise the circumstances leading to the origin of the constitution of the U S A*

संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान का निर्माण कैसे हुआ।

2 What are the distinctive features of the constitution of U S A ?

अमेरिका संविधान की विशेषताओं का वर्णन करें।

3 *Critically examine the fundamental rights embodied in* the constitution of the U S A

अमेरिकन संविधान में उल्लिखित मूल अधिकारों का वर्णन करें।

4 There are almost as many conventions in the constitution of the U S A as in that of Great Britain' Discuss

अमेरिका के संविधान में भी ब्रिटिश संविधान के सदृश अभिसमयों का स्थान है। व्याख्या करें।

Chapter 2

1 Describe the system by which powers have been divided between the Federal Government and State Government in the U S A

अमेरिका की राष्ट्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों के बीच शक्ति विभाजन की पद्धति का वर्णन करें।

2 Analyse the main features of the American federal system and show how far they have been modified by the principle of Checks and Balances ?

अमेरिकी संघात्मक व्यवस्था की विशेषताओं का वर्णन कीजिए। 'अवरोध एवं संतुलन' के सिद्धान्त का इस पर क्या प्रभाव है?

3 Examine *critically the working of the principle of* 'Separation of Powers and Checks and Balances' in the political frame work of the U S A

संयुक्त राज्य अमेरिका में 'शक्तियों के पृथक्करण' तथा अवरोध एवं संतुलन के कार्य-करण का वर्णन करें।

4 Discuss the Doctrine of Implied Powers In what manner it has increased the importance of the American Courts ?

निहित शक्तियों के सिद्धांत का वर्णन कीजिये। इसके द्वारा अमेरिकन न्यायालयों के महत्व में किस प्रकार वृद्धि हुई है?

Chapter 3

1 *Critically examine the composition, powers and functions of the American Senate*

अमेरिकी सीनेट के संगठन अधिकार तथा कार्यों की समीक्षा कीजिए।

2 'The American Senate is the most powerful second chamber *in the world* ' *Discuss.*

'अमरिकी सीनेट विश्व के द्वितीय सदनों में सर्वाधिक शक्तिशाली है।' इस कथन की विवेचना करें।

3 Dicuss the position and powers of the American 'Senate, clearly bringing out the factors which have given it primacy over the House of Representatives
अमेरिकी सीनेट के अधिकारों तथा स्थिति का वर्णन करें और उन कारणों का उल्लेख करें जिनसे प्रतिनिधि सदन से इसकी स्थिति सबल है।

4 Examine critically the relation between the two Houses of the Congress in the U S A
अमेरिकी कांग्रेस के दोनों सदनों के बीच के सम्बन्धों का वर्णन करें।

5 Discuss the composition and functions of the House of Representatives in the U S A
अमेरिकी प्रतिनिधि सभा के गठन तथा कार्यों का वर्णन करें।

6 How is the Speaker of the House of Representatives elected ? Describe his powers and functions
प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष का निर्वाचन किस प्रकार होता है ? उसके अधिकारों तथा कार्यों का वर्णन करें।

7 Compare and contrast the procedure of law making in England with that of United States of America
अमेरिकी तथा ब्रिटिश विधायी प्रक्रिया का तुलनात्मक वर्णन करें।

8 Critically examine the nature, working and importance of Committee System in the U S A
अमरिका मे समिति–पद्धति के स्वरूप, कार्यकरण तथा उनकी विशेषताओं का वर्णन कीजिये।

Chapter 4

1 Explain the process of Presidential election in the U S A How far it has become direct election in practice ?
अमेरिका मे राष्ट्रपति के निर्वाचन की प्रक्रिया का वर्णन करें। व्यवहार मे यह कहां तक प्रत्यक्ष निर्वाचन हो गया है ?

2 Summarise the powers and functions of the President of the U S A
संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति के अधिकारों तथा कृत्यों का वर्णन करें।

3 Discuss the constitutional and political relations between the president and the congress in the U S A
अमेरिका के राष्ट्रपति और कांग्रेस के बीच संवैधानिक एवं राजनीतिक सम्बन्धों का वर्णन करें।

4 'The U S A President combines in his person the office of King and Prime Minister Discuss
'संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति पद मे सम्राट और प्रधान मन्त्री के पद सग्रहित हैं।' इस कथन की विवेचना करें।

5 The American cabinet differs in fundamental respects from the British cabinet In the light of this statement

compare between the features of American cabinet and the British cabinet
'अमेरिकी मन्त्रिमण्डल और ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल मे मौलिक अन्तर है।' इस कथन के प्रकाश मे अमेरिकी तथा ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल की तुलना करें।

Chapter 5

1 Discuss the composition and powers of the Supreme Court of the U S A How far it is correct to say that it has established itself as the third Legislative Chamber of the Congress ?
अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय के सगठन तथा कार्यों का वर्णन करें। यह कहना कहाँ तक ठीक है कि यह काग्रेस का तृतीय सदन बन गया है ?

2 "The judiciary is the cement which has fixed from the federal structure" Comment
"न्यायपालिका वह सीमेंट है जिसने सघीय व्यवस्था को दृढ़ बनाये रखा है" व्याख्या करें।

3 What do you understand by Judicial Review ? How far does it exist in the U S A ?
न्यायिक पुनरावलोकन से आप क्या समझते हैं ? अमेरिका मे यह कहा तक उपलब्ध है ?

4 Describe the distinctive features of the Judicial system in the U S A
अमेरिका की न्याय व्यवस्थाओ की विशिष्टताओ का वर्णन करें।

Chapter 6

1 Discuss the role played by the Party system in the workings of American constitution
अमेरिकी सविधान मे राजनीतिक दलो के कार्यकरण का वर्णन करें।

2 Compare and contrast the organisation of political parties in the England and in U S A
अमेरिकी तथा ब्रिटिश राजनीतिक दलो की तुलना करें।

3 What are the salient features of the Party-system in U S A ?
सयुक्त राज्य अमेरिका मे दलीय-व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएं क्या हैं ?

Chapter 7

1 Describe the position and functions of State in the U S A
सयुक्त राज्य के राज्यो की स्थिति तथा कार्यों का वर्णन कीजिए।

2 Give an estimate of functions and powers of the Governor of States in the U S A
सयुक्त राज्य अमेरिका के राज्यो के राज्यपालो के कार्यों एव अधिकारो का विवरण दीजिए।

Chapter 8

1 What are the different forms of local government in U S A ?

संयुक्त राज्य अमेरिका में स्थानीय सरकार के क्या विभिन्न रूप हैं ?

2 Describe the main functions and sources of income of the local government in U S A.

संयुक्त राज्य अमेरिका में स्थानीय सरकार के मुख्य कार्यों और आय के प्रमुख साधनों का वर्णन कीजिये।

SELECT READINGS

1 Beard, C A : American Government and Politics
2 Brogan, D W The American Political System, 1948
3 Bryce, James The American Commonwealth, 1888
4 Bryce, James Modern Democracies
5 Burns and Peltason Government by the People
6 Clark, J P The Rise of a New Federalism, 1938
7 Johnson Government in the United States
8 Laski The American Democracy
9 Munro, W B : The Government of the United States, 1947
10 Ogg and Ray Introduction to American Government
11 Patterson : Presidential Government in the United States
12 Potter, Allen, M American Government and Politics
13 Pritchett C H : The American Constitution, 1959
14 Willoughby The Constitutional Law of the United States
15 Rogers : The American Senate
16 Alfrange The Supreme Court and the National Will
17 Haines, C G The American Doctrine of Judicial Supremacy
18 Hughes The Supreme Court of the United States
19 Holcombe The New Party Politics
20 Clark The Rise of New Federalism
21 Ogg and Ray : Essentials of American Government
22 Granes, W Brooks : American State Government
23 Hole Combe, Arthur, N : State Govt. in the United States
24 Mc Donald: American City Government Administration
25 Phillips J Cass Municipal Govt and Administration
26 Stone - City Manager Government in the United States
27 Swisher C B American Constitutional Development
28 Zink, Harold Govt and Politics in the United States
29 Greaves, W B Public Administration in Democratic Society
30 Swisher, C B The Constitutional Power in the United States
31 Bone, H A American Politics and Party System
32 Stannard, H : The Two Constitutions

स्विट्ज़रलैण्ड का संविधान

(THE SWISS CONSTITUTION)

"स्विट्जरलण्ड ही अधिनियम, उपक्रम और लोक-निर्णय का प्राचीन निवास स्थान है। स्विस केण्टनो मे बहुत बडे-काल से प्रत्यक्ष प्रजातन्त्रीय ये सस्थायें किसी-न-किसी रूप मे चालू रही हैं, और स्विटजरलड से ही प्रजातन्त्र के दोष मार्गो द्वारा चल कर, ये अन्य देशों मे पहुची हैं जिनमे सयुक्त राज्य भी है। प्रजातन्त्र से उत्पन्न सस्थाओ मे ये कदाचित अत्यन्त प्रसिद्ध हैं, क्योंकि ये किसी विधान-मण्डल के हस्तक्षेप बिना ही विधि-निर्माण का साधन है, दूसरे शब्दों मे लोगो द्वारा प्रत्यक्ष कार्य। आधुनिक प्रजातन्त्र के विद्यार्थी के लिये स्विस राजनीतिक प्रणाली मे इससे अधिक शिक्षाप्रद और कोई बात नहीं है।"

—मुनरो

"भाषा तथा धर्म-सम्बन्धी स्पष्ट विविधता के होते हुए भी जिस कोटि की राष्ट्रीय एकता स्विट्जरलण्ड म पाई जाती है, उसने अन्तर्राष्ट्रीय मामलो के अनेक अध्ययन-कर्त्ताओं का ध्यान आकर्षित किया है। उन्हें उससे यह प्रमाणित होने की आशा दिखाई देती है कि उन राष्ट्रों मे भी उच्चकोटि का सहयोग सभव है, जिनमे सस्कृति सम्बन्धी व्यापक भिन्नता पाई जाती हो तथा जिनमे स्वतन्त्रता की शक्तिशाली परम्परा चली आई हो।'

—जॉन ब्राउन मेसन

1

स्विस संविधान का विकास व स्वरूप
(GROWTH AND NATURE OF THE SWISS CONSTITUTION)

"स्विट्जरलण्ड राजनीति के साहसी कार्यों की प्रयोगशाला है तथा उसकी सफलता से समस्त लोकतन्त्रीय देशों को सुरक्षा मिलती है।'

—ब्रूक्स

यूरोपियन महाद्वीप के मध्य स्थित लगभग 15,944 वर्गमील का छोटा सा देश स्विट्जरलण्ड आधुनिक विश्व का सबसे अधिक लोकतन्त्रीय राज्य समझा जाता है। प्राकृतिक दृष्टि से रमणीक यह एक पर्वतीय देश है जिसके उत्तर में जर्मनी, पूर्व में आस्ट्रेलिया, दक्षिण में इटली और पश्चिम में फ्रांस है। इस देश की कोई ऐसी प्राकृतिक सीमा नहीं है जो इस पड़ोसी राष्ट्रों से स्पष्ट रूप में पृथक कर सके। राजनीति शास्त्र के छात्रों के लिए स्विट्जरलण्ड एक ऐसा देश है जिसके संविधान का और राजनीतिक स्वरूप का अपना विशेष महत्व है। यदि इंगलण्ड संसदीय पद्धति की संस्थाओं का जन्मदाता है और अमेरिका संघात्मक व्यवस्था का आदर्श है तो *स्विट्जरलण्ड को प्रत्यक्ष लोकतन्त्र (Direct Democracy)* के प्रयोगों की राजनीतिक प्रयोगशाला होने का गौरव प्राप्त है।

स्विट्जरलैण्ड का सांविधानिक महत्त्व
(Constitutional Importance of Switzerland)

स्विट्जरलण्ड का विशिष्ट सांविधानिक महत्त्व इस बात में है कि यह प्रत्यक्ष लोकतन्त्र का गढ़ है, जहां जनता की सम्प्रभुता को व्यावहारिक और वास्तविक रूप देने का महान् कार्य किया गया है। विश्व के अन्य देशों की अपेक्षा इस देश में प्रत्यक्ष लोकतन्त्र की संस्थाएं अधिक विकसित और विस्तृत हुई हैं और

आज तक व्यवहार में लाई जा रही हैं। यह भी कम महत्त्वपूर्ण बात नहीं है कि संघात्मक शासन की संकुचित सीमाओं के अन्दर लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं पर आधारित विभिन्न प्रकार की संस्थायें इस देश में पनप रही हैं।

सुविधा की दृष्टि से स्विटजरलैंड के सांविधानिक महत्त्व को हम निम्नांकित उपशीर्षकों में विभाजित कर सकते हैं—

गणतन्त्रीय परम्परा

स्विटजरलैण्ड सब पश्चिमी जगत का सबसे प्राचीन गणतन्त्रीय लोकतन्त्र है जिसमें संयुक्त राज्य अमेरिका के गणतन्त्रीय संविधान के उदय के भी लगभग 500 वर्ष पूर्व से गणतन्त्र का प्रयोग होता चला आ रहा है। स्विस नागरिकों में गणतन्त्रवाद इतना प्रबल है कि वहां राजा की ही नहीं वरन किसी शासक की भी निरंकुश शक्ति को सहन नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि स्विस कार्यपालिका शक्ति किसी एक व्यक्ति में निहित नहीं है। स्विस कार्यपालिका को बहुल (Plural) रखा गया है जिसमें कार्यसत्ता सभी सदस्यों के हाथ में दी गई है। सब सदस्य इतने अधिक समान-पदीय हैं कि कार्यपालिका की अध्यक्षता बारी बारी से करते हैं और अध्यक्ष का दर्जा भी अन्य सदस्यों के बराबर ही होता है। उसे विशेष अधिकार प्राप्त नहीं हैं।

प्रत्यक्ष लोकतन्त्र का गढ़

स्विट्जरलैंड की ख्याति उसके प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के प्रयोग के कारण है। आरम्भक (Initiative) और जनमत संग्रह (Referendum) वहां के राजनैतिक जीवन के जागृत तत्त्व हैं। इनसे जनता को शासन में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेने का अवसर मिलता है। इनके अतिरिक्त प्रारम्भिक सभाएं (Primary Assemblies) भी जनता को प्रशासनिक नीति के निर्माण में भाग लेने का अवसर देती हैं। स्विटजरलैण्ड को सच्चे अर्थों में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के लिए विश्व की राजनीतिक प्रयोगशाला कहा जा सकता है।

विविधता में एकता

स्विटजरलैंड की सांविधानिक महत्ता का तीसरा कारण यह है कि इस देश में यद्यपि विभिन्न भाषा-भाषी और धर्मावलम्बी पाए जाते हैं तथापि उनमें एक राष्ट्रीय एकता विद्यमान है। स्विस गणतन्त्र राष्ट्र की एकता और सुदृढ़ता का अपूर्व आदर्श है। देश के 19 पूरे कैंटनों और 6 अर्द्ध-कैंटनों में कई प्रजातियां रहती हैं जो विभिन्न भाषाओं और धर्मों की अनुगामिनी हैं। देश की लगभग तीन चौथाई जनसंख्या जर्मन भाषा भाषी है, लगभग पांचवां भाग फ्रेंच भाषा भाषी है और शेष इटालियन भाषा बोलते हैं। लगभग 1 प्रतिशत लोग रोमांश (Romanch) नामक आदि-भाषा बोलने वाले हैं। धार्मिक भिन्नता की दृष्टि से लगभग 58 प्रतिशत लोग प्रोटेस्टेंट, 41 प्रतिशत रोमन कैथोलिक और 1 प्रतिशत यहूदी हैं। इन विभिन्नताओं के अतिरिक्त सामाजिक और आर्थिक विभिन्नताएं भी

हैं। किन्तु इन सब विविधताओ मे एकता का अद्भुत अस्तित्व स्विटजरलैण्ड में देखने को मिलता है।

स्विटजरलैण्ड की इन विविधता म एकता के निश्चय ही कुछ कारण है। प्रथम, स्विटजरलैण्ड म धार्मिक और भाषायी क्षेत्रो की सीमायें एक न होकर भिन्न-भिन्न हैं। एक धर्म के अनुयायियो की अनेक भाषायें हैं और एक भाषा-भाषी अनेक धर्मों को मानने वाले हैं। द्वितीय कण्टनो की सीमायें भी धर्म और भाषा के क्षेत्रो की सीमाओ म भिन्न है। एक ही कण्टन क अन्तर्गत विभिन्न धर्मावलम्बी और भाषा-भाषी पाये जाते हैं तथा एक ही धर्म और भाषा के लोग कई कण्टनो मे रहते हैं। तृतीय, स्विस सविधान भी धर्म भाषा और सस्कृति के आधार पर नागरिको मे कोई भेदभाव नही करता। सविधान ने देश की सभी भाषाओ को राजभाषायें स्वीकार किया है। कुल मिलाकर इन सभी कारणो का यह परिणाम है कि स्विटजरलैण्ड म विरोधाभासो के बीच भी एकात्मकता दिखाई देती है। विभिन्नताओ के मध्य भी स्विस जनता की नस-नस म राष्ट्रीय चेतना का सचार है।

स्थाई तटस्थता

स्विटजरलैण्ड की सावैधानिक महत्ता का अन्तिम प्रमुख कारण उसकी विलक्षण स्थाई तटस्थता है। प्रबल और शक्तिशाली राज्यो--जर्मनी, इटली, फ्रास आदि से घिरा होने पर भी वह अपनी तटस्थता और स्वतन्त्रता की सुरक्षा करता चला आ रहा है। राष्ट्रो की भाग्य-निर्णायक सधियो ने भी स्विट्जरलैण्ड की तटस्थता को स्वीकार किया है। राष्ट्रसघ और बाद म अब सयुक्त राष्ट्रसघ म भी स्विट्जरलैण्ड इसी शर्त पर सम्मिलित हुआ कि उसकी तटस्थता को मान्यता मिलती रहेगी। और तो और हिटलर तथा मुसोलिनी न भी स्विट्जरलैण्ड की तटस्थता को भग नही किया। तटस्थता की नीति के कारण ही चोटी के अधिकाश अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन स्विट्जरलैण्ड म ही होते है।

उल्लेखनीय है कि स्विट्जरलैण्ड की तटस्थता 'एकाकीपन' नहीं है। यह देश विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय सस्थाओ का सक्रिय सदस्य है। पर उसका प्रत्येक कार्य राजनीतिक निष्पक्षता और तटस्थता धारण किये रहता है। आज के गुटबन्दी-पूर्ण जगत म उसका यह दृष्टिकोण बहुत ही सराहनीय है।

स्विस सविधान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

(The Historical Background of the Swiss Constitution)

स्विस सविधान का वर्तमान रूप, वस्तुत एक क्रमिक विकास का परिणाम है। इसके सविधान-इतिहास को प्राय 5 हिस्सो म बाटा जाता है—(1) प्राचीन सघ (1291 – 1798), (2) हैल्वेटिक प्रजातन्त्र (1798 – 1803), (3) नैपोलियन काल (1803–1815), (4) सघ-राज्य (1815–1848), एव (5) सन् 1848 से अब तक का वर्तमान सघ-शासन।

प्राचीन सघ अथवा सवग (1291 – 1798)

पहली अगस्त सन 1291 को अपनी आत्मरक्षा की दृष्टि से तथा आस्ट्रिया के प्रभुत्व को कम करने के लिए उरी, श्वेज तथा अण्टरवाल्डेन नामक तीन सम्प्रभु राज्यो ने एक 'स्थायी सघ (Perpetual League) की स्थापना की। यही भावी स्विस-सघ का बीजारोपण था। इस स्थायी सघ के लिए ही चौदहवी शताब्दी के मध्य 'स्विटजरलण्ड नाम का प्रयोग आरम्भ हुआ।

सघ बनने पर आस्ट्रिया के राजा ने राज्यो अथवा कैण्टनो (Cantons) पर आक्रमण किया, किन्तु युद्ध म कण्टनो की विजय हुई। सन् 1353 मे स्थायी मैत्री सघ आठ कैण्टनो का सघ (Confederation) बन गया। फ्रेंच-क्रान्ति (1789) के समय सघ मे 13 स्वतन्त्र राज्य थ जिनमे अनेक समझौतो द्वारा यह निश्चय हुआ था कि किसी एक राज्य पर हमला होने की सूरत मे सभी राज्य तुरन्त सहायता करेंगे। आपसी विवादो के हल के लिए पच-फैसले (Arbitration) की व्यवस्था थी।

पर यह सघ शासन-प्रणालियो म विभिन्नता, धार्मिक मत-मतान्तरो, केन्द्रीय सत्ता की कमी आदि के कारण बहुत ही निर्बल था। यह एक भौगोलिक सघ (Geographical Expression) मात्र था। सघ शासन का एक मात्र अग डाइट' (Diet) अप्रभावशील सस्था थी जिसके निर्णय सब कण्टनो पर लागू नही हो सकते थे।

हैल्वेटिक प्रजातन्त्र (1798 – 1803)

यद्यपि सभी कण्टनो म आय दिन सघर्ष होते रहते थ, तथापि सघ अपना राजनैतिक व्यक्तित्व किसी न किसी तरह बनाये रहा। बाह्य आक्रमणो से रक्षा के लिए उनका सघ-रूप म एक बने रहना आवश्यक था। किन्तु 1789 की फ्रेन्च क्रान्ति के बाद नैपोलियन ने आक्रमण करके स्विटजरलैण्ड पर अधिकार कर लिया। नैपोलियन ने फ्रासीसी नमूने पर हैल्वेटिक गणतन्त्र (Helvetice Republic) की स्थापना की। स्विट्जरलण्ड मे एकात्मक सविधान की स्थापना की गई। गणतन्त्र म सब कण्टन केन्द्रीय सरकार के प्रशासनिक क्षेत्र बना दिये गये। सारे देश के शासन के लिए सीनेट (Senate) तथा ग्राण्ड कौंसिल (Grand Council) नाम के दो सदनो का विधान-मण्डल बनाया गया। कार्यपालिका शक्ति पाँच व्यक्तियो की एक ऐसी सचालक समिति (Directory) म निहित की गयी जिसका निर्वाचन विधान-मण्डल के दोनो सदनो द्वारा किया जाना था।

यह नवीन प्रशासन चल नही सका। एक तो स्विस जनता ऐसे केन्द्रीयकृत प्रशासन की अभ्यस्त नही थी और दूसरे फ्रेंच-सत्ता का आचरण स्विस जनता को बर्दाश्त नही हो सका। फलस्वरूप कैण्टनो म विद्रोह खडा हो गया। साथ ही जब फ्रास और आस्ट्रिया म युद्ध छिडा तो स्विट्जरलण्ड इस सघर्ष म युद्ध-भूमि बन गया।

नेपोलियन युग (1803 – 1815)

स्विस लोगो के विद्रोह से वाध्य होकर 1803 मे नपोलियन को कैण्टनो की स्वतन्त्रता फिर से स्वीकार करनी पडी। 1803 के मध्यस्थता अधिनियम (The Act of Mediation 1809) द्वारा स्विट्जरलण्ड मे पुन एक सघात्मक राज्य की स्थापना की गई। केन्द्र म एक सभा (Diet) की स्थापना हुई। 6 नय कैण्टन स्थापित किय गये। इस प्रकार कुल कण्टनो की सख्या 19 हो गई। लगभग 10 वष तक देश म शान्ति रही किन्तु नपोलियन के पराभव के बाद कण्टनो के आपसी सघर्ष शुरू हो गय। सविधान का पूरा निरादर होने लगा।

सन् 1815–1848 का सशोधन

उपयु क्त स्थिति अधिक समय तक नही चल सकी। यूरोप के मित्र राष्ट्रो (Allied Powers) न 1814 म स्विस डाइट (Diet) को एक नया सविधान बनाने के लिए विवश किया। यह नव निर्मित सविधान 1815 के पेरिस समझौते (Pact of Paris) क रूप म वियना काग्रेस (Congress of Vienna) द्वारा स्वीकार कर लिया गया। इसके द्वारा केण्टनो का शासन के उस रूप म बनाये रखने की अनुमति दे दी गई, जो उनम पुराने सविधान म प्रचलित थी। वियना काग्रेस ने जहा एक ओर स्विटजरलण्ड की आन्तरिक राजनीतिक व्यवस्था निर्धारित की, वहा स्थाई रूप से इसको तटस्थ करके सदव के लिए इसकी वदेशिक नीति भी निर्धारित कर दी गई। यह वस्तुत इस काग्रेस का सवसे महत्त्वपूण और स्थाई काय था। पेरिस समझौते न स्विस सघ म तीन अन्य सदस्यो की भी वृद्धि की–वलाइस (Valais), न्यूचटेल (New Chatel) तथा जनेवा (Geneva)। य केण्टन अभी तक फ्रास क अधीन थ। इनके स्विस सघ म मिल जान स स्विस राज्य-सघ की सदस्य सख्या 22 हो गई। इन 22 केण्टनो म तीन कण्टनो म स प्रत्येक कण्टन से दो अद्ध–कण्टन बनाय गय, अत इस प्रकार स्विटजरलैण्ड म केण्टनो की कुल सख्या 25 हो गई अथात 19 पूण केण्टन और 6 अर्द्ध–केण्टन।

सन 1815 के पेरिस समझौते द्वारा अनुमर्थित सविधान के अन्तगत सब कण्टनो को समान राजनीतिक–स्तर का मान लिया गया और स्थानीय मामलो म उन्ह पूरी स्वाधीनता दे दी गई। इस व्यवस्था के फलस्वरूप सन् 1815 से 1830 तक देश म शान्ति और समद्धि रही, परन्तु उदारवादी भावना और लोकतन्त्र को प्रगति को अवश्य धक्का पहुचा। लेकिन जुलाई, 1830 म फ्रास म पुन क्रान्ति होते ही स्विटजरलण्ड म भी उदारवादी क्रान्ति का बिगुल बज गया। इसके फलस्वरूप देश म प्रजातन्त्र के सिद्धान्तो के आधार पर एक आदोलन का प्रारम्भ हुआ जिसका उद्देश्य यही था कि कण्टनो क सविधान म परिवतन किया जाए। राज्य परिषद् या डाइट (Diet) ने सघीय समझौता तैयार करने के लिए एक समिति नियुक्त की। किन्तु कण्टन म विद्यमान धार्मिक मतभेदो के कारण यह समिति काय नही कर सकी। सन 1845 मे कैथोलिक बहुमत वाल केण्टनो न अपना अलग सघ

बना लिया। संघ की स्थापना से गृह युद्ध प्रारम्भ हुआ, किन्तु इसे एक मास के अन्दर ही समाप्त कर दिया गया और कैथोलिक लोगों की रूढ़िवादिता को जड़ से मिटा सा दिया गया।

कैथोलिक केन्टनों की पराजय से राष्ट्रीय एकता के आन्दोलन की विजय हुई। डाइट (Diet) ने एक नया संविधान बनाया जिसे लोगों ने जनमत संग्रह द्वारा स्वीकार किया। इससे वह संविधान अस्तित्व में आया, जिसे सन् 1848 का संविधान कहा जाता है और जो समय समय पर विशेषकर 1874 में हुए महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों के साथ आज भी प्रभावी है।

स्विस संविधान की प्रमुख विशेषताएं
(Salient Features of the Swiss Constitution)

सन् 1848 के मूल संविधान का 1874 में पूर्णतया संशोधित किया गया रूप ही स्विटजरलैण्ड की वर्तमान शासन प्रणाली का आधार है। इस संविधान द्वारा जिस शासन प्रणाली की रचना हुई है, वह अन्यत्र देखने को नहीं मिलती। यह न तो विशुद्ध संसदात्मक है और न विशुद्ध अध्यक्षात्मक ही बल्कि इसमें दोनों का संयोग है। स्विस संघीय व्यवस्था भारत और अमेरिका की संघीय व्यवस्थाओं के बीच का रास्ता अपनाती है। स्विस संविधान जिन प्रमुख विशेषताओं के कारण अनुपम और पठनीय है, वे निम्न हैं—

निर्मित एवं लिखित संविधान

स्विटजरलैण्ड का संविधान अपने मूल रूप में निर्मित और लिखित है जिसे एक आयोग ने काफी सोच विचार के बाद तैयार किया था और जो संघ की डाइट द्वारा स्वीकृत किया जाकर 12 सितम्बर, 1848 से देश में लागू किया गया था। बाद में सन् 1874 तक संविधान में पुनः व्यापक परिवर्तन लाए गए और यही संशोधित तथा परिवर्धित संविधान आज विद्यमान है।

स्विटजरलैण्ड का संविधान अमेरिकन संविधान की अपेक्षा 50 प्रतिशत अधिक लम्बा है। इसमें अनेक ऐसी बातें हैं जो सांविधानिक प्रकृति की नहीं हैं। उदाहरणार्थ संविधान में मछली मारने, शिकार खेलने, जुआ खेलने आदि के बारे में भी उल्लेख है। स्विस संविधान इसलिए भी लम्बा है कि उसमें संघ और केन्टनों का अधिकार क्षेत्र विस्तार से बतलाया गया है। जहां अमेरिका में निहित शक्तियों के सिद्धान्त को महत्ता दी गई है वहां स्विटजरलैण्ड के संविधान में स्पष्टतया वर्णित शक्तियों को अधिक महत्त्व दिया गया है और इसीलिए संघ तथा केन्टनों में सामान्यतः कोई विरोध नहीं होता पाया गया है।

लिखित संविधान के साथ ही कुछ परम्पराओं अथवा अभिसमयों का विकास भी स्विस संविधान में हुआ है। उदाहरणार्थ संविधान द्वारा विदेशियों का नागरीकरण (Naturalization) संघीय सरकार का अधिकार है, किन्तु कोई भी केन्टन किसी भी व्यक्ति को अपने पृथक नियमों के अनुसार, यदि अपनी

नागरिकता प्रदान करता है तो सघ विकसित अभिसमय के कारण, उसे सघीय नागरिक मान लेता है।

कठोर सविधान

इस देश का सविधान कठोर है, जिसमे सशोधन करने की रीति साधारण विधि निर्माण की नीति से भिन्न है। फिर भी यह सविधान इतना कठोर नहीं है जितना कि अमेरिका का। स्विस सविधान की कठोरता ही यहा की सघात्मकता की रक्षा किए हुए है, पर सविधान मे परिस्थितियो के अनुरूप ढलने की क्षमता भी है।

स्विटजरलण्ड म सशोधन करने वाली और विधि निर्माण करने वाली सस्थायें भी अलग अलग है, उनके ढाचे और काय भी अलग अलग है। सशोधन के लिए व्यवस्थापिका के दोनो सदन प्रस्ताव करें और फिर उस पर लोक निणय (Referendum) तथा बहुमत म कैण्टनो द्वारा वह पारित हो जाए, तब सविधान मे सशोधन हो सकता है, अथवा 50 हजार से अधिक मतदाता हस्ताक्षर सहित याचिका दें और फिर उस पर लोक निणय लिया जाए तो सविधान मे सशोधन हो सकता है। सविधान की इस सशोधन प्रक्रिया को स्पष्टता से निम्नानुसार समझा जा सकता है—

सशोधन प्रक्रिया—स्विस सविधान मे दो प्रकार के सशोधन का आयोजन है—

(अ) पूण सशोधन (Complete amendment)

(ब) आशिक सशोधन (Partly amendment)

(अ) पूण सशोधन–(1) सविधान म पूण सशोधन करने का प्रस्ताव सघीय व्यवस्थापिका के एक सदन अथवा दोनो सदनो की ओर से आ सकता है। यदि दोनो सदन उस पर सहमत हो तो उस पर लोक-निणय लेना आवश्यक है, जिसम सम्पूण नागरिको के बहुमत तथा समस्त कैण्टनो की बहुसख्या का समथन होना चाहिए। उसके पश्चात ही वह सशोधन स्वीकृत हो सकता है। इस रीति को हम अनिवाय लोक-निणय (Obligatory Referendum) कहते हैं।

(ii) यदि दोनो म से एक सदन सशोधन से सहमत न हो अथवा पचास हजार स्विस नागरिक उसकी माग या प्रस्ताव रखें तो उस प्रश्न को लोक-निणय के हेतु उपस्थित कर दिया जाता है तो उसका पुनर्निरीक्षण करने के लिए दोनो सदनो का पुन निर्वाचन किया जाता है। निर्वाचन के पश्चात नव-निर्वाचित विधान-मण्डल उसका पुनर्निरीक्षण करता है। यदि दोनो सदन सहमत हो तो यह प्रस्ताव नागरिको के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया जाता परन्तु उसके सशोधित प्रारूप को जनता की स्वीकृति के लिए रखना आवश्यक है।

(ब) आशिक सशोधन—इस प्रकार के सशोधन भी उपयुक्त दोनो रीतियो से उपस्थित किये जा सकते हैं। केवल इसम अन्तर यह है कि यदि दूसरी

के अनुसार आशिक सशोधन का प्रस्ताव 50,000 नागरिको के द्वारा उपस्थित होता है तो वे उस अनिमित उपक्रम (Unformulated Initiative) प्रस्तुत कर सकते हैं। उस पर विधान मडल यदि अपनी स्वीकृति दे देती है तो वह स्वय विधेयक का प्रारूप तैयार करके लोक-निर्णय के लिए भेज देती है, परन्तु यदि उसे वह अस्वीकार करे तो भी उस प्रश्न को जनता के समक्ष उपस्थित करना पडता है। यदि जनता इस सिद्धान्त को स्वीकृत कर लेती है तो उसे विधेयक तयार करके लोक-निर्णय को भेजना पडता है।

यदि वह सशोधन का भाग विधेयक के रूप मे हो तो उसे ससद को शीघ्र ही जनमत सग्रह के लिए भेजना पडता है परन्तु इसके साथ वह अपना भी विधेयक प्रस्तुत करती है। दोनो ही लोक-निर्णय के लिए रखे जा सकते है। परन्तु इनमे भी आवश्यक है कि सब सशोधन आवकाश कैण्टनो मे अधिकाश मतदाताओ द्वारा स्वीकृत हो। कैण्टनो का बहुमत जानने के लिए पूर्ण कैण्टन का एक मत तथा अद्ध-कैण्टन का आधा मत गिना जाता है। अत स्वीकृति के लिए 11½ कैण्टनो की सहमति आवश्यक है।

अतएव हम इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि सविधान के अनुसार जनता और सघीय व्यवस्थापिका दोनो ही सशोधन का प्रस्ताव रख सकते हैं तथा उसकी अन्तिम स्वीकृति नागरिको पर ही निर्भर है।

निराला सघात्मक स्वरूप

स्विस सविधान का सघात्मक स्वरूप कुछ विलक्षण ही है—

प्रथम स्विटजरलण्ड बाइस कैण्टनो (अथवा 16 पूर्ण तथा 6 अद्ध-कण्टनो) का शाश्वत सघ है। उसके कण्टनो को कभी समाप्त नही किया जा सकता। इसी प्रकार स्वय सघ भी समाप्त नही हो सकता।

दूसरे, अमेरिका की भाति नयी इकाइयो को सघ मे सम्मिलित करने की भी कोई व्यवस्था सविधान मे नही है।

तीसरे, अमेरिकन सविधान जहा सघवाद की सम्प्रभुता पर स्थिर है वहा स्विस सविधान मे कण्टनो की सम्प्रभुता को महत्त्व दिया गया है।

चौथे, स्विस सघीय व्यवस्था मे सविधान की सर्वोच्चता है केन्द्र और कण्टनो के मध्य शक्ति वितरण की व्यवस्था भी है, किन्तु न्यायपालिका को, विधियो को अवध घोषित करने, सविधान की व्याख्या करने अथवा न्यायिक पुनरावलोकन का कोई अधिकार नही है। न्यायाधीशो का निर्वाचन एक नियत अवधि के लिए व्यवस्थापिका द्वारा किया जाता है। न्यायपालिका को साविधानिक विवादो को तय करने का भी कोई अधिकार नहीं दिया गया है।

पाचवे, स्विस सविधान सास्कृतिक सघ की भी स्थापना करता है। उसमे विविध भाषाओ धर्मों और सस्कृतियो के रूप मे एक राष्ट्र के रूप बध गये हैं। सविधान

मे चारो भाषाओ को राज–भाषा का स्तर दिया गया है और सभी को अपने धर्म-पालन की पूरी छूट है। राज्य का रूप भी धर्म निरपेक्ष रखा गया है।

अन्त मे, स्विट्जरलण्ड मे दोहरी नागरिकता प्रचलित है। प्रत्येक नागरिक अपने कण्टन का तथा सघ अथवा राज्य मण्डल का नागरिक है। सविधान लिखित है जिसमे प्रशासन के विभिन्न शाखाओ के कार्यों का निदेश है। विधान मण्डल द्वि–सदनीय है तथा उच्च सदनो मे सब इकाइयो का समान अनुपात मे प्रतिनिधित्व है। सविधान सघीय व्यवस्था के अनुरूप कठोर है।

गणतन्त्रवादी स्वरूप

स्विस सविधान का स्वरूप गणराज्य का है। जनता मे ही प्रभुसत्ता निहित है। राज्य का प्रधान प्रत्यक्ष चुनाव के आधार पर अपना पद प्राप्त करता है। सविधान के छठे अनुच्छेद मे कण्टनो को गणतन्त्रीय स्वरूप देने और अपनी सस्थाओ को गणतन्त्रीय ढग पर निर्मित करने का उल्लेख है। कुलीनतन्त्रीय और ऐसी ही अन्य प्रवृत्तियो को रोकने का समुचित प्रबन्ध किया गया है।

अनुपम लोकतन्त्र

स्विटजरलण्ड लोकतन्त्र का श्रेष्ठतम उदाहरण है। यहा प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्तो का सर्वाधिक सफल प्रयोग हुआ है। शासन के प्रत्यक कार्य मे जनता प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अवश्य भाग लेती है। जनता की इच्छा का निर्माण नीचे से ऊपर की ओर हुआ है। कण्टनो से अधिक महत्त्व कम्यूनो का है और सघ से अधिक महत्त्व कण्टनो का है। सविधान मे जनता द्वारा सशोधन किया जाता है। आरम्भक, लोक निर्णय आदि द्वारा सर्व साधारण की इच्छा का सर्वोपरि महत्व दिया गया है। स्विस सविधानो मे अन्य सविधानो की अपेक्षा, स्वतन्त्रता और समानता पर विशेष बल दिया गया है। यहा तक कि कार्यपालिका के सभी मन्त्री भी परस्पर स्वतन्त्र और समान है।

स्विस लोकतन्त्र और भी अनेक दृष्टियो से निराला है। स्विटजरलैण्ड मे वयस्क मताधिकार का प्रयोग मतदाताओ की मर्जी पर ही नही छोड दिया गया है, अपितु कुछ कण्टनो मे उसे अनिवार्य बना दिया गया है और यदि कोई मतदाता अपने मत का प्रयोग नही करता तो उसे जुर्माना देना होता है। फिर भी दुर्भाग्यवश स्त्रिया अभी तक मताधिकार से वचित हैं। स्विस लोग यह उपयुक्त नही समझते की स्त्रिया राजनीति मे भाग लें।

अनूठी कार्यपालिका

स्विस कार्यपालिका, जो सघीय परिषद् (Federal Council) कहलाती बडी अनूठी है। व्यवस्थापिका के दोनो सदनो द्वारा निर्वाचित सात सदस्यो से मिलकर यह बनी है। इस बहुल कार्यकारिणी (Plural Executive) के सभी सदस्यो की शक्तिया लगभग समान है। अध्यक्ष भी अन्य सदस्यो के बराबर के दर्जे का होता है। सभी सदस्य बारी बारी से अध्यक्ष बनते हैं। स्विस प ˙

इस दृष्टि से भी अनोखी है कि उसमे उत्तरदायित्व और स्थायित्व दानो ही के गुण हैं। एक ओर तो वह व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी है तथा दूसरी ओर व्यवस्थापिका द्वारा हटायी भी नही जा सकती। मन्त्रिगण वेतनभोगी असैनिक सेवको की तरह है जो व्यवस्थापिका के आज्ञानुसार काम करते रहते हैं।

अनूठी ससदीय व्यवस्था

स्विस ससदीय व्यवस्था अनेक दृष्टियो से अनुपम है। प्रथम, स्विस शासन व्यवस्था न पूरी तरह ससदीय ही है न पूरी तरह अध्यक्षात्मक ही। शासन का प्रमुख (President) राजा भी है और प्रधानमत्री भी, तथा नाम मात्र का शासन प्रमुख भी है और वास्तविक शासन प्रमुख भी। दूसरे, स्विस कार्यपालिका ससद म से ली जाती ह, ससदीय कार्यवाही म भाग लेती है तथा ससद के प्रति उत्तरदायी भी होती है, किन्तु ससद के अविश्वास के फलस्वरूप उसे त्यागपत्र नही देना पडता। तीसरे, स्थायित्व की दृष्टि से स्विस शासन यद्यपि अध्यक्षात्मक है, किन्तु शक्तियो का पथक्करण नही पाया जाता। कार्यपालिका और व्यवस्थापिका दोनो एक दूसरे पर निर्भर हैं। चौथे मन्त्रिगण, ससदीय व्यवस्था की तरह, उत्तरदायित्व और पारस्परिक सहयोग की भावना म काम करते हैं किन्तु सामूहिक उत्तरदायित्व के नाम पर उन्ह अपनी आत्मा का बलिदान नही करना पडता। वे न केवल मन्त्रिमण्डल वरन् ससद की बैठक म भी अपना स्वतत्र मत व्यक्त कर सकते हैं। पाचवें, स्विस व्यवस्थापिका द्वि-सदनीय है और दोनो सदनो के अधिकार । सी एफ स्ट्राग के शब्दो मे "ससार मे स्विस व्यवस्थापिका ही एक ऐसी व्यवस्थापिका है जिसके दोनो सदनो के काय म कोई महत्त्वपूर्ण भेद नही है।"

मूल अधिकार

भारतीय अथवा अमेरिकन सविधानो के विपरीत स्विस सविधान म किसी भी औपचारिक अधिकार पत्र का अभाव ह। फिर भी बीसियो अनुच्छेद सम्पूर्ण प्रलेख मे बिखरे पडे हैं जो नागरिको को अनेक महत्त्वपूर्ण अधिकार देते हैं।

अनुच्छेद चार के अनुसार सब लोग कानून की दृष्टि म समान हैं। अनुच्छेद 27 यह व्यवस्था करता है कि कण्टनो के स्कूलो म भी धर्म निरपेक्षता के साथ प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त कर सकने की सबको सुविधा होगी। अनुच्छेद 44 म कहा गया है कि किसी भी स्विस नागरिक को सघ या अपने जन्म की कण्टना की सीमा के बाहर निर्वासित नही किया जायगा। अनुच्छेद 49 के अन्तगत सब को धर्म और पूजा की स्वतन्त्रता दी गयी है। अनुच्छेद 55 द्वारा प्रेस तथा प्रकाशन सम्बन्धी स्वतत्रता दी गयी है, बशर्ते कि इसका दुरुपयोग न किया जाए। अनुच्छेद 56 नागरिको को समुदाय बनाने की स्वतत्रता देता है। अनुच्छेद 60 द्वारा स्विस नागरिको को यह अधिकार दिया गया है कि किसी भी कण्टन म स्वतन्त्रतापूर्वक रह सकें और उनके साथ कोई भेदभाव नही होगा।

इन मूल अधिकारो के सदर्भ म यह तथ्य स्मरणीय है कि जहा भारत और

अमेरिका मे मूल अधिकारो की रक्षा का भार स्वतत्र न्यायपालिका को दिया गया है वहा स्विटजरलण्ड मे ऐसा नही । शासन सचालन पर जनता का इतना कठोर नियत्रण है कि ऐसी व्यवस्था आवश्यक समझी ही नही जाती। पर साथ ही यह बात भी है कि अन्य लोकतत्रीय देशो के समान ही स्विट्जरलैण्ड मे भी यह अधिकार अनियन्त्रित नही है। वहा भी समाज के सार्वजनिक हितो की दृष्टि से इनके प्रयोग पर अकुश लगाया जा सकता है।

निष्कर्ष रूप मे, स्विस सविधान बहुत ही मौलिक और अनूठा है तथा सम्पूर्ण सवैधानिक जगत के लिए विशेष आकर्षण का केन्द्र है।

स्विस सविधान का भविष्य (नया सविधान निर्माण के दौर मे)

स्विट्जरलैण्ड का वर्तमान सविधान सम्भवत निकट भविष्य मे ही पूर्णत परिवर्तित अथवा सशोधित हो जायगा। सन् 1965 मे सघीय व्यवस्थापिका मे यह प्रस्ताव पास हुआ था कि 1974 मे वर्तमान सशोधित सविधान को 100 वर्ष पूरे हो जायेंगे, अत नयी समस्याओ और विज्ञान अनुभवो के आधार पर यह उचित होगा कि एक नया आशिक अथवा पूर्णत सशोधित सविधान बनाया जाकर 1974 तक राष्ट्र के समक्ष प्रस्तुत हो जाए। इस प्रस्ताव पर स्विस जनता की बहुत ही अनुकूल प्रतिक्रिया हुई थी। वर्तमान मे सन् 1966 से ही यह कार्य एक सविधान आयोग के अधीन है। यह तो भविष्य ही बतलायगा कि 1974 तक आने वाले नये स्विस सविधान का यथार्थ स्वरूप क्या होगा ? तथापि यह अवश्य है कि अभी इस सम्बन्ध मे विकट समस्याओ और मतभेदो को पार करना है। नारी मताधिकार, सघीय कार्यपालिका का पुनर्गठन, कार्यपालिका और व्यवस्थापिका का सम्बन्ध, कैण्टनो एव केन्द्र का सम्बन्ध, आदि प्रश्न ऐसे है जिनका समुचित समाधान टेढी-खीर है।

2

स्विट्ज़रलैण्ड की संघीय व्यवस्था
(THE SWISS FEDERAL SYSTEM)

"स्विट्ज़रलैण्ड का संघ (Confederation) विद्यमान संघीय राज्यों में सबसे पुराना है। ऐसा नाम होते हुए भी अब यह संघ न रहकर जिसका अर्थ शक्तिशाली केन्द्रीय सत्ता से विहीन राज्यों का एक शिथिल संयोग है, वास्तविक रूप में एक संघ बन गया है।"

—सी. एफ. स्ट्रांग

स्विट्ज़रलैण्ड संघ (Federation) है या नहीं, इस प्रश्न पर काफी मतभेद है। संघ न मानने वालों का तर्क है कि सन् 1848 की जिस संधि से इसका निर्माण हुआ है वह कोई संविधान नहीं है और इसलिए इसको किसी संविधान पर आधारित संघ मानने की अपेक्षा एक संघ (Confederation) कहना चाहिए जिसका तात्पर्य राज्यों के ढीले-ढाले गठबन्धन से होता है। उनका यह तर्क भी है कि संविधान में भी स्विट्ज़रलैण्ड का संघ (Confederation) कहा गया है न कि संघ (Federation)।

आज मान्यता यही है कि स्विट्ज़रलैण्ड संघ न होकर संघ है। यह ढीला-ढाला गठबन्धन नहीं है वरन् उसमें केन्द्र को पर्याप्त शक्ति सम्पन्न बनाया गया है। संविधान में संघ शब्द का प्रयोग महज एक औपचारिकता है, अन्यथा प्रस्तावना में स्विस संघ की स्थापना का उद्देश्य यह है कि "अवयवी कैन्टनों के संघ को सुदृढ़ बनाया जाय तथा उसके द्वारा स्विस राष्ट्र की एकता, शक्ति और सम्मान की रक्षा एवं वृद्धि की जाय।" ब्रे और व्हीयर ने 'संघ' और 'संघ' को इस स्थल पर पर्यायवाची माना है। संविधान के अनुच्छेद दो के अन्तर्गत भी एक ठोस और एकतापूर्ण संघ बनाने का विचार प्रकट किया गया है। संगठन की दृष्टि से भी संविधान द्वारा एक संघीय ढाँचे की व्यवस्था की गयी है। उदाहरणार्थ दोहरे शासन की व्यवस्था है तथा केन्द्रीय और कैन्टनों की सरकारों के अधिकारों का स्पष्ट वर्णन

किया गया है। इसके अलावा कैण्टनों को संघ का निर्माण करने वाले समान भागीदारों के रूप में माना गया है। सबसे बड़ी बात यह है कि संघ को सदैव के लिए अटूट और स्थायी बनाया गया है। संवर्ग में इकाइयां इच्छानुसार अपने को अलग कर सकती हैं, लेकिन स्विस संघ में ऐसी व्यवस्था है कि उसकी कोई इकाई स्वेच्छा से संघ से पृथक नहीं हो सकती। इसीलिए स्विस संघ को शाश्वत कैंटनों का शाश्वत संघ (Indestructible Union of Indestructible Cantons) कहा गया है।

इस संघ में 19 पूरे कैन्टन और 6 आधे कैन्टन सम्मिलित हैं। दूसरे शब्दों में बाईस प्रभुसत्ताधारी कैन्टनों (जिनमें 3 कैन्टनों का विभाजन कर दिया गया है अर्थात्, 19 पूरे और 6 आधे कैंटनों) से मिलकर स्विस संघ का निर्माण हुआ है। प्रत्येक अर्द्ध-कैन्टन भी पूर्ण स्वतन्त्र हैं। वह किसी भी पूर्ण कैन्टन से केवल दो बातों में भिन्न हैं—प्रथमतः वह राज्य परिषद (Council of State) में केवल एक प्रतिनिधि भेजता है जबकि पूर्ण कैन्टन को दो प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है, एवं द्वितीयतः वह उन सब प्रश्नों पर जिनका सम्बन्ध संविधान में संशोधन करने से है केवल आधे मत का अधिकारी है।

स्विस संघ और उसमें संघात्मकता के तत्व

स्विटजरलैण्ड के संघीय व्यवस्था में उन सभी मुख्य तत्वों का समावेश है जो एक संघात्मक व्यवस्था के लिए आवश्यक है। निम्न विवेचन से यह भली प्रकार स्पष्ट हो सकेगा।

दोहरी शासन व्यवस्था

संघ व्यवस्था के अनुरूप स्विटजरलैण्ड में दोहरी शासन प्रणाली है। यह संघ 25 कैंटनों के सम्मेलन से बना है—जिनमें 19 पूर्ण कैन्टन हैं और 6 अर्द्ध-कैन्टन। अर्द्ध कैन्टन भी पूर्ण कैन्टनों के समान ही स्वतन्त्र हैं। केवल दो बातों में वे पूर्ण कैन्टन से भिन्न हैं—पहली बात यह है कि प्रत्येक अर्द्ध कैन्टन उच्च सदन राज्य परिषद में केवल एक प्रतिनिधि भेजती है, जबकि प्रत्येक पूर्ण कैन्टन को दो प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। दूसरी बात यह है कि प्रत्येक अर्द्ध-कैन्टन को उन सभी प्रश्नों पर जिनका सम्बन्ध संविधान में संशोधन करने से है, केवल आधे मत का अधिकार है। स्विस संघ में केन्द्रीय और इकाई सरकारें अपने निर्माण और जीवन के लिए एक दूसरे पर आश्रित नहीं हैं। वे संविधान की कृति हैं। वे स्वयं एक दूसरे को नष्ट नहीं कर सकते हैं। संविधान में संशोधन द्वारा ही किसी के अस्तित्व में परिवर्तन लाया जा सकता है। पुनश्च, संघ और कैन्टनों की सरकारों को समान स्थिति प्राप्त है। संविधान द्वारा निर्धारित अपने अपने कार्य-क्षेत्र में दोनों ही स्वतन्त्र हैं और एक दूसरे के क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं कर सकते।

स्विस संघीय व्यवस्था की यह विशेषता है कि सभी कैन्टन समान हैं। प्रत्येक कैन्टन का निजी संविधान है। उनकी नागरिकता के अपने अलग-अलग नियम

है, उनकी अपनी निजी विधियां और प्रथायें हैं। आशय यह है कि संघात्मक व्यवस्था के अनुकूल स्विट्ज़रलैण्ड में दोहरी नागरिकता है, दोहरे अधिकार हैं और दोहरी न्यायपालिका की व्यवस्था की गई है।

इस प्रकार दोहरी शासन व्यवस्था का संघात्मक तत्त्व स्विस संघ में पूरी तरह विद्यमान है।

शक्तियों का वितरण

केन्द्र और अवयवी इकाइयों के बीच शक्तियों का विभाजन दूसरा महत्त्वपूर्ण संघीय सिद्धान्त है। स्विट्ज़रलैण्ड में अन्य संघीय संविधानों की तरह ही संविधान द्वारा शक्तियों का वितरण किया गया है। शक्तियों के वितरण में 'गणना व अवशेष' के सिद्धान्त (Principle of Enumeration Residum) का प्रयोग किया गया है। संघीय सरकार की शक्तियों को गिना कर अवशिष्ट शक्तियां कैन्टनों की सरकारों का माना गया है। राष्ट्रीय महत्त्व के विषय संघ सरकार के कार्य क्षेत्र में सौंप दिये गये हैं और शेष विषय कैन्टनों के अधिकार में रखे गये हैं। संविधान में शक्तियों का वितरण निम्नलिखित चार भागों में बांटा जा सकता है—

1 **संघीय अधिकार क्षेत्र**—कुछ कार्य अनन्य रूप से (Exclusively) संघीय सरकार के अधिकार-क्षेत्र में रखे गये हैं, जैसे विदेशों के साथ सम्बन्ध स्थापित करना, सेना नियन्त्रण करना, कण्टनों के झगड़ों का निपटारा, आदि।

2 **समवर्ती अधिकार**—कुछ विषय ऐसे हैं जिन पर कैन्टनों तथा संघीय सरकार दोनों का समवर्ती अधिकार-क्षेत्र (Concurrent Jurisdiction) है। परन्तु यदि संघ और कैन्टनों के कानूनों में विरोध हो, तो संघीय कानून ही मान्य होते हैं, कैन्टनों के नहीं।

3 **विभक्त अधिकार**—स्विस शासन व्यवस्था में शक्तियों के वितरण की एक विशेषता यह है कि वहां एक सूची विभाजित-विषयों की है। इसे विषयों का कुछ भाग केन्द्र के अधिकार में है और कुछ भाग कैन्टनों के अधिकार में है। उदाहरणस्वरूप, विदेशों से सन्धियां करना संघीय अधिकार क्षेत्र में है, परन्तु कैन्टन अपने निकटवर्ती देशों से संविधान द्वारा निश्चित सीमाओं के अन्तर्गत कुछ विषयों पर सन्धियां कर सकते हैं। इसी तरह शिक्षा की व्यवस्था और संचालन का कार्य भी संघ तथा कैन्टनों में बंटा हुआ है। अनिवार्य और निःशुल्क प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था करना कैन्टनों का कर्त्तव्य है परन्तु संघ का यह निरीक्षण करने का अधिकार है कि कैन्टन अपने कर्त्तव्य का पालन कर रहे हैं या नहीं। कृषि और विवाह जैसे विषय विभाजित विषयों की सूची में सम्मिलित हैं।

4 **अवशिष्ट अधिकार**—उपर्युक्त अधिकारों को छोड़ कर अवशिष्ट सब अधिकार (Residuary Powers) कैन्टनों को सौंपे गये हैं। इन अवशिष्ट अधिकारों का कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं है।

इस तरह स्पष्ट है कि स्विस संविधान में संघात्मकता का आवश्यक तत्व शक्तियों का विभाजन विद्यमान है।

संविधान की सर्वोच्चता

संघीय व्यवस्था की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता संघ में संविधान का सर्वोच्च होना है। यह तत्त्व भी स्विस संविधान में लगभग पूरी तरह विद्यमान है। संविधान लिखित है तथा किसी प्रकार के विवाद का निर्णय संविधान के आधार पर ही होता है। संविधान वहां सबसे ऊंचा कानून है और शासन के सभी अंगों को उसी के द्वारा शक्ति प्राप्त होती है। कैंटनों की सरकारों का शासन सम्बन्धी अधिकार केन्द्र प्रदत्त न होकर संविधान द्वारा दिए हुए हैं। संविधान जैसे संघ को स्वतन्त्र अस्तित्व प्रदान करता है उसी प्रकार वह कण्टनों को भी स्वतन्त्र अस्तित्व प्रदान करता है और संघ व कण्टन दोनों ही के लिए वह समान रूप से मान्य है। दोनों में से कोई भी संविधान की अवहेलना नहीं कर सकता। किन्तु इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि यद्यपि संविधान सर्वोच्च है पर उस पर जनमत-संग्रह (Referendum) और आरम्भण (Initiative) के उपकरणों द्वारा पर्याप्त मात्रा में पूर्ण जनतान्त्रिक नियन्त्रण रखा गया है। संविधान की सर्वोच्चता के विषय में अन्तिम बात यह है कि संघीय न्यायपालिका को संविधान की व्याख्या करने का कोई अधिकार नहीं है।

न्यायपालिका की सर्वोच्चता

न्यायपालिका की सर्वोच्चता के विषय में स्विट्जरलैण्ड संघात्मकता की कसौटी पर पूरा नहीं उतरता। इस सम्बन्ध में वह अमरिका के संघ से भिन्न है। स्विस सर्वोच्च न्यायालय को संयुक्त राज्य के सर्वोच्च न्यायालय के समान संविधान की व्याख्या करने की शक्ति नहीं है, क्योंकि स्विट्जरलैण्ड का न्यायालय किसी भी संघीय कानून को संघीय संविधान के किन्हीं उपबन्धों का अतिक्रमण करने वाला बतलाकर उसे अमान्य घोषित नहीं कर सकता है। यह शक्ति तो स्पष्ट रूप से संविधान मण्डल के लिए छोड़ दी गई है जो कि विधि अथवा कानून को पारित करता है। सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति से सम्पन्न न करके मूल में प्रमुखतः यही कारण रहा है कि स्विस लोग वस्तुतः जनता की प्रत्यक्ष सत्ता में विश्वास करते हैं।

ऊपरी सदन में इकाइयों का प्रतिनिधित्व

संघीय व्यवस्था का एक सहायक तत्त्व यह है कि व्यवस्थापिका के ऊपरी सदन में संघ की इकाइयों को समान प्रतिनिधित्व दिया जाता है, यद्यपि निचले सदन में उनका प्रतिनिधित्व उनकी जनसंख्या के अनुपात के अनुसार होता है।

स्विस संघात्मक व्यवस्था में यह सहायक तत्त्व भी पूरी तरह विद्यमान है, यद्यपि वहां पूरे कण्टनों व अर्द्ध-कण्टनों में अन्तर अवश्य देखा जाता है। विधान-मंडल के ऊपरी सदन में प्रतिनिधित्व की व्यवस्था ऐसी है कि प्रत्येक पूरा कण्टन

दो और अर्द्ध-कैण्टन एक प्रतिनिधि भेजता है। स्विस व्यवस्था की यह विशेषता भी है कि वहां कैण्टनों को अपने प्रतिनिधियों का कार्यकाल स्वयं निश्चित करने का अधिकार है। परिणामस्वरूप वहां उच्च सदन के जो सदस्य होते हैं, वे अलग-अलग कार्यकाल के होते हैं। अमेरिका में कार्यकाल सम्बन्धी यह विभिन्नता नहीं पाई जाती और न ही राज्यों को अपने प्रतिनिधियों का कार्यकाल स्वयं निश्चित करने का अधिकार है।

संशोधन कार्य में इकाइयों का अधिकार

संघीय व्यवस्था के अनुरूप स्विट्जरलैण्ड में संशोधन के प्रस्तावित करने में और उसकी पुष्टि करने में संघ की इकाइयों में जनता का पूरा-पूरा हाथ है। संविधान में कोई भी संशोधन केवल तभी पारित समझा जा सकता है जबकि आधे से अधिक कैण्टनों द्वारा वह स्वीकार कर लिया जाए। जहां अमेरिका में स्वीकृति राज्यों की व्यवस्थापिकाओं की होती है, वहां स्विट्जरलैण्ड में स्वीकृति कैण्टनों के लोगों की होती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सिर्फ न्यायपालिका की सर्वोच्चता के तत्त्व को छोड़कर स्विट्जरलैण्ड के संविधान में संघ शासन पद्धति के सभी लक्षण विद्यमान हैं। न्यायपालिका की प्रधानता के सन्दर्भ में यह तथ्य महत्त्वपूर्ण है कि स्विट्जरलैण्ड में अंतिम निर्णय स्वयं जनता के हाथों में रहता है। अतः जैसा कि सी० एफ० स्ट्रांग (C F Strong) ने कहा है, "वहां संघीय न्यायालय को न्यायिक पुनरावलोकन का सम्पूर्ण अधिकार देने की आवश्यकता ही नहीं उठती है।"

केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति एवं कैण्टनों और संघ सरकार के आपसी सम्बन्ध

अन्य देशों की तरह स्विटजरलैण्ड में भी, संघात्मक शासन के बावजूद केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति बढ़ रही है। निम्नलिखित तथ्य इस प्रवृत्ति के परिचायक हैं—

1 स्विस केन्द्रीय सत्ता बहुत शक्तिशाली है और आवश्यकता पड़ने पर कैण्टनों में सैनिक शक्ति का प्रयोग कर सकती है।

2 केन्द्र को अधिकार है कि आन्तरिक अव्यवस्था होने पर किसी भी कैण्टन का शासन अपने अधिकार में ले ले।

3 प्रत्येक क्षेत्र में संघीय संविधान के नियम लागू होते हैं। इस प्रकार कैण्टन यथार्थ में कहीं भी सम्प्रभुता-सम्पन्न नहीं है।

4 कैण्टन का कोई कानून यदि संघीय कानून के प्रतिकूल हो तो संघीय कानून को ही मान्यता मिलती है।

5 कैण्टनों के पास केवल स्थानीय महत्त्व की शक्तियां हैं जबकि संघीय सरकार के पास सम्प्रभुता सूचक शक्तियां हैं जिनके माध्यम से वह कैण्टनों पर छाया रह सकता है। अतः मुद्रा एवं बैंक व्यवस्था से सम्बन्धित अधिकार ही

इतना व्यापक है कि उसके प्रयोग से केन्द्र समस्त कण्टनो के आर्थिक और व्यापारिक जीवन पर नियन्त्रण कर सकता है।

6 कैण्टनो का अन्तराष्ट्रीय विधि के अनुसार कोई व्यक्तित्व नही है।

7 कैण्टन के सघीय क्षेत्र म हस्तक्षेप को केन्द्र अनेक उपायो से रोक सकता है पर सघीय हस्तक्षेप को रोकने के साधन कैण्टनो के पास नही है।

8 कैण्टनो के झगडो म सघ का ही निर्णायक शक्ति प्राप्त है।

9 कैण्टन न सघ से पृथक हो सकते हैं और न परस्पर कोई सधि ही कर सकते हैं।

10 बहुत बडी सीमा तक कण्टन सघ की वित्तीय सहायता पर आश्रित हैं। अशान्ति अथवा उपद्रव के समय भी उन्हे सघ से सहायता की याचना करनी पडती है।

11 कण्टनो का अपने सवधानिक सशोधनो पर सघ की स्वीकृति लनी पडती है। कण्टन का सशोधन सघीय सविधान के प्रतिकूल नही हो सकता।

12 सघीय न्यायालय कैण्टन के कानूनो को अवैध घोषित कर सकता है, पर सघीय कानूनो को अवैध घोषित करने का उसे अधिकार नही है।

उपर्युक्त व्यवस्थाओ के कारण ही डूपरीज ने कहा है कि "स्विट्जरलण्ड के सविधान ने सघ को वस्तुत ऐसा रूप प्रदान कर दिया है, मानो वह कण्टनो का शिक्षक और निरीक्षक है"।

उपर्युक्त विवेचना से यह निष्कर्ष निकालना गलत होगा कि कैंटनो की साविधानिक शक्ति शून्य है। सूक्ष्मता से देखने से मालूम होगा कि स्विस राजनीति का आकर्षण-केन्द्र कैंटन हैं और कटनो की अपनी राजनीति तथा उनका अपना जीवन भी है। यदि केन्द्रीय सरकार अनाधिकार रूप से कण्टनो की शक्तियो का प्रहार करती है तो कैण्टनो के पास अपनी रक्षा के साधन आरम्भक और जनमत सग्रह है। छोटे या बडे सभी कण्टनो को स्विटजरलण्ड के ऊपरी सदन मे समान प्रतिनिधित्व का अधिकार है और इसके द्वारा कैंटनो के हितो का सरक्षण होता है तथा केन्द्र द्वारा कटनो की शक्ति को कुचलने का प्रयास सफल नही हो सकता। इसके अतिरिक्त नागरिको के जीवन मे सघ की अपेक्षा कटनो का प्रभाव ही अधिक व्यापक है। कटन राजनीतिक प्रयोगशालाओ के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। स्विस जनता को स्वतन्त्रता प्रिय है और कटनो की स्वायत्तता उनके लिए महत्त्वपूर्ण है। वह समझती है कि नतिक व सास्कृतिक जीवन की पवित्रता तभी रह सकती है, जब कटनो की स्वाधीनता अक्षुण्ण बनी रहे। कटन इस दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण हैं कि उनके सरकारी अधिकारी सघीय ससद के सदस्य हो सकते हैं। पुनश्च, कैंटनो का अवशिष्ट विषयो पर अधिकार है और ये अधिकार व्यापक हैं क्योकि ये सघीय अधिकारो के समान स्पष्ट और अकित नही हैं। साथ ही कटन समवर्ती विषयो पर भी कानून बना सकते हैं, शर्त केवल इतनी ही है कि वे

संघीय कानून के प्रतिकूल न हो। फिर, संघीय कार्यपालिका में अधिक से अधिक कैंटनों को प्रतिनिधित्व देने का प्रयत्न किया गया है और राज्य परिषद या ऊपरी सदन में अध्यक्ष और उपाध्यक्ष पद को प्राप्त करने के लिए बारी बारी से अलग अलग कैंटनों को अवसर दिया जाता है। इसके अतिरिक्त यह बात भी महत्वपूर्ण है कि संघ की सरकार जनता पर स्वयं सीधे कर नहीं लगा सकती। स्विट्जरलैंड की जनता ने ऐसे किसी भी प्रस्ताव को अभी तक अस्वीकार ही किया है। फिर यह भी नहीं भूलना चाहिए कि नागरिकता राजनीतिक जीवन का आधार होती है। स्विट्जरलैण्ड में नागरिकता का निवास कैंटनों में है। प्रत्येक व्यक्ति को संघ का नागरिक होने के लिए आवश्यक है कि वह किसी न किसी कैंटन का नागरिक हो। अतः नागरिकता की दृष्टि से भी कैंटन अधिक महत्वपूर्ण है।

अन्त में यही कहा जा सकता है कि संघ के हाथों में शक्ति का केन्द्रीयकरण इतना नहीं हुआ है कि कैंटनों का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व ही नहीं रह गया है। फिर भी केन्द्रीयकरण की बढ़ती हुई प्रवृत्ति के जिस खतरे के प्रति अण्ड्रे ने संकेत किया है, उसके प्रति स्विस जनता का सचेत रहना उचित ही होगा, इसमें कोई संशय नहीं। श्री अण्ड्रे ने लिखा है कि "इस विकासमान केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति में यह भय निहित है कि ज्यों-ज्यों केन्द्रीय शक्ति अपना अधिकार क्षेत्र बढ़ायेगी, त्यों-त्यों कैंटनों की प्रभुता नष्ट होती जाएगी और अन्त में वे साधारण प्रशासन के जिले मात्र रह जायेंगे और केन्द्रीय शासन की प्रत्येक आज्ञा को मानना-भर ही उनका काम रह जाएगा।"

3
स्विट्जरलैंड की व्यवस्थापिका
(THE SWISS LEGISLATIVE)

"जनता द्वारा कटनो के अधिकारो की व्यवस्था के साथ, सघ को सर्वोच्च-सत्ता का प्रयोग सघीय सभा द्वारा किया जाता है।

—स्विस सविधान

स्विट्जरलड की सघीय सरकार के चार अग है—

1 व्यवस्थापिका जिसे सघीय सभा (Federal Assembly) कहते हैं और जो जनता के प्रतिनिधियो के आधार पर सगठित की जाती है।

2 कार्यपालिका जिसे सघीय परिषद् (Federal Council) कहते हैं, जिसके सात सदस्य होते है।

3 न्यायपालिका जिसे सघीय न्यायालय (Federal Tribunal) कहते हैं।

4 जनता के प्रत्यक्ष जनतन्त्र के साधन जन-मत-सग्रह (Referendum) तथा आरम्भक (Initiative)।

स्विस सविधान के अनुच्छेद 71 के अनुसार सघीय व्यवस्थापिका, जिसे सघीय सभा (Federal Council) के नाम से पुकारा जाता है, शासन सूत्र में सर्वोच्च-सत्ता (Supremacy) का उपभोग करती है और यह द्वि-सदनात्मक है। स्विस जनता तथा कटनो के अधिकारो को छोडकर वह सघ की सर्वोच्च शक्ति का उपभोग करती है। शासन के अन्य दो अगो अर्थात् सघीय परिषद् (Federal Council) तथा सघीय न्यायालय (Federal Tribunal) की सत्ता उसके नीचे है।

सघीय व्यवस्थापिका की विशेषताएँ
(The Pecularities of the Swiss Legislature)

सत्ता की सर्वोपरिता—प्राय सघीय शासन व्यवस्था म कार्यपालिका और

व्यवस्थापिका पर न्यायपालिका का अंकुश रखा जाता है किन्तु स्विस व्यवस्थापिका इस दृष्टि से निरालापन लिए हुए है। स्विट्जरलैण्ड में व्यवस्थापिका की सर्वोच्चता इस सीमा तक स्थापित की गई है कि न्यायपालिका को उसके द्वारा बनाए गये कानूनों के पुनरावलोकन (Judicial Review) का अधिकार भी प्राप्त नहीं है। और तो और कुछ मामलों में तो उसे संघीय न्यायपालिका के निर्णयों को भी रद्द कर देने का अधिकार है। संघीय सभा ही स्विस कार्यपालिका अर्थात् संघीय परिषद (Federal Council) के सदस्यों का निर्वाचन करती है तथा संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों का भी चयन करती है। वस्तुतः स्विस संघीय सभा की स्थिति अमेरिकन कांग्रेस और भारतीय संसद दोनों से ही उच्चतर है। कैंटन के कानून से संघीय कानून की उच्च स्थिति भी संघीय व्यवस्थापिका की सर्वोच्च शक्ति को इंगित करती है।

इस सम्बन्ध में संविधान के अनुसार संघीय सभा पर एक प्रतिबन्ध अवश्य है। संविधान में स्पष्टतः लिख दिया गया है कि "नागरिकों और कैंटनों के अधिकारों के अधीन संघ की सर्वोच्च शक्ति का उपभोग संघीय-सभा करती है।" आशय यह हुआ कि व्यवस्थापन सम्बन्धी अधिकार क्षेत्र में किन्हीं मामलों में जनता और कैंटन भी उसके सहअधिकारी हैं और वे अपने इन अधिकार का प्रयोग जनमत संग्रह (Referendum) तथा आरम्भिक (Initiative) का प्रयोग करके करते हैं। इन साधनों के द्वारा जनता और कैंटन संघीय सभा द्वारा पारित कानूनों को रद्द कर सकते हैं।

समानपदीय द्वि-सदनीय व्यवस्था—स्विस संघीय सभा के दोनों सदन राष्ट्रीय सभा (National Assembly) तथा राज्य सभा (Council of State) समानपदी हैं। सी० एफ० स्ट्राँग के शब्दों में स्विट्जरलैण्ड की कार्यपालिका की तरह ही वहाँ की व्यवस्थापिका भी विशिष्ट है, संसार में वही एक ऐसी व्यवस्थापिका है जिसके ऊपरी सदन की शक्ति निचले सदन की शक्ति से किसी भी प्रकार भिन्न नहीं है।'

विविध भाषाओं का प्रयोग—स्विस व्यवस्थापिका के सदस्य देश की विविध भाषाओं का प्रयोग करने में पूर्ण स्वतन्त्र हैं, क्योंकि संविधान के अन्तर्गत उन सभी भाषाओं को राजकीय मान्यता प्राप्त है। संसदीय कार्यवाही का प्रकाशन भी जर्मन, फ्रेंच तथा कभी कभी इटालियन भाषा में किया जाता है।

संघीय सभा का संगठन

(Organisation of the Federal Assembly)

स्विस व्यवस्थापिका अथवा संघीय सभा का निर्माण द्वि सदनात्मक प्रणाली के आधार पर हुआ है। इसके दोनों सदन निम्न हैं—

(1) राष्ट्रीय सभा (National Council)—यह निचला सदन है।

(2) राज्य सभा (Council of State)—यह ऊपरी सदन है।

राष्ट्रीय सभा
(National Council)

रचना—इसका निर्माण जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा होता है। प्रत्येक कैन्टन या अर्द्ध-कैन्टन को प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में बांटा जाता है। सदस्य संख्या निश्चित नहीं की गयी है। प्रत्येक 24 हजार व्यक्तियों पर एक प्रतिनिधि चुना जाता है किन्तु 12 हजार से अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र से भी एक प्रतिनिधि लिया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक कैंटन और अर्द्ध-कैंटन को दो-एक प्रतिनिधि भेजने का अवसर अवश्य दिया जाता है। वर्तमान काल में राष्ट्रीय सभा की सदस्य संख्या 196 है जो सन् 1940 की जनसंख्या के आधार पर है। सभा की सदस्य संख्या 200 की सीमा में ही रहे, इसके लिए यदि आवश्यक हो तो वह जनसंख्या बढ़ाई जा सकती है, जिस पर एक प्रतिनिधि चुना जाता है। पहले दो बार ऐसा किया भी जा चुका है। सन् 1931 में यह संख्या 20 हजार से बढ़ा कर 22 हजार और 1940 में 24 हजार कर दी गयी थी।

चूंकि प्रतिनिधित्व का आधार जनसंख्या है, अतः स्वाभाविक रूप से बड़ी जनसंख्या वाले कैंटनों के प्रतिनिधि अधिक हैं और छोटी जनसंख्या वाले कैंटनों के प्रतिनिधि कम हैं।

कार्य-काल, बैठकें, वेतन आदि—*राष्ट्रीय सभा का कार्य-काल चार वर्ष का* है। पूरी की पूरी सभा का निर्वाचन प्रति चार वर्ष बाद होता है। संविधान के पूर्ण संशोधन पर मतभेद की सूरत में इस सदन का विघटन 4 वर्ष से पहले भी किया जा सकता है। सभा की बैठकें राज्य सभा की बैठकों के साथ-साथ ही होती हैं।

यदि राष्ट्रीय सभा के सदस्यों के एक-चौथाई लोग या कैंटनों की सम्पूर्ण संख्या के एक-चौथाई कैंटनों की ओर से मांग की जाय तो संघीय परिषद् (Federal Council) दोनों सदनों की संयुक्त बैठक बुला सकती है।

राष्ट्रीय सभा के सदस्यों को कोई मासिक वेतन नहीं दिया जाता। सदन की बैठकों के समय केवल दैनिक भत्ता और मार्ग-व्यय दिया जाता है। अतः अपने जीवन-निर्वाह के लिए सदस्यों को प्रायः दूसरे वैतनिक राजनैतिक पद पर कार्य करना पड़ता है।

सदस्यों की योग्यता—राष्ट्रीय सभा की सदस्यता के लिए वे ही योग्यताएं निर्धारित की गई हैं जो मतदाताओं के लिए अर्थात् मताधिकार प्राप्त प्रत्येक स्विस नागरिक सदस्य बन सकता है। यह प्रतिबन्ध है कि धर्माधिकारी (Clergy) तथा राज्य सभा एवं संघीय-परिषद् के सदस्य राष्ट्रीय सभा के सदस्य नहीं बन सकते।

मतदाता—20 वर्ष की आयु पूरी कर चुकने वाला प्रत्येक पुरुष राष्ट्रीय सभा के निर्वाचन में मतदान कर सकता है। कैंटन की नागरिकता से वंचित कर दिये गये व्यक्तियों और स्त्रियों को मताधिकार नहीं है। विभिन्न कैंटनों में दिवालिया, भिक्षुक तथा दुश्चरित्र व्यक्तियों को मताधिकार नहीं दिया गया है।

निर्वाचन प्रणाली—इस सभा का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से गुप्त मतदान द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के आधार पर होता है। प्रत्येक कैंटन एक निर्वाचन क्षेत्र है जिसमें विविध दल अपने प्रत्याशियों की सूची प्रस्तुत करते हैं। प्रत्येक सूची में उतने ही नाम होते हैं जितने स्थान उस कैंटन के हैं और मतदाता उतने ही मत देने का अधिकारी है जितने सदस्यों का निर्वाचन उस कैंटन में होना है। आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली का प्रयोग उन्हीं कैंटनों में किया जाता है जहाँ एक से अधिक सदस्यों का निर्वाचन हो। जिन कैंटनों में केवल एक सदस्य चुना जाता है वहाँ मतदान साधारण प्रणाली द्वारा होता है।

अध्यक्ष व उपाध्यक्ष—राष्ट्रीय सभा को प्रत्येक साधारण और असाधारण सत्र के लिए अपने सदस्यों में से एक अध्यक्ष और एक उपाध्यक्ष चुनने का अधिकार दिया गया है। अब, परम्परा के अनुसार, ये अधिकारी प्रत्येक अधिवेशन में नहीं वरन् प्रतिवर्ष चुने जाते हैं। कोई भी सदस्य लगातार दो वर्षों तक अध्यक्ष नहीं बन सकता और न कोई, जो एक वर्ष अध्यक्ष रह चुका हो, अगले वर्ष के लिए पुनः अध्यक्ष या उपाध्यक्ष बन सकता है। अध्यक्ष राष्ट्रीय सभा की अध्यक्षता और कार्यवाही का संचालन करता है। सदन में शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने, सदन के सम्मान और सुविधाओं की सुरक्षा का ध्यान रखने का उस पर उत्तरदायित्व है। उसे निर्णायक मत देने का भी अधिकार है। सदन में जब विभिन्न समितियों का निर्वाचन होता है तो अध्यक्ष भी साधारण सदस्य के समान मतदान करता है। दोनों सदनों के संयुक्त अधिवेशन में राष्ट्रीय सभा का अध्यक्ष ही सभापति बनता है।

राष्ट्रीय सभा के अध्यक्ष को कोई वेतन नहीं मिलता। उसका पद उतना निष्पक्ष भी नहीं होता जितना ब्रिटिश लोक-सभा या अमेरिका की प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष का होता है। प्रभाव और शक्ति की दृष्टि से भी यह पद विशेष महत्त्व का नहीं है। फिर भी यह पद पाने को सभी लालायित रहते हैं क्योंकि अध्यक्ष को बहुत ही सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। ब्रुक्स के शब्दों में "यह पद आदर का है जिसकी आकांक्षा बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ नेता करते हैं।

राज्य सभा (Council of State)

राज्य सभा स्विस संघीय सभा का उच्च या द्वितीय सदन (Upper or Second Chamber) है। संविधान के अनुसार यह निम्न सदन का अधीनस्थ (Subordinate) नहीं वरन् समकक्ष (Co-equal) सदन है।

रचना—राज्य सभा की सदस्य संख्या 44 है। प्रत्येक कैंटन के दो प्रतिनिधि और प्रत्येक अर्द्ध-कैंटन का एक प्रतिनिधि होता है। अतः 19 कैंटन दो प्रतिनिधि के हिसाब से 38 प्रतिनिधि तथा 6 अर्द्ध कैंटन एक प्रतिनिधि के हिसाब से 6 प्रतिनिधि भेजते हैं। यह सदा कैंटनों का ही प्रतिनिधित्व करता है, संघ के नागरिकों का नहीं।

कार्यकाल व बैठकें—स्विस राज्य सभा के सदस्यों के कार्यकाल में भी असमानता है। विभिन्न कैंटन अलग-अलग अवधियों के लिए सदस्यों को निर्वाचित करते हैं। फलस्वरूप राज्य सभा के 35 सदस्य 4 वर्ष के लिए, 5 सदस्य 3 वर्ष के लिए और 4 सदस्य केवल एक वर्ष के लिए चुने जाते हैं। प्रायः उनका बारबार पुनर्निर्वाचन होता रहता है। राज्य सभा की बैठकें राष्ट्रीय सभा की बैठकों के ही साथ साथ होती हैं। किसी भी विषय पर सम्मिलित रूप से विचार करने के लिए राज्य सभा और राष्ट्रीय सभा की सम्मिलित बैठक भी हो सकती है, यदि राष्ट्रीय सभा के सदस्यों का एक चौथाई भाग या कैंटनों की एक-चौथाई संख्या संघीय परिषद (Federal Council) से प्रार्थना पर संघीय परिषद ऐसी संयुक्त बैठक आमंत्रित करे।

सदस्यों की योग्यता व प्रतिबन्ध एवं निर्वाचन आदि—सदस्यों की योग्यतायें, उनकी निर्वाचन पद्धति, पदावधि आदि निर्धारण कैंटनों के हाथ में है। चार कैंटनों के प्रतिनिधि वहां के विधानमण्डल द्वारा एक कैंटन तथा तीन अर्द्ध-कैंटनों के प्रतिनिधि सार्वजनिक सभाओं द्वारा और शेष 14 कैंटनों तथा 3 अर्द्ध-कैंटनों के प्रतिनिधि वयस्क नागरिकों द्वारा चुने जाते हैं। वेतन और भत्ता आदि के निश्चय के सम्बन्ध में भी कैंटनों को स्वतन्त्रता है।

राज्य सभा के सदस्यों पर यह प्रतिबन्ध है कि वे राष्ट्रीय सभा व संघीय परिषद के सदस्य नहीं हो सकेंगे। संघीय न्यायालय का सदस्य होने पर भी प्रतिबन्ध है। साथ ही कैंटनों को अधिकार है कि वे अपनी सरकार के सदस्यों को राज्य सभा की सदस्यता ग्रहण करने की अनुमति दें।

अध्यक्ष और उपाध्यक्ष—राष्ट्रीय सभा की भांति ही राज्य सभा भी अपने सदस्यों में से ही अपना अध्यक्ष और एक उपाध्यक्ष चुनती है, किन्तु यह चुनाव एक वर्ष के लिए किया जाता है। संविधान के अनुसार यह निश्चय किया गया है कि किसी एक कैंटन के प्रतिनिधियों में से अध्यक्ष उपाध्यक्ष लगातार दो वर्ष तक नहीं चुने जा सकते। इस व्यवस्था का स्वाभाविक परिणाम यह है कि समस्त कैंटनों के प्रतिनिधियों को इन पदों पर आसीन होने का अवसर मिल जाता है। प्रचलित प्रथा के अनुसार एक सत्र का उपाध्यक्ष दूसरे सत्र में अध्यक्ष बना दिया जाता है। राज्य सभा के अध्यक्ष को भी वे ही अधिकार प्राप्त हैं जो राष्ट्रीय सभा के अध्यक्ष को मिले हुए हैं। वही सभा की बैठकों का सभापतित्व करता है, सदन में शान्ति

और सुव्यवस्था रखता है, सदन के नियमों का क्रियान्वयन करता है तथा समान मत होने पर निर्णायक मत देता है।

संघीय सभा की शक्तियां और कार्य

(Powers and Functions of the Federal Assembly)

राष्ट्रीय सभा और राज्य सभा के संयुक्त रूप संघीय सभा को प्रायः वे ही व्यवस्थापन सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हैं जो साधारणतः अन्य व्यवस्थापन संस्थाओं को प्राप्त होते हैं।

प्रशासन सम्बन्धी शक्तियां

(1) संघीय सभा दोनों सदनों के संयुक्त अधिवेशन में संघीय परिषद के सदस्यों, उसके अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष, संघीय न्यायपालिका के न्यायाधीशों, संघीय बीमा निकाय (Federal Insurance Tribunal) के सदस्यों, सर्वोच्च सेनापति, विशेष जन अभियोजक (Extra ordinary Public Prosecutor), चांसलर आदि का निर्वाचन करती है। संघीय विधि द्वारा इसको अन्य किसी भी अधिकारी का चुनाव करने अथवा किसी चुनाव की पुष्टि करने का अधिकार दिया जा सकता है।

(ii) संघीय सभा संघ शासन और संघ न्यायपालिका की कार्यवाहियों पर दृष्टि रखती है। संघ की सामान्य अधिनियम शक्ति को क्रियान्वित करने, संविधान को क्रियान्वित कराने तथा संघ के कर्त्तव्यों का अच्छी तरह से पालन कराने का प्रयत्न करना इस सभा का अधिकार है।

(iii) कन्टनों की शासन व्यवस्था पर भी संघीय सभा का नियन्त्रण रहता है। उसे यह अधिकार है कि वह कन्टनों के संविधानों तथा उनके संशोधनों की उचित जांच करे और उन्हें स्वीकार करे। कन्टनों व विदेशों से यदि कोई संधि-समझौते हों तो उनकी भी जांच करना और उन्हें स्वीकार या अस्वीकार करना संघीय सभा के कार्यक्षेत्र की बात है। आन्तरिक शान्ति बनाये रखने के लिए वह संघीय सेना का प्रयोग तक करने की अधिकारिणी है। यह कार्य व्यवहार में वस्तुतः संघीय परिषद् द्वारा किया जाता है और संघीय सभा उसके द्वारा किये हुए कार्य पर अपनी स्वीकृति-मात्र देती है।

(iv) संघीय सभा के अन्य प्रमुख प्रशासकीय कार्य हैं, जैसे दंडित अपराधियों को क्षमादान (Pardon) अथवा सामूहिक क्षमादान (Amnesty) प्रदान करना, संघीय सेना का नियमन व नियन्त्रण करना तथा संघीय प्रशासन का निरीक्षण और निर्देशन करना आदि। संघीय सभा को यह अधिकार भी है कि वह सरकार के अन्य अंगों के कार्यों के प्रतिवेदन प्राप्त कर सके। इन प्रतिवेदनों की जांच करके वह सम्बन्धित अंगों को उसकी त्रुटियों की ओर ध्यान दिलाते हुए भूल सुधार के लिए कह सकती है। संघीय परिषद के विषय में नियम यह है कि संघीय सभा उसके निर्णयों को पलट नहीं सकती। उसके आदेशों को भविष्य में मानना संघीय परिषद् के लिये आवश्यक होता है।

(v) वैदेशिक सम्बन्ध पर संघीय सभा का पूर्ण नियंत्रण है। राष्ट्र के वाह्य आक्रमणों से रक्षा करना, उसकी स्वतन्त्रता और तटस्थता की रक्षा करना, युद्ध की घोषणा करना, सन्धियों और समझौतों को करना आदि सभी कार्य संघीय सभा के अधिकार क्षेत्र में आते हैं। सन्धि वार्ता सामान्यतः संघीय परिषद द्वारा की जाती है, परन्तु जब उसका रूप अन्तिम हो जाता है तो वे उसे संघीय सभा के समक्ष प्रस्तुत करती है। संघीय सभा यदि आवश्यक समझती है तो उस सन्धि को स्वीकार करने के लिये संघीय परिषद् को अनुमति दे देती है। यह उल्लेखनीय है कि इस सम्बन्ध में संघीय सभा प्रायः अध्यादेश (Arretes) पारित कर देती है यद्यपि कुछ सन्धियों के विषय में अध्यादेशों पर वैकल्पिक जनमत संग्रह का प्रतिबन्ध भी लागू है।

व्यवस्थापन सम्बन्धी शक्तियां

संघीय व्यवस्थापिका संघीय विषयों पर कानून बनाती है। कार्यकारिणी भी विधेयक आदि तैयार करके व्यवस्थापिका के विचार विमर्श और स्वीकृति के लिये उन्हें प्रस्तावित करती है, किन्तु प्रायः व्यवस्थापिका अर्थात संघीय सभा ही विधि निर्माण के प्रस्ताव अपनी ओर से प्रस्तावित किया करती है, यद्यपि उसकी इस शक्ति पर जनमत संग्रह तथा जनता की पहल–कदमी का अंकुश रहता है। जनता अपने वैकल्पिक व्यवस्थापन सम्बन्धी जनमत संग्रह (Optional Legislative Referendum) के अधिकार के अन्तर्गत संघीय सभा द्वारा पारित कानूनों को अस्वीकार कर सकती है परन्तु ऐसा केवल उसी व्यवस्थापन के विषय में होता है जिसे नियम के अन्तर्गत 'Law' की संज्ञा दी जाती है। संघीय सभा प्रायः दूसरे प्रकार के व्यवस्थापन का अधिक आश्रय लेती है जिसे अध्यादेश (Arretes) कहा जाता है। उन अध्यादेशों पर वैकल्पिक व्यवस्थापन सम्बन्धी जनमत संग्रह का प्रतिबन्ध नहीं होता जो सर्वव्यापी (Universally binding) न हों अथवा जिन्हें संसद के दोनों सदनों के सब सदस्यों ने "आवश्यक (Urgent) घोषित कर दिया हो। वैकल्पिक जनमत संग्रह के प्रतिबन्ध से बचने के लिये ही व्यवस्थापन का अधिकांश भाग प्रायः *अध्यादेशों (Arretes) के रूप में होता है।*

संघीय सभा के निर्णयों को अथवा उसके द्वारा पारित विधेयकों पर कार्यकारिणी अर्थात संघीय परिषद को निषेध (Veto) करने का अधिकार नहीं है। यहां यह भी स्मरणीय है कि यद्यपि कार्यकारिणी व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी है, किन्तु व्यवस्थापिका उसे पदच्युत नहीं कर सकती।

वित्त सम्बन्धी अधिकार

संघीय सभा को संघ के वित्त पर पूर्ण अधिकार एवं नियन्त्रण है। वह संघ के आय-व्यय के लेख को स्वीकार करती है और संघ की आर्थिक स्थिति पर नियन्त्रण रखती है। उसको करों की मात्रा निश्चित करने तथा सरकारी आय को व्यय करने का अधिकार है। संघीय सभा ही संघीय सरकार के प्रमुख पदों की

उत्पत्ति और उनके लिए वेतन आदि विषय में निर्णय करती है। संघ की ओर से दिये जाने वाले ऋणों के विषय में भी निर्णय करना संघीय सभा का ही काम है। बजट पर संघीय सभा की स्वीकृति अन्तिम होती है, क्योंकि इस पर वैकल्पिक जनमत संग्रह का प्रतिबन्ध नहीं होता।

संघीय परिषद् को अपना वित्त सम्बन्धी वार्षिक प्रतिवेदन संघीय सभा को भेजना पड़ता है। संघीय परिषद् पर वित्त नियन्त्रण रखने के लिये सभा के दोनों सदनों की वित्त समितियों (Finance Committees) के तीन-तीन सदस्यों का एक वित्तीय प्रतिनिधि मण्डल (Financial Delegation) नियुक्त है जो संघीय परिषद् के व्यय पर नियन्त्रण रखता है।

न्यायिक शक्तियाँ

संघीय व्यवस्थापिका ही संघीय न्यायपालिका का निरीक्षण तथा निर्देशन करती है, न्यायिक संगठन सम्बन्धी कानून बनाती है तथा संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों को निर्वाचित करती है। संघीय न्यायालय अपनी वार्षिक रिपोर्ट संघीय सभा के सामने ही प्रस्तुत करता है। सभा कई मामलों में स्वयं अन्तिम निर्णय के रूप में कार्य करती है। यह संघीय परिषद् और संघीय न्यायालय अथवा बीमा न्यायालय के मध्य उत्पन्न विवादों या इन दोनों न्यायालयों में परस्पर उत्पन्न विवादों का निर्णय देती है। प्रशासन विधि सम्बन्धी मामलों में संघीय परिषद् के नियमों के विरुद्ध यह सभा अपील सुनती है और उन पर अपना अन्तिम निर्णय देती है। अपने द्वारा नियुक्त अधिकारियों के विरुद्ध भी यह कार्यवाही कर सकती है। संघ के न्याय विभाग के अधिकारियों द्वारा दंडित व्यक्तियों व मृत्यु दण्ड प्राप्त व्यक्तियों को यह क्षमादान भी दे सकती है।

स्पष्ट है कि जितने बहुमुखी और विविध कार्य स्विस व्यवस्थापिका द्वारा किये जाते हैं उतने कार्य संसार की बहुत कम व्यवस्थापिका करती हैं। परन्तु यह उस सीमा तक सर्वोच्च नहीं है जिस सीमा तक ब्रिटिश संसद है। इसकी शक्ति पर संविधान द्वारा विविध प्रतिबन्ध लगा दिये गये हैं, जैसे जनता के अधिकार, कैन्टनों के अधिकार तथा संविधान द्वारा अन्य संघीय प्राधिकारियों को सौंपे गये अधिकार। सच्चाई यह है कि स्विस शासन प्रणाली में संसदीय सम्प्रभुता (Parliamentary Sovereignty) की अपेक्षा लोकप्रिय या सार्वजनिक सम्प्रभुता (Popular Sovereignty) को उच्च स्थान प्रदान किया गया है। जनमत संग्रह और आरम्भक के द्वारा जन सत्ता स्वयं वैधानिक एवं संविधानिक कार्य में सक्रिय रूप से भाग लेती है तथा स्वयं विधि निर्माण की प्रक्रिया का संचालन और नियन्त्रित करती है। वैकल्पिक व्यवस्थापन सम्बन्धी जनमत संग्रह (Optional Legislative Referendum) की व्यवस्था का प्रतिबन्ध संघीय सभा की शक्ति पर संविधानिक दृष्टि से तो है ही परन्तु व्यवहार में भी उसका प्रयोग पर्याप्त होता है। संघीय सभा का महत्व इस दृष्टि से भी पूर्वापेक्षा कम हुआ है कि संघीय

परिषद ने स्विस शासन सूत्र में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है। अन्य देशों के समान ही स्विटजरलैंड में भी व्यवस्थापन कार्य इतना अधिक बढ़ गया है कि संघीय सभा अधिकांश कार्य के लिये संघीय परिषद का मुँह ताकती है। इसीलिये रेपार्ड (Reppard) ने कहा है कि "संघीय सभा के सांविधानिक अधिकारों के होते हुए भी आज नेतृत्व स्पष्टतः संघीय परिषद् के हाथों में चला गया है।"

विधि-निर्माण-प्रक्रिया

(The Law making Procedure)

अन्य देशों की तरह स्विट्जरलैंड में भी कानून निर्माण की एक निश्चित प्रक्रिया प्रयोग में लायी जाती है, किन्तु यह प्रक्रिया अन्य देशों की अपेक्षा निराली है। स्विस कानून निर्माण की प्रक्रिया के प्रमुख स्तरों का विवेचन हम निम्नांकित शीर्षकों में कर सकते हैं—

विधेयक का प्रस्तुतीकरण

स्विटजरलैंड में संघीय सभा के किसी भी सदन में कोई भी विधेयक प्रेषित किया जा सकता है। प्रत्येक अधिवेशन के प्रारम्भ में संघीय सभा के दोनों सदनों के अध्यक्ष परस्पर वार्तालाप करके यह निश्चित कर लेते हैं कि कौनसा सदन किस विषय या विधेयक पर पहले विचार करेगा? उन विधेयकों को छोड़कर, जिन्हें संघीय परिषद ने 'आवश्यक' (Urgent) घोषित कर दिया हो, सभी विधेयकों का कार्य विभाजन दोनों सदनों द्वारा स्वीकार किया जाना आवश्यक है। 'आवश्यक' (Urgent) विधेयकों के विषय में जो भी निर्णय सदनों के अध्यक्ष कर लेते हैं, वही सब के लिए मान्य होता है। कार्य विभाजन के विषय में यदि दोनों सदनों में मतभेद होता है तो फिर लाटरी (Lottery) द्वारा निर्णय किया जाता है।

सदनों में विधेयक चार प्रकार से प्रेषित या प्रस्तावित किया जा सकता है—(1) संघीय परिषद द्वारा, (2) प्रत्येक कण्टन या अर्द्ध-कण्टन द्वारा (3) संघीय सभा के किसी भी सदन द्वारा, एवं (4) संघीय सभा के किसी भी सदन के किसी भी सदस्य द्वारा अपने सदन में। वास्तव में अब विधेयकों को तैयार करने और उनका प्रस्तुतीकरण करने का कार्य धीरे-धीरे संघीय परिषद् में केन्द्रित हो गया है। व्यवहार में अधिकांश विधेयकों का प्रस्तुतीकरण परिषद ही करती है। कैण्टन तो अपने इस अधिकार का प्रयोग बहुत कम करते हैं। वित्तीय विधेयकों पर संघीय परिषद् का पूर्ण नियन्त्रण रहता है। साधारण सदस्यों को वित्तीय विधेयक प्रस्तुत करने का अधिकार नहीं है। इसके अतिरिक्त जब कभी भी संघीय परिषद् यह आवश्यक समझती है कि प्रशासनिक कर्त्तव्यों के निर्वहन के लिए किसी कानून को बनाना आवश्यक है तो वह अपने कर्मचारियों की सहायता से विधेयक का प्रारूप तैयार करती है और उसे अपने विचारों के प्रतिवेदन के साथ संघीय सभा के दोनों

सदनों के समक्ष प्रस्तुत कर देती है। संघीय सभा के किसी भी सदन द्वारा विधेयक प्रस्तावित करने का केवल यह अर्थ है कि जब कोई विधेयक किसी सदन मे स्वीकार हो जाता है तब दूसरा सदन उस पर विचार करता है। उसे किसी औपचारिक ढग से प्रेषित या प्रस्तावित करने की आवश्यकता नही होती।

किसी भी प्रकार प्रस्तुत किये गये किसी विधेयक के विषय म यदि संघीय सभा का यह मत होता है कि इस विषय म किसी अन्य प्रकार के विधयक की आवश्यकता है, तो वह उस पर विचार प्रारम्भ न करके संघीय परिषद से कायवाही करने के लिए कहती है। संघीय सभा ऐसा दो विधियो द्वारा करती है—प्रस्ताव (Motion) की विधि द्वारा एवं सुझाव (Postulate) की विधि द्वारा। प्रस्ताव (Motion) एक प्रकार का आदेश है जो संघीय सभा की ओर से संघीय परिषद् को दिया जाता है। चूंकि इस प्रकार का आदेश संघीय सभा के दोनो सदन ही मिलकर दे सकते हैं, अत 'प्रस्ताव' दोनो ही सदनो द्वारा मिलकर पारित किया जाना अनिवाय है। 'सुझाव' (Postulate) के द्वारा संघीय परिषद को आदेश नही दिया जाता बल्कि उसे विधेयक पर पुन विचार करने के लिए आमन्त्रित किया जाता है। 'सुझाव' 'प्रस्ताव' से कम महत्वपूर्ण होता है और उसके लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह दोनो सदनो की ओर से दिया जाय। प्रस्ताव या सुझाव प्राप्त होने पर संघीय परिषद सम्बन्धित विधयक पर संघीय सभा के सुझावो के आधार पर पुन विचार करके विधेयक के प्रारूप को अपने प्रतिवेदन सहित पुन सभा के समक्ष प्रस्तुत कर देती है। संघीय परिषद यह मत प्रकट कर सकता है कि विधेयक को अस्वीकार कर दिया जाय।

यह उल्लेखनीय है कि यद्यपि संघीय सभा द्वारा दिये गये 'प्रस्ताव' व 'सुझाव' का बडा महत्व होता है और सामान्यत संघीय परिषद उन पर चलती भी है। लेकिन उसके लिए यह अनिवाय नहीं है कि उन पर वह काय करे ही। 'प्रस्ताव' पर यदि दो वष तक कोई विचार ही न हो अथवा यदि संघीय परिषद 4 वष तक उसका कोई उत्तर ही न दे, तो वह प्रस्ताव समाप्त समझा जाता है। 'सुझाव' का जीवन तो और भी छोटा है यदि संघीय परिषद् कोई कायवाही न करे तो वह समाप्त हो जाता है।

संघीय सभा द्वारा विचार

काय-विभाजन—विधेयक के जीवन का दूसरा स्तर संघीय सभा द्वारा उस पर विचार करना है। चूंकि सभा के दोनो ही सदन सभी विधयको पर विचार कर सकते हैं, अत संघीय परिषद् सभी विषयको एव सदेशो की प्रतियां दोनो के अध्यक्षो को दे देती है जो परस्पर मिलकर यह निणय कर लेते हैं कि कौनसा सदन किस विधयक पर पहले विचार करेगा? उन विधयको को छोडकर जिन्हे संघीय परिषद ने 'आवश्यक' घोषित कर दिया हो, सभी विधयको का काय-विभाजन दोनो सदनों द्वारा स्वीकार किया जाना आवश्यक है। यदि इस सम्बन्ध मे दोनो सदनो म मतभेद

हो तो लाटरी द्वारा निर्णय कर लिया जाता है। 'आवश्यक' (Urgent) विधेयकों पर 'प्रथम विचार' सम्बन्धी दोनों सदनों के अध्यक्षों में हुए निर्णय को सदनों की स्वीकृति की आवश्यकता नहीं पड़ती।

समिति स्तर—विधेयक के सदन में प्रेषित होने पर उसके सिद्धान्तों पर विचार किया जाता है और यदि सदन उनसे सहमत है तो उसे उचित समिति के पास विचारार्थ भेज दिया जाता है। स्विटजरलैंड की समितियां अपना अधिकांश कार्य उस समय में करती हैं, जो सदनों की बैठकों के सत्रों के बीच में खाली रहता है। समितियां अपनी बैठकें केवल राजधानी में नहीं करती, वरन् देश के विभिन्न नगरों में भी अपना कार्य करने जाती हैं। समितियां स्थाई और अस्थाई—दोनों ही प्रकार की होती हैं तथा सभी विधेयक उनके समक्ष भेजे जाते हैं। समितियों के संगठन के सम्बन्ध में यह आवश्यक है कि समितियों की सदस्यता में संसद के राजनीतिक दलों के अनुपात में विभिन्न दलों के प्रतिनिधियों का स्थान मिले।

स्विटजरलैंड में समितियां विधेयकों पर निष्पक्ष और विस्तृत रूप से विचार करती हैं। वे साधारणतः विधेयकों के सार को नहीं बदलती हैं, पर वे उनमें अनेक संशोधन अवश्य करती हैं। आवश्यक विचार करने के उपरान्त समिति अपना प्रतिवेदन सदन को प्रस्तुत करती है। यदि समितियों के सदस्यों में गम्भीर मतभेद होता है तो बहुमत के प्रतिवेदन के साथ-साथ अल्पमत के प्रतिवेदन भी प्रस्तुत किये जाते हैं।

प्रतिवेदन एवं स्वीकृति—समितियों के प्रतिवेदन के साथ विधेयक पुनः सदनों में आता है। विधेयक के ऊपर 'विचार करने के लिए' (Entering upon the matter) प्रस्ताव रखा जाता है और तदुपरान्त उसके प्रत्येक अनुच्छेद पर विस्तृत वाद-विवाद (Article by article debate) होता है। प्रत्येक सदन में विधेयकों पर तीन प्रमुख भागों में विचार होता है—पहले सदन यह निश्चय करता है कि विचार के लिए किस विधेयक को प्राथमिकता दी जाय? इस निश्चय के उपरान्त सदन विधेयक पर धारा प्रति धारा (Article by article) विचार करता है एवं तत्पश्चात् विधेयक पर एक साथ मत लिया जाता है। यदि मतदान के परिणाम-स्वरूप विधेयक स्वीकार हो जाता है तो उसे दूसरे सदन में विचारार्थ भेज दिया जाता है, जहां उपर्युक्त प्रक्रिया पुनः दोहराई जाती है। अत्यावश्यक परिस्थितियों में विधेयक के भागों पर दोनों सदनों में साथ-साथ विचार हो सकता है और एक सदन द्वारा स्वीकार किये जाने पर विधेयक के भागों को दूसरे सदन में विचारार्थ भेज दिया जाता है।

यदि किसी विधेयक के सम्बन्ध में दोनों सदनों में मतभेद पैदा हो जाता है, या एक सदन उसे अस्वीकृत कर देता है या विधेयक में ऐसे संशोधन या परिवर्तन उपस्थित करता है जो दूसरे सदन को स्वीकार नहीं है, तो ऐसी स्थिति में दोनों सदनों के प्रतिनिधियों की एक मध्यस्थ समिति (Arbitration Committee) की

नियुक्ति की जाती है। इस समिति में दोनों सदनों के सदस्य समान संख्या में होते हैं। संयुक्त सम्मेलन समिति विधेयक पर विचार करके पुनः समझौता करने की चेष्टा करती है। यदि यह कोई समझौता कर सकने में असमर्थ रहती है तो विधेयक को संघीय सभा द्वारा अस्वीकार किया हुआ समझा जाता है, परन्तु यदि कोई समझौता हो जाता है तो उस पर दोनों सदन विचार करते हैं। यदि दोनों सदनों को वह समझौता स्वीकार्य नहीं होता तो भी विधेयक रद्द समझा जाता है, परन्तु ऐसा प्रायः बहुत कम होता है।

प्रकाशन

जब कोई विधेयक समान रूप में संघीय सभा के दोनों सदनों द्वारा स्वीकृत हो जाता है तो संघ की चांसलरी द्वारा उसका रूप तैयार किया जाता है, जिस पर दोनों सदनों के अध्यक्षों और सचिवों के हस्ताक्षर होते हैं। हस्ताक्षर होने के उपरान्त विधेयक कानून बन जाता है और इसे संघीय परिषद के पास प्रकाशन एवं क्रियान्वयन के लिए भेज दिया जाता है। जनमत संग्रह द्वारा उसका विरोध न किया जाने पर, कानून की दी हुई तिथि के, यदि ऐसी कोई तिथि दी गई हो, अन्यथा प्रकाशन के पाँच दिन बाद लागू हो जाता है। यह ध्यान में रखने की बात है कि वित्तीय विधेयकों पर जनमत संग्रह की माँग नहीं की जा सकती। साधारण कानूनों पर तीन मास तक 30 हजार मतदाता जनमत संग्रह किये जाने की माँग कर सकते हैं। यदि जनमत संग्रह में किसी कानून को मतदाताओं का बहुमत प्राप्त न हो तो वह कानून रद्द हो जाता है, परन्तु वित्तीय विधेयक इस व्यवस्था से मुक्त हैं।

कैन्टनों की व्यवस्थापिका

(Legislative of Cantons)

प्रायः प्रत्येक प्रतिनिधिक कैन्टन में एक सदनीय (Unicameral) व्यवस्थापिका है जिसे महापरिषद् (Grand Council) या कैन्टन परिषद (Cantonal Council) कहा जाता है। इसके सदस्यों की संख्या और उनका कार्यकाल विभिन्न कैन्टनों में भिन्न भिन्न है। सदस्य संख्या प्रायः 50 से लेकर 200 तक होती है और कार्यकाल 2 वर्ष से 6 वर्ष तक होता है। व्यवस्थापिका का संगठन जनसंख्या के आधार पर किया जाता है और अधिकांश कैन्टनों में आनुपातिक प्रतिनिधित्व की निर्वाचन प्रणाली को अपनाया गया है। कैन्टन परिषद (Cantonal Council) कानून बनाती है, कर लगाती है, वार्षिक बजट स्वीकार करती है, संविधान में संशोधन करती है और सरकार का निरीक्षण करती है।

4

स्विट्जरलैंड की कार्यपालिका

(THE SWISS EXECUTIVE)

> स्विस संघ की सर्वोच्च निर्देशन तथा कार्यपालिका
> शक्ति सात व्यक्तियों की एक संघीय परिषद्
> द्वारा प्रयुक्त की जाती है।[1]
>
> —स्विस संविधान, धारा 95

स्विट्जरलैण्ड की कार्यपालिका को संघीय परिषद (Federal) कहा जाता है। यह विश्व की शासकीय संस्थाओं में सबसे अनोखी है। यह बहुल कार्यपालिका (Plural Executive) है, तथापि इसमें अध्यक्षात्मक और मन्त्रि-मण्डलीय व्यवस्था के गुण विद्यमान हैं। न तो यह व्यवस्थापिका का पथ-प्रदर्शन करती है और न उसके द्वारा पदच्युत की जा सकती है। साथ ही यह व्यवस्थापिका से स्वतन्त्र भी रहा है। इसका निर्वाचन किसी राजनीतिक दल-विशेष के कार्यक्रम को पूरा करने के लिए नहीं किया जाता। इसे किसी पक्ष की नीति निर्धारित नहीं करनी पड़ती, लेकिन फिर भी पार्टी के रंग से यह कुछ न कुछ रंगी अवश्य रहती है।

संघीय-परिषद् का संगठन

(Composition of the Federal Council)

सदस्य संख्या—जहां संसार के सभी देशों की कार्यपालिका सम्राट में या राष्ट्रपति में निहित होती है वहां स्विट्जरलैण्ड की कार्यपालिका-शक्ति सात सदस्यों वाली परिषद में निहित है।

चुनाव एवं कार्यकाल—परिषद के सातों सदस्यों का चुनाव संघीय-सभा द्वारा होता है। सदस्य चुन लिए जाने के बाद संघीय-सभा की सदस्यता त्याग देनी पड़ती है। चुनाव के सम्बन्ध में कुछ संवैधानिक प्रतिबन्ध तथा अभिसमय ये हैं—

(1) परिषद में एक कैंटन से सिर्फ एक व्यक्ति ही निर्वाचित हो सकता है।

1

(2) "ऐसे कोई भी लोग जो रक्त या वैवाहिक सम्बन्ध से प्रत्यक्ष वंश-परम्परा में कहीं तक भी तथा अप्रत्यक्ष परम्परा में चौथी पीढ़ी तक परस्पर सम्बन्धित हों, जिन्होंने बहिनों से विवाह कर लिया हो तथा जो बाद रख जाने के कारण परस्पर सम्बन्धित हों, एक समय पर परिषद् के सदस्य नहीं हो सकते।"

(3) एक अभिसमय के अनुसार दो सबसे बड़े और प्रमुख कंटन—बर्न तथा ज्यूरिच—का सदैव ही परिषद में प्रतिनिधित्व रहता है। यह विशेषाधिकार सबसे बड़े फ्रेंच भाषा-भाषी कंटन वॉड (Vurd) को भी प्राप्त है।

(4) एक अन्य अभिसमय द्वारा परिषद के संगठन को व्यापक प्रतिनिधित्व मिला है, जैसे प्रमुख धर्मावलम्बियों, भाषा-भाषियों तथा राजनीतिक दलों को समुचित प्रतिनिधित्व दिया जाता है।

वस्तुतः यह एक विचित्र बात है कि प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के घर स्विटजरलैण्ड में भी कार्यपालिका को लोग प्रत्यक्ष रूप से नहीं चुनते। किन्तु इसके दो विशेष कारण हैं। प्रथम, स्विस संसद के सदस्य जनता के इतने निकटतम सम्पर्क में रहते हैं कि उनके द्वारा किये गये निर्वाचन वास्तव में जनता द्वारा किये हुए निर्वाचन ही होते हैं। द्वितीय प्रत्यक्ष निर्वाचन के फलस्वरूप दलीय-दलदल पैदा हो जाने की सम्भावना से स्विस जनता बचना चाहती है।

संघीय-परिषद् का कार्य काल इतना ही है जितना संघीय-सभा का अर्थात् चार वर्ष। परिषद के सदस्य प्रत्येक साधारण चुनाव के बाद नये सिरे से चुने जाते हैं। यदि अवधि से पूर्व राष्ट्रीय-सभा विघटित करदी जाती है तो संघीय-परिषद भी विघटित हो जाती है और नयी संघ-परिषद संघीय-सभा के नये चुनाव के बाद चुनली जाती है। परिषद का कोई स्थान पदावधि से पहिले रिक्त हो जाता है तो उस स्थान को संघीय-सभा अपनी अगली बैठक में पदावधि के शेष समय के लिए भर लेती है।

परिषद के सदस्य के बारम्बार चुने जाने पर कोई संवैधानिक प्रतिबन्ध नहीं है। यही कारण है कि कुछ सदस्य तो देश की सेवा 25 से 30 वर्ष तक निरन्तर करते रहे हैं। योग्य सदस्यों के कारण ही यह परिषद एक शक्तिशाली और आदरणीय कार्यपालिका सिद्ध हुई है।

सदस्यों की योग्यताएं व वेतन—संविधान की धारा 96 के अनुसार संघीय परिषद के सदस्य उन सभी स्विस नागरिकों में से चुने जाते हैं जो राष्ट्रीय-सभा की सदस्यता की योग्यता रखते हैं।[1] धारा 97 यह प्रतिबन्ध लगाती है कि परिषद के सदस्य संघ या कंटन के अन्तर्गत न तो कोई अन्य पद ग्रहण कर सकते हैं और न कोई अन्य व्यवसाय ही कर सकते हैं। सदस्यों को संघीय निधि से 80 हजार फ्रैंक वार्षिक वेतन मिलता है। 55 वर्ष की उम्र वाले सदस्यों को पेन्शन दी जाती है बशर्ते कि वे 10 वर्षों तक सदस्य रह चुके हों।

कार्य प्रणाली—साधारणतया परिषद की बैठकें सप्ताह में दो बार होती हैं।

कार्यवाही गुप्त रहती है। गणपूर्ति के लिए चार सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक है। निर्णय बहुमत से होता है। अध्यक्ष को निर्णायक मत का अधिकार है। संघीय चांसलर (Federal Chancellor), जो व्यवस्थापिका तथा संघीय परिषद् के कार्यालय का अध्यक्ष होता है, परिषद् के सचिव के रूप में परिषद की बैठकों में उपस्थित रहता है। चान्सलर के बदले कोई उप चान्सलर भी उसके कार्यों को कर सकता है।

अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष (राष्ट्रपति एवं उप-राष्ट्रपति)—संघीय परिषद् अपने सदस्यों में से ही प्रतिवर्ष अपने सभापति और उप-सभापति का निर्वाचन करती है जिन्हें संघ का राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति कहा जाता है। दोनों ही पदों के लिए व्यक्ति दुबारा चुने जा सकते हैं किन्तु उनका चुनाव लगातार दो बार नहीं हो सकता। यही कारण है कि लगातार दो वर्ष नहीं लेकिन अनेक बार लोगों ने इन पदों पर कार्य किया है। उदाहरणार्थ श्री फिलिप इटर सन 19 9 1942 1947 और 1953 में परिषद के अध्यक्ष रहे। उपाध्यक्ष पद पर रहने के बाद व्यक्ति अध्यक्ष चुना जा सकता है। आजकल की परम्परा के अनुसार उपाध्यक्ष अर्थात उप-राष्ट्रपति का निर्वाचन ज्येष्ठता के सिद्धान्त (Seniority System) पर परिषद सदस्यों में से होता है। अध्यक्ष या राष्ट्रपति को परिषद के अन्य सदस्यों के समान ही वेतन मिलता है, केवल 10 हजार फ्रैंक अतिरिक्त भत्ते के रूप में और दिये जाते हैं।

अध्यक्ष की स्थिति न तो अमेरिकन राष्ट्रपति जैसी होती है और न ब्रिटिश प्रधानमन्त्री के समान। उसे कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं होते। अपने साथियों के समान वह भी एक विभाग का अध्यक्ष होता है। बराबर वालों में प्रथम होने के कारण ही उसे विशेष महत्व-रहित अध्यक्ष कहा जाता है। अध्यक्ष की शक्तियाँ बहुत ही कम हैं। देश के शासन के लिए अन्य सदस्यों की अपेक्षा किसी भी प्रकार वह अधिक उत्तरदायी नहीं है। समस्त निर्णय संघीय परिषद ही एकल सत्ता (Single Authority) के रूप में करती है। अध्यक्ष न किसी अधिकारी की नियुक्ति करता है और न कोई सन्धि वार्ता आदि ही कर सकता है। किसी विधेयक पर उसे निषेधात्मक अधिकार भी नहीं है। उसकी शक्ति की सीमा इतनी ही है कि वह संघ की सभाओं का सभापतित्व करता है, विभिन्न विभागों द्वारा भेजी गई रिपोर्टों को देखता है, विभिन्न प्रशासकीय विभागों के कार्य का सामान्य निरीक्षण करता है और किसी मामले पर बराबर का मतभेद हो जाने पर अपना निर्णायक मत (Casting Vote) देता है। उसकी स्थिति वास्तव में एक प्रतीकात्मक प्रधान की-सी है। वह सार्वजनिक उत्सवों पर स्विस प्रजातन्त्र का प्रतिनिधित्व करता है।

संघीय परिषद् के अध्यक्ष या संघ के राष्ट्रपति की स्थिति का सार लोवेल के इन शब्दों में प्रकट होता है कि "वह साररूप में राष्ट्र की कार्यपालिका समिति का अध्यक्ष होने के नाते यह जानने का प्रयत्न करता है कि उसके साथी क्या कर

रहे हैं ? वह राज्य के नाममात्र के अध्यक्ष के औपचारिक कर्त्तव्यों का पूरा करता है।' इतना होने पर भी अध्यक्ष पद प्रत्येक राजनीतिज्ञ के लिए सर्वोच्च पद है और उसे जन-सेवा का सर्वोच्च पुरस्कार समझा जाता है।

प्रशासकीय विभागों का वितरण—स्विस प्रशासन के सभी कार्यों को सात विभागों में विभाजित किया गया है और प्रत्येक विभाग एक संघीय परिषद के सदस्य के अधीन होता है जो उसके कार्य-संचालन के लिए सम्पूर्ण परिषद् के प्रति उत्तरदायी होता है। विभागों का वितरण औपचारिक रूप से परिषद् द्वारा किया जाता है किन्तु व्यवहारतः निर्वाचन के समय ही प्रायः स्पष्ट हो जाता है कि कौनसा सदस्य किस विभाग को संभालेगा ? एक विभाग के प्रमुख की अनुपस्थिति में काम करने के लिए प्रत्येक विभाग का प्रमुख दूसरे विभाग का उप-प्रमुख होता है।

परम्परा के अनुसार परिषद के सदस्य दुबारा निर्वाचित हो सकते हैं और उन्हें पहिले वाले विभाग ही सौंप दिये जाते हैं। फलस्वरूप विभागों के मन्त्री सीमित नहीं रहते, वरन् उनमें से अधिकांश अपने-अपने विभाग के विशेषज्ञ बन जाते हैं। वर्तमान समय में स्विट्जरलैण्ड के प्रशासनिक विभाग (Administrative Departments) ये हैं—राजनैतिक विभाग, गृह विभाग, सैनिक विभाग, न्याय एवं पुलिस विभाग, वित्त एवं प्रशुल्क विभाग, सार्वजनिक अर्थ विभाग, तथा डाक और रेल विभाग।

संघीय परिषद् के अधिकार एवम् कर्त्तव्य
(Powers and Functions of the Federal Council)

प्रशासकीय अधिकार एवम् कर्त्तव्य

संघीय परिषद स्विस संघ की सर्वोच्च कार्यपालिका शक्ति है और संघीय आज्ञाओं तथा कानूनों के अनुसार सम्पूर्ण संघ के प्रशासन का नियन्त्रण करने का अधिकार इसे प्राप्त है। यह निरीक्षण करती है कि संघीय संविधान तथा संघीय कानूनों का पालन हो रहा है अथवा नहीं और इसके लिये आवश्यक कार्यवाही करती है। प्रशासनिक क्षेत्र में संघीय परिषद का मुख्य कर्त्तव्य है कि वह संघ में शांति एवम् व्यवस्था का उचित प्रबन्ध करे तथा देश की बाह्य आक्रमणों एवम् आन्तरिक उपद्रवों से रक्षा करे। साथ ही स्विट्जरलैंड की स्वतन्त्रता और तटस्थता की सुरक्षा करे। यथार्थ में आंतरिक शान्ति और सुरक्षा की व्यवस्था कैन्टनों का उत्तरदायित्व है लेकिन यदि आंतरिक गड़बड़ी हो जाए तो संघीय-सभा (Federal Assembly) निर्णय करती है कि क्या कार्यवाही की जाए और संघीय परिषद उसकी आज्ञाओं को क्रियान्वित करती है।

आपातकाल की स्थिति में यदि संघीय संसद का सत्र अथवा कार्यकाल नहीं है तो संघीय परिषद को अधिकार है कि शान्ति एवम् व्यवस्था की स्थापना के लिए वह सेनाओं का प्रयोग जिस प्रकार उचित समझे, करे। किन्तु परिषद के लिये यह आवश्यक है कि यदि दो हजार से अधिक सैनिकों की उपयुक्त कार्य में

आवश्यकता पडी हो अथवा यदि उन सैनिको को तीन सप्ताहो से अधिक युद्धरत रहना पडा हो, तो तुर त ससद का सत्र (Session) आहूत करे।

सघीय ससद् (Federal Assembly) के कानूनो और अधिनियमो, सघीय न्यायालय के निणयो तथा विभिन्न क टनो के पारस्परिक झगडो के समाधान के लिये किये गए समझौता और मध्यस्थो को लागू कराने का प्रब ध भी सघीय परिषद करती है। वही सघीय प्रशासन के सब अधिकारियो एवम् कमचारियो के व्यवहार, काय एवम चरित्र का निरीक्षण करती है। जिन पदो पर सघीय-सभा, सघीय न्यायालय अथवा अन्य किसी सघीय प्राधिकारी को नियुक्ति का अधिकार नही दिया गया हो, उन पर सघीय-परिषद ही नियुक्ति करती है। व्यवहार म सघीय-परिषद अपने नियुक्ति सम्ब धी अधिकारो को प्रशासन के विभिन्न विभागो को प्रत्यायाजित कर देती है और विभिन्न निगमो एव अ य स्वत त्र सत्ताओ अथवा निकायो को सौप देती है।

स्विट् जरलड के वदशिक सम्ब धो के नियमो और उनकी देखभाल का अधिकार भी सघीय परिषद् को ही दिया गया है। सघीय-परिषद् ही उन विभिन्न सधियो का परीक्षण करती है जो या तो क टन आपस म करते हैं अथवा कै टन विदेशो के साथ करते ह। यदि वे सधिया उचित होती हैं तो उन पर स्वीकृति प्रदान कर दी जाती है, अ यथा सघीय-परिषद् अवाछित सधि या सधियो के विरुद्ध सघीय सभा मे अपील करती है और उ ह रद्द करन की सिफारिश करती है।

सघीय परिषद अपने समस्त कार्यो एवम कायकलापो की रिपोट सघीय सभा के समक्ष प्रत्येक साधारण सत्र म प्रस्तुत करती है। देश की आतरिक स्थिति के बारे म प्रतिवेदन करती है और सबग के विदेशो के साथ सम्ब धो के ऊपर भी आवश्यक प्रकाश डालती है। परिषद् सघीय सभा के विचाराथ ऐसे प्रस्ताव अथवा विधयक भी प्रस्तुत करती है जो उसके मतानुसार सव-साधारण के कल्याण की दष्टि से लाभदायक एवम आवश्यक हो। यदि कभी सघीय सभा या उसका कोई सदन विशप जानकारी प्राप्त करना चाहता है तो सघीय-परिषद आवश्यक रिपोट भजती है।

सघीय परिषद् के निय त्रण म समस्त सघीय सेना और उसके प्रशासन की शाखायें भी रहती है जिन पर कि सघ का नियन्त्रण है।

सघीय-परिषद् क टनो द्वारा पारित सभी कानूनो और उनके सभी अध्यादेशो का भी परीक्षण करती है। कै टनो के लिए यह आवश्यक है कि व अपने सभी कानूनो और अध्यादेशो को सघीय परिषद् मे स्वीकृत करावायें। साथ ही सघीय परिषद् क टनो के प्रशासन व शाखाओ पर भी निय त्रण रखती है जहा का निय त्रण परिषद के अधिकार क्षेत्र म हो। सघीय सभा की स्वीकृति के लिय आये हुए क टन सविधान म सशोधन के प्रस्तावो का सघीय परिषद् जाच करती है और विधान मण्डल म तत्सम्ब धी प्रस्ताव प्रस्तुत करती है। किसी भी कन्टन म उपद्रव

अथवा अशांति की स्थिति में, संघीय परिषद् ही संघीय हस्तक्षेप का निश्चय करती है और संघीय सभा का अनुमोदन प्राप्त कर आवश्यक कार्यवाही करती है।

विधायी अधिकार एवं कर्तव्य

विधि निर्माण में भी परिषद का काफी हाथ रहता है। संविधान की धारा 102 के अनुसार उसे अधिकार है कि वह कानूनों के विधेयक संसद में प्रस्तुत करे। वस्तुतः लगभग 95 प्रतिशत विधेयक संघीय परिषद द्वारा ही प्रस्तुत किये जाते हैं। सदस्यों के अपने विधेयक भी प्रायः पहिले परिषद के पास आवश्यक सुधार और सुझावों के लिए भेजे जाते हैं और तत्पश्चात् उन पर संसद विचार करती है।

संघीय परिषद को अध्यादेशों को जारी करने का एवं प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated Legislation) की प्रणाली के अन्तर्गत नियम बनाने का भी अधिकार है। परिषद के अध्यादेशों का एवं प्रदत्त व्यवस्थापन व्यवस्था के अन्तर्गत बनाये गये उसके नियमों का प्रभाव कानूनों के समान ही होता है और न्यायालयों द्वारा उन्हें मान्यता दी जाती है। अध्यादेशों के विषय में किसी भी प्रकार के जनमत संग्रह की व्यवस्था नहीं है, जबकि कानूनों के विषय में ऐसा है। अध्यादेशों के जारी करने की शक्ति संघीय परिषद की स्थिति और उसके महत्व को बड़ा सम्बल प्रदान करती है।

संघीय परिषद के सदस्य विधान सदनों की बैठकों में उपस्थित हो सकते हैं। वे अपने विचार, मत और सुझाव प्रस्तुत कर सकते हैं तथा विचाराधीन विषयों पर प्रस्ताव रख सकते हैं। परिषद् के सदस्य संघीय सभा के वाद विवाद में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं और संघीय सभा भी उनके विचारों को, मतों को तथा वाद-विवादों को बड़े आदर से सुनती है और उन्हें ग्रहण भी करती है। संघीय सभा की समितियों में भी संघीय परिषद के सदस्यों का स्थान और प्रभाव महत्वपूर्ण होता है। समितियों के प्रतिवेदनों को बनाने में मन्त्रियों अर्थात परिषद के सदस्यों के विशेष ज्ञान की सहायता समितियां अवश्य लेती हैं।

वित्तीय अधिकार एवं कर्तव्य

वित्तीय क्षेत्र में भी संघीय परिषद को पर्याप्त शक्तियां प्राप्त हैं। प्रति वर्ष संघीय बजट इसी के द्वारा तैयार किया जाकर संघीय सभा के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। इसी के द्वारा उसको सभा से स्वीकृत भी कराया जाता है। यह संघीय आय व्यय की देखभाल करती है और राजस्व संग्रहित करती है। वित्तीय व्यवस्था की सुचारुकता और सुचारु प्रबन्ध के लिए संघीय परिषद उत्तरदायी होती है। आय व्यय का समुचित हिसाब रखने का उत्तरदायित्व परिषद पर ही है।

न्यायिक अधिकार एवं कर्तव्य

संघीय परिषद को कुछ न्यायिक अधिकार भी प्राप्त हैं। वह कुछ विशेष प्रकार की अन्तराष्ट्रीय सन्धियों और संविधान की कतिपय धाराओं के अन्तर्गत उत्पन्न विवादों के सम्बन्ध में की गई अपीलों पर निर्णय देती है। संघीय रेलवे प्रशासन एवं विभिन्न प्रशासकीय विभागों के निर्णयों के विरुद्ध की गई अपीलों की

भी सुनवाई करती है। इस सम्बन्ध में यह याद रखने की बात है कि संघीय परिषद् अन्तिम अपीलीय न्यायालय नहीं है, इसके निर्णय के विरुद्ध अपील संघीय न्यायालय तथा संसद को की जा सकती है। क्षमादान (Pardon) का अधिकार अन्य देशों में प्राय कार्यपालिका को प्राप्त होता है परन्तु स्विस संघीय परिषद को यह अधिकार प्राप्त नहीं है।

संकटकालीन अधिकार एवं कर्तव्य

संविधान के द्वारा संघीय परिषद को कोई संकटकालीन विशेष अधिकार नहीं दिये गये हैं परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध, आर्थिक मंदी या ऐसे ही अन्य संकट के समय संघीय सभा अपने सब अधिकार संघीय परिषद् को सौंप सकती है और ऐसा कई अवसरों पर हो चुका है। उदाहरणार्थ, 1849, 1853, 1859 और 1870 में देश की तटस्थता की रक्षार्थ, 1914 तथा 1939 में विश्व युद्ध के समय राष्ट्र की तटस्थता, स्वतन्त्रता एवं आर्थिक हितों की रक्षा के लिए और 1930 में आर्थिक संकट का सामना करने के लिए संघीय परिषद को 'पूर्णाधिकार' सौंपे गये थे।

लोवेल (Lowell) के शब्दों में यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि "संघीय परिषद को मुख्य शक्ति स्रोत कहा जा सकता है और निश्चित रूप से यह राष्ट्रीय सरकार का सन्तुलन चक्र है।"

संघीय परिषद् की विशेषताएं

(Unique Features of the Federal Assembly)

वस्तुत संघीय परिषद की स्थिति विश्व में अनूठी और विशिष्ट है। यह न तो विशुद्ध रूप से ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल से ही मिलती है और न अमेरिका के अध्यक्षात्मक कार्यपालिका के ही समान है, फिर भी इसमें दोनों के गुण और लक्षण विद्यमान हैं।

बहुल कार्यपालिका

स्विस कार्यपालिका एक बहुल कार्यपालिका (Plural Executive) है। इसकी तुलना में ब्रिटेन, अमेरिका आदि में कार्यपालिका एकल (Singular) है। वहां कार्यपालन के सम्बन्ध में अन्तिम उत्तरदायित्व एक ही व्यक्ति पर अर्थात् प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति पर होता है। इसके अतिरिक्त एकल कार्यपालिका वाले देशों में मन्त्रिमण्डल के सदस्यों में से किसी एक की स्थिति अन्य की तुलना में अधिक महत्व की होती है लेकिन संघीय परिषद् इन सबसे अनूठी है क्योंकि कार्यपालन शक्ति एक व्यक्ति में निहित न होकर व्यक्तियों के एक समूह में निहित है जो सब एक दूसरे के बराबर के पद के हैं। यहां तक कि परिषद का अध्यक्ष भी कोई पदोपाधिकार नहीं रखता। परिषद एक मण्डलीय संस्था के समान है जिसके अध्यक्ष की स्थिति बराबर वालों में से एक की है। अपने साथियों को चुनने अथवा हटाने का उसे कोई अधिकार नहीं होता है।

संसदीय और अध्यक्षात्मक प्रणालियों का मध्य मार्ग

स्विस कार्यपालिका का दूसरा गुण यह है कि यह न तो संसदात्मक है और न अध्यक्षात्मक, वरन उसमें दोनों पद्धतियों की विशेषताओं का सम्मिश्रण है। इसमें दोनों पद्धतियों के गुणों को अपनाने और अवगुणों से बचने का प्रयत्न किया गया है। यह संसदीय इसलिये है कि (क) उसके सदस्यों का निर्वाचन व्यवस्थापिका द्वारा और प्रायः व्यवस्थापिका में से ही होता है, (ख) उसके सदस्यों को व्यवस्थापिका की बैठकों में उपस्थित रहने और विधेयकों को प्रस्तुत करने का अधिकार है, (ग) उसके सदस्य ही व्यवस्थापिका से विधेयक पारित करवाते हैं। स्विस कार्यकारिणी असंसदीय इसलिये है क्योंकि—(क) उसके सदस्य व्यवस्थापिका के सदस्य नहीं होते। कार्यकारिणी के सदस्य चुन जाने के बाद वे व्यवस्थापिका के पदों से अलग हो जाते हैं, (ख) उसका कार्यकाल निश्चित है क्योंकि व्यवस्थापिका सभा में अपनी हार हो जाने पर यह पदच्युत नहीं होती और न ही सघ के प्रधान अधिशासी को उन्हें अपने पद से अलग करने का अधिकार है।

उत्तरदायित्व और स्थायित्व का स्वस्थ मिश्रण

स्विस संघीय परिषद के उत्तरदायित्व और स्थायित्व का बड़ा उपयोग एवं स्वस्थ योग है। संघीय परिषद व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी है—इस अर्थ में कि उसके सदस्य प्रश्नों प्रति प्रश्नों का उत्तर देते हैं और सरकार की नीति का औचित्य सिद्ध करते हैं। कार्यकारिणी पर व्यवस्थापिका का नियन्त्रण भी होता है। व्यवस्थापिका कार्यकारिणी को विशेष नीति अपनाने और कार्य करने के लिए आदेश दे सकती है और उनको मानना उसके लिये अनिवार्य है। लेकिन उत्तरदायित्व केवल यहीं तक सीमित है क्योंकि ब्रिटिश प्रणाली के समान व्यवस्थापिका कार्यकारिणी को पदच्युत नहीं कर सकती। यदि किसी विषय पर कार्यकारिणी के सदस्य हार जाते हैं तो वे इंगलैंड और फ्रांस के मन्त्रियों की तरह पद त्याग नहीं करते। वे अपनी माग को छिपा लेते हैं तथा व्यवस्थापिका के निर्णय को मान लेते हैं और यह कार्य अत्यन्त सरलता से कर लिया जाता है। मुनरो ने इसी बात को प्रकट करते हुए कहा है कि "संघीय परिषद विधि-निर्माण के कार्य में पूर्ण सक्रिय रूप से भाग ले परन्तु यदि उसका सुझाव न माना जाए तो वह अपना अपमान भी न समझे—ऐसी आशा संघीय परिषद से की जाती है।"

निर्दलीय चरित्र

मन्त्रिमण्डलीय शासन में संयुक्त सरकारें (Coalition Government) असाधारण काल में ही संगठित की जाती हैं किन्तु संघीय परिषद में व्यवस्थापिका के लगभग सभी प्रमुख दल प्रतिनिधित्व करते हैं। परिषद जो कुछ भी करना चाहे, वह किसी दल के यन्त्र के रूप में नहीं करती। उसके सदस्य परिषद की बैठकों में भी और संसद की बैठकों में भी अपने अपने मत व्यक्त करने के लिए पूर्ण स्वतन्त्र होते हैं। इतना ही नहीं, आवश्यकता पड़ने पर वे संसद में अपने साथी सदस्यों के निर्णयों के विरुद्ध भी बोल सकते हैं। इस प्रकार स्विटजरलैण्ड में यह एक विचित्र

किन्तु जादश व्यवस्था है कि सघीय परिपद् मे और सघीय सभा मे जो कुछ भी होता है वह प्राय दल व दी की सीमा से उठकर होता है और उसका उद्देश्य राष्ट्रीय हितो की साधना करना होता है।

व्यवस्थापिका द्वारा निर्वाचन

जहा अमेरिका म कायपालिका के मन्त्री राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किए जाते है और ब्रिटन म व राजा द्वारा प्रधानमन्त्री के परामश स नियुक्त किये जाते हैं, वहा स्विटजरलैण्ड म कायपालिका के सदस्य व्यवस्थापिका सभा द्वारा चुने जाते है।

विशेषज्ञो का मन्त्रीमण्डल

स्विस सघीय परिपद की अन्तिम विशेषता यह है कि उसमे मन्त्रीगण प्राय. नौसिखिये नहा रहते। सदस्यो के बारम्बार निर्वाचन हो जाने के कारण उन्हे लम्बे समय तक राजनीतिक अनुभव और प्रशासनिक योग्यता प्राप्त करने का अवसर मिलता है। इसी कारण उचित निणय और कत्तव्य परायणता आदि के विशिष्ट गुण उनमे पाये जाते है। सघीय सभा सघीय परिपद् म शासन सम्बन्धी सभी विपयो मे विचार विमश करती है और प्राय उसके परामश की अवहेलना करने का साहस भी नही करती। जनता को भी यह पूरा विश्वास रहता है कि सघीय परिपद् निरन्तर जनकल्याण मे निमग्न है और स्वाथपरता तथा दलबन्दी के प्रभाव से ऊपर है। स्विटजरलण्ड म ऐसे उदाहरण हैं कि सघीय परिपद् के सदस्य 25 से 30 वष तक पदासीन रहे हैं। स्वाभाविक है कि ऐसे सदस्य अपने विपयो के विशेपज्ञ बन जाते हैं। इसीलिए लावेल ने कहा है कि "स्विटजरलैण्ड म परिपद् के सदस्य अपने-अपने विभागो के राजनीतिक अध्यक्ष और प्रमुख उपसचिव दोना होते हैं।"

यद्यपि स्विस कायकारिणी अपनी विशेपताओ के कारण बहुत ही अनूठी और प्रशसनीय है तथापि उसमे कुछ दोप भी है। कायकारिणी के सदस्य न किसी एक नेता के प्रति वफादार होते हैं और न उनम पारस्परिक एकता की भावना ही होती है। प्राय एसा भी होता है कि कायकारिणी के सदस्य शासन की बागडोर अपनी अपनी ओर खीचते हैं और शासन नीति म मतभेद उत्पन्न हो जाता है। ब्रिटेन जैसी मन्त्रीमण्डलीय एकता स्विटजरलैंड म विकसित नही हो पाती।

सघीय परिपद् का सघीय सभा से सम्बन्ध

(Relation of the Federal Council with the Federal Assembly)

स्विट्जरलैण्ड म सघीय कायकारिणी का व्यवस्थापिका से सम्बन्ध अन्य देशो की अपेक्षा नितान्त भिन्न है। न तो स्विस कायपालिका अमेरिका की तरह व्यवस्थापिका से पूणतया स्वतन्त्र ही है और न ब्रिटन की तरह उसका अग ही है। स्विट्जरलैंड में दोनो ही देशो के सविधानो की अच्छी बातो का ग्रहण किया गया है।

स्विस कायपालिका के सदस्यो का चुनाव वहाँ की व्यवस्थापिका

प्राय व्यवस्थापिका के सदस्यो मे से ही किया जाता है। किन्तु व्यवस्थापिका मे चुन जाने के बाद उन्हे व्यवस्थापिका की सदस्यता से त्याग-पत्र दे देना होता है। कार्यपालिका के सदस्य व्यवस्थापिका द्वारा चुने तो जाते हैं तथापि वे उसके द्वारा हटाये नही जा सकते। पदच्युति के सम्बन्ध मे उन्हे व्यवस्थापिका से कोई भय नही रहता। कार्यपालिका के सदस्य व्यवस्थापिका के सदस्य न होने पर भी व्यवस्थापिका के अधिवेशनो मे भाग लेते हैं, उनमे विधेयक प्रस्तुत करते है, विधेयको को वहा से पारित भी करवाते है और अपनी योग्यता एव अनुभव के कारण व्यवस्थापन कार्य मे व्यवस्थापिका का पर्याप्त पथ प्रदर्शन करते हैं। साथ ही व्यवस्थापिका को यह अधिकार है कि वह कार्यपालिका के कार्यो की आलोचना कर सकती है उन पर वाद विवाद कर सकती है, मन्त्रियो से प्रश्न पूछ सकती है और यदि आवश्यक समझे तो उनके किसी भी कार्य या प्रस्ताव को अस्वीकृत कर सकती है। कार्यपालिका अपने कार्यों के लिए सघीय सभा के सामने जवाबदेय है। यह आवश्यक है कि वह अपने उन सब कार्यो का विवरण साधारणत व्यवस्थापिका को दे जिनका विवरण वह चाहे और उन सब प्रश्नो का उचित उत्तर दे जो व्यवस्थापिका द्वारा उससे पूछ जावें। परन्तु यदि व्यवस्थापिका कार्यपालिका के कार्यों से असहमति प्रकट करे या कार्यपालिका की आलोचना करे अथवा उसके किसी भी कार्य को, चाहे वह कितना ही महत्वपूर्ण क्यो न हो, अस्वीकृत कर दे, तो कार्यपालिका का त्याग पत्र देने की कोई आवश्यकता नही होती। उसके लिए वाछनीय यही है कि वह व्यवस्थापिका की आलोचना से लाभ उठाकर अपने कार्य और अपनी नीति म सुधार करे तथा व्यवस्थापिका द्वारा किए गए "असम्मान को अपनी जेब मे रख ले और व्यवस्थापिका की इच्छा शक्ति के सम्मुख झुक जाए।"

प्रश्न यह उठता है कि उत्तरदायित्व की ऐसी निराली व्यवस्था स्विटजरलैंड मे क्यो रखी गई है। डायसी (Dicey) के अनुसार इसका 'मूल कारण स्विस लोगो का प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के प्रति अगाध प्रेम है। स्विस लोग एक ऐसी व्यवस्था के पक्षपाती है जिसमे लोकतन्त्रात्मक मान्यताओ को अधिकाधिक व्यवहार म लाया जाय और प्रशासकीय शक्ति का वास्तविक प्रयोग अधिकाधिक जनता के हाथ लगे। इसी कारण उन्होने अनेक बातो के निर्णय के लिए जनमत सग्रह की व्यवस्था रखी है और मन्त्रीमण्डलीय उत्तरदायित्व की भी ऐसी व्यवस्था रखी है कि जिसमे मन्त्रिपरिषद अर्थात स्विस कार्यपालिका जनता की प्रतिनिधि सघीय सभा के निर्णयो को कार्यान्वित करने का यन्त्र बनी रहे, ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल की भाति अधिनायक न बन जाय। डायसी के मतानुसार स्विस कार्यपालिका के निराले उत्तरदायित्व का दूसरा कारण स्विस लोगो का यह विश्वास है कि परिषद के सदस्य उनसे भिन्न मत के होते हुए भी, यदि उनके निर्णयो को उचित रूप से कार्यान्वित करते रहते हैं तो उनके मत की भिन्नता का, व्यवस्थापिका को अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न नही बनाना चाहिए और मतभेदो के होते हुए भी व्यवस्थापिका का परिषद् को काम करते रहने देना चाहिए। डायसी की मान्यता

है कि स्विस लोग राजनीति को एक व्यवसाय मानते हैं, अत उन्हें केवल इस बात की परवाह रहती है कि उस व्यवसाय को पालनेवाले परिषद् के सदस्य कार्य कुशल बने रहें। यदि वे कार्यकुशल हैं तो व्यवस्थापिका के लिए इस बात का कोई महत्व नही होना चाहिए कि उनके मत व्यवस्थापिका की इच्छा से कितने भिन्न हैं? ब्राइस (Bryce) का विचार यह है कि "स्विस जनता की दृष्टि से मतो की भिन्नता न केवल स्वाभाविक है बल्कि आवश्यक है। उनका विश्वास है कि भिन्न भिन्न मतो के मथन के परिणामस्वरूप जो निर्णय किया जाता है उसका स्वरूप अधिक विवेकपूर्ण तथा लोकतन्त्रात्मक होता है।' अत यदि सघीय परिषद और सघीय सभा मे मत-भेद विद्यमान हैं तो दोनो मे से किसी को भी एक दूसरे के प्रति रुष्ट नही होना चाहिए। उन्हें तो इसी भावना से कार्य करना चाहिए कि उन सबका ध्येय राष्ट्रीय हित है।

यह निष्कर्ष निकालना भ्रामक होगा कि सघीय परिषद की स्थिति महत्वहीन है और वह सघीय सभा की सेविका है। सांविधानिक दृष्टि से भले ही सघीय परिषद शासन का एक स्वतन्त्र अथवा सहयोगी अग न होकर सघीय सभा की सेविका है परन्तु वास्तविक स्थिति ठीक इसके विपरीत है। वर्तमान मे लगभग सभी देशो मे व्यवस्थापिका की शक्ति मे ह्रास हो रहा है और कार्यपालिका के अधिकारो मे विकास। यह प्रवृत्ति स्विट्जरलैण्ड मे भी प्रभावी है। परिषद् के सदस्य अपने राजनीतिक दल के प्रभावशाली नेता होते हैं और वे वास्तविक रूप से व्यवस्थापिका मे जनमत का प्रतिनिधित्व भी करते हैं। वे स्थाई रूप से वर्षो तक पदासीन रहने के कारण अनुभवी, ज्ञानी और कुशल प्रशासनिक होते हैं। अत व्यवहार मे सम्पूर्ण प्रशासनिक एव विधायी कार्य उन्ही के नियन्त्रण और मार्ग-दर्शन मे चलता है। आज अन्य देशो की भाति, स्विट्जरलैण्ड मे भी विधायी एव वित्तीय उपक्रम सघीय परिषद के हाथ मे चला गया है। सघीय परिषद सघीय सभा का "विधायी प्रारूप बनाने वाली प्रतिष्ठित विभाग" (Glorified Legislative Drafting Bureau) हो गई है। परिषद पर सघीय सभा का नियन्त्रण शिथिल पडता जा रहा है। व्यवहार मे परिषद अपनी इच्छानुसार विधेयक पारित करवा लेती है। प्रशासन का सचालन वह प्रत्यक्ष रूप से स्वय करती है। सकटकाल मे तो उसकी शक्ति प्राय असीमित हो जाती है। सघीय परिषद की इसी प्रभावपूर्ण स्थिति की ओर सकेत करते हुए ह्यूज ने कहा है कि जो आज सघीय परिषद् सघीय सभा की कार्यकारिणी समिति (Executive Committee) न हो कर राष्ट्र की कार्यपालिका (National Executive) है। ब्राइस ने ठीक ही कहा है कि "वैधानिक दृष्टि से व्यवस्थापिका की सेवक होते हुए भी व्यवहार मे सघीय परिषद् ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के बराबर एव फ्रेंच मन्त्रिमडल से अधिक शक्तियो का प्रयोग करती है। वह पथ प्रदर्शक भी है और साधन भी। बहुधा वह सुझाव भी देती है और मसविदा भी तयार करती हैं।'

स्विस सघोय कार्यपालिका का ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल और अमेरिकन कार्यपालिका से तुलना

(The Swiss Federal Executive Compared with the British Cabinet and American Executive)

स्विस कायपालिका के सम्ब ध मे यह कहा जाता है कि वह न ता पूणतया ब्रिटिश ससदीय प्रणाली के ही अनुसार है और न अमेरिकन अध्यक्षात्मक प्रणाली से मेल खाती है। उगम इन दानो प्रणालिया से मौलिक असमानताएँ विद्यमान हैं, पर साथ ही समानताए भी पाई जाती हैं।

सगठन सम्ब धी तुलना

स्विस कायपालिका ब्रिटिश एव अमेरिकन मन्त्रिमण्डल स अत्यत छाटी है और इसके सदस्यो की सख्या भी निश्चित है। ब्रिटन म प्रधानमन्त्री अपने सहयोगियो की सख्या का निर्धारण करता है और अमेरिका म राष्ट्रपति आवश्यकतानुसार अपने मन्त्रिमण्डल के सदस्या म हेरफेर कर सकता है जबकि स्विस कायपालिका के अध्यक्ष को एसा कोई अधिकार नही होता। स्विट्जरलण्ड और ब्रिटेन दोनो देशो मे कायपालिका के सदस्य ससद के सदस्यो म से ही लिये जाते है तथापि जहा ब्रिटेन मे सामान्यत एक ही दल के सदस्य चुने जाते हैं वहा स्विटजरलैण्ड म वे विभिन्न दलो के होते हैं। अमेरिका म यह आवश्यक नहा है कि मन्त्रिगण काग्रेस मे से ही लिए जाए।

कायकाल सम्ब धी तुलना

स्विस कायपालिका की अवधि चार वष के लिए निश्चित होती है क्योंकि पदच्युति के सम्ब ध म वह व्यवस्थापिका के प्रति अनुत्तरदायी है। इसके विपरीत ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल ससद के विश्वास पर झूलता रहता है। अमेरिकन कायपालिका भी व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नही होती, किन्तु मन्त्रिगण पूणरूप से राष्ट्रपति के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

उत्तरदायित्व सम्बन्धी तुलना

स्विस कायपालिका ने ब्रिटिश शासन पद्धति के उत्तरदायित्व को तो ग्रहण किया है परन्तु पद त्याग के अथ म उसको नही लिया है। ब्रिटिश ससद की भाति ही स्विस व्यवस्थापिका भी कायपालिका पर प्रश्नो, प्रतिप्रश्नो, प्रस्तावो, निणयो और अन्य आदेशो द्वारा नियत्रण रखती है। कायपालिका के सदस्य व्यवस्थापिका सभाओ मे उपस्थित होते हैं, वाद-विवादो म भाग लेते हैं, विधेयक प्रस्तुत करते हैं और पुन उन्हे पारित कराने का उत्तरदायित्व भी वहन करते हैं। लेकिन ब्रिटिश मन्त्रि-मण्डल के समान स्विस मन्त्री व्यवस्थापिका द्वारा अविश्वास प्रस्ताव के शिकार नही बनते। जहा ब्रिटेन म मन्त्रिमण्डल लाकसभा के विश्वासपर्यन्त पदासीन रह सकता है वहा स्विस कायपालिका के सदस्या का

व्यवस्थापिका में किसी विधेयक पर हार हो जाने पर पदत्याग नहीं करना पड़ता। स्विस कार्यपालिका व्यवस्थापिका की इच्छा को सहर्ष स्वीकार कर लेती है। अमरिकन कार्यपालिका भी काँग्रेस के प्रति अनुत्तरदायी होती है। यह अन्तर अवश्य है कि स्विस कार्यपालिका के सदस्यों की भाँति अमेरिका में मन्त्री अथवा सचिव व्यवस्थापिका में उपस्थित नहीं होते और उसकी किसी कार्यवाही में प्रत्यक्ष रूप से कोई भाग नहीं लेते।

कार्यपालिका के अध्यक्ष-पद की तुलना

स्विस कार्यपालिका के प्रधान की स्थिति 'बराबर वालों में एक' की है जबकि ब्रिटिश प्रधानमन्त्री 'समकक्षों में प्रथम' होता है और अमरिकन राष्ट्रपति अपने मन्त्रिमण्डल का 'स्वामी'। स्विस कार्यपालिका का अध्यक्ष ब्रिटिश प्रधानमन्त्री के समान अपने मन्त्रियों का चुनाव नहीं करता और न ही विधानमण्डल का नेतृत्व करता है। इसी प्रकार की गौण स्थिति अमेरिकन राष्ट्रपति की तुलना में है। अमरिकन राष्ट्रपति कार्यपालिका-परिवार का प्रमुख होता है। मन्त्रियों का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व राष्ट्रपति के प्रति माना जाता है। स्विटजरलैण्ड में कार्यपालिका के अध्यक्ष की स्थिति ऐसी नहीं है। एक बड़ा अन्तर यह है कि अमरिकन राष्ट्रपति का निर्वाचन वहाँ की जनता द्वारा प्रत्यक्ष रीति द्वारा किया जाता है जबकि स्विस कार्यपालिका का निर्वाचन व्यवस्थापिका द्वारा होता है। केवल अध्यक्ष का ही नहीं वरन कार्यपालिका के अन्य सदस्यों का निर्वाचन भी संघीय व्यवस्थापिका ही करती है। ब्रिटेन में सम्राट या साम्राज्ञी द्वारा लोकसभा के बहुमत के नेता को प्रधानमन्त्री पद के लिए आमन्त्रित करना होता है और उसके द्वारा बतलाये गये अन्य व्यक्तियों को मन्त्री नियुक्त करना पड़ता है। यदि कोई मन्त्री संसद का सदस्य न हो तो छः माह के भीतर निर्वाचन लड़कर उसे सदस्य बनना पड़ता है अन्यथा मन्त्री पद से हाथ धोना पड़ता है।

दलीय सम्बन्धों का अन्तर

स्विस कार्यपालिका के सदस्यों का निर्वाचन दलीय आधार पर नहीं होता। उसमें सभी दलों के सदस्य होते हैं। वह दलीय भावना से प्रायः ऊपर उठी हुई होती है और बहुमत की आवाज की ही नहीं वरन राष्ट्र और देश की सर्वोत्तम सेवी होती है, किन्तु अमेरिका और ब्रिटेन दोनों ही में कार्यपालिका के सदस्यों का निर्वाचन प्रायः पूर्णतः दलीय आधार पर होता है। ये अपने पदों पर रहते हुए भी अपने दल के पक्ष में कार्य करते हैं।

कार्यपालिका के विभागों की वितरण सम्बन्धी तुलना

स्विटजरलैंड में कार्यपालिका के सात विभाग होते हैं जो सातों सदस्यों में विभाजित कर दिए जाते हैं। विभागों का वितरण औपचारिक रूप से परिषद द्वारा किया जाता है और यह परम्परा है कि जो सदस्य दुबारा निर्वाचित होते हैं उन्हें प्रायः पहले वाला विभाग ही सौंप दिया जाता है। इस प्रकार कार्यपालिका

सदस्य अधिकांशतः अपने-अपने विभाग के विशेषज्ञ बन जाते हैं और वे लोक सेवा के अधिकारियों के हाथ की कठपुतली नहीं बन रहते।

परन्तु ब्रिटेन और अमेरिका में कार्यपालिका के विभागों का वितरण प्रायः व्यक्ति की योग्यताएं एवं कार्यकुशलता के आधार पर नहीं, बल्कि उसके राजनीतिक महत्व के आधार पर होता है। दूसरा अन्तर यह भी है कि दोनों देशों में विभागों के वितरण में शासन प्रमुख की इच्छा को ही प्राय प्रधानता मिलती है। स्विटजरलैंड में अध्यक्ष को इस सम्बन्ध में किसी तरह की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है।

स्पष्ट है कि स्विटजरलैंड की संघीय कार्यपालिका अर्थात् फैडेरल कौंसिल न तो ब्रिटेन की और न अमेरिका संघ की कार्यपालिका के समान है। वह वास्तव में दोनों व्यवस्थाओं का सम्मिश्रण है और उसमें दोनों व्यवस्थाओं के गुण और लक्षण निहित हैं। फिर भी वह ब्रिटेन की संसदीय प्रणाली के अधिक निकट है।

कैन्टनों की कार्यपालिका

(The Executive of Cantons)

संघीय कार्यपालिका के समान प्रत्येक कैंटन में एक सामूहिक या बहुल कार्यपालिका (Collegial Executive) होती है। इस कार्यपालिका को राज्य परिषद (Council of State) या लघु परिषद (Small Council) कहते हैं। जिसमें प्राय 5 से लेकर 11 सदस्य होते हैं। ये सभी सदस्य कैंटन के विधान मंडल द्वारा एक से लेकर पांच वर्ष तक के लिए निर्वाचित होते हैं। संघ की भांति कैंटनों में भी पुनर्निर्वाचन की प्रथा काफी प्रचलित है। संघीय परिषद (Federal Council) की भांति ही कैंटन की कार्यपालिका के भी सभी सदस्यों की स्थिति समान होती है। कार्यपालिका का प्रत्येक सदस्य शासन के विभाग का एक अध्यक्ष होता है। कार्यपालिका कैंटन के विधान मंडल के प्रति पूर्णरूप से उत्तरदायी होती है। संघीय परिषद की भांति उसे अधिकांश कानूनों का प्रारूप तयार करना पड़ता है, वह उन्हें प्रस्तावित करती है और व्यवस्थापिका का अनुगमन करने के साथ साथ उसका पथ-प्रदर्शन भी करती है।

5

स्विट्जरलैंड की न्यायपालिका

[THE SWISS JUDICIARY]

"समष्टि रूप से स्विट्जरलैंड के लोग जनता की इच्छा
के पालन अर्थात् लोकतन्त्र को संविधान की
इच्छा के पालन अर्थात् विधान तन्त्र
से ऊंचा समझते हैं।"

—हान्स हूबर

स्विट्जरलैंड की संघीय न्याय-प्रणाली में एकमात्र न्यायालय "संघीय न्यायालय" (Federal Tribunal) है, जो देश का सर्वोच्च न्यायालय है। संयुक्त राज्य अमेरिका की भांति स्विट्जरलैंड में संघीय धरातल पर सर्वोच्च न्यायालय के अतिरिक्त निम्न न्यायालय (Subordinate Courts) नहीं हैं। हां, संघीय न्यायपालिका के संगठन में उन अनेक निम्न-न्यायालयों को लिया जा सकता है जो केन्टनों की न्यायपालिकाओं के अंग हैं, क्योंकि संघ की ओर से [illegible] किन्हीं न्यायालयों की व्यवस्था नहीं है, वरन् केन्टनों के न्यायालय ही संघीय कानूनों को कार्यान्वित करते हैं।

संघीय न्यायालय (Federal Tribunal) अथवा बुन्देसगेरिख्त (Bundesgericht) की स्थापना सन् 1848 के संविधान द्वारा हुई थी और उसे [illegible] अत्यन्त सीमित अधिकार प्रदान किये गये। बाद में संविधान में कुछ संशोधन [illegible] जिनके द्वारा इसकी शक्ति में भी वृद्धि हो गई।

संघीय शासन के केन्द्र प्रधान कार्यालय जर्मन-भाषी केन्टन [illegible] 'बर्न' नगर में है, किन्तु संघीय न्यायालय आजकल स्थाई रूप से [illegible] नामक फ्रेंच भाषी केन्टन की राजधानी लासेन (Lausanne) [illegible] कार्य की अधिकता के कारण इसकी बैठक निरन्तर चलती [illegible]

की न्यायिक व्यवस्था का अध्ययन सविधान के विद्वानो के लिए विशेष महत्व नही रखता क्योंकि उसका वहा कोई ऐसा महत्वपूर्ण स्थान नही है जैसा कि अमेरिका मे सर्वोच्च न्यायालय का है।

सघीय न्यायालय
(Federal Tribunal)

सगठन

सघीय न्यायालय के सगठन मे सविधान कोई निश्चय नही करता है। यह अधिकार सघीय सभा (Federal Assembly) को सौंप दिया गया है जो अपने दोनो सदनो के सयुक्त अधिवेशन मे न्यायाधीशो का निर्वाचन करती है। सविधान द्वारा न्यायाधीशो की सख्या निश्चित नहीं करने के परिणाम स्वरूप यह सख्या निरन्तर परिवर्तनशील रही है। 1943 मे एक कानून द्वारा इनकी सख्या 9 से बढाकर 26–28 करदी गयी तथा उप-न्यायाधीशो की सख्या 11–13 की गयी। उप न्यायाधीश न्यायाधीशो की अनुपस्थिति मे उनके पद पर कार्य करते हैं। सघीय सभा सघ–न्यायालय के न्यायाधीशो मे से ही एक अध्यक्ष (President), एक उपाध्यक्ष (Vice President) का दो वर्ष के लिए निर्वाचन करते है। न्यायाधीशो का चुनाव इस भाति होता है कि वे तीनो राष्ट्र भाषाओ (फ्रेंच, जर्मन एवम् इटलियन) का प्रतिनिधित्व कर सके। यह न्यायाधीश 6 वर्ष के लिए चुने जाते है और इनका पुनर्निर्वाचन हो सकता है। पुन–निर्वाचन की व्यवस्था के कारण इनका कार्यकाल स्थायी सा ही हो गया है।

न्यायाधीशो को सघीय सभा अथवा सघीय परिषद की सदस्यता से वचित कर दिया जाता है। कोई भी स्विस नागरिक जो राष्ट्रीय परिषद (National Council) की सदस्यता की योग्यता रखता हो, न्यायाधीश नियुक्त किया जा सकता है। यह व्यवस्था है कि अपने कार्यकाल मे न्यायाधीश सघ अथवा कटन के अन्तर्गत किसी पद पर नही रह सकते हैं और न कोई व्यवसाय या नौकरी ही कर सकते है। परन्तु उप न्यायाधीशो पर यह प्रतिबंध लागू नही होता क्योंकि उन्हे कोई वार्षिक वेतन नही दिया जाता, केवल जिन दिनो वे कार्य करते है, उन्हे प्रतिदिन के हिसाब से कुछ भत्ता दिया जाता है। न्यायाधीशो का वेतन के रूप मे 45150 फ्रैंक प्रतिवर्ष मिलता है। इसके अतिरिक्त 3150 फ्रैंक भत्ते के रूप मे प्रतिवर्ष दिया जाता है। न्यायाधीशो को पेन्शन दिए जाने की भी व्यवस्था है।

सघीय न्यायालय का अपना सचिवालय (Chancellory) है जिसके सगठन और कर्मचारियो की नियुक्ति आदि का भार उसी पर है।

कार्य प्रणाली

न्यायालय की अतरग कार्य प्रणाली निश्चित करना, विविध विभागो का दायित्व तय करना और कार्य करने के लिए नियम आदि का निर्माण करने

लिए पूरे सघीय न्यायालय की बैठक होती है। इसके अतिरिक्त उन मामलो की सुनवाई भी पूरे सघीय न्यायालय द्वारा होती है जिनके विषय मे सघ के किसी कानून अथवा न्यायालय के किसी नियम के अनुसार ऐसी व्यवस्था कर दी जाती है।

कार्य की सुविधा की दृष्टि से स्विस न्यायालय को चार भागो मे बाट दिया गया है। इनमे दो विभाग दीवानी मुकदमो पर विचार करते हैं, तीसरा विभाग सार्वजनिक विधि सम्बन्धी विवादो पर विचार करता है और चौथा विभाग ऋण तथा दिवालिया से सम्बन्धित मुकदमो पर विचार करता है। इन सभी विभागो का सगठन पूरा न्यायालय दो वर्ष के लिए करता है।

फौजदारी मुकदमो पर भी विचार करने के लिए सघीय न्यायालय के चार विभाग किए गए हैं—1 फरियाद विभाग (Chamber of Complaints), 2 फौजदारी विभाग (Criminal Chamber), 3 सघीय दड विभाग (Federal Penal Court) एव, 4 सवैधानिक विभाग (Court of Cessation)। फौजदारी विभाग कभी कभी भ्रमणशील न्यायालय के रूप मे कार्य करता है। फौजदारी अभियोगो पर विचार करते समय ज्यूरियो की सहायता ली जाती है।

न्यायालय के कार्य सम्बन्धी नियम अधिक नही हैं और वे बहुत कठोर भी नही हैं। उनका सम्बन्ध न्यायाधीशो की गणपूर्ति (Quorum), न्यायालय की सार्वजनिक अथवा गुप्त बैठको आदि से है। न्यायालय का एक महत्वपूर्ण नियम यह है कि यदि कोई न्यायाधीश किसी प्रकार के पक्षपात का दोषी सिद्ध हो जावे तो वह न्यायाधीश के पद के लिए अयोग्य हो जाता है।

सयुक्त राज्य अमेरिका की भाति स्विस सघीय न्यायालय के पास अपने निर्णयो को लागू करने के लिए अपने कर्मचारी नही होते। इसके लिए सघीय न्यायालय केंटनो पर निर्भर रहते है और यदि कोई केंटन कर्तव्य-पालन से विमुख हो तो सघीय परिषद् (Federal Council) से आवश्यक कार्यवाही करने के लिए अनुरोध किया जा सकता है।

अधिकार क्षेत्र

अमेरिका और आस्ट्रेलिया की भाति स्विस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की सविधान मे व्याख्या नही की गई है, क्योकि स्विस विधान मण्डल को इसका अधिकार क्षेत्र बढाने का अधिकार है। फिर भी इसका क्षेत्राधिकार पर्याप्त विस्तृत है और उसे निम्नलिखित भागो मे विभाजित कर सकते है—

(1) दीवानी (Civil)
(2) फौजदारी (Criminal)
(3) सवैधानिक (Constitutional)
(4) प्रशासकीय (Administrative)

(1) **दीवानी क्षेत्राधिकार**—दीवानी मामलो मे सघीय न्यायालय का क्षेत्राधिकार प्रारम्भिक (Original) और अपीलीय (Appellate) दोनों प्रकार का है। प्रारम्भिक (Original) के रूप म सविधान की धारा 110 क अन्तगत निम्न प्रकार के दीवानी मामले न्यायालय के समक्ष निणय के लिए लाय जा सकते हैं —

(1) सघ तथा कैंटनो के मध्य उत्पन्न विवाद।

(2) सघ और किसी निगम (Corporation), कम्पनी अथवा साधारण नागरिको के मध्य उत्पन्न विवाद। इसम यह आवश्यक है कि वादी (Plaintiff) नागरिक अथवा निगम हो, सघ नही, और विवादग्रस्त राशि चार हजार फ्रैंक से कम न हो।

(3) विभिन्न कैंटनो के बीच पारस्परिक विवाद।

(4) किसी एक कैंटन तथा साधारण नागरिक अथवा निगम क बीच उत्पन्न विवाद, बशर्ते कि विवादग्रस्त राशि चार हजार फ्रैंक से कम न हो।

(5) विभिन्न कैंटनो मे कम्यूनो के बीच नागरिकता तथा अधिवास (Domicile) सम्बन्धी विवाद।

(6) यह उल्लेखनीय है कि प्रारम्भिक (Original) रूप म बहुत कम दीवानी मामले सघीय न्यायालय के समक्ष निणय हेतु लाये जाते हे। उदाहरणाथ सन् 1950 म ऐसे मामलो की कुल सख्या केवल 10 थी। इसका मुख्य कारण यह है कि अधिकाश दीवानी मामलो का निबटारा कैंटनो के न्यायालय म ही हो जाता है।

सघीय न्यायालय क समक्ष दीवानी अपीलीय (Appellate) क्षेत्राधिकार मे निम्नलिखित प्रकार के मामले आते है —

(क) 10 000 फ्रैंक या उससे अधिक धन राशि के मुकदमो की अपील इसम की जा सकती है परन्तु इसके लिए दोनो पक्षो की सहमति आवश्यक है।

(ख) कैंटनो के न्यायालयो क निणयो के विरुद्ध भी यह अपील सुनने का अधिकार रखता है। इस प्रकार के मुकदमो की अपील निणय क सुनाने के बाद 30 दिन के अन्दर करदी जानी चाहिए।

(2) **फौजदारी क्षेत्राधिकार**

सविधान की धारा 112 के अनुसार सघीय न्यायालय को निम्न प्रकार के फौजदारी मामलो म निणय करने का अधिकार है—

(1) सघ के विरुद्ध राजद्रोह (High Treason) तथा सघीय अधिकारियो के विरुद्ध विद्रोह अथवा हिंसा के मामले।

(2) अन्तर्राष्ट्रीय विधियो क विरुद्ध अपराध एव दुराचार के मामले।

(3) राजनीतिक अपराध अथवा दुराचार के एस मामले जिनके कारण सघीय सनिक हस्तक्षेप की आवश्यकता पडी हो।

(4) उच्च सरकारी कमचारियो द्वारा अपन अधीनस्थ कमचारियो के विरुद्ध लगाये गये फौजदारी आरोप।

(3) संवैधानिक क्षेत्राधिकार

संघीय न्यायालय को निम्न प्रकार के संवैधानिक मामलों के निर्णय का अधिकार है—

(1) संघीय और कैंटनों के प्राधिकारियों के पारस्परिक सक्षमता सम्बन्धी विवाद।

(2) संघ एवं कैंटनों के मध्य उत्पन्न संवैधानिक विवाद।

(3) कैन्टनों के मध्य पारस्परिक सार्वजनिक कानून सम्बन्धी विवाद।

(4) संविधान में सम्मिलित नागरिक अधिकारों के अतिक्रमण या सन्धि और समझौता की शर्तों की अतिक्रमण सम्बन्धी नागरिकों की शिकायतें—पर संघीय न्यायालय अपीलों को तब तक नहीं सुनता जब तक सम्बन्धित मामलों की सुनवायी कैंटनों के न्यायालयों द्वारा न की जा चुकी हो। व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा उस दशा में करता है जब उनका उल्लंघन कैंटनों की सरकारों द्वारा किया जावे। संघीय सरकार के कार्यों का पुनरावलोकन (Review) वह नहीं कर सकता और उसके कार्य की वैधानिकता व अवैधानिकता के विषय में वह कोई निर्णय नहीं दे सकता।

(5) कैंटनों के कानूनों का असंवैधानिक घोषित करने का अधिकार—संघीय न्यायालय को न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार प्राप्त नहीं है। इस सम्बन्ध में उसका अधिकार कैंटनों के कानूनों तक ही सीमित है। संघीय कानूनों की व्याख्या अवश्य वह कर सकता है लेकिन उनकी वैधानिकता अथवा अवैधानिकता के बारे में निर्णय देने का उसे कोई अधिकार ही नहीं है।

(4) प्रशासनिक क्षेत्राधिकार

स्विस संघीय न्यायालय प्रशासनिक अभियोगों, सरकारी कर्मचारियों के वैधानिक क्षमता सम्बन्धी विवादों, रेल प्रशासन सम्बन्धी विवादों, करारोपण सम्बन्धी प्रशासनिक मामलों आदि पर विचार करता है।

अन्त में, स्विस न्यायालय के अधिकारों का स्पष्ट चित्र केवल संवैधानिक उपबन्धों से ही नहीं मिल सकता। संविधान में उल्लिखित अधिकारों के अतिरिक्त संघीय कानूनों द्वारा भी न्यायालय के अधिकारों में वृद्धि की जा सकती है। संघीय सभा की स्वीकृति से कैंटनों के विधान मण्डल भी कुछ दीवानी मामले संघीय न्यायालय के क्षेत्राधिकार में रख सकते हैं। न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत होने वाले लगभग 95 प्रतिशत मामले इन वृद्धिगत अधिकार क्षेत्रों के अन्तर्गत ही आते हैं।

कैण्टनों की न्यायपालिका

(Judiciary of the Cantons)

संघीय कानूनों के क्रियान्वयन का दायित्व कैण्टनों के न्यायाधीशों पर ही है, अतः वे भी इस दृष्टि से संघीय न्यायपालिका के अभिन्न अंग हैं। दीवानी, फौजदारी और व्यापार सम्बन्धी कानूनों का एकीकरण हो जाने के बाद ही लगभग

सभी कैण्टनों के न्यायालय एक-से ही कानूनों के अनुसार न्याय-कार्य करते हैं, फिर भी न्यायालयों के ढाँचे आदि की व्यवस्था करना कैण्टनों के अधिकार क्षेत्र की बात है। इसीलिए विविध कैण्टनों के न्यायालय के ढाँचों में व न्याय-विधि में विभिन्नता पायी जाती है।

उच्च न्यायालय (Superior Cantonal Courts)

प्रायः प्रत्येक कैण्टन में न्याय प्रशासन के लिए एक उच्च न्यायालय (Superior Cantonal Court) होता है जिसमें 7 से 13 न्यायाधीश होते हैं। इनका निर्वाचन कैंटन की विधान सभा द्वारा होता है। उच्च न्यायालय को दीवानी और फौजदारी दोनों प्रकार के मुकदमों पर विचार करने का क्षेत्राधिकार है, परन्तु उसे कानूनों की संवैधानिकता पर विचार करने का अधिकार नहीं है। उच्च न्यायालय के अधीन कुछ दीवानी और फौजदारी न्यायालय हैं जो क्रमशः निम्न प्रकार हैं—

(क) दीवानी न्यायालय—दीवानी क्षेत्र में प्रायः प्रत्येक कैण्टन के उच्च न्यायालय के अधीन क्रमशः प्रादेशिक न्यायालय (District Court) व शांति न्यायाधीशों (Justices of Peace) के न्यायालय हैं। प्रादेशिक अथवा जिला न्यायालय (District Courts) का न्याय क्षेत्र एक जिला या अरण्डाइजमेंट होते हैं, जबकि सबसे नीचे के स्तर के शांति न्यायाधीश (Justice of Peace) के न्यायालय का न्याय क्षेत्र प्रायः कम्यून होता है।

निम्न-स्तर के न्यायालय से ऊपर के स्तर के न्यायालय का न्याय क्षेत्र वादों के मूल्य के अनुसार बढ़ता जाता है। इसके अतिरिक्त निम्न न्यायालय के निर्णयों के विरुद्ध अपीलों की सुनवायी भी ऊपर के न्यायालय करते हैं।

(ख) फौजदारी न्यायालय—फौजदारी क्षेत्र में सबसे नीचे के स्तर का न्यायालय पुलिस न्यायालय (Police Tribunal) होता है। कहीं-कहीं न्याय शांति न्यायाधीश के न्यायालय भी फौजदारी के सबसे नीचे के स्तर के न्यायालय का काम करते हैं। फौजदारी में भी जिला न्यायालय (District Court) होते हैं। सबसे उच्च-स्तर का न्यायालय ऊपर वर्णित उच्च न्यायालय (Superior Cantonal Court) होता है।

नीचे के स्तर के न्यायालय से ऊपर के स्तर के न्यायालय का न्याय क्षेत्र अपराध की गम्भीरता तथा दण्ड की मात्रा की अधिकता के आधार पर बढ़ता जाता है। कैण्टनों के उच्चतम न्यायालयों (Superior Cantonal Courts) के निर्णयों के विरुद्ध संघीय न्यायालय (Federal Tribunal) को अपील की जाती है।

कैण्टनों में न्यायाधीश स्पष्टतः निर्वाचित होते हैं। उनका निर्वाचन या तो जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से अथवा कैण्टनों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। न्यायाधीशों की सेवा की शर्तों आदि का निर्धारण कैण्टनों द्वारा ही किया जाता है। यह व्यवस्था है कि न्यायाधीश पुनर्निर्वाचित किये जा सकते हैं।

6

स्विट्जरलैण्ड के राजनीतिक दल
(POLITICAL PARTIES OF SWITZERLAND)

"स्विटजरलैंड के दलों की विचारधारा एवम् उनके सामाजिक संगठन में कोई अति उग्र प्रकार के अन्तर नहीं हैं।"
—कोडिंग

आधुनिक युग में राजनीतिक दल लोकतन्त्र की धुरी है। यद्यपि किसी भी लोकतान्त्रिक देश के संविधान में राजनीतिक दलों की सत्ता की कोई व्यवस्था नहीं की गयी है तथापि लोकतन्त्र का संचालन राजनीतिक दलों के अभाव में होना असम्भव सा है। स्विटजरलैंड विश्व का प्राचीनतम और अग्रणी लोकतान्त्रिक राज्य है जहां राजनीतिक दलों का हस्तक्षेप एक स्वाभाविक बात है। किन्तु आश्चर्य यह है कि वहां राजनीतिक दलों का इतना महत्व नहीं है जितना कि अन्य लोकतान्त्रिक देशों में पाया जाता है। मतदान के समय किसी दल की हार या जीत को विशेष महत्व नहीं दिया जाता। अन्य देशों के समान संगठित दलों की भी कमी है। प्रजातान्त्रिक राज्यों में दलीय व्यवस्था के जो गम्भीर दोष दिखाई देते हैं वे स्विटजरलैंड में नगण्य हैं। स्विस राज्य रूपी जहाज दलबन्दी की लहरों द्वारा कभी डगमगाया नहीं है। वहां अन्य देशों की तुलना में दलीय संघर्ष बहुत कम पेचीदा और दलीय भावना बहुत ही कम है। स्विटजरलैंड की यह विशेषता कुछ तो वहां के संविधान के कारण और कुछ स्विस नागरिकों के चरित्र के कारण है।

दुर्बल दलीय व्यवस्था के कारण
(Causes of Weak Party System)

1 स्विस कार्यकारिणी का स्थायीपन स्विस दलबन्दी की दुर्बलता और अभावनता का प्रमुख कारण है। अपने कार्यकाल में फेडरल कौंसिल के सदस्य हटाये नहीं जा सकते, अतः वे दलबन्दी के चक्कर में नहीं पड़ते। साथ ही कार्यकारिणी को हटाने के लिए जनता में भी दलबन्दी की भावनाएं उत्पन्न नहीं होती।

2 कार्यकारिणी अथवा फेडरल कौंसिल (संघीय परिषद) का निर्माण भी दलीय आधार पर नहीं होता और उससे दल का कार्य करने की आशा नहीं की जाती।

3 संघीय परिषद के सदस्य प्राय पुनर्निर्वाचित होते रहते हैं। अतः वहाँ दलबंदी का सवाल ही पैदा नहीं होता, क्योंकि दलबंदी तो वहीं जोर पकड़ती है जहाँ सत्ता को हथियाने के लिए होड़ व दौड़ लगती है।

4 दलबंदी सदैव भ्रष्टाचार प्रणाली (Spoil System) से जोर पकड़ती है, क्योंकि इसके द्वारा शक्ति प्राप्त करने पर शासक दल के लोगों को पदों पर भर दिया जाता है। सौभाग्यवश स्विटजरलैंड में यह प्रणाली नहीं है। प्रथम तो वहाँ पर नियुक्तियाँ ही योग्यता के आधार पर की जाती हैं और द्वितीय पदों की संख्या भी इतनी अधिक नहीं होती कि कोई दल अपने समर्थकों को भर सके।

5 स्विटजरलैंड में पदों के वेतन भी इतने नहीं हैं कि वे महत्वाकांक्षी मनुष्यों को आकर्षित कर सकें।

6 स्विटजरलैंड में व्यवस्थापिका अर्थात संघीय सभा की विधायी शक्तियाँ सीमित हैं और इस सीमित क्षेत्र में भी उसकी शक्ति अंतिम नहीं है, वहाँ अंतिम शक्ति जनता के हाथों में है। लोक-निर्णय, निबंध-उपक्रम तथा प्रत्याहरणता (Referendum, Initiative and Re call)—जनतंत्र के इन तीन अस्त्रों की प्रधानता के कारण दलबंदी को स्विटजरलैंड में अधिक स्थान नहीं मिल पाया है। इनके कारण वहाँ प्रत्यक्ष प्रजातंत्र प्रचलित है और सभी महत्वपूर्ण प्रश्न लोक निर्णय द्वारा तय किये जाते हैं। फलतः ऐसा कोई प्रश्न नहीं उठता कि कोई दल अपने किसी स्वार्थ-विशेष को लेकर दलीय चक्कर चलावे।

7 स्विटजरलैण्ड में वैधानिक एवम् विदेशी मामलों में कोई मतभेद नहीं होता, अतः दलगत तीव्रता पैदा होने की गुंजाइश नहीं रहती।

8 स्विस व्यवस्थापिका का अधिवेशन बहुत थोड़े दिनों तक चलता है। वह प्रायः एक महीने से अधिक नहीं चलता। इस अल्प अवधि में व्यवस्थापिका के सदस्य अपने कार्यों में ही इतने व्यस्त रहते हैं कि उनको दलबंदी के भँवर में फँसने का अवकाश ही नहीं मिलता।

9 स्विस नागरिकों में आर्थिक विषमता बहुत कम है। न धनी अधिक धनी हैं और न गरीब अधिक गरीब। इस निश्चिंतता के वातावरण में लोग दलबंदी के चक्करों में फँस कर अपना शांति भंग करने को उत्सुक नहीं रहते हैं।

10 स्विस जनता का चतुर, सरल एवम् देशभक्त चरित्र राष्ट्रीय एकता को घरेलू विरोधों से सुरक्षित रखता है। देश की भौगोलिक स्थिति भी जनता को पारस्परिक मतभेदों का भुगतान एवम् भली प्रकार संगठित रहने की प्रेरणा देता है। उनके चुनाव के समय अत्यन्त धर्म एवम् जाति से काम होता है। स्विटजरलैंड चारों तरफ से चार विशाल सैनिक शक्तियों द्वारा घिरा हुआ है। अतः उनके खतरे

से दूर रहने के लिए स्विस नागरिक दलबन्दी के चक्कर में पड़ कर अपने दिलों में अन्तर नहीं आने देते। वे नहीं चाहते कि उनकी शक्ति कमजोर पड़ जाए।

लार्ड ब्राइस ने स्विट्जरलैंड में दलबन्दी के अशक्त होने के अनेक कारण बतलाए हैं। उनके कथनानुसार "देश के सामने बहुत समय तक कोई बड़ी बड़ी समस्याएं न होने, आर्थिक व्यवस्था के प्रति सन्तुष्ट रहने, तथा प्राचीन धार्मिक मतभेद और वर्ग भेद के प्रति घृणा होने के कारण वहां पर प्रबल दलबन्दी नहीं पाई है। वहां पर व्यक्तिगत आकांक्षाओं तथा नेतृत्व ग्रहण करने की लालसाओं का अभाव है। वहां पर सार्वजनिक जीवन में व्यक्तियों के लिए बहुत कम आकर्षण है। बड़ी बड़ी समस्याएं सीधी जनता द्वारा तय कर ली जाती हैं। इन्हीं सब कारणों से दलबन्दी जो अन्य जनतन्त्रीय देशों में विशाल-धारा का रूप धारण कर लेती है, स्विट्जरलैंड में एक छोटी सी लहर ही पैदा कर पाती है।"

दल प्रणाली का संक्षिप्त इतिहास

(Brief History of the Swiss Party System)

यों तो बहुत पहले ही स्विस राजनीति में विभाजन उत्पन्न हो गये थे, किन्तु सन 1848 में संविधान के निर्माण के समय तक दलीय स्थिति स्पष्टतः दृष्टिगोचर हो चुकी थी। उस समय तीन दलों की नींव पड़ चुकी थी—(i) उदारवादी दल (Liberal Party), (ii) क्रांतिकारी या उग्रवादी दल (Radical Party), तथा (iii) कैथोलिक अनुदार दल (Catholic Conservative Party)। ये तीनों दल आज भी विद्यमान हैं।

उदार दल का निर्माण बुद्धिजीवियों, श्रमिकों और किसानों ने मिल कर किया था। ये लोग सन 1815 के समझौते (The Pact of 1815) द्वारा स्थापित सामंतिक व्यवस्था के विरोध में थे। सन 1830 के उदार दल के विशेष प्रयासों के फलस्वरूप ही अधिकांश कैंटनों में ऐसी व्यवस्था स्थापित हो सकी, जिसमें लगभग सभी को राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त थी। सन् 1832 में उदार दल का वाम पक्ष दल से अलग हो गया और उसने अपना नाम क्रांतिकारी लोकतान्त्रिक दल (Radical Democratic Party) रख लिया। इस दल का उद्देश्य एक ऐसे लोकतान्त्रिक राष्ट्रीय राज्य की स्थापना था, जिसमें सबको व्यक्ति का राजनीतिक स्वतन्त्रता मिल सके। उदार दल और क्रांतिकारी दल का विरोध करने के लिए एक नवीन 'कैथोलिक अनुदार दल' (Catholic Conservative Party) का उदय हुआ। सात कैथोलिक बहुमत दल वाले कैंटनों में इस दल के लोगों का पूर्ण प्रभाव था। सन् 1845 में सातों कैथोलिक कैंटनों ने अपना अलग संघ बनाया जिसका नाम साउन्डरबन्द (Sounderbound) रखा गया। इस संघ की स्थापना से गृहयुद्ध का सूत्रपात हुआ जिसे एक मास में ही समाप्त कर दिया गया। कैथोलिकों की हार वास्तव में राष्ट्रीय आन्दोलन की विजय थी। सन् 1848 में जब नवीन संविधान का निर्माण हुआ तो उदार दल एवं क्रांतिकारी दल के

कर उस प्रगति का प्रतीक बनाने का प्रयत्न किया और कैथोलिक दल के उग्र विरोध के बावजूद वे काफी हद तक उस समय सफल भी हुए।

परन्तु सन् 1848 के बाद उदारवादी और क्रांतिकारी दलों में सहयोग नहीं बना रह सका, क्योंकि उदारवादी उन सुधारों का समर्थन नहीं कर सके, जिन्हें क्रांतिकारी करना चाहते थे। क्रान्तिकारी दल को जनता का समर्थन प्राप्त हुआ और उस समर्थन के आधार पर क्रांतिकारी दल ने संविधान में सन् 1874 का संशोधन करवाया। तत्पश्चात् सन् 1919 तक क्रांतिकारी दल का प्रभुत्व चलता रहा, यद्यपि इसी मध्य 1890 में देश के राजनीतिक मंच पर समाजवादी दल (Socialistic Party) नामक एक नवीन दल का अभ्युदय भी हो गया। सन् 1918 में क्रांतिकारी दल का पुनर्विभाजन हुआ। इसके कुछ सदस्यों ने दल की ग्रामीण नीति से असंतुष्ट होकर एक नए दल "कृषक दल" का संगठन किया। सन् 1919 में एक जनमत संग्रह द्वारा जनता ने व्यवस्थापिका में प्रतिनिधित्व के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व (Proportional Representation) की प्रणाली स्वीकार की। फलस्वरूप सन् 1919 में चुनाव हुए और उसमें स्विस राजनीतिक दल प्रणाली का रूप बहुदल प्रणाली (Multi Party System) का हो गया।

उपर्युक्त कथोलिक, उदारवादी क्रांतिकारी, समाजवादी व कृषक दलों के अतिरिक्त स्विट्जरलैंड में और भी अनेक छोटे छोटे दल अस्तित्व में आये। सन् 1935 में स्वतन्त्र दल का जन्म हुआ। 1935 में युवा कृषक दल (Young Farmers Party) का जन्म हुआ। इसने कृषक दल से अलग होकर एक पृथक दल बनाया। सन् 1941 में प्रजातन्त्रवादी दल का उदय हुआ। इसके अतिरिक्त साम्यवादी दल भी अस्तित्व में आया।

स्विट्जरलैंड की दल प्रणाली का इस प्रकार जो बहुदलीय रूप बना, वह अब तक चला आ रहा है और किसी भी एक दल को इतना प्रभुत्व प्राप्त नहीं हुआ है कि उसे शासन सत्ता पर एकाधिकार प्राप्त हो सके।

दलों का संगठन
(Organisation of the Parties)

स्विटजरलैंड में ब्रिटेन, अमेरिका, सोवियत संघ आदि की तुलना में राजनीतिक दलों के संगठन अत्यधिक ढीले ढाले (Loose) हैं। यहां तक कि केन्टनों के दलीय संगठन भी संघीय संगठन के अधीन नहीं है। रेपार्ड ने कहा है कि "केवल समाजवादी दल को छोड़ कर स्विटजरलैंड में अन्य दलों के स्वतन्त्र राष्ट्रीय संगठन नहीं हैं।" वस्तुतः स्विस मतदाता दलों की अपेक्षा उम्मीदवारों के व्यक्तिगत गुणों को अधिक महत्व देने के अभ्यस्त हैं। अनेक सदस्य संघीय सभा में चुने जाने के उपरान्त यह निश्चय करते हैं कि वे किस दल से सम्बन्धित रहें। इसके अतिरिक्त सदनों में प्रतिनिधियों के बैठने का प्रबन्ध दल के अनुसार न किया जाकर प्रदेशों के

अनुसार किया जाता है। परन्तु यह सब कुछ होते हुए भी आधुनिक काल मे राजनीति मे केन्द्रीयकरण होने के साथ साथ दलो के सगठन में कुछ सुदृढता और नियमितता आने लगी है।

सगठन अथवा ढाचे की दृष्टि से सामा यत प्रत्येक दल के तीन प्रमुख अग हैं—डायट (Diet), केन्द्रीय समिति (Central Committee) एव कार्यकारिणी समिति (Executive Committee)। डायट दल की सर्वोच्च सभा होती है। इसकी बैठक वर्ष मे प्राय एक बार की जाती है जिसम दल की वार्षिक रिपोर्ट वार्षिक आय व्यय, समकालीन समस्याओ आदि पर दल के रुख और दल की नीतियो पर विचार विमर्श होता है और निर्णय लिए जाते हैं। केन्द्रीय समिति दल की कार्यकारिणी समिति होती है जिसका निर्वाचन प्रत्येक वर्ष डायट द्वारा होता है, परन्तु आकार बढ़ जाने के कारण यह एक छोटी कार्यकारिणी समिति (Executive Committee) का निर्वाचन करती है। दल के प्रमुख अधिकारियो मे अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, कोषाध्यक्ष आदि होते हैं।

विविध दलो की नीतिया
(Policies of different Parties)

कैथोलिक दल

इस दल को कैथोलिक अनुदार या रूढिवादी दल (Catholic Conservative Party) भी कहा जाता है। यह स्विट्जरलैड का एक अत्यन्त प्रमुख दल है। साउण्डरबन्द के युद्ध क समय से यह दल कैथोलिक चर्च की रीतियो नीतियो की रक्षा करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहा है। ग्रामीण कैण्टनो म कैथोलिक चर्च के प्रभाव को बनाए रखने के लिए यह दल कैण्टनो के अधिकारो का समर्थक और सघीय शक्ति के केन्द्रीयकरण का विरोधी रहा है। इस दल की निरन्तर यह चेष्टा रही है कि स्विस सविधान से उन भागो को निकाल दिया जाए जो चर्च के कार्यकलापो पर प्रतिबन्ध लगाने वाले हैं। यह दल सरकार के पारिवारिक सम्बन्ध और शिक्षा म हस्तक्षेप का भी विरोधी है। दल का विश्वास है कि सामाजिक शक्ति और अनुशासन तब ही सम्भव है जब कि धर्म और शिक्षा का प्रसार हो तथा उसका पूरा उत्तरदायित्व चर्च पर हो।

कैथोलिक दल व्यक्ति की स्वतन्त्रता के उस रूप का पक्ष पोषक है जिसके अन्तर्गत व्यक्तिगत सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार को असीमित माना जाता है। यह दल इस बात का विरोधी है कि लोक-कल्याण के नाम पर व्यक्ति को व्यक्तिगत सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार से वचित किया जाय और उस पर किसी भी प्रकार के प्रतिबन्ध लगाए जायें। आधुनिक काल मे इस दल मे एक समाजवादी पक्ष का और उदय हो गया है जो अधिक प्रगतिशील विचारो का है। इस पक्ष के प्रभाव के कारण कैथोलिक दल अब श्रमिको के सम्बन्ध म उदार विचार रखने लगा है और इसने श्रमिको के अधिकार, पारिवारिक भत्ता एव श्रमिक सघो का प्रोत्साहन जैसी बातो को अपने

कार्यक्रम में स्थान दे दिया है। इसके, श्रमिकों एवं छोटे रोजगार वाले लोगों के प्रति इस दल की सहानुभूति धीरे धीरे बढ़ती जा रही है। अपनी इसी प्रवृत्ति को प्रदर्शित करने के लिए, समय के अनुसार बहने की दृष्टि से यह दल अपने को अब कैथोलिक अनुदार दल (Catholic Conservative Party) के स्थान पर क्रिश्चियन समाजवादी अनुदार दल (Christian Social Conservative Party) कहने लगा है।

क्रांतिकारी दल

क्रान्तिकारी दल (Radical Party) कुछ मामलों में कथालिक दल का समर्थन करता है तो कुछ मामलों में समाजवादी दल का साथ देता है। इस तरह यह दल न तो अत्यधिक अनुदार ही है और न अत्यधिक प्रगतिशील ही।

क्रान्तिकारी दल का विश्वास है कि राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाने के लिए संघीय सरकार को शक्ति सम्पन्न बनाया जाय। परन्तु साथ ही यह कण्टनों के अधिकारों का एकदम कम कर दिये जाने के पक्ष में भी नहीं है, क्योंकि यह मुख्यतः कण्टनों का ही दल है और इसके समर्थक देश के सभी भागों तथा जनता के सभी वर्गों में पाये जाते हैं। वर्तमान में इस दल का झुकाव इसी ओर है कि जो अधिकार केन्द्र को प्राप्त है, उनका प्रयोग वह यथासम्भव कैण्टनों के साथ करे लेकिन यह सहयोग इस तरह हो कि संघीय शासन की शक्ति में ह्रास न आ पाये। पर्याप्त राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के लिए यह दल सैनिक संगठन की स्थापना पर जोर देता है। धर्म-निरपेक्षता, राजनीतिक स्वतन्त्रता और लोकतन्त्र में इस दल की पूर्ण आस्था है और विदेशी मामलों में यह निष्पक्षता चाहता है। यह कथोलिक चर्च की शक्ति की बढ़ोत्तरी का और धार्मिक स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप का विरोधी है।

समाजवादी प्रजातान्त्रिक दल

समाजवादी प्रजातान्त्रिक दल (Social Democratic Party) सभी उद्योगों का राष्ट्रीयकरण और सभी व्यक्तिगत एकाधिकारों पर सामूहिक अधिकार चाहता है। उसकी नीति में इस बात पर बल नहीं दिया जाता कि राजनीतिक शक्ति प्रमुख रूप से श्रमिकों के हाथ में हो। यह श्रमिकों के लिए अधिक वेतन तथा सामाजिक सुरक्षा व बेकारी में सहायता, सभी को काम देने, स्त्रियों को मताधिकार देने और संघीय परिषद के प्रत्यक्ष निर्वाचन का पक्षपाती है। यह दल इस बात का भी समर्थक है कि संगठित वार्ता द्वारा जहाँ तक सम्भव हो, श्रमिकों को अपनी दशा सुधारने के प्रयत्न करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिये और राज्य को तभी हस्तक्षेप करना चाहिये जबकि संगठित वार्ता असफल हो जाय। इस दल का मत है कि स्विटजरलैण्ड को संयुक्त राष्ट्र संघ का सक्रिय सदस्य बनना चाहिये।

यह दल अब इस बात को मानने लगा है कि मिश्रित अर्थ-व्यवस्था से

व्यक्ति और समाज दोनो का ही कल्याण हो सकता है । सन 1959 के दलीय कायक्रम मे यह स्पष्टत स्वीकार किया गया था कि "वग और सम्पत्ति सम्बन्धी भेदभाव के बिना प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रतिभा एव योग्यता का विकास करने के लिये स्वतन्त्र होगा ।" वस्तुत यह दल जन सहयोग, सन्तुलित अथ–व्यवस्था तथा पूजीवाद और समाजवाद के समन्वय का पक्षपाती है । अपने उद्देश्यो की पूर्ति के लिये यह दल शान्तिपूर्ण और जनतन्त्रीय ढग अपनाने का समथक है ।

कृषक दल

कृषक, श्रमिक तथा मध्य–वर्गीय दल (Agrarian, Artisans and Middle Class Party) को सक्षप म कृषक दल (Farmers Party) का नाम दिया जाता है । इस दल का जन्म 1918 म उदार दल क बिखर जाने के परिणाम-स्वरूप हुआ था । यह स्विट्जरलण्ड के विभिन्न छोटे दलो म सबसे प्रमुख है । इसका प्रधान ध्येय किसानो, कारीगरो और मध्यवर्गीय जनता की दशा म सुधार करना है । नीति सम्बन्धी घोषणाओ के बजाय यह दल उन कार्यों के करने मे अधिक विश्वास करता है जिनसे उपयुक्त लोगो की दशा सुधर सके । इस दल का प्रमुख राजनतिक नारा है—प्रबल राष्ट्रीय सुरक्षा महान केन्द्रीयकरण, विशाल सघीय आर्थिक सहायता अनाज की उत्पत्ति को बढावा, अनाज पर सरकार का पूण अधिकार तथा सरकार द्वारा कृषि सम्बन्धी वस्तुओ का मूल्य निर्धारण ।

साम्यवादी दल

साम्यवादी दल का वतमान नाम श्रमिक दल (Labour Party) है । यह दल अभी तक कोई उन्नति नही कर सका है । इस दल पर 1936 मे और 1940 म प्रतिबन्ध लगा दिया गया था जो बाद मे 1945 से हटा लिया गया । इसकी नीति मुख्यत पुरातन साम्यवाद पर आधारित रही है और इसीलिये इसे देश म महत्वपूण समथन नही मिल पाया है । इस दल की कुछ मागे है—बडे व्यापारो का केन्द्रीयकरण, बुढापे का बीमा, स्त्री मताधिकार, सप्ताह म 40 घन्टे काय आदि ।

उदारवादी दल

उदारवादी दल (Liberal Party) भी स्विस राजनीति म प्रधान दल था जिसने क्रान्तिकारी दल (Radical Party) के साथ सन 1848 का सविधान के श्रीगणश के समय शासन सभाला था । किन्तु धीरे–धीरे इस दल की शक्ति म ह्रास होता गया और आज यह एक प्रभावहीन दल है । यह दल परम्परागत उदार-वाद एव यथेच्छाचारिता (Laissez faire) का पोषक है और समाजवाद तथा प्रत्यक्ष सघीय करो का विरोधी । अधिकाश धनिक प्रोटेस्टन्टस इसके समथक हैं ।

स्विस दल पद्धति की विशेषतायें
(Features of Swiss Party System)

(1) स्विस राजनीतिक दलो का आधार कण्टन है न कि संघ अथवा राष्ट्र। इसके लिये दो कारण विशेष रूप से उत्तरदायी हैं— (क) साधारण स्विस नागरिक का यह विश्वास है कि उसके भाग्य का निर्धारण अधिकांशतः स्थानीय राजनीति द्वारा होता है संघीय नीतियो द्वारा नही। (ख) दलो के निर्माण और संगठन का आधार प्राथमिक रूप में स्थानीय प्रश्न है। स्विटजरलैण्ड मे राष्ट्रीय चुनाव नही होते। स्विटजरलैण्ड मे बहु-दल प्रणाली के भी कुछ विशेष कारण हैं। प्रथम, स्विस लोगो मे अनेक प्रकार की विविधतायें हैं। द्वितीय, स्विट्जरलण्ड में आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार चुनाव होते हैं जिसके अन्तर्गत छोटे दल भी जीवित रहते हैं। तृतीय, स्विट्जरलैण्ड मे कार्यपालिका के सदस्य एक दल के नही होते। वे कई दलो के सदस्य हो सकते हैं और यह भी आवश्यक नहीं है कि वे एक ही सामान्य कार्यक्रमो को मानने वाले हो। संघीय सभा के दोनो सदनो और संघीय परिषद मे भी अनेक दलो के प्रतिनिधि होते हैं।

(2) स्विटजरलण्ड मे अमरिका एवं अन्य यूरोपियन देशो जैसी विषम एवं कटु दलबन्दी का अभाव है। दलगत भावना का अभाव स्विस दल पद्धति की एक अनुपम विशेषता है।

(3) अमरिका के समान ही स्विटजरलण्ड में भी राजनीतिक दलो को संविधान में कोई स्थान नही दिया गया है वरन समय की गति के साथ उनका विकास हुआ है। कण्टनो के संविधानो मे भी दलो के विषय मे प्रावधान नही है। जब से आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली को लागू किया गया है तब से राजनीतिक दलो को अप्रत्यक्ष रूप से संविधान मे स्थान मिल गया है।

(4) स्विटजरलैण्ड मे विभिन्न दलो मे पारस्परिक सहयोग, सम्पर्क, सह-अस्तित्व एवं समझौते की भावना विद्यमान हैं। वे विषमता, विरोध तथा वैमनस्य की भावना से कार्य नही करते। संघीय परिषद और संघीय सभा में सभी दलो के प्रतिनिधियो मे यही भावना स्पष्टतः पाई जाती हैं। यही कारण है कि कुछ लेखको ने स्विस शासन व्यवस्था को बहु दलीय (Multi-party) की अपेक्षा निर्दलीय (Non partisan) कहना अधिक उचित समझा है।

(5) यद्यपि स्विट्ज़रलैण्ड में भाषा, जाति एवं ... हैं, लेकिन राजनैतिक दलो का स ... कैथोलि ... एँ विद्यमान से किसी आधार पर न होकर ... एवं ...) इनमे आधार पर हुआ है।

(6) स्विस दलो में एक ... ो के इगलैण्ड और भारत मे । इसका ... ो f

(7) स्विस दलों के चुनाव आदि के तरीके औचित्य की सीमा के भीतर रहते हैं। वे अनुचित व्यय नहीं करते और राजनीतिक जीवन में सच्चरित्रता का ध्यान रखते हैं। स्विस जनता पर जितना कम व्यय होता है, उतना शायद कहीं भी नहीं होता होगा। स्विस दलीय संगठन अमरिका के मशीन जैसे संगठन की बुराइयों से मुक्त है।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि स्विट्जरलण्ड में दलीय पद्धति के दोष, जो अन्य सभी जगह पाये जाते हैं, जनमत संग्रह की पद्धति द्वारा सीमाओं के भीतर रहे हैं। देश का छोटा आकार, स्विस लोगों में पारस्परिक सहिष्णुता, दलों का ढीला-ढाला संगठन, दलों में पारस्परिक सहयोग की भावना, योग्यता के आधार पर निर्वाचन आदि ऐसे कारण हैं जिन्होंने मिलकर देश में असाधारण सुखमय स्थिति स्थापित करदी है।

7

प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र
(DIRECT DEMOCRACY)

> आधुनिक शासन प्रणालियों में स्विट्जरलैण्ड को प्रायः सबसे अधिक लोकतन्त्रीय समझा जाता है। दूसरी ओर स्विटजरलैण्ड को आधुनिक लोकतन्त्रीय प्रणालियों में सबसे कम लोकतन्त्रीय भी कहा जा सकता है।'
>
> —कोडिंग्स

प्रजातन्त्र शासन के दो भेद माने गये हैं—(1) शुद्ध या प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र (Pure or Direct Democracy), (2) प्रतिनिधि या अप्रत्यक्ष प्रजातन्त्र (Representative or Indirect Democracy)। प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र सरकार में जनता प्रत्यक्ष रूप से राज्य के शासन में भाग लेती है। इसमें जनता को प्रत्यक्ष रूप से अधिनियम बनाने, नये विधेयकों को प्रस्तावित करने तथा विधान सभाओं द्वारा पारित अधिनियमों को रद्द करने का अधिकार होता है। प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र उन्हीं राज्यों में सम्भव है जिनका आकार बहुत छोटा हो। आधुनिक राज्यों में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र को चलाना सम्भव नहीं है, तथापि कुछ प्रत्यक्ष प्रजातान्त्रिक उपायों को संसार के कुछ राज्यों में अभी तक अपनाया जाता रहा है जिनमें लोकनिर्णय (Referendum), आरम्भक (Initiative) प्रत्यावर्तन (Recall) आदि सम्मिलित हैं। विश्व में स्विटजरलैण्ड ही एकमात्र ऐसा देश है जहां सबसे अधिक मात्रा में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र प्रचलित है। प्रजातन्त्र के जो भी साधन हैं, उनका प्रयोग इस देश से अधिक अन्यत्र कहीं नहीं होता।

स्विटजरलैण्ड को प्रजातन्त्र का घर इसलिए नहीं कहा जाता है क्योंकि वहां प्राचीन यूनान के नगर राज्यों जैसा प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र है। वस्तुतः स्विस प्रजातन्त्र न केवल प्रत्यक्ष है वरन् ब्रिटेन जैसा अप्रत्यक्ष भी है। उसे प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र का घर इसीलिए कहा जाता है कि वहां इसका जितना व्यापक और सफल प्रयोग हुआ तथा हो रहा है, वैसा अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलता।

प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की विधियां
(Methods of Direct Democracy)

स्विटजरलैण्ड के निवासियों ने प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के तीन मुख्य साधनों को लगभग पूर्ण रूप से अपनाया है—

(1) प्रारम्भिक सभायें (Primary Assemblies),

(2) जनमत संग्रह (Referendum), और

(3) आरम्भक (Initiative)।

प्रारम्भिक सभायें

प्रारम्भिक सभाओं का अभिप्राय यह है कि निर्धारित समय पर देश के सभी वयस्क नागरिक एक स्थान पर एकत्रित होकर कानूनों का निर्माण और नीतियों का निर्धारण करेंगे। इस प्रक्रिया में नागरिक अपनी प्रभुसत्ता का प्रत्यक्ष रूप से प्रयोग करते हैं। यह प्रजातन्त्र का सबसे विशुद्ध और सबसे प्राचीन रूप है।

प्रारम्भिक सभाओं की व्यवस्था स्विटजरलैण्ड के 4 अर्द्ध-कैन्टनों तथा 1 पूर्ण कैन्टन में प्रचलित है। इन लोकसभाओं को 'लैण्डसजैमाइण्डे' (Lands gemeinde) कहते हैं। ये लोकसभायें जिन कैन्टनों में हैं, वहां के कैन्टनों के सब स्वतन्त्र नागरिक इन सभाओं के सदस्य होते हैं। इन सभाओं की वार्षिक बैठक होती है जो सामान्यतः उसी प्रकार कार्य करती है जिस प्रकार व्यवस्थापिका सभायें करती हैं। प्रतिवर्ष कैन्टन के सभी वयस्क पुरुष नागरिक एक खुले मैदान में एकत्रित हो कर संविधान में संशोधन, सामान्य कानूनों का निर्धारण, करारोपण, मताधिकार, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका के अधिकारों का निर्वाचन आदि कार्य को पूरा करते हैं।

यद्यपि प्रारम्भिक सभाओं अथवा लोकसभाओं का यह रूप, देश की जनसंख्या और आकार में वृद्धि एवं प्रशासन की आधुनिक पेचीदगियों आदि के कारण आधुनिक काल में अव्यावहारिक होता जा रहा है। धीरे-धीरे इनका ह्रास हो रहा है।

जनमत संग्रह या लोकनिर्णय

जनमत संग्रह का सामान्य अर्थ यह है कि विधान मण्डल द्वारा पारित अधिनियमों अथवा प्रस्तावित कानूनों पर जनता का मत लिया जाए। इस तरह जनमत संग्रह की विधि के माध्यम से लोग प्रत्यक्ष रूप से देश के संवैधानिक एवं साधारण कानूनों पर अपना मत प्रकट करके शासन कार्य में भाग लेते हैं। यदि जनमत पक्ष में हो तो कानून पारित समझा जाता है और यदि विपक्ष में हो तो अस्वीकृत। इस प्रकार जनमत संग्रह एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा जनता के हाथों में व्यवस्थापिका द्वारा निर्मित कानूनों पर निषेधाधिकार आ जाता है। जनता के हाथ में यह एक नकारात्मक अस्त्र है। प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र में यह ढाल (Shield) का काम

करता है जिसके द्वारा जनता अवाछनीय कानूनो को दूर कर सकती है। स्विट्जरलड मे जनमत सग्रह का प्रयोग केन्द्र व कैन्टनो दोनो मे ही होता है।

आरम्भक या उपक्रम

आरम्भक या उपक्रम वह साधन है जिससे नागरिको की कुछ सख्या स्वय कानूनो का प्रस्तुत कर सकती है अर्थात व्यवस्थापिका कानूनो के सुझाव प्रस्तुत कर सकते हैं। इसका प्रयोग भी केन्द्र व कैन्टनो दोनो म होता है। आरम्भक वस्तुत एक तलवार है जिसके द्वारा जनता अपनी इच्छा अथवा विचारो को कानून बनाने के लिए माग साफ करती है। यह नागरिको को विधि निर्माण मे सकारात्मक अधिकार प्रदान करती है। इसके द्वारा व्यवस्थापिका की अनिच्छा के बावजूद जनता विधि निर्माण के सम्बन्ध म कार्यवाही कर सकती है।

केन्द्र मे प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र

(Direct Democracy in the Centre)

केन्द्र म प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की जनमत सग्रह और आरम्भक की दो विधिया ही प्रयुक्त होती हैं—

जनमत सग्रह अथवा लोक निर्णय (Referendum)

जनमत सग्रह मे हमारा तात्पर्य व्यवस्थापिका द्वारा पास किए गए कानूनो को जनता के समक्ष उसकी स्वीकृति अथवा अस्वीकृति के लिए रखने से है—

स्विट्जरलड मे जनमत दो प्रकार का है—

(क) अनिवाय जनमत सग्रह (Compulsory Referendum),

(ख) एच्छिक अथवा वकल्पिक जनमत सग्रह (Optional Referendum)।

(क) अनिवाय जनमत सग्रह—जब व्यवस्थापिका द्वारा पास किया हुआ प्रत्येक कानून अनिवायत जनता की स्वीकृति के लिए रखा जाता है तो वह अनिवाय जनमत सग्रह (Compulsory Referendum) कहलाता है। यह अनिवाय जनमत सग्रह सन 1848 के सविधान द्वारा प्रचलित किया गया था। सविधान की धारा 123 मे इस विषय म यह व्यवस्था है कि "सघ का सशोधित सविधान या उसका कोई सशोधित अश तभी क्रियान्वित हो सकेगा, जब मत देने वाले स्विस नागरिको का बहुमत तथा राज्यो का बहुमत उसे स्वीकार कर लें।" सविधान मे दी गई इस व्यवस्था से स्पष्ट है कि—

1 जनमत सग्रह का रूप अनिवाय जनमत सग्रह का हो।

2 यह व्यवस्था केवल सविधान के सशोधन सम्बन्धी कानूनो के विषय म हो।

3 सशोधन तभी पूरा होना समझा जाता है जबकि उसे स्विटजरलैण्ड के उन नागरिको के बहुमत द्वारा स्वीकार कर लिया जाए जो उससे सम्बन्धित

जनमत संग्रह में मतदान करें, तथा इसके अतिरिक्त उसे कैंटनों के बहुमत द्वारा भी स्वीकार कर लिया जाए।

4 जनमत संग्रह पूरे संविधान के विषय में भी हो सकता है और उसके किसी अंश के संशोधन के विषय में भी।

चूंकि उपर्युक्त जनमत संग्रह अनिवार्य है और इसका सम्बन्ध संविधान से है, अतः इसे अनिवार्य जनमत संग्रह (Compulsory Constitutional Referendum) कहा जाता है।

(ख) ऐच्छिक या वैकल्पिक जनमत संग्रह—ऐच्छिक जनमत संग्रह वह होता है जब व्यवस्थापिका द्वारा पास किया हुआ कानून उसी अवस्था में जनता के समक्ष उसकी स्वीकृति हेतु रखा जाता है जब नागरिकों को एक निश्चित संख्या इस सम्बन्ध में प्रार्थना करे। ऐच्छिक जनमत संग्रह की व्यवस्था संघीय कानूनों के लिए सन 1874 में की गयी थी। संविधान की 89वीं धारा के अन्तर्गत यह व्यवस्था है कि संघ के सब कानूनों और सब पर लागू होने वाले सब अध्यादेशों (Arretes) को जनमत संग्रह के लिए प्रस्तुत किया जाए, मताधिकार रखने वाले 30 हजार स्विस नागरिक अथवा 8 कैंन्टनों के 30 हजार स्विस नागरिक उनके विषय में ऐसी मांग करें। ऐसी मांग के लिए 90 दिन का समय नियत है। किसी कानून अथवा आदेश के प्रकाशन के लिए 90 दिन के अन्दर यदि ऐसी मांग कर दी जाए तो उस कानून अथवा अध्यादेश पर जनमत संग्रह लेना आवश्यक समझा जाता है।

सामान्यतः सभी कानूनों को, जिनके विषय में जनमत संग्रह की मांग की जाए, जनमत संग्रह के लिए प्रस्तुत करना होता है। केवल मात्र अध्यादेशों के विषय में एक अपवाद है और वह यह है कि यदि किसी अध्यादेश को व्यवस्थापिका द्वारा 'आवश्यक' (Urgent) अथवा 'सब पर लागू न होने वाला' (Not universally binding) घोषित कर दिया जाए तो उस पर जनमत संग्रह की मांग नहीं की जा सकती। लेकिन वर्तमान काल में होता यह है कि जनमत संग्रह की मांग से बचने के लिए व्यवस्थापिका प्रायः उन सब कानूनों को अध्यादेशों का रूप दे देती है जिनका सम्बन्ध बजट आदि महत्त्वपूर्ण बातों से होता है और ऐसे अध्यादेशों को 'आवश्यक' अथवा 'सब पर लागू न होने वाला' घोषित कर देती है। कहीं कार्यपालिका और व्यवस्थापिका इस ढंग से अपनी शक्ति का स्थाई रूप से दुरुपयोग न करने लगें इसके लिए सन 1949 के एक संशोधन द्वारा यह व्यवस्था कर दी गयी है कि 'आवश्यक' व 'सब पर लागू न होने वाले' आदेश (Arretes) एक वर्ष बाद स्वयं समाप्त समझे जायेंगे यदि उनके विषय में वैकल्पिक जनमत संग्रह की मांग की जाए और वह उसके द्वारा स्वीकार न किया जाए। ऐसे अध्यादेशों के विषय में जिनसे संविधान की किसी व्यवस्था का उल्लंघन होता हो, यह व्यवस्था की गयी है कि वह प्रकाशन के एक वर्ष के भीतर जनता एवं कैंटनों द्वारा

अवश्यमेव स्वीकार किया जाना चाहिए, अन्यथा एक वर्ष व्यतीत हो जाने पर वे स्वयं ही समाप्त हो जायेंगे।

ऐच्छिक अथवा वैकल्पिक जनमत संग्रह की व्यवस्था उन अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों पर भी लागू हो, जो या तो अनिश्चित काल के लिए की जायें या जो 15 वर्ष से अधिक की अवधि के लिए हों। यदि 30 हजार सक्रिय नागरिक अथवा 8 कैंटन माँग करें तो उन पर जनमत संग्रह लेना आवश्यक होता है।

यह स्मरणीय है कि वैकल्पिक जनमत संग्रह के लिए जो भी कानून या अध्यादेश या सन्धि अथवा समझौता प्रस्तुत होता है, वह कार्यान्वित तभी किया जा सकता है जब उसे स्विट्जरलैंड के उन मतदाताओं के बहुमत द्वारा स्वीकार कर लिया जाए, जो मतदान में भाग लें।

आरम्भक या निबन्ध उपक्रम (Initiative)

आरम्भक वह साधन है जिससे नागरिकों की कुछ संख्या स्वयं कानूनों को प्रस्तुत कर सकती है अर्थात् व्यवस्थापिका कानूनों के सुझाव रख सकती है। संघीय शासन-व्यवस्था के अन्तर्गत केवल संविधान के संशोधन अथवा पुनर्निरीक्षण (Revision) के सम्बन्ध में आरम्भक की व्यवस्था की गयी है, सारे कानूनों के सम्बन्ध में नहीं। दूसरे शब्दों में नागरिकों को केवल संविधान में संशोधन करने की माँग का अधिकार है, समस्त विषयों पर कानून बनाए जाने की माँग करने का उन्हें कोई अधिकार नहीं है। चूँकि आरम्भक के प्रयोग की व्यवस्था केवल संवैधानिक संशोधनों के विषय में की गई है, अतः इसे संवैधानिक आरम्भक (Constitutional Initiative) भी कहा जाता है। वर्तमान समय में जो व्यवस्था है उसके अनुसार संविधान के पूरे संशोधन (Total Revision) अथवा आंशिक संशोधन (Partial Revision) दोनों के ही विषय में आरम्भक का प्रयोग किया जा सकता है। इस आधार पर आरम्भक को रूप दो प्रकार का हो जाता है—पूर्ण संशोधन सम्बन्धी आरम्भक (Initiative for Total Revision) एवं आंशिक संशोधन सम्बन्धी आरम्भक (Initiative for Partial Revision)। दोनों ही प्रकार के आरम्भकों का प्रयोग मतदान के अधिकारी 50 हजार मतदाताओं द्वारा किया जा सकता है। यदि उपर्युक्त संख्या में स्विस नागरिक पूर्ण अथवा आंशिक संशोधन के लिए याचिका दें तो उस प्रार्थना पत्र पर जनमत संग्रह लेना आवश्यक होता है।

यदि जनता ने आरम्भक द्वारा संविधान के पूर्ण संशोधन या पुनर्निरीक्षण (Total Revision) की माँग की है अथवा यदि पूर्ण संशोधन सम्बन्धी प्रस्ताव का आरम्भण व्यवस्थापिका के किसी एक सदन ने किया है, किन्तु दूसरा सदन उससे सहमत नहीं है, तो इन दोनों दशाओं में निम्नलिखित प्रक्रिया अपनायी जाने की व्यवस्था है—

(i) प्रस्तावित सशोधन स्विस मतदाताओ के जनमत सग्रह के लिए प्रस्तुत किया जायेगा कि सशोधन की आवश्यकता है अथवा नही।

(ii) मतदाताओ के बहुमत द्वारा प्रस्ताव स्वीकृत होने पर सघीय व्यवस्थापिका का पुनर्निर्वाचन होगा। यहा कैन्टनो के बहुमत की आवश्यकता नही होगी।

(iii) पुनर्निर्वाचन के पश्चात नयी सघीय व्यवस्थापिका के दोनो सदन उक्त प्रस्तावित सशोधन पर विचार करेंगे और उनके बहुमत द्वारा पारित होने पर वह सशोधन प्रस्ताव सर्व साधारण और कैन्टनो के जनमत सग्रह के लिए प्रस्तुत किया जावेगा तथा लोकनिर्णय के पक्ष मे होने पर वह सशोधन प्रस्ताव क्रियाशील होगा।

आशिक सशोधन (Partial Revision) के लिए प्रस्तुत आरम्भक के विषय मे यह व्यवस्था है कि वह प्रस्ताव पूरे विधेयक के रूप मे (Formulated) भी दिया जा सकता है और मोटे सुझावो के रूप म (Unformulated) भी दिया जा सकता है।

यदि आशिक सशोधन का आरम्भण मोटे सुझावो के रूप म (*Unformulated*) होता है तो निम्नलिखित दो व्यवस्थायें है—

(i) सघीय व्यवस्थापिका द्वारा स्वीकृत होने पर उसका विधेयक तैयार होगा और उस विधेयक को सर्वसाधारण तथा कैन्टनो की स्वीकृति (Ratification) मिलने के बाद क्रियान्वित किया जायेगा।

(ii) यदि सघीय व्यवस्थापिका सशोधन प्रस्ताव के विपक्ष मे है तो वह सशोधन प्रस्ताव को सर्वसाधारण के निर्णय के लिए भेज देगी। यहा पर कैन्टनो के मत जानने की आवश्यकता नही होगी। यदि बहुमत सशोधन के पक्ष म होगा तो सघीय व्यवस्थापिका प्रस्ताव के अनुरूप विधेयक तैयार करेगी और उसे सर्व-साधारण तथा कैन्टनो के जनमत सग्रह के लिए प्रस्तुत करेगी।

यदि आशिक सशोधन की याचिका पूरे विधेयक के रूप मे (Formulated) प्रस्तुत की जाती है, तो इस सम्बन्ध म निम्न व्यवस्था है—

(i) सघीय व्यवस्थापिका, पक्ष म होने पर, उस विधेयक को सर्व साधारण एव कैन्टनो के जनमत सग्रह के लिए प्रस्तुत करेगी।

(ii) सघीय व्यवस्थापिका, विपक्ष म होने पर, दो मार्ग अपना सकती है— प्रथम, वह सिफारिश कर सकती है कि प्रस्तावित सशोधन स्वीकृत कर दिया जाए अथवा द्वितीय, वह जनता द्वारा प्रस्तावित प्रारूप के साथ एक अपने द्वारा बनाया हुआ प्रारूप भी जनमत सग्रह के लिए रख सकती है। सशोधन प्रस्ताव का जनमत सग्रह मे जनता और कैन्टनो दोना के बहुमत का समर्थन मिलना आवश्यक है।

उपयुक्त प्रसग मे यह स्मरणीय है कि साधारण कानूनो के विषय मे स्विट्जरलैड म आरम्भक (Initiative) की व्यवस्था नही है फिर भी स्विस

लोग संवैधानिक संशोधनों के नाम से साधारण कानूनों से भी सम्बन्धित प्रस्ताव प्रस्तुत कर देते हैं। वृद्धावस्था का बीमा, जानवरों का काटा जाना, गेहूं की पैदावार की वृद्धि आदि से सम्बन्धित अनेक प्रस्ताव संवैधानिक संशोधन के नाम से प्रस्तुत किये गये हैं और उनमें से अनेक संविधान का अंग बन चुके हैं।

कैंटनों में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र
(Direct Democracy in Cantons)

कैंटनों में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के प्रयोग की तीनों ही विधियां काम में लायी जाती हैं—स्थानीय सभायें, जनमत संग्रह और आरम्भक। कैंटनों में इन तीनों का प्रयोग निम्नानुसार है—

स्थानीय सभायें (Landsgemeinde)

इस प्रकार की लोक सभायें जो प्रत्यक्ष रूप से कैन्टनों के शासन कार्य में भाग लेती हैं, इस समय उरी (Uri) व ग्लेरस (Glarus) के दो पूरे कैंटनों तथा अन्टरवाल्डन (Unterwalden), श्वज (Schweyz), जुग (Zug) व अपेंजिल (Appenzill) के चार आधे कैंटनों में कार्य करती हैं। इन कैंटनों में विधायी शक्ति सीधी जनता में निहित है। इन कैंटनों के बारे में यह ठीक ही कहा गया है कि 'वे मुक्त वायुमण्डल के लोकतन्त्र (Democracies of the open air type) हैं।'

स्थानीय सभाओं अथवा स्थानीय लोकसभाओं (Landsgemeinde) का रूप स्वतन्त्र नागरिकों की राजनीतिक सभाओं का होता है, जो प्रत्येक वर्ष एक निर्वाचित अध्यक्ष की अध्यक्षता में खुले में होती हैं। विधियों का निर्माण करने और कैंटनों के अधिकारियों का चुनाव करने के लिए नागरिक प्रत्येक वर्ष अप्रैल या मई के महीने में किसी रविवार के दिन खुले मैदान में एकत्र हो जाते हैं। वे समस्त पुरुष नागरिक जिन्होंने मताधिकार की अवस्था प्राप्त करली है, इन लोकसभाओं में उपस्थित हो सकते हैं और उनकी कार्यवाहियों में भाग ले सकते हैं। सिद्धान्त रूप से सभी वयस्क नागरिकों के लिए यह आवश्यक है कि वे सम्बन्धित क्षेत्र अथवा कैन्टन की स्थानीय सभा में उपस्थित हों। कुछ कैन्टनों में तो उन अनुपस्थित सदस्यों पर जुर्माना करने की प्रथा है जो बिना किन्हीं उचित कारणों के सभाओं से अनुपस्थित रहते हैं। स्थानीय सभा कानून बनाती है और उन कानूनों का पुष्टिकरण करता है, जो उसके द्वारा निर्वाचित कार्यकारिणी समिति ने बनाये हों। वह विविध उपयोगी प्रस्ताव पारित करती है और वित्त एवं सार्वजनिक कार्यों के विषय में विभिन्न महत्वपूर्ण निर्णय करती है। स्थानीय सभायें कार्यकारिणी एवं शासन समितियों का चयन करती हैं तथा प्रमुख अधिकारियों और न्यायाधीशों की नियुक्तियां करती हैं। स्थानीय सभाओं की शक्तियां और उनके अधिकार भिन्न भिन्न कैन्टनों में भिन्न भिन्न हैं—संविधान का पूर्ण व आंशिक संशोधन, कानूनों का

निर्माण, कर निर्धारण, ऋण लेना और अनुदानों को स्वीकार करना, कार्यपालिका एवं न्यायाधीशों का निर्वाचन तथा नवीन पदों की स्वीकृति और वेतन क्रम का निर्धारण आदि।

स्थानीय सभाओं की अधिकारी-विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है किंतु रपर्ड (Rappard) का कहना है कि—"यह विश्वास करना कठिन है कि लोकसभायें अनिश्चित काल तक बनी रह सकती हैं। ये आदिम लोकतन्त्र के नुमायशी नमूनों या बीते हुए दिनों के समन्ति चिह्नों के रूप में रह सकती हैं।"

जनमत संग्रह (Referendum)

कैंटनों में जनमत संग्रह की व्यवस्था इस प्रकार है—

(i) प्रत्येक प्रतिनिधि कैंटन में संवैधानिक संशोधन के लिए अनिवार्य जनमत संग्रह (Compulsory Referendum) की व्यवस्था है। संविधान में किसी प्रकार का संशोधन तब तक नहीं हो सकता, जब तक उसे कैंटन की जनता स्वीकार न करले।

(ii) साधारण कानूनों के सम्बन्ध में कैंटनों में अनिवार्य जनमत संग्रह और कुछ में वैकल्पिक जनमत संग्रह (Optional Referendum) की व्यवस्था है। दस पूरे व एक आध कैंटन में अनिवार्य (Compulsory) तथा आठ पूरे व एक आध कैंटन में यह वैकल्पिक (Optional) है।

(iii) शेष एक कैंटन और चार अर्द्ध कैंटनों में जहां स्थानीय सभाओं की व्यवस्था है जनमत संग्रह का कोई प्रश्न नहीं उठता।

(iv) कुछ कैंटनों में वित्तीय मामलों के लिए भी जनमत संग्रह की व्यवस्था है। कुछ में यह व्यवस्था अनिवार्य है और कुछ में वैकल्पिक। 16 कैण्टनों में वित्तीय प्रस्तावों पर अनिवार्य जनमत संग्रह और 5 कैण्टनों में वैकल्पिक जनमत संग्रह की व्यवस्था है, यदि वह प्रस्तावों की धन राशि एक निर्धारित सीमा से अधिक हो। प्रत्येक कैंटन में यह सीमा भिन्न है।

आरम्भक (Initiative)

केवल जनता को छोड़कर, जहां सिर्फ संवैधानिक आरम्भक (Constitutional Initiative) की ही व्यवस्था है, अन्य सब कैंटनों में संवैधानिक और व्यवस्थापन सम्बन्धी दोनों ही प्रकार के आरम्भक की व्यवस्था प्रचलित है। दोनों में केवल अन्तर यही है कि संवैधानिक आरम्भक के लिए अधिक और व्यवस्थापन सम्बन्धी आरम्भक के लिए कम लोगों के हस्ताक्षरों की आवश्यकता पड़ती है। किन्हीं किन्हीं कैंटनों में दोनों ही प्रकार के आरम्भकों के लिए बराबर मतदाताओं के हस्ताक्षर की आवश्यकता होती है।

प्रत्यक्ष प्रजातन्त्रीय व्यवस्था का मूल्यांकन
(Evaluation of the System of Direct Democracy)

पक्ष :

(1) इसके द्वारा प्रजातन्त्र का वास्तविक स्वरूप प्रकट होता है और जनता को दैनिक प्रशासन में भाग लेने का अधिकार प्राप्त होता है। अनिवार्य लोक निर्णय के कारण जनता को समय-समय पर मतदान करना पड़ता है और इस प्रकार उसे प्रशासन में अपनी महत्ता का अनुभव होता है। ऐच्छिक लोक निर्णय में जनता अपनी खुशी से भाग लेती है और महत्वपूर्ण विषयों पर विचार करती है।

(2) प्रत्यक्ष विधि निर्माण प्रणाली के होने से जनता पर उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई अधिनियम नहीं थोपा जा सकता।

(3) जब कानूनों को जनता स्वयं बनाती है तो स्वाभाविक है कि वह उनका उचित रूप में पालन भी करती है।

(4) इनके द्वारा जनता को राजनीतिक शिक्षा प्राप्त होती है। शासक इनको सरलतापूर्वक प्रभावित नहीं कर सकते। राजनीतिक विषयों पर विचार करने और उन पर मताधिकार प्राप्त होने से जनता के प्रशासकीय ज्ञान की वृद्धि होती है।

(5) लोक निर्णय के कारण दलबन्दी उग्र नहीं हो पाती। जनता को नागरिकता की शिक्षा मिलती है और उसमें एकता की भावना का उदय होता है।

(6) जनता की इस शक्ति के भय से व्यवस्थापिका अध कचरे प्रस्ताव पास करने से दूर रहती है। समय समय पर ऐसे प्रस्तावों को, जो लोक इच्छा के विरुद्ध हो सकते थे, व्यवस्थापिका ने ठुकराया है।

(7) लोक-निर्णय और आरम्भक दोनों जनता में इस चेतना को आरम्भ करते हैं कि वे ही विधि को बनाने वाले हैं और उनका शासन में प्रत्यक्ष हाथ है। इस प्रणाली में इसलिए न तो बहुमत की निरंकुशता मिलती है और न अल्पसंख्यकों की निराशा।

(8) व्यवस्थापिका के निर्वाचित सदस्यों को जनता से सदा सम्पर्क स्थापित करना पड़ता है। उसको जनता की मांगों तथा उनके हितों का सदा ध्यान रखना पड़ता है।

(9) बांजोर (Banjor) लोक-निर्णय को राजनीतिक वातावरण का सुन्दरतम बैरोमीटर मानता है। इसके द्वारा प्रत्येक बात पर जनता की इच्छा मालूम हो सकती है।

(10) इसके द्वारा जनता का औद्योगिक और व्यापारिक वर्ग शासन पर अपना प्रभाव नहीं जमा पाता।

विपक्ष

(1) सर्व साधारण जनता में इतनी योग्यता नहीं होती कि वह विधि निर्माण

जैसे महत्वपूर्ण और जटिल कार्य मे उचित रूप से भाग ले सके। जनता को यह अधिकार प्रदान करना देश के लिए घातक है।

(2) इसके कारण व्यवस्थापिका के सदस्यो का महत्व कम हो जाता है और वह पूर्ण रुचि तथा तत्परता से काय नही करते।

(3) लोक निणय के मुख्य सिद्धाता की उपेक्षा होती है और सूक्ष्म तथा साधारण बातो को भी महत्वपूण माना जाने लगता है।

(4) मतदान की उपेक्षा या मतदान म आलस्य के कारण लोक-निणय जनता की वास्तविक इच्छा का द्योतक नही रहता। कभी-कभी सुसगठित अल्पमत लोक-निणय मे सफलता पाकर जनता की वास्तविक इच्छा का प्रदशन करने लगता है।

(5) एक साधारण काम-काजी आदमी को कानून बनाने के काम म विशेष दिलचस्पी नही होती। न उसे फुरसत होती है न इच्छा। वह अपने अधिकार निर्वाचित प्रतिनिधियो को साप देना पसन्द करता है। यह बात इसी से प्रकट है कि कभी कभी प्रति सेकडा बहुत कम मतदाताओ की सख्या चुनाव मे भाग लेती है।

(6) वल्टी (Welti) ने लिखा है कि "जनता व्यावसायिक कानून बनाने वाले का स्थान नही ले सकती और न उसका काम ही चला सकती है। जटिल शासन कार्यों म साधारण नागरिको मे उपयुक्त निणय की आशा करना रेत मे से तेल निकालना है।'

(7) प्रत्यक्ष विधि निर्माण मे समझौता या सशोधन की गु जाइश नही होती। जनता को किसी विधेयक के प्रश्न पर ज्यो के त्यो हा या ना सूचक सम्मति देनी होती है। व्यक्ति को विचार विमश का अवसर नही होता और न जनमत सग्रह स पूव व्यक्ति का प्रश्न या स्वरूप निश्चित करने मे कोई हाथ रहता है। उसे यही कहा जाता है कि यह बात इस तरह आपके आगे है बोलो मानते हो या नहीं'।

(8) वतमान मे अधिकाश कानून राष्ट्रीय आर्थिक नीति स सम्बधित होते हैं। नागरिक इनम प्रत्यक्ष रूप से स्वाथरत होने के कारण इन पर निष्पक्ष दृष्टि-कोण से विचार नही करते। ऐसी दशा मे सलाहो की पेटी का परिणाम आदर्शो या विचारो की लडाई का फल न होकर निहित हितो के सघष का प्रतिबिम्ब होता है।"

(9) जनता द्वारा स्वीकृत हो सके इसके लिए सरकार द्वारा प्रेषित प्रस्ताव, समझौते की भावना लेकर चलते हैं, कोई निर्भीक काय क्रम लेकर नहीं।

(10) जनता अधिकाशत अधविश्वासी तथा रूढिवादी होती है, अत वह प्रगतिशील कानूनो का विरोध करती है।

(11) यह पद्धति अत्यन्त खर्चीली और अडगा लगाने वाली है। इसस थोडे-थोडे समय के बाद देश के अन्दर उथल-पुथल मचती रहती है। भारत सरीखे देश मे तो इसका प्रयोग सम्भव ही नही है।

(12) कई बार ऐसा भी सम्भव है कि लोक निर्णय के अनुसार मत लेने का अवसर उपस्थित होने तक प्रश्न सामयिक न रहकर अनावश्यक रह जाता है।

वस्तुस्थिति

स्विस राजनीति का इतिहास बताता है कि वहां प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के प्रयोग में आलोचना की बातों की बजाय प्रशंसा की बातों को ही अधिक स्थान मिला है—

1 स्विट्जरलैंड ने दिखा दिया है कि प्रत्यक्ष-प्रजातन्त्र का प्रयोग बिना भ्रष्टाचार के किया जा सकता है। वहां के प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र में अनुचित दबाव, मत पत्रों की खरीद, जाली हस्ताक्षर करना, मतदाताओं को बहकाना आदि भ्रष्ट बातों का प्रयोग नहीं किया जाता।

2 स्विस जनता अविवेकी, आवेशपूर्ण अथवा समस्याओं के प्रति अज्ञानी नहीं है। सन 1848 से 1952 तक 104 बार संवैधानिक संशोधनों के सम्बन्ध में मत-दान हुए। इनमें संघीय सभा द्वारा 61 प्रस्तावों पर अनिवार्य जनमत संग्रह हुआ जिनमें से 43 प्रस्तावों को जनता ने स्वीकार किया और 18 को अस्वीकार। लगभग उसी समय के अन्तर्गत 34 संविधान सम्बन्धी आरम्भक प्रस्ताव प्रस्तुत किये गये जिनमें से 6 स्वीकार हुए। इसी तरह 46 व्यवस्थापन सम्बन्धी जनमत संग्रह (Legislative Referendum) लिया गया, जिनमें से 17 पर जनता ने अपनी स्वीकृति प्रकट की। दो बार संविधान के पूर्ण संशोधन के प्रस्ताव आये—1880 ई० में और 1935 ई० में, परन्तु दोनों प्रस्ताव अस्वीकृत हो गये। सन 1874 से सन 1954 तक स्विस संघीय सभा ने 500 से अधिक कानून निर्मित किए जिनमें से केवल 63 पर जनमत संग्रह की मांग की गई और इनमें 23 कानून जनमत संग्रह द्वारा स्वीकृत कर दिए गए और 40 कानून अस्वीकृत।

स्पष्ट है कि स्विस जनता ने प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के साधनों का प्रयोग संविधान में समयानुकूल परिवर्तन लाने के लिए पर्याप्त मात्रा में किया है। स्विस जनता ने अपरिपक्व तथा अगौरवपूर्ण आरम्भक को अस्वीकृत कर दिया, लेकिन जब उसी विषय से सम्बन्धित विधेयक संघीय परिषद द्वारा तैयार किया गया तो जनता ने उसे स्वीकृत कर लिया है। स्विस जनता के समक्ष जो प्रस्ताव आते हैं उन पर वह इस दृष्टि से विचार नहीं करती कि वे जनता द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं या सरकार द्वारा, वरन वह उन पर विवेक और उदारता से विचार कर अपना मत प्रकट करती है। इसीलिए के० सी० व्हीयर (K V C Wheare) ने कहा है कि 'स्विट्जरलैंड का संविधान यदि अचल है तो स्विट्जरलैंड का राज्य लचीला है।

प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की सफलता के कारण

(Causes for the Success of Direct Democracy)

यद्यपि प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र का प्रयोग अमरीका में भी राज्य स्तर पर दिखाई देता है लेकिन स्विट्जरलैंड में यह जितना सफल और सम्भव हुआ है, उसकी तुलना

किसी से नही की जा सकती। इस सफलता के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दो पक्ष है— सद्धान्तिक पक्ष की दष्टि से स्विस जनता की मान्यता है कि प्रभुसत्ता प्रत्यक्ष और स्पष्ट रूप से जनता म निहित होनी चाहिए। अत ऐसी व्यवस्था की गई है कि दिन-प्रतिदिन का कार्य प्रतिनिधि गण करें लेकिन अन्तिम सप्ताह प्रत्यक्ष रूप से जनता के हाथ मे रहे। व्यावहारिक पक्ष मे, स्विट्जरलैण्ड एक छोटा सा देश है जो अत्यन्त घन बसे हुए कटनो मे विभाजित है और इसलिए यह सम्भव हो सका है कि सभी नागरिक प्रशासनिक कार्यों म सीधे रूप से हाथ बटा सकें।

स्विस प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की इतनी अधिक सफलता का रहस्य जिन कारणों म छिपा है, वे य है—

जनता का चरित्र

प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र जनता का सीधा साधन है, जिसकी सफलता जनता की सुयोग्यता पर निभर करती है। सौभाग्यवश स्विस जनता अपने कत्तव्यो और अधिकारा के प्रति पूण निष्ठावान और जागरूक है, जो योग्य व्यक्तियो को ही चुनती है। स्विस निवासियो मे व्यवहार-कुशलता, राष्ट्र प्रेम, राजनीतिक जागरूकता, उदारता जैसे सभी नागरिक गुण पाये जाते हैं। शिक्षा म भी इस देश की जनता बहुत आगे बढी हुई है। विधि निर्माण के लिए आवश्यक निणय तक की और शात स्वभाव यहा की जनता म पाया जाता है। स्विस लोग न तो अत्यन्त रूढिवादी है और न अत्यन्त उग्रवादी ही। उनकी वृत्ति मध्य-माग पर चलने की है और इसीलिए प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की व्यवस्था द्वारा प्राप्त अपन अधिकारा का वे अति विवेकपूण ढग से प्रयोग करते हैं।

प्रजातान्त्रिक परम्पराए

स्विट्जरलैण्ड म प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की सफलता का दूसरा कारण वहा प्रचलित प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की परम्पराएं हैं जो सकडो वर्षों स सुचारु रूप म चलती आ रही हैं। जनमत सग्रह तथा आरम्भक के साधनो के अनक लाभ स्विट्जरलैण्ड म स्पष्टत देखने को मिलते हैं। यह सावजनिक सम्प्रभुता के सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप देता है, व्यवस्थापिका पर अंकुश का कार्य करता है, नागरिको मे देशप्रेम, जनसेवा एव कत्त व्य-परायणता के भाव भरता है, दलगत भावना की ज्वाला को शात करता है तथा लगभग प्रत्यक प्रश्न पर जनता के निणय को अन्तिम स्थान देता है। इन साधनों के परिणामस्वरूप ही जन-इच्छा के क्रियान्वित होने के साथ साथ प्रशासन का सुयोग्य राजनीतिज्ञो के अनुभव का भरपूर लाभ मिलता रहता है।

तटस्थता की नीति

स्विटजरलैंड एक ऐसा देश है जो स्थायी रूप से सुदीघकाल से तटस्थ नीति पर चलता आ रहा है। परिणामस्वरूप यह देश दव विश्व सकटो स मुक्त रहा है

और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओ को लेकर जो देश मे मतभेद पैदा हो जाते हैं, उनके विषैले प्रभाव से लगभग अछूता रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो मे तटस्थता का रुख अपनाने के कारण स्विट्जरलैंड की समस्याये सरल हो गई हैं और वह आतरिक मामलो की ओर अधिक ध्यान सका है। उसकी यह स्थिति देश मे प्रजातन्त्रवाद के विकास मे सहायक सिद्ध हुई है।

देश का छोटा आकार

वर्तमान युग मे प्रत्यक्ष प्रजातन्त्रीय प्रणाली सर्वाधिक सफल रूप मे स्विटजरलैंड मे इसीलिए चल पा रही है क्योंकि वह एक छोटा पहाडी देश है और वहा जनता की राय मानना सुगम है। स्विटजरलैंड छोटे छोटे कैंटनो मे विभाजित है। अत वहा के लोग प्रत्यक्ष रूप से शासन कार्य मे भाग ले सकते हैं और लोक सभाओ, आरम्भक एव जनमत सग्रह के माध्यम से प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के अपने अधिकारो का प्रयोग कर सकते हैं।

सीमित जनसख्या

प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र का करोडो की जनसख्या वाले राष्ट्रो मे सफल होना सम्भव नहीं है क्योंकि इतनी जनसख्या म लोक निर्णय और आरम्भक की सफलता असम्भव है। स्विट्जरलैंड की जनसख्या 80 लाख के लगभग है अत वहा प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र का सफल होना आश्चर्य की बात नहीं है।

स्थानीय स्वशासन की परम्परा

स्विस प्रजातन्त्र की सफलता का प्रमुख कारण वहा की स्थानीय स्वशासन सस्थायें हैं जिनकी तीन महत्वपूर्ण देन हैं—

(क) दक्ष शासन, (ख) स्थानीय स्वतन्त्रता एव प्रेम, और (ग) नागरिकों को राजनीतिक शिक्षा एव अनुभव।

स्विस प्रजातन्त्र का मूल सिद्धान्त है—"पहले कम्यून फिर कैंटन और बाद मे राज्य मडल।" वहा की राज-सत्ता का आधार स्थानीय स्वायत्त सस्थाओ में है और जनता की इच्छा यही से प्रतिबिम्बित होकर ऊपर बढ़ती है।

राष्ट्रीय एकता

स्विटजरलैंड मे विविध भाषाओ, धर्मों और जातियो का वास है, फिर भी यहा राष्ट्रीय एकता विद्यमान है, विविधता म एकता मौजूद है। धर्म और भाषायें स्विस राष्ट्रीय एकता के मार्ग म बाधक सिद्ध नहीं हुई हैं। पथकवरण की प्रवृत्तिया प्रजातन्त्र के लिए सदव घातक होती हैं, लेकिन स्विस प्रजातन्त्र इस अभिशाप से सदव मुक्त रहा है।

अन्य कारण

प्रथम, सुसगठित राजनीतिक दल प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र को प्रोत्साहित करते हैं किन्तु स्विटजरलैंड म एसे दलो के न होने से प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के विकास का बडा मिला है।

द्वितीय, स्विस निवासियो मे आर्थिक अन्तर बहुत कम है। आर्थिक विषमता के न होने से उनमे वैमनस्य नही रहता। देश की सामाजिक और आर्थिक समानता स्विस जनता को एकता के सूत्र मे बाधती है।

तृतीय, स्विट्जरलड हजारो वर्षों से एक स्वाधीन देश रहा है, अत यहा की जनता की प्रवृत्ति स्वतन्त्र रहने की है। इसीलिए उनमे सहवासिता, उदारता और उत्तरदायित्व की भी भावना है जिनके द्वारा ही स्वतन्त्रता सुरक्षित रह सकती है। इस स्वतन्त्र भावना ने ही स्विटजरलैण्ड को प्रजातान्त्रिक शासन-प्रणाली को विशिष्ट रूप दिया है।

चतुर्थ, स्विटजरलैण्ड मे भिन्न भिन्न धर्मावलम्बी रहते हैं। उनकी भाषायें और उनके रीति रिवाज सभी कुछ परस्पर भिन्न है। अत वे प्रशासन पर आधिपत्य स्थापित करने के प्रयास म नही रहते और शक्तियो का केन्द्रीयकरण न करके विकेन्द्रीयकरण से ही प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की नीव जमाते है।

स्विटजरलड म वस्तुत विशिष्ट दशा म प्रजातन्त्र है। आज ससार म प्रत्यक्ष प्रजातान्त्रिक पद्धति का वह एक अनुकरणीय आदश बना हुआ है और उसे ससार के सभी देशा का विपुल सम्मान प्राप्त है।

EXERCISES

Chapter I

1 Trace the history of the Constitutional Development of Switzerland since 1798

1798 से स्विटजरलैण्ड के संवैधानिक इतिहास का वर्णन कीजिये।

2 What do you regard as the special features of the Swiss Constitution ? To what extent have they contributed to the establishment and efficiency of the Government of Switzerland ?

आपके मत मे स्विस संविधान की विशेषताएँ क्या हैं ? कहाँ तक उन्होंने स्विटजरलैण्ड म सरकार को स्थिरता और कुशलता प्रदान की है ?

Chapter II

1 "Swiss Constitution is not a confederation but a federation " Do you agree ?

"स्विस संविधान एक राज्य मण्डल नही, संघ है।" क्या आप इससे सहमत है ?

2 Bring out the special features of the Swiss Federal System and describe the relationship between the Federal Government and the Cantons

स्विस संघीय व्यवस्था की विशेषताओं का वर्णन कीजिये और बतलाइये कि संघ सरकार और कैंटन म क्या सम्बन्ध है ?

3 Describe the method of amendment of the Swiss Constitution How is Constitution amended ?

स्विट्जरलैंड के संविधान की संशोधन पद्धति का वर्णन कीजिये। स्विस संविधान म संशोधन किस प्रकार किया जाता है ?

Chapter III

1 Describe the composition and functions of both the Houses of the Federal Assembly of Switzerland

स्विस संघीय सभा के दोनो सदनो म संगठन तथा कार्यों का वर्णन कीजिये।

2 What limitations have been imposed on the supremacy of the Federal Assembly ? Compare and contrast the powers and position on the Swiss Federal Assembly with that of the British Parliament

सघीय सभा की सर्वोच्चता पर कौन-कौन से प्रतिबन्ध है ? स्विस सघीय सभा की शक्ति और स्थिति की तुलना ब्रिटिश ससद से कीजिये ।

Chapter IV

1 Discuss the unique character of the Swiss Federal Executive How far does it combine stability with responsibility ?

स्विस सघीय कार्यपालिका की विलक्षणताओ की विवेचना कीजिये । यह स्थायित्व एव उत्तरदायित्व का किस प्रकार समन्वय करती है ?

2, "The Swiss Federal Executive is neither Parliamentary nor Presidential ' Discuss

"स्विस सघीय कार्यपालिका न तो ससदात्मक है, न अध्यक्षात्मक ।' विवेचना कीजिये

3 Describe the composition and powers of the Swiss Federal Council (*Plural Executive*)

स्विस सघीय परिषद के सगठन और उसकी शक्तियो का वर्णन कीजिये ।

Chapter V

1 Describe the organisation and jurisdiction of the Federal Judiciary in Switzerland

स्विट्जरलैण्ड की सघीय व्यवस्था के सगठन एव न्याय क्षेत्र की विवेचना करें ।

2 *Compare and contrast the Swiss Federal Tribunal and the American Supreme Court*

स्विस सघीय न्यायालय तथा अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय के बीच समता तथा अन्तर बतलाइये ।

Chapter VI

1 *Describe the Party organisation in Switzerland* Why in Switzerland parties play a far inferior role to that *of a party in England or the U S A ?*

स्विट्ज़रलैण्ड के दल संगठन का वर्णन कीजिये। स्विट्ज़रलैण्ड में इंगलैंड या या अमेरिका की अपेक्षा दलों का महत्व क्यों कम है ?

2 Critically examine the characteristics of the Swiss party system

स्विस दल-पद्धति की विशेषताओं की आलोचनात्मक समीक्षा कीजिये।

Chapter VII

1 What do you understand by Direct Democracy ? Write a short essay on its working in Switzerland

प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र से आप क्या समझते हैं ? स्विट्ज़रलैंड में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की क्रियान्विति पर एक छोटा-सा निबंध लिखिये।

2 Examine the working of Direct Democratic checks in Switzerland How far they are successful ?

स्विट्ज़रलैंड में प्रत्यक्ष प्रजातान्त्रिक अवरोधों की समीक्षा कीजिये। यह कहाँ तक सफल हुआ है ?

I

SELECTED READINGS

1	Banjour	A short History of Switzerland
2	Brooks	Government and Politics of Switzerland
3	Bryce	Modern Democracies
4	Rappard	The Government of Switzerland
5	Coddings	The Federal Government of Switzerland
6	Hughes	The Federal Constitution of Switzerland
7	Huber	How Switzerland is Governed ?
8	Buell	Democratic Governments in Europe
9	Ghosh, R C	The Government of the Swiss Republic, 1953
10	Lloyd and Holson	The Swiss Democracy
11	Lowell, A L	Government and Parties of Continental Europe, 1918
12	Banjour	Real Democracy in Operation
13	Munro	Governments of Europe
14	Shotwell and Others	Governments of Continental Europe
15	Theghes	The Federal Constitution of Switzerland
16	Wheare	Federal Government
17	Mason	Foreign Governments
18	Ogg and Zink	Modern Foreign Governments

19 Strong Modern Political Constitutions
20 Zurcher Governments of Continental Europe
21 Banjam : Real Democracy in Operation
22 Rappard : American Political Science Review, 1924 The Initiative and Referendum
23 Rappard : Political Science Quarterly, June 1925 Democracy Vs Demogogy : The Swiss Referendum and Confiscatory Taxation

---

"सामाजिक उत्पादन व्यवस्था में लगे हुए लोग कुछ ऐसे स्थिर और निश्चित सम्बन्ध स्थापित कर बैठते हैं जो उनकी इच्छा पर निर्भर नहीं होते । ये उत्पादन सम्बन्ध भौतिक शक्तियों की एक विशेष अवस्था से मिलते-जुलते हैं । इन्हीं सम्बन्धों के योग से समाज के आर्थिक ढांचे और प्रणाली का निर्माण होता है । समाज का यही आधार है जिस पर कानून और राजनीति का भवन बनता है।"

—कार्ल मार्क्स

"यहां सोवियत संघ में—श्रमिकों के आतंकवादी देश में—यह तथ्य कि एक भी महत्वपूर्ण राजनीतिक अथवा संगठनात्मक प्रश्न का निर्णय हमारे सोवियत तथा अन्य जन-संस्थायें पार्टी से निर्देश प्राप्त किये बिना नहीं करती पार्टी के सर्वोच्च नेतृत्व की अभिव्यक्ति समझना चाहिये ।"

—स्टालिन

I

रूस के संविधान का विकास व उसकी विशेषताएँ
(GROWTH AND SALIENT FEATURES OF THE RUSSIAN CONSTITUTION)

सोवियत रूस की राजनतिक व्यवस्था अनोखे ढग की है। समाजवाद के आधार पर निर्मित होने के कारण यह अन्य देशो की शासन-व्यवस्था से बहुत कुछ भिन है। यद्यपि गत वर्षों मे उसके बारे मे काफी लिखा गया है, तथापि आज भी यह एक पहेली (An Enigma) है। वर्षों के अस्तित्व के बाद भी सोवियत शासन-व्यवस्था का सही और सन्तुलित चित्र प्रस्तुत करना एक जटिल समस्या है। फिर भी सरकारी प्रलेखो घोषणाओ विदेशी भ्रमणकारियो द्वारा लिखित पुस्तका, रूस से भागे हुए शरणार्थियो के विवरणो शोध सस्थाओ द्वारा किये गये शोध कार्यां, विद्वाना की व्याख्याओ आदि के आधार पर सोवियत शासन-व्यवस्था की बहुत कुछ जानकारी हासिल की जा चुकी है। इनके अलावा समाजशास्त्रीय तत्व भी सोवियत शासन व्यवस्था के समझने मे सहायक है।

सोवियत रूस एक महान् देश है। यह आस्ट्रेलिया तथा यूरोप के उत्तरी भाग मे स्थित है। यह देश बारह समुद्रो और बारह देशो से घिरा हुआ है। पश्चिम और दक्षिण की स्थलीय सीमा के कारण ही इसको अतीत मे नपोलियन और हिटलर जस आक्रामको का सामना करना पडा था, यद्यपि आज यह भय समाप्त-सा हो गया है क्योकि सीमावर्ती देश इसके ही अनुयायी हैं।

रूस का क्षेत्रफल 87,07,870 वर्गमील है जो विश्व के लगभग 1/6 भू भाग पर फला हुआ ह। यह क्षेत्रफल यू० एस०ए० के क्षेत्रफल से ढाई गुना, भारत के क्षेत्रफल से आठ गुना और ब्रिटेन के क्षेत्रफल से 100 गुना अधिक है। जनसख्या के दृष्टिकोण से रूस का विश्व मे तीसरा स्थान है। इसकी वतमान जनसख्या लगभग साढ़े इक्कीस करोड है।

आर्थिक साधनो की बहुलता की दृष्टि से भी रूस का विशाल क्षेत्र बहुत महत्वपूर्ण है। यह देश प्राकृतिक साधनो की दृष्टि मे बहुत ही धनी है। यहा हर प्रकार की जलवायु वाला भू-भाग पाया जाता हैं अत हर प्रकार की उपज होती है और प्राय सभी प्रकार के पशु मिलते हैं। विभिन्न महत्वपूर्ण खनिज पदार्थ इस देश

जापान युद्ध (1904-1905) म रूस की पराजय ने रूसी निरकुश शासको के मान को एक गम्भीर ठेस पहुँचाई।

साम्राजीय शासन (1905 15)

सन् 1905-6 मे रूस मे एक ऐसी क्रान्ति हुई कि जार को कुछ सुविधायें दन और एक प्रकार की वधानिक सरकार की स्थापना करने के लिए बाध्य होना पडा। अगस्त, 1905 मे जार को एक घोषणा पत्र निकालना पडा और 'इसके द्वारा व्यक्ति के शरीर, आत्मा, वाणी, समुदाय तथा मुक्त व्यवहार के वास्तविक अधिकारो के आधार पर" जनता को नागरिक स्वतन्त्रता प्रदान की गई। मई सन् 1906 मे ससद् (Duma) का पहला अधिवेशन बुलाया गया जिसे जुलाई म बिना कोई निणय लिये ही विघटित कर दिया गया। लेकिन एक बार फिर प्रतिक्रियावादी शक्तियो का मत प्रबल हो गया। फलत दूसरी ससद का चुनाव हुआ। इस ससद को भी शीघ्र ही भग होना पडा, क्योकि जार शक्ति देने के लिए तयार नही था। सब ओर रोष फैला और तृतीय ससद (Duma) का निर्माण किया गया। शासन की दृष्टि से यह ससद् कुछ सफल सिद्ध हुई। फलत यह अपने पूरा पाच वष के काय काल तक अपना कार्य करती रही। तब चतुथ ससद का निर्माण हुआ जो प्रथम महायुद्ध तक काय करती रही। चतुथ ससद भी जनता की सन्तुष्टि के लिए कुछ न कर सकी और जारशाही को उखाड फकने के लिए रूस के अन्दर और बाहर क्रान्तिकारी शक्तिया प्रबल होती गई। इन परिस्थितियो म प्रथम विश्वयुद्ध 1914 मे आरम्भ हुआ। रूस ने जमनी के साथी आस्ट्रिया के विरुद्ध सबिया के पक्ष का समर्थन किया। जमनी ने भी रूस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की। युद्ध रूस की जनता मे लोकप्रिय नही हुआ। जन समूह के कष्ट बढ गए और 1916 के अन्त तक तो स्थिति बहुत ही बिगड गई।

क्रांति एव सवहारा वग के अधिनायकतत्र की स्थापना

शासन की ओर से किसी उद्धार की सभावना नही देखकर अन्त म ड्यूमा (Duma) ने कदम उठाये। जार को राज्य छोडकर चले जाने की आज्ञा दी गयी ल्वोव (Lvov) के नतृत्व म अस्थाई सरकार का निर्माण किया गया जिसने अनेक सुधारो की घोषणा की और यह उद्देश्य घोषित किया कि वह रूस मे ससदीय प्रकार के लोकतन्त्र की स्थापना करना चाहती है। लेकिन इन सब दायित्वो को पूरा करने की सामथ्यता इस अस्थाई सरकार म नही थी।

इसी समय अप्रेल 1917 म लेनिन ने समाजवादी क्रांति का नारा बुलन्द किया। उसने अस्थाई सरकार को अमान्य घोषित करत हुए यह माग की कि सनिको को शान्ति मिले, कृषको को खेती की भूमि मिले। श्रमिको को कारखान प्राप्त हो और सम्पूर्ण शक्ति पचायतो म निहित हो। लेनिन के नारे ने क्रांति का बिगुल बजा दिया। यद्यपि उसे कुछ दिनो के लिये रूस छोड कर बाहर जाना पडा परन्तु क्रान्ति बुझी नहीं प्रत्युत निरन्तर आगे बढ़ती ही रही। इसी मध्य करेन्स्की नामक म दाविक

की धरती में प्रचुर मात्रा म उपलब्ध हैं। वस्तुत सोवियत सघ एक सर्वसम्पन्न और आत्मनिर्भर राष्ट्र है।

यह देश विविध जातियो, धर्मों और भाषाओं का घर है। इन सब ने यहा की राजनीतिक व्यवस्था पर गम्भीर प्रभाव डाला है। रूस म लगभग 187 विभिन्न जातिया (Nationalities) हैं। यहा अनेक धर्म है जिनम इसाई, इस्लाम, बौद्ध और यहूदी प्रमुख हैं। लगभग 147 भाषाए बोली जाती हैं। इन परिस्थितिया म यह स्वाभाविक है कि सोवियत सरकार के लिए विविध जातिया भाषाओं और धर्मों को एक प्रशासन के अधीन बनाए रखना सदव गम्भीर सिरदर्द रहा है। फिर भी साम्यवादी सरकार ने एक राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था की सीमाओं के अन्तगत इन्हे सांस्कृतिक स्वायत्ता (Cultural Autonomy) देकर राष्ट्रीयता की समस्या को हल किया है। सोवियत सरकार एक बहु-राष्ट्रीय (Multi national) अथवा अराष्ट्रीय (Unmultinational) राज्य निर्मित करने म सफल हुई है।

यह भी एक प्रशसनीय तथ्य है कि सोवियत शासन-व्यवस्था आज भी अतीत से सम्बन्ध जोडे हुए है। *भूतकालीन जारो की निरकुशता की छाया साम्यवादी दल* के अधिनायकत्व के दपण मे प्रतिबिम्बित होती है। जारकालीन रूस की भाति सोवियत रूस की नीति अप्रत्यक्ष उपनिवेशीकरण की अर्थात अगल-बगल के देशों को अपने प्रभाव क्षेत्र मे रखने की है। जारो के समान ही आज भी साम्यवादी नेता जनता को अन्धेरे मे रखने की चेष्टा करते हैं। फिर भी यह कहा जा सकता है कि *'अन्धेरे अतीत' (Dark past) के कारण ही रूस म साम्यवादी प्रयोग सफल बन* सका है। रूसी शासन व्यवस्था का अभिनव प्रयोग इस दृष्टि से बहुत ही सफल कहा जाएगा कि आज विश्व की आधी जनसख्या साम्यवादी सिद्धा त के प्रभाव क्षेत्र मे है।

सविधान की पृष्ठभूमि और उसका विकास
(Background and Development of the Constitution)

सोवियत रूस के सवधानिक इतिहास को सुविधा की दृष्टि से हम निम्न-लिखित भागो म विभाजित कर सकते हैं—

जारों का निरकुश शासन (1700–1905)

1905 ई० के पूव रूस मे जारो का निरकुश शासन था। रूस की जनता पिछड़ी हुई थी और शासन म उसका कोई हाथ न था। महान् पीटर और कथरीन के गौरवपूर्ण कार्यों के होते हुए भी सामान्य जनता की हालत मे कोई सुधार नही हुआ। अलक्जण्डर द्वितीय के शासनकाल म कुछ क्षेत्रो म सामा य सुधार किये गये किन्तु रूसी-शासन की निरकुश भावना अछूती रही। 1881 म अलक्जण्डर द्वितीय को बम्ब से मार दिया गया। उस समय देश म औद्योगिक क्रांति (Industrial Revolution) का श्रीगणेश हुआ, किन्तु अलक्जण्डर ततीय के काल म कोई प्रगति नही हुई और जनता गरीबी एव निरकुश शासन की चक्की म पिसती रही।

द्वितीय के शासनकाल म घटनाओ ने एक गम्भीर मोड लिया। रूस-

जापान युद्ध (1904–1905) में रूस की पराजय ने रूसी निरंकुश शासकों के मान को एक गम्भीर ठेस पहुँचाई।

साम्राज्यीय शासन (1905-15)

सन् 1905–6 में रूस में एक ऐसी क्रान्ति हुई कि जार को कुछ सुविधायें देने और एक प्रकार की वैधानिक सरकार की स्थापना करने के लिए बाध्य होना पड़ा। अगस्त, 1905 में जार को एक घोषणा पत्र निकालना पड़ा और "इसके द्वारा व्यक्ति के शरीर, आत्मा वाणी समुदाय तथा मुक्त व्यवहार के वास्तविक अधिकारों के आधार पर" जनता को नागरिक स्वतन्त्रता प्रदान की गई। मई सन् 1906 में संसद् (Duma) का पहला अधिवेशन बुलाया गया जिसे जुलाई में बिना कोई निर्णय लिये ही विघटित कर दिया गया। लेकिन एक बार फिर प्रतिक्रियावादी शक्तियों का मत प्रबल हो गया। फलतः दूसरी संसद् का चुनाव हुआ। इस संसद को भी शीघ्र ही भंग होना पड़ा क्योंकि जार शक्ति देने के लिए तैयार नहीं था। तब और राय फला और तृतीय संसद (Duma) का निर्माण किया गया। शासन की दृष्टि से यह संसद् कुछ सफल सिद्ध हुई। फलतः यह अपने पूर्ण पाँच वर्ष के कार्य काल तक अपना कार्य करती रही। तब चतुर्थ संसद का निर्माण हुआ जो प्रथम महायुद्ध तक काय करती रही। चतुर्थ संसद भी जनता की सन्तुष्टि के लिए कुछ न कर सकी और जारशाही को उखाड़ फेंकने के लिए रूस के अन्दर और बाहर क्रान्तिकारी शक्तियाँ प्रबल होती गई। इन परिस्थितियों में प्रथम विश्वयुद्ध 1914 में आरम्भ हुआ। रूस ने जर्मनी के साथी आस्ट्रिया के विरुद्ध सर्बिया के पक्ष का समर्थन किया। जर्मनी ने भी रूस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की। युद्ध रूस की जनता में लोकप्रिय नहीं हुआ। जन समूह के कष्ट बढ़ गए और 1916 के अन्त तक तो स्थिति बहुत ही बिगड़ गई।

क्रांति एवं सर्वहारा वर्ग के अधिनायकतन्त्र की स्थापना

शासन की ओर से किसी उद्धार की सम्भावना नहीं देखकर अन्त में ड्यूमा (Duma) ने कदम उठाये। जार को राज्य छोड़कर चले जाने की आज्ञा दी गयी ल्वोव (Lvov) के नेतृत्व में अस्थाई सरकार का निर्माण किया गया जिसने अनेक सुधारों की घोषणा की और यह उद्देश्य घोषित किया कि वह रूस में संसदीय प्रकार के लोकतन्त्र की स्थापना करना चाहती है। लेकिन इन सब दायित्वों को पूरा करने की सामर्थ्यता इस अस्थाई सरकार में नहीं थी।

इसी समय अप्रेल 1917 में लेनिन ने समाजवादी क्रांति का नारा बुलन्द किया। उसने अस्थाई सरकार को अमान्य घोषित करते हुए यह माँग की कि सैनिकों को शान्ति मिले कृषकों को खेती की भूमि मिले। श्रमिकों को कारखाने प्राप्त हों और सम्पूर्ण शक्ति पंचायतों में निहित हो। लेनिन के नारे ने क्रांति का बिगुल बजा दिया। यद्यपि उसे कुछ दिनों के लिये रूस छोड़ कर बाहर जाना पड़ा परन्तु क्रांति बुझी नहीं अपितु निरन्तर आगे बढ़ती ही रही। इसी मध्य करेन्सकी नामक मेंशविक

नेता ने शासन का नियन्त्रण अपने हाथ में ले लिया, परन्तु वह भी जन आन्दोलन को दबाने में सफल न हो सका।

सितम्बर 1917 म लेनिन वापिस रूस लौट आया। आते ही उसने क्रान्ति म नवजीवन फूक दिया। अस्थाई सरकार का पतन हो गया और शासन की बागडोर लेनिन तथा उसके वोल्शेविक (Bolshevik) दल के हाथो म आ गयी। लेनिन ने उस सविधान निर्मात्री सभा को भग कर दिया जिसकी स्थापना अस्थाई सरकार ने ससदीय शासन का सविधान बनाने के लिए की थी। लेनिन की दृष्टि म ऐसा करना क्रान्तिकारी अधिनायकतत्र (Revolutionary Dictatorship) की स्थापना के लिए आवश्यक था। इसी तरह अक्टूबर, 1917 की क्रान्ति के फलस्वरूप रूस म सवप्रथम सवहारा वर्ग के अधिनायक तन्त्र (Dictatorship of the Proletariat) की स्थापना हुई। इस क्रान्ति की सफलता ने यह सिद्ध कर दिया कि किसी भी सच्चे जन आन्दोलन को दमनकारी उपायो से कुछ समय के लिए दबाया जा सकता है, लेकिन सदैव के लिए समाप्त नही किया जा सकता। जन भावनाओ का ज्वालामुखी जब अपना महा विस्फोट करता है तो निरकुश से निरकुश सत्ता भी उसके सामने अपना अस्तित्व खो बठती है।

सविधान निर्माण-काल (1918-1935)

सवहारा वग के अधिनायकतन्त्र ने अपनी स्थापना के तुरन्त बाद एक ओर तो अपनी विरोधी शक्तियो को समाप्त करने का काय किया और दूसरी ओर देश मे स्थायित्व लाने की दृष्टि से समाजवादी सविधान का मस्विदा तयार किया जो समस्त सोवियतो की 5वी अखिल रूसी कांग्रेस (Fifth All Russian Congress of Soviets) के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। इस कांग्रेस ने रूसी समाजवादी सघीय सोवियत गणराज्य' (Russian Socialist Federative Soviet Republic) के इस सविधान को स्वीकार किया और उसकी घोषणा 10 जुलाई सन् 1918 को करदी गई।

सन् 1918 के सविधान के अनुसार रूस का शासन 6 वष चला। इस अवधि म नवीन व्यवस्था की जडें मजबूती से जम गई और यह भय जाता रहा कि प्राचीन व्यवस्था की स्मृति पुन सिर उठा सकेगी। इसी मध्य ट्रान्सकाकेशिया (Trans caucasia) बाइलो रूस (Byelo-Russia) तथा युक्रेन (Ukraine) नामक तीन अन्य गणत त्र भी सोवियत सघ म सम्मिलित हो गये अत जुलाई 1923 म प्राचीन सविधान के आधार पर एक नवीन सविधान का निर्माण किया गया जो जनवरी, 1924 म लागू हुआ। इसका नाम सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ' (Union of Soviet Socialist Republic) रखा गया। इस सविधान म राज्य शक्ति के वितरण या विभाजन (Division of Powers) के सिद्धान्त को अपनाया गया और प्रत्येक गणराज्य को यह अधिकार प्रदान किया गया कि वह जब चाहे सघ स अलग हो सकता है। इस सविधान के अनुसार सोवियत सघ कांग्रेस, केन्द्रीय कायकारिणी समिति, प्रेसीडियम एव पिपुल्स कमिस्सार कौंसिल शासन के इन अग ा

की स्थापना की गई। सोवियत संघ कांग्रेस मे समस्त गणराज्यो को सदस्यता दी गई। केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति मे दो सदनो की व्यवस्था की गई– दो यूनियन आफ सोवियत्स तथा दी सोवियत ऑफ नेशनलिटिज (The Union of Soviets & the Soviet of Nationalities)। यूनियन आफ सोवियत्स जनता का प्रतिनिधित्व करती थी तथा सदस्यो का चुनाव जनसख्या के आधार पर होता था। सोवियत ऑफ नेशनलिटीज राज्यो का सदन था और यूनियन ऑफ सोवियत्स की अपेक्षा कही अधिक छोटा था। प्रेसीडियम म 27 सदस्यो की व्यवस्था की गई थी। उनम से 9 सदस्य यूनियन ऑफ सोवियत्स, 9 सोवियत ऑफ नेशनलिटीज तथा शेष 9 दोनो सदनो की सयुक्त बैठक मे से चुने जाते थे। पिपुल्स कमिस्सार कौसिल (The Council of Peoples Commissar) सघ की कार्यकारिणी का काय करती थी। इसकी नियुक्ति केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति करती थी। इस कौसिल के अध्यक्ष की स्थिति प्रधान-मन्त्री के समान थी। स्टालिन इसी पद पर नियुक्त था और इसी कारण वह समस्त सरकारी कार्यों का सचालन करता था।

स्टालिन सविधान (1936)

प्रथम सविधान के समान द्वितीय सविधान का कार्यकाल भी अल्प ही रहा। सन् 1924 के सविधान के अन्तर्गत रूस का शासन केवल 12 वर्ष चला। इस बीच मे नवीन आर्थिक नीति (New Economic Policy) और पचवर्षीय योजनाओ के द्वारा रूस ने बहुमुखी उन्नति की और समाज को समाजवादी बनाने के लिए काय किया। फलस्वरूप सोवियत सघ समाजवाद की दशा मे द्रुतगति से आगे बढा। 7 फरवरी, 1935 को केन्द्रीय कार्यपालिका समिति (Central Executive Committee) ने स्टालिन की अध्यक्षता म 31 सदस्यो के एक सविधान-आयोग के गठन की घोषणा की। आयोग ने सविधान के जिस प्रारूप की रचना की, उसे केन्द्रीय कार्यपालिका समिति के प्रेसीडियम (Presidium) ने स्वीकार कर लिया। तत्पश्चात् जनमत जानने के लिए उसे प्रकाशित कर दिया गया। सविधान के प्रारूप म लगभग 5,27 000 सभाओ मे विचार किया गया, जिनमे लगभग साढे तीन करोड लोगो ने भाग लिया। प्रारूप म लगभग 1 54,000 सशोधन प्रस्ताव आये। अन्त मे प्रारूप एव प्रस्तावित सशोधनो पर '8वी सघीय सोवियत कांग्रेस ने विचार किया। इस सभा मे 2016 प्रतिनिधि थे जो 63 जातियो के थे और जिनमे प्राय सभी वर्गों के लोग थे। लेकिन सभी सदस्य साम्यवादी विचारधारा के थे और प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से साम्यवादी दल से सम्बन्धित थे। 5 दिसम्बर सन् 1936 को सोवियत कांग्रेस ने 43 सशोधनो के साथ सविधान के इस प्रारूप को स्वीकार कर लिया जो सन् 1936 का स्टालिन का सविधान कहलाया।

यद्यपि अब तक इस सविधान म अनेक सशोधन किये जा चुके हैं लेकिन उनके कारण सविधान की भावना मे कोई मूल परिवर्तन नहीं हुआ है। इन सविधान की मुख्य विशेषताओ का अध्ययन हम आगे की पक्तियो म करेंगे फिर भी यहा इतना जान लेना उचित है कि सोवियत सघीय व्यवस्था और अव्ययी इकाइयो की शासन व्यवस्था मे कई बार परिवर्तन लाये गये हैं और अब सोवियत सघ म पन्द्रह

सघीय गणराज्य शामिल हैं। कुछ समय पूर्व गणराज्यों की संख्या 16 थी किन्तु हाल ही में कोला फिनिश गणतन्त्र को रूसी सघीय समाजवादी गणतन्त्र में मिला लिया गया है।

सोवियत संविधान की विशेषतायें
(Salient Features of the Constitution of U S S R)

विशिस्की ने सोवियत सघ को एक नये प्रकार का राज्य कहा है। सोवियत संविधान एक अनुपम शासन प्रणाली की स्थापना करता है और विश्व के अन्य संविधानों से कुछ समानता रखते हुए भी अधिकांशतः महत्वपूर्ण अन्तर लिए हुए है। इसकी उल्लेखनीय विशेषताएं ये हैं—

संविधान का नया अर्थ

रूसी दृष्टिकोण के अनुसार संविधान इस बात का सकेत करता है कि शासन किस मार्ग से होकर चला है। इसके विपरीत अन्य देशों में संविधान यह बताता है कि देश किस पथ पर चले। स्टालिन के शब्दों में—"व्यवहार में जो कार्य कर लिये जाते हैं और जिनमें सफलता मिल सकती है संविधान उन्हीं को पजीबद्ध करने या वैधानिक रूप देने का कार्य करता है।"

संविधान सम्बन्धी इस दृष्टिकोण के कारण सोवियत संविधान और अन्य संविधानों में बड़ा अन्तर आ गया है—(क) अन्य देशों में एक ही संविधान कुछ संशोधनों के साथ दीर्घ समय तक चलता रहता है जब कि रूस में सामाजिक प्रगति के अनुरूप संविधान भी परिवर्तित होता जाता है। (ख) अन्य देशों में संविधान एक आदर्श को प्रस्तुत करता है। संविधान को अति पवित्र माना जाता है और उसकी पुरातनता उसके सम्मान को बढ़ाती है किन्तु सोवियत संविधान गत्यात्मक है और उसकी प्राचीनता विशेष आदर की वस्तु नहीं है। रूस में प्रतिवर्ष ही संविधान कुछ न कुछ बदलता रहता है। (ग) पाश्चात्य एवं अन्य प्रजातान्त्रिक संविधान व्यक्ति की स्वतन्त्रता को सुरक्षित करने और शासन की शक्तियों को सीमित करने के उद्देश्य से बने हैं जबकि सोवियत संविधान में मार्क्सवादी सर्वहारियों की तानाशाही को बदल देने के लिये सरकार में शक्ति का केन्द्रीयकरण दिखाई देता है।

लिखित स्वरूप

अमेरिकन संविधान की भांति सोवियत संविधान भी छोटा-सा प्रलेख है, जिसमें सामाजिक ढांचे शासन के विभिन्न अगों एवं उनकी शक्तियों, नागरिकों के अधिकारों और कर्त्तव्यों, राज्य के स्वरूप आदि का विवरण है। इसमें कुल 13 अध्याय (Chapters) 147 धारायें (Articles) और दो परिशिष्ट (Appendices) हैं।

कम अचल संविधान

सोवियत संविधान अचल (Rigid) होते हुये भी उतना कठोर नहीं है जितना कठोर अमरिका का संविधान है। यह केवल इसी दृष्टि से अचल है कि संविधान के

संशोधन से सम्बन्धित कानूनों को पारित होने के लिये यह आवश्यक है कि सर्वोच्च सोवियत (Supreme Soviet) के दोनों सदनों का दो-तिहाई बहुमत उन्हें स्वीकार करे। रूसी संविधान का झुकाव वस्तुतः परिवर्तनशीलता की ओर है। संवैधानिक संशोधनों के प्रस्तुतीकरण (Initiation) और उनके पारित होने की विधियों पर विचार करने से रूसी संविधान की वह परिवर्तनशीलता पूर्णतः स्पष्ट हो जायेगा।

प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से रूस में संशोधन सम्बन्धी प्रस्ताव व्यवस्थापिका के किसी भी सदन में प्रस्तुत किया जा सकता है। उसके लिये यह भी आवश्यक नहीं है कि वह सदन के निश्चित बहुमत के द्वारा प्रस्तुत किया जाये। इसके अतिरिक्त संशोधन को प्रस्तावित करने के विषय में संघ की इकाइयों को कोई अधिकार नहीं है।

संशोधन के अन्तिम रूप से पारित होने के लिए रूसी संविधान में केवल यह व्यवस्था है कि संशोधनों को व्यवस्थापिका के प्रत्येक सदन के दो तिहाई बहुमत द्वारा स्वीकार कर लिया जाये। रूस के संघ में सम्मिलित गणतन्त्रों को संशोधन के पुष्टि-करण आदि का कोई अधिकार नहीं है। रूस की यह व्यवस्था भारत, अमेरिका और स्विटजरलैंड सभी से भिन्न है।

इस तरह स्पष्ट है कि रूस का संविधान अचल होते हुए भी अचल संविधानों (Rigid Constitutions) में सबसे अधिक लचीला (Flexible) है। साथ ही संविधान की संशोधनों सम्बन्धी व्यवस्था एकात्मक (Unitary) राज्यों जैसी अधिक प्रतीत होती है, क्योंकि संघ कि इकाइयों को न तो संशोधन प्रस्तावित करने का ही कोई अधिकार है और न उसका पुष्टि करने का ही।

सोवियत शासन व्यवस्था की विशेषता यह भी है कि वहां पर सामूहिक आवश्यकताओं के अनुरूप बहुधा संविधान के विरुद्ध कार्य भी कर लिये जाते हैं और उन्हें असंवैधानिक घोषित नहीं किया जाता, प्रत्युत उनके अनुरूप बाद में संविधान में, यदि आवश्यक समझा जाता है तो संशोधन कर लिया जाता है।

समाजवादी लोकतन्त्रात्मक संविधान

रूसी संविधान द्वारा एक समाजवादी लोकतन्त्र (Socialist Democracy) की स्थापना की गई है जिसमें राज्य और समाज को उत्पादन तथा वितरण के साधनों पर अपना स्वामित्व रखना है और उनका प्रयोग समाज के लिए इस तरह करना है कि आर्थिक समानता पर आधारित एक वर्ग-हीन समाज की स्थापना हो सके, जिसमें न कोई शोषक हो न शोषित, न कोई पूंजीपति हो न श्रमिक और सभी को कार्य करने के समान अवसर प्राप्त हों तथा सभी को जीवन की सुविधाओं की समानता उपलब्ध हो।

सामाजिक समानता से परिपूर्ण व्यवस्था की स्थापना करने की दृष्टि से ही रूस के संविधान में उन विविध बातों की चर्चा नहीं की गई है जिसके कारण लोकतन्त्र प्रायः सामाजिक असमानता के शिकार हुए हैं। उदाहरणार्थ रूसी संविधान जनता की प्रभुसत्ता (Sovereignty of the people) की चर्चा

करता। साम्यवादी नेताओं की मान्यता है कि जनता की प्रभुसत्ता की आड़ में धनी लोग निधनों के मतों को खरीद लेते है और इस तरह जन प्रभुसत्ता के स्थान पर अपनी प्रभुसत्ता स्थापित करने में सफल हो जाते है। रूसी संविधान जनता की प्रभुसत्ता के स्थान पर श्रमिकों और कृषकों की प्रभुसत्ता (Sovereignty of the workers and peasants) की चर्चा करता है, क्योंकि सच्ची समाजवादी व्यवस्था में प्रभुसत्ता का उन्हीं के हाथों में रहना आवश्यक है।" संविधान के व्यवहारीकरण से श्रमिक वर्ग के हाथों में ही सत्ता की बागडोर है और राज्य संचालन का कार्य श्रमिक वर्ग के द्वारा ही सम्पादित होता है। संविधान की विभिन्न धारायें इस व्यवस्था को कानूनी रूप प्रदान करती है।

रूसी संविधान में सम्पत्ति के उस व्यक्तिगत अधिकार की भी बात नहीं की गई है जिसके कारण पूंजीवाद को प्रोत्साहन मिलता है। इसके विपरीत रूसी संविधान में उत्पादन के साधनों, उनके स्वामित्व और वितरण की व्यवस्था का संचालन समाज द्वारा एवं समाज के लिए किये जाने की बात कही गई है।

रूस में उत्पादन के साधनों पर से व्यक्तिगत स्वामित्व समाप्त कर देने से यह नहीं समझा जाना चाहिए कि वहा लोगों के पास ऐसी कोई वस्तु ही नहीं होती जिसे वे अपनी कह सके। वस्तुतः वहां व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकार का रूप अत्यन्त सीमित है। यद्यपि लोगों को अपनी व्यक्तिगत आय, व्यक्तिगत बचत और घर की अन्य वस्तुओं पर अधिकार है तथा इन चीजों को लोग उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त भी करते है पर सोवियत शासन व्यवस्था सम्पत्ति के व्यक्तिगत अधिकार की ऐसी किसी व्यवस्था को स्वीकार नहीं करती जो पूंजी के एकाधिकार को प्रोत्साहित करे और समाज को शोषक व शोषितों के विरोधी वर्गों में विभाजित करे। रूस की अर्थ-व्यवस्था राष्ट्रीय आर्थिक आयोजना (National Economic Plan) द्वारा निश्चित और निर्देशित की जाती है जिसका उद्देश्य जन सम्पत्ति को बढ़ाना, जनता के भौतिक एवं सांस्कृतिक-स्तर को ऊंचा उठाना तथा प्रतिरक्षात्मक समृद्धि को शक्तिशाली बनाना है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सोवियत संविधान एक ऐसे समाजवादी लोकतन्त्र की स्थापना करता है जिसमें व्यक्ति को सामाजिक समानता व वास्तविक स्वतन्त्रता प्राप्त हो। राजनीतिक स्वातन्त्र्य की स्थापना की दृष्टि से भी सोवियत संविधान अन्य लोकतन्त्रात्मक संविधानों से पीछे नहीं है। रूसी संविधान की 136 वीं धारा में सार्वजनिक मताधिकार (Universal Sufferage) की व्यवस्था है जिसमें स्पष्ट कहा गया है कि प्रत्येक नागरिक को एक मत का अधिकार है और सभी नागरिक निर्वाचन में समान रूप से भाग लेने के अधिकारी हैं।" इसी तरह संविधान की धारा 137 स्त्रियों के मताधिकार को स्पष्ट करती है— पुरुषों के समान ही स्त्रियों को भी निर्वाचन में चुनने का और स्वयं के चुने जाने का अधिकार प्राप्त है। रूसी संविधान नागरिकों को विचार, भाषण और प्रकाशन आदि की स्वतन्त्रता का अधिकार भी प्रदान करता है। नागरिकों के इन अधिकारों को व्यावहारिक रूप देने

है यह एक भिन्न बात है, लेकिन कानूनी रूप से सोवियत संविधान एक राजनीतिक लोकतन्त्र की स्थापना की होड में पीछे नही है।

विचित्र संसदीय व्यवस्था

सोवियत संविधान संसदीय शासन-व्यवस्था का रूप कुछ विचित्र है। शासन प्रमुख (Head of Government) का रूप सामुदायिक (Collective) व बहुल (Plural) है, जिसे सामूहिक रूप से प्रेसीडियम (Presidium) कहा जाता है। यह प्रेसीडियम दुनिया की सभी संस्थाओ मे एक अनोखी संस्था है। इसमे 33 सदस्य होते है जो पद एव शक्ति की दृष्टि से उसी प्रकार समान होते है जिस प्रकार कि स्विस संघीय परिषद् (Swiss Federal Council) के सदस्य होते हैं। इसके अतिरिक्त प्रेसीडियम केवल वैधानिक अथवा नाममात्र की ही शासन प्रमुख नही होती, अपितु देश के शासन संचालन में सक्रिय भाग लेती है।

मन्त्रिमण्डल की रचना की दृष्टि से भी रूस संसदीय व्यवस्था विचित्रता लिए हुए है। रूस मे मन्त्रिगण दो प्रकार के होते है—संघीय मन्त्री (Union Ministers) और गणतन्त्रीय मन्त्री (Union Republic Ministers)। संघीय मन्त्री संघीय विषयो का प्रबन्ध करते हैं जो संघ की इकाईयो के अधिकार क्षेत्र के होते हैं। गणतन्त्रीय मन्त्री वस्तुत संघीय सरकार और गणतन्त्रों की सरकार के बीच मध्यस्थता का कार्य करते हैं। रूसी मन्त्रिमण्डल का यह रूप विश्व मे अनोखा है। -

रूसी संसदीय व्यवस्था की तीसरी विचित्र बात यह है कि लोकसेवा के सदस्य भी कभी कभी सर्वोच्च सोवियत (Supreme Soviet) के सदस्य हो जाते हैं और उन्हे भी अपने कार्यों के लिए प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी होना पड़ता है। संसदीय व्यवस्था का यह रूप हम अन्यत्र देखने को नही मिलता।

जनतन्त्रात्मक केन्द्रवाद

सोवियत शासन-प्रणाली जनतन्त्रात्मक केन्द्रवाद (Democratic Centralism) के सिद्धांत पर आधारित है अर्थात् जनतन्त्र और केन्द्रीयकरण की परस्पर विरोधी प्रवृत्तियो में समन्वय किया गया है। जनतन्त्रवादी पुट यह है कि नागरिको का प्रशासनिक कार्यों मे भाग लेने का समुचित अवसर प्रदान किया जाता है। नागरिक उत्पादक, उपभोक्ता, और साम्यवादी दल का सदस्य इन चार रूपो मे एक ही व्यक्ति को यह अवसर मिलता है कि वह शासन के सम्पर्क मे आ सके और उनकी आलोचना कर सके। सोवियत संघ के अन्तर्गत नागरिको को विचार-विमर्श वाद विवाद एव आलोचना प्रत्यालोचना की पूर्ण स्वतन्त्रता है परन्तु यह जनतन्त्र केवल यही पर समाप्त हो जाता है क्योकि रूस मे प्रत्येक शासन अथवा पार्टी का अङ्ग अपने उच्च अङ्ग के अधीन है। उसको केवल उसी सीमा तक विचार विमर्श और वाद विवाद करने की स्वतन्त्रता होती है जिस सीमा तक उस पर उच्च अङ्ग प्रतिबंध नही लगाता। प्रत्येक निम्न स्तर के अङ्ग को चाहे वह दल का हो या सरकार का—अपने उच्च स्तर के अंग की आज्ञा का पालन करना पड़ता है। इस प्रकार अन्त मे सर्वोच्च राज्य शक्ति एक केन्द्रीय बिन्दु मे जाकर निहित हो जाती है।



संस्कृतियों के जन-समूह अपने अपने क्षेत्र में अपनी अपनी संस्कृति की रक्षा और वृद्धि कर सके। सांस्कृतिक धारा पर ही संघीय इकाइयां अपने अपने स्तर के अनुरूप विविध नामों से पुकारी गई हैं। उदाहरणार्थ, सांस्कृतिक दृष्टि से जो सब उन्नत इकाइयाँ हैं उन्हें संघीय गणतन्त्र (Union Republics) कहा गया है। उनसे कम उन्नत इकाइयों से स्वशासित गणतन्त्र (Autonomous Republics) कहा जाता है। इससे भी कम उन्नत इकाइयों को स्वशासित प्रदेश (Autonomous Regions) और सब से कम उन्नत इकाइयां को राष्ट्रीय क्षेत्र (National Areas) की संज्ञा दी गई है। इसी वजह से अनेक इकाइयों के नाम भी उनकी राष्ट्रीयताओं के नाम पर रखे गये हैं। उदाहरण के लिए यूक्रेन सोवियत समाजवादी गणतन्त्र (Ukranian Soviet Socialist Republic) उन लोगों का गणतन्त्र है जो यूक्रेनियन जाति के हैं। ठीक इसी प्रकार उजबक जाति के गणतन्त्र को उजबक सोवियत समाजवादी गणतन्त्र (Uzbek Soviet Socialist Republic), ताजिक जाति के गणतन्त्र को ताजिक सोवियत समाजवादी गणतन्त्र (Tazik Soviet Socialist Republic) आदि कहा गया है। यही नहीं संविधान द्वारा इन गणतन्त्रों के इस अधिकार को भी मान्यता दी गई है कि वे केन्द्रीय व्यवस्थापिका के ऊपरी सदन में अलग अपने-अपने प्रतिनिधि भेजें। प्रचलित व्यवस्था के अनुसार केन्द्रीय व्यवस्थापिका के ऊपरी सदन के लिए संघीय गणतन्त्र (Union Republics) 25, स्वशासित गणतन्त्र (Autonomous Republics) 11 स्वशासित शासन-प्रदेश (Autonomous Regions) 5 और राष्ट्रीय क्षेत्र (National Areas) 1 प्रतिनिधियों को भेजते हैं। सांस्कृतिक स्वतन्त्रता बनाये रखने के लिए ही रूस में यह व्यवस्था है कि किसी भी प्रदेश पर दूसरे प्रदेश की भाषा नहीं थोपी गई है, वरन् सभी गणतन्त्रों को भाषा सम्बन्धी पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त है। इस समय सम्पूर्ण रूस में लगभग 110 भाषायें हैं जिनमें से 70 भाषायें स्कूलों में पढ़ायी जाती हैं और 16 भाषाओं को राज्य भाषायें स्वीकार किया गया है। राज्य भाषाओं में ही राजकीय प्रशासन कार्य होता है।

उपर्युक्त विवरण से प्रगट है कि विभिन्न राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक समुदायों के अनुसार इकाइयों को मान्यता देकर, उन्हें केन्द्रीय व्यवस्थापिका के ऊपरी सदन में अलग अलग प्रतिनिधित्व प्रदान करके और सबके लिए भाषा सम्बन्धी स्वतन्त्रता की व्यवस्था करके सोवियत संविधान ने राजनीतिक संघ के अतिरिक्त एक राष्ट्रीय और एक सांस्कृतिक संघ की स्थापना की है।

एक दलीय शासन

सोवियत संविधान की अन्य विशेषता है—एक दलीय व्यवस्था। इस सम्बन्ध में दो बातें उल्लेखनीय हैं—साम्यवादी दल की संवैधानिक स्थिति और केवल एक दल की प्रधानता। प्रजातांत्रिक संविधान में राजनीतिक दल ऐच्छिक संगठन होते हैं और संविधान द्वारा उन्हें मान्यता प्रदान करने की कोई आवश्यकता नहीं समझी जाती। लेकिन, सोवियत संविधान में साम्यवादी दल को मान्यता प्रदान की गई है।

जनतन्त्रात्मक केन्द्रवाद केवल शासन
ट्रेड यूनियनो और उत्पादक एवं उपभो
साम्यवादी दल का सगठन भी जनतन्त्रात्मक
इसमे भी स्थानीय, क्षेत्रीय एव केन्द्रीय सगठ
मे केन्द्रित हो जाती है । यद्यपि विविध धरात
पाई जाती है, परन्तु सब के सब अपने से ऊप
विभिन्न संगठनो के वाद विवाद और विचार-
निर्णय अन्तत केन्द्रीय सगठन तक पहुच जात
जारी करता है । ये नियम और आदेश सभी
हैं । यही जनतन्त्रात्मक केन्द्रवाद है जिसको अ
सोवियत सघ को एक निरकुश, एकात्मक एव

राजनीतिक एव सास्कृतिक सघ

सोवियत सविधान द्वारा रूस म एक र
स्थापना की गई है । राजनीतिक सघात्मकता व
से सयुक्त राज्य अमेरिका व भारत आदि सघो
सविधान की धारा 13 मे कहा गया है कि "स
एक सघात्मक राज्य है जो सोवियत समाजवादी
आधार पर निर्मित हुआ है ।" इस तरह वर्था
सघ वस्तुत ऐसे गणतन्त्रो का सघ है जिन्हे उसक
है । इस दृष्टि से रूस का सघ अमेरिकन, स्विस ए
क्योंकि इन देशो के सविधानो म सघीय इकाइय
नही की गई है । सोवियत सविधान मे सद्धातिक रू
विशेषतायें भी विद्यमान हैं । अन्य सघो की भाति स
सविधान है जो सघीय सरकार और अवयवी इकाइय
अतिरिक्त सविधान द्वारा सघ एव इकाईयो के बीच र
और इकाइयो को क्षेत्रीय विषयो म पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदा
सोवियत सघ मे कानूनी दृष्टि से सघीय प्रणाली की वय
हा, यह अवश्य है कि अमेरिका अथवा भारत के समान
को सविधान का रक्षक और व्याख्याकर्ता नही बनाया गय

रूसी सविधान के सघात्मक स्वरूप के विषय मे यह
सघ का महत्त्व उसको राजनीतिक सघात्मकता (Political
कारण जितना है, उससे अधिक महत्त्वपूर्ण उसकी सास्कृतिक
tural Federalism) के कारण है । सोवियत संघ वास्तव म ए
का एक सघ है जो सास्कृतिक दृष्टि से पूर्ण स्वतन्त्र है । सांस्कृतिक
सास्कृतिक जन-समूह को पूरी तरह से प्राप्त रह, इसके लिए रूसी सवि
की सीमायें विविध राष्ट्रो की सस्कृति के अनुसार निर्धारित की गई हैं ता

अधिकारों की समाजवादी व्यवस्था

सोवियत संविधान में भी अन्य देशों के प्रजातान्त्रिक संविधानों की भांति मौलिक अधिकारों को सूचीबद्ध किया गया है, लेकिन इसकी श्रेष्ठता मूलतः इस बात में है कि अधिकारों का रूप केवल राजनीतिक ही नहीं है बल्कि सामाजिक व आर्थिक भी है तथा यही माना गया है कि सामाजिक और आर्थिक अधिकारों के अभावों में राजनीतिक अधिकारों का कोई मूल्य नहीं होता। अन्य प्रजातान्त्रिक देशों के विपरीत सोवियत रूस में सामाजिक और आर्थिक अधिकारों को प्रथम स्थान दिया गया है और नागरिक अधिकारों को गौण। सोवियत संविधान में अन्य अधिकारों पर इतना ध्यान नहीं दिया जाता जितना व्यक्ति के इस अधिकार पर कि उसे काम करने का निश्चित अवसर प्राप्त हो वह आर्थिक दृष्टि से सुरक्षित रहे और भोजन, वस्त्र आवास आदि की चिन्ता न करते हुए अपने राजनीतिक अधिकारों का प्रयोग करे। सोवियत व्यवस्था राज्य पर यह उत्तरदायित्व है कि वह प्रत्येक व्यक्ति को अनिवार्य रूप से रोजगार प्रदान करे।

सोवियत अधिकार पत्र की यह भी विशेषता है कि नागरिकों को दिये गये अधिकार सर्वहारा वर्ग के अधिकारों के हितों से न टकरायें और उनसे देश की समाजवादी व्यवस्था को आवश्यक बल मिले। एक अन्य विशेषता यह है कि अधिकारों के साथ साथ संविधान में नागरिकों के कर्त्तव्यों की भी व्यवस्था है। नागरिकों पर समाज तथा राज्य के प्रति कुछ महत्वपूर्ण कर्त्तव्य आरोपित किये गये हैं। समाजवाद का निर्वाह विधि का पालन, देश की रक्षा, अनिवार्य सैनिक सेवा, श्रम सम्बन्धी अनुशासन की रक्षा आदि कुछ विशिष्ट कर्त्तव्य गिनाये गये हैं।

सोवियत नागरिकों को दिये गये अधिकारों के सम्बन्ध में यह स्मरणीय है संविधान में इनकी रक्षा के लिए न्यायिक पुनरावलोकन का अस्तित्व नहीं है। फलस्वरूप कुछ अधिकारों की व्यवस्था अन्य प्रजातान्त्रिक देशों की तुलना में अवास्तविक सी हो गई है। इस सम्बन्ध में टाउन्स्टर (Towster) का तर्क है कि स्वतन्त्रता के क्षेत्र के विषय में रूस और पश्चिमी लोकतन्त्रों में प्रमुख अन्तर यह नहीं है कि रूस ने स्वतन्त्रताओं को बिल्कुल समाप्त कर दिया है, अपितु यह है कि उनमें से अनेक को नवीन अर्थ और भाव दे दिया गया है।

जो भी हो सोवियत शासन-व्यवस्था संविधानवाद (Constitutionalism) को एक अनुपम भेंट है। यह परम्परागत मानव मूल्यों नैतिकता और शासन प्रणालियों के लिए एक चुनौती है जिसकी सफलता भविष्य में मानव इतिहास को एक नयी दिशा में मोड़ सकती है।

एक नवीन संविधान की योजना

आज की परिवर्तित परिस्थितियों में सोवियत रूस के कर्णधार देश के लिए एक नये संविधान का निर्माण करना चाहते हैं अथवा वर्तमान संविधान को मौजूदा परिस्थितियों के अनुकूल बनाना चाहते हैं। इस सम्बन्ध में पहले जनवरी, 1959 में

सविधान के अन्तर्गत नागरिको को सगठन बनाने का अधिकार दिया गया है, परन्तु वास्तविकता यह है कि सविधान द्वारा साम्यवादी दल को देश की राजनीति का प्रमुख दल माना गया है और व्यवहारत रूस मे एकमात्र राजनीतिक दल साम्यवादी दल के हाथ मे ही समस्त सत्ता है। उसका अनुशासन ऐसा कठोर है कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता समाप्त हो गई है और प्रजातन्त्र एक प्रहसन (Farce) मात्र रह गया है। व्यवहार मे साम्यवादी दल ही शासन का सर्वेसर्वा है। सोवियत सघ म विरोधी आर्थिक वग नही है, वहा केवल एक ही वग है—सवहारा वग। अत वहा विभिन्न विरोधी दलो की आवश्यकता अनुभव नही की जाती।

अनोखी न्यायपालिका

आदश सघात्मक सविधानो म न्यायपालिका की सर्वोच्चता स्थापित की जाती है, पर सोवियत सविधान मे न्यायपालिका शासन का एक अधीनस्थ अ ग है। अन्य प्रजातान्त्रिक देशो म न्यायालय सामान्य नागरिको के हितो की निष्पक्ष रूप से रक्षा करते है, किन्तु सोवियत रूस म न्यायालयो का सर्वोपरि उद्देश्य समाजवादी व्यवस्था की स्थापना मे सहयोग प्रदान करना है। वहा न्यायालयो का यह कत्तव्य है कि वे सोवियत शासन के विरोधियो स लोहा लें, प्रत्येक कदम नवीन समाजवादी व्यवस्था को दृढ करन वाला उठाये और शासन का सामान्य नीति को कार्यान्वित करने म सहायता करे। सोवियत रूस मे अमेरिका के समान, न्यायालयो को न्यायिक पुनरावलोकन (Judicial Review) का अधिकार प्रदान नही किया गया है।

एक अन्य विशेषता यह है कि सोवियत न्यायाधीश निर्वाचित होते है। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश 5 वष के लिए सर्वोच्च सोवियत द्वारा और निम्नतम न्यायालयो (People's Courts) के न्यायाधीश 3 वष के लिए नागरिको द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होते है। प्राय उन व्यक्तियो को न्यायाधीश चुना जाता है जो साम्यवादी दल के अनुयायी होते हैं मार्क्सवाद का पूर्ण ज्ञान रखते ह और दल के निणय को कार्यान्वित करन की क्षमता रखते है। सोवियत न्यायालय निष्पक्ष और स्वतन्त्र रूप स अपना काय नही करता है।

सोवियत पद्धति

रूस की सवधानिक प्रणाली की एक अन्य विशेषता "सोवियत पद्धति (Soviet System) है। 'सोवियत' शब्द का अथ श्रमिको एव कृषको द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियो की एक परिषद् स होता है। रूस म ग्रामो, नगरो, जिलो, गणराज्यो आदि सभी स्थानो पर 'सोवियतें' है। कारखानो म श्रमिको की और रेजीमेंटो म सनिको की सोवियतें ह। ये सोवियत वस्तुत रूस की सवधानिक पद्धति का आधार एव जनशक्ति क नये उपकरण हैं जिनके माध्यम स सोवियत शासन अपनी नीतियो को कार्यान्वित करता है। इन सोवियतो का शासन-सगठन म कितना ... एव व्यापक स्थान है, यह इसी बात स विदित हो जाता है कि इनकी ... स्या म लगभग 70 000 या इसस भी अधिक है।

अधिकारों की समाजवादी व्यवस्था

सोवियत संविधान म भी अन्य देशो के प्रजातान्त्रिक संविधानो की भांति मौलिक अधिकारो को सूचीबद्ध किया गया है, लेकिन इसकी श्रेष्ठता मूलत इस बात मे है कि अधिकारो का रूप केवल राजनीतिक ही नहीं ह बल्कि सामाजिक व आर्थिक भी है तथा यही माना गया है कि सामाजिक और आर्थिक अधिकारो के अभावो म राजनीतिक अधिकारो का कोई मूल्य नही होता। अन्य प्रजातान्त्रिक देशो के विपरीत सोवियत रूस मे सामाजिक और आर्थिक अधिकारो को प्रथम स्थान दिया गया ह और नागरिक अधिकारो को गौण। सोवियत संविधान मे अन्य अधिकारो पर इतना ध्यान नही दिया जाता जितना व्यक्ति के इस अधिकार पर कि उसे काम करने का निश्चित अवसर प्राप्त हो वह आर्थिक दृष्टि स सुरक्षित रह और भोजन, वस्त्र आवास आदि की चिन्ता न करते हुए अपने राजनीतिक अधिकारो का प्रयोग करे। सोवियत व्यवस्था राज्य पर यह उत्तरदायित्व है कि वह प्रत्येक व्यक्ति को अनिवार्य रूप से रोजगार प्रदान करे।

सोवियत अधिकार पत्र की यह भी विशेषता है कि नागरिको को दिये गये अधिकार सर्वहारा वर्ग के अधिकारो के हितो से न टकराये और उनसे देश की समाजवादी व्यवस्था को आवश्यक बल मिले। एक अन्य विशेषता यह है कि अधिकारो के साथ साथ संविधान मे नागरिको के कर्त्तव्यो की भी व्यवस्था ह। नागरिको पर समाज तथा राज्य के प्रति कुछ महत्वपूर्ण कर्तव्य आरोपित किये गये है। समाजवाद का निर्वाह, विधि का पालन, देश की रक्षा, अनिवार्य सैनिक सेवा, श्रम सम्बन्धी अनुशासन की रक्षा आदि कुछ विशिष्ट कर्त्तव्य गिनाये गये हैं।

सोवियत नागरिको को दिये गये अधिकारो के सम्बन्ध मे यह स्मरणीय है संविधान म इनकी रक्षा के लिए न्यायिक पुनरावलोकन का अस्तित्व नहीं है। फलस्वरूप कुछ अधिकारो की व्यवस्था अन्य प्रजातान्त्रिक देशो की तुलना म अवास्तविक सी हो गई है। इस सम्बन्ध म टाउस्टर (Towster) का तर्क है कि 'स्वतन्त्रता के क्षेत्र के विषय म रूस और पश्चिमी लोकतन्त्रो म प्रमुख अन्तर यह नहीं है कि रूस ने स्वतन्त्रताओ को बिल्कुल समाप्त कर दिया है, अपितु यह है कि उनम से अनेक को नवीन अर्थ और भाव द दिया गया ह।

जो भी हो सोवियत शासन-व्यवस्था संविधानवाद (Constitutionalism) को एक अनुपम भेंट ह। यह परम्परागत मानव मूल्यो नैतिकता और शासन प्रणालियो के लिए एक चुनौती ह जिसकी सफलता भविष्य म मानव इतिहास को एक नयी दिशा मे मोड सकतीह।

एक नवीन संविधान की योजना

आज की परिवर्तित परिस्थितियो म सोवियत रूस के कर्णधार देश के लिए एक नये संविधान का निर्माण करना चाहते हैं अथवा वर्तमान संविधान को मौजूदा परिस्थितियो के अनुकूल बनाना चाहते है। इस सम्बन्ध म पहल जनवरी 1959 म

सविधान के अन्तर्गत नागरिकों को सगठन बनाने का अधिकार दिया गया है, परन्तु वास्तविकता यह है कि सविधान द्वारा साम्यवादी दल को देश की राजनीति का प्रमुख दल माना गया है और व्यवहारत रूस में एकमात्र राजनीतिक दल साम्यवादी दल के हाथ म ही समस्त सत्ता है। उसका अनुशासन ऐसा कठोर है कि व्यक्तिगत स्वतत्रता समाप्त हो गई है और प्रजातन्त्र एक प्रहसन (Farce) मात्र रह गया है। व्यवहार म साम्यवादी दल ही शासन का सर्वेसर्वा है। सोवियत सघ म विरोधी आर्थिक वर्ग नहीं है, वहा केवल एक ही वर्ग है—सर्वहारा वर्ग। अत वहा विभिन्न विरोधी दलो की आवश्यकता अनुभव नही की जाती।

अनोखी न्यायपालिका

आदर्श सघात्मक सविधानो मे न्यायपालिका की सर्वोच्चता स्थापित की जाती है, पर सोवियत सविधान म न्यायपालिका शासन का एक अधीनस्थ अ ग है। अन्य प्रजातान्त्रिक देशो मे न्यायालय सामान्य नागरिको के हितो की निष्पक्ष रूप से रक्षा करते हैं, किन्तु सोवियत रूस म न्यायालयो का सर्वोपरि उद्देश्य समाजवादी व्यवस्था की स्थापना म सहयोग प्रदान करना है। वहा न्यायालयो का यह कर्त्तव्य है कि वे सोवियत शासन के विरोधियो से लोहा लें प्रत्येक कदम नवीन समाजवादी व्यवस्था को दृढ करने वाला उठाये और शासन की सामान्य नीति को कार्यान्वित करने म सहायता करें। सोवियत रूस म अमेरिका के समान, न्यायालयो को न्यायिक पुनरावलोकन (Judicial Review) का अधिकार प्रदान नही किया गया है।

एक अन्य विशेषता यह है कि सोवियत न्यायाधीश निर्वाचित होते हैं। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश 5 वर्ष के लिए सर्वोच्च सोवियत द्वारा और निम्नतम न्यायालयो (People's Courts)के न्यायाधीश 3 वर्ष के लिए नागरिको द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होते है। प्राय उन व्यक्तियो को न्यायाधीश चुना जाता है जो साम्यवादी दल के अनुयायी होते हैं, मार्क्सवाद का पूर्ण ज्ञान रखते है और दल के निर्णय को कार्यान्वित करने की क्षमता रखते है। सोवियत न्यायालय निष्पक्ष और स्वतन्त्र रूप से अपना कार्य नही करता है।

सोवियत पद्धति

रूस की सवैधानिक प्रणाली की एक अनन्य विशेषता "सोवियत पद्धति" (Soviet System) है। 'सोवियत" शब्द का अर्थ श्रमिको एव कृषको द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियो की एक परिषद से होता है। रूस मे ग्रामो, नगरो, जिला, गणराज्यो आदि सभी स्थानो पर 'सोवियत' है। कारखानो म श्रमिको की और रेजीमेंटो मे सैनिको की सोवियतें है। ये सोवियत वस्तुत रूस को सवैधानिक पद्धति का आधार एव जनशक्ति के नये उपकरण है जिनके माध्यम से सोवियत शासन अपनी नीतियो को कार्यान्वित करता है। इन सोवियतो का शासन सगठन म कितना महत्त्वपूर्ण एव व्यापक स्थान है, यह इसी बात स विदित हो जाता है कि इनकी सख्या रूस म लगभग 70,000 या इससे भी अधिक है।

अधिकारों की समाजवादी व्यवस्था

सोवियत संविधान म भी अन्य देशो के प्रजातान्त्रिक संविधानो की भाति मौलिक अधिकारा का सूचीबद्ध किया गया है, लेकिन इसकी श्रेष्ठता मूलत इस बात म है कि अधिकारा का रूप केवल राजनीतिक ही नहीं ह बल्कि सामाजिक व आर्थिक भी है तथा यही माना गया ह कि सामाजिक और आर्थिक अधिकारो के अभावो म राजनीतिक अधिकारो का कोई मूल्य नही होता। अ य प्रजातान्त्रिक देशो के विपरीत सोवियत रूस म सामाजिक और आर्थिक अधिकारो को प्रथम स्थान दिया गया ह और नागरिक अधिकारो को गौण। सोवियत संविधान मे अन्य अधिकारो पर इतना ध्यान नही दिया जाता जितना व्यक्ति के इस अधिकार पर कि उसे काम करने का निश्चित अवसर प्राप्त हो वह आर्थिक दृष्टि से सुरक्षित रहे और भोजन, वस्त्र आवास आदि की चिन्ता न करते हुए अपने राजनीतिक अधिकारो का प्रयोग करे। सोवियत व्यवस्था राज्य पर यह उत्तर दायित्व ह कि वह प्रत्येक व्यक्ति को अनिवार्य रूप से रोजगार प्रदान करे।

सोवियत अधिकार-पत्र की यह भी विशेषता है कि नागरिको को दिये गये अधिकार सवहारा वग के अधिकारा के हिता से न टकराये और उनसे देश की समाज वादी व्यवस्था को आवश्यक बल मिले। एक अन्य विशेषता यह है कि अधिकारो के साथ साथ संविधान म नागरिका के कत्तव्या की भी व्यवस्था है। नागरिको पर समाज तथा राज्य के प्रति कुछ महत्वपूर्ण कत्तव्य आरोपित किये गये है। समाजवाद का निर्वाह, विधि का पालन, देश की रक्षा, अनिवार्य सनिक सेवा, श्रम सम्बन्धी अनुशासन की रक्षा आदि कुछ विशिष्ट कत्तव्य गिनाये गये हैं।

सोवियत नागरिका को दिये गये अधिकारा के सम्बन्ध म यह स्मरणीय है संविधान म इनकी रक्षा के लिए न्यायिक पुनरावलोकन का अस्तित्व नही है। फल-स्वरूप कुछ अधिकारो की व्यवस्था अन्य प्रजातान्त्रिक देशो की तुलना म अवास्तविक सी हो गई है। इस सम्बन्ध मे टाउस्टर (Towster) का तर्क है कि 'स्वतन्त्रता के क्षेत्र के विषय म रूस और पश्चिमी लोकतन्त्रो म प्रमुख अन्तर यह नहीं है कि रूस ने स्वतन्त्रताओं को बिल्कुल समाप्त कर दिया है अपितु यह है कि उनमे से अनेक को नवीन अर्थ और भाव दे दिया गया ह।'

जो भी हो सोवियत शासन-व्यवस्था संविधानवाद (Constitutionalism) को एक अनुपम भेंट ह। यह परम्परागत मानव मूल्यो, नतिकता और शासन प्रणालियों के लिए एक चुनौती ह जिसकी सफलता भविष्य म मानव इतिहास को एक नयी दिशा म मोड सकतीह।

एक नवीन संविधान की योजना

आज की परिवर्तित परिस्थितिया म सोवियत रूस के कर्णधार देश के लिए एक नये संविधान का निर्माण करना चाहते है अथवा वतमान संविधान को मौजूदा परिस्थितियों के अनुकूल बनाना चाहते है। इस सम्बन्ध मे पहले जनवरी, 1959 म

श्री ख्रुश्चेव द्वारा की गयी थी। अप्रेल 1963 में सर्वोच्च सोवियत ने 97 सदस्यों के एक संवैधानिक आयोग को एक निर्देश दिया था कि 1963 के अन्त तक नवीन संविधान का प्रारूप प्रस्तुत कर दिया जाय। कतिपय परिस्थितियों के कारण अब तक इस विषय में कोई ठोस कार्य प्रकाश में नहीं आ पाया है। सन् 1964 में इजवेस्तिया में आयोग की एक बैठक होने के बारे में समाचार प्रकाशित हुआ था। 1964 से ही आयोग ब्रेजनेव के नेतृत्व में कार्य करने लगा था। यह आशा की जानी चाहिए कि निकट भविष्य में ही हम नवीन अथवा संशोधित रूसी संविधान की रूपरेखा का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2

सोवियत संघात्मक व्यवस्था
(SOVIET FEDERALISM)

'सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ सोवियत राष्ट्रों का एक भाईचारा है जो मित्रता तथा सहयोग के सूत्रों से समानता के आधार पर एक सघ राज्य मे बाधा गया है।"

—कारपिंसकी

सोवियत रूस की सघात्मक व्यवस्था के बारे में प्राय यह कहा जाता है कि ' सास्कृतिक एव आर्थिक दृष्टि स सघ होते हुए भी राजनीतिक दृष्टि से वह एक एकात्मक राज्य है।" इस कथन का आशय यही है कि रूस सास्कृतिक एव आर्थिक दृष्टि से तो सघ कहा जा सकता है, किन्तु राजनीतिक सघात्मकता के लक्षण उसम पुष्ट नहीं हैं और राजनीतिक दृष्टिकोण से वह एकात्मकता के अधिक सन्निकट है। प्रस्तुत अध्याय मे हम रूस का सास्कृतिक, आर्थिक एव राजनीतिक–तीनो ही प्रकार का सघात्मकता का परीक्षण करेगे–विशेष रूप से राजनीतिक सघात्मकता का–चू कि यही विशेष विवादास्पद एव प्रासगिक है।

सोवियत रूस–सास्कृतिक सघ के रूप मे
(The U S S R as a Cultural Federation)

सोवियत रूस बहुजातियो (Multinational) का देश है जिसम विविध जातियो धर्मों भाषाओ और सस्कृतियो का समावेश है।

सोवियत सघ की नीति-क्रान्ति के बाद से ही राष्ट्रीय अल्पसख्यको और जातीय समूहो के प्रति सहानुभूति पूर्ण रही है और उसका उद्देश्य इन्हे अपन सास्कृतिक विकास का पूरा अवसर प्रदान करना रहा है। वतमान सोवियत सविधान म सघीय गणराज्य (Union Republics) स्वायत्त या स्वशासित गणराज्य (Autonomous Republics) स्वशासित क्षत्र (Autonomous Regions) तथा राष्ट्रीय प्रदेश (National Areas) नामक प्रशासनिक इकाइयो की व्यवस्था की गई है। इतने प्रकार की इकाइया को व्यवस्था करन के मूल म यही उद्देश्य निहित रहा है कि विविध राष्ट्रीयताओ (Nationalities) का अधिकाधिक सास्कृतिक स्वतन्त्रता प्राप्त रहे। सघीय गणराज्या का सगठन राष्ट्रीयताओ के आधार पर किया गया है और उनके नाम भी गणराज्यो के निवासियो की राष्ट्रीयता के नाम पर रखे गये हैं। उदाहरणार्थ-यूक्रेन सोवियत समाजवादी गणतन्त्र (Ukranian Soviet Socialist Republic) उन लोगो का गणतन्त्र है जो यूक्रेनियन जाति के

है। इसी तरह उजबेक जाति के गणतन्त्र का नाम उजबेक सोवियत समाजवादी गणतन्त्र (Uzbek Soviet Socialist Republic) और ताजिक जाति के गणतन्त्र का नाम ताजक सोवियत समाजवादी गणतन्त्र (Tajik Soviet Socialist Republic) रखा गया है। सघीय गणतन्त्र के अन्तर्गत स्वशासित गणतन्त्रों (Autonomous Republics) को छोटी-छोटी विविध जातीयताओं के आधार पर सगठित किया गया है। इनके निवासियों को सस्कृति एव अन्य स्थानीय मामलों में स्वशासन का अधिकार प्राप्त है। इसी तरह स्वशासित क्षेत्रों (Autonomous Regions) की व्यवस्था उन जातीय समुदायों के आधार पर की गई है जिन्हें सास्कृतिक आधार पर स्वशासन का अधिकार मिलना आवश्यक है। अन्यान्य छोटे-छोटे जातीय समुदायों के सन्तोष के लिए राष्ट्रीय प्रदेशों (National Areas) की व्यवस्था की गई है।

उपर्युक्त व्यवस्था मात्र से ही लोगों की सास्कृतिक भावनायें सन्तुष्ट नहीं हो सकेंगी—यह समझते हुए बोल्शेविक नेताओं ने कुछ अन्य व्यवस्थायें भी की। एक व्यवस्था के अनुसार सघीय गणतन्त्रों को अपना सवैधानिक ढाचा स्वेच्छानुसार बनाने का अधिकार है। दूसरी व्यवस्था के अनुसार सभी क्षेत्रीय भागों को व्यवस्थापिका के ऊपरी सदन में पृथक प्रतिनिधित्व दिया गया है—प्रत्येक सघीय गणतन्त्र को 25, स्वशासित गणतन्त्र को 11 स्वशासित प्रदेश को 5 और राष्ट्रीय क्षेत्र को 1 प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। तीसरी व्यवस्था के अनुसार जातीय विशेषाधिकारों का अन्त करके सभी जातीयताओं के लोगों को समान स्तर पर रखा गया है। चौथी व्यवस्था के अनुसार सभी गणतन्त्रों को भाषा सबधी स्वतन्त्रता प्रदान की गई है, *अर्थात् सम्पूर्ण सघ पर एक ही भाषा थोपने का कोई प्रयास नहीं किया गया है। सविधान* की 40वीं धारा में स्पष्टत उल्लिखित है कि न्यायालयों की कार्यवाही *गणतन्त्रों की* अलग अलग भाषाओं में होगी। इतना ही नहीं, सघीय कानून और *आदेश सघीय* गणतन्त्रों में साधारणत बोली जाने वाली भाषाओं में छापे जाते हैं।

इस तरह स्पष्ट है कि सास्कृतिक रूप से सोवियत रूस एक सघ है।

सोवियत रूस—आर्थिक सघ के रूप में
(The U S S R as a Economic Federation)

सोवियत रूस को आर्थिक दृष्टि से भी सघ कहा जाता है, किन्तु *यह मान्यता* पूर्ण सत्य नहीं है क्योंकि वहां आर्थिक दृष्टि से इकाइयाँ उतनी स्वतन्त्र नहीं हैं जितनी एक गणतन्त्र सघ में होनी चाहिए। आर्थिक दृष्टि से अत्यधिक केन्द्रीयकरण है। विश्व के सम्भवत किसी भी सघ में केन्द्र द्वारा इतने उद्योगों और व्यवसायों का सचालन एव नियन्त्रण नहीं किया जाता जितना सोवियत सघ में केन्द्र *द्वारा होता* है। केन्द्रीय सरकार ही सम्पूर्ण सघ के लिए आर्थिक योजनाओं का *निर्माण करती* है और सभी महत्वपूर्ण तथा भारी उद्योग और व्यवसाय केन्द्र के एकाधिकार की वस्तुयें हैं। सच्चाई यह है कि आर्थिक रूप से सोवियत रूस का ढाचा सघात्मक होने अपेक्षा एकात्मक अधिक है।

सोवियत रूस—एक राजनैतिक सघ के रूप मे
(The U S S R as a Political Federation)

राजनैतिक दृष्टि से सोवियत रूस की सघात्मकता बहुत विवादास्पद है। सोवियत नेता अपनी शासन-व्यवस्था को पूणत आदर्श सघोय व्यवस्था बताते हैं जबकि पाश्चात्य विचारक इस मत से सहमत नही हैं। प्रो० व्हीयर के अनुसार रूस का सन् 1936 का सविधान अधिक से अधिक अर्द्ध-सघात्मक है" तो प्रो० स्ट्राग के मत म "सोवियत समाजवादी गणतत्रो का समूह निम्नाथिक एक सघीय राज्य है।" सोवियत रूस की सघात्मकता को हम तभी समझ सकते हैं जब वहा पाये जाने वाले सिद्धान्त और व्यवहार के अन्तर को भी ध्यान मे रखा जाय।

किसी भी सघात्मक सविधान की चार मौलिक विशेषताए होती हैं—

(1) दोहरी शासन-व्यवस्था,

(2) केन्द्र और इकाइयो के बीच शक्तियो का विभाजन,

(3) सविधान की सर्वोच्चता और दुष्परिवतनशीलता, एव

(4) न्यायपालिका की सर्वोच्चता।

दोहरी शासन व्यवस्था

सोवियत सघ म दो प्रकार की सरकारें हैं—सघीय सरकार और इकाई गणराज्यो की सरकारें। रूस म इस समय 15 सघीय गणराज्य (Union Republics) है। इकाई राज्य चार स्तर के हैं—सघीय गणराज्य (Union Republics), स्वशासी क्षेत्र (Autonomous Regions) और राष्ट्रीय प्रदश या क्षत्र (National Areas)। इन इकाइयो म अन्तर यह है कि सघीय गणराज्यो (Union Republics) को ही प्रत्यक्षत सघ की मूल इकाई माना गया है और अन्य तीन प्रकार की इकाइया गणराज्यो के अन्तगत स्वतन्त्रता का उपयोग करती हैं।

सोवियत सविधान म गणराज्यो की शासन व्यवस्था का विस्तृत विवरण दिया हुआ है, जिसके अनुसार वे निजी सविधान का निर्माण कर सकते ह। स्वशासी गणराज्यो का भी अपना अलग अलग सविधान होता है, जो सम्बन्धित सघीय गणराज्य की सर्वोच्च सोवियत द्वारा स्वीकृत किया जाता है। स्वशासी क्षेत्रो और राष्ट्रीय प्रदेशो को निजी सविधान रखने का अधिकार नही है।

सघीय गणराज्यो के प्रशासनिक अ गो म सघीय सरकार के अनुरूप ही एक सर्वोच्च सोवियत प्रेसीडियम मन्त्रीपरिषद् और सर्वोच्च न्यायालय होते हैं। इसी तरह दोहरी नागरिकता की भी व्यवस्था है। जिस प्रकार अन्य सघ राज्यो म अवयवी इकाईयो को सघीय व्यवस्थापिका के उच्चसदन म प्रतिनिधि भेजन का अधिकार है उसी प्रकार सोवियत सघ म भी प्रत्येक इकाई को पृथक-पृथक राष्ट्रीयताओ की सोवियत (Soviet of Nationalities) म प्रतिनिधि भेजन का अधिकार है। यह अवश्य है कि अमरिका के समान उन्हे समान प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है।

सघीय सरकार एव गणराज्यो की सरकारें एक दूसरे पर आश्रित नही हैं। दानो अपने अस्तित्व के लिए सविधान पर आश्रित है। सर्वोपरि बात यह है कि

संविधान की धारा 17 मे यह स्पष्ट कहा गया है कि "सघ के प्रत्येक गणत त्र को सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ से स्वेच्छा से अलग होने का अधिकार प्राप्त है।' अगली धारा 18 मे उल्लिखित है कि "सघ के प्रत्येक गणत त्र को विदेशो से सीधे सम्बन्ध स्थापित करने और उनसे समझौता आदि करने का अधिकार प्राप्त है। धारा 18 म ही यह भी कहा गया है कि "सघ के प्रत्येक गणत त्र का अपनी सेना का सगठन है।'

उपयु क्त सभी आधारो पर सोवियत नेताओ का दावा है कि रूसी सघ की व्यवस्था सच्ची सघीय व्यवस्था है। लेकिन यह सब कुछ चित्र का केवल सद्धान्तिक पहलू है। सोवियत सघ मे व्यवहारत इकाइयो की राजनीतिक स्वतन्त्रता नगण्य है और वे सघ की प्रशासनिक इकाईया मात्र रह गई है। केन्द्रीयकरण इतना अधिक है कि इकाइयो को केवल सास्कृतिक एव विशुद्ध स्थानीय प्रकृति के कार्यो मे ही स्वतन्त्रता प्राप्त है अन्यथा राजनीतिक दृष्टि से उन्हे लगभग पूरी तरह सघीय शासन की इच्छानुसार चलना पडता है। केन्द्रीयकरण की यह प्रवत्ति दिन प्रतिदिन प्रबल होती जा रही है। गणराज्यो के प्रशासन का निर्देशन और नियन्त्रण सघीय सरकार विभिन्न साधनो द्वारा करती है। सम्पूर्ण देश की आर्थिक और वित्तीय व्यवस्था पर सघ सरकार का नियन्त्रण रहता है और राज्यो को इस क्षेत्र मे सघ सरकार के आदेशो का पालन करना होता है यहा तक कि गणराज्यो के बजट तक पर केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण रहता है। आर्थिक, औद्योगिक एव कृषि सम्बन्धी सभी सस्थाओ का नियमन व सचालन केन्द्रीय सरकार करती है। इकाई राज्यो को सघ से स्वेच्छा से अलग होने की बात भी केवल कागजी है। सोवियत रूस म साम्यवादी दल की उच्च सत्ता की नीति के विरुद्ध कोई भी व्यक्ति यदि कुछ कहने या करने की हिम्मत करता है तो उसे राजनीतिक जीवन से साफ कर दिया जाता है और रूसी राजनीति के इतिहास म ऐसी सफाइयो (Purges) के उदाहरण कम नहीं हैं।

सघ के प्रत्येक गणतन्त्र के अपने अपने अलग अलग सैनिक सगठन होने की बात का और पर-राष्ट्र सम्बन्धो के स्वतन्त्र सचालन की बात का भी व्यावहारिक मूल्य नही सा है। संविधान की एक धारा जहा यह स्वीकार करती है कि सघ के प्रत्येक गणतन्त्र का अपना अलग सैनिक सगठन है, वहा संविधान की दूसरी धारा केन्द्र को यह अधिकार सौपती है कि वह गणतन्त्रो के सैनिक सगठनो के विषय मे सिद्धान्तो का निश्चय करेगी। धारा 14 मे स्पष्ट है कि सघीय गणतन्त्रो के सैनिक सगठनो के निर्माण के सचालन के सिद्धान्तो का निश्चय करने का अधिकार केन्द्रीय सरकार को होगा। गणतन्त्रो के परराष्ट्र सम्बन्धो के स्वतन्त्र सचालन का अधिकार भी संविधान की धारा 14 (अ) म प्राप्त हो जाता है जिसके अन्तगत सघ की सरकार को इस बात का पूर्ण अधिकार दिया गया है कि गणतन्त्रो द्वारा परराष्ट्र सम्बन्धो के सचालन के विषय म सामान्य नियम बनाकर वह उन पर पूरा नियन्त्रण रखेगी। इस प्रकार स्वय संविधान की धाराओ से ही गणतन्त्रो की सेना व पर राष्ट्र के विषय की स्वतन्त्रता समाप्त हो जाती है।

शक्तियों का विभाजन

सोवियत संविधान में शक्ति विभाजन अमेरिकन संविधान के अनुरूप किया गया है। संविधान की धारा 14 में संघ-सरकार के क्षेत्राधिकार में आने वाले विषयों का उल्लेख है। धारा 15 में कहा गया है कि संघीय गणराज्यों की सार्वभौमिकता केवल धारा 14 में परिगणित संघीय सरकार के अधिकारों से सीमित है। इन क्षेत्रों के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में संघीय गणराज्यों को स्वतन्त्रतापूर्वक अपनी शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार है। दूसरे शब्दों में संघीय सूची को छोड़कर अवशिष्ट शक्तियां गणराज्यों में निहित कर दी गई हैं। संघीय सरकार गणराज्यों के सार्वभौमिक अधिकारों की रक्षक है।

शक्ति विभाजन की यह व्यवस्था सैद्धांतिक अधिक है, व्यावहारिक कम। अधिकारों के बटवारे में अधिक संख्या में और समस्त महत्त्वपूर्ण बातों पर केन्द्र का अधिकार है। इसके अतिरिक्त संघीय कानूनों और गणराज्यों के कानूनों में विरोध होने पर संघीय कानून ही लागू होते हैं। यही नहीं, संविधान के संशोधन का अधिकार सर्वोच्च सोवियत के हाथों में होने के कारण संघीय सरकार अधिकार विभाजन में भी अपने हित में परिवर्तन कर सकती है। इस तरह व्यावहारिक दृष्टि से संघीय गणराज्यों की सरकारें संघ-सरकार की इच्छानुसार ही आचरण करती है। वे अपनी शक्तियों का उपयोग व्यवहारतः उसी सीमा तक कर पाती हैं जिस सीमा तक संघ सरकार उन्हें छूट दे।

संविधान की सर्वोच्चता और दुष्परिवर्तनशीलता

सोवियत न्यायवेत्ता और नेता यह स्वीकार करते हैं कि उनका संविधान राज्य का सर्वोच्च संविधान है। किसी भी गणराज्य और संघीय सोवियत सर्वोच्च द्वारा बनाया हुआ कानून संघीय संविधान के प्रतिकूल नहीं हो सकता। कार्यपालिका के समस्त आदेश और कार्य पूर्णतः संविधान के अनुकूल होने आवश्यक हैं। सोवियत संविधान इस दृष्टि से कठोर है कि उसके संशोधन की एक विशेष प्रक्रिया है, जो सामान्य कानून के निर्माण या परिवर्तन की प्रक्रिया से भिन्न है। इसके अतिरिक्त संविधान लिखित स्पष्ट और सुनिश्चित है जिसकी रचना एक संवैधानिक आयोग द्वारा की गई थी।

प्रायः आलोचना की जाती है कि रूस में साम्यवादी दल का इतना कठोर नियन्त्रण है कि समाजवादी व्यवस्था को सुदृढ बनाये रखने के लिये व्यवहारिक रूप में संविधानिक उपबंधों का उल्लंघन शासन और दल द्वारा किया जाना कोई असामान्य बात नहीं है। सोवियत शासन व्यवस्था में सामयिक आवश्यकताओं के अनुरूप बहुधा संविधान के विरुद्ध कार्य कर लिये जाते हैं और उन्हें अवैधानिक घोषित नहीं किया जाता प्रत्युत उनके अनुरूप बाद में संविधान में यदि आवश्यक समझा जाता है तो संशोधन कर लिया जाता है। पुनश्च सोवियत संघीय व्यवस्था में संविधान की दुष्परिवर्तनशीलता या कठोरता उस सीमा तक नहीं पायी जाती जिस सीमा तक वह अमेरिका या भारत के संघात्मक संविधान में पायी जाती है। --

मे प्रथम तो संशोधन सम्बन्धी प्रस्ताव प्रस्तुत करने के लिये आवश्यक नहीं है कि वह सदन के (जिसमे प्रस्ताव पेश किया गया हो) के निश्चित बहुमत द्वारा प्रस्तुत किया जाय। दूसरे संशोधन प्रस्तावित करने के विषय में संघीय इकाईयो का कोई अधिकार नहीं है। तीसरे संशोधन के अंतिम रूप से पारित होने के लिये केवल यह आवश्यक है कि उसे व्यवस्थापिका के प्रत्येक सदन के बहुमत द्वारा स्वीकार कर लिया जाय। इस सम्बन्ध मे गणतन्त्रो को संशोधन के पुष्टीकरण आदि का कोई अधिकार नहीं है।

न्यायपालिका की सर्वोच्चता

सोवियत संघ मे सर्वोच्च न्यायालय व्यवस्था संघात्मक न्यायपालिका के अनुरूप नहीं है। उसे न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार प्रदान नहीं किया गया है। संविधान की व्याख्या का कार्य देश के सर्वोच्च न्यायालय के स्थान पर प्रसीडियम के सुपुर्द किया गया है जो स्वतन्त्र न्यायपालिका न होकर केन्द्रीय कार्यपालिका का ही एक अङ्ग मात्र है। इस व्यवस्था का यह परिणाम निकल सकता है कि केन्द्रीय कार्यपालिका संविधान की व्याख्या इस प्रकार करे कि इकाईयो के अधिकारो पर कुठाराघात हो जाय और उनका स्थानीय स्वशासन ही समाप्त हो जाय।

स्पष्ट है कि राजनीतिक रूप से सोवियत संघ की व्यवस्था पूर्णतया संघात्मक नहीं है और उसम वे लक्षण प्राप्य नहीं है जो सामान्यत संघात्मक व्यवस्था म होने चाहिये। सोवियत रूस एक सांस्कृतिक संघ कहा जा सकता है जिसकी इकाईयो का संगठन विविध जातीयताओ के आधार पर किया गया है पर आर्थिक एव राजनीतिक दृष्टि से उसकी संघात्मक व्यवस्था उतनी पूर्ण नहीं है, जितनी पूर्ण होनी चाहिये। वास्तविकता यही है कि रूस मे संघात्मकता की अपेक्षा केन्द्रीयकरण और एकात्मकता के लक्षण विशेष रूप से विद्यमान हैं।

सोवियत संघ की एकात्मकता के लक्षण

शक्ति के केन्द्रीयकरण और एकात्मकता के जो लक्षण सोवियत संघ म पाये जाते हैं और उसके संघात्मक आधार को चोट पहुँचाते हैं, व प्रमुखत निम्नलिखित हैं—

1 सोवियत संघीय मन्त्रिमण्डल म दो प्रकार क मन्त्रालयो की व्यवस्था है-अखिल संघीय मन्त्रालय (All Union Ministries) एवं संघीय गणराज्यो के मन्त्रालय (Union Republican Ministries)। इन दूसरे प्रकार क मन्त्रालयो का कार्य संघ की इकाइयो के मन्त्रालयो का निर्देशन व नियन्त्रण करना है और इनक अधिकार इतने व्यापक तथा विस्तृत हैं कि इकाइयो क विधि निर्माण अथवा प्रशासन क किसी भी क्षेत्र म ये हस्तक्षेप कर सकते हैं।

2 संघीय सर्वोच्च सोवियत क प्रसीडियम को गणराज्यो क मन्त्रालयो के निर्णयो को रद्द करने का अधिकार है। केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल तक इनके निर्णयो को स्थगित कर सकता है।

3 सोवियत स घ के प्रोक्यूरेटर जनरल के प्रतिनिधि समस्त देश मे इस बात का निरीक्षण करते है कि स घीय कानूनो ग्रौर ग्रादेशो का पालन हो रहा है या नही।

4 स घ सरकार पर यायालय का ग्र कुश नही है, ग्रत उसे मनमानी का पूर्ण ग्रवसर मिल जाता है।

5 ग्रार्थिक दृष्टि से इकाइयो की सरकारें काफी हद तक केन्द्रीय सरकार पर निर्भर रहती हैं। केन्द्र ही सम्पूर्ण सोवियत समाजवादी सघ के लिये इकट्ठा बजट बनाता है। बडा ग्रौद्योगिक एव कृषि सस्थानो तथा राष्ट्रीय महत्त्व के ग्र य व्यवसायो का स चालन भी केन्द्र के हाथ म है। इस प्रकार सम्पूर्ण देश के वित्त पर ग्रौर राष्ट्र के महत्त्वपूर्ण ग्रार्थिक ढाचे पर केन्द्र का ऐसा ग्रधिकार रहता है जसा विश्व के किसी ग्र य स घ मे नही पाया जाता।

6 रूस मे साम्यवादी दल स्वय एक ऐसी सर्वोपरि शक्ति है जिसके क्रिया-कलापो म केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति को सर्वाधिक बल मिलता है। रूस म समस्त शासन की शक्तियो का स्रोत साम्यवादी दल है। केन्द्रीय सरकार हो या राज्यो की सरकारें, सभी को साम्यवादी दल द्वारा निर्देशित ग्राज्ञाग्रो ग्रौर नीतियो का ग्रनुसरण करना पडता है। राज्य का स घात्मक ढाचा केवल साम्यवादी दल द्वारा ग्रादेशित कार्यों की कुशलतापूर्वक पूर्ति के लिये एक स गठन है।

निष्कर्ष रूप मे यही प्रकट होता है कि सोवियत स घ म इकाई सरकारो की स्थिति केन्द्रीय सरकार की ग्रधीनस्थ सरकारो जसी है ग्रौर राज्यो की स्वायत्तता केवल नाममात्र की है। सोवियत स घ म न तो सविधान की सर्वोच्चता को ग्रौर न इकाईयो की स्वायत्तता को ही व्यावहारिक सत्य बनाया गया है। सिद्धातत भले ही स घवाद की ग्रनेक विशेषताग्रो को ग्रपनाया गया है, लेकिन व्यवहार मे केन्द्रीय-करण पर इतना जोर दिया गया है कि ग्र तत सोवियत स घ ने एकात्मक राज्य का रूप धारण कर लिया है।



3

नागरिकों के मौलिक अधिकार एवं कर्त्तव्य
(FUNDAMENTAL RIGHTS & DUTIES OF CITIZENS)

' स्टालिन संविधान सोवियत नागरिकों को ऐसे अधिकार और ऐसी स्वतन्त्रतायें प्रदान करता है जो किसी पूंजीवादी देश में न तो पायी जाती हैं और न पायी जा सकती हैं।"

—कारपिन्स्की

सन् 1918 और 1924 के सोवियत संविधानों में नागरिकों के मूल अधिकारों का वर्णन नहीं था, किन्तु 1936 का वर्तमान स्टालिन संविधान अधिकारों के साथ ही कर्त्तव्यों की भी व्यवस्था करता है। प्रस्तुत अध्याय में हम पहले सोवियत नागरिक अधिकारों का विश्लेषण करेंगे और तब कर्त्तव्यों का।

सोवियत नागरिक अधिकारों की विशेषतायें
(Salient Features of the Soviet Civil Rights)

सोवियत नागरिक अधिकारों की कतिपय निजी विशेषतायें हैं जिन पर सोवियत नागरिक और नेता गर्व करते हैं। विशिन्स्की के शब्दों में इन अधिकारों की सूची इतनी विशद् और विलक्षण है तथा यह इतनी नवीन और मौलिक है कि ऐसे विशिष्ट अधिकार किसी भी बुर्जुआ लोकतन्त्र में नहीं है। इन अधिकारों की कुछ प्रमुख विशेषताओं को निम्नानुसार प्रकट किया जा सकता है—

समाजवादी स्वरूप

सोवियत व्यवस्था में मौलिक अधिकारों का स्वरूप व्यक्तिवादी न होकर समाजवादी है। यह योजना पूरे समाज को केन्द्र मान कर चलती है और नियोजित अर्थ-व्यवस्था पर आधारित है। व्यक्तिगत सम्पत्ति और व्यक्तिगत लाभ के लिए उसमें कोई स्थान नहीं है। व्यक्ति को अधिकार इस रूप में प्राप्त हैं कि उनका प्रयोग करके वह अपने कल्याण के साथ-साथ सम्पूर्ण समाज का भी कल्याण कर सके। उदाहरणार्थ, व्यक्ति कार्य करने के अधिकार का उपभोग स्वयं की और समाज की हित साधना के लिए कर सकता है किन्तु सम्पत्ति के एकत्रण द्वारा समाज के अन्य लोगों की सुविधाओं को नहीं छीन सकता है।

उद्देश्यो और साधनो का सामजस्य

पश्चिमी सविधाना म केवल अधिकारा की चर्चा है, साधना को नही। इसके विपरीत सोवियत सविधान मे नागरिको के केवल अधिकार ही नही गिनाये गये हैं वरन् उन साधना की भी व्यवस्था की गई है जिनके द्वारा उन अधिकारो का वास्तविक प्रयोग किया जा सके। उदाहरणार्थ-व्यक्ति को काम करन का अधिकार प्रदान किया गया है और साथ ही राज्य की ओर से चलाये जाने वाले इतने व्यवसायो की व्यवस्था भी की गई है कि बेकारी रह ही न सके। इसी तरह व्यक्ति को अवकाश का अधिकार है पर इसके उपभोग के लिए काम के कम घण्टा, अनिवार्य छुट्टिया, विश्राम-गृहा आदि की व्यवस्था भी की गई है।

अधिकारो के साथ कर्त्तव्यो का उल्लेख

विश्व के अन्य सविधाना के विपरीत सोवियत सविधान म अधिकारा के साथ कर्त्तव्या का भी उल्लेख किया गया है क्योकि बिना कर्त्तव्या के अधिकारा का कोई मूल्य नही होता। पूजीवादी देशा की तरह सोवियत सविधान बिना अधिकारा के किसी पर कोई कर्त्तव्य नही लादता। अधिकार और कर्त्तव्य अविभाज्य है। यदि व्यक्ति को काम का अधिकार है तो साथ ही यह भी कर्त्तव्य जुडा है कि वह काम करे।

यद्यपि अन्य सविधाना म अधिकारा के साथ कर्त्तव्या की व्यवस्था नही है। पर यह इसी मान्यता के कारण है कि लोकतन्त्रात्मक शासन-व्यवस्था मे अधिकारो के साथ-साथ कर्त्तव्य स्वत ही जुडे रहते है। उदाहरणाथ, भाषण, प्रेस, धर्म आदि की स्वतन्त्रता के अधिकारो म यह कर्त्तव्य अपने आप निहित कि हैं व्यक्ति इनका दुरुपयोग नही करेगा अथवा दूसरो के इन अधिकारा मे हस्तक्षेप नहीं करेगा।

सव व्यापकता

सोवियत सविधान म मौलिक अधिकार सव-व्यापी है अथवा प्रत्येक स्त्री-पुरुष को बिना किसी भेद-भाव के सब मौलिक अधिकार दिये गये हैं। इस प्रकार की सव-व्यापकता पश्चिम के अनेक देशा म नही पाई जाती। उदाहरणार्थ, ब्रिटन म रोमन कथोलिकों के साथ, स्विट्जरलण्ड म स्त्रियो के साथ और सयुक्त राज्य अमेरिका मे नीग्रो लोगा के साथ भेद भाव बरता जाता है। भारत म मौलिक अधिकार सभी को समान रूप से प्राप्त है।

सामान्य प्रतिबन्ध

सोवियत सविधान का मौलिक उद्देश्य सवहारा वग के हितो की रक्षा करते हुए समाजवादी व्यवस्था की स्थापना है। अत नागरिका पर यह प्रतिबन्ध है कि वे प्रदत्त अधिकारो का प्रयोग समाजवादी मान्यताओ के विरुद्ध नहीं करेंगे। नागरिका के सार्वजनिक सगठन सम्बन्धी अधिकार पर भी प्रतिबन्ध है तथा केवल साम्यवादी दल को ही 'राज्य का और सव साधारण का एव सवहारा वर्ग का मुख्य सगठन' कहा गया है। सविधान निर्माण के समय स्टालिन ने कहा भी था कि 'साम्यवादी दल के अतिरिक्त अन्य किसी प्रतिद्वन्द्वी राजनातिक दल को पनपन दिया जायेगा।'

आर्थिक आधार

जहा पश्चिमी देशो मे नागरिक अधिकारो को प्राथमिकता दी गई है वहा सोवियत सघ मे सामाजिक एव आर्थिक अधिकारा को अधिक महत्व प्रदान किया गया है और नागरिक अधिकारो को गौण। सावियत मा यता यह है कि वास्तविक स्वत त्रता तभी सम्भव हो सकती है, जब कोई व्यक्ति आर्थिक रूप से स्वत त्र हो। भूखा और वेकारो के लिए जो शोषण के शिकार हैं व्यक्तिगत स्वत त्रता कोई मायने नही रखती।

यायपालिका के सरक्षण का अभाव

प्राय लोकतात्रिक देशा मे नागरिक अधिकारा की सुरक्षा के लिए निष्पक्ष सर्वोच्च यायपालिका की व्यवस्था की जाती है लेकिन सोवियत सघ मे नागरिक अधिकारा को न्यायपालिका का सरक्षण प्राप्त नही है। यदि सरकार इन अधिकारा पर आक्रमण करे अथवा इनके विरुद्ध कानून बनाये तो नागरिका के पास ऐसा कोई सवैधानिक साधन नही ह जिसके माध्यम से वे अपने अधिकारा की रक्षा करें।

विविध मौलिक अधिकार एव कर्तव्य
(Fundamental Rights & Duties)

स्टालिन सविधान की धारा 118 से लेकर 133 तक मे जिन मौलिक अधिकारा और मौलिक कत्त व्यो का निरूपण किया गया है," वे इतिहास म एक असाधारण अधिकार घोषणापत्र का निर्माण करती है। ये अधिकार और कत्त व्य निम्नलिखित है—

मौलिक अधिकार (Fundamental Rights)

काम का अधिकार (Right to Work)—सोवियत सविधान की धारा 12 म काम का कत्त व्य कहा गया है और प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति के लिए काम करना आदर का सूचक बताया गया है। जो व्यक्ति काम नही करेगा उसका खाना भी नही मिलेगा' यह—रूसी व्यवस्था है। धारा 118 यह स्पष्ट करती है कि काम के अधिकार का अर्थ यह नही है कि सबको एक सा काम और एक सा वेतन प्राप्त हागा। काम की मात्रा और उसके स्तर के अनुसार वतना म अ तर होना स्वाभाविक है। यह अन्तर सोवियत नागरिका के वेतन म पाया भी जाता है किन्तु यह इतना अधिक नही है जितना पू जीवादी व्यवस्था वाल विभिन्न देशा म पाया जाना है। वहा कम स कम और अधिक से अधिक वतन का अनुपात लगभग 1 50 का है। सोवियत नेता सविधान के इस अनुपात का समाजवाद के अनुकूल मानत हैं। उनकी मा यता है कि इस व्यवस्था के अ तगत अधिक स अधिक वेतन पान वाला व्यक्ति भी पू जीपति नही बन सकता और वह दूसरा का शोषण करन की स्थिति म किसी भी रूप में नहीं आ सकता।

सावियत सघ के प्रत्येक नागरिक के लिए नौकरी की व्यवस्था उपस्थित है। वहा की अथ व्यवस्था के समाजवादी सगठन म नागरिका के काम पान क अधिकार को सुनिश्चित कर दिया गया है। सबको काम पर लगाये रखन क उद्देश्य की पूर्ति के

लिए ही उत्पादन के साधनो पर राज्य के स्वामित्व का व्यवस्था की गई है और भारी उद्योग सामूहिक कृषि, शक्षणिक एव तकनीको प्रशिक्षण आदि के कार्मों का सचालन राज्य ने अपने हाथा मे ले रखा है। इस व्यवस्था का सु-फल यह है कि जहा प्रशिक्षण द्वारा एक ओर व्यक्ति रोजगार म लगने के योग्य बनते हैं, वहा दूसरी ओर राजकीय उद्योगा आदि म उन्हे सुगमतापूवक रोजगार मिल जाता है। इसी व्यवस्था का यह सुपरिणाम है कि रूस मे बेकारी की समस्या नही है।

अवकाश और आराम का अधिकार (Right to rest and leisure)—सोवियत-नागरिको को विश्राम और अवकाश प्राप्त करने का मानवीय अधिकार दिया गया है। यह अधिकार व्यावहारिक रूप से अमल मे भी लाया गया है। बहुसख्यक श्रमिका के काम के घटे घटाकर, सात घण्टो का काम करने का दिन बनाकर, वेतन सहित वार्षिक अवकाश की व्यवस्था करके, इस अधिकार का निश्चित कर दिया गया है। इस अधिकार के अन्तगत ही विश्राम घरो और क्लबा का प्रबन्ध किया गया है। सरकार द्वारा सचालित स्वास्थ्य केन्द्रो की भी व्यवस्था है जहा कमचारी अपने स्वास्थ्य-सुधार के लिए जा सकता है। इसी तरह की अन्यान्य सुविधाये भी प्रदान की गई ह। ताकि सोवियत कर्मचारी अपने अवकाश के समय का उचित प्रयोग कर सके।

सामाजिक सुरक्षा का अधिकार (Right to Social Security)—सोवियत सघ के प्रत्येक नागरिक को बुढापे या बीमारी म या काम करने के लिए अयोग्य हो जाने पर राज्य की ओर से पोषण पाने का अधिकार है। राष्ट्रीय व्यय मे सामाजिक बीमा की व्यवस्था, मुफ्त इलाज और देश भर मे स्वास्थ्य-सुधार के लिए स्थाना का प्रबन्ध करके राज्य ने इस अधिकार को सुरक्षित बनाया है। 1 जनवरी, 1965 से वह विधि भी लागू हो गई है जिसके अनुसार कृषका का बुढापे की पेशन मिलेगी।

शिक्षा का अधिकार (Right to Education)—शिक्षा के सम्बन्ध मे सोवियत सविधान मे नागरिका का ऐसे अधिकार प्रदान किय गये हैं जिनका उल्लेख विश्व के अन्य सविधान मे नही मिलता। यही कारण है कि रूस मे साहित्य, कला और विज्ञान के क्षेत्र म आश्चयजनक प्रगति हुई है। सविधान की धारा 121 के अनुपालन म रूस म प्रारम्भिक शिक्षा को सावजनिक और अनिवाय कर दिया गया है। स्कूल-पद्धति पूर्ण रूप स निरपेक्ष है। कारखाना म, राजकीय फार्मों म, मशीन और ट्रैक्टर तथा सामूहिक खेता म श्रमिक जनता को यन्त्र सम्बन्धी, विशेष काम सम्बन्धी और कृषि सम्बन्धी शिक्षा प्रदान की जाती है। सोवियत सघ म धनी और निर्धन विद्यार्थिया म कोई भेद भाव नही किया जाता। सभी को आवश्यकतानुसार साधन, स्थान और अवसर प्राप्त होते रहते हैं। उच्च शिक्षा का व्यय भी बहुत बडी सीमा तक राज्य ही वहन करता है। नागरिका को इच्छानुसार शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार है। सगीत और साहित्य की शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता है, लेकिन तकनीकी शिक्षा अत्यन्त ही उच्च स्तर की है। प्रशिक्षण की विभिन्न पद्धतिया को प्रयोग म लाया जाता है ताकि विषया पर सर्वांगीण प्रकाश पड सके। सोवियत स्कूला के

कार्यक्रम और पाठ्यक्रम का निर्धारण राज्य करता है, जो सभी स्कूलों पर लागू होता है। शिक्षा का यह अधिकार इतना वास्तविक है कि 80 प्रतिशत से भी अधिक जनता प्रारम्भिक रूप से शिक्षित हो चुकी है।

संगठन का अधिकार (Right to Organisation)—सोवियत नागरिकों को सार्वजनिक संगठन, सहकारी समितियों, श्रमिक संघों, खेलकूद और सुरक्षात्मक संगठनों, वैधानिक समुदायों आदि में संगठित होने का अधिकार है। लेकिन यह अधिकार वास्तविक नहीं है क्योंकि संविधान द्वारा ही यह अधिकार इस घोषणा से अत्यन्त *सीमित हो गया है कि सम्पूर्ण राजनीतिक संगठनों का केन्द्र साम्यवादी दल ही होगा।* साम्यवादी दल को सर्वहारा वर्ग के सर्वाधिक कार्यशील और सचेत सदस्यों का संगठन कहा गया है।

भाषण, प्रेस, सभा और प्रदर्शन, जुलूस आदि की स्वतन्त्रता (Freedom of Speech, Press, Assembly, Street Procession and Demonstration)—सोवियत नागरिकों को विभिन्न महत्वपूर्ण राजनीतिक अधिकार प्रदान किये गये हैं। इन अधिकारों के सम्बन्ध में संविधान की धारा 145 उपबन्धित करती है कि—

"श्रमिक जनता के हितों को ध्यान में रखते हुए और समाजवादी व्यवस्था को सशक्त बनाने के लिए सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ के नागरिकों के लिए कानून द्वारा निम्नांकित बातों की गारंटी होगी—(क) भाषण की स्वतन्त्रता (ख) प्रकाशन की स्वतन्त्रता (ग) सभा करने की स्वतन्त्रता, जिसमें सार्वजनिक सभायें करना भी सम्मिलित हैं एवं सड़कों पर जुलूस निकालने और प्रदर्शन करने की स्वतन्त्रता। उपर्युक्त अधिकारों के उपभोग के लिए मुद्रणालयों, कागज के स्टॉकिस्टों, सार्वजनिक इमारतों सड़कों सूचना सम्बन्धी सुविधाओं और अन्य विलीय आवश्यकताओं को श्रमिक जनता एवं उसके संगठनों को प्रदान किये गये हैं। पर इन अधिकारों के साथ यह शर्त जुड़ी है कि वे सर्वहारा वर्ग के हितों से टकराते न हों और समाजवादी व्यवस्था को दृढ़ करने में सहायक हों। इस प्रतिबन्ध का स्वाभाविक अर्थ यह है कि समाजवाद विरोधी विचार की अभिव्यक्ति के लिए कोई स्वतन्त्रता नहीं है। वस्तुतः रूस में रेडियो प्रेस और समाचारपत्र, आदि समस्त प्रसार-प्रचार-साधनों पर साम्यवादी दल का एकाधिकार है। व्यवहार में भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का अर्थ केवल इतना ही है कि लोगों में केवल समाजवादियों के रूप में न्यूनाधिक मतभेद हो सकते हैं, अन्यथा समाजवाद विरोधी मतभेद को किसी भी दशा में पनपने नहीं दिया जाता। इस सम्बन्ध में भी साम्यवादी दल की प्रभुता ही सर्वोच्च है और वही यह देखता है भाषण एवं अभिव्यक्ति के अधिकार का प्रयोग सर्वहारा वर्ग की हित-साधना और समाजवादी व्यवस्था को शक्तिशाली बनाने में हो रहा है या नहीं। सोवियत नागरिकों को दिये गये इन राजनीतिक अधिकारों की आलोचना करते हुए फाइनर ने ठीक ही लिखा है कि 'व्यवहारतः ये सभी अधिकार नियन्त्रित हैं। सभी सभाओं के लिए सरकारी आज्ञा लेनी पड़ती है। प्रचार के और प्रेस पर पूर्णतः सरकार और दल का नियन्त्रण है। कठोर सेन्सर

की व्यवस्था है। अत रूस मे विचार और चेतना पर, लौह आवरण (Iron blanket) है।"

व्यक्तिगत स्वतत्रता व गृह सुरक्षा का अधिकार (Right to Personal Freedom in Violability of Home)—सोवियत नागरिको के मौलिक अधिकारो मे कुछ व्यक्तिगत एव गृह-सुरक्षा सम्बन्धी अधिकारो का समावेश है। इस सम्बन्ध मे सविधान की धारा 127 मे कहा गया है कि "सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ के नागरिको को व्यक्ति की अनुल्लघनीयता की गारटी मिली हुई है। अदालत के फसले या प्रोक्यूरेटर की अनुमति के बिना किसी भी नागरिक को बन्दी नही बनाया जा सकता है।" पर इस सम्बन्ध मे भी यह शर्त रख दी गई है कि यदि किसी व्यक्ति पर राष्ट्र के विरुद्ध काय करने का सन्देह है तो उसके साथ राज्य की ओर से इच्छानुसार कोई भी कार्यवाही की जा सकती है। इसका आशय यह हुआ कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का अधिकार केवल उन्ही लोगो के लिए है जो समाजवादी विचारधारा के पोषक हैं अथवा उससे सहानुभूति रखने वाले है। समाजवादी विचारधारा के विरोधियो को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का अधिकार केवल उसी सीमा तक है जिस सीमा तक सरकार उन्हे वह अधिकार प्रदान करे।

सविधान की धारा 128 नागरिक के निवास स्थान की अनुल्लघनीयता और पत्र व्यवहार की गोपनीयता की गारटी करती है। पर इसका यह अभिप्राय नही लेना चाहिए कि सरकार नागरिको के घर मे घुस नहीं सकती अथवा उनके व्यक्तिगत जीवन मे कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकती। सोवियत रूस मे सर्वोपरि बात समाजवादी व्यवस्था के सरक्षण की है। कानून भी इसी व्यवस्था को रक्षित करने के लिये बनाये गये हैं। अत कोई भी सरकारी अधिकारी नागरिको के घरो मे बिना उनकी आज्ञा के भी प्रवेश कर सकता है, यदि समाजवादी कानून और राज्य की सुरक्षा के लिए ऐसा आवश्यक हो।

सोवियत रूस मे अभियुक्त को वधानिक बचाव का भी अधिकार है। इस सम्बन्ध मे कोई दूसरा नियम न हो तो सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ की सभी अदालतो मे मुकदमो की खुली सुनवाई होगी, और अभियुक्त को अपने बचाव करने के अधिकार की गारटी होगी। इसका आशय यह है कि अभियुक्त के विरुद्ध जो कुछ भी किया गया है उसे उसके विरुद्ध परवी करने का अधिकार है और वह अपने मुकदमे के लिए वकील नियुक्त कर सकता है, परन्तु यह अधिकार भी व्यवहारत पूर्ण वास्तविक नहीं है।

धर्म व अन्त करण की स्वतत्रता का अधिकार (Right to Religion and Conscience)—सोवियत सविधान सभी नागरिको को अपने-अपने धार्मिक कृत्यो को करने का और धर्म मे आस्था न रखने वालो को धर्म विरोधी प्रचार करने का अधिकार देता है। नागरिको के इस अधिकार की रक्षा के लिए सोवियत सघ मे धर्म का राज्य एव स्कूल से कोई सम्बन्ध नही रखा गया है।

जातीयता एवं राष्ट्रीय समानता का अधिकार (Right to Racial and National Equality)—सोवियत संविधान के अन्तर्गत सब नागरिकों को एक समान अधिकार प्राप्त हैं, चाहे वे किसी भी जाति अथवा राष्ट्रीयता या नस्ल के हों। जाति या नस्ल के आधार पर न किसी को विशेषाधिकार दिया जा सकता है और न किसी के अधिकार कम किये जा सकते हैं। किसी जाति या नस्ल के विरुद्ध कोई घृणा या ऊँच-नीच की भावना नहीं फैला सकता।

स्त्री पुरुषों की समानता का अधिकार (Right to equality of women and men)—सोवियत रूस का संविधान इस दृष्टि से भी निराला है कि धारा 122 में इस बात के लिए पृथक व्यवस्था है कि स्त्रियों को भी सब अधिकार पुरुषों के समान ही प्राप्त होने चाहिए। इस अधिकार का प्रयोग रूस में वास्तविक रूप से हुआ है। इस अधिकार को स्त्रियाँ वास्तव में काम में ले सकें, इस दृष्टि से उन्हें श्रम करने, श्रम की मात्रा और स्वरूप के अनुरूप पारिश्रमिक पाने और वृद्धावस्था बीमारी आदि की दशा में निर्वाह-राशि पाने की सुविधा दी जाती है। माताओं और शिशुओं के हितों का विशेष ध्यान रखा जाता है। बड़े परिवार वाली माताओं को राज्य की ओर से विशेष सहायता व सम्मान प्राप्त होता है। दस या अधिक बच्चे वाली माता को 'वीर माता' (Mother Heroine) की उपाधि से विभूषित किया जाता है। इसके अतिरिक्त शिशुओं के लालन पालन, खेलकूद और मनोरंजन, पूर्ण शिक्षा आदि के लिए भी समुचित व्यवस्था की जाती है।

शरणाधिकार (Right to Asylum)—यह भी एक बड़ी अनोखी बात है कि सोवियत संविधान ऐसे विदेशी नागरिकों को राजनीतिक शरण प्राप्त करने का अधिकार देता है जो श्रमिकों के हितों की रक्षा के लिए राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिए या वैज्ञानिक कार्य के लिए अपने देश की सरकारों द्वारा सताये गये हों। इस व्यवस्था के कारण ही कहा जाता है कि मास्को, वास्तव में विख्यात क्रांतिकारियों की सुरक्षा का स्थान है।[1]

व्यक्तिगत सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार (Right of Private Property)—यद्यपि मौलिक अधिकारों के अध्याय में इस बात का उल्लेख नहीं है फिर भी संविधान के प्रथम अध्याय में यह स्पष्ट कहा गया है कि राजकीय स्वामित्व और सहकारी तथा सामूहिक स्वामित्व के अतिरिक्त व्यक्तिगत स्वामित्व में भी कुछ सम्पत्ति रहती है। अपनी आय-बचत निवास के मकान घरेलू उपभोग और सुविधा व सजावट का सामान अपने पास रखने का अधिकार है और उसका उत्तराधिकार प्राप्त करना व्यक्ति के लिए सुरक्षित है। लेकिन इस अधिकार पर इस बात का पूरा प्रबन्ध है कि अपनी सम्पत्ति का दूसरे के शोषण के लिए प्रयोग नहीं हो सके।

मौलिक कर्त्तव्य (Fundamental Duties)

सोवियत-संविधान अधिकारों और कर्त्तव्यों को अविभाज्य बनाता है। संविधान की धारा 130 से लेकर 133 तक में कर्त्तव्यों की चर्चा की गई है। चीन के अतिरिक्त अन्य किसी देश के संविधान में कर्त्तव्यों का उल्लेख नहीं मिलता है।

प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त के अनुसार तो अधिकारो मे ही कत्तव्य अन्तर्निहित है। सोवियत सविधान म नागरिको के निम्नलिखित कत्तव्य बतलाये गये हैं।

(1) सविधान और कानूनों का पालन (Observance of Soviet Constitution & Laws)—सविधान के अनुसार प्रत्येक नागरिक का यह कत्तव्य है कि वह सविधान को अङ्गीकार करें और उन कानूना का भी पालन करें जो समय समय पर बनाये जाए। ऐसा करने से ही सोवियत रूस की समृद्धि व शक्ति बढेगी और इसी मे सोवियत जनता की समृद्धि भी निहित है।

(2) श्रमिक वर्ग के अनुशासन का पालन (Maintenance of Labour Discipline)—सोवियत सविधान प्रत्येक नागरिक से आशा करता है कि श्रमिक वग म पूर्ण अनुशासन बना रहेगा। सविधान मे व्यवस्था है कि श्रमिको को चाहिये कि अपने कत्तव्य के निर्वाहन म वे कत्तव्य भावना का प्रदशन करें और सभी के लाभ को ध्यान मे रखते हुए मेहनत तथा होशियारी स काम करें।

(3) सावजनिक कत्तव्यो का पालन (Fulfilment of Public Duties)—यह एक स्वाभाविक बात है कि जहा किसी और के व्यक्तिगत लाभ के लिए नही बल्कि समाज के काय के लिए सम्पूर्ण व्यवस्था हो वहा बेईमानी को जरा भी सहन नहीं किया जा सकता।

(4) सामाजिक सम्पत्ति की रक्षा (Safe-guarding of Socialist Property)—प्रत्येक नागरिक का कत्तव्य है कि वह सोवियत सघ की सावजनिक सम्पत्ति की रक्षा करे। सोवियत सघ म सम्पत्ति मूलत राज्य के अथवा सहकारी व सामूहिक स्वामित्व म है। अत उसकी रक्षा करना सभी नागरिको का कत्तव्य है।

(5) समाजवादी व्यवस्था के नियमो के प्रति आदर (Respect for rules of Socialist Intercourse)—सोवियत सविधान मे समाजवादी समाज के नियमो का विवचन किया गया है। रूसी नागरिको का यह कर्त्तव्य बतलाया गया है कि वे उन नियमो का पूरी निष्ठा से पालन करें। इन नियमो का सम्बन्ध व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्धो व्यक्ति और समाज के सम्बन्धो आदि से है।

(6) अनिवाय सैनिक सेवा एव देश की रक्षा (Compulsory Military & Defence of the Country)—सविधान के अनुसार देश की सशस्त्र सेनाओ (श्रमिको और कृषको की लाल सेना) म भर्ती होना प्रत्येक नागरिक का सम्मानजनक एवं गौरवपूर्ण काय है। रूस म सावजनिक सनिक सवा का प्रबन्ध है। वहा यह नियम है कि माध्यमिक शिक्षा समाप्त कर 18 वष की आयु पर अथवा 19 वर्ष की आयु पर सबको सेना म भर्ती होना पडता है। सक्रिय सेना म काय करने का समय 2 से 4 वर्ष है। पर इसके बाद 50 वष की आयु तक व्यक्ति को सावजनिक सेवा का अङ्ग समझा जाता है।

सनिक सेवा के गौरवपूर्ण कत्तव्य के साथ ही सोवियत नागरिको का यह भी पवित्र कत्तव्य घोषित किया गया है कि व देश की रक्षा के लिए तत्पर रहे। देशद्रोह,

शत्रु से मिल जाने, देश की सैनिक शक्ति को हानि पहुँचाने और किसी अन्य देश की तरफ से गुप्तचर का काम करने आदि को अत्यन्त भयानक अपराध माने गये हैं और उनके लिए कठोरतम दण्ड की व्यवस्था है।

सोवियत मौलिक अधिकारों का मूल्यांकन
(Evaluation of Soviet Fundamental Rights)

विपक्ष

रूस के संविधान में दिये गये मूलाधिकार एक ओर तो पश्चिमी मूलाधिकारों से मिलते हैं, दूसरी ओर इनमें कुछ नवीनता भी है। मूलाधिकारों की धारणा निश्चय ही पश्चिमी प्रजातन्त्रों की देन है। किन्तु जहाँ पश्चिम में यह सिद्धान्त निहित है कि मानव व्यक्तित्व के विकास हेतु कुछ प्राकृतिक अधिकार आवश्यक हैं और शासन द्वारा उनका अतिक्रमण नहीं किया जाना चाहिए, वहाँ रूस में मूलाधिकार एक दूसरे सिद्धान्त पर स्वीकृत किये गये हैं और वह सिद्धान्त है साम्यवाद। रूस में मूलाधिकारों का स्रोत प्राकृतिक अधिकारों में नहीं है वरन् वहाँ की साम्यवादी व्यवस्था में है। इनका उद्देश्य रूस की साम्यवादी व्यवस्था को सुदृढ़ बनाना है। आलोचकों ने कहा है कि सोवियत संघ में मौलिक स्वतन्त्रतायें सीमित हैं। अपने कथन की पुष्टि के लिए वे वहाँ पर साम्यवादी दल के अतिरिक्त अन्य राजनैतिक दलों की अनुपस्थिति की बात कहते हैं। रूसी संविधान साम्यवादी दल की तानाशाही का जीता जागता नमूना है। वास्तव में दल का अनुशासन ऐसा कठोर है कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता समाप्त हो गई है और प्रजातन्त्र एक प्रहसन (Farce) मात्र रह गया है। व्यवहार में साम्यवादी दल ही शासन को नियन्त्रित और निर्देशित करता है।

व्यावहारिक रूप से देखने पर स्पष्ट होता है कि अनेक मौलिक अधिकार केवल दिखाने के लिए हैं। सरकार सारे समाचार पत्रों की मालिक है और वही उन्हें चलाती है। इसी प्रकार छापखाने पाठशालायें रेडियो-स्टेशन, सिनेमा संगीत भवन एवं अन्यान्य कला एवं संस्कृति के केन्द्र सभी कुछ सरकार के हाथ में हैं। कोई व्यक्ति ऐसे विचार छपा नहीं सकता और न प्रकट ही कर सकता है जो साम्यवादी दल को अस्वीकार्य हों। संघ बनाने का अधिकार भी केवल उन्हीं व्यावसायिक व सामाजिक समूहों को प्राप्त है जिन्हें सरकार की स्वीकृति मिली हुई है। भ्रमण करने की स्वतन्त्रता प्रतिबन्धित है और विदेश यात्रा निषिद्ध है (बिना सरकारी अनुमति के)। सन् 1932 की एक आज्ञा के अनुसार देश के अन्दर भी भ्रमण करने के लिए व्यक्ति को गृह पासपोर्ट (Home Passport) लेना पड़ता है। घर से 24 घण्टे की अनुपस्थिति की सूचना भी सरकार को देनी होती है। इन सबसे ऊपर एक विशेष बात यह है कि सोवियत नागरिकों का जीवन वहाँ की गुप्त पुलिस (State Secret Police) के हाथ में रहता है जो सब नियमों से शक्तिवान है और कानूनी प्रणालियों को उठाकर ताक में रखते हुए नागरिकों के मौलिक अधिकारों को कुचल सकती है।

इसके अतिरिक्त सोवियत रूस में मौलिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए अमरीका अथवा भारत के समान किसी सर्वोच्च न्यायालय की व्यवस्था नहीं है, अर्थात्

सोवियत न्यायपालिका को न्यायिक पुनरावलोकन का कोई अधिकार नहीं दिया गया है जिससे अधिकारों की व्यवस्था अवास्तविक-सी हो जाती है। ऐसी दशा में यदि कार्यपालिका द्वारा किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का अपहरण हो, तो वह उसके विरुद्ध किसी न्यायालय की शरण नहीं ले सकता।

फेनसड (Merle Fainsod) ने कुछ उदाहरण देकर यह बतलाने का प्रयास किया है कि सोवियत संविधान में लिखित अधिकार वास्तविक रूप से महत्त्वपूर्ण नहीं है। रूस में व्यक्ति को कार्य पाने का अधिकार दिया गया है, लेकिन इसका आशय यह नहीं है कि वह अपनी इच्छानुसार काम चुन सके अथवा काम की शर्त निश्चित कर सके। श्रमिक अनुशासन का जरा सा भी उल्लंघन करना उसके लिये घातक होगा। इसी प्रकार संविधान में सब जातियों और नस्लों की समान अधिकार की व्यवस्था की गई है परन्तु देश में बहुत बड़ी संख्या रूसी जाति की है और व्यावहारिक रूप में अल्पसंख्यक जातियों की स्वायत्तता की प्रवृत्तियों का दमन हुआ है। संविधान में भाषा, प्रेस, सभा संगठन, प्रदर्शन आदि के अधिकार घोषित किये गये हैं किन्तु इन अधिकारों का व्यावहारिक मूल्य नगण्य है। यदि नागरिक शासन की आलोचना करे या पृथक राजनीतिक विचार प्रगट करें तो इस प्रकार के कार्यों को श्रमिकों के हितों और समाजवादी व्यवस्था के विपरीत माना जाता है। पुनश्च, साम्यवादी दल को ही श्रमिकों के हितों और साम्यवाद की प्रगति का रक्षक राजनीतिक संगठन माना जाता है। राज्य समाज और नागरिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में साम्यवादी दल के सर्वोच्च नेताओं का आधिपत्य छाया रहता है।

पक्ष

इसमें संदेह नहीं है कि उपर्युक्त आलोचनायें पूर्ण असत्य नहीं हैं फिर भी वे अतिरंजित अवश्य हैं और अधिकांशतः रूसी तथा पाश्चात्य विचारधाराओं के अन्तर के कारण प्रगट की जाती हैं।

व्यक्तिवादी समाज में व्यक्ति के केवल राजनीतिक अधिकारों को महत्त्व दिया जाता है आर्थिक अधिकारों का प्रश्न गौण रहता है। आर्थिक अधिकारों के अभाव में राज्य व्यक्ति को कोई सुरक्षा प्रदान नहीं कर सकता। प्रत्येक व्यक्ति को असीमित व्यक्तिगत सम्पत्ति एकत्र करने का अधिकार होता है जिसका स्वाभाविक परिणाम यह निकलता है कि समाज धनी और निर्धन दो वर्गों में विभक्त हो जाता है। कुछ लोग ऐश आराम की जिन्दगी बिताते हैं तो दूसरों को भोजन वस्त्र और आवास की चिंता सताती है। एक तरह के लोग अट्टालिकाओं में निवास करते हैं और दूसरी तरह के बहुत से लोगों को अच्छी झोंपड़ियाँ भी नसीब नहीं होतीं। इसी तरह कुछ लोग अपने बच्चों को उच्च से उच्च शिक्षा दिलाने में सफल होते हैं जबकि अधिकांश लोग बच्चों को प्रारम्भिक शिक्षा तक दिलाने की स्थिति में नहीं होते। इस प्रकार की अवस्था समाजवादी समाज में नहीं होती। वहाँ राजनीतिक अधिकारों के साथ साथ व्यक्ति को आर्थिक अधिकारों की सुरक्षा भी प्राप्त होती है। वहाँ किसी को भी असीमित व्यक्तिगत सम्पत्ति एकत्र करने का अधिकार नहीं होता। यदि इस दृष्टि से देखा जाय तो रूस के मौलिक अधिकारों की व्यवस्था सराहनीय है। सोवियत

सविधान निर्माताओं के इस मत से वस्तुत कोई भिन्न राय नही होनी चाहिए कि 'किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का मूल्य ही क्या है, यदि वह व्यक्ति बेकार है अथवा भूखा मरता है अथवा उसको अपनी योग्यता के अनुसार काम नही मिलता है। सच्ची स्वतन्त्रता वही निवास करती है जहा शोषण का अन्त कर दिया गया है, जहा एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति सता नही सकते जहा बेकारी नही है जहा कोई भीख नही मागता और जहा इस बात का अभाव नही रहता कि कोई व्यक्ति कल बेकार हो सकता है या उसकी रोजी छीनी जा सकती है।" रूस मे आर्थिक सुरक्षा को राजनीतिक समानता और नागरिक स्वतन्त्रता से कही अधिक महत्व दिया गया है। पश्चिमी प्रजातन्त्रो म मूल अधिकार को केवल नकारात्मक स्वतन्त्रता ही दी है जबकि रूस म सकारात्मक स्वतन्त्रता दी गई है जैसे—व्यक्ति को वृद्धावस्था म सहायता देना आराम व अवकाश का अधिकार देना आदि।

पूजीवादी दृष्टिकोण से यह कहा जा सकता है कि रूस मे भाषण अभिव्यक्ति और सगठन का अधिकार अत्यन्त सीमित है तथा उसका प्रयोग व्यक्ति वस्तुत साम्यवादी सदस्य के रूप मे ही कर पाता है, लेकिन इस बात से इन्कार नही किया जा सकता है कि सीमित अधिकारो की व्यवस्था म ही सोवियत रूस ने एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था की जडें जमाई है जिसमे सबके लिए उचित रूप से सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा विद्यमान है। अधिकारो की समाजवादी व्यवस्था से निस्सन्देह रूस समृद्धि के पथ पर बढा है और रूसी अधिकारो की व्यवस्था के कठोर से कठोर आलोचक को भी यह स्वीकार करना पडेगा कि वहा साधारण व्यक्ति सुखी है तथा उसे दैनिक जीवन की सामान्य आवश्यकताओ की पूर्ति की चिन्ता नही करनी पडती।

रूस मे यदि मौलिक अधिकार केवलमात्र दिखावे के लिए ही होते तो सम्भवत रूस इतना समृद्ध और उन्नत न होता जितना आज वह है। आज के रूसी नागरिक ससार के किसी भी प्रगतिशील राष्ट्र के लिये ईर्ष्या के विषय और चुनौती है। वास्तव म मौलिक अधिकारो का एक नया अर्थ दिया गया है और इस दृष्टि से ये मौलिक अधिकार पश्चिमी प्रजातन्त्रो के मौलिक अधिकारो से अधिक विकसित है।

4

रूस की सर्वोच्च सोवियत
(THE SUPREME SOVIET OF THE U S S R)

'सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ की व्यवस्था सबधी शक्ति
का प्रयोग केवल सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ की
सर्वोच्च सोवियत द्वारा किया जाता है।"

—सोवियत सविधान

सोवियत सघ 15 स्वतन्त्र गणराज्यो का एक सघीय राज्य है जो समान सोवियत समाजवादी गणराज्यो के ऐच्छिक मिलन के आधार पर बना है। सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ (U S S R) का केन्द्रीय अथवा सघीय शासन जिसको सोवियत रूस मे अखिल सघ शासन (All Union Government) कहते हैं, निम्नलिखित अगो अथवा उपकरणो द्वारा चलता है—

1 सर्वोच्च सोवियत (The Supreme Soviet)
2 प्रेसीडियम (The Presidium)
3 मन्त्रिपरिषद् (The Council of Ministers)
4 सर्वोच्च न्यायालय (The Supreme Court)

सोवियत सघ की, सर्वोच्च सोवियत केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा है। सविधान की धारा 30 सर्वोच्च सोवियत को 'सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ की राज्य सत्ता की सर्वोच्च अग' बतलाती है और अनुच्छेद 32 आदेश देता है कि ' सोवियत सघ की व्यवस्थापिका शक्ति का प्रयोग केवल सर्वोच्च सोवियत ही करेगी। यह प्रेसीडियम मन्त्रिपरिषद और सर्वोच्च न्यायालय सभी की अपेक्षा सर्वोच्च है क्योकि यही इन तीनो का निर्माण करती है और ये तीनो अग कम से कम सिद्धान्त रूप मे, इसी के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

सर्वोच्च सोवियत की रचना एव कार्यप्रणाली
(The Construction and the Working of the Supreme Soviet)

द्विसदनीय व्यवस्थापिका

सर्वोच्च सोवियत द्विसदनात्मक विधान मण्डल है। इसके दोनो सदन ये हैं—

1 सघीय सोवियत (Soviet of the Union)
2 जातीय या राष्ट्रीयताओ की सोवियत (Soviet of the Nationalities)

अन्य सभी संघीय राज्यों के समान संघीय सोवियत निम्न सदन है और समष्टि रूप से सोवियत संघ की प्रतिनिधि है। जातीय सोवियत रूस की व्यवस्थापिका का उच्च सदन है और संघ की विविध इकाइयों एवं अन्य अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व करती है।

सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों का निर्वाचन सार्वजनिक एवं वयस्क मताधिकार (Universal & Adult Franchise) के आधार पर गुप्त मतदान द्वारा होता है। सभी नागरिक जिन्होंने 18 वर्ष की आयु प्राप्त कर ली है और जो पागल अथवा किसी न्यायालय द्वारा दण्डित न हो अथवा अन्य किसी कारणवश मताधिकार से वंचित न हो, प्रतिनिधियों के निर्वाचन में भाग ले सकते हैं। सोवियत संघ का प्रत्येक नागरिक जिसकी आयु कम से कम 23 वर्ष है सर्वोच्च सोवियत के लिए प्रत्याशी के रूप में खड़ा हो सकता है। प्रत्याशी के सम्बन्ध में जातीय, धर्म, लिंग शिक्षा, सामाजिक स्थिति अथवा पूर्व कार्यवाहियाँ आदि के आधार पर कोई भेद भाव नहीं किया जाता है।

संघीय सोवियत (Soviet of the Union) में प्रति तीन लाख जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि (Deputy) एक निर्वाचन-जिले (Election District) से चुना जाता है। सोवियत संघ का यह सदन समस्त राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है। इस सदन के निर्वाचित प्रतिनिधियों में सोवियत संघ के प्रत्येक प्रदेश के कुछ प्रतिनिधि अवश्य होते हैं। यदि एक ओर उत्तरी प्रदेश के एस्किमो हैं तो दूसरी ओर दक्षिण के काकेशिया निवासी हैं। प्रतिनिधियों में लगभग 38 प्रतिशत श्रमिक, 26 प्रतिशत कृषक तथा 36 प्रतिशत अन्य बुद्धिजीवी सिपाही तथा कार्यालय प्रतिनिधि होते हैं। लगभग 20 प्रतिशत स्त्रियाँ भी होती हैं।

इस दृष्टि से जैसा कार्टर (Carter) ने कहा है, "सर्वोच्च सोवियत सामाजिक एवं राष्ट्रीय समानता का बड़ा सुन्दर प्रतीक है। संघीय सोवियत की सदस्य संख्या लगभग 700 रहती है। यह सदस्य संख्या निश्चित नहीं है और प्रायः बदलती रहती है।

जातीय सोवियत (Soviet of the Nationalities) का निर्वाचन जनसंख्या के आधार पर नहीं होता है बल्कि वह विभिन्न राष्ट्रीय हितों और समितियों का प्रतिनिधित्व करती है। भिन्न भिन्न श्रेणी की संस्था, इकाइयों का भिन्न भिन्न प्रतिनिधित्व दिया गया है—संघीय गणराज्यों (Union Republics) में से प्रत्येक 25 स्वशासी गणराज्यों (Autonomous Republics) में से प्रत्येक 15 स्वशासी क्षेत्रों (Autonomous Regions) में से प्रत्येक 5 और राष्ट्रीय क्षेत्रों (National Areas) में से प्रत्येक एक प्रतिनिधि भेजता है। जातीय सोवियत के सदस्यों की संख्या इस प्रकार लगभग 650 रहती है किन्तु सन् 1966 चुनाव के समय से यह संख्या बढ़ाकर 750 कर दी गयी है। इस प्रकार से

प्रतिनिधित्व का अर्थ यह है कि जिस संघीय गणराज्य में जितनी अधिक अधीनस्थ इकाइयां होती हैं उतना ही अधिक प्रतिनिधित्व उसे जातीय सोवियत में प्राप्त होता है।

सदस्यों के अधिकार और दायित्व

अन्य देशों की भांति सोवियत रूस में भी व्यवस्थापिका अर्थात् सर्वोच्च सोवियत के सदस्यों के कुछ विशेष अधिकार हैं और साथ ही उनके कुछ विशेष दायित्व भी हैं। प्रत्येक सदस्य के लिए यह वांछित है कि वह अपने निर्वाचन क्षेत्र के निर्वाचकों से सम्पर्क रखे उन्हें शासन की कार्यवाहियों की रिपोर्ट देता रहे, अपने क्षेत्र के कल्याण के सम्बन्ध में सरकार की ओर से कार्यवाही कराने का प्रयत्न करे, आदि। यह व्यवस्था है कि यदि कोई सदस्य अपने दायित्व को पूरा नहीं करे, तो उसके क्षेत्र के निर्वाचक अपने बहुमत से उसको सदस्यता से वंचित करदें।

कार्यकाल एवं क्षेत्र

संविधान के अनुसार सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों का कार्यालय 4 वर्ष है किन्तु दोनों सदनों के गतिरोध की स्थिति में प्रेसीडियम सर्वोच्च सोवियत को अवधि से पूर्व भी भंग कर सकती है। ऐसी दशा में यह आवश्यक है कि प्रेसीडियम दो माह के भीतर दुबारा चुनाव की व्यवस्था करे और नयी चुनी हुई सर्वोच्च सोवियत की बैठक निर्वाचन से तीन महीने के भीतर बुलाये। यह ज्ञातव्य है कि सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदन साथ-साथ ही भंग किये जाते हैं और साथ ही उनकी बैठकें बुलायी जाती हैं। सर्वोच्च सोवियत के सत्र अत्यन्त अल्पकालीन होते हैं, सामान्यतः एक सप्ताह के लिए।

सर्वोच्च सोवियत का प्रत्येक सदन अपना एक सभापति और 4 उपसभापति चुनता है। अधिकांशतः इन दोनों सदनों की संयुक्त बैठकें ही होती हैं और ऐसी परिस्थिति में दोनों सदन के सभापति या अध्यक्ष बारी बारी से सभापति या अध्यक्ष का स्थान ग्रहण करते हैं। दोनों सदन औपचारिक विधान और बजट पर विचार करते समय अलग अलग बैठ सकते हैं और मत दे सकते हैं। लेकिन नियुक्तियों या प्रतिवेदनों जैसे अन्य कार्य के लिए वे एक साथ मत देते हैं।

संविधान में निम्नलिखित उद्देश्य के लिए दोनों सदनों के सम्मिलित सत्र की भी व्यवस्था की गई है—1 सर्वोच्च सोवियत का प्रेसीडियम का निर्वाचन करने के लिए, 2 मंत्रिपरिषद् का निर्वाचन करने के लिए 3 सर्वोच्च न्यायालय और विशेष न्यायालय का निर्वाचन एवं गठन करने के लिए, 4 सोवियत संघ के प्रोक्यूरेटर जनरल (Procurator General) का निर्वाचन करने के लिए। सर्वोच्च सोवियत के विभिन्न आयोगों (Commissions) की रिपोर्ट अथवा प्रतिवेदनों पर भी विचार करने के लिए सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों का सम्मिलित सत्र ही सम्पन्न होता है।

कार्य प्रणाली

अध्यक्ष एवं विविध आयोग—सर्वोच्च सोवियत के प्रत्येक सदन का एक अध्यक्ष होता है, जिसे प्रत्येक सदन अलग-अलग चुनता है। अध्यक्ष अपने अपने सदनों

की बैठकों की अध्यक्षता करते हैं, बैठकों का संचालन करते हैं और अनुशासन रखते हैं। दोनों सदनों की सम्मिलित बैठकों में दोनों सदनों के अध्यक्ष बारी-बारी से अध्यक्षता करते हैं।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक नये सत्र के प्रारम्भ में प्रत्येक सदन एक एक परिचय या परमाधिकार आयोग (Credential Commission) का निर्वाचन भी करता है, जिसका प्रमुख कार्य इस बात का प्रमाण-पत्र देना होता है कि सदस्यों का निर्वाचन विधिपूर्वक होता है या नहीं। प्रत्येक सदन कुछ स्थायी आयोगों का निर्वाचन भी करता है। ये आयोग विश्व के अन्य देशों की विधान मण्डल की समितियों की भांति ही कार्य करते हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण आयोगों के नाम ये हैं—बजट आयोग (Budget Commission), वैदेशिक विषयों का आयोग (Commission of Foreign Affairs), विधायन आयोग (Legislative Commission), ज्येष्ठतर सदस्यों का आयोग (Commission of the Elders)। विशेष विषयों पर विचार करने के लिए और भी विशेष आयोग अथवा समितियों का निर्माण किया जाता है। यद्यपि इन स्थायी समितियों को विधिवत् कार्य नहीं दिये हुए होते हैं तथापि ये अधिवेशन के बीच की अवधि में बड़ा लाभकारी कार्य करती हैं। सोवियत संघ और सोवियत जातियों की वैधानिक प्रस्ताव समितियाँ सर्वोच्च सोवियत के सम्मुख प्रस्तुत विधेयकों पर अपना निर्णय देती हैं और स्वयं अपनी ही ओर से तथा सदन के आदेशानुसार विधेयकों का मसविदा तैयार करती हैं। ये समितियाँ अपने कार्य के लिए विशेषज्ञों, वैज्ञानिकों और श्रमिकों की एक विशाल संख्या से नागरिकों के सुझावों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के लिए सहायता लेती हैं।

व्यवस्थापन प्रक्रिया—रूसी व्यवस्थापिका के दोनों सदन समान-पदी हैं। उन्हें व्यवस्थापन के सम्बन्ध में समान अधिकार प्राप्त हैं। सोवियत संविधान में धन सम्बन्धी और गैर धन-सम्बन्धी प्रक्रिया में किसी प्रकार का प्रक्रिया का अन्तर नहीं है। कोई भी विधेयक दोनों में से किसी भी सदन में प्रस्तुत किया जा सकता है और वह उसी समय विधि का रूप धारण करता है जब वह दोनों सदनों के बहुमत द्वारा स्वीकृत हो जाता है।

है और उसके द्वारा स्वीकृत होने पर ही वह कानून बनता है और प्रेसीडियम के हस्ताक्षर के बाद वह लागू कर दिया जाता है।

चूंकि व्यवस्थापन के विषय में सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों को समान अधिकार प्राप्त है, अतः संविधान में उस संभावना के समाधान के लिए भी व्यवस्था की गयी है जब दोनों सदनों के बीच उग्र मतभेद पैदा हो जाए। मतभेद की ऐसी स्थिति में विवादग्रस्त विधेयक को समझौता आयोग (Conciliation Commission) के पास भेजा जाता है। आयोग में दोनों के सदनों के बराबर बराबर प्रतिनिधि सम्मिलित होते हैं। यदि आयोग समझौता कराने में सफल नहीं होता तो उस विषय पर दोनों सदन पुनः विचार करते हैं और यदि फिर भी समझौता नहीं होता तो प्रेसीडियम दोनों सदनों को भंग करके नये आम निर्वाचन का आदेश दे सकता है। तथापि व्यवहार में यही पाया गया है कि साम्यवादी दल के कठोर अनुशासन के कारण कभी कोई गतिरोध पैदा नहीं होता। प्रायः कभी ऐसा अवसर नहीं आता जब गतिरोध को दूर करने के लिए उपरोक्त कार्यप्रणाली को अपनाया जाय।

सर्वोच्च सोवियत के अधिकार और कार्य
(Powers and Functions of the Supreme Soviet)

संविधान की चौदहवीं धारा में इसके अधिकारों और कार्यों का वर्णन किया गया है जिन्हें हम निम्नलिखित शीर्षकों में विभाजित कर सकते हैं—

विधायी अधिकार

व्यवस्थापन पर सर्वोच्च सोवियत का एकाधिकार है। वही सम्पूर्ण संघ के लिए आवश्यक कानून बनाती है। वह इकाइयों के कानून के ऊपर कानून बनाने में भी सक्षम है। संविधान की धारा 20 से स्पष्ट होता है कि यदि संघीय कानूनों और इकाइयों के कानूनों में प्रतिरोध हो तो संघीय कानून ही मान्य होंगे। सर्वोच्च सोवियत के व्यवस्थापन सम्बन्धी अधिकार वास्तव में बहुत ही व्यापक और महत्वपूर्ण है। न्यायिक पद्धति न्यायिक विधि फौजदारी एवं व्यावहारिक संहिता से सम्बन्धित विधान कार्यों को निपटाने नागरिकों तथा विदेशियों से सम्बन्धित कानून बनाने, विवाह और परिवार से सम्बन्धित विधायन कार्यों के सिद्धान्तों का निर्धारण करने, श्रमिक विधायन के लिए आधारभूत सिद्धान्तों का निश्चय करने आदि का उत्तरदायित्व सर्वोच्च सोवियत पर ही है।

वित्तीय अधिकार

सन् 1965 के बजट अधिनियम के अनुसार सर्वोच्च सोवियत ही पूरे देश के लिए बजट पारित करती है। पिछले वर्ष में हुए अधिक व्यय के लिए पूरक मांगें भी यही स्वीकृत करती है। सोवियत संघ का आर्थिक योजनाओं का निर्धारण और संचालन करने संघ व गणराज्यों तथा स्थानीय बजटों को जाने वाले करों तथा राजस्वों का निर्धारित करने, ऋण लेने-देने आदि का उत्तरदायित्व सर्वोच्च सोवियत पर ही है।

बजट इसके दोनो सदनो मे से किसी भी सदन म प्रस्तुत किया जा सकता है। दोनो सदनो की बजट सम्बन्धी शक्तियाँ बराबर हैं। बजट के साथ ही बहुधा आर्थिक नियोजन पर भी वाद विवाद होता है। इस समय दोनो सदनो की संयुक्त बैठक म एक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाता है जिस पर बाद मे दोनो सदन पुन अलग अलग विचार करते हैं।

कार्यपालिका सम्बन्धी अधिकार

सर्वोच्च सोवियत को कार्यपालिका सम्बन्धी महत्वपूर्ण अधिकार भी प्राप्त है। प्रतिरक्षा, परराष्ट्र सम्बन्ध युद्ध और शान्ति के प्रश्नो का निवारण, विदेशी-व्यापार, कर-व्यवस्था, आर्थिक नियोजन सोवियत सघ म नये गणराज्यो का प्रवेश, गणराज्यो के सीमा परिवतन को मान्यता, राज्य की सुरक्षा, गणराज्यो और सघ सरकार के सम्बन्धो की सवधानिक दृष्टि से सुरक्षा आदि विषयो पर सोवियत रूस को नियन्त्रण का अधिकार प्राप्त है। सर्वोच्च सोवियत ही सोवियत सघ की सेनाओ का सगठन करने, गणराज्यो के सनिक सगठन के निर्माण के सिद्धा त तय करने, नये प्रदेशो तथा स्वायत्त शासन प्रदत्त गणराज्यो और स्वायत्त जनपदो के निर्माण को मान्यता देने का उत्तरदायित्व वहन करती है। मुद्रा एव साख प्रणाली का सचालन करने राजकीय बीमा का सगठन करने भूमि, वन खान जल आदि के प्रयोग के सम्बन्ध म मूल सिद्धा तो को स्थिर करने, बको तथा औद्योगिक व कृषि सस्थानो और व्यावसायिक उद्योगो का प्रबन्ध करने के लिए वही उत्तरदायी है। मन्त्रिमण्डल को बनाने और उस पर नियन्त्रण करने का अधिकार भी उसे ही प्राप्त है।

न्यायिक अधिकार

न्यायिक क्षेत्र मे भी सर्वोच्च सोवियत की विशेष स्थिति है। रूस मे शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त नही अपनाया गया है। वहाँ सर्वोच्च सोवियत को सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) विशिष्ट न्यायालय (Special Court) तथा प्रोक्यूरेटर जनरल (Procurator General) आदि का चयन करने का अधिकार प्राप्त है। वही सभी उच्च न्यायाधिकारियो को चुनती है और न्यायिक सस्थाओ का नियन्त्रण करती है। न्यायिक पद्धति न्यायिक विधि फौजदारी एव व्यावहारिक सहिता स सम्बन्धित विधायन कार्यों को निपटाना, सघ के सभी बन्दियो को मुक्त करने तथा क्षमा प्रदान करने आदि का अधिकार भी सर्वोच्च सोवियत को है।

अन्य अधिकार

सर्वोच्च सोवियत को कुछ और भी महत्वपूर्ण अधिकार मिले हुए हैं। अन्तर्राष्ट्रीय मामलो म सोवियत रूस का प्रतिनिधित्व करना विदेशो से सधियाँ तथा सन्धि विच्छेद करना तथा सघीय गणराज्यो और विदेशो म सम्बन्ध स्थापित करने की सामान्य विधि निर्धारित करना, सर्वोच्च सोवियत का ही काम है। इसके अतिरिक्त सर्वोच्च सोवियत को ही केवल यह अधिकार है कि वह सविधान म

संशोधन करे। उसके प्रत्येक सदन में मतों का कम से-कम दो तिहाई बहुमत होने पर ही संशोधन प्रस्ताव पारित हो सकता है।

स्पष्ट है कि सर्वोच्च सोवियत का अधिकार क्षेत्र व्यवस्थापन, कार्य पालन और न्यायपालन सभी क्षेत्रों तक व्यापक है। सोवियत संघ में व्यवस्थापिका की सर्वोच्च नियम पूर्णरूप से लागू किया गया है।

सर्वोच्च सोवियत का मूल्यांकन
(Evaluation of the Supreme Soviet)

प्रकट है कि सर्वोच्च सोवियत रूस के संविधान में अत्यन्त शक्तिशाली संस्था है। ब्रिटिश शासन प्रणाली में जिस प्रकार की सर्वोच्चता वहां की संसद को प्राप्त है प्रायः वैसी ही सर्वोच्चता रूस में सर्वोच्च सोवियत को प्राप्त है, परन्तु व्यवहारतः इङ्गलैंड की ही भांति रूस में भी सर्वोच्च सोवियत अधिकांशतः मन्त्रिमण्डल (Council of Ministers) के नियन्त्रण में और उसके पथ प्रदर्शन के अनुसार ही चलती है। टाउ टर ने लिखा है 'अभी तक सर्वोच्च सोवियत का कार्य यह रहा है कि वह पूर्व नियमों का अनुसमर्थन करती रही है या प्रचार का साधन बनी रही है। इसका मुख्य उद्देश्य यह प्रतीत होता है कि समय समय पर अवसरानुकूल शासन की नीति पर प्रतिनिधि निकाय के रूप में अपना अनुमोदन और अनुसमर्थन प्रदान करती रहे।'

अभी तक ऐसा कभी नहीं हुआ कि सर्वोच्च सोवियत ने मन्त्री-परिषद् (Council of Ministers) के प्रति अविश्वास का प्रस्ताव प्रस्तुत किया हो। व्यवस्थापन कार्य में पहल मन्त्रि-परिषद् ही करती है। सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशन के नहीं होने के समय अध्यादेशों के रूप में कानून निर्माण का कार्य प्रेसीडियम द्वारा किया जाता है व्यवस्थापन सबंधी जो प्रस्ताव सरकार की ओर से प्रस्तुत किये जाते है, उन्हें प्रायः सर्वोच्च सोवियत द्वारा स्वीकृत कर लिये जाते हैं। सर्वोच्च सोवियत का अधिकांश कार्य यही होता है कि वह मन्त्रि-परिषद् अथवा प्रेसीडियम द्वारा प्रस्तुत विविध प्रतिवेदनों, प्रस्तावों और निर्णयों की पुष्टि करे।

यह भी कहा जाता है कि सर्वोच्च सोवियत साम्यवादी दल की प्रतिछाया है क्योंकि देश के सम्पूर्ण क्षेत्र में इसी दल का आधिपत्य है। सर्वोच्च सोवियत में विरोधी दल के अभाव में वाद विवाद और उत्तर प्रत्युत्तर प्रायः निष्प्राण होते हैं।

सर्वोच्च सोवियत की स्थिति व्यावहारिक रूप में इसलिए भी क्षीण है कि उसका अधिवेशन वर्ष में केवल दो बार होता है और वह भी अधिक से अधिक 12 दिन का। स्पष्ट है कि इतने से अल्पकाल में कोई भी इतने बड़े उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यों को नहीं निपटा सकता।

पुनश्च एक बात यह भी है कि सर्वोच्च सोवियत के जितने सदस्य होते हैं वे प्रायः कहीं न कहीं रोजगार से लगे हुए व्यक्ति होते हैं और इस कारण सर्वोच्च सोवियत अपने व्यवस्थापन कार्य का निर्वाह प्रभावपूर्ण ढंग से नहीं कर पाती।

परन्तु इन सब आलोचनाओं से हमें यह नहीं समझ लेना चाहिये कि सर्वोच्च सोवियत केवल प्रचार का रंगमंच है और सरकारी नीति तथा कार्यों पर रबर स्टाम्प लगाने वाली मशीन मात्र है। सर्वोच्च सोवियत के आयोग बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पादित करते हैं। कार्यकारिणी द्वारा प्रस्तुत सुझावों का परीक्षण करते हैं, उनमें संशोधन लाते हैं और कभी-कभी उन्हें अस्वीकृत भी कर देते हैं। सर्वोच्च सोवियत का महत्त्व इस दृष्टि से बहुत अधिक है कि इसके सदस्य विभिन्न क्षेत्रों से आते हैं और अपने-अपने क्षेत्र की समस्याओं से मन्त्रियों को अवगत कराते हैं। मन्त्रिगण तदानुकूल अपनी नीतियों में परिवर्तन और संशोधन करते रहते हैं। इस प्रकार सार्वजनिक जीवन के नियमन पर सर्वोच्च सोवियत का शैक्षणिक महत्त्व भी कम नहीं है। इसमें देश के विभिन्न भागों के प्रतिनिधि जो विविध राष्ट्रीयताओं, व्यवसायों और हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं एकत्र होते हैं। वे नेताओं के साम्यवादी सन्देश से अनुप्राणित होकर समाजवाद को अपने अपने क्षेत्रों में दृढ़ करते हैं। साथ ही दलीय नेताओं और सर्वोच्च सोवियत दोनों में काफी सम्पर्क एवं सामञ्जस्य रहता है, क्योंकि दल के प्रमुख नेता सर्वोच्च सोवियत में अवश्य रहते हैं। अन्त में यह कहा जा सकता है कि आधुनिक युग में व्यवस्थापिकाओं की शक्ति में विश्वव्यापी ह्रास हुआ है और इस प्रवृत्ति से सर्वोच्च सोवियत भी बची नहीं रह सकी है।

5

रूस का प्रेसीडियम
(THE PRESIDIUM OF THE U S S R)

"प्रेसीडियम सरकार के कार्यों का प्रबन्ध करने में अपनी जननी अर्थात् सर्वोच्च सोवियत की अपेक्षा अधिक क्रियाशील रही है।"

—प्राँग एव जिंक

सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ की सर्वोच्च सोवियत की प्रेसीडियम एक ऐसी सस्था है जिसकी तुलना विश्व के किसी भी राज्य की किसी भी अन्य सस्था से नही की जा सकती। स्विस कार्यपालिका की भाति इसका सगठन सामूहिक (Collective) है। इसके कार्य मिश्रित हैं। इसके कृत्यो में कुछ कार्यपालिका सम्बन्धी, कुछ व्यवस्थापिका सम्बन्धी और कुछ न्यायिक प्रकृति के कृत्य हैं। एक ओर तो यह अन्य देशो में पाये जाने वाले राज्याध्यक्ष (Head of the State) के अधिकारो का प्रयोग करती है और दूसरी तरफ अधिवेशनो के अन्तर्काल में सर्वोच्च सोवियत के स्थान पर कार्य करती है।

प्रेसीडियम का सगठन
(The Composition of the Presidium)

निर्वाचन एव सदस्य सख्या

सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत अपने दोनो सदनो के संयुक्त अधिवेशन में प्रेसीडियम का निर्वाचन करती है। संविधान में इसकी सदस्य सख्या के विषय में कुछ नहीं कहा गया है, अत इसकी सदस्य सख्या समय और आवश्यकता के अनुसार सदैव बदलती रही है। सन् 1936 में इसकी सदस्य संख्या 37 थी, तो इस समय 32 है। इसमें एक अध्यक्ष (President), सघ के 15 गणराज्यो के प्रतिनिधियों के रूप में 15 उपाध्यक्ष (Vice Presidents) एक मन्त्रि और 15 अन्य सदस्य सम्मिलित हैं। यह परम्परा बन गई है कि प्रत्येक सघीय गणराज्य (U Republic) की प्रेसीडियम के अध्यक्ष को उपाध्यक्ष चुन लिया जाना परम्परा को राष्ट्रीयताओं के प्रतिनिधित्व तथा सघीय एकता के आवश्यक समझा गया है।

सदस्यता—सामान्यतः सर्वोच्च सोवियत के सदस्यों में से ही प्रेसीडियम के सदस्य चुने जाते हैं लेकिन सांविधानिक रूप में यह अनिवार्य नहीं है। प्रेसीडियम के सदस्यों में प्रायः साम्यवादी दल के सर्वोच्च नेता और साम्यदल के उच्च पदाधिकारी रहते हैं। सन् 1936 के बाद में इसकी सदस्यता के सम्बन्ध में दो प्रतिबन्ध लगा दिये गये हैं—प्रथम, मन्त्रिपरिषद के सदस्य प्रेसीडियम के सदस्य नहीं हो सकते, एवम् द्वितीय, सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों के अध्यक्ष इसके सदस्य नहीं हो सकते, क्योंकि यह स्वयं सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी होती है।

कार्यकाल—प्रेसीडियम का कार्यकाल सर्वोच्च सोवियत के कार्यकाल पर निर्भर करता है। संविधान में सर्वोच्च सोवियत का कार्यकाल चार वर्ष निर्धारित किया गया है, अतः प्रेसीडियम का कार्यकाल भी चार वर्ष ही है। संकट के समय अथवा युद्धकाल में या अन्य किसी कारण से जब सर्वोच्च सोवियत का कार्यकाल बढ़ जाता है तो प्रेसीडियम का कार्यकाल भी स्वयमेव ही बढ़ जाता है।

अध्यक्ष—प्रेसीडियम का एक अध्यक्ष (Chairman) होता है। अन्य सदस्यों की भांति इसका चुनाव भी सर्वोच्च सोवियत करती है। अध्यक्ष के होने के नाते इसे कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है। इसका स्थान अन्य सदस्यों के समकक्ष (Equal) ही होता है।

प्रेसीडियम का अध्यक्ष स्वयं प्रेसीडियम को सौंपे गये कुछ कार्यों को पूरा करता है, यद्यपि संविधान में इस प्रकार का कोई उपबन्ध नहीं है। जब सर्वोच्च सोवियत द्वारा कानूनों को पारित कर दिया जाता है तब उनका प्रकाशन अध्यक्ष के हस्ताक्षरों के उपरान्त होता है। वही प्रेसीडियम के स्थान पर आज्ञप्तियाँ (Decrees) पर हस्ताक्षर करता है। प्रेसीडियम का अध्यक्ष विदेशी राजदूतों एवं कूटनीतिज्ञों का स्वागत करता है, अन्य राज्यों के अध्यक्षों से संदेशों का आदान-प्रदान करता है और इसी प्रकार के अन्य कार्यों का सम्पादन करता है। वह एक प्रकार से सोवियत संघ का नाम मात्र का शासक (Titular Head) है। विदेशी लेखक अध्यक्ष को सोवियत संघ का राष्ट्रपति मानते हैं क्योंकि वह कुछ ऐसे कार्यों का सम्पन्न करता है जो पाश्चात्य देशों में राज्याध्यक्षों के कार्य हैं।

प्रेसीडियम के अधिकार और कर्तव्य
(Powers and Functions of the Presidium)

सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ की सर्वोच्च सोवियत के प्रेसीडियम को संविधान की धारा 49 के अन्तर्गत निम्नलिखित अधिकार और कर्तव्य प्राप्त हैं—

(1) सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ की सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशन आमन्त्रित एवं स्थगित करना।

(2) सोवियत रूस के प्रचलित अधिनियमों की व्याख्या करना और आदेश देना।

(3) आज्ञप्तियाँ (Decrees) जारी करना।

(4) खुद पहल-कदमी (Initiative) करके या किसी एक संघ प्रजातन्त्र की माँग पर राष्ट्र-व्यापी मतगणना (Referendum) करना।

(5) सोवियत संघ के मन्त्री-मण्डल और गणराज्यों के मन्त्री मण्डलों के निर्णय व आज्ञायें यदि कानून का विरोध करें तो उन्हें रद्द करना।
(6) सम्मानों (खिताबों तथा पदकों) और उपाधियों की व्यवस्था करना।
(7) सर्वोच्च सोवियत की बैठकों के अन्तरिम समय में मन्त्रि-मण्डल के प्रधानमन्त्री की सिफारिश पर किसी मन्त्री को अलग करना तथा नियुक्ति करना। किन्तु बाद में इसकी सर्वोच्च सोवियत से पुष्टि कराना आवश्यक है।
(8) क्षमा-दान देना।
(9) सेना के उच्च अफसरों का नियुक्त अथवा पदच्युत करना।
(10) विदेशी आक्रमण के समय युद्ध घोषणा करना यदि सर्वोच्च सोवियत का अधिवेशन न हो रहा हो।
(11) ऐच्छिक अथवा अनिवार्य भरती की घोषणा करना।
(12) विदेशी राजदूतों का स्वागत करना और समय आने पर उन्हें वापिस भेजना।
(13) विदेशों में पूर्ण शक्ति सम्पन्न राजदूत (Plem Potentiary) को नियुक्त करना अथवा वापिस बुलाना।
(14) पूर्ण अथवा आंशिक रूप से नागरिकों का सैनिक सेवा के हेतु बाध्य करना।
(15) वैदेशिक मामलों में सर्वोच्च सोवियत का प्रतिनिधित्व ग्रहण करना।
(16) विशेष स्थानों अथवा सम्पूर्ण सोवियत संघ में देश की प्रतिरक्षा अथवा सार्वजनिक व्यवस्था और राज्य सुरक्षा के हित में मार्शल-ला की घोषणा करना।

उक्त सूची से यह स्पष्ट है कि प्रेसीडियम की शक्तियां महत्त्वपूर्ण एवं विविध रूपिणी हैं। उसे विधायिनी, कार्यपालिका एवं न्यायिक क्षेत्रों में पर्याप्त शक्ति प्राप्त है। वह सर्वोच्च सोवियत की अपेक्षा सरकार के कार्यों का प्रबन्ध करने में अधिक भाग लेती है। फाइनर ने ठीक ही लिखा है कि, "प्रेसीडियम वास्तविक एवं कानूनी रूप से सोवियत संघ की सतत सरकार है।"

प्रेसीडियम की शक्तियों की व्यावहारिकता सर्वोच्च सोवियत व मन्त्री परिषद् से उसका सम्बन्ध

इस सम्पूर्ण विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रेसीडियम की शक्तियां अत्यन्त व्यापक और बहुमुखी हैं तथा वे शासन के प्रत्येक क्षेत्र को छूती हैं। सांविधानिक स्थिति के अतिरिक्त उसकी व्यावहारिक स्थिति भी यही है। प्रेसीडियम संविधान द्वारा प्रदत्त समस्त अधिकारों का उपभोग करती है। टाउस्टर ने कहा है कि कवल कुछ अधिकारों को छोड़कर प्रेसीडियम ने अपने अधिकारों का खूब उपयोग और प्रयोग किया है। मन्त्रियों का नियुक्ति और पदच्युति, उपाधियों का वितरण, क्षमादान, सेना के पदाधिकारियों की पदोन्नति और परिवर्तन, मानन

कानून की घोषणा, सेना का प्रचालन और विचलन, सन्धियों की सन्तुष्टि, विदेशों में राजदूतों की नियुक्ति और विदेशी राजदूतों की स्वीकृति आदि विशेषाधिकारों का पूर्ण प्रयोग प्रेसीडियम के द्वारा किया गया है। इसने अभी तक केवल दो अधिकारों का प्रयोग नहीं किया है-सर्वोच्च सोवियत को भंग करने के अधिकार का और जनमत संग्रह की व्यवस्था करने का।

कार्यपालिका और न्यायिक अधिकारों के अतिरिक्त व्यवस्थापन के क्षेत्र में तो प्रेसीडियम ने और भी प्रभावशाली कार्य किये हैं। प्रेसीडियम ने अपनी आज्ञप्तियों के द्वारा सर्वोच्च सोवियत के विधि निर्माण क्षेत्र में पर्याप्त हस्तक्षेप किया है। उसने ये आज्ञप्तियाँ न केवल उस समय प्रसारित की हैं जबकि सर्वोच्च सोवियत का आमन्त्रण कठिन था, प्रत्युत् साधारण समय में भी इस शक्ति को प्रयुक्त किया है। संघ के अधिकार क्षेत्र में आने वाले ऐसे विषयों के सम्बन्ध में भी उसने आज्ञप्तियाँ प्रसारित की हैं जो संविधान द्वारा स्पष्टतः सर्वोच्च सोवियत के अधिकार क्षेत्र में गिनाई गई हैं और जो प्रसीडियम के अधिकार क्षेत्र में नहीं हैं, जैसे—विभिन्न संघीय गणराज्यों के मध्य सीमा परिवर्तन का सम्मेलन करना, नवीन स्वशासी गणराज्यों और प्रान्तों एवं क्षेत्रों के निर्माण के लिए सम्मति प्रदान करना आदि।

प्रेसीडियम की आज्ञप्तियों की यद्यपि सर्वोच्च सोवियत द्वारा पुष्टि होना आवश्यक है लेकिन ये केवल औपचारिक रस्म हैं। सर्वोच्च सोवियत बिना वाद-विवाद अथवा छान बीन के प्रायः अनिवार्य रूप से आज्ञप्तियों की स्वीकृति दे देती है। अभी तो स्थिति यहाँ है कि प्रेसीडियम की आज्ञप्तियाँ संविधान में संशोधन तक ला देती हैं।

मन्त्रि-परिषद एवं प्रेसीडियम का भी परस्पर बहुत कुछ सम्बन्ध है। मन्त्रि-परिषद के समस्त सदस्य सर्वोच्च सोवियत से लिए जाते हैं और उसी के प्रति उत्तरदायी होते हैं। परिणामस्वरूप जब सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशन नहीं होते उस समय वह अपने कार्यों के लिए प्रेसीडियम के प्रति उत्तरदायी हो जाती है। वस्तुतः प्रेसीडियम मन्त्रि परिषद की नीति एवं सभी कार्यों का नियन्त्रण करती है। यदि कोई मन्त्री उचित कार्य नहीं करता तो यह उसे पदच्युत कर सकती है। प्रेसीडियम को नये मन्त्रियों की नियुक्ति का भी अधिकार है। यह मन्त्रि-परिषद् के संविधान विरोधी निर्णयों को रद्द कर सकती है। मन्त्रि परिषद जो भी महत्वपूर्ण कार्य करती है जैसे संधि तथा युद्ध करना, राजदूतों की नियुक्ति करना दूसरे देशों के राजदूतों का स्वागत करना नये पद एवं सम्मान प्रदान करना इत्यादि सभी कार्यों में प्रेसीडियम की स्वीकृति अनिवार्य होती है। मन्त्रि परिषद् के लिए यह आवश्यक है कि वह प्रेसीडियम के निर्णयों और आदेशों को माने। सोवियत रूस का मन्त्रि-परिषद् का रूप वस्तुतः कार्यपालिका (Executive) संस्था का न होकर प्रशासनिक (Administrative) संस्था का है और उसका काम प्रेसीडियम के निर्णयों को क्रियान्वित कराना मात्र है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि प्रेसीडियम सिर्फ सिद्धान्त में ही नहीं बल्कि व्यवहार में भी राज्य शक्ति के उच्च अंगों" में एक है, जिसने एक ... क्रियाशील संस्था की आवश्यकता की पूर्ति की है।

6

रूस की मन्त्रिपरिषद्

(THE COUNCIL OF MINISTERS OF THE U S S R)

' सोवियत सरकार तथा सोवियत संघ की राज्य सत्ता का सर्वोच्च कार्यपालिका और प्रशासकीय अङ्ग मन्त्रिपरिषद् है।"

—सोवियत संविधान

सोवियत शासन-व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता उसका दुहरापन (Duality) है। कार्यपालिका शक्ति को प्रेसीडियम व मन्त्रिपरिषद् के मध्य बांटा गया है, किन्तु दोनों शासनांगों में अन्तर यह है कि प्रेसीडियम मुख्यतः सर्वोच्च सोवियत के बदले में विधि-निर्मात्री निकाय है, जबकि मन्त्रिपरिषद् मुख्यतः कार्यपालिका एवं प्रशासकीय संस्था है। स्टालिन-संविधान की धारा 64 में भी कहा गया है कि "सोवियत सरकार और सोवियत संघ की राज सत्ता का सर्वोच्च कार्यपालिका और प्रशासकीय अङ्ग मन्त्रिपरिषद् है"। सन् 1946 तक इस कार्यकारिणी समिति को 'कौंसिल ऑफ पीपुल्स कमीसार' (Council of Peoples' Commissars) कहा जाता था, किन्तु अब इसका नाम "कौंसिल ऑफ मिनिस्टर्स" (Council of Ministers) है।

मन्त्रिपरिषद् की रचना एवं कार्यप्रणाली
(The Composition and Working of Council of Ministers)

निर्वाचन

मन्त्रिपरिषद् का निर्वाचन सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक द्वारा किया जाता है। पहले मन्त्रिपरिषद् के अध्यक्ष या प्रधानमन्त्री (Chairman) की नियुक्ति होती है और तब उसकी सिफारिश पर अन्य मन्त्रियों की। मन्त्रियों को पदच्युत करने का अधिकार भी सर्वोच्च सोवियत को ही दिया गया है। यदि सर्वोच्च सोवियत अधिवेशन में न रहे तो प्रेसीडियम मन्त्रियों की नियुक्ति या पदच्युति करती है। प्रेसीडियम को यह भी अधिकार है कि वह अन्य मन्त्रिपदों का उत्पन्न कर सके और उन्हें समाप्त भी कर सके। वह प्रधानमन्त्री की सलाह से मन्त्रियों के विभागों में परिवर्तन भी कर सकती है। पर प्रेसीडियम के इन सब कार्यों का पुष्टिकरण सर्वोच्च सोवियत द्वारा होना आवश्यक होता है। इस में यह स्मरणीय है कि सोवियत संघ में वैधानिक सत्य एवं राजनीतिक प्रधान मन्त्री एवं अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति तथा पदच्युति का अन्तिम

की केन्द्रीय समिति में प्रेसीडियम के हाथ में है। सर्वोच्च सोवियत का अधिकार तो दिखावामात्र है।

कार्यकाल

मन्त्रिपरिषद् के कार्यकाल के विषय में संविधान में कुछ नहीं कहा गया है। फिर भी इसका कार्यकाल प्राय सर्वोच्च सोवियत के कार्यकाल के साथ ही चलता है। सर्वोच्च सोवियत का कार्यकाल सामान्यत 4 वर्ष है अत मन्त्रिपरिषद् भी सामान्यत 4 वर्षों तक पदारूढ़ रहती है। लेकिन यदि 4 वर्षों के अन्तर्गत ही सर्वोच्च सोवियत भंग कर दी जाए और नयी सर्वोच्च सोवियत का निर्वाचन हो, तो नयी मन्त्रिपरिषद् का भी निर्माण होगा। सर्वोच्च सोवियत अवधि से पूर्व भी मन्त्रिपरिषद् को भंग कर सकती है।

रचना

संविधान में मन्त्रिपरिषद् की रचना अथवा उसके संगठन का उल्लेख मिलता है। मन्त्रिपरिषद् के सदस्यों को निम्नलिखित श्रेणी में रखा जा सकता है—(1) अध्यक्ष (Chairman), (2) प्रथम उपाध्यक्ष (First Deputy Chairman) (3) उपाध्यक्ष (Deputy Chairmans), (4) सोवियत संघ के मन्त्रिगण (The U S S R Ministers), (5) मन्त्रिपरिषद् की विभिन्न समितियों के अध्यक्ष, यथा—राजकीय योजना समिति (State Planning Committee) का अध्यक्ष, राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था की सामग्री तथा यन्त्र-प्रदायिनी समिति (Committee on Material and Technical Supply of the National Economy) का अध्यक्ष राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में आधुनिकतम कौशल लागू करने के लिए समिति (Committee for introducing advanced techniques in the National Economy) का अध्यक्ष, निर्माण समिति (Committee for Construction Affairs) का अध्यक्ष, कला समिति (Committee on Art Affairs) का अध्यक्ष राजकीय बैंक परिषद् (Board of State Bank) का अध्यक्ष, उच्च शिक्षा समिति (Committee of Higher Education) का अध्यक्ष आदि।

रूस का मन्त्रि-मण्डल इस प्रकार लगभग 50 सदस्यों का हो जाता है। यह उल्लेखनीय है कि मन्त्रियों की संख्या में सदैव परिवर्तन होता रहता है। उदाहरणार्थ सन् 1936 में 32, सन् 1947 में 59, 1950 में 51, 1952 में 69 और 1962 में 71 सदस्य थे। वर्तमान परिषद् की सदस्य संख्या लगभग 84 है।

अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष—मन्त्रिपरिषद् के अध्यक्ष की वही स्थिति है जो भारत अथवा इङ्गलैंड जैसे संसदीय देशों में प्रधानमन्त्री का है। अध्यक्ष और प्रथम उपाध्यक्ष (Chairman & First Deputy Chairman) दल प्रेसीडियम (Party-Presidium) के भी सदस्य होते हैं। मन्त्रिपरिषद् में अन्दर ये केन्द्र-स्थल हैं। इन्हें मन्त्रिपरिषद् का प्रेसीडियम कहा जाता है। पाश्चात्य देशों की शब्दावली में इस समुदाय को 'आन्तरिक मन्त्रिमण्डल' (Inner Cabinet) कहा जा सकता है।

यह समुदाय मन्त्रिपरिषद् का मस्तिष्क अथवा संचालक मण्डल है जिसका कार्य विभिन्न विभागों का समन्वय करना निरीक्षण करना और नीति-निर्धारण करना है। अन्य उपाध्यक्ष भी दल के चोटी के नेता होते हैं और उनमें से अधिकांश दल की प्रेसीडियम के सदस्य होते हैं।

सोवियत संविधान में प्रधानमन्त्री पद की चर्चा नहीं की गई है, मन्त्रिपरिषद् के अध्यक्ष (Chairman) को ही विदेशों में प्रधानमन्त्री कहा जाता है। सोवियत संघ में अन्य मन्त्री आते-जाते रहते हैं और उन्हें बहुत कम लोग जानते हैं अथवा जानने का प्रयत्न करते हैं लेकिन प्रधानमन्त्री अर्थात् अध्यक्ष को देश-विदेश के और हर जगह के लोग जानने के लिए उत्सुक रहते हैं। अध्यक्ष अथवा प्रधानमन्त्री सरकार का प्रधान संचालक और शासक होता है। अभी तक जितने भी प्रधानमन्त्री हुए हैं, वे बहुत प्रभावशाली हुए हैं। मन्त्रिपरिषद् में अध्यक्ष की स्थिति बड़ी महत्त्व की होती है। वह उसकी बैठकों की अध्यक्षता करता है, तथा उसके निर्णयों और अध्यादेशों पर हस्ताक्षर करता है। वही मन्त्रिपरिषद के काम का निर्देशन करता है। उसे यह भी अधिकार है कि व्यक्तिगत मन्त्रियों के निर्णयों को रद्द करदे। उसकी स्थिति इसलिए और भी प्रभावशाली हो जाती है कि वह मन्त्रिमण्डल के अध्यक्ष होने के साथ-साथ साम्यवादी दल का भी एक अत्यन्त प्रमुख नेता होता है।

दो प्रकार के मन्त्री—सोवियत संघ की मन्त्रि-परिषद के अन्तर्गत दो विभिन्न प्रकार के मन्त्रालय पाये जाते हैं—(क) अखिल संघीय मन्त्रालय (All Union Ministries) (ख) संघ गणराज्य मन्त्रालय (Union Republican Ministries)। इन दोनों मन्त्रालयों में यही भेद है कि जहाँ प्रथम मन्त्रालय का सम्बन्ध सोवियत संघ के अधिकार क्षेत्र में आने वाले विषयों से है, वहाँ दूसरे मन्त्रालयों का सम्बन्ध संघ गणराज्यों की सरकार के क्षेत्राधिकार में आने वाले समस्त विषयों के सम्बन्ध से है। संघ गणराज्यों के मन्त्रालय संघ गणराज्यों की सरकार के मन्त्रालयों की क्रिया कलापों में समन्वय व एकरूपता स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं। सोवियत संघीय प्रशासन के इन अंगों पर अंतिम नियन्त्रण संघीय मन्त्रि-परिषद् के संघ गणराज्यों के मन्त्रालयों का रहता है। इस प्रकार सोवियत संघ में एकीकृत शासन व्यवस्था की स्थापना की गई है। इस समय सोवियत मन्त्रि-परिषद् में लगभग 30 अखिल संघीय मन्त्रालय और 21 संघीय गणराज्य मन्त्रालय हैं। इनकी संख्या में निरंतर परिवर्तन होता रहता है। मन्त्रालयों का निर्माण पुनर्गठन और विघटन सोवियत संघ के लिए आम बात है।

सहयोगी अंग—मन्त्रिपरिषद् की एक विशिष्ट शाखा आर्थिक सोवियत है, जिसका कार्य देश के प्रमुख उद्योगों, व्यवसायों आदि पर नियन्त्रण रखकर देश के उद्योग और अन्य वितरण का निर्देशन करना है। यह मन्त्रि-परिषद् की एक स्थाई संस्था है।

मन्त्रि-परिषद् के अन्तर्गत और भी अनेकों समितियां, परिषदों और ... का संगठन किया जाता है जो मन्त्रि-परिषद् के सहयोगी अंग के रूप में

है। कला, रेडियो, शारीरिक व्यायाम, भौगोलिक समस्यायें, सुरक्षा आदि के सम्बन्ध में समितियाँ और सामूहिक खेती, धार्मिक मामले आदि के सम्बन्ध में परिषदें संगठित की गई हैं। मन्त्रि-परिषद् से सम्बन्धित राजकीय मध्यस्थ आयोग, अखिल संघीय कृषि प्रदर्शनी सम्बन्धी मुख्य समिति, विज्ञान अकादमी और तास ऐजेंसी उल्लेखनीय हैं।

परिषद् की कार्य प्रणाली

मन्त्रि परिषद् दैनिक कार्यों को सचालन करने वाली संस्था है, अतः इसकी बैठकें सप्ताह में कई बार होती हैं। प्रत्येक बैठक में आधे सदस्यों की उपस्थिति अनिवार्य है। बैठकों में केवल सदस्यगण ही निर्णयकारी मतदान कर सकते हैं। विशिष्ट मन्त्रि परिषद् किसी को भी अपनी बैठक में भाग लेने की अनुमति दे सकती है या नियन्त्रित कर सकती है। समितियों, परिषदों और आयोगों के अध्यक्ष, दल की केन्द्रीय कार्यप्रणाली समिति के सदस्य और अन्य प्रभावशाली नेता प्रायः बैठकों में सम्मिलित होते हैं उन्हें मतदान का अधिकार प्राप्त नहीं है। मन्त्रिपरिषद का सम्बन्धित मन्त्री सर्वोच्च सोवियत में किये गये उसके विभागों से सम्बन्ध रखने वाले प्रश्नों का उत्तर देता है। जिस सदन में वह प्रश्न किया गया हो, उसमें लिखित या मौखिक उत्तर तीन दिन के भीतर दिया जाना आवश्यक होता है। प्रत्येक मन्त्री अपने प्रधान शासन-विभाग के कार्यों का संचालन करता है और अपने विभाग से सम्बन्धित आदेश निकालने तथा इन आदेशों को कार्यान्वित करने की योजना बनाता है। कार्यपालिका के होते हुए भी मन्त्रि परिषद् विधि का प्रारूप तैयार करती है और सर्वोच्च सोवियत को विधि बनाने में सहायता देती है।

मन्त्रि-परिषद् के अधिकार एवम कार्य
(Powers and Functions of the Council of Ministers)

संविधान की धारा 68 में मन्त्रि परिषद के अधिकारों और कर्तव्यों का विस्तृत वर्णन किया गया है जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित है—

(1) सोवियत संघ के विभागों के कार्यों गणराज्यों के शासन विभागों तथा अन्य आर्थिक अथवा सांस्कृतिक संस्थाओं के कार्यों का सचालन करना और उनमें सामंजस्य लाना।

(2) सोवियत संघ की विधियों के आधार पर तथा उनके प्रावधानों के अनुसार आदेश निकालना और उनके अमल होने पर देख रेख रखना।

(3) राष्ट्रीय आर्थिक योजनाओं एवं आय व्यय के निर्णयों को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक प्रबन्ध करना और मुद्रा व्यवस्था को ठीक रखना।

(4) लोक व्यवस्था ठीक रखना राज्य के हितों की रक्षा करना और नागरिकों के स्वत्वों की रक्षा करना।

(5) पर राष्ट्रीय सम्बन्धों को सचालित करना और उन्हें निश्चित कर, व्यावहारिक रूप देना।

का केन्द्रीय समिति के प्रमुख सदस्य होते हैं और उनकी स्थिति व्यवहारतः ऐसा होता है कि स्वयं सर्वोच्च सोवियत तथा प्रेसीडियम पर नियन्त्रण रख सकती है। अतः यह स्वाभाविक है कि मन्त्रि-परिषद् प्रेसीडियम या सर्वोच्च सोवियत के नियन्त्रण में नहीं रहती और इस बात का कोई प्रश्न ही नहीं उठता कि वह उनके प्रति उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हुए कार्य करे।

सोवियत रूस में इङ्गलैंड के सामूहिक उत्तरदायित्व (Collective responsibility) जैसा कोई वस्तु नहीं है। सर्वोच्च सोवियत में व्यक्तिगत रूप से मन्त्रियों की आलोचना खूब की जाती है और कभी-कभी उन्हें पदच्युत भी कर दिया जाता है लेकिन व्यक्तिगत मन्त्री की पदच्युति से सम्पूर्ण मन्त्रि परिषद् के त्यागपत्र का प्रश्न नहीं उठता।

7

रूस की न्यायपालिका
(THE SOVIET JUDICIARY)

'बुर्जुआ वर्ग में सर्वहारा वर्ग की भूतपूर्व विजय
की रक्षा करने और समाजवादी निर्माण को
दृढ़ करने के कार्य में सोवियत न्यायपालिका
श्रमिक वर्ग के अधिनायकत्व का
एक तेज और महत्वपूर्ण
अस्त्र है।"

—रिचकोव

कानून और न्याय व्यवस्था का पारस्परिक प्रगाढ़तम सम्बन्ध है और किसी भी देश की न्यायिक व्यवस्था को भली प्रकार समझने के लिए यह आवश्यक है कि उस देश की कानून विषयक मान्यताओं को ठीक से समझ लिया जाए। सोवियत रूस विश्व का प्रथम और सिरमौर साम्यवादी राष्ट्र है जिसकी न्याय-व्यवस्था कानून की साम्यवादी मान्यता से ओत प्रोत है।

कानून की साम्यवादी मान्यता

परम्परागत मान्यता यह है कि कानून (Law) निष्पक्ष है। लेकिन साम्यवादी मान्यता के अनुसार कानून का स्वरूप राज्य के स्वरूप के अनुसार होता है और वह राज्य की इच्छा का प्रतीक है। कानून राज्य के हाथ में एक साधन है जिसके द्वारा एक निश्चित्, आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक ढाँचे की रक्षा की जाती है। पूञ्जीवादी राज्यों के कानून के विषय में साम्यवादी मत यह है कि वह राज्य के हाथ में एक ऐसा यन्त्र है जिसका कार्य पूञ्जीपति वर्ग के हितों की रक्षा करना है। पूञ्जीवादी दशा में कानून की समानता (Equality of Law) अथवा निष्पक्षता की बात ढकोसला मात्र है, केवल वास्तविक असमानता को छिपाने की कुशल ढाल है।

साम्यवादी मान्यता के अनुसार राज्य में कानून का यह स्वाभाविक कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह सर्वहारा वर्ग के हितों की रक्षा करे और समाजवाद के निर्माण में सहायक हो। इस प्रकार कानून के स्वरूप के विषय में सोवियत विचारधारा का सार यह है कि उसे सदैव ऐसा होना चाहिए जिसमें समाजवाद की जड़ें अधिकाधिक सुदृढ़ बन सकें, चाहे उसके द्वारा व्यक्ति को पूरी तरह राज्य के आधीन ही क्यों न बना दिया जाए।

सोवियत न्यायपालिका का उद्देश्य

सोवियत संघ में न्यायपालिका को राज्य के लक्षणों की प्राप्ति के लिए एक सहायक अंग माना गया है। सोवियत संघ में सर्वहारा वर्ग का राज्य है, अतः वहाँ न्यायपालिका का प्रमुख कर्तव्य भूतपूर्व प्रभुसत्ता सम्पन्न वर्गों का दमन करना और राज्यों में साम्यवाद की स्थापना करना एवं उसको दृढ़ बनाने में सहायता देना है। अगस्त 1938 के एक कानून और न्यायालय द्वारा न्यायिक अधिकारों के कर्तव्यों को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि 'उनका कार्य सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ के नागरिकों को देश के प्रति एवं समाजवाद के प्रति प्रेम की भावना, सोवियत कानूनों के पूरे पालन की भावना समाज की सम्पत्ति की उचित परवाह, श्रम सम्बन्धी अनुशासन राज्य एवं समाज के कर्तव्य का ईमानदारी से पालन तथा राष्ट्र के नियमों के प्रति आदर की भावना की शिक्षा देना है।' इस प्रकार हम देखते हैं कि सोवियत न्यायालयों का शैक्षणिक महत्त्व भी है। वे नागरिकों को समाजवाद की शिक्षा देते हैं।

उपर्युक्त प्रसंग में यह याद रखना चाहिए कि सोवियत संघ में व्यवहारतः साम्यवादी दल का शासन है, अतः सोवियत न्यायपालिका दल की दास है दल की रक्षा और दलीय नीतियों को लागू करने का साधन है। सारांश में, सोवियत संघ में न्यायपालिका राज्य का एक स्वतन्त्र अंग न होकर दल के अधीन और सरकार का एक सहायक अंग है। अमेरिका के समान वह शासन का सर्वोपरि अंग नहीं है। सोवियत रूस में न्यायपालिका का स्वरूप वैधानिक न होकर राजनीतिक है।

सोवियत न्याय व्यवस्था की विशेषतायें

(Characteristics or features of the Soviet Judiciary)

पश्चिमी प्रजातन्त्रों की तुलना में, न्यायिक क्षेत्र में भी सोवियत प्रणाली की समानता नहीं खोजी जा सकती। सोवियत न्यायपालिका के संगठन और उसकी कार्य-व्यवस्था में विचित्र अनुपमता है जो उसे पूंजीवादी राज्यों से पूर्णतः भिन्न कर देती है।

1 सोवियत संघ में न्यायपालिका का उद्देश्य सर्वहारा क्रांति की रक्षा करना और समाजवाद का दृढ़ स्थापना करना है। इसके विपरीत पश्चिमी देशों में न्यायपालिका की स्थापना किसी वर्ग विशेष अथवा शासन व्यवस्था की रक्षा के लिए नहीं की जाती।

2 सोवियत संघ में न्यायपालिका शासन का ही एक अंग है और वह भी सर्वोच्च नहीं। रूस में न्यायालयों द्वारा न्यायिक कार्य प्रशासन के उस अधिकारी और उसके अधीन कार्यों के निकट सहयोग से किया जाता है जिसे प्रोक्युरेटर जनरल (Procurator General) कहा जाता है और जिसका कार्य सार्वजनिक सम्पत्ति की देखभाल करना तथा उससे सम्बन्धित अपराधों के लिए अपराधियों को दण्ड दिलाना है। सोवियत न्यायपालिका को प्रशासकीय अथवा विधायक विभाग के कानूनों की व्याख्या का कोई अधिकार प्रदान नहीं किया गया है। रूसी नेता इस बात को मूल रूप में स्वीकार नहीं करते हैं। कालीनिन (Kalinin) के शब्दों में

"यदि कोई न्यायाधीश कच्चा मार्क्सवादी है जो दल के निर्णयों के लिए शक्ति के साथ लड़ नहीं सकता तो वह बेकार है।" वस्तुतः सोवियत न्यायपालिका की प्रकृति राजनीतिक है, विधायी नहीं। कानून जो भी हो, न्यायपालिका सदैव इस राजनीतिक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए कि पूंजीवाद का नाश हो और दलीय नीति को क्रियान्वित किया जाए, कार्य करती है।

3 सोवियत न्याय-व्यवस्था की एक विशेषता यह है कि उसके न्यायाधीशों का निर्वाचन होता है। सर्वोच्च न्यायालय एवं विशिष्ट न्यायालयों के न्यायाधीशों का चुनाव सर्वोच्च सोवियत 5 वर्ष के लिए करती है। विविध गणतन्त्रों तथा अन्य क्षेत्रीय इकाइयों के न्यायालयों के न्यायाधीशों का निर्वाचन उनकी सोवियतें 5 वर्ष के लिए करती हैं। सबसे नीचे के न्यायालयों और जन न्यायालयों के न्यायाधीशों को जिला के लोग 3 वर्ष के लिए चुनते हैं।

4 सोवियत न्याय प्रणाली में न्यायाधीशों के साथ साथ जन निर्धारकों (Assessors) के निर्वाचन की व्यवस्था है। न्यायाधीश नियमित रूप से एक निश्चित कार्य काल तक राज्य की न्यायिक सेवा करता है जबकि जन-निर्धारक (Assessors) मामलों की सुनवाई के समय ही कार्य करते हैं। निर्वाचक न्यायाधीशों और जन निर्धारकों या एसेसरों को अपने कार्य का प्रतिवेदन अपने निर्वाचन क्षेत्र को देना होता है।

5 सोवियत संघ में न्यायाधीशों को वापिस बुलाने के अतिरिक्त उनके प्रत्यावर्तन (Recall) की भी व्यवस्था है। वही निर्वाचक मण्डल जिसने न्यायाधीशों को निर्वाचित किया है, उनके प्रत्यावर्तन की मांग कर सकता है। नीचे के न्यायालयों के न्यायाधीशों के विरुद्ध सम्बन्धित गणतन्त्र की प्रेसीडियम की स्वीकृति से जिले के प्रोक्यूरेटर द्वारा और सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के विरुद्ध संघ की प्रेसीडियम की स्वीकृति से प्रोक्यूरेटर जनरल द्वारा फौजदारी का मुकदमा चलाया जा सकता है।

6 सोवियत संघ के सभी न्यायालयों में यदि किसी विशिष्ट मामले के लिए न्यायाधीश पर उपबन्ध न कर दिये गये हों, सार्वजनिक और खुली कार्यवाही होती है। उसे कोई भी व्यक्ति देख सकता है। अभियुक्त स्वतन्त्र रूप से निर्भय होकर अपने पक्ष का समर्थन कर सकता है और उसे अपने पक्ष उपस्थित करने का पूरा अधिकार होता है।

7 सोवियत संघ के न्यायालयों में पैरवी करने वाले व्यक्तिगत वकील नहीं होते। अपराधी की वांछनीय रक्षा करने के लिए न्यायालय स्वयं ही अधिवक्ताओं का प्रबन्ध करता है। एक दिलचस्प बात यह है कि वकीलों की फीस मुवक्किलों के देने की क्षमता के अनुसार नियमित कर दी गई है। वकीलों को अपने काम के अनुसार 'वकील मण्डल (College of Advocates) से एक प्रकार का वितान मिलता है। सोवियत संघ में कानूनी व्यवसाय (Legal Profession) राज्य द्वारा नियन्त्रित है। प्रत्येक स्थान पर जहां न्यायालय होते हैं वकीलों के संघ हैं जिनमें

कानूनी व्यवसाय करने के योग्यता वाले व्यक्ति सदस्य होते हैं। वकील संघ के सदस्यों के लिए उन सभी व्यक्तियों को, जिनको आवश्यकता पड़े, कानूनी सहायता देना अनिवार्य है और वे नियत फीस से अधिक फीस नहीं ले सकते। यदि न्यायालय यह निर्णय दे दे कि कोई व्यक्ति फीस देने योग्य नहीं है, तो उनसे फीस नहीं ली जाती है। किसी वकील को जो फीस मिलती है, वह उसकी व्यक्तिगत फीस न होकर समस्त वकील मण्डल की फीस होती है और महीने के अन्त में कार्य एवं कुशलता के आधार पर वह फीस सभी वकीलों में बाँट दी जाती है। लास्की का मत है कि इस व्यवस्था से वकीलों में कर्त्तव्य-पालन और उत्तरदायित्व का विकास होता है।

8 सोवियत संघ के प्रत्येक नागरिक को, जिसको साधारण मताधिकार प्राप्त है किसी भी न्यायालय का न्यायाधीश (Judge) या जन निर्धारक (Assessor) निर्वाचित हो सकता है। वहाँ पर न्यायाधीशों के लिए किसी विशेष योग्यता का होना आवश्यक नहीं। फिर भी प्राय वे ही व्यक्ति न्यायाधीश, निर्वाचित किये जाते हैं जो साम्यवादी दल के सदस्य होते हैं अथवा साम्यवाद के प्रति प्रबल समर्थक होते हैं।

9 प्रारम्भिक न्याय-क्षेत्र (Original Jurisdiction) के मामलों की सुनवायी प्राय दो ऐसेसरों और एक न्यायाधीश द्वारा की जाती है। अपीलीय मामलों में सुनवायी अधिक न्यायाधीशों द्वारा होती है।

10 सोवियत न्याय व्यवस्था द्वारा व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा की व्यवस्था की गई है। संविधान की 127वीं धारा में स्पष्टत उल्लिखित है कि 'न्यायालय के निर्णय के बिना या प्रोक्यूरेटर की स्वीकृति के बिना किसी व्यक्ति को गिरफ्तार नहीं किया जा सकेगा।'

11 सोवियत न्यायालयों का मुख्य लक्ष्य दण्ड देना ही नहीं है वरन् अपराधी को सुधारना भी है। परन्तु जो व्यक्ति जन सम्पत्ति के नाशक हैं अथवा जो सट्टे बाज, लुटेरे या अनुशासन को भंग करने वाले हैं उन्हें कठोर से कठोर दण्ड दिया जाता है।

12 सोवियत संघ में न्यायिक व्यवस्था में केन्द्रीयकरण अधिक है। यह दो बातों से स्पष्ट है—प्रथम तो रूस में कोई संघीय न्यायालय नहीं है वरन् सम्पूर्ण संघ (Union) का एक ही न्यायालय है, और दूसरे इस न्यायालय की शक्ति का क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत है।

13 सोवियत संघ के कानूनों में जातीय नीति के लेनिनवादी सिद्धान्तों की स्पष्ट झलक मिलती है। समस्त नागरिक न्यायालय और कानून के समक्ष समान समझे जाते हैं। जाति, नस्ल अथवा धर्म आदि के आधार पर उनके साथ असमानता का व्यवहार नहीं किया जाता। संविधान की धारा 110 के अनुसार विभिन्न न्यायालयों की कार्यवाही सम्बन्धित प्रदेश की स्थानीय भाषा में ही होती है। यदि कोई व्यक्ति उस भाषा को नहीं जानता, तो वह दुभाषिये की सहायता लेकर सम्बन्धित मुकदमे की कार्यवाही में प्रयुक्त होने वाली भाषा को समझ सकता है।

14 सोवियत रूस मे सब के लिए एक ही प्रकार के न्यायालय न्यायकार्य करते है। वहाँ प्रशासनिक न्यायालयों जैसा कोई न्यायालय नही है। सब व्यक्ति कानून के समक्ष समान हैं।

15 प्रेसीडियम के 26 मई सन् 1947 के एक आदेश के अनुसार मृत्यु दण्ड समाप्त कर दिया गया था लेकिन 13 जनवरी सन् 1950 के प्रेसीडियम के एक अन्य आदेश के द्वारा यह पुन लागू कर दिया गया है तथा अनुमति दे दी गई है कि देश द्रोह, जासूसी और तोड फोड करने वालो के मामलो मे मृत्यु-दण्ड दिया जा सकता है।

न्यायपालिका का सगठन
(The Organisation of the Soviet Judiciary)

सन् 1936 के सोवियत सविधान द्वारा रूस मे एक सघीय सर्वोच्च न्यायालय और सम्मिलित राज्यो के सर्वोच्च न्यायालयो (प्रत्येक मे एक एक) प्रादेशिक न्यायालयो क्षेत्रीय न्यायालय और सर्वोच्च सोवियत द्वारा स्थापित विशेष न्यायालयो की व्यवस्था की गई है। सोवियत सविधान मे न्यायपालिका के सगठन की केवल मोटी रूपरेखा ही दी गई है। लेकिन 1938 के जिस कानून के आधार पर रूस की न्यायपालिका के सगठन की व्यवस्था है, उसके अनुसार सम्पूर्ण देश के लिए एक ही न्यायिक ढाचे की व्यवस्था है। सोवियत सघ के न्यायालयो का सगठन केन्द्रीभूत एव शिखरोन्मुखी सिद्धान्त के आधार पर किया गया है। जिसके अनुसार समान स्तर के अनेक जन-न्यायालय हैं उनके ऊपर उत्तरोत्तर क्रमश अपेक्षाकृत अधिक शक्ति वाले न्यायालय सगठित हैं जिनको अपने नीचे के न्यायालयो पर निरीक्षण और नियन्त्रण करने की शक्तियाँ प्राप्त है। इस उत्तरोत्तर क्रम मे सबसे ऊपर का न्यायालय सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ का सर्वोच्च न्यायालय है। यह सम्पूर्ण देश का सर्वाधिक शक्तिशाली न्यायिक अवयव है जिसको देश के सभी न्यायालयो की कार्यवाही पर देख-रेख करने का अधिकार है।

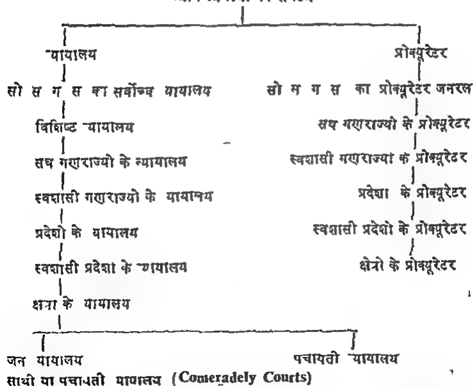
जिन न्यायालयो का उपरोक्त आधार पर निर्माण हुआ है उनमे दो प्रकार के न्यायालय हैं—पहले प्रकार के न्यायालय स्थानीय न्यायालय हैं जिनमे साथी अथवा पचायती न्यायालय (Coneradely Courts) तथा जन-न्यायालय (People's Courts) सम्मिलित है। इनके ऊपर के स्तर के न्यायालय प्रादेशिक (Territorial) और क्षेत्रीय (Regional) हैं। इनसे उच्च स्तर के न्यायालय स्वशासित गणतन्त्रो (Autonomous Republics) और सघीय गणतन्त्रो (Union Republics) के सर्वोच्च न्यायालय है। उच्चतम स्तर के न्यायालय विशेष न्यायालय (Special Courts) और सघ का सर्वोच्च न्यायालय (Federal Supreme Court) है।

सोवियत सघ की न्यायिक शृखला केन्द्रीभूत और शिखरोन्मुखी होने के साथ साथ दोहरी भी है। न्यायालयो के ही साथ-साथ रूस मे प्रोक्यूरेटरो (Procurators) का भी क्रम चलता रहता है। प्रोक्यूरेटरो के क्रम मे सर्वोच्च स्थान सोवियत सघ प्रोक्यूरेटर जनरल (Procurator General) का है जिसे

सम्पूर्ण सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ के अधिकारियो से सोवियत सघ के कानूनो का पालन कराने का अधिकार होता है। सोवियत सघ के प्रोक्यूरेटर जनरल के पास क्रमश सघीय गणराज्यो के प्रोक्यूरेटर, स्वशासी गणराज्यो के प्रोक्यूरेटर और जन पदो व प्रदेशो आदि के प्रोक्यूरेटर होते हैं जिनकी नियुक्ति प्रोक्यूरेटर जनरल द्वारा की जाती है। इसके नीचे क्षेत्र, नगर और जिले के प्रोक्यूरेटर भी होते है जिनकी नियुक्ति सम्बन्धित सघीय गणराज्य के प्रोक्यूरेटर द्वारा की जाती है किन्तु इस पर प्रोक्यूरेटर जनरल की स्वीकृति आवश्यक होती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सोवियत सघ की न्याय-व्यवस्था दो प्रकार की सस्थाओ में सगठित है—न्यायालय और प्रोक्यूरेटर। यह दोनो ही सस्थायें केन्द्रीभूत एव शिखरोन्मुखी सिद्धान्तो पर सगठित होती है। क्रमश उच्च-स्तर की सस्था का नीचे की सब सस्थाओ पर नियन्त्रण के अधिकार होते हैं।

सोवियत सघ की न्यायिक व्यवस्था को निम्नांकित चार्ट से सरलतापूर्वक समझा जा सकता है।



साथी या पचायती न्यायालय (Comeradely Courts)

ये न्यायालय सोवियत सघ के न्यायालयो के उत्तरोत्तर क्रम के नियमित अग नही हैं। इनके सगठन द्वारा इनकी कार्यवाही औपचारिक नियमो से प्रतिबन्धित नही होती। इनके न्यायाधीशो अथवा पचो का न्याय व्यवस्था के विषय में प्राय ज्ञान नही होता। वे अपने विवेकानुसार ही न्याय करते हैं। उन्हे जिस समुदाय

का न्यायालय होता है उसी के व्यक्ति चुनते हैं। ऐसे न्यायालयों की स्थापना फक्ट्रियो, जेलो और अन्य सस्थाओं में की जाती है, जहा ये उनमें काम करने वाले लोगों के जन समूहों के पारस्परिक झगडो का निपटारा करती हैं। ये साधारण विवादो को सुनते हैं, सद्विवेक से अपने निर्णय देते हैं और अभियुक्तो की निन्दा झिडकी या लगभग 50 रूबल तक का आर्थिक दण्ड दे सकते हैं।

जन न्यायालय (People s Courts)

नियमित न्यायालयो की शृखला में सबसे नीचे के न्यायालय जन-न्यायालय होते हैं जिन्हे जिला न्यायालय (District Courts) भी कहा जाता है, क्योकि प्राय प्रत्येक जिले में एक ऐसा न्यायालय होता है। इनमे प्राय एक न्यायाधीश (Judge), दो सहायक न्यायाधिकारी या जन-निर्धारक (Assessors) कार्य करते हैं। इनका निर्वाचन जिले के नागरिको द्वारा सार्वजनिक प्रत्यक्ष और समान मताधिकार के आधार पर गुप्त मत-दान प्रणाली के द्वारा 3 वर्ष के लिए होता है।

जन-न्यायालयो का अधिकार क्षेत्र केवल प्रारम्भिक (Original) होता है। दीवानी और फौजदारी दोनो ही मामलो की ये सुनवाई करते हैं। दीवानी क्षेत्र में इनके अधिकार क्षेत्र में सम्पत्ति (Property), श्रम सबधी कानून (Labour Laws), भरण व्यय (Alimony), उत्तराधिकार (Inheritance) तथा सम्बन्ध-विच्छेद (Divorce) के मुकदमे आते हैं। फौजदारी क्षेत्र में ये न्यायालय मार-पीट, हत्या नागरिको की स्वतन्त्रता और सम्मान के अपहरण सम्पत्ति के अधिकार के दुरुपयोग, गबन, करो की अदायगी चुनाव और कानून के उल्लघन आदि से सम्बन्धित अभियोगो की सुनवायी करता है। इन न्यायालयो के न्यायाधीशो का यह कर्त्तव्य समझा जाता है कि वे समय-समय पर अपने कार्यो और अपने न्यायालयो के कार्यों से मतदाताओ को परिचित करायें। जन न्यायालयो के न्यायाधीशो से मतदाता असतुष्ट होने पर उन्हे वापिस बुला सकते हैं।

जन न्यायालयो और गणराज्यो के सर्वोच्च न्यायालयो के बीच के न्यायालय

जन-न्यायालयो के ऊपर क्षत्रीय (Territorial) प्रातीय (Provincial), प्रादेशिक (Regional) और स्वाधीन प्रदेशो (Autonomous regions) के न्यायालय हैं। इन न्यायालयो के न्यायाधीश तथा असेसर क्रमश उनकी सोवियतो के द्वारा चुने जाते हैं। इनकी अवधि 5 वर्ष की होती है। इन न्यायालयो के प्राथमिक अधिकार क्षेत्र में कुछ अधिक गम्भीर अपराध वाले मुकदमे जैसे–समाजवादी व्यवस्था के विरुद्ध की गई कार्यवाहिया, समाजवादी सम्पत्ति की चोरी और व दीवानी मुकदमे जिनमे राज्य या सार्वजनिक सस्थायें, वादी या प्रतिवादी हो आते हैं। ये न्यायालय अपने अपने क्षेत्रो के जन-न्यायालयो के लिये पुनरावलोकन (Review) का भी कार्य करते हैं। इन न्यायालयो में एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष अनेक सदस्य अथवा असेसर होते हैं।

स्वशासी एव सघीय गणराज्यों के सर्वोच्च न्यायालय

इन न्यायालयो का निर्वाचन वहा की सर्वोच्च सोवियतो द्वारा 5 वर्ष की अवधि के लिए किया जाता है। स्वाधीन गणराज्यो और सघीय गणराज्यो में

प्रत्येक में अपना अपना सर्वोच्च न्यायालय होता है। इनके क्षेत्राधिकार में दीवानी तथा फौजदारी, दोनों प्रकार के महत्त्वपूर्ण अभियोग आते हैं। इन न्यायालयों का कार्य अपने से नीचे के न्यायालयों के कार्य की देखरेख करना और उनके निर्णयों पर पुनर्विचार करना होता है। इस प्रकार का पुनर्विचार ये न्यायालय सोवियत संघ के प्रोक्यूरेटर जनरल, सोवियत संघ के सर्वोच्च न्यायालय के अध्यक्ष, संघीय गणराज्यों के प्रोक्यूरेटर और संघीय गणराज्यों के सर्वोच्च न्यायालय के अध्यक्षों के विरोध पर कर सकते हैं।

स्वशासी एवं संघीय गणराज्य के सर्वोच्च न्यायालयों को कुछ महत्त्वपूर्ण दीवानी और फौजदारी मामलों में प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार प्राप्त है। उदाहरणार्थ, उन मामलों में यह न्यायालय प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार का उपभोग करते हैं जिनमें उच्च सरकारी अधिकारी फँसे हों, जो विषय अथवा मामले से सम्बन्धित संघीय गणराज्य की सर्वोच्च सोवियत की प्रेसीडियम ने या उसके प्रोक्यूरेटर ने अथवा गृह मन्त्रालय ने उनके पास विचारार्थ भेजे हों, अथवा जिनकी सुनवायी करने का निर्णय न्यायालय ने स्वयं किया हो।

विशिष्ट न्यायालय (Special Courts)

सोवियत संघ के सर्वोच्च न्यायालय के पश्चात् अतिरिक्त नम्बर पर देश में अनेक विशिष्ट न्यायालय (Special Courts) हैं। ये न्यायालय देश के सभी भागों में पाये जाते हैं। सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत इन न्यायालयों का क्षेत्र आवश्यकतानुसार घटा-बढ़ा सकती है और वह ऐसे नवीन न्यायालयों की स्थापना भी कर सकती है। इन न्यायालयों के निर्णयों के विरुद्ध अपील सर्वोच्च संघ के सर्वोच्च न्यायालय में सम्बन्धित विभाग (Collegium) के समक्ष की जा सकती है। रूस के विशिष्ट न्यायालय में उदाहरण-स्वरूप तरुण न्यायालय (Juvenile) भूमि न्यायालय (Land Courts) विवाचन न्यायालय (Courts of Arbitration), सैनिक न्यायालय आदि को लिया जा सकता है। संघीय स्तर के न्यायालय होने के कारण इनके न्याय-क्षेत्र सम्पूर्ण देश पर है। ये न्यायालय मुख्य रूप से दो भागों में बाँटे जा सकते हैं-(1) सैनिक न्यायालय (Military Tribunals) एवं (2) मार्ग न्यायालय (Line Courts)।

सैनिक न्यायालय में केवल सैनिकों के ही अभियोग नहीं सुने जाते वरन् कभी कभी नागरिकों के अभियोगों को भी सुना जाता है। इन न्यायालयों के संगठन का मुख्य लक्ष्य यह है कि सोवियत संघ की सैन्य शक्ति में अभिवृद्धि हो और सेना में अनुशासन बना रहे। सैनिक अपराधों क्रांति विरोधी एवं शासन विरोधी अपराधों के अभियुक्त के विरुद्ध ये सैनिक न्यायालय कार्य करते हैं। देशद्रोह तथा विश्वासघात के मामले भी इन सैनिक न्यायालयों में ही आते हैं। सैनिक न्यायालयों की स्थापना प्रायः उन स्थानों पर की जाती है जहाँ सेना ठहरती है अथवा जहाँ सैनिक संगठन केन्द्र होते हैं।

मार्ग अथवा यातायात न्यायालयों की स्थापना यातायात केन्द्रों पर की जाती है। ये न्यायालय रेल और सड़क यातायात तथा जल यातायात से सम्बन्धित मुकदमों

को सुनवाई करते हैं। श्रमिक अनुशासन को भंग करने वाले और यातायात को हानि पहुचाने वाले अपराधियो के विरुद्ध मुकदमा चलाने का अधिकार इन न्यायालयो के कायक्षेत्र के अन्तर्गत है।

सोवियत सघ मे बहुत से अभियोग विवाचन न्यायालयो (Arbitration Tribunals) द्वारा सुने जाते हैं। सोवियत सघ की सरकार इन न्यायालयो को दो या अधिक राज्य व्यवसायियो के झगडो को निर्णित करने के लिए नियुक्त करती है।

सोवियत सघ का सर्वोच्च न्यायालय
(The Supreme Court of the U S S R)

सगठन व कार्यविधि—उपयुक्त सभी न्यायालयो के शीष पर सघीय गणराज्य सोवियत समाजवादी गणराज्य का सर्वोच्च न्यायालय है। इसमे एक अध्यक्ष (Chairman), एक उपाध्यक्ष (Deputy Chairman) अनेक न्यायाधीश और कुछ सहायक न्यायाधीश या जन निर्धारक (Assessors) होते हैं। यह इतना बडा निकाय है कि सन् 1951 म इसमे 79 न्यायाधीश तथा 35 एससस थे। इस सर्वोच्च न्यायिक अ ग का निर्वाचन सर्वोच्च सोवियत के दोना सदना की सयुक्त बठक द्वारा पाच वर्ष के लिए किया जाता है। पाच वर्ष की अवधि के अन्दर सोवियत न्यायाधीश पदच्युत किये जा सकत हैं, यदि सर्वोच्च सोवियत की सहमति स प्रोक्यूरेटर जनरल पर फौजदारी कार्यवाही कर रखी हो। सोवियत सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशा की सख्या सविधान द्वारा निर्धारित नही की गई है, अत यह परिवतनशील है।

यह न्यायालय मौलिक तथा अपीलीय दानो क्षेत्राधिकारो का उपभोग करता है। इसको काय की सुविधा के लिए पाच भागो मे विभाजित कर दिया गया है—(1) फौजदारी (Criminal), (2) दीवानी (Civil), (3) सनिक (Military), (4) रेल्वे (Railway), एव (5) जल यातायात (Water Transport)। न्यायालय का कोई विभाग (Collegium) जब किसी मामले की सुनवाई प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार के न्यायालय के रूप म करता है, तो उसम एक न्यायाधीश और दो एससर्स न्यायिक कार्य करते हैं। जब कोई विभाग अपीलीय न्यायालय के रूप म किसी मामले की सुनवाई करता है तो उसमे तीन न्यायाधीश कार्य करते हैं। अध्यक्ष (Chairman) किसी भी मुकदम म किसी भी विभाग की अध्यक्षता कर सकता है। वह किसी विभाग या सघीय गणराज्य के किसी भी न्यायालय के विचाराधीन किसी भी मुकदम को सर्वोच्च न्यायालय की पूर्ण सभा के समक्ष निणयार्थ रख सकता है। न्यायालय की पूरी बठक (Full Bench of Plenum) दो महीने म एक बार अवश्य होती है जिसम न्यायालय के विविध विभागा के उन निर्णया (Judgements), अभिमतो (Verdicts) तथा व्यवस्थाओ (Rulings) पर पुनर्विचार (Review) किया जाता है जो उसके समक्ष सम्बन्धित न्यायालय के अध्यक्ष अथवा प्रोक्यूरेटर जनरल द्वारा विचाराथ प्रस्तुत किये जाते है। इस प्रकार की पूरी बठक म न्यायालय काय विधि सम्बन्धी सामा य नियमो का निर्माण करते हैं। ऐसी बठका म प्रोक्यूरेटर जनरल की उपस्थिति अनिवाय होती है और न्यायमत्री यदि चाहे तो उसम भाग ले सकता है।

अधिकार व कार्य—सोवियत सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार बहुमुखी हैं। दीवानी और फौजदारी दोनो ही प्रकार के मुकदमो में इसके अधिकार प्रारम्भिक (Original) और अपीलीय (Appellate) दोनो प्रकार के होते हैं। प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र में दीवानी और फौजदारी के केवल बहुत गम्भीर तथा महत्त्वपूर्ण मामले आते हैं, जैसे क्रान्ति विरोधी कार्य, या समाजवादी सम्पत्ति को क्षति पहुचाना। प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत ही संघीय गणराज्यो के मध्य उठने वाले विवाद भी आते है। अपीलीय न्यायालय के रूप में यह निम्नतर न्यायालयो के निर्णयो पर पुनर्विचार भी कर सकता है। उक्त निम्नतर न्यायालयो मे संघीय गणराज्यो के सर्वोच्च न्यायालय और सोवियत संघ के विशेष न्यायालय भी सम्मिलित है। किसी भी न्यायालय के निर्णय पर सर्वोच्च न्यायालय पुनः अपनी इच्छा से भी पुनर्विचार कर सकता है। अध्यक्ष और प्रोक्यूरेटर जनरल अपनी इच्छा से भी किसी निम्न स्तरीय न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत मामले को सर्वोच्च न्यायालय के विचारार्थ उठा सकते हैं।

सर्वोच्च न्यायालय का प्रमुख कर्त्तव्य न्यायिक कार्य को इस प्रकार संचालित करना है कि जिससे समाजवादी व्यवस्था का संरक्षण हो सके। सर्वोच्च न्यायालय के रूप मे अपने निम्न स्तर के न्यायालयो के कार्यो का पर्यवेक्षण करना और सम्पूर्ण संघ की न्याय व्यवस्था को एक सा बनाना भी उसका प्रमुख कर्त्तव्य है। अपने से निम्न स्तर के न्यायालय, कानूनो को क्रियान्वित किस प्रकार करते है यह देखना भी सर्वोच्च न्यायालय का कार्य है।

स्थिति—सर्वोच्च न्यायालय सर्वोच्च सोवियत के कानूनो को, उसके प्रेसीडियम के अध्यादेशो को अथवा मन्त्रिपरिषद् के आदेशो को इस आधार पर रद्द नही कर सकता कि ये संविधान की व्यवस्था के प्रतिकूल है। संविधान की व्याख्या का कार्य तो सर्वोच्च सोवियत की प्रेसीडियम करती है। सर्वोच्च न्यायालय की शक्ति की सीमा को निर्देशित करते हुए टुरीविनर (Tirrbiner) कहता है कि संयुक्त राज्य अमेरिका मे सुप्रीम कोर्ट को संविधान की रक्षा करने के लिए कानूनो की वैधता (Constitutionality) को सुरक्षित (Verification) करने का काम दिया है। हम शक्ति केन्द्रित करने के विचार से यह कार्य केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति और उसके प्रेसीडियम को सौंपते हैं। संघीय सुप्रीम कोर्ट केवल परामर्श देता है।

सोवियत संघ में न्यायपालिका अमेरिका की भांति सरकार का एक स्वतन्त्र अङ्ग नही है, वरन् वह प्रशासन का एक विभाग है। सोवियत रूस के एक न्यायाधीश पोलियान्स्की (Polıansky) ने स्वय इस विषय में स्पष्ट कहा है कि वास्तविक मामलो का परीक्षण करते समय सरकार की मान्य नीति पर चलना या प्रत्येक न्यायाधीशो की स्वतन्त्रता से बाहर की बात बिल्कुल नहीं है। न्यायपालिका राज्य सत्ता का एक अङ्ग है और इस कारण वह राजनीति से अलग नहीं हो सकती। न्यायपालिका के राजनीति से अलग रहने का भाव किन्हीं भी परिस्थितियो में और कहीं भी पूरा नही होता। यही कारण है कि सर्वोच्च सोवियत ने न्यायाधीश केवल वे ही व्यक्ति बन पाते हैं जिन्होंने साम्यवादी सिद्धान्तो और कार्यक्रमो में अपना पूर्ण विश्वास सिद्ध किया हो अथवा जो साम्यवादी विचारधारा के प्रबल समर्थक हो।

इसके अतिरिक्त प्रोक्यूरेटर जनरल तथा न्याय मन्त्री के सर्वोच्च न्यायालय की पूरी बैठक मे विधिवत् भाग लेने की व्यवस्था भी न्यायाधीशो की स्वतन्त्रता मे बाधक हैं क्योकि वे न्यायालयो के निर्णयो मे हस्तक्षेप कर सकते हैं और न्यायालयो के निर्णय सरकारी दृष्टिकोण से प्रभावित हो सकते हैं।

सोवियत सघ का प्रोक्यूरेटर जनरल
(Procurator General of the USSR)

महत्व, पद की शृ खला एव नियुक्ति

सोवियत सघ मे प्रोक्यूरेटर जनरल का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। कानून को सम्पूर्ण देश मे समान रूप से लागू कराने का कार्य प्रमुखत इसी का है।

प्रोक्यूरेटर का पद केन्द्र और इकाइयो दोनो मे ही होता है। केन्द्र पर उसे सोवियत सघ का प्रोक्यूरेटर जनरल कहा जाता है और उससे नीचे के स्तर पर उसे प्रोक्यूरेटर कहा जाता है। धारा 114 के अनुसार केन्द्र का प्रोक्यूरेटर जनरल सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत द्वारा 7 वर्ष के लिए चुना जाता है। धारा 115 के अनुसार प्रोक्यूरेटर जनरल ही प्रत्येक सघीय गणतन्त्र (Union Republic), स्वशासन गणतन्त्र (Autonomous Republic), स्वशासित क्षेत्र (Autonomous region) प्रदेश (Territory) तथा खण्ड (Region) मे प्रोक्यूरेटर की नियुक्ति पाच वर्ष के लिए करते हैं। सघीय गणतन्त्रो (Union Republics) के प्रोक्यूरेटर जिला व नगरो के स्थानीय प्रोक्यूरेटरो की नियुक्ति करते हैं, लेकिन ऐसी नियुक्तियो पर उन्हे प्रोक्यूरेटर जनरल की स्वीकृति लेनी पडती है। इसका कार्यकाल भी पाँच वर्ष का होता है।

अधिकार एव कार्य

सोवियत सविधान की धारा 113 के अनुसार "सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ के सब मन्त्रिया और उनके अधीनस्थ सस्थाओ तथा कर्मचारियो व नागरिको द्वारा कानून का पूरा पालन कराने की पर्यवेक्षण सम्बन्धी सर्वोच्च शक्ति सामान्यत सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ के प्रोक्यूरेटर जनरल मे निहित है।' प्रोक्यूरेटर जनरल और उसके अधीन अन्य प्रोक्यूरेटरगण अभियोग पक्ष (Prosecution) के रूप मे कार्य करते हैं चाहे वे राज्य की ओर से अभियोग पक्ष के रूप मे कार्य करें अथवा किसी नागरिक की ओर से अभियोक्ता बनें। सार्वजनिक अधिकारियो, सरकारी विभागो और प्राइवेट नागरिको द्वारा कानूनो का ठीक ठाक पालन किया जाता है अथवा नही इसकी देखभाल करना प्रोक्यूरेटरो का कर्त्तव्य है। उन्हे किसी भी राजकीय अङ्ग अथवा कर्मचारी के अवैध निर्णय के विरुद्ध अपील करने का अधिकार है। वे फौजदारी मामलो, उनसे सम्बन्धित परिस्थितियो और सस्थाओ की अधिकार सीमा पर नियन्त्रण रखते है। वे राज्य की ओर से फौजदारी मामलो मे वकालत करते हैं। वे न्यायालयो के निर्णयो की वैधानिकता का परीक्षण कर उनके विरुद्ध अपील कर सकते हैं। वे यह भी देख सकते हैं कि न्यायालयो के निर्णय ठीक प्रकार से लागू किये जा रहे हैं या नही। उन्हे एसे मामलो मे हस्तक्षेप करने व अपील का प्रबन्ध कराने का भी अधिकार है जिसमे वह यह समझे कि न्याय

उचित हुआ है अथवा यह समझें कि दण्ड कम या अधिक दिया गया है। उन्हें यह भी अधिकार है कि वे कानून भंग करने वाले किसी भी नागरिक या सरकारी कर्मचारी को गिरफ्तार करने का आदेश जारी कर सकें। प्रोक्यूरेटर जनरल का यह अधिकार है कि वह किसी भी न्यायालय के किसी भी मुकदमे को हटाकर संघीय सर्वोच्च न्यायालय में सुनवाई के लिए ला सके। वस्तुतः प्रोक्यूरेटर जनरल सार्वजनिक अधिकारियों को होश में रखता है जिससे वे कानूनों का उल्लंघन नहीं कर पाते। इसीलिये सोवियत लेखक प्रोक्यूरेटर विभाग को सोवियत नागरिकों की स्वतन्त्रता और हितों का संरक्षक कहते हैं। प्रोक्यूरेटर जनरल विशेष रूप से क्रांति विरोधी अपराधों के प्रति सजग रहता है। उसका एक विशेष अधिकार यह है कि वह संघ के सर्वोच्च न्यायालय की सम्पूर्ण बैठक में भाग ले सकता है। किसी किसी मामले में तो उसे अभियोगचालक (Prosecutor) व न्यायाधीश (Judge) दोनों ही का कार्य करना पड़ता है।

प्रोक्यूरेटर जनरल मन्त्री-परिषद का सदस्य नहीं होता। वह न्यायमन्त्री अथवा किसी अन्य मन्त्री के अधीन नहीं होता। वह एक स्वतन्त्र अधिकारी है जो केवल सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत के अधीन रहता है।

स्पष्ट है कि प्रोक्यूरेटर का पद रूस के प्रशासन का एक ऐसा पद है, जो न्यायिक प्रक्रिया को पूरी तरह से प्रभावित कर सकता है। इस पद पर प्रायः साम्यवादी दल का मान्य नेता ही नियुक्त किया जाता है। इस प्रकार न्यायिक व्यवस्था के समान ही प्रोक्यूरेटर जनरल का पद भी साम्यवादी दल के नियन्त्रण में सर्वहारा वर्ग के अधिनायकवाद का मुख्य आधार और उसकी मुख्य शक्ति है।[1]

सोवियत न्याय व्यवस्था का मूल्यांकन
(Evaluation of the Soviet Judicial System)

सोवियत न्याय व्यवस्था की पश्चिमी लोकतन्त्रों द्वारा कठोर आलोचना की जाती है। यह कहा जाता है कि सोवियत न्याय-व्यवस्था के जो कतिपय उच्च आदर्श संविधान में निहित हैं, वे केवल सैद्धान्तिक रूप में ही सत्य हैं। संविधान में *कानून के समक्ष सबकी समानता का आदर्श* स्थापित किया गया है परन्तु *व्यवहार* में स्थिति इसके विपरीत है। कानून के समक्ष समानता केवल उन लोगों के लिए है जो साम्यवादी हैं अथवा कम से कम साम्यवाद के भक्त हैं। अन्य लोगों के लिए समानता का अर्थ निश्चय ही यह नहीं होता जो साम्यवाद के भक्तों के लिए होता है। अन्य लोगों को 'लोगों का दुश्मन' (Enemy of the people), 'गद्दार' (Traitor) अथवा ऐसे ही अन्य नामों से सम्बोधित किया जाता है और उनके लिये समानता केवल एक कागजी बात बन कर रह जाती है। वस्तुतः सोवियत संघ में न्यायालयों के निर्णय निष्पक्ष कानून पर आधारित न होकर क्रांतिकारी आवश्यकता (Revolutionary Expediency) पर आधारित होते हैं।

सोवियत संविधान की धारा 127 के अन्तर्गत यह व्यवस्था है कि किसी के निर्णय या प्रोक्यूरेटर की स्वीकृति के बिना किसी भी व्यक्ति को

गिरफ्तार नही किया जाए।" परन्तु यह व्यवस्था भी व्यवहार मे उल्टी है। प्रोक्यूरेटर प्रत्येक स्तर पर ऐसे व्यक्ति होते है जो साम्यवादी दल के जाने माने नेता होत हैं अथवा साम्यवाद के प्रबल भक्त होने है। अत जिस व्यक्ति को भी गिरफ्तारी करने की आवश्यकता शासक दल समझे, उसकी गिरफ्तारी की व्यवस्था बडी सुगमता से हो जाती है। साथ ही राजनीतिक पुलिस को भी अधिकार है कि वह किसी भी व्यक्ति को बिना मुकदमे के ही "प्रशासनिक देश निकाला" (Administrative Exile) दे दे। ऐसी परिस्थिति मे यह स्पष्ट है कि वैयक्तिक स्वतन्त्रता की दृष्टि से सोवियत न्याय-व्यवस्था का कोई व्यवहारिक मूल्य नही रह जाता।

न्यायपालिका की स्वतन्त्रता की बात की तो चर्चा ही व्यर्थ है। सोवियत न्याय व्यवस्था इस तथ्य को स्वत प्रमाणित करती है कि सोवियत संघ म न्यायपालिका को ग्रेट-ब्रिटेन या सयुक्त राज्य अमेरिका की भाति शासन का एक पृथक एव स्वतन्त्र अ ग नही समझा जाता अपितु उसे अन्य प्रशासकीय विभागो के समान राज्य के नियमित प्रशासकीय ढाचे का एक भाग मात्र माना जाता है। सोवियत सघ मे विधि न्यायालय पाश्चात्य देशो के न्यायालयो की भाति स्वतन्त्र पद का उपभोग नही करते यह बात इस तथ्य स भी स्पष्ट है कि उन्हें न्याय का प्रशासन (Administration of Justice) राज्य के विधि-अधिकारियो के सहयोग द्वारा करना होता है। रूस मे न्याय विभाग सरकार द्वारा प्रतिपादित नीति को स्वीकार करता है और उसके उल्लघन-कर्ताओ को दण्ड देता है। वह नागरिको के अधिकारो की रक्षा करता है, किन्तु उसका यह कर्त्तव्य नहीं है कि वह सरकार द्वारा हस्तक्षेप के विरुद्ध नागरिको के अधिकारो की रक्षा करे। इन सबके अतिरिक्त न्याय विभाग की स्वतत्रता इस दृष्टि स भी सदेहास्पद है कि सोवियत सघ मे साम्यवादी दल उसके भी ऊपर है। इसके अतिरिक्त सोवियत न्याय-व्यवस्था केन्द्रीयकरण की शिकार है। साम्यवादी दल के एकछत्र आधिपत्य, प्रोक्यूरेटर जनरल और उच्च न्यायालयो द्वारा निम्न न्यायालयो के निरीक्षण के कारण केन्द्रीयकरण की मात्रा बहुत बढ़ गई है।

इन सब आलोचनाओ मे सत्य का यद्यपि पर्याप्त अ श है तथापि यह नही माना जा सकता कि सोवियत न्याय व्यवस्था गुणो से सर्वथा हीन है। लॉस्की ने सोवियत न्याय व्यवस्था की बहुत प्रशसा की है। वह न्यायालयो के सगठन और कार्य विधि से बडा प्रभावित हुआ है। अनक भारतीय न्यायाधीशो और विधि-वेत्ताओ ने जिन्होंने सोवियत सघ का दौरा किया है सोवियत न्याय-व्यवस्था के अनेक गुणो को बतलाया है। सोवियत न्याय-व्यवस्था ने अपने उद्देश्य की पूर्ति मे जितनी सफलता प्राप्त की है उतनी सफलता शायद ही किसी अन्य देश की न्यायपालिका ने की होगी।

8

अङ्गीभूत इकाइयों का शासन
(ADMINISTRATION OF FEDERATING UNITS)

"इकाइयो को सिर्फ विशुद्ध स्थानीय प्रकृति
के सारे मामलो मे कुछ अश तक
इच्छानुसार कार्य करने की
स्वतन्त्रता है।"

—प्लारिंसकी

सोवियत सघ भारत और सयुक्त राज्य अमेरिका कि भाति एक सगठनात्मक राज्य है जिसमे प्रादेशिक इकाइयाँ सम्मिलित है। ये प्रादेशिक इकाइया समान स्तर पर कुछ अधिकारो को प्रदान करके एक केन्द्रीय सरकार का निर्माण करती हैं। केन्द्रीय सरकार की शक्तियो को सविधान की धारा 14 मे प्रगणित कर दिया गया है। इसके बाहर केन्द्र को कोई शक्ति प्राप्त नहीं है। इस प्रकार अवशिष्ट विषयो पर अधिकार केन्द्र का न होकर इकाई राज्या का रखा गया है। सब मिलाकर निम्नलिखित इकाइया सोवियत सघ मे सम्मिलित हैं—

1	सघ गणराज्य (Union Republics)	15
2	स्वशासी गणराज्य (Autonomous Republics)	17
3	स्वशासी क्षेत्र (Autonomous Regions)	9
4	राष्ट्रीय क्षेत्र (National Areas)	10

सघ गणराज्य

इसको अवयवी इकाइयो म सर्वोच्च स्थान प्राप्त है और इनकी स्थिति बहुत कुछ सयुक्त राज्य अमरिका अथवा भारत के राज्यो जसी है। वतमान समय म सविधान की धारा 13 के अन्तगत सोवियत सघ मे 15 सघ गणराज्य है—

1. रशियन सोवियत सघात्मक समाजवादी गणराज्य
   (The Russian Soviet Federated Socialist Republic)
2. यूक्रेनियन सोवियत समाजवादी गणराज्य
   (The Ukranian Soviet Socialist Repuolic)
3. बेलो रशियन सोवियत समाजवादी गणराज्य
   (The Beylo-Russian Soviet Socialist Republic)
4. एजरबजन सोवियत समाजवादी गणराज्य
   (The Azerbaijan Soviet Socialist Republic)

5 जार्जियन सोवियत समाजवादी गणराज्य
(The Georgian Soviet Socialist Republic)
6 कजाक सोवियत समाजवादी गणराज्य
(The Kazokh Soviet Socialist Republic)
7 ग्रारमीनियन सोवियत समाजवादी गणराज्य
(The Armenian Soviet Socialist Republic)
8 तुर्कमान सोवियत समाजवादी गणराज्य
(The Turkman Soviet Socialist Republic)
9 टाउजिक सोवियत समाजवादी गणराज्य
(The Tajik Soviet Socialist Republic)
10 उजबेक सोवियत समाजवादी गणराज्य
(The Uzbek Soviet Socialist Republic)
11 किरगीज सोवियत समाजवादी गणराज्य
(The Kirghiz Soviet Socialist Republic)
12 लातवियन सोवियत समाजवादी गणराज्य
(The Latvian Soviet Socialist Republic)
13 लिथुवियन सोवियत समाजवादी गणराज्य
(The Laithunian Soviet Socialist Republic)
14 ऐस्टोनियन सोवियत समाजवादी गणराज्य
(The Estonian Soviet Socialist Republic)
15 मोलडेवियन सोवियत समाजवादी गणराज्य
(The Moldvian Soviet Socialist Republic)

इनमे से अनेक उप-राज्य स्वतन्त्र गणतन्त्र सघ हैं, जिनके अन्दर और छोटे छोटे राज्य ह। इसी कारण सोवियत सघ को सघो का सघ (Federation of Federations) कहा जाता है। इन प्रद्रह सघ गणराज्यो मे से प्रत्येक स्वशासी गणराज्य स्वशासी क्षेत्र और राष्ट्रीय क्षेत्र म विभक्त है।

सघ गणराज्य सोवियत सघ की मूलभूत इकाइया हैं। ये सीमित क्षेत्र मे प्रभुसत्ता-सम्पन्न हैं। ये स्वेच्छा से सघ के सदस्य हो सकते हैं और स्वेच्छा स अलग भी हो सकते हैं। सघीय सविधान म इन सघ गणराज्यो के प्रशासकीय ढाचे की रूपरेखा दी गई है। इसी ढाचे के अन्तर्गत प्रत्येक गणराज्य अपने सविधान का निर्माण कर सकता है। अत उनके प्रशासन के अवयव केन्द्रीय अथवा सघीय प्रशासनिक अवयवो की ही भाति हैं और उनकी शासन व्यवस्था अखिल सघ की शासन व्यवस्था के ही समान है। सोवियत सघ के अनुरूप ही सघ गणराज्यो म सर्वोच्च सोवियत, प्रेसीडियम मन्त्रि-परिषद् और सर्वोच्च न्यायालय हैं। इस स्थल पर यह भ्रम उत्पन्न हो सकता है कि चू कि सघ गणराज्यो के प्रशासनिक उपकरणो के नाम के साथ 'सर्वोच्च विशेषण लगता है अत उनकी सत्ता भी सर्वोच्च ही होगी, अर्थात उन पर अखिल सघ का नियन्त्रण नही होगा। परन्तु वास्तविक स्थिति यह नही है और उन पर अखिल सघीय उपकरणो का पूर्ण नियन्त्रण रहता है।

उदाहरणार्थ, किसी संघ गणराज्य की सर्वोच्च सोवियत ऐसा कोई कानून पारित नहीं कर सकती जो सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत की इच्छा के विरुद्ध हो। सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत द्वारा पारित कानून ही मान्य होता है, यदि वह किसी संघ गणराज्य की सर्वोच्च सोवियत द्वारा पारित कानून के विरुद्ध हो।

संघ गणराज्य की सर्वोच्च सोवियत गणराज्य शासन का सर्वोच्च अंग है। यह गणराज्य की व्यवस्थापिका सभा है जिसे गणराज्य के नागरिकों द्वारा चार वर्षों के लिए निर्वाचित किया जाता है। यह एक-सदनीय (Unicameral) है। संघीय संविधान में इसके अधिकारों और कार्यों का उल्लेख मिलता है। संविधान की धारा 60 के अनुसार ये अधिकार और कर्त्तव्य इस प्रकार हैं—संघीय गणराज्य का शासन विधान पास करना और उसमें सोवियत संघ के संविधान की धारा 16 के उपबन्धों के अन्तर्गत संशोधन करना, सम्बन्धित संघ गणराज्य में सम्मिलित स्वशासी गणराज्यों के शासन-विधानों को स्वीकार करना और उनके प्रदेशों की सीमायें निर्धारित करना, संघ गणराज्य की आर्थिक योजना को और बजट को स्वीकार करना, संघ गणराज्यों के न्यायालयों द्वारा दण्डित अपराधियों को क्षमा प्रदान करना और माफी देना, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के सिलसिले में संघ गणराज्य के प्रतिनिधित्व के प्रश्नों को तय करना, संघ गणराज्य की सैन्य शक्ति का सगठन करने की विधि निश्चित करना आदि। इसके अतिरिक्त प्रेसीडियम, मन्त्रि परिषद् आदि का निर्वाचन करना भी संघ गणराज्य की सर्वोच्च सोवियत के प्रमुख कार्य हैं।

सर्वोच्च सोवियत के सत्रावकाश में उसकी शक्ति के प्रयोग के लिए एक प्रेसीडियम का निर्वाचन होता है। सोवियत संघ के संविधान की धारा 61 के अनुसार संघ गणराज्य का सर्वोच्च सोवियत अपने प्रेसीडियम का निर्वाचन करती है। इस प्रेसीडियम के अधिकारों को संघ गणराज्य का शासन विधान परिगणित करता है। संघ गणराज्य की सर्वोच्च सोवियत की प्रेसीडियम की स्थिति अपने क्षेत्र में सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत की प्रेसीडियम की ही तरह होती है। यह आज्ञप्तियाँ जारी करती है और सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी है।

संघ गणराज्य की सर्वोच्च कार्यपालिका और प्रशासकीय शक्ति एक मन्त्रि-परिषद् में निहित है जिसका चुनाव सर्वोच्च सोवियत द्वारा होता है। इसमें अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, मन्त्रिगण तथा अनेक आयोगों व समितियों के अध्यक्ष होते हैं। संघ सरकार की तरह यहाँ भी दो प्रकार के मन्त्रालय होते हैं—संघ गणराज्यिक (Union Republican) और गणराज्यिक (Republican)। संघ गणराज्य की मन्त्रि-परिषद् सोवियत संघ गणराज्य के कानूनों तथा आदेशों के आधार पर निर्णय करती है और उन कानूनों को लागू करने की भी समुचित व्यवस्था करती है। संघ गणराज्य की मन्त्रि-परिषदों को स्वशासी गणराज्यों की मन्त्रि-परिषदों के निर्णय और आदेशों को निलम्बित करने का अधिकार प्राप्त है। वे अपने जन-पदों, क्षेत्रों और स्वशासी क्षेत्रों की श्रमिक जनता के प्रतिनिधियों की सोवियतों की कार्यकारिणी समितियों के निर्णयों तथा आदेशों को भी रद्द कर सकती हैं। संघ ... मन्त्री-संघ गणराज्य के अधिकार क्षेत्र में आने वाले राजकीय प्रबन्ध की

शाखाओं का सचालन करते हैं। सोवियत संघ और सघ गणराज्य के कानूनों, सोवियत सघ और सघ गणराज्य की मन्त्रि-परिषद् के निर्णयों व आदेशों तथा सोवियत सघ के अखिल सघीय मन्त्रालयों के आदेशों एव निर्देशनों के आधार पर उनको क्रियान्वित करने के लिए, सघ गणराज्य के मन्त्री अपने अपने मन्त्रालयों के अधिकार क्षेत्र की सीमा के अन्तर्गत आदेश प्रदान करते है और निर्देश प्रसारित करते हैं।

सघ गणराज्य के सर्वोच्च न्यायालय के सगठन अधिकार क्षेत्र आदि के ऊपर सोवियत सघ की न्याय व्यवस्था वाले अध्याय म पर्याप्त रूप स प्रकाश डाल दिया गया है। यहा इतना ही लिखना पर्याप्त है कि इनके क्षेत्राधिकार मे दीवानी और फौजदारी दोनों प्रकार के महत्त्वपूर्ण अभियोग आते हैं इनका अपने-अपने क्षेत्र के नीचे के सभी न्यायालयों के निर्णयों को रद्द करने का अधिकार प्राप्त है। इसके अतिरिक्त ये अपने से निम्न न्यायालयों के न्याय-कार्य का पुनर्निरीक्षण करते हैं।

यह स्मरणीय है कि सघ गणराज्य केवल सीमित क्षेत्र म ही प्रभुसत्ता-सम्पन्न है, अन्यथा उन पर केन्द्र की पूर्ण नजर रहती है। सोवियत सघ मे इकाइयों को सिद्धान्त ही स्वायत्तता प्राप्त है लेकिन व्यवहारत उनको राजनीतिक स्वतन्त्रता नगण्य है और व सघ की प्रशासनिक इकाइयां मात्र रह गई हैं। सोवियत सघ म केन्द्रीयकरण इतना अधिक है कि कुछ सांस्कृतिक और विशुद्ध स्थानीय प्रकृति के कार्यों के अतिरिक्त इकाइयों को एकदम स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं है। सघ से पृथक होने का इकाइयों का अधिकार भी व्यवहार की दृष्टि से कोई मूल्य नहीं रखता। सिद्धान्त और व्यवहार के इस अन्तर पर एक पूर्ववर्ती अध्याय 'रूस की सघीय व्यवस्था' के अन्तर्गत विस्तार से प्रकाश डाला जा चुका है।

स्वशासी गणराज्य

स्वशासी गणराज्य सघ राज्यों के अन्तर्गत स्थित है परन्तु स्वशासी गणराज्यों के भी अपने अलग अलग सविधान होते हैं जो सम्बन्धित सघ गणराज्य की सर्वोच्च सोवियतों द्वारा स्वीकृत किये जाते है। यह आवश्यक है कि स्वशासी गणराज्य का सविधान सम्बन्धित सघ गणराज्य के प्रतिकूल न हो। इसकी शासन व्यवस्था के मुख्य अग भी लगभग सघ गणराज्य के अंगों जैसे ही होते हैं—सर्वोच्च सोवियत प्रेसीडियम और मन्त्रि-परिषद्। व्यवस्थापिका शक्ति सर्वोच्च सोवियत म निहित होती है। यही एकमात्र विधि निर्मात्री सस्था है। गणराज्य का सविधान अन्तग्रहित करना विधियां पारित करना बजट बनाना आदि इसके प्रमुख कार्य हैं। यह अपनी प्रेसीडियम को चुनती है और मन्त्रि-परिषद का नियुक्त करती है। ये दोनो सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी हैं। मन्त्रि परिषद् के प्रमुख कार्य आदेश और निर्णय जारी करना और स्थानीय सस्थाओं को नियन्त्रित करना निम्न इकाइयों के आदेशों या निर्णयों को निलम्बित या रद्द करना आदि हैं।

स्वशासी प्रदेश एव राष्ट्रीय क्षेत्र

कुछ अल्प सख्यक जातियों का स्वशासी प्रदेश और राष्ट्रीय क्षेत्रों के रूप म सगठित किया गया है। इन निम्नतम स्तर की प्रशासनिक इकाइयों म जनता और

निर्वाचित श्रम-जीवियों के प्रतिनिधियों की सोवियत (Soviet of the Working Peoples' Deputies) होती है। यह कानून बनाती है और क्षेत्र की कार्यकारिणी समिति का निर्वाचन करती है। शासन की इकाइयों में प्रेसीडियम की व्यवस्था नहीं है, क्योंकि सोवियत की बैठक वर्ष में कम से कम चार बार अवश्य होती है।

स्थानीय शासन
(Local Government)

सोवियत-शासन प्रणाली के सबसे निम्न धरातल पर स्थानीय शासन की संस्थायें हैं—प्रान्त, प्रदेश, क्षेत्र, जिला, नगर और गांव। प्रत्येक इकाई में श्रमजीवियों के प्रतिनिधियों की एक सोवियत (Soviet of the Working Peoples Deputies) होती है, जिसका निर्वाचन नागरिकों द्वारा दो वर्ष के लिए किया जाता है। ये सोवियतें शासन की आधार शिला हैं। इन्हें प्रशासकीय, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में व्यापक अधिकार प्राप्त हैं। ये शासन प्रबन्ध की अपने अधीनस्थ समितियों के कार्यों का संचालन करती है। सार्वजनिक व्यवस्था स्थापित रखने, कानूनों के पालन और नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा की, ये गारन्टी करती है। सोवियत संघ और सम्बन्धित संघ गणराज्य के कानूनों द्वारा सौंपे गये अधिकारों की सीमा के अन्तर्गत निर्णय करने और आदेश जारी करने का इन्हें अधिकार है। इन सोवियतों की कार्यकारिणी समिति भी होती है। प्रत्येक कार्यकारिणी समिति में प्रशासकीय भाग होते हैं—जैसे वित्त, व्यापार, कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि। स्थानीय संस्थाओं का अपना न्यायालय भी होता है। यह स्मरणीय है कि सोवियत संघ में यद्यपि इन स्थानीय संस्थाओं को पर्याप्त शक्तियां दी गई हैं, लेकिन इसे स्वशासन (Self-Government) की संज्ञा देना भ्रामक होगा क्योंकि सोवियत संघ में केन्द्रीयकरण की मात्रा बहुत अधिक है।

9

रूस की सोवियत प्रणाली

(THE SOVIET SYSTEM OF THE USSR)

"सोवियतें ही सवहारा वर्ग
के अधिनायकवाद के शासन
को उपकरण हैं।"

—विशिन्स्की

सघात्मक राज्य होते हुए भी सोवियत सघ मे पर्याप्त केन्द्रीकृत व्यवस्था पाई जाती है। नीचे से लेकर ऊपर तक प्रशासनिक अवयव उत्तरोत्तर क्रमश एक दूसरे के अधीन काम करते हैं। सोवियत सघ मे केन्द्रीयकरण की यह व्यवस्था एक अनुपम पद्धति 'सोवियत पद्धति" से प्राप्त एव व्यवहृत की गई है। सावियतें सोवियत सघ की विचित्र सस्थायें हैं जिनकी सहगामी सस्थायें विश्व के अन्य किसी भी राज्य म मिलनी दुलभ हैं। रूसियो को इन पर बहुत गर्व है। उनके मतानुसार सोवियत पद्धति के कारण ही रूस की ससदीय व्यवस्था पाश्चात्य पूजीपति देशो की ससदीय व्यवस्था से श्रेष्ठतर है। सोवियतो की व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जो रूस को जनता की अपनी व्यवस्था है और जिसम किसी प्रकार की वग भावना के लिए कोई स्थान नही है। सोवियत व्यवस्था के माध्यम से गाव स्तर से लकर सघ शासन के स्तर तक जन-साधारण शासन काय म भाग ले सकते हैं।

सोवियतें हैं क्या ? उनका स्वरूप

अपने सही अर्थों म सोवियतें रूस की श्रमिक वग की विभिन्न स्तरो पर सगठित निर्वाचित प्रतिनिधि सभायें है। सोवियत' शब्द रूसी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ होता है परिषद् अथवा पंचायत। इस प्रकार अपने शाब्दिक अर्थ म सोवियत जन प्रतिनिधियो की एक सभा हुई। परन्तु सोवियत और जन प्रतिनिधि सभा मे महत्वपूर्ण अन्तर यह है कि जन प्रतिनिधि सभा तो सभी वर्गों के व्यक्तियो की प्रतिनिधि-सभा हो सकती है लेकिन सोवियत सब वर्गों के व्यक्तियो का प्रतिनिधित्व नहीं करती, उसमे केवल श्रमिक वर्ग ही सगठित होता है। इस प्रकार सोवियत एक नवीन प्रकार की प्रतिनिधि परिषद् है जो विशुद्ध रूप स सवहारा वर्ग की सस्था है। इसमे अन्यान्य प्रतिनिधि सस्थाओ की तरह शोषक वग अर्थात पून्जीपतियो, जमीदारो आदि के, अथवा मिल मालिको या निकम्मो (Idles)

प्रतिनिधियों को स्थान नहीं मिलता। विशिन्स्की ने लिखा है कि "सोवियतें ही सर्वहारा वर्ग के अधिनायकवाद के शासन की उपकरण हैं।"

सोवियतें सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ की राजनीतिक आधार शिला हैं। सोवियत संघ का सम्पूर्ण शासन सोवियतों पर ही आधारित है जो राज्य में विभिन्न स्तर पर संगठित हैं। विभिन्न गणराज्य सोवियत गणराज्य ही कहलाते हैं और उनके संघ को सोवियत संघ कहा जाता है। वास्तव में सरकार की सम्पूर्ण रचना सोवियतों का ही सोपानतन्त्र (Hierarchi) है। सोवियत संविधान की धारा 94 के अनुसार देश के प्रत्येक ग्राम नगर जिले, प्रदेश, स्वशासित गणराज्य संघ गणराज्य तथा सोवियत संघ में सोवियतों का होना अनिवार्य है। रूस में इन स्वशासन की इकाइयों की एक शृंखला है जिसमें प्रारम्भिक सोवियत, जिला सोवियत, प्रांतीय सोवियत, संघ व गणराज्यों की सोवियत, सर्वोच्च सोवियत सम्मिलित हैं। रूसी सोवियतें व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और प्रशासकीय तीनों ही प्रकार की संस्थायें हैं। उनकी व्यवस्था शक्ति-विभाजन के सिद्धांत पर आधारित नहीं है, प्रत्युत् उनमें व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका दोनों ही प्रकार की शक्तियां निहित की गई हैं। शक्तियों का एकत्रीकरण इतना अधिक है कि सरकारी कर्मचारी जो स्वयं प्रशासन के सहयोगी होते हैं, उनके सदस्य होते हैं। रूसी लेखकों ने सोवियतों को जनता की सही प्रतिनिधि संस्थायें तथा संसदों की अपेक्षा कहीं अधिक जनतन्त्रात्मक बतलाया है। उनके मतानुसार, सोवियत पद्धति एक ऐसी सत्ता है जो सभी के लिए उन्मुक्त है, जो समस्त क्रिया-कलाप सर्व-साधारण के सामने करती है, जिस पर सर्वसाधारण की पहुँच है और जिसका आधार तथा स्रोत सर्वसाधारण ही है।

सोवियतों का प्रारम्भ

सोवियतें सन् 1936 के वर्तमान संविधान की ही उपज नहीं है। ये पहिले पहल 1905 में क्रांतिकारी उपद्रवों के दिनों में औद्योगिक मजदूरों के संगठनों के रूप में अवतरित हुईं और इन्होंने क्रांतिकारी आन्दोलनों के लिए नेतृत्व प्रदान किया, परन्तु इन्हें शीघ्र ही दबा दिया गया। ये सोवियतें उस समय एक प्रकार से हड़ताल समितियां थीं जिनका मुख्य ध्येय श्रम हड़ताल की योजनाओं पर विचार-विमर्श करना तथा अपने आपको तदर्थ तैयार करना था। सन् 1917 की क्रांति के दरम्यान फरवरी-मार्च के महिने में ये पुनः उठ खड़ी हुईं। इस बार ये बड़े बड़े नगरों से लेकर छोटे-छोटे गावों और सैनिकों तक में फैल गईं। इन सोवियतों में कारखानों दूकानों शहरों गावों के किसानों और सैनिकों के निर्वाचित प्रतिनिधि सम्मिलित होते थे। बोल्शेविकों ने सर्वहारा वर्ग के क्रांति संघर्ष के लिए इन सोवियतों को बहुत ही उपयुक्त और सहायक पाया। इसीलिए लेनिन ने नारा बुलन्द किया— 'सारी शक्ति सोवियतों को'। क्रांति के बाद 1918 से ही स्वभावतः सोवियतें नवीन सांविधानिक पद्धति का आधार बन गई और तभी से ये सोवियत संघ के प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र ग्राम, नगर, जिला या प्रांत, अवयवी संघ गणराज्य और अखिल में शासन की मूल अंग हैं।

सोवियतो का निर्वाचन और सगठन

सोवियत रूस म सोवियतो का एक पूरा जाल है जो गाव स प्रारम्भ होकर केन्द्रीय सरकार तक फैला हुआ है। सन् 1936 स पहिले सभी सोवियतो का प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर ही चुना जाता था लकिन 1936 के सविधान के लागू होन के बाद से ही प्रत्येक स्तर की सोवियत के प्रतिनिधि जनता द्वारा ही प्रत्यक्ष मताधिकार के आधार पर गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा चुने जाते हैं। मताधिकार सभी नागरिको को बिना किसी भेदभाव के प्राप्त है यदि उन्हाने 18 वष की आयु प्राप्त कर ली हो। सोवियतो के प्रतिनिधि जनता के प्रति उत्तरदायी होते हैं और उनसे यह आशा की जाती है कि व जनता की आकाक्षाओ के अनुकूल काय करगे। यदि जनता इन प्रतिनिधियो स असतुष्ट हो जाती है तो उसे उन्हे वापिस बुलान का अधिकार भी है भले ही उनका कायकाल समाप्त न हो पाया हो। सभी चुनाव जन-पदीय आधार पर किये जाते है और ग्रामो तथा नगरो की सोवियतो म कोई अन्तर नही किया जाता। प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र केवल एक प्रतिनिधि सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत म भेजता है।

वतमान सोवियतो के प्रमुख प्रकारो और उनके सगठन को हम सक्षप म निम्नानुसार दर्शा सकते हैं—

प्रारम्भिक सोवियतें (Primary Soviets)—प्रारम्भिक सोवियतें जनता की छोटी छोटी समितियां हैं जो प्राय प्रत्येक गाव, प्रत्येक कारखाने प्रत्येक नगर और सेना के प्रत्येक रेजीमेंट म होती हैं। इनका कार्य उस स्थान के सभी कार्यों का प्रबन्ध करना होता है जिस स्थान की व होती ह। उदाहरणाथ किसी कारखाने की सोवियत म वहा के कमचारियो के प्रतिनिधि होते हैं जो कारखान का प्रब ध करते ह। इसी तरह एक ग्राम की सोवियत मे गाव क लोगो के प्रतिनिधि होत है और वे उस गाव की स्थानीय आवश्यकताओ को पूर्ति करते ह। सोवियत रूस के प्रशासनिक ढाचे की प्रारम्भिक इकाई यही प्रारम्भिक सोवियत है।

जिला सोवियतें (District Soviets)—प्रारम्भिक स्तर स ऊपर जिला सोवियतें है जिन्हे रेयन्स (Raions) कहते है। ये सोवियत अपेक्षाकृत अधिक व्यापक होती है और इन्हे अधिक व्यापक क्षेत्र का प्रबन्ध करना पडता ह। प्रारम्भिक सोवियतो का माग दशन करना इनका सबस प्रमुख काय है। जिला सोवियतें ही वस्तुत वे कडिया हे जो प्रारम्भिक सोवियतो और प्रातीय सोवियतो को जोडती है।

प्रातीय सोवियतें (Provincial Soviets)—जिला सोवियतो स ऊपर प्रातीय सोवियतें होती ह जिन्हे आब्लास्टी (Oblasti) कहा जाता है। इन पर पूर प्रांत के प्रबन्ध का दायित्व होता है। स्थानीय विषयो के प्रबन्ध स इनका सम्बन्ध नहीं होता क्योकि स्थानीय विषय प्रारम्भिक और जिला सोवियतो क हाथो म रहते ह। प्रातीय सोवियतें नीति सम्बन्धी निणय लेती है और उन सिद्धान्तो का निश्चय करती है जिनक अनुसार निम्नतर सोवियतो को अपना काय करना होता है।

संघ गणराज्यों की सोवियतें (Soviets of Constituent Union Republics)—ये सोवियतें मुख्यतः व्यवस्थापिका संस्थायें होती हैं। ये उन सब विषयों पर कानून बनाती हैं जिनके प्रबन्ध का अधिकार संघ गणराज्यों को प्राप्त है। शिक्षा, कृषि, स्वास्थ्य-कार्य आदि विषय उनके कार्य-क्षेत्र में सम्मिलित हैं। इन सोवियतों द्वारा यह निर्णय भी किया जाता है कि कानूनों को निम्नतर सोवियतों के प्रशासन द्वारा किस प्रकार लागू कराया जाए।

सर्वोच्च सोवियत (Supreme Soviet)—यह सोवियत केन्द्रीय व्यवस्थापिका है जिसके दो सदन हैं। इसे सम्पूर्ण संघीय विषयों पर कानून बनाने का अधिकार है। सर्वोच्च सोवियत ही रूस की सोवियत व्यवस्था का वह शीर्षस्थ अंग है जिसकी शक्ति सर्वोच्च है। सम्पूर्ण देश की वित्तीय-व्यवस्था का नियन्त्रण इसी के हाथ में है क्योंकि यही सम्पूर्ण देश के बजट को स्वीकार करती है। इस सर्वोच्च सोवियत का विस्तृत विवेचन पहिले ही एक पृथक् अध्याय में किया जा चुका है।

सोवियतों के कार्य

अनुमानतः सारे रूस में लगभग 70 हजार सोवियतें हैं। ये स्वशासन की इकाइयाँ हैं जिनका कार्य व्यवस्थापन सम्बन्धी और कार्यपालन सम्बन्धी दोनों प्रकार का है क्योंकि ये कानून भी बनाती हैं और उन्हें क्रियान्वित करने के लिए कार्यकारिणी समिति का भी निर्वाचन करती हैं। प्रत्येक सोवियत का कार्य अपने क्षेत्र का प्रबन्ध करना और अपने से निम्न-स्तर की सोवियत के कार्य का निरीक्षण करना होता है। लेकिन निम्नतर स्तर की सोवियत के कार्य का निरीक्षण करने में उच्चतर स्तर की सोवियत को यह ध्यान रखना पड़ता है कि निम्नतर सोवियत के स्वशासन का अधिकार अनावश्यक रूप से भंग न हो। प्रायः छोटी से छोटी सोवियत भी अपने अपने क्षेत्र में पूर्ण स्वाधीन होती है और उसे व्यापक अधिकार प्राप्त होते हैं। वस्तुतः यह एक महत्वपूर्ण बात है कि दूसरे देशों में स्थानीय निकाय जिन शक्तियों का प्रयोग करता है रूस में निम्न स्तर की सोवियतें भी उनसे कहीं अधिक व्यापक शक्तियों का प्रयोग करती हैं। एक प्रारम्भिक सोवियत के क्या अधिकार हैं और उसका कार्य क्षेत्र कितना व्यापक है? इसका सुन्दर चित्रण वेब दम्पत्ति (Sidney and Beatrice Webb) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'सोवियत साम्यवाद एक नई सभ्यता' (Soviet Communism—A New Civilisation) में किया है। उन्होंने लिखा है कि—

अपनी प्रादेशिक सीमाओं के अन्दर ग्राम सोवियत को नागरिकों और कर्मचारियों द्वारा सरकार के आदेशों व कानूनों का पालन कराने का अधिकार है। ग्राम सोवियत संविधान के अधीन अपनी व्यापक क्षमता के भीतर वैकल्पिक अध्यादेश जारी कर सकती है तथा प्रशासनिक दण्ड और जुर्माने लागू कर सकती है। वह ऐसे न्यायालयों की स्थापना कर सकती है, जिन्हें सम्पत्ति नियोजन की शर्तों तथा अन्य छोटे-मोटे अपराधों व झगड़े तय करने का अधिकार प्राप्त है। ग्राम सोवियत का यह कार्य है कि वह शासन का लेखा-परीक्षण करे तथा समस्त दायित्वों

कानून-पालन और नियमना की पूर्ति का आदेश दें, उनका निरीक्षण एवं पर्यवेक्षण करें तथा उन पर बल दें। इसके अतिरिक्त यह भी ग्राम सोवियत के कर्त्तव्य का अङ्ग है कि वह प्रदेश के राजकीय निर्माण और वाणिज्य विभागों के कार्य-व्यापारों पर अपनी दृष्टि रखे। गांव के भीतर ऐसा कोई प्रश्न नहीं रह जाता जिसे ग्राम सोवियत अथवा ग्राम पंचायत नहीं कर सकती हो अथवा जिसकी व्यवस्था सरकारी व्यय पर लोक कल्याणार्थ नहीं कर सकती हो। वह ग्राम के भीतर सड़कों, जल व्यवस्था, नृत्य-गृहों, क्लबों, पाठशालाओं, नाटक घरों और अस्पतालों आदि सब का प्रबन्ध कर सकती है।'

नगरों की सोवियतें ग्रामों की सोवियतों से बड़ी होती हैं। उनमें स्थायी समितियों की भी व्यवस्था रहती है जैसे जन-स्वास्थ्य शिक्षा वित्त आदि की समितियां। रूस में लगभग 10 हजार नगर सोवियतें हैं।

रूस का संविधान व्यवस्था करता है कि सोवियतें सोवियत संघ अथवा संघ गणराज्य के कानूनों द्वारा प्राप्त शक्ति के अन्तर्गत निर्णय करेंगी और आदेश देंगी। वे अपने अधीन प्रशासकीय अङ्गों के कार्यों का निर्देशन करती हैं और राज्य व्यवस्था को ठीक रखती हैं। कानूनों का पालन कराना और नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना भी उनका ही कार्य है। वे स्थानीय आर्थिक एवं सांस्कृतिक निर्माण कार्यों का निर्देशन करती हैं तथा स्थानीय बजट को स्थापित करती हैं। सोवियतें कार्यकारी समितियों को चुनती हैं जिनमें अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, सचिव एवं अन्यान्य सदस्य होते हैं।

वास्तव में सोवियतों के द्वारा सरकार का लाखों किसानों और श्रमिकों से सम्पर्क होता है। वस्तुतः सोवियतें लाखों व्यक्तियों के लिए राज्य शिक्षा की पाठशालायें हैं। उनके होने से राज्य तन्त्र लाखों व्यक्तियों से पृथक नहीं हो पाता बल्कि संगठनों, सब प्रकार के आयोगों विभागों, परामर्श प्रतिनिधि सम्मेलनों आदि के द्वारा उनसे एक रूप हो जाता है और इस प्रकार वह सरकार के उपकरणों (Organs) को सहारा देता है।

सोवियतें और साम्यवादी दल

सोवियत संघ की शासन-व्यवस्था में सोवियतें महत्वपूर्ण भाग लेती हैं।¹ लेकिन यह भी स्मरणीय है कि समस्त सोवियतें—चाहे वे प्रारम्भिक सोवियतें हों अथवा अखिल संघीय महत्व की सोवियतें हों—अपने अपने प्रदेश अथवा क्षेत्र के साम्यवादी दल के संगठन के साथ मिल कर उनके संचालन और निरीक्षण में कार्य करती रहती हैं। वस्तुतः सोवियतों के उत्तरोत्तर संगठन के साथ साम्यवादी दल का उत्तरोत्तर संगठन (Pyramid of Party Organisation) भी निकट सहयोग के साथ कार्य करता है और साम्यवादी दल की शाखायें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सोवियतों के कार्य का नियन्त्रित करती रहती हैं। स्टालिन ने स्पष्टतः कहा था 'साम्यवादी दल के आदेश प्राप्त हुए बिना हमारी सोवियतें कभी कोई महत्वपूर्ण राजनीतिक अथवा संगठन सम्बन्धी निर्णय नहीं करता। साम्यवादी दल सोवियतों के विस्तृत संगठन के द्वारा ही सब साधारण में अपने प्रभाव की अभिवृद्धि करता है और सोवियतों के द्वारा ही सहानुभूतिशील गैर-साम्यवादी तत्व का शासन सहयोग प्राप्त करता है।

10

रूस का साम्यवादी दल
(THE COMMUNIST PARTY OF THE USSR)

साम्यवादी दल समाजवादी व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने और उसे
विकसित करने के लिए किये जाने वाले श्रमजीवी
जनता के मार्गदर्शन और श्रमजीवी जनता की
सभी सार्वजनिक एवं राजकीय
संस्थाओं का मूल केन्द्र है।"

—सोवियत संविधान

आधुनिक युग में शासन-सत्ता के पीछे वास्तविक शक्ति राजनीतिक दल होते हैं। वे शासन रूपी गाड़ी को चलाने के लिए ईंधन का काम करते हैं। सोवियत रूस की शासन-व्यवस्था में और पाश्चात्य प्रजातन्त्रों की शासन-व्यवस्थाओं में इस दृष्टि से मुख्य अन्तर यही है कि जहां रूस में सम्पूर्ण राजनीतिक-सत्ता पर केवल मात्र साम्यवादी दल का एकाधिकार है वहां पश्चिमी प्रजातन्त्रों में दो-तीन या अधिक दलों का अस्तित्व है। आधुनिक राज्यों में सोवियत रूस प्रथम एकदलीय राज्य है। विशिन्स्की के शब्दों में सर्वहारा के अधिनायकवाद का अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त और सोवियत समाजवादी संघ की समस्त राजनीतिक हलचलों के केन्द्र-बिन्दु साम्यवादी दल की समस्त राजनीतिक आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में एकाधिकार पूर्ण स्थिति है। रूसी नेता एकदलीय व्यवस्था को ही पूर्ण रूप से उचित समझते हैं। उनकी मान्यता है कि राजनीतिक दल का निर्माण लोगों के किसी विशेष समुदाय के विशिष्ट हितों के आधार पर होता है, अतः एक से अधिक दल तो वहीं उचित हो सकते हैं जहां समाज के विविध समुदायों और वर्गों के विविध हित हों। किन्तु सोवियत व्यवस्था तो वर्गविहीन समाज की है। सोवियत रूस में केवल कृषकों और श्रमिकों का वर्ग ही है जिसके सब सदस्यों का एक ही सामान्य हित है। अतः रूस में केवल एक ही राजनीतिक दल का अस्तित्व हो सकता है। सोवियत संविधान की धारा 126 में भी साम्यवादी दल की एकाधिकारपूर्ण स्थिति को स्वीकार किया गया है।

सोवियत संघ में साम्यवादी दल ही वास्तव में शासन करता है। दल द्वारा ... और निर्धारित नीति पर ही सरकार अमल करती है। सैद्धान्तिक रूप में

दल और संवैधानिक कानूनों में परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है किन्तु व्यवहार में शासन के सभी महत्वपूर्ण नीतियों पर पहले दल निर्णय करता है और फिर सरकार उन्हें अपना कर उन्हें कार्य रूप में परिणत करती है। सोवियत संघ में शासन और दल कागज पर एक-दूसरे से पृथक हैं किन्तु मास्को से नीचे गणराज्यों, क्षेत्रों जिलों और दूरस्थ गांवों तक दोनों एक-दूसरे के समानान्तर हैं। सोवियत राज्य में साम्यवादी दल ही सब है और सरकार किसी दूसरे दल के निर्माण की आज्ञा नहीं देती।

साम्यवादी दल का यह एकाधिकार स्वरूप प्रारम्भ से ही रहा है। जारशाही के परम तल तबाह हो रहे रूस को 'अन्धेर युग' से उठाकर क्रांति द्वारा नये युग में लाने के बाद साम्यवादी दल का सर्वोपरि उद्देश्य यही रहा है कि क्रांति की रक्षा की जाय। इसके लिए दल में सभी पूंजीवादी और अवांछित तत्वों को कुचला तथा देश के बाहर की शक्तियों का अद्भुत कौशल और साहस से सामना किया गया है और इस प्रकार धीरे-धीरे सोवियत शासन की जड़ें जमा दी गयी। देश में सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व को बनाए रखने के लिए दल को परोक्ष अपरोक्ष दोनों रूपों में शासन का जामा पहनाया गया और संविधान की धारा 126 में भी स्पष्ट रूप से लिख दिया गया कि 'साम्यवादी दल समाजवादी व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने और उसे विकसित करने के लिए किये जाने वाले संघर्ष में श्रमजीवी जनता का मार्ग दर्शक है।

दल के संगठन सम्बन्धी सिद्धान्त
(Principles of Party Organisation)

साम्यवादी दल का संगठन बाह्य और आन्तरिक दोनों ही पक्षों में पूर्ण एकाधिकारवादी है। इसका यह सर्वाधिकारवादी (Totalitarian) स्वरूप निम्नलिखित दलीय सिद्धान्तों से प्रकट है—

बाह्य एकाधिकारवाद
(External Totalitarianism)

साम्यवादी दल की यह स्पष्ट नीति है कि देश में अपने समानान्तर अन्य किसी राजनीतिक दल के अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया जाय। राजनीतिक सत्ता का अधिकारी केवल वही रहे। केवल उसी का देश के सम्पूर्ण राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन पर संचालन एवं नियन्त्रण रहे। इस दलीय सिद्धान्त का ही परिणाम है कि रूस में आज तक कोई अन्य दल अस्तित्व में नहीं आ पाया है। साम्यवादी दल का ही एकछत्र साम्राज्य है और इस बात की कोई सम्भावना नजर नहीं आती कि वर्तमान व्यवस्था में कोई दूसरा दल कभी अस्तित्व में आ सकता। रूस के नेतागण भी समय-समय पर एकमात्र साम्यवादी दल की शक्ति का ही समर्थन करते रहते हैं।

आन्तरिक एकाधिकारवाद
(Internal Totalitarianism)

दल के इस दूसरे सिद्धांत का आशय है कि आन्तरिक दृष्टि से दल में एक संकल्प और एक आदेश' तथा एक इच्छा और एक संचालन

Will and One Command, One Will and One Direction) मान्य होगा। दल के भीतर किसी प्रकार के मतभेद सहन नहीं किए जायेंगे और किसी प्रकार की फूट और गुटबन्दी का कोई स्थान नहीं होगा। वस्तुतः दल का आन्तरिक एकाधिकारवादी रूप इतना सशक्त है कि दल की नीतियों से मतभेद रखने वाले व्यक्तियों का राजनीतिक जीवन ही समाप्त कर दिया जाता है। इतिहास साक्षी है कि जब कभी दल में विरोधी गुट पैदा हुए तभी शक्तिशाली गुट ने कमजोर गुट को निर्ममतापूर्वक कुचल दिया। साम्यवादी दल में समय-समय पर की जाने वाली सफाइयां (Purges) इस बात की प्रमाण हैं। दल चाहता है कि उसके सभी सदस्य सदैव एकमत हों और कठोरतम अनुशासन के अधीन कार्य करें। सभी निर्णय नियमित ढंग से ठीक ठाक समय पर बिना किसी हिचकिचाहट के कार्यान्वित किए जायें।

लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद
(Democratic Centralism)

सोवियत संघ में शासन और राजनीतिक दल दोनों का ही संगठन लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद पर आधारित है। परन्तु दलीय संगठन के सन्दर्भ में इसका नाम विशेष रूप से लिया जाता है। प्रचलित पाश्चात्य परम्परा के अनुसार लोकतन्त्र और केन्द्रवाद—ये दोनों ही परस्पर विरोधी हैं किन्तु रूसी विचारकों की इस सम्बन्ध में अपनी अलग व्याख्या है। वे दोनों के सामंजस्य को उचित और न्यायसंगत ठहराते हैं।

रूस में लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद का अभिप्राय है 'निर्णयों और नेताओं के निर्वाचन में एकतन्त्र तथा नीतियों के क्रियान्वयन में केन्द्रीकरण अथवा एकाधिकारवाद।' सोवियत संघ में प्रत्येक निम्न-स्तर की दल-संस्था अपने से उच्च स्तर की दलसंस्था का निर्वाचन करती है। किन्तु प्रत्येक निम्न-संगठन अपने से उच्च संगठन के अधीन होता है और उसके आदेशानुसार ही कोई कार्य कर सकता है। इस प्रकार नीचे के स्तर पर संगठन का रूप लोकतन्त्रात्मक और शीर्ष पर एकात्मक होता है। नीचे के स्तर पर संगठन की नीति और नेताओं के चयन के बारे में निर्णय करने के लिए सामान्य जनता स्वतन्त्र होती है लेकिन इसके बाद वह अपने द्वारा निर्धारित नीतियों और निर्वाचित नेतृत्व से बंध जाती है। नेतागण जो आज्ञा निकालते हैं, जनसाधारण के लिए उनका पालन करना अनिवार्य हो जाता है। इस तरह अन्तिम रूप से शासन की सम्पूर्ण शक्ति नेताओं में केन्द्रित हो जाती है। लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद का यह सिद्धान्त वस्तुतः बोल्शेविक दल के सन् 1917 के छठे अधिवेशन में ही स्वीकार कर लिया गया था।

लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद के सिद्धान्त का व्यावहारिक प्रयोग भिन्न भिन्न समयों पर और भिन्न भिन्न मामलों में भिन्न भिन्न रहा है, फिर भी कुल मिलाकर प्रवृत्ति केन्द्रीकरण की ही रही है और लोकतन्त्रात्मक तत्व का शनैः शनैः ह्रास होता गया है। आज प्रायः सभी प्रमुख समितियों में निर्वाचन का स्थान नियुक्तियों ने ले लिया है। दल में इतनी अज्ञान प्रायः भावना अवश्य है कि मन्त्र्य एवं व्यावहारिक

वाद विवाद कर सकते हैं जो दल में एकता पैदा करने में सहायक हों।' पर इस सम्बन्ध में भी यह कठोर प्रतिबन्ध है कि सदस्य दलीय नियमों के अधीन हो अपने विचार प्रकट कर सकते हैं और दलीय नीति पर किसी भी प्रकार से आक्रमण करना घोर अपराध समझा जाता है।

प्रशासनिक ढाँचे में भी लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद का बोलबाला है। संगठन के निम्न स्तर के अंग प्रशासन के निम्न स्तर पर सक्रिय रहते हैं पर उन पर उत्तरोत्तर उच्चस्तरीय अंगों का कठोर नियन्त्रण रहता है। यह अवश्य है कि मतदान के राजनीतिक अधिकार का प्रयोग काम करने के कर्त्तव्य के साथ जोड़कर प्रशासन में जन साधारण के महत्व की अभिवृद्धि की गयी है। जन साधारण प्रशासनिक कार्यों में आवश्यक रूप से भाग लें, इसकी व्यापक व्यवस्था है। सोवियत सम्मेलनों (Soviet Assemblies) तथा प्रशासनिक अंगों में उन्हें सक्रिय बनाया गया है। प्रतिनिधित्व के आधार पर निर्वाचन की व्यवस्था द्वारा स्थानीय सोवियतों (Local Soviets) का निर्माण होता है। सम्पूर्ण रूस में विभिन्न स्तरों पर इन सोवियतों का गठन किया गया है जिनके माध्यम से रूसी जनता प्रशासन में भाग लेती है।

कठोर दलीय अनुशासन
(Strict Party Discipline)

दलीय अनुशासन की यह कठोर माँग है कि दल के भीतर पूर्ण अनुशासन रहे। दल की सदस्यता भी सभी के लिए खुली नहीं है। केवल उन्हीं लोगों को सदस्य बनाया जाता है जो दलीय कार्यक्रमों में अटूट विश्वास रखते हों तथा दलीय निर्णयों का पालन करने और दल का चन्दा देने को तैयार हों। दल का सदस्य बनने से पहले व्यक्ति को एक लम्बी उम्मीदवारी करनी होती है तथा अपने को आर्थिक महत्व के कार्य करने योग्य बनाये रखना पड़ता है। दल के सदस्य को दल के समक्ष पूर्ण आत्मसमर्पण करना पड़ता है।

निष्कर्ष रूप में साम्यवादी दल 'मोनोलिथिक' (Monolithic) दल है और 'मोनोलिथिक' का अर्थ होता है—एक ठोस पत्थर का बना हुआ खम्भा। सोवियत साम्यवादी दल पूर्णतः केन्द्रीयकृत और एकरूप संगठन है जिसके सदस्य कठोरतम अनुशासन में बँधे हुए हैं और जिसमें गुटबन्दी अथवा शक्ति विभाजन का कोई स्थान प्राप्त नहीं है।

साम्यवादी दल की सदस्यता
(Membership of the Communist Party)

प्रजातान्त्रिक देशों में दल की लोकप्रियता का आधार है अधिकाधिक व्यक्तियों का सदस्य बनना जबकि साम्यवादी दल की सदस्यता का सार इन शब्दों में है कि "सदस्यता कम करो और दल की शक्ति बढ़ाओ। सोवियत साम्यवादी दल वस्तुतः एक बन्द या तंगदिल सभा (Closed Society) है जिसकी सदस्यता को अत्यन्त सीमित रखा गया है ताकि दल में कठोर एकता और अनुशासन बना रहे। दल सदस्यता रूसी जनसंख्या के केवल लगभग 3 15 प्रतिशत भाग तक ही जबकि इसका शासन देश की सम्पूर्ण जनसंख्या पर है।

Will and One Command, One Will and One Direction) मान्य होगा। दल के भीतर किसी प्रकार के मतभेद सहन नहीं किए जायेंगे और किसी प्रकार की फूट और गुटबन्दी का कोई स्थान नहीं होगा। वस्तुत दल का आन्तरिक एकाधिकारवादी रूप इतना सशक्त है कि दल की नीतियों से मतभेद रखने वाले व्यक्तियों का राजनीतिक जीवन ही समाप्त कर दिया जाता है। इतिहास साक्षी है कि जब कभी दल में विरोधी गुट पैदा हुए तभी शक्तिशाली गुट ने कमजोर गुट को निर्ममतापूर्वक कुचल दिया। साम्यवादी दल में समय-समय पर की जाने वाली 'सफाइयाँ' (Purges) इस बात की प्रमाण है। दल चाहता है कि उसके सभी सदस्य सदैव एकमत हों और कठोरतम अनुशासन के अधीन कार्य करें। सभी निर्णय नियमित ढंग से ठीक ठीक समय पर बिना किसी हिचकिचाहट के कार्यान्वित किए जायें।

लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद
(Democratic Centralism)

सोवियत संघ में शासन और राजनीतिक दल दोनों का ही संगठन लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद पर आधारित है। परन्तु दलीय संगठन के सन्दर्भ में इसका नाम विशेष रूप से लिया जाता है। प्रचलित पाश्चात्य परम्परा के अनुसार लोकतन्त्र और केन्द्रवाद—ये दोनों ही परस्पर विरोधी हैं, किन्तु रूसी विचारकों की इस सम्बन्ध में अपनी अलग व्याख्या है। वे दोनों के सामंजस्य को उचित और न्यायसंगत ठहराते हैं।

रूस में लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद का अभिप्राय है 'निर्णयों और नेताओं के निर्वाचन में लोकतन्त्र तथा नीतियों के क्रियान्वयन में केन्द्रीकरण अथवा एकाधिकारवाद।' सोवियत संघ में प्रत्येक निम्न-स्तर की दल-संस्था अपने से उच्च स्तर की दलसंस्था का निर्वाचन करती है। किन्तु प्रत्येक निम्न संगठन अपने से उच्च संगठन के अधीन होता है और उसके आदेशानुसार ही कोई कार्य कर सकता है। इस प्रकार नीचे के स्तर पर संगठन का रूप लोकतन्त्रात्मक और शीर्ष पर एकात्मक होता है। नीचे के स्तर पर संगठन की नीति और नेताओं के चयन के बारे में निर्णय करने के लिए सामान्य जनता स्वतन्त्र होती है लेकिन इसके बाद वह अपने द्वारा निर्धारित नीतियों और निर्वाचित नेतृत्व से बंध जाती है। नेतागण जो आदेश निकालते हैं, जनसाधारण के लिए उनका पालन करना अनिवार्य हो जाता है। इस तरह अन्तिम रूप में शासन की सम्पूर्ण-शक्ति नेताओं में केन्द्रित हो जाती है। लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद का यह सिद्धान्त वस्तुतः बोल्शेविक दल ने सन् 1917 के छठे अधिवेशन में ही स्वीकार कर लिया गया था।

लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद के सिद्धान्त का व्यावहारिक प्रयोग भिन्न भिन्न समयों पर और भिन्न भिन्न मामलों में भिन्न भिन्न रहा है, फिर भी कुल मिलाकर प्रवृत्ति केन्द्रीकरण की ही रही है और लोकतन्त्रात्मक तत्व का शनै शनै ह्रास होता गया है। आज प्रायः सभी प्रमुख समितियों में निर्वाचन का स्थान नियुक्तियों ने ले लिया है। दल में इतनी अज्ञान न्याय भावना अवश्य है कि सदस्य एक व्यावहारिक

वाद विवाद कर सकते है जो दल मे एकता पैदा करने मे सहायक हो।" पर इस सम्बन्ध मे भी यह कठोर प्रतिबन्ध है कि सदस्य दलीय नियमो के अधीन हो अपने विचार प्रकट कर सक्ते है और दलीय नीति पर किसी भी प्रकार से आक्रमण करना घोर अपराध समझा जाता है।

प्रशासनिक ढाचे मे भी लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद का बोलबाला है। सगठन के निम्न स्तर के अग प्रशासन के निम्न स्तर पर सक्रिय रहते है पर उन पर उत्तरोत्तर उच्चस्तरीय अगो का कठोर नियन्त्रण रहता है। यह अवश्य है कि मतदान के राजनीतिक अधिकार को प्रयोग काम करने के कर्त्तव्य के साथ जोडकर प्रशासन मे जन साधारण के महत्व की अभिवृद्धि की गयी है। जन साधारण प्रशासनिक कार्यों मे आवश्यक रूप से भाग ले, इसकी व्यापक व्यवस्था है। सोवियत सम्मेलनो (Soviet Assemblies) तथा प्रशासनिक अगो मे उन्हे सक्रिय बनाया गया है। प्रतिनिधित्व के आधार पर निर्वाचन की व्यवस्था द्वारा स्थानीय सोवियतो (Local Soviets) का निर्माण होता है। सम्पूर्ण रूस मे विभिन्न स्तरो पर इन सोवियतो का गठन किया गया है जिनके माध्यम से रूसी जनता प्रशासन मे भाग लेती है।

कठोर दलीय अनुशासन
(Strict Party Discipline)

दलीय अनुशासन की यह कठोर माग है कि दल के भीतर पूर्ण अनुशासन रहे। दल की सदस्यता भी सभी के लिए खुली नही है। केवल उन्ही लोगो को सदस्य बनाया जाता है जो दलीय कार्यक्रमो मे अटूट विश्वास रखते हो तथा दलीय निर्णयो का पालन करने और दल को चन्दा देने को तैयार हो। दल का सदस्य बनने से पहले व्यक्ति को एक लम्बी उम्मीदवारी करनी होती है तथा अपने को मार्मिक महत्व के कार्य करने योग्य बनाये रखना पडता है। दल के सदस्य को दल के समक्ष पूर्ण आत्मसमर्पण करना पडता है।

निष्कर्ष रूप मे साम्यवादी दल मोनोलिथिक' (Monolithic) दल है और 'मोनोलिथिक' का अर्थ होता है—एक ठोस पत्थर का बना हुआ खम्भा। सोवियत साम्यवादी दल पूर्णत केन्द्रीयकृत और एकरूप सगठन है जिसके सदस्य कठोरतम अनुशासन मे बधे हुए है और जिसमे गुटबन्दी अथवा शक्ति विभाजन का कोई स्थान प्राप्त नही है।

साम्यवादी दल की सदस्यता
(Membership of the Communist Party)

प्रजातान्त्रिक देशो मे दल की लोकप्रियता का आधार है अधिकाधिक व्यक्तियो का सदस्य बनना जबकि साम्यवादी दल की सदस्यता का सार इन शब्दो मे है कि 'सदस्यता कम करो और दल की शक्ति बढाओ। सोवियत साम्यवादी दल वस्तुत एक बन्द या तगदिल सभा (Closed Society) है जिसकी सदस्यता को अत्यन्त सीमित रखा गया है ताकि दल मे कठोर एकता और अनुशासन बना रहे। दल की सदस्यता रूसी जनसख्या के केवल लगभग 3 15 प्रतिशत भाग तक ही सीमित है जबकि इसका शासन देश की सम्पूर्ण जनसख्या पर है।

दल की सदस्यता प्राप्त करने की प्रक्रिया भी बहुत कठिन है। तीन सदस्यों की सिफारिश और प्रारम्भिक समिति की स्वीकृति पर ही प्राय अस्थायी सदस्यता प्राप्त होती है और उसके बाद पूर्ण प्रशिक्षण के पश्चात् पूर्ण सदस्यता (Full Membership) दी जाती है। व्यक्ति को बहुधा एक से लेकर पांच वर्ष तक के लिए प्रत्याशी (Candidate) के रूप में रहना पड़ता है। यह समय उसका परीक्षा का होता है। इस अवधि में यदि यह स्पष्ट सिद्ध हो जाता है कि प्रत्याशी साम्यवादी सिद्धान्तों में पूर्ण विश्वास करने लगा है उसकी बुर्जुआ वृत्तियां पूर्णत समाप्त हो चुकी हैं और वह दलीय दायित्वों को वहन करने की दृष्टि से पूर्ण सक्षम बन सका है, तब वही उस दल का पूर्ण सदस्य माना जाता है। कितने व्यक्ति प्रार्थना-पत्र पर सिफारिश करें और कितने दिन के समय का प्रत्याशी रहने के लिए निश्चित किया जाए, यह सब प्राय प्रार्थी के स्तर और पेशे पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, जो व्यक्ति काम करने वाले और मेहनतकश हैं, उन्हें अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा सदस्यता के लिए अधिक उपयुक्त समझा जाता है और उनके प्रवेश की शर्तें अधिक सरल रखी जाती हैं। सरकारी कर्मचारी, बुद्धि जीवी एवं अन्य उच्च व्यवसाय वाले लोगों को दल की सदस्यता प्राय बड़ी सावधानी से दी जाती है। उनके लिए प्राय 10 वर्ष की छोटी सदस्यता के पांच समर्थनों की आवश्यकता होती है और उन्हें आवश्यक रूप से पांच वर्ष तक प्रत्याशी रहना पड़ता है। साथ ही यह भी है कि प्रत्येक व्यक्ति दल की सदस्यता के लिए प्रार्थना-पत्र देने का अधिकारी नहीं होता। पुजारी (Priests) सट्टेबाज (Speculators) व्यक्तिगत व्यापारी (Private Merchants) और सामूहिक कृषि के विरोधी कुलक किसान (Kulak Farmers) दल की सदस्यता के लिए प्रार्थना-पत्र नहीं दे सकते।

दल के सदस्यों के कर्तव्य—साम्यवादी दल का अनुशासन बड़ा दृढ़ है और सदस्यों पर नियन्त्रण भी कठोर है। दल का अनुशासन भंग करने पर बहुधा सदस्य दल से निकाल दिये जाते हैं।

सदस्यों द्वारा अनिवार्यत किये जाने वाले कार्यों में से कुछ निम्नलिखित हैं—

1 प्रारम्भिक फीस देने के बाद दल को अपनी आय के अनुसार कुछ माहवारी चन्दा देना। सामान्यत यह चन्दा आमदनी के 3 प्रतिशत से अधिक नहीं होता।

2 दल की एकता की रक्षा करना एवं दल के निर्णयों को पूरा करने के लिए कटिबद्ध रहना।

3 दलीय अनुशासन का दृढ़ता से पालन करना अपने काम में आदर्श और पूर्ण कौशल प्राप्त करना, निरन्तर अपना कार्य करने की योग्यता बढ़ाना और समाजवादी व्यवस्था के पवित्र आधार के नाते सार्वजनिक समाजवादी सम्पत्ति की सुरक्षा करना और उसे बढ़ाना।

4 दल और देश के राजनीतिक जीवन में सक्रिय भाग लेना, जनता से सम्पर्क बढाना एव श्रमिक जनता की इच्छाओं और आवश्यकताओं पर ध्यान देना।

5 अपनी राजनैतिक चेतना को बढाने के लिए मार्क्स और लेनिन के सिद्धान्तो का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना।

6 दल तथा राज्य के गुप्त भेदों को न खोलना।

7. ऐसे व्यापारो से स्वय को बचाना जिसका ध्येय पूजी लाभ हो।

8 दल के सम्मुख सत्य एव ईमानदारी का व्यवहार करना तथा कर्त्तव्यपरायणता नैतिकता और सदाचार का आदर्श रखना।

9 नीचे से आत्मलोचन तथा समालोचना का विकास करना।

10 दल के द्वारा किसी भी पद पर नियुक्त किये जाने पर आवश्यक रूप से दल की आज्ञाओं का पालन करना।

दल के प्रत्येक सदस्य का सर्वोच्च ध्येय साम्यवाद की निःस्वार्थ सेवा करना होता है। ऐसे सदस्यो के लिए कोई स्थान नहीं होता जो अपने उदात्त कर्त्तव्यो को निभा न सकें। पिछले 6 वर्षों में लगभग 2,00,000 व्यक्ति विभिन्न कारणों से दल से निष्कासित किये गये हैं और कहा गया है कि सयोगवश आ-जाने वाले इन व्यक्तियो को निकाल देने से दल अधिक शक्तिशाली और ठोस बन गया है।

साम्यवादी दल के सदस्यो के अनेक विशेषाधिकार भी हैं। समाज में उनका बडा सम्मान होता है और उन्हे जनता का नेता समझा जाता है।

साम्यवादी दल का सगठन
(Organization of the Communist Party)

सोवियत सघ के साम्यवादी दल का सगठन पिरामिड (Pyramid) के आकार का है। नीचे से लेकर ऊपर तक सभी अग शृखलाबद्ध (Hierarchical) हैं। इस पिरामिड का आधार प्रारम्भिक दल-उपकरण (Primary Party Organs) हैं और शीर्ष पर दल की केन्द्रीय समिति का प्रेसीडियम है जो अन्तिम शक्ति से परिपूर्ण केन्द्र है। सगठन का स्वरूप जनतन्त्रात्मक केन्द्र का होने से प्रत्येक नीचे की इकाई पर उससे ऊपर की इकाई का कठोर नियन्त्रण है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक अग की वास्तविक शक्ति उसकी एक छोटी समिति में निहित है। सगठन की अन्तिम इकाई प्रेसीडियम सब इकाइयों में छोटी है किन्तु सबसे अधिक शक्तिशाली है और अन्य सब नीचे की इकाइयों पर नियन्त्रण रखती है। दल-सगठन के प्रमुख अग इस प्रकार हैं—

प्रारम्भिक दल उपकरण (Primary Party Organs)

प्रारम्भिक दल उपकरण निम्नतम सगठन हैं जिन्हे मुनरो ने "दल की आँख कान" (Eyes and ears of the Party) कहा है। इनका अस्तित्व प्रत्येक कारखाने प्रत्येक बडी दूकान के कार्यालय प्रत्येक स्कूल तथा प्रत्येक रजीमेंट में है। इनका कम से कम सदस्य सख्या 3 हो सकती है। जब इकाई का बडा होता है और सदस्य सख्या प्राय 15 से अधिक बढ जाती है तो

लोग एक कार्यकारिणी समिति या केन्द्रीय समिति का निर्वाचन कर लेते हैं जिसे ब्यूरो (Bureau) कहा जाता है। प्रारम्भिक दल उपकरण का एक सचिव होता है, जो समिति का प्रधान (Chairman) भी होता है। इन प्रारम्भिक दल उपकरणों या इकाइयों की सदस्यता की शर्त यह है कि सदस्य व्यक्ति दल के कार्यक्रम में विश्वास करे, दल के निर्णयों को माने और सदस्यता शुल्क दे। रूस के साम्यवादी दल के आधार का निर्माण ये प्रारम्भिक उपकरण ही करते हैं। सम्पूर्ण रूस में लगभग 2½ लाख से अधिक प्रारम्भिक दल उपकरण हैं। सन् 1952 की दल की नियमावली के अनुसार इनके निम्नलिखित कार्य हैं—

(क) पत्रों, घोषणाओं, भाषणों आदि द्वारा दल की नीति एवं निर्णयों को प्रसारित करना और लोगों को उसे समझाना।

(ख) नये सदस्यों को भर्ती करना और उनके प्रशिक्षण की व्यवस्था करना।

(ग) दल के सदस्यों की राजनीतिक परीक्षा का आयोजन करना और यह देखना कि उनको मार्क्स तथा लेनिन के सिद्धान्तों से कुछ परिचय हुआ है या नहीं।

(घ) राजनीतिक विभाग को (रकोम तथा गोर्को—(Raikom and Gorko) कार्य में सहायता देना।

(ङ) फैक्ट्री, फार्म, मिल आदि सभी जगह श्रमिकों को संगठित करना एवं दल की शक्ति बढ़ाने हेतु जनमत को जागृत करने का प्रयत्न करना।

(च) देश की राजनीतिक एवं आर्थिक व्यवस्था में सक्रिय भाग लेना।

नगर तथा जिलों के दलीय सम्मेलन
(City & District Party Conferences)

प्रारम्भिक दल उपकरण के ऊपर नगर तथा जिलों के दलीय सम्मेलन होते हैं। इन सम्मेलनों का निर्वाचन प्रारम्भिक दल उपकरण करते हैं। ये प्रत्येक सम्मेलन अपनी समिति (Bureau), अपने सचिव (Secretary) तथा दो स्थानापन्न सचिवों (Substitute Secretaries) का चुनाव करते हैं, जिनकी पुष्टि उसके ऊपर वाली इकाई द्वारा होना आवश्यक होती है। दल के नगर या जिला के सम्मेलन की वर्ष में एक बार बैठक अवश्य होती है, लेकिन ब्यूरो अथवा केन्द्रीय समिति के अधिवेशन सदैव होते रहते हैं। केन्द्रीय समिति अपने क्षेत्र के प्रारम्भिक उपकरणों के सचिवों से सम्पर्क रखती है, उनको नीति सम्बन्धी निर्देश देती है और उनके कार्यों का निरीक्षण करती है। इसके अतिरिक्त यह समिति उन साम्यवादी गुटों के काम की भी देखभाल करती है जो विविध ट्रेड यूनियनों, सरकारी संस्थाओं युवक संगठनों और सांस्कृतिक संगठनों में किये जाते हैं।

क्षेत्रीय प्रदेशीय व गणराज्यीय सम्मेलन
(Regional, Territorial and Republican Conferences)

नगरों तथा जिलों के दलीय संगठनों के ऊपर क्षेत्रों, प्रदेशों, स्वशासी गणराज्यों और संघ गणराज्यों के संगठन आते हैं। इन संगठनों अथवा सम्मेलनों

के प्रतिनिधि जिला तथा नगर समितियो के द्वारा निर्वाचित किये जाते हैं। इनकी सर्वोच्च सत्ता पूर्ण सम्मेलनो मे निहित होती है। इसमे से प्रत्येक अपनी अपनी कार्यकारिणी समिति (Bureau) का निर्वाचन करता है, जो सम्मेलन के निर्णयो के अनुसार कार्य करती है। कार्यकारिणी समिति अपने क्षेत्र मे दलीय नीति एव कार्यों का सचालन करती है। यह अपने क्षेत्र के नीचे की इकाइयो के कार्य का प्रबन्ध करती है, उस सम्बन्ध मे आवश्यक आदेश जारी करती है और उनकी सामान्य देखभाल करती है। क्षेत्रीय, प्रदेशीय व गणराज्यीय सम्मेलन अपने अपने क्षेत्र के अन्तगत दल के प्रशासको की व्यवस्था करने के लिए सम्पादक परिषदो का चुनाव भी करते हैं और दल से बाहर जो साम्यवादी दल के गुट काम करते हैं, उनके कार्यों की देखभाल भी करते हैं।

अखिल सघीय कांग्रेस (All Union Congress)

उपयु क्त समस्त दलीय सगठनो के ऊपर सम्पूर्ण देश के लिए दल की अखिल सघीय कांग्रेस होती है। इसकी सदस्य सख्या हजारो मे है। इसके सदस्यो का चुनाव उपक्षेत्रीय, क्षेत्रीय, प्रदेशीय एव गणतन्त्रीय इकाइयो द्वारा किया जाता है। यह साम्यवादी दल की केन्द्रीय सस्था है और इसके द्वारा समस्त निर्णय सम्पन्न किये जाते हैं। नियमो के अनुसार अखिल सघीय कांग्रेस का सम्मेलन तीन वर्षों मे कम से कम एक बार अवश्य होता है। इसका सम्मेलन मास्को मे होता है और उसमे साम्यवादी दल के सभी चोटी के नेता सम्मिलित होते हैं। साधारणत इसका अधिवेशन दो सप्ताह से अधिक नही चलता। यह दल के कार्यक्रम एव नीति मे परिवर्तन कर सकती है एव चालू नीति की प्रमुख समस्याओ के विषय मे कार्यनीति भी निश्चित करती है।

अखिल सघ दलीय सम्मेलन (All-Union Party Conference)

अखिल सघीय कांग्रेस के अधिवेशनो के मध्यवर्ती समय मे केन्द्रीय समिति समय-समय पर अखिल सघ दलीय सम्मेलन को बुलाती है। कभी इसका सम्मेलन एक वर्ष म, तो कभी ढाई वर्ष म होता है। इसमे समस्त देश के स्थानीय समितियो के प्रतिनिधि होते हैं। इसके सभी निर्णय केन्द्रीय समिति की पुष्टि के विषय होते हैं।

केन्द्रीय समिति (Central Committee)

साम्यवादी दल के सगठन का एक बडा प्रमुख अग केन्द्रीय समिति है। इस समिति का निर्वाचन अखिल सघीय कांग्रेस द्वारा गुप्त मतदान प्रणाली के आधार पर होता है। इसमें लगभग 125 सदस्य तथा 111 प्रत्याशी होते हैं। इसके सदस्य अधिकतर सघ गणराज्यो, स्वशासी गणराज्यो एव अन्य प्रदेशो के दलीय सचिव होते हैं। इसमे सोवियत सघ की मन्त्रि परिषद् के प्रभावी सदस्यो की पर्याप्त सख्या होती है। इसके अतिरिक्त गणराज्यो की मन्त्रि-परिषदो के प्रभावशाली सदस्य, उनके प्रधान, उच्च सैनिक कमान के सदस्य उच्च पुलिस अधिकारी तथा बुद्धिजीवी और कुछ विचारक लोग भी सम्मिलित होते हैं। दल की दृष्टि से केन्द्रीय समिति एक अत्यन्त महत्वपूर्ण इकाई है। नियमो के अनुसार कांग्रेस के मध्य-काल में केन्द्रीय समिति दल के सारे काम चलाती है। अन्य सस्थाओ, सगठनो तथा दलों स सम्बन्ध बनाने मे दल का प्रतिनिधित्व करती है। दल के अनेक

स्थापित करके उनके कार्य का सचालन करती है। अपने नियन्त्रण म काम करने वाले केन्द्रीय अखबारो के सम्पादक-मण्डल का नियुक्त करती है तथा बडी स्थानीय सस्थाओ के दलीय अखबारो के सम्पादको की नियुक्ति का पुष्ट करती है। सावजनिक महत्व के व्यवसायों को सगठित करके उनका प्रबन्ध करती है। वह दल की शक्तियो और साधनो का बटवारा तथा केन्द्रीय-कोष की व्यवस्था करती है। केन्द्रीय समिति दल के गुटो द्वारा केन्द्रीय सोवियत और जन-सगठनो के कार्य का निर्देशन करती है।"

केन्द्रीय समिति का प्रेसीडियम (Presidium)

साम्यवादी दल का सर्वोपरि महत्त्वपूर्ण अग प्रेसीडियम (Presidium) है। यह सर्वोच्च सोवियत के प्रेसीडियम से सवथा भिन्न है। 19वी कांग्रेस ने इसके 23 सदस्य व 11 वकल्पिक सदस्य निर्वाचित किये थे। आजकल इसमे 12 सदस्य तथा 5 वैकल्पिक सदस्य हैं। इनकी सख्या घटती-बढती रहती है। प्रेसीडियम मे दल के चोटी के नेतागण होते हैं जो सरकार के भी सदस्य होते है। प्रेसीडियम ही वास्तव मे उन सब निर्णयो को करती है जिन्हे सरकार क्रियान्वित करती है। इस छोटी-सी समिति मे साम्यवादी दल की सर्वोच्च शक्ति निहित है और यह समाजवादी निर्माण की समस्त शाखाओ क काय दिशा को निर्देशन करती है। इसका एक सभापति होता है। प्रेसीडियम की बठकें कई बार कई कई सप्ताह के लिए होती हैं। ये बठकें अत्यन्त गोपनीय होती है और बहुधा रात्रि के समय होती है। ये बठकें कभी-कभी इतनी लम्बी होती है कि दूसरा दिन निकल आता है।

अन्य सहायक अग (Subsidiary Agencies)

प्रेसीडियम के अतिरिक्त साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति के दो अन्य बडे अवयव और हैं—सचिवालय (Secretariat) तथा दल नियन्त्रण आयोग (Party Control Commission)

1 **सचिवालय**—साम्यवादी दल का मास्को म एक केन्द्रीय कार्यालय है। इसका एक महाम त्री होता है। इस सचिवालय अथवा केन्द्रीय कार्यालय के अनेक भाग है। यह देश-विदेश से सम्बन्धित विषयो की देखभाल करता है। राज्य के अधिकाश निर्णय साम्यवादी दल के सचिवालय म ही किये जाते है। सचिवालय वस्तुत साम्यवादी दल एव सोवियत पद्धति का चालक यन्त्र है। इसका अस्तित्व एव इसकी कायकलापनीति केन्द्रीयकरण तथा एकीकरण को अत्यन्त उत्कृष्ट रूप से प्रभावित करते है।

2 **दल नियन्त्रण आयोग**—यह आयोग दल का एक महत्त्वपूर्ण केन्द्रीय अवयव है जिसका काय दल के सदस्यो म अनुशासन व नतिकता बनाये रखना है। क्षेत्रीय एव प्रादेशिक दल समितियां सघ गणराज्य की केन्द्रीय समितियां आदि के विरुद्ध की गई उन अपीलो पर पुनर्विचार करना भी इसका काम है जिनके अनुसार दल के सदस्यो को दल से बहिष्कृत कर दिया गया हो।

साम्यवादी दल के युवक सगठन
(Youth Organisation of the Communist Party)

सोवियत सघ म साम्यवादी दल से सम्बन्धित अनेक युवक सगठन हैं। इन सगठनो द्वारा दल का प्रचार व प्रसार होता रहता है। यह सगठन निम्न हैं—

(1) कॉमसोमॉल्स (Comsomols)

(2) पायनियस और आक्टोब्रिस्टस् (Pioneers and Octobrists)

कॉमसोमॉल्स 15 से 26 वर्ष तक के किशोरों (लड़का और लड़कियां) का सगठन है। इनके लाखों सदस्य हैं। इनका प्रमुख कार्य मार्क्स के सिद्धान्तों का अध्ययन करना तथा दल के कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए रचनात्मक सहयोग प्रदान करना है। ये सोवियत शक्ति के चारों ओर साम्यवादी विचारों से परिपूर्ण युवकों को संगठित करते हैं। इनके द्वारा देश की संस्थाओं तथा दल के सगठनों को उपयुक्त व्यक्ति प्रदान किये जाते हैं। इनका नियन्त्रण साम्यवादी दल द्वारा किया जाता है।

पायनियस और आक्टोब्रिस्टस छोटे लड़कों और लड़कियों के दो अन्य संगठन हैं। 10 से 15 वर्ष तक के बच्चे पायनियस में तथा 9 से 11 तक के बच्चे आक्टोब्रिस्टस में भर्ती किये जाते हैं। कामसोमॉल्स इन संगठनों में साम्यवादी विचारधारा की शिक्षा देते हैं और इस भांति इन्हें भविष्य के लिए तैयार करते हैं।

साम्यवादी दल का महत्व एवं कार्य
(Importance and Functions of the Communist Party)

साम्यवादी दल का वास्तविक महत्व उसके महान् कार्यों में छिपा है। दल ने रूसी लोगों के सामाजिक आर्थिक राजनीतिक एवं बौद्धिक जीवन के सगठन में निर्णायक भूमिका अदा की है और आज भी रूसी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इसका महत्व एक महान मार्ग-दर्शक शासक उपदेशक एवं नियन्त्रक का है। यह दल सोवियत शासन और समाज का अगुआ और उसकी निर्देशक शक्ति है।

साम्यवादी दल समाजवादी व्यवस्था का नियन्ता एवं रक्षक

रूस में समाजवादी व्यवस्था की स्थापना का एवं उसकी रक्षा तथा उन्नति का श्रेय साम्यवादी दल को है। देश में दल का कार्य उन लोगों का वैचारिक और क्रियात्मक पथ प्रदर्शन करना है जो देश में समाजवादी व्यवस्था को पूर्ण करना चाहते है। इस रूप में दल एक प्रेरक आदर्श और शिक्षक है। जनता को मार्क्सवाद लेनिनवाद की शिक्षा देना दल का सर्वोपरि कर्त्तव्य है। यही कारण है कि रूसी संविधान में इसे समाजवादी व्यवस्था का विकास करने व उसे शक्तिशाली बनाने के उनके संघर्ष में काम करने वाले लोगों का रक्षक' कहा गया है।

साम्यवादी दल ही वास्तविक शासक

सोवियत साम्यवादी दल देश का वास्तविक शासक है। पाश्चात्य देशों की भांति यह सरकार का निर्माणकर्ता पालनकर्ता और सचालक तो है ही, लेकिन साथ ही यह शासन से इतना घुल मिल गया है कि दल और सरकार को अलग अलग करना मुश्किल है। सभी महत्वपूर्ण कार्यों का निर्णय व्यावहारिक रूप से दल ही करता है। सरकार के उच्च अधिकारियों की नियुक्ति दल के ब्यूरो करते है। सोवियत संघ के शासन के सम्पूर्ण अवयवों पर साम्यवादी दल का पूर्ण एवं एकाधिकारी नियन्त्रण है। कार्टर (Carter) के शब्दों में "साम्यवादी दल ही समस्त व्यवस्थापन और प्रशासन के क्षेत्र में पूर्ण नियन्त्रण रखता है और वही निश्चित करता है कि क्या होना चाहिये कब होना चाहिये, किस प्रकार होना चाहिये तथा किसके द्वारा होना चाहिये?"

पुनश्च, दल जनता को मार्क्सवाद लेनिनवाद की शिक्षा विभिन्न अंगों के माध्यम से देता है। यह शिक्षण इतना प्रभावशाली है कि संगीत, कला, साहित्य, विज्ञान आदि प्रत्येक क्षेत्र को इस तरह नियमित किया जाता है कि वे साम्यवादी प्रवृत्ति को परिलक्षित करें। दल का एक महत्वपूर्ण कार्य राष्ट्रीयता की भावना को जागृत करना है और प्रत्येक साम्यवादी सफलता को राष्ट्रीयता की भावना को दृढ़ बनाने के लिए प्रभावशाली अस्त्र के रूप में काम में लिया जाता है।

इसके अतिरिक्त साम्यवादी दल नेताओं और जनता के मध्य एक कड़ी का कार्य करता है, अर्थात् यह एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से नेतागण अपने कार्यों का विवरण जनता के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। दल सरकारी नीतियों और कार्यों से जनता को परिचित कराता है और उनकी स्पष्ट व्याख्या जनता के समक्ष रखता है। इसके लिये अन्य सूचना-साधनों के अतिरिक्त 'संगठित वाद-विवाद" (Organised discussion) के साधन को काफी प्रयोग में लाया जाता है।

दल केवल सरकार के कार्यों की ही सूचना जनता को नहीं देता प्रत्युत् जनता की इच्छा और प्रतिक्रियाओं की सूचना भी सरकार व दल के नेताओं को देता है। इस तरह वह एक प्रभावशाली सूचना केन्द्र का काम करता है।

अन्तर्राष्ट्रीय कार्य

सोवियत साम्यवादी दल के अन्तर्राष्ट्रीय कार्य भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। साम्यवादी विश्व क्रान्ति और विश्व-साम्यवादी समाज में विश्वास करता है अतः रूसी साम्यवादी दल का यह एक आधारभूत उद्देश्य है कि संसार के पूंजीवादी देशों में साम्यवाद की स्थापना की जाए। प्रारम्भ से ही साम्यवादी दल इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील रहा है। प्रारम्भ में इसके लिये 'कम्युनिस्ट इन्टरनैशनल' (Communist International) की स्थापना की गई थी, किन्तु द्वितीय महायुद्ध काल में इसके स्थान पर 'कॉम्युनिस्ट इनफारमेशन ब्यूरो' (Cominform) की स्थापना की गई। यद्यपि 1956 में इसे समाप्त कर दिया गया है, किन्तु फिर भी विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के माध्यम से सोवियत साम्यवादी दल अन्तर्राष्ट्रीय साम्यवाद के प्रसार लिये प्रयत्नशील है। सोवियत साम्यवादी दल के इशारों पर ही अधिकांश देशों के साम्यवादी दल संचालित होते हैं।

साम्यवादी दल तथा अन्य संगठन

सोवियत संघ में कुछ सार्वजनिक निर्दलीय संगठन हैं, जैसे—श्रमिक संघ (Trade Unions), सहकारी संगठन (Co-operatives) सांस्कृतिक संगठन (Cultural Societies) आदि। दूर से देखने से यही प्रतीत होता है कि ये स्वायत्त संगठन हैं जिन्हें देश के विभिन्न सोवियतों के लिए प्रत्याशी नामांकित करने का अधिकार है। लेकिन तथ्य यह कि ये सभी संगठन किसी न किसी रूप में साम्यवादी दल द्वारा ही नियन्त्रित रहते हैं और दल के सदस्य इन सभी संगठनों में महत्वपूर्ण पदों पर जमे हुए हैं। स्टालिन का कहना था कि ये निर्दलीय संगठन एक प्रकार के 'संदेशवाहक साधन" (Transmission belts) हैं जो दल को विशाल सब से मिलाते हैं।

11

रूस में प्रजातन्त्र
(THE DEMOCRACY IN THE U S S R)

"सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ एक कठोर
अधिनायकतन्त्र है यद्यपि उसके कुछ लक्षण
स्पष्टतः प्रजातन्त्रीय हैं, जो प्रजातान्त्रिक
केन्द्रीयकरण नामक सिद्धान्त के
अनुसार कार्यान्वित हुए हैं।"

—हाउस्टर

सोवियत रूस में वास्तविक प्रजातन्त्र है अथवा नहीं, यह प्रश्न बड़ा विवादास्पद है। एक ओर पाश्चात्य देशों के ऐसे विद्वान् हैं जिन्होंने सोवियत शासन-पद्धति को अप्रजातान्त्रिक, स्वायत्तवादी, अधिनायकवादी और निरंकुश कहा है। दूसरी ओर अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने इसकी खुल कर प्रशंसा भी की है।

पक्ष में तर्क

(1) सोवियत जनता को सर्वाधिक जनतन्त्रीय स्वतन्त्रता एवं अधिकार—सोवियत संविधान सोवियत जनता को संसार के किसी भी प्रजातन्त्रीय देश से अधिक जनतन्त्रीय स्वतन्त्रता व अधिकार प्रदान करता है। 18 वर्ष से अधिक किसी भी नस्ल, धर्म और विचार के नागरिकों को मताधिकार प्राप्त है। सम्पत्ति, शिक्षा आदि पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है यहां तक कि विदेशियों को भी यह अधिकार सुलभ है। इसी प्रकार प्रत्येक नागरिक जिसकी अवस्था कम से कम 23 वर्ष की है, सर्वोच्च सोवियत की सदस्या के लिए खड़ा हो सकता है। निर्वाचन में भाग लेने व निर्वाचित होने का अधिकार सैनिकों को भी प्राप्त है। समस्त प्रतिनिधि जनता के प्रत्यक्ष निर्वाचन के द्वारा निर्वाचित ही नहीं होते हैं अपितु उन्हें अपने कार्य के विषयों में निर्वाचकों को जानकारी भी देनी होती है। सोवियत विधि के अनुसार निर्वाचक बहुमत के द्वारा अपने क्षेत्र के किसी भी अवांछित निर्वाचित सदस्या को वापिस भी बुला सकते हैं। इस प्रकार सोवियत रूस में पूर्ण जनतन्त्र है और वह जनतन्त्र केवल प्रदर्शनीय नहीं है, अपितु व्यावहारिक है। सोवियत संविधान ने अपने नागरिकों को जो मूलभूत अधिकार दिए हैं, संख्या और विस्तार की दृष्टि से संसार का कोई भी लोकतान्त्रिक देश उनके सामने नहीं ठहर सकता। सोवियत रूस में नागरिकों को न केवल राजनीतिक अधिकार ही वरन् महत्वपूर्ण आर्थिक अधिकार भी हैं

पर वर्ग-व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया है। राज्य की ओर से प्रत्येक व्यक्ति को व्यवसाय पाने का अधिकार, न्यूनतम मजदूरी पाने का अधिकार एवं विश्राम तथा मनोरंजन पाने का अधिकार भी है। प्रत्येक छात्र को लगभग निःशुल्क शिक्षा वृद्धावस्था तथा रुग्णावस्था में पेंशन, मुफ्त चिकित्सा आदि समस्त सुविधायें सोवियत रूस में उपलब्ध हैं। सोवियत नागरिकों को भाषण, प्रेस, सभा, जुलूस, प्रदर्शन आदि की स्वतन्त्रता है। इन नाना सुविधाओं में से अनेक सुविधायें तो वे देश भी अपने नागरिकों को उपलब्ध नहीं करा सके हैं जिन्हें अपनी प्रजातान्त्रिक प्रणाली पर गर्व है।

(2) सोवियत जनता के लिए संविधान द्वारा निश्चित कर्त्तव्य—सोवियत संविधान इस दृष्टि से भी पूर्ण प्रजातान्त्रिक है कि उसमें सोवियत जनता को जो भी अधिकार प्रदान किये गये हैं उन्हें सीमित करने वाला कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया है और साथ ही अधिकार प्रदान करने वाले अनुच्छेदों में इस बात का भी प्रबन्ध किया गया है कि यह अधिकार केवल किताबों या प्रदर्शन की वस्तु बन कर न रह जाय अपितु व्यवहार में भी इनका पूर्ण लाभ उठाया जा सके। सोवियत संविधान अधिकारों के साथ-साथ नागरिकों पर समाज और राज्यों के प्रति कुछ कर्त्तव्य भी आरोपित करता है। रूस में अधिकार और कर्त्तव्य अविभाज्य हैं। इस प्रकार सोवियत संविधान इस कथन पर खरा उतरता है कि कर्त्तव्यों के अभाव में अधिकारों का कोई मूल्य नहीं है। यह सब कुछ रूस को सच्चा प्रजातान्त्रिक देश सिद्ध करने को पर्याप्त है।

(3) वर्गहीन-समाज—रूस में वर्गहीन समाज है। वहां पर केवल श्रम-जीवियों का समाज है। पश्चिमी राज्यों में पाये जाने वाले पूंजीपतियों जैसा शोषक वर्ग वहां नहीं पाया जाता। सोवियत रूस में समाज में सभी को समान स्थान है सभी में बंधुत्व की भावना है और इस प्रकार वहां प्रजातन्त्र के दो आधार-भूत स्तम्भों—स्वतन्त्रता एवं समानता के प्रत्यक्ष दर्शन होते हैं। लास्की जैसा प्रजातन्त्र का कट्टर समर्थक भी स्वीकार करता है कि इंगलैंड जैसे प्रजातन्त्रीय राज्य में अभी प्रजातान्त्रिक समाज का निर्माण होना शेष है। इंगलैंड में आज भी केवल धनिक वर्ग का बोलबाला है, धन के बल पर ही यह वर्ग निर्वाचनों में विजयश्री अर्जित करता है। सत्य तो यह है कि पाश्चात्य प्रजातान्त्रिक राज्यों में ऊंच-नीच अमीर-गरीब, आदि की अप्रजातान्त्रिक भावनायें विद्यमान हैं। इन देशों की तुलना में रूस में वास्तविक स्वतन्त्रता के दर्शन होते हैं।

(4) अल्पसंख्यक वर्गों के साथ समानता—सोवियत रूस में अल्पसंख्यक वर्ग के साथ भी पूर्ण समानता का व्यवहार है। सोवियत संविधान का अनुच्छेद 123 यह स्थापित करता है कि जाति या राष्ट्रीय समूह के आधार पर किसी नागरिक के अधिकारों का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सीमित करना अथवा इस आधार पर किसी को विशेषाधिकार प्रदान करना या साम्प्रदायिक घृणा द्वेष का प्रचार करना एक गम्भीर अपराध है। इंगलैंड और अमेरिका जैसे महान् प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में भी अल्पसंख्यकों के साथ समानता का ऐसा व्यवहार देखने को नहीं मिलता। समानता और बंधुत्व के प्रजातान्त्रिक आदर्शों के गीत गाने वाला देश

संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिणी राज्यों में आज भी नीग्रो जाति के साथ पशुवत व्यवहार किया जाता है। प्रजातन्त्र की जननी कहे जाने वाले इङ्गलैंड जैसे देश तक में काली जातियों को उपेक्षा से देखा जाता है। यदि प्रजातन्त्र वास्तव में मानव को मानव के रूप में देखने का आदर्श है तो निश्चयत विश्व के सभी प्रजातान्त्रिक देशों की तुलना में वह रूस में अधिक मात्रा में विद्यमान है।

विपक्ष मे तर्क

(1) विचार स्वातन्त्र्य केवल मात्र दिखावा—रूस में नागरिकों को विचार-स्वातन्त्र्य नहीं है। वहां भाषण और प्रेस-स्वतन्त्रता से सम्बन्धित मौलिक अधिकारों की सीमा व्यवहार में इतनी संकुचित कर दी गई है कि इन स्वतन्त्रताओं की वास्तविक महत्ता कुछ भी नहीं रह जाती। रूस में केवल एक ही विचारधारा को पनपने की आज्ञा है और वह है रूसी साम्यवादी विचारधारा। सोवियत संघ में प्रत्येक नागरिक पूर्णतया सरकार के शिकंजे में दबा हुआ है। संविधान में प्रदत्त मौलिक अधिकारों की धाराएं हाथी के दांतों के समान एक दिखावा है। समस्त शिक्षा प्रणाली पर राज्य का नियन्त्रण है। शिक्षण संस्थाओं में साम्यवादी दल की बातें बतलाई जाती हैं और साम्यवादी विचारधारा का प्रचार किया जाता है। अखबार, रेडियो, सिनेमा और यहां तक कि चर्च भी साम्यवादी दल के प्रचारार्थ काम में लाये जाते हैं। साम्यवादी विचारधारा का विरोधी साहित्य वहां छपना तो दूर रहा प्रवेश भी नहीं पा सकता। इस बात को सोवियत नेता खुल्लम-खुल्ला स्वीकार करते हैं कि साम्यवादियों के शत्रुओं को भाषण और प्रेस की कोई स्वतन्त्रता नहीं दी जा सकती। सोवियत सरकार व श्रमजीवियों की तानाशाही के विरुद्ध वहां कोई प्रचार या आन्दोलन नहीं किया जा सकता।

(2) एक दल प्रणाली (साम्यवादी दल की तानाशाही)—सोवियत संघ में एक दल प्रणाली जनतन्त्र का गला घोटती है। तानाशाही को रोकने, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा करने और शासन की सफलता तथा कुशलता के लिए विरोधी दल का होना आवश्यक है। किन्तु रूस में साम्यवादी दल का एकछत्र राज्य है और उसका अनुशासन ऐसा कठोर है कि व्यक्तिगत एवं राजनैतिक स्वतन्त्रता समाप्त हो गई है और व्यवहार में साम्यवादी दल सरकार की कार्यकारिणी पर शासन करता है, समस्त राजकीय कार्यों का निर्देशन करता है और रूस की सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था को नियन्त्रित करता है। रूसी साहित्य में उसी की छाप है और ज्ञान के सब विभागों में उसी की झलक है।

रूस में दूसरा कोई राजनैतिक दल कार्य नहीं कर सकता। कोई व्यक्ति चाहे साम्यवादी दल का सदस्य बने चाहे न बने किन्तु वह इससे भिन्न आदर्श वाली किसी राजनीतिक पार्टी को संगठित नहीं कर सकता। ओग एवं जिंक के शब्दों में ' वास्तव में केवल स्वरूप को छोड़कर हर प्रकार से रूस में साम्यवादी दल ही सरकार है और साम्यवादी तानाशाही, साम्यवादी दल की तानाशाही है ... यही नहीं, रूस एक ...निक राज्य है, जहां मार्शल-लॉ (Martial Law) के अन्तर्गत राज्य करना अनिवार्य है। ऐसी परिस्थितियों में यह भली प्रकार आंका जा सकता ... रूस में व्यक्ति की स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्र कहां तक विद्यमान है।"

(3) ध्वस्त विधायिका (Facade Legislative)—सर्वोच्च सोवियत मे अथवा प्रशासकीय क्षेत्रो को अन्य सोवियतो मे प्रतिनिधियो का निर्वाचन एक दिखावा मात्र है। फाइनर (Finer) ने इसे 'जन प्रदर्शन' (Public Demonstration) तथा भ्रम' (Illusion) कहा है। सोवियत रूस मे जनता पश्चिमी देशो की जनता की भांति प्रतिनिधियो का स्वतन्त्र रूप से नही चुन पाती। वहा प्रतिनिधियो का नामांकन साम्यवादी दल द्वारा होता है और केवल साम्यवादी दल के सदस्य या उसके समर्थक ही चुनाव मे खडे हो सकते हैं। जनता एक प्रकार से चुने हुए प्रतिनिधियो को ही मत देती है। चूंकि सोवियत रूस मे किसी विरोधी दल का अस्तित्व नही है, अत यह चुनाव एक तमाशा है।

पुनश्च संविधान द्वारा सोवियत व्यवस्थापिका अर्थात संघीय सर्वोच्च सोवियत को एव देश की अन्य सोवियतो को बहुत ज्यादा अधिकार दिये गये हैं। लेकिन यह एक असम्भव-सी बात है कि कोई संस्था वर्ष भर मे 10-15 दिनो की बैठक मे सोवियत रूस जैसे विस्तृत एव विविधता से भरे हुए देश के लिए कानून बना सके। वास्तविकता यह है कि कानूनो का निर्माण साम्यवादी दल द्वारा होता है। सोवियत व्यवस्थापिकायें तो केवल हां भर करती है। इसके अतिरिक्त प्रजातन्त्र का एक प्रमुख लक्षण देश म उत्तरदायी शासन की स्थापना है। लेकिन सोवियत संघ मे जनता के प्रति उत्तरदायित्व केवल नाममात्र का है। शासन के किसी भी प्रश्न पर जनता का कोई नियन्त्रण नही है और संघीय व्यवस्थापिका जनता के प्रति नहीं बल्कि दल के प्रति उत्तरदायी है। देश के सभी गणराज्यो व प्रदेशो की व्यवस्थापिकाओ की भी स्थिति यही है। मन्त्रि-परिषद् का संसद् के प्रति उत्तरदायित्व भी केवल प्रदर्शन के लिए है। संविधान भाषण की स्वतन्त्रता देता है, परन्तु इसका उपयोग शायद ही कोई कर पाता है। संसद् म अथवा संसद् के बाहर शासन की नीति के विरुद्ध कोई आवाज नही उठायी जा सकती।

(4) न्यायपालिका की स्वतन्त्रता नही—रूस म न्याय विभाग सरकार का स्वतन्त्र अङ्ग नही है वरन् एक प्रकार का प्रशासकीय विभाग है जो सरकार द्वारा प्रतिपादित नीति को स्वीकार करता है और उसके उल्लंघनकर्ताओ को दण्ड देता है। सोवियत संघ के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयो की कोई स्वतन्त्र सत्ता नही है क्योंकि उनके निर्णय वहा की प्रेसीडियम तथा साम्यवादी दल की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के द्वारा संपुष्टि के विषय है। सर्वोच्च न्यायालय को संविधान का संरक्षक एव पुनर्विचारक नही बनाया गया है इसलिये न वह सोवियत शासन के कानूनो को अवैधानिक घोषित कर सकता है और न ही संविधान की व्याख्या कर सकता है। इस प्रकार रूसी न्यायपालिका कार्यपालिका के हाथों की और दल की मर्जी की कठपुतली बन गई है। यह तथ्य प्रजातन्त्र की जड पर कुठाराघात के समान है।

(5) केन्द्रीकरण—सोवियत रूस म अत्यधिक केन्द्रीयकरण है जब कि प्रजातन्त्रात्मक शासन के अनुरूप शासन शक्ति का अधिकाधिक विकेन्द्रीकरण होना चाहिए ताकि जनता शासन म अधिकाधिक भाग ले सके। रूस म

आर्थिक साधनो पर सरकार का पूर्ण नियन्त्रण है। देश की आर्थिक व्यवस्था का सचालन और निर्देशन एक केन्द्र से होता है। नागरिको के व्यक्तिगत आर्थिक अधिकारो का कोई मूल्य नही है। यद्यपि सरकार की शक्ति शासन के विभिन्न अगो के मध्य विभाजित है तथापि अतिम रूप से और व्यावहारिक रूप से समस्त शक्तिया साम्यवादी दल म ही समाहित हैं। व्यवहारत साम्यवादी दल का महासचिव (Secretary General) ही शासन का वास्तविक प्रधान होता है, न कि भारत या ब्रिटेन के समान जनता का प्रतिनिधि प्रधानमन्त्री। इस केन्द्रीयकरण को बनाये रखने के लिए प्रचार और आतक दोनो मार्गों को अपनाया जाता है। शासन के समस्त यन्त्र सरकार और दल की प्रशसा मे लगे रहते हैं। प्रचार एव प्रसार के समस्त साधनो पर सरकार तथा दल का एकाधिकार है। आतक का मार्ग ग्रहण करते हुए सरकार या दल के विरोधी को कठोरतम सजा दी जाती है। समय समय पर खूनी शुद्धिकरण' (Bloody Purges) सोवियत रूस के लिए आम बात है। गुप्त पुलिस (Secret Police), गुप्तचर (Spies), श्रमिक कैम्प (Labour Camps) आदि के द्वारा रूसी जनता मे सदव आतक फला रहता है।

वस्तु स्थिति

सोवियत रूस का सघ लोकतन्त्र है या अधिनायकतन्त्र—इसके पक्ष विपक्ष म दिये गये उपयुक्त तर्कों के निष्पक्ष विश्लेषण से और रूसी समाज की व्यावहारिक स्थिति से यही निष्कर्ष निकलता है कि रूस यदि आर्थिक दृष्टि से लोकतन्त्र के बहुत अधिक सन्निकट है तो राजनीतिक दृष्टि से लोकतन्त्र स दूर है। परन्तु किसी भी रूप म रूसी शासन व्यवस्था को फासीवादी अथवा नाजीवादी अधिनायकतन्त्र कहना उचित नही है क्योंकि रूसी सरकार चाह जनता के द्वारा बनाई हुई—और जनता की सरकार भले ही न हो पर वह जनता का हित साधन करने वाली सरकार अवश्य है। सोवियत 'अधिनायकतन्त्र' न रूसी जनता की विपुल सेवा की है, उसके हितो की साधना की है, समाज स बेकारी और बेरोजगारी को समाप्त किया है और प्रत्येक नागरिक को ऐसा अवसर सुलभ कर दिया है कि वह अपना जीवन यदि अधिक उच्च स्तर से नही तो मानवोचित स्तर से तो व्यतीत कर ही सके और उचित अवकाश का समय भी उस प्राप्त हो सके। जनता क कल्याण-साधन की दृष्टि से रूस म लोकतन्त्र का निश्चित रूप से अस्तित्व है इसस इन्कार करना सत्य से मुख मोड़ना है। आर्थिक परेशानियो से मुक्ति लोकतन्त्र की सबसे बडी कसौटी है और रूसी शासन व्यवस्था इस कसौटी पर विश्व की अन्य किसी भी लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था स अधिक खरी उतरती है।

पुनश्च लोकतन्त्र का अर्थ यदि सार्वजनिक कार्यों म जनता द्वारा अधिक स अधिक भाग लेना है तो इस अर्थ म भी सोवियत सघ विश्व का सबसे अग्रणी लोकतन्त्रीय देश है। रूस म सोवियतो के माध्यम स रूस की जनसख्या का विशाल भाग शासन कार्य मे भाग लेता है। सोवियतो के माध्यम से ही रूस के लोग वहाँ के आर्थिक जीवन के निर्माण का भी प्रभावशाली ढग से कार्य करते हैं। औद्योगिक

संघों, उपभोक्ता सहकारी संघों, युवक संगठनों आदि की रूसी जनता की सदस्यता इतनी है कि उसका अनुपात प्रायः अन्य सभी देशों से बढ़कर है।

वस्तुतः सरकार का स्वरूप ही केवल महत्वपूर्ण नहीं होता। सरकार किस कुशलता से काम कर रही है, समाज और व्यक्ति की उन्नति कितनी हो रही है, यह अधिक महत्वपूर्ण है और रूसी शासन व्यवस्था इस दृष्टि से विश्व की अनेक अग्रणी लोकतन्त्रात्मक शासन व्यवस्थाओं से श्रेष्ठ है। पाश्चात्य विद्वानों का यह आरोप कि रूसी शासन के अन्तर्गत व्यक्तित्व का विकास सम्भव नहीं है भ्रमात्मक है, क्योंकि बिना व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के विज्ञान, कला आदि के क्षेत्र में उतनी उन्नति प्राप्त करना असम्भवप्राय है जितनी रूस में हो चुकी है। ड्रिजर (Dreiser) के शब्दों में—"रूस बौद्धिक कला और ललित कला सम्बन्धी तथा व्यावहारिक सफलताओं के दृष्टिकोण से विश्व का सर्वश्रेष्ठ देश है।"

फिर यह भी ध्यान रखना चाहिए कि लोकतन्त्र शासन का आधार जन-इच्छा होती है। सोवियत रूस में साम्यवादी शासन स्थापित हुए आज लगभग 54 वर्ष हो गये हैं और इस लम्बी अवधि में जनता ने कोई ऐसा प्रदर्शन नहीं किया है जिससे यह संकेत मिलता हो कि रूसी नागरिक साम्यवादी व्यवस्था के विरोधी हैं। इस आधी शताब्दी के रूसी सामाजिक व नागरिक जीवन के अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकालना अनुचित नहीं होगा कि रूस के साम्यवादी शासन को वहाँ के नागरिक हृदय से स्वीकार करते हैं और वह एक प्रकार से उनका अपना शासन है। इस सम्बन्ध में यह स्मरणीय है कि रूस के साम्यवादी स्वयं अपने देश की व्यवस्था को अधिनायकतन्त्रीय मानते हैं, परन्तु साथ ही उनका मत है कि सर्वहारा वर्ग का होने के कारण वह अधिनायकतन्त्र होते हुए भी लोकतन्त्र है। रूसी शासन-व्यवस्था वास्तव में सार्वजनिक समर्थन प्राप्त एकाधिकारतन्त्र कही जा सकती है। रूस की लोकतन्त्र की कल्पना में जनता और उसके द्वारा सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने पर बल दिया जाता है। रूसी लोग अपने द्वारा निर्वाचित उस नेतृत्व के नियन्त्रण में आस्था रखते हैं जो सार्वजनिक हित में शासन करता है।

परन्तु केवल आर्थिक लोक कल्याण और सार्वजनिक हित की साधना को ही पूर्ण लोकतन्त्र नहीं कहा जा सकता। व्यक्ति की स्वतन्त्रता की सम्पूर्ण कसौटी आर्थिक स्वतन्त्रता ही नहीं है। व्यक्ति की राजनीतिक स्वतन्त्रता भी लोकतन्त्र का अत्यधिक महत्वपूर्ण पहलू है जिसमें कई प्रकार की स्वतन्त्रताएं सम्मिलित होती हैं। चूंकि रूस में वैचारिक तथा वैयक्तिक स्वतन्त्रता और राजनीतिक संगठन की व अन्य सम्बन्धों की स्वतन्त्रता व्यावहारिक दृष्टि से लगभग पूरी तरह प्रतिबन्धित है, अतः इस दृष्टि से रूसी शासन व्यवस्था लोकतन्त्रीय नहीं ठहरती।

इस सम्पूर्ण विवेचन से हम इसी वस्तु स्थिति पर पहुँचते हैं कि सोवियत सरकार जनता की तथा जनता के लिए होते हुए भी अर्द्ध-लोकतन्त्रात्मक सरकार है। सोवियत रूस में परम्परागत प्रकार का लोकतन्त्र नहीं है जिसकी तुलना पश्चिमी लोकतन्त्रों से की जा सके। सोवियत शासन व्यवस्था को एक 'नये प्रकार के प्रजातन्त्र' का प्रयोग कहना सम्भवतः अधिक ठीक होगा।

EXERCISES

Chapter I

1 Trace the Constitutional Development of Soviet Russia till to day

आज तक सोवियत रूस के सांविधानिक विकास का वर्णन कीजिये ।

2 *Mention the salient features of the Constitution of the* U S S R adopted in 1936

1936 के सोवियत संविधान की विशेषताओं को बतलाइये ।

Chapter II

1 Comment on the view that the Soviet Union is a federal State with a unitary bias

इस कथन की समीक्षा कीजिये कि सोवियत संघ एक संघात्मक राज्य है जिसका झुकाव एकात्मकता की ओर है ।

2 Examine the distribution of powers and functions between the U S S R and its component units *Do you consider* the U.S S R to be a federal union ? If so, why ?

सोवियत रूस में संघ सरकार तथा एककों की सरकारों के बीच शक्तियों के विभाजन का विवरण दीजिये । क्या आप सोवियत रूस को एक संघ राज्य कह सकते हैं ? यदि हां तो कारण बतलाइये ।

Chapter III

1 Examine the fundamental Rights and Duties as embodied in the Constitution of the U S S R How far they are effective ?

सोवियत संविधान में उल्लिखित मौलिक अधिकारों एवं कर्त्तव्यों की समीक्षा कीजिये । ये कहाँ तक प्रभावपूर्ण हैं ?

2 Examine the nature and reality of the fundamental rights in the U S S R

सोवियत संविधान के मौलिक अधिकारों की वास्तविकता तथा स्वभाव का विवेचन कीजिये ।

Chapter IV

1 Describe the organisation, composition and functions of the Supreme Soviet of the U S S R

सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत के संगठन रचना तथा कार्यों का विवरण दीजिये ।

2 Discuss the Legislative procedure of the Supreme Soviet

सर्वोच्च सोवियत की विधायी प्रक्रिया का वर्णन कीजिये ।

3 "The Supreme Soviet, as it is more often called the Supreme Council is *regarded* as the highest organ of State power in the U S.S R. " Discuss

"सर्वोच्च सोवियत, जिसे सर्वोच्च परिषद् भी कहते हैं, सोवियत रूस राज्य शक्ति का सर्वोच्च अंग है ।" इस कथन की विवेचना कीजिये ।

संघ, उपभोक्ता सहकारी संघ, युवक संगठनों आदि की रूसी जनता की सदस्यता इतनी है कि उसका अनुपात प्राय अन्य सभी देशों से बढ़कर है।

वस्तुत सरकार का स्वरूप ही केवल महत्वपूर्ण नहीं होता। सरकार किस कुशलता से काम कर रही है, समाज और व्यक्ति की उन्नति कितनी हो रही है, यह अधिक महत्वपूर्ण है और रूसी शासन-व्यवस्था इस दृष्टि से विश्व की अनेक अग्रणी लोकतन्त्रात्मक शासन व्यवस्थाओं से श्रेष्ठ है। पाश्चात्य विद्वानों का यह आरोप कि रूसी शासन के अन्तर्गत व्यक्तित्व का विकास सम्भव नहीं है भ्रमात्मक है, *क्योंकि बिना व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के विज्ञान, कला आदि के क्षेत्र में उतनी* उन्नति प्राप्त करना असम्भवप्राय है जितनी रूस में हो चुकी है। ड्रिजर (Dreiser) के शब्दों में—"रूस बौद्धिक कला और ललित कला सम्बन्धी तथा व्यावहारिक सफलताओं के दृष्टिकोण से विश्व का सर्वश्रेष्ठ देश है।"

फिर यह भी ध्यान रखना चाहिए कि लोकतन्त्र शासन का आधार जन इच्छा होती है। सोवियत रूस में साम्यवादी शासन स्थापित हुए आज लगभग 54 वर्ष हो गये हैं और इस लम्बी अवधि में जनता ने कोई ऐसा प्रदर्शन नहीं किया है जिससे यह संकेत मिलता हो कि रूसी नागरिक साम्यवादी व्यवस्था के विरोधी हैं। इस आधी शताब्दी के रूसी सामाजिक व नागरिक जीवन के अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकालना अनुचित नहीं होगा कि रूस के साम्यवादी शासन को वहां के नागरिक हृदय से स्वीकार करते हैं और वह एक प्रकार से उनका अपना शासन है। इस सम्बन्ध में यह स्मरणीय है कि रूस के साम्यवादी स्वयं अपने देश की व्यवस्था को अधिनायकतन्त्रीय मानते हैं, परन्तु साथ ही उनका मत है कि सर्वहारा वर्ग का होने के कारण वह अधिनायकतन्त्र होते हुए भी लोकतन्त्र है। रूसी शासन-व्यवस्था वास्तव में सार्वजनिक समर्थन प्राप्त एकाधिकारतन्त्र कही जा सकती है। रूस की लोकतन्त्र की कल्पना में जनता और उसके द्वारा सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने पर बल दिया जाता है। रूसी लोग अपने द्वारा निर्वाचित उस नेतृत्व के नियन्त्रण में आस्था रखते हैं जो सार्वजनिक हित में शासन करता है।

परन्तु केवल आर्थिक लोक कल्याण और सार्वजनिक हित की साधना को ही पूर्ण लोकतन्त्र नहीं कहा जा सकता। व्यक्ति की स्वतन्त्रता की सम्पूर्ण कसौटी आर्थिक स्वतन्त्रता ही नहीं है। व्यक्ति की राजनीतिक स्वतन्त्रता भी लोकतन्त्र का अत्यधिक महत्वपूर्ण पहलू है जिसमें कई प्रकार की स्वतन्त्रताएं सम्मिलित होती हैं। चूंकि रूस में वैचारिक तथा वैयक्तिक स्वतन्त्रता और राजनैतिक संगठन की व अन्य समूहों की स्वतन्त्रता व्यावहारिक दृष्टि से लगभग पूरी तरह प्रतिबन्धित है, अतः इस दृष्टि से रूसी शासन व्यवस्था लोकतन्त्रीय नहीं ठहरती।

इस सम्पूर्ण विवेचन से हम इसी वस्तु स्थिति पर पहुँचते हैं कि सोवियत सरकार जनता की तथा जनता के लिए होते हुए भी अर्द्ध-लोकतन्त्रात्मक सरकार है। सोवियत रूस में परम्परागत प्रकार का लोकतन्त्र नहीं है जिसकी तुलना पश्चिमी लोकतन्त्रों से की जा सके। सोवियत शासन व्यवस्था को एक 'नये प्रकार के प्रजातन्त्र' का प्रयोग कहना सम्भवत अधिक ठीक होगा।

EXERCISES

r I

Trace the Constitutional Development of Soviet Russia till o day

आज तक सोवियत रूस के सांविधानिक विकास का वर्णन कीजिये ।

Mention the salient features of the Constitution of the U S S R adopted in 1936

1936 के सोवियत संविधान की विशेषताओं को बतलाइये ।

ter II

Comment on the view that the Soviet Union is a federal State with a unitary bias

इस कथन की समीक्षा कीजिये कि सोवियत संघ एक संघात्मक राज्य है जिसका झुकाव एकात्मकता की ओर है ।

Examine the distribution of powers and functions between the U S S R and its component units Do you consider the U S S R to be a federal union ? If so, why ?

सोवियत रूस में संघ सरकार तथा एककों की सरकारों के बीच शक्तियों के विभाजन का विवरण दीजिये । क्या आप सोवियत रूस को एक संघ राज्य कह सकते हैं ? यदि हां तो कारण बतलाइये ।

apter III

Examine the fundamental Rights and Duties as embodied in the Constitution of the U S S R How far they are effective ?

सोवियत संविधान में उल्लिखित मौलिक अधिकारों एवं कर्त्तव्यों की समीक्षा कीजिये । ये कहां तक प्रभावपूर्ण हैं ?

2 Examine the nature and reality of the fundamental rights in the U S S R.

सोवियत संविधान के मौलिक अधिकारों की वास्तविकता तथा स्वभाव का विवेचन कीजिये ।

Chapter IV

1 Describe the organisation, composition and functions of the Supreme Soviet of the U S S R

सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत के संगठन, रचना तथा कार्यों का विवरण दीजिये ।

2 Discuss the Legislative procedure of the Supreme Soviet

सर्वोच्च सोवियत की विधायी प्रक्रिया का वर्णन कीजिये ।

3 "The Supreme Soviet, as it is more often called the Supreme Council is regarded as the highest organ of State power in the U S.S R ' Discuss

'सर्वोच्च सोवियत, जिसे सर्वोच्च परिषद् भी कहते हैं सोवियत रूस की राज्य शक्ति का सर्वोच्च अंग है ।' इस कथन की विवेचना कीजिये ।

4 What limitations, if any, do you find on the supremacy of the Supreme Soviet of the U S S R ?
सर्वोच्च सोवियत की सर्वोच्चता पर कौन से प्रतिबंध हैं ?

5 Describe the Committee System as it obtains in the U S S R.
सोवियत रूस में प्रचलित समिति पद्धति की विवेचना कीजिये।

6 Describe and discuss the Soviet of Nationalities
राष्ट्रीयताओं की सोवियत का वर्णन कीजिये।

Chapter V

1 Describe the composition, powers and functions of the Presidium and show its relation with the Council of Ministers in U S S R
सोवियत संघ के प्रेसीडियम के संगठन, शक्तियों तथा, कृत्यों का वर्णन कीजिये और मन्त्रिपरिषद् से उसका सम्बन्ध बतलाइये।

2 How far do you agree with the statement that the Soviet Presidium is the unique institution in the World ?
आप इस कथन से कहां तक सहमत हैं कि सोवियत रूस की प्रेसीडियम संसार में एक अनोखी संस्था है ?

Chapter VI

1 Explain the composition, powers and functions of the Council of Ministers under the Soviet Constitution
1 सोवियत संविधान में मन्त्रि-परिषद् के संगठन शक्तियों तथा कार्यों की व्याख्या कीजिये।

2. To what extent does the Soviet Union possess a responsible parliamentary type of Government ? Compare and contrast it with that in Britain
सोवियत संघ में कहां तक एक उत्तरदायी संसदात्मक सरकार है ? ब्रिटिश व्यवस्था के साथ इसकी तुलना कीजिये।

Chapter VII

1 Discuss the purpose and organisation of Soviet Judiciary
सोवियत न्यायपालिका के उद्देश्य तथा संगठन का वर्णन कीजिये।

2 What are the distinguishing features of the Soviet Judicial System ?
सोवियत न्याय व्यवस्था की विशेषतायें क्या हैं ?

3 Compare the organisation and powers of the Supreme Court of the U S S R with that of the Federal Tribunal of Switzerland and Supreme Court of U S A
सोवियत संघ के सर्वोच्च न्यायालय के संगठन तथा शक्तियों की तुलना स्विस संघीय न्यायालय तथा अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय से कीजिये।

4 Examine the powers and position of the Procurator General of the U S S R
सोवियत सघ के महान्यायवादी को शक्तियां तथा स्थिति की समीक्षा कीजिये।

Chapter VIII

1 Write a short note on local government in the Soviet Union
सोवियत सघ मे स्थानीय शासन पर एक सक्षिप्त निबन्ध लिखिये।

2 Describe the salient features of the Constitutions of the Union Republics It is correct to call Russia a Federation ?
सोवियत समाजवादी गणराज्यों के सविधानों की प्रमुख विशेषतायें बतलाइये। क्या रूस को एक सघ कहना ठीक है ?

Chapter IX

1 What do you understand by the "Soviet System" ? How are the Soviets formed ? What are their functions and importance ?
'सोवियत प्रथा' से आप क्या समझते हैं ? सोवियतों का निर्माण कैसे होता है ? उनके कर्त्तव्य तथा उनका महत्त्व क्या है ?

2 "The Soviets are the State organs of the dictatorship of the proletariat ?" Discuss
सोवियतें ही सर्वहारावर्ग के अधिनायकवाद के शासन की उपकरण हैं।" विवेचना कीजिये।

Chapter X

1 "The Communist Party is the vanguard of the proletariat dictatorship and has assumed the ruling position in the Soviet Union " Discuss
"साम्यवादी दल सर्वहारा अधिनायकत्व का मार्ग-दर्शक तथा सोवियत सघ का वास्तविक शासक है।" विवेचना कीजिये।

2 Briefly describe the organisation of the Communist Party of the Soviet Union How far can this party be said to control the Government ?
सोवियत सघ के साम्यवादी दल के सगठन का सक्षिप्त वर्णन कीजिये। इस दल का शासन पर कहा तक नियन्त्रण है ?

Chapter XI

1 Discuss critically the view that democracy in U S S R is a veiled dictatorship
इस विचार की आलोचनात्मक समीक्षा कीजिये कि सोवियत प्रजातन्त्र एक आवरित अधिनायकतन्त्र है।

2 "A million times more democratic than the most democratic bourgeois republic Examine this claim with reference to the presence of democratic element in the constitution of the U S S R
बुर्जुआ प्रजातान्त्रिक गणतन्त्र से लाख गुना अधिक प्रजातान्त्रिक है।" सोवियत रूस के प्रसग मे इस कथन की समीक्षा कीजिये।

SELFCTED READINGS

1	Adams and others	Foreign Governments and their Backgrounds
2	Ogg and Zink	Modern Foreign Governments
3	Wheare	Federal Government
4	Williams, A R	The Soviets
5	Caster and Others	, Government of the Soviet Union 1954
6	Fainshold, M	How Russia is Ruled ?
7	Florinsky, M T	Russia - A Historyand an Interpretation, 1953
8	Harper, S N	The Government of the Soviet Union
9	Hazard, J H	The Soviet System of Government
10	Karpinsky, V	The Social and State Structure of the U S S R
11	Kirichinko, A D	Soviet State Law, 1960
12	Kulski W W	The Soviet Regime 1954
13	Scott, D.J R	Russian Political Institutions
14	Strong, A L	The New Soviet Constitution
15	Towster J	Political Power in the U S S R.
16	Vyshinsky, A Y	The Law of the Soviet State
17	Finer	The Governments of Europe
18	Ogg	European Governments and Politics
19	Neuman	European and Comparative Governments
20	Poliansky	The Stalin Constitution on Judiciary and the Procurator's Office
21	Berman, H.J	Justice in Russia, 1950
22	Sidney and Beatrice Webb	Soviet Communism-A New Civilization
23	Mikhailov, Nikolai	Sixteen Soviet Republics
24	Batsell, W R	Soviet Rule in Russia.
25	Gibberd	Soviet Russia
26	Rostow and Lewin	The Dynamics of Soviet Society

जापान का संविधान
(THE CONSTITUTION OF JAPAN)

'जापान में सम्राट और जनता एक है। सारी जनता उन आध्यात्मिक बन्धनों द्वारा सम्राट से सम्बद्ध है जिनकी जड़ें उनके हृदयों की तलों में गहराई से लगी हैं और यही एकता राज्य की स्थिति की नींव बनी है।"

—डा० कानामोरी तोकुजिरो

'जापान के प्राचीन संविधान के अन्तर्गत एक मन्त्रिपरिषद् थी, पर मन्त्रि परिषद्-व्यवस्था नहीं थी। वर्तमान संविधान सर्वाधिक स्वीकृत पाश्चात्य आधार पर एक संसदीय या मन्त्रिपरिषदात्मक व्यवस्था का उपबन्ध करता है।'

I

जापान के संविधान की विशेषताएं
(SALIENT FEATURES OF THE JAPANESE CONSTITUTION)

जापान अपने वतमान सविधान स पूर्व मेइजी सविधान (Meiji Constitution) द्वारा शासित था जो 1889 म लागू किया गया था और 1945 म जापान द्वारा मित्र राष्ट्रो के सामने आत्मसमपरण करन के पश्चात समाप्त हो गया था । अत वतमान सविधान का अध्ययन करन से पूव पृष्ठभूमि के रूप म इस मेइजी सविधान की रूपरेखा समझ लना उपयोगी रहेगा।

मेइजी सविधान एक लिखित सविधान था जिसने एकात्मक प्रणाली की स्थापना की थी। सरकार की समस्त शक्तियाँ—कायकारिणी, विधायी एव यायिक-केवल सम्राट म ही सगठित थीं । इस सविधान मे स्थानीय सम्राट को पूज्य एव अनुल्लघनीय (Sacred and Inviolable) घोषित किया गया था। स्वशासन का कही भी उल्लख नही था। सम्राट कानून से ऊपर था। वह साम्राज्य का प्रधान था और राजसत्ता के समस्त अधिकार उसी म केन्द्रित थे। सम्राट ही सनिक शक्तिया का प्रधान था । सम्राट के लिए अनुभवी राजनीतिज्ञा की जेनरो (Genero) नामक छोटी-सी सलाहकार समिति थी। सम्राट के अधीन इस समिति की इच्छा सव-सत्तावान थी। सम्राट जनरो की मत्रणा पर जापान के प्रधानमत्री को चुनता था और प्रधान मत्री अपने सहयोगिया का चुनाव करता था जो उसकी केबिनेट के सदस्य होत थे। मत्रिया के लिए ससद (Diet) का सदस्य होना आवश्यक नही था। जापान का राजनीति पर सनिक प्रभाव बना रहता था। ससद मे पराजित होन पर अथवा अविश्वास का प्रदशन होने पर भी केबिनेट अपना त्यागपत्र नही देना थी। केबिनेट के अतिरिक्त एक प्रिवी परिषद् (Privy Council) भी थी जिसम एक प्रसिडेन्ट, एक वाइस प्रेसिडेन्ट, 12 मन्त्रिगण और सम्राट द्वारा मनोनीत 24 सदस्य होते थे। प्रिवी परिषद केवल आवश्यकता के समय सम्राट को परामश देती थी। मन्त्रिगण परिषद् के पदेन

सदस्य होते थे। परिषद् में सदस्यों का कार्यकाल जीवन पर्यन्त था, इसलिए यह संस्था प्रजातन्त्र एवं संसदीय प्रणाली के प्रतिकूल थी।

जापान की व्यवस्थापिका को डायट (Diet) कहते थे। इसमें दो सदन थे। बड़े सदन का नाम 'पीयस सभा' (House of Peers) था जिसकी सदस्य संख्या 409 थी। छोटे सदन का नाम प्रतिनिधि-सभा (House of Representatives) था जिसमें 450 सदस्य थे। मेइजी संविधान के अन्तर्गत व्यवस्थापिका शासन का प्रभावशाली अंग नहीं थी। यद्यपि मन्त्रिमण्डल के निर्णयों और नीतियों का व्यवस्थापिका सर्वथा समर्थन करती थी, तथापि उसमें ऐसे दलों का नितान्त अभाव था जिनकी निश्चित एवं भिन्न नीतियाँ हों। यही नहीं, मन्त्रिमण्डल के निर्णयों को ठुकराने का अधिकार अन्य अधिशासी अंगों जैसे प्रिवी परिषद् को भी था। संक्षेप में डायट केवल मात्र एक परामर्शदात्री संस्था थी जिसका उपयोग केवल राज्य के प्रधान को अपने कर्त्तव्यों का पालन करने में सहायता एवं सलाह देना था। वस्तुतः प्रजातन्त्र के बाह्य आडम्बर के रूप में जापान में राजतन्त्र ही प्रचलित था।

मेइजी संविधान के अन्तर्गत एक सर्वोच्च युद्ध समिति (The Supreme War Council) की भी व्यवस्था थी। इस संविधान में सैनिक तत्वों का आधिक्य होने के फलस्वरूप सैन्यवाद का प्राधान्य था। मन्त्रिमण्डल में भी युद्ध एवं जल सेना के मन्त्री सैनिक अधिकारी ही नियुक्त किये जाते थे। सर्वोच्च युद्ध समिति में सेना के प्रधान अफसर होते थे। इस तरह शासन में नागरिक और सैनिक अधिकारों में प्रतिद्वन्द्विता को जन्म दिया गया था जो देश के लिए एक घातक नीति थी। नौकरशाही और सैन्यवाद के इन्हीं तत्वों ने जापान को अन्ततः साम्राज्यवाद के उस विनाशकारी विस्फोट की ओर धकेल दिया जो द्वितीय महायुद्ध के रूप में प्रगट हुआ और जिसने अन्त में जापान के चेहरे पर पराजय की कालिख पोत दी।

जापान के वर्तमान संविधान की विशेषताएँ

(Salient Features of the Modern Constitution of Japan)

द्वितीय महायुद्ध में फासिस्ट खेमे को पूरी तरह पराजय का मुख देखना पड़ा और अगस्त सन् 1945 में जापान ने मित्र राष्ट्रों के सामने आत्मसमर्पण कर दिया। पराजित जापान में मित्र राष्ट्रों के सर्वोच्च कमांडर जनरल मैकआर्थर ने 11 अक्टूबर, 1945 को जापानी कैबिनेट को बतला दिया कि देश के लिए नवीन संविधान अनिवार्य होगा। फलस्वरूप सरकार ने एक संवैधानिक समस्या की अनुसंधान समिति (Constitution Problem Investigation Committee) की स्थापना की लेकिन इसने कोई विशेष कार्य नहीं किया। नवीन संविधान यथार्थ में मैकआर्थर द्वारा ही जापानी मन्त्रिमण्डल के साथ बनाया

गया । संयुक्त राज्य अमेरिका के अनेक संविधान-वेत्ताओं को बुलवाकर नवीन संविधान तैयार करवाया गया । संविधान के अन्तिम प्रारूप का जापान की केबिनेट ने मार्च, 1946 में स्वीकार किया और कुछ साधारण परिवर्तनों के बाद नवम्बर, 1946 में डायट (जापानी संसद) द्वारा भी इसे स्वीकार कर लिया गया । तत्पश्चात् 3 मई 1947 को यह नवीन संविधान कार्यान्वित कर दिया गया जिसकी मुख्य विशेषताओं को हम संक्षेप में निम्नवत् प्रकट कर सकते हैं—

संक्षिप्त व सरल संविधान

जापान के नये संविधान को जापान का संविधान कहा जाता है, जब कि 1889 के संविधान को 'जापानी साम्राज्य का संविधान' का नाम दिया गया था । जापान के वर्तमान संविधान का आकार बहुत ही छोटा है । इसमें एक प्रस्तावना (Preamble) और 103 धारायें हैं । इसमें अमेरिकन ब्रिटिश एवं अन्तर्राष्ट्रीय सिद्धान्तों का समावेश किया गया है । इसके द्वारा जापान में प्रजातन्त्र की प्राप्ति का प्रशंसनीय प्रयत्न किया गया है । 11 अध्यायों का यह संविधान लगभग 20 पृष्ठों मात्र में है । इसकी भाषा बड़ी सरल और सुस्पष्ट है ।

संविधान एक सर्वोच्च कानून

नवीन संविधान जापान का 'सर्वोच्च कानून' (Supreme Law) है । शासन का कोई भी अंग संविधान के किसी भी उपबन्ध का उल्लंघन नहीं कर सकता । संविधान ने स्पष्ट शब्दों में घोषित किया है कि शासन की प्रत्येक शाखा के कर्मचारियों को संविधान को पूरी मान्यता देनी होगी, अर्थात् सम्राट मन्त्री संसद सदस्य, न्यायाधीश आदि इस संविधान के अधीन अपने क्षेत्रों में अपनी भूमिका निभायेंगे और संविधान की सीमाओं का उल्लंघन नहीं कर सकेंगे ।

अनुपम प्रस्तावना । जन प्रभुसत्ता एवं उदात्त आदर्शों की स्थापना

संविधान का प्रमुख आकर्षण इसकी प्रस्तावना है जिसमें जनता को *शक्ति का आदि स्रोत घोषित किया गया है । ऐसी सुन्दर प्रस्तावना अन्यत्र* देखने को कम ही मिलेगी । इस प्रस्तावना में—

1 सभी राष्ट्रों के साथ शान्ति एवं सहयोग रखने पर बल दिया गया है ।
2 युद्ध की निन्दा की गई है ।
3 शासन को एक पवित्र धरोहर (Sacred Trust) घोषित किया गया है ।
4 शासन-सत्ता का स्रोत जनता है और उसका संचालन भी जनता के प्रतिनिधियों को ही सौंपा गया है ।
5 जापान की जनता ने अपनी सुरक्षा एवं अपने बचाव के लिए विश्व

से शांतिप्रिय राष्ट्रों की न्यायभावना और सद्भावना में विश्वास प्रगट किया है।

6 जापान ने अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक व्यवस्था में एक सम्मानित स्थान प्राप्त करने की दृढ़ आकांक्षा प्रकट की है।

7 जापानी विश्व से दासता, अत्याचार, शोषण एवं असहिष्णुता को मिटाना चाहते हैं।

8 अन्त में, जापानी जनता अपने राष्ट्रीय सम्मान, दृढ़ संकल्प और समस्त-साधनों को उद्देश्य की सिद्धि में लगाने की प्रतिज्ञा करती है।

युद्ध का परित्याग

वर्तमान संविधान ने जापान को युद्ध करने के सर्वोच्च अधिकार से वंचित कर दिया है। संसार के अन्य किसी भी देश के संविधान में युद्ध के परित्याग की बात का समावेश नहीं किया गया है।

वास्तव में देखा जाए तो युद्ध त्याग का यह आदर्श बड़ा ही सुन्दर और अनुकरणीय है। लेकिन जब तक विश्व के अन्य राष्ट्र भी ऐसा करने को उद्यत न हों तब तक एक राष्ट्र द्वारा प्रगट किया गया इस प्रकार का निश्चय अव्यावहारिक ही प्रतीत होता है।

जनतन्त्र का समर्थक

वर्तमान संविधान में सच्चे प्रजातन्त्र की स्थापना के लिए अनेक प्रशंसनीय पग उठाये गये हैं। इसमें लोकप्रिय प्रभुता का समावेश (Assertion of Popular Sovereignty) किया गया है। सम्राट की वास्तविक शक्तियां छीन ली गई हैं। अब नेशनल डायट (जापान की संसद) शासन-सत्ता का सर्वोच्च अंग है। डायट के दोनों सदनों के लिए निर्वाचन की व्यवस्था है। निम्न सदन जनता के प्रत्यक्ष निर्वाचित सदस्यों से निर्वाचित होता है इसीलिये यह लोकप्रिय सदन है तथा ऊपर वाले सदन से अधिक शक्तिशाली है। कैबिनेट वास्तव में जापान की संसद के प्रति उत्तरदायी है। संविधान द्वारा सभी व्यस्कों को मताधिकार प्राप्त हो गया है। स्त्रियों को पहली बार मताधिकार प्रदान किया गया है। नागरिकों के अधिकारों और स्वतन्त्रताओं का भी संविधान में उल्लेख किया गया है।

एकात्मक संविधान

जापान का संविधान एकात्मक है। प्रशासन की दृष्टि से विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था अवश्य है, किन्तु शासन का स्वरूप एकात्मक ही रखा गया है। संविधान द्वारा शक्तियों का कोई विभाजन नहीं किया गया है। सम्पूर्ण शक्तियां केन्द्र से निकलती हैं। प्रान्त 'डायट' (Diet) के अधिनियमों से अपनी शक्तियां प्राप्त करते हैं और डायट की इच्छानुसार इन शक्तियों का

विस्तृत या संकुचित किया जा सकता है। प्रान्त अधीनस्थ इकाइयां हैं जिन्हें केवल वे ही शक्तियां प्रदान की गई हैं जो केन्द्रीय सरकार ने चाही हैं।

संसदीय शासन

संविधान जापान के लिए संसदीय शासन की व्यवस्था करता है। संसदीय शासन के अनुरूप जापानी राष्ट्र का अध्यक्ष सम्राट नामधारी कार्यपालिका है, जिसके हाथों में कोई वास्तविक शक्तियां नहीं हैं और जिसकी स्थिति अधिकांश रूप में ब्रिटिश राजा के ही समान है। अधिशासनिक सत्ता केबिनेट है, जिसका प्रधान प्रधान मन्त्री है।

संसदीय व्यवस्था के अनुरूप ही कार्यपालिका और व्यवस्थापिका में सामञ्जस्य की व्यवस्था की गई है। कार्यपालिका का चुनाव व्यवस्थापिका के सदस्यों में से होता है। प्रधानमन्त्री का चुनाव डायट ही करती है। अन्य मन्त्रियों का चुनाव प्रधानमन्त्री करता है जिनमें से अधिकांश का डायट का सदस्य होना अनिवार्य होता है। जापानी संविधान के अन्तर्गत जापान में डायट के गैर सदस्य व्यक्ति भी मन्त्री बनाये जा सकते हैं। ब्रिटेन में ऐसा नहीं हो सकता। संविधान यह भी घोषित करता है कि केबिनेट का उत्तरदायित्व डायट के प्रति होगा और डायट में विश्वास खो बैठने पर केबिनेट को त्यागपत्र दे देना होगा, यदि वह 10 दिन के अन्दर प्रतिनिधि सदन का भंग नहीं कर देगी।

न्यायपालिका की स्वतन्त्रता

संविधान में एक स्वतन्त्र सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की गई है। न्यायालयों के न्यायाधीश केवल महाभियोग के द्वारा ही अपने पद से हटाये जा सकते हैं और उनके कार्यकाल में तथा उनके वेतन में कमी नहीं की जा सकती है। कार्यपालिका को किसी अंग अथवा अभिकरण को अन्तिम शक्ति नहीं सौंपी गई है। सभी न्यायाधीश अपने कार्य में स्वतन्त्र हैं।

संविधान की धारा 81 के अनुसार न्यायिक पुनरावलोकन की भी व्यवस्था है अर्थात सर्वोच्च न्यायालय संविधान का रक्षक है और डायट द्वारा पारित कानूनों की संवैधानिकता की जांच करने का अधिकार रखता है। जापानी न्यायपालिका की एक अन्य विशेषता है—न्यायाधीशों की नियुक्ति पर जन साधारण का सामान्य निर्वाचन में अनुमोदन प्राप्त करना। इस प्रकार की व्यवस्था भारत, संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन आदि देशों के संविधान में उपलब्ध नहीं है।

अचल संविधान

जापानी संविधान अचल अथवा अनमनीय (Rigid) है और इसके संशोधन की कार्यविधि भी काफी कड़ी है। परन्तु यह किसी भी तरह से इतना कठिन नहीं है कि इसे संयुक्त राज्य की भांति व्यवहार में हो बड़ी कठिनता से लाया जा सके। जापानी संविधान के संशोधन का तरीका संविधान की धारा 96 में इस प्रकार दिया गया है—

संविधान में संशोधन के प्रस्ताव का आरम्भ डायट द्वारा किया जायगा, जिसके पक्ष में प्रत्येक सदन के कुल सदस्यों में से दो तिहाई अथवा उससे भी अधिक सदस्यों का मत होना आवश्यक है। उसके बाद संशोधन के प्रस्ताव पर लोक निर्णय (Referendum) कराया जायगा। लोक-निर्णय में भाग लेने वाले मतदाताओं की बहुसंख्या का मत संशोधन के पक्ष में होने पर संशोधन स्वीकृत होगा। उसके तुरन्त बाद सम्राट ऐसे संशोधन को जनता के नाम से संविधान के आवश्यक अंग के रूप में घोषित करेगा।"

स्पष्ट है कि जापान के संविधान में संशोधन करना सुगम नहीं है, क्योंकि डायट के दोनों सदनों के दो तिहाई बहुमत से पास होने पर भी संशोधित प्रस्ताव को जनता के समक्ष अनुमोदन के लिए रखा जाता है और यदि वे जनमत संग्रह (Referendum) में बहुमत से पास हो जाते हैं, तभी उनको स्वीकार किया जाता है।

मौलिक अधिकारों व कर्त्तव्यों का समावेश

संविधान में जनता के अधिकारों व कर्त्तव्यों की चर्चा तीसरे अध्याय में की गई है और 10 से लेकर 40 तक की धाराओं का सम्बन्ध इसी महत्वपूर्ण विषय से है। संविधान में घोषणा की गई है कि ये अधिकार शाश्वत और अनुल्लंघ्य' हैं तथा ये स्वयं संविधान द्वारा प्रदान किये गये हैं। संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों की सूची बहुत बड़ी है। भाषा और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, गैर कानूनी बन्दीकरण से मुक्त होने की स्वतन्त्रता, शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार, धार्मिक स्वतन्त्रता आदि विभिन्न अधिकारों की व्यवस्था संविधान में की गई है। संविधान प्रजाजनों के काम पाने के अधिकार को भी मान्यता देता है।

संविधान ने कुछ कर्त्तव्यों की भी व्यवस्था की है। उदाहरण के लिए संविधान की धारा 30 के अनुसार यह व्यवस्था है कि प्रजाजन कानून द्वारा निर्धारित करों का भुगतान करेंगे।

संयुक्त राज्य अमेरिका और भारत की व्यवस्था के विपरीत जापानी संविधान में सर्वोच्च न्यायालय को मूल अधिकारों का संरक्षक नहीं बनाया गया है।

द्वितीय सदन की रचना

ब्रिटेन, भारत, अमेरिका आदि देशों की भांति जापानी व्यवस्थापिका डायट के दो सदन हैं लेकिन डायट के दूसरे सदन की रचना का आधार उक्त तीनों ही देशों के द्वितीय सदन से भिन्न है। जापान का द्वितीय सदन भी जनता का प्रतिनिधि है और उसके सदस्य जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप में निर्वाचित किये जाते हैं। इस प्रकार जापान में रचना के दृष्टिकोण से दोनों ही सदनों में समानता स्थापित की गई है लेकिन शक्तियों की दृष्टि से वे समान नहीं हैं। द्वितीय सदन की शक्तियाँ प्रतिनिधि सदन की अपेक्षा कम हैं।

2

नागरिकों के अधिकार और कर्त्तव्य

(RIGHTS AND DUTIES OF THE CITIZENS)

सन् 1946 के जापानी सविधान म अधिकार पत्र (Bill of Rights) का समावश किया गया है जिसम प्रत्येक नागरिक को जीवन स्वतन्त्रता समानता शिक्षा, रोजगार आदि के विभिन्न मूलाधिकारा की व्यवस्था की गई है। यद्यपि 1889 के सविधान म भी मौलिक अधिकारा का समावश था लेकिन उसम यह अत्यन्त सूक्ष्म, अपूर्ण एव प्रभावहीन थे। नवीन सविधान के अन्तगत मूल अधिकारो की प्रभावपूर्ण व्यवस्था है और साथ ही साथ उनकी परिसीमनो (Limitations) का भी वर्णन कर दिया गया है। अधिकारो के साथ कतिपय कत्तव्या का भी उल्लेख है। अधिकारो का वर्णन पर्याप्त रूप से विस्तृत है। सविधान के एक सम्पूर्ण अध्याय म जनता के अधिकारो व कत्तव्यो का वर्णन दिया हुआ है। इस अध्याय म 10 से 40 तक अर्थात 31 धारायें हैं जिनम स कवल तीन धाराओ म ही कर्त्तव्या का वर्णन है शेष 28 धाराओ म अधिकारो का वर्णन किया गया है।

जापानी सविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारा मे वे सभी अधिकार सम्मिलित हैं जो अन्य प्रजातन्त्रीय देशो के सविधानो में पाये जाते है। पर दो ऐसे अधिकारो का भी वर्णन है जो दूसरे देशो के सविधानो म दिखाई नही पडते। यह अधिकार विदेश जाने और राष्ट्रीयता त्याग करने के है। अधिकारा के परिसीमन भी आयरलड या भारत के समान अधिक व्यापक नही ह। सकटकाल म उनके स्थगन आदि के लिए कोई विशेष उपबन्ध नही है।

अधिकार (Rights)

जापानी सविधान मे अधिकारो के वर्णन म कोई क्रम नही है। अत निश्चयपूर्वक यह कहना कठिन है कि सविधान कितने प्रकार के अधिकार प्रदान करता है ? फिर भी वर्णन की स्वतन्त्रता की दृष्टि से हम उसको निम्नांकित शीर्षको मे विभाजित कर सकते हैं—

वैयक्तिक अधिकार—सविधान की 13वी धारा म कहा गया है कि 'जनता के प्रत्येक सदस्य का व्यक्ति के रूप मे आदर किया जायेगा।

व्यवस्थापिका तथा अन्य शासन सम्बन्धी कार्यों में जीवन, स्वतन्त्रता तथा शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार जहां तक वह सार्वजनिक कल्याण में बाधक न हो मुख्य विचार का विषय होगा।" स्पष्ट है कि जापानी संविधान में व्यक्ति को समाज का अवयव (Organ) स्वीकार करते हुए उसको वैयक्तिकता (Individuality) का महत्त्व दिया गया है ताकि प्रत्येक नागरिक को अपने व्यक्तित्व (Personality) का विकास करने का पूर्ण अवसर प्राप्त हो सके।

समानता का अधिकार—जापानी संविधान की धारा 14 घोषित करती है कि 'कानून के अन्तर्गत सभी व्यक्ति समान हैं और जाति पाति, सामाजिक स्थिति या वंश उद्भव के कारण राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक विभेद नहीं किया जायेगा।' इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए राज्य को लॉर्ड की उपाधियों को मान्यता देने से निषिद्ध कर दिया गया है। संविधान ने 'पीयर" (Peer) की उपाधि को मान्यता नहीं दी है। साथ ही यह भी व्यवस्था की है कि यदि किसी व्यक्ति को कोई सम्माननीय उपाधि अथवा अन्य किसी प्रकार का आदर चिन्ह प्राप्त हो तो वह उसके आधार पर किसी विशेषाधिकार का प्रयोग वैधानिक रूप में नहीं कर सकेगा। साथ ही इस प्रकार की सम्माननीय उपाधियां केवल उसी व्यक्ति तक सीमित रहेंगी उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके उत्तराधिकारी को प्राप्त नहीं होंगी, जैसा कि ब्रिटेन में है।

धारा 24 के अनुसार विवाह केवल स्त्री पुरुष की सहमति से ही सकता है और उसे पति-पत्नि के समान अधिकारों के आधार पर पारस्परिक सहयोग स्थापित रखने का निर्देश है। धारा 24 ही यह उपबन्धित करती है कि राज्य पति-पत्नि के चुनाव, सम्पत्ति अधिकार उत्तराधिकार, निवास चुनाव, तलाक तथा विवाह और परिवार सम्बन्धी अन्य विषयों में वैयक्तिक प्रतिष्ठा और स्त्री-पुरुष की सारभूत समानता के दृष्टिकोण की विधि निर्माण करेगा।

धारा 24 के अनुसार उत्तरदायी विधि में लिंग भेद के आधार पर कोई अन्तर नहीं किया गया है और कृषि-भूमि तथा अन्य सम्पत्ति में स्त्री-पुरुष को समान अधिकार दिये गये हैं लेकिन व्यावहारिक रूप में प्राय लड़कियां पिता की सम्पत्ति में भाग नहीं लेतीं। जापान में वेश्या-वृत्ति निषेध करने वाली विधि भी लागू कर दी गई है और अन्य प्रकार की समानताओं को भी स्थापित करने का प्रयत्न किया गया है। उल्लेखनीय है कि अधिकांश जापानी स्त्रियां अपने अधिकारों के प्रयोग की ओर ध्यान नहीं देतीं।

राजनीतिक अधिकारियों को चुनने व हटाने का अधिकार—संविधान की धारा 15 के अनुसार सार्वजनिक अधिकारियों के निर्वाचन के सम्बन्ध में जापानी प्रजाजनों को सार्वभौम वयस्क मताधिकार प्रदान किये हैं। ...

निर्वाचनों में गुप्त मतदान की व्यवस्था की गई है क्योंकि इसके अभाव में व्यक्तियों को अपने अन्तःकरण के अनुसार मत देने की स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं हो पाती।

याचिका का अधिकार—धारा 16 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को क्षतिपूर्ति के लिए सार्वजनिक अधिकारियों के निष्कासन के लिए कानूनों, अध्यादेशों या विनियमों के निर्माण या विखण्डन या संशोधन के लिए तथा अन्य इसी प्रकार के मामलों के लिए शान्तिपूर्वक याचना करने का अधिकार दिया गया है और यह स्पष्ट कर दिया गया है कि ऐसी याचिका के करने के कारण किसी व्यक्ति के विरुद्ध विभेद नहीं किया जायेगा।

यह अधिकार विशेष उपयोगी सिद्ध नहीं हो पाया है क्योंकि संयुक्त राज्य अमरिका की ही भाँति जापान में भी व्यवस्थापिका प्रत्येक अधिवेशन में हजारों याचिकायें प्राप्त करती है जो उसके द्वारा समितियों को भेज दी जाती है और अधिकांशतः उन पर कोई कार्यवाही नहीं हो पाती।

क्षतिपूर्ति का अधिकार—संविधान अपनी धारा 17 और 40 के द्वारा नागरिकों को क्षति-पूर्ति प्राप्त करने का अधिकार देता है। धारा 40 में उल्लिखित है कि यदि कोई व्यक्ति गिरफ्तारी और नजरबन्दी के पश्चात निर्दोष घोषित कर दिया जाता है तो वह जिस कानून द्वारा उपबन्धित है, क्षतिपूर्ति हेतु राज्य को प्रार्थना कर सकता है।

शोषण के विरुद्ध अधिकार—संविधान की धारा 18 शोषण के विरुद्ध अधिकार प्रदान करती है। इस धारा के अनुसार किसी भी व्यक्ति को किसी भी तरह के बंधन में नहीं रखा जा सकता। किसी भी व्यक्ति से उसकी सम्मति के बिना बलपूर्वक कोई काम नहीं कराया जा सकता। दूसरे शब्दों में बेगारी की प्रथा का निषेध कर दिया गया है। बलपूर्वक दासता केवल वहीं पर लोगों में लादी जा सकती है जो किसी अपराध के लिए दण्डित किये गये हो।

विचार अन्तःकरण एवं धर्म की स्वतन्त्रता का अधिकार—संविधान अपनी 19वी धारा में विचार अन्तःकरण और धर्म की स्वतन्त्रताओं की गारण्टी करता है। धारा 20 में उल्लिखित है कि किसी भी धार्मिक संगठन को कोई विशेषाधिकार नहीं होंगे और न वह कोई राजनीतिक शक्ति का प्रयोग करेगा। किसी धार्मिक कृत्य, पर्व रिवाज या अवसर पर भागी बनने को किसी भी व्यक्ति को बाध्य नहीं किया जायेगा। राज्य और उसका प्रत्येक विभाग धार्मिक शिक्षा एवं प्रत्येक प्रकार के धार्मिक कृत्यों से दूर रहेगा। स्पष्ट है कि जापान भी भारत की भांति एक धर्म निरपेक्ष राज्य है।

अभिव्यक्ति का तथा जीवन एवं स्वाधीनता का अधिकार—संविधान की धारा 21 जापानी प्रजा-जनों को संगठन, सभा भाषण मुद्रण तथा

अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता की व्यवस्था करती है। परन्तु इस अधिकार का कहीं दुरुपयोग न होने लगे, इसलिये इसे अप्रतिबन्धित नहीं छोड़ा गया है। असाधारण परिस्थिति अथवा संकटकाल में इस प्रकार की स्वतन्त्रता के स्थगन की प्रथा है।

जापान के संविधान की धारा 31 यह उपबन्धित करती है कि "किसी व्यक्ति को कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अतिरिक्त अन्य प्रकार से जीवन या स्वाधीनता से वंचित नहीं किया जायेगा और न उस पर फौजदारी कार्यवाही ही की जा सकेगी।" इस धारा से स्पष्ट है कि जापान में अवैध बन्दीकरण नहीं हो सकता। किसी भी व्यक्ति को कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही दण्डित किया जा सकता है या बन्दी बनाया जा सकता है।

जीवन और स्वाधीनता के अपहरण के सम्बन्ध में प्रक्रिया स्थापित करने के राजकीय अधिकार को धारा 32, 33, 34, 35, 36, 37, 38 और 39 के द्वारा परिसीमित किया गया है।

धारा 32 में कहा गया है कि किसी व्यक्ति का न्यायालय प्रवेश के अधिकार से इन्कार नहीं किया जायेगा। संविधान की 33वीं और 34वीं धारायें व्यक्तियों को अवैध गिरफ्तारी से मुक्ति दिलाती हैं। धारा 34 के अनुसार उपबन्धित किया गया है कि "किसी भी व्यक्ति को उस समय तक गिरफ्तार नहीं किया जा सकेगा जब तक उसे उसके अपराधों के बारे में बता नहीं दिया जाए। उसे अविलम्ब वकील करने की सुविधा प्रदान की जायेगी। किसी भी व्यक्ति को उस समय तक बन्दी नहीं बनाया जायेगा जब तक बन्दी बनाये जाने का पर्याप्त कारण मौजूद न हो। यदि व्यक्ति उस कारण को जानना चाहेगा तो वह उसके तथा उसके वकील की उपस्थिति में खुले न्यायालय में बतलाया जायगा।" धारा 35 में उल्लिखित है कि "सभी व्यक्तियों का अपना गृह, पत्रों और सम्पत्ति के सम्बन्ध में प्रवेश, तलाशियाँ और अभिग्रहण के विरुद्ध सुरक्षित होने का अधिकार बिना पर्याप्त कारण पर जारी किये गये और विशेष रूप से तलाशी किये जाने वाले स्थानों और अभिग्रहण की जाने वाली वस्तुओं का वर्णन करने वाले अधिपत्र या जैसा धारा 33 में उपबन्धित है के अतिरिक्त विनष्ट नहीं किया जाएगा।" उल्लेखनीय है कि दण्ड प्रक्रिया में इस धारा की व्यवस्थाओं का आदर किया गया है पर प्रशासनात्मक प्रक्रिया के अन्तर्गत बिना अधिपत्र (Warrant) के भी उपयुक्त कार्य किये जा सकते हैं।

धारा 36 के अनुसार लोक अधिकारियों द्वारा यातना देने या निर्दयतापूर्ण दण्ड देना वर्जित है। धारा 37 के अनुसार व्यवस्था है कि फौजदारी मामलों में अपराधी को शीघ्रातिशीघ्र सार्वजनिक सुनवाई की सुविधा प्रदान

की जायेगी । उस सब गवाहो की परीक्षा करने का अवसर दिया जायेगा तथा उसको सार्वजनिक व्यय पर अपनी ओर से गवाहो को प्राप्त करने की अनिवाय प्रक्रिया का अधिकार होगा । अभियुक्त को हर समय एक योग्य वकील की सहायता रहगी जिसे यदि स्वय वे प्रयत्ना द्वारा प्राप्त करने मे सफल न हो तो यह काम राज्य को सौंप दिया जायेगा ।"

धारा 38 म उपबधित है कि किसी व्यक्ति को अपने विरुद्ध प्रमाण देने के लिये विवश नही किया जायेगा । किसी दवाव यातना या धमकी अथवा दीघकालीन बदीकरण के कारण की गई अपराध स्वीकृति को प्रमाण नही समझा जायेगा । किसी व्यक्ति को उन मामला म दोषी नहीं ठहराया जायेगा और दण्डित नही किया जायगा जिसम प्रमाण केवल उस व्यक्ति की अपराध स्वीकृति ही हो ।'

धारा 39 के अनुसार किसी भी व्यक्ति को उस काय के लिये अपराधी नही ठहराया जायेगा जो किये जाने के समय कानून की दृष्टि से अपराधी न हो । एक अपराध के लिए किसी व्यक्ति पर दो बार मुकदमा नही चलाया जायेगा और न ही उसे दो बार दण्डित किया जायेगा ।

निवास व्यवस्था, विदेश-गमन, राष्ट्रीयता के परित्याग आदि के वैयक्तिक अधिकार—सविधान की धारा 22 उपबधित करती है कि 'प्रत्येक व्यक्ति को निवास के चुनने तथा परिवर्तित करने और उस सीमा तक जहा तक कि सावजनिक कल्याण म बाधक न हो व्यवसायो को चुनने की स्वाधीनता रहेगी । कोई व्यक्ति ऐसा व्यवसाय नही चुन सकेगा, जिससे सावजनिक हित म बाधा पडती हो ।

धारा 22 के ही अनुसार यह व्यवस्था भी की गई है कि सभी व्यक्तियो को विदेश जाने तथा अपनी राष्ट्रीयता का परित्याग करने की स्वतन्त्रता अक्षत रहेगी । विदेश जाने और राष्ट्रीयता त्याग करने के ये दोनो अधिकार अन्य देशो के सविधानो मे दिखाई नही पडते है ।

शिक्षा का अधिकार—नागरिको को नागरिकता के कार्यों के लिये उपयुक्त बनाने की दृष्टि से यह आवश्यक है कि उन्हे उन उपादानो से सुसज्जित किया जाए जिससे वे नागरिकता के कार्यों को कर सकें । इसके लिए शिक्षा परमावश्यक है । ■ ततोगत्वा शक्ति भी उन्ही के हाथो म होती है जो विचारो को समायोजित कर सकते हैं और उन्हे समझ सकते हैं । शिक्षा के अधिकार का अर्थ यह नही है कि सभी लोगो को समान शिक्षा दी जाए वरन् इसका अर्थ यह है कि एक आवश्यक स्तर तक सबको समान शिक्षा दी जाए और इसके उपरान्त प्रत्येक व्यक्ति को उसकी क्षमता के अनुसार आगे शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार हो । जापान के सविधान म इस सिद्धान्त का ही समथन किया गया है । धारा 23 म घोषणा कर दी गई है कि शिक्षा स्वतन्त्रता की

प्रत्याभूति की जाती है। धारा 26 में बतलाया गया है कि कानून द्वारा निर्धारित की गई साधारण शिक्षा को लड़कों और लड़कियों को प्राप्त कराना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य होगा और ऐसी अनिवार्य शिक्षा नि:शुल्क होगा। उल्लेखनीय है कि अशिक्षा का जापान में अब प्राय: लोप हो चुका है।

भौतिक कल्याण और सामाजिक सुरक्षा तथा कार्य का आधार—जापान का संविधान नागरिकों को भौतिक कल्याण सामाजिक सुरक्षा व कार्य के महत्त्वपूर्ण अधिकार प्रदान करता है। इन अधिकारों की प्रेरणा जापान को सम्भवत: समाजवादी सिद्धान्तों से प्राप्त हुई है। संविधान की धारा 27 में सभी व्यक्तियों को काम पाने का अधिकार प्रदान किया गया है। *इस धारा की शब्दावली इस प्रकार है—'सभी व्यक्तियों को काम पाने का* अधिकार रहेगा। कार्य करना उनका कर्त्तव्य भी होगा। वेतन काम करने के घंटे आराम की अवस्थायें तथा कार्य सम्बन्धी अन्य दशायें कानून द्वारा निश्चित हो जायेंगी। बच्चों का शोषण नहीं किया जाएगा। संविधान की धारा 25 भी सभी लोगों को स्वस्थ और सुसंस्कृत जीवन के अल्पतम स्तर का पालन करने का अधिकार प्रदान करती है और सरकार को यह निर्देश देती है कि वह जीवन के सभी क्षेत्रों में लोक कल्याण और सुरक्षा तथा लोक स्वास्थ्य की उन्नति और विस्तार करने में अपने प्रयासों का प्रयोग में लाये। पर सर्वोच्च न्यायालय ने अपने एक निर्णय में 25वी धारा की व्याख्या करते हुए घोषित किया है कि यह एक वैधानिक अधिकार न होकर एक नीति निर्देशक तत्त्व मात्र है। *इसलिये संविधान की धारा 28 कर्मचारियों को सगठित होने और* सामूहिक रूप से सौदा करने तथा कार्य करने का अधिकार देती है।

सम्पत्ति का अधिकार—सम्पत्ति का अधिकार एक विवादग्रस्त अधिकार है। इस अधिकार को उस समय तक न्यायोचित ठहराया जा सकता है जब तक वह एक व्यक्ति के विकास के लिए आवश्यक है और दूसरे व्यक्ति के समान विकास में बाधक न सिद्ध होता हो। अत: इस दृष्टि से सम्पत्ति का अधिकार कभी भी पूर्ण नहीं कहा जा सकता।

जापान का संविधान इसीलिये अत्यन्त रक्षित शब्दों में सम्पत्ति का अधिकार प्रदान करता है। धारा 29 में सम्पत्ति के स्वामित्व और धारणा के अधिकार को अलंघ्य घोषित किया गया है पर साथ ही यह भी कहा गया है कि सम्पत्ति का अधिकार लोक-कल्याण की अनुकूलता में कानून द्वारा परिभाषित किया जाएगा और व्यक्तिगत सम्पत्ति सार्वजनिक प्रयोग के लिए उचित क्षतिपूर्ति देकर राज्य द्वारा ली जा सकेगी।

कर्त्तव्य (Duties)

संविधान में अधिकारों के साथ साथ कर्त्तव्यों का भी वर्णन किया गया है जो निम्न हैं—

1 धारा 12 के अनुसार जनता सविधान द्वारा प्रत्याभूत अधिकारो को सतत् रूप से पोषित करने का प्रयत्न करेगी।

2 धारा 12 के ही अनुसार जनता अधिकारो के दुरुपयोग से दूर रहेगी।

3 जनता अधिकारो का लोक-कल्याण म प्रयोग करने के लिए उत्तरदायी होगी।

4 जनता अपने लडके लडकियो को विधि द्वारा निश्चित नि शुल्क अनिवाय शिक्षा देगी।

5 कोई बच्चा का शोषण नही करेगा।

6 सभी लोगो का काय का आभार है।

7 जनता कानून द्वारा निश्चित कर देने का कानून निभायेगी।

स्पष्ट है कि उपयु क्त कर्त्तव्य न तो अधिक है और न असाधारण ही। वस्तुत जापानी सविधान के अन्तगत नागरिको के कत्त व्यो की अपेक्षा अधिकारो पर बहुत अधिक बल दिया गया है।

नागरिकता सम्बन्धी व्यवस्था

जापान के सविधान की धारा 10 केवल इतना निश्चित करती है कि नागरिकता के सम्बन्ध मे कानून द्वारा व्यवस्था की जाएगी। तदनुरूप 1947 व 1950 म राष्ट्रीय कानून द्वारा नागरिकता के प्रश्न का समाधान किया गया है जिसके अनुसार नागरिकता प्राप्त करने के निम्नाकित नियम बनाये गये ह—

1 सवप्रथम जन्म सिद्धात है अर्थात् जापानी नागरिक के बच्चे जो जापान म पदा होगे वे जापानी नागरिक हो जायेंगे।

2 जो विदेशी स्त्रिया जापानी नागरिक स विवाह करेंगी, वे जापान की नागरिक हो जायेंगी। इसी प्रकार यदि कोई विदेशी जापानी स्त्री स विवाह करके उसके परिवार का सदस्य हो जाएगा या किसी जापानी के द्वारा गोद लिया जायगा तो वह भी जापानी नागरिक हो जाएगा।

3 देशीकरण (Naturalisation) द्वारा भी नागरिकता सम्बन्धी व्यवस्था की गई है। इसके अनुसार कुछ निश्चित दिनो के निवास के बाद कोई भी विदेशी जापानी नागरिकता प्राप्त करने का अर्जी दे सकता है और यदि वह जापान म पदा हुआ हो या उसका कोई सम्बन्धी हो तो अधिक सुविधा होती है।

यदि जापानी नागरिक के बच्चे ऐसे देश म हो जाए जहाँ जन्मजात नागरिकता प्राप्त होती हो (अमरिका कनाडा, मक्सिको, अर्जेंटाइना ब्राजील चिलि और पेरू म) तो व उसी देश के नागरिक मान जायेंगे जब तक कि वे जापानी नागरिक बनने की इच्छा प्रकट न करें, परन्तु दो साल देश के

अलावा अन्य देशों में जन्मे जापानी बच्चे तब तक जापानी नागरिक माने जाते रहेंगे जब तक कि वे अपनी जापानी नागरिकता का परित्याग न कर दें।

आलोचनात्मक मूल्यांकन
(A Critical Evaluation)

जापान के वर्तमान संविधान में नागरिकों के मौलिक अधिकारों को बड़ा उच्च स्थान प्रदान किया गया है और पूंजीवादी तथा साम्यवादी दोनों प्रकार के संविधानों में पाये जाने वाले अधिकारों को अंगीकृत किया गया है तथापि कुछ दृष्टियों से यह अधिकार-व्यवस्था त्रुटिपूर्ण है—

(1) मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए कोई विशेष एवं स्पष्ट व्यवस्था नहीं की गई है। संविधान नागरिकों को इस प्रकार के अधिकार नहीं सौंपता है कि वे उनकी रक्षा के लिए पूरा न्यायिक संरक्षण पा सकें। धारा 81 द्वारा अप्रत्यक्ष रूप में ही सर्वोच्च न्यायालय पर मौलिक अधिकारों की रक्षा का दायित्व सौंपा गया है।

(2) संविधान में अधिकारों का वर्णन क्रम ठीक नहीं है। उदाहरणार्थ धारा 23 और 26 शिक्षा के अधिकार से सम्बन्धित हैं और उन्हीं के बीच दाम्पत्य सम्बन्ध, जीवन-स्तर आदि के अधिकारों से सम्बन्धित अन्य धाराएं रखदी गई हैं।

(3) अधिकारों और कर्त्तव्यों को स्पष्ट रूप से पृथक पृथक नहीं किया गया है। साथ ही अधिकार सम्बन्धी कुछ धाराएं ऐसी हैं जिन्हें प्रवृत्त करने के लिए सरकार को विवश नहीं किया जा सकता। उदाहरणार्थ धारा 25 ऐसी ही है।

(4) अधिकारों की सूची में पुनरावृत्ति भी है और कुछ अनावश्यक बातों का समावेश भी है।

(5) संविधान की धारा 11 में व्यक्तियों के अधिकारों को पवित्र वस्तु माना गया है तथापि संविधान उनकी रक्षा की दृष्टि से उपयुक्त व्यवस्था नहीं करता। सरकार ने लोक स्वाधीनताओं के रक्षण के लिए आयोग और ब्यूरो स्थापित किये हैं, पर ये सर्वथा अपर्याप्त हैं। नई सार्वजनिक और व्यक्तिगत संस्थाओं में प्रतिबिम्बित आदर्शवाद व्यवहार में प्रवर्तित नहीं है।

(6) अनेक कानून एेसे पारित कर दिये गये हैं जो संविधान की धाराओं के प्रतिकूल कहे जाते हैं। संविधान में पाई जाने वाली अस्पष्ट शब्दावली बहुत कुछ इस कमी के लिए उत्तरदायी है।

(7) मौलिक अधिकार सम्बन्धी प्रत्येक धारा में उस अधिकार को परिसीमित करने वाले आधार का वर्णन नहीं किया गया है। कुछ धाराओं

म लोक-कल्याए के ग्राधार का वर्णन कर दिया गया है ग्रौर जिनम परिसीमन के ग्राधार का वणन नही है उनमे से कुछ तो वधानिक ग्रधिकार ही नही कहे जा सकते। उदाहरणाथ धारा 25 म वर्णित पूर्ण ग्रौर सुसस्कृत जीवन के निम्नतम स्तर को प्राप्त करने सम्बन्धी ग्रधिकार को सर्वोच्च न्यायालय ने 1948 के ग्रपन एक निएय म वधानिक ग्रधिकार मानने से इन्कार कर दिया था।

वस्तुत सविधान से प्रकट यही होता है कि जापान म व्यक्तियो के मौलिक ग्रधिकार सरकार पर ही छोड दिये गये हैं। सरकार से यह ग्राशा की गई है कि वह इन ग्रधिकारो का ग्रतिक्रमण नही करेगी । सवधानिक उपचार का ग्रधिकार न होने से ग्रन्य मौलिक ग्रधिकारो की सूची ग्रधूरी ही है। फिर भी यह निश्चित है कि सन् 1889 के सविधान की तुलना मे वतमान सविधान ग्रधिक सुरक्षित ग्रौर प्रभावी ग्रधिकारो की व्यवस्था करता है।

3

सम्राट
(THE EMPEROR)

सम्राट की प्राचीन स्थिति

जापान में प्रारम्भ से ही सम्राट का बहुत अधिक महत्त्व रहा है। पूर्वगामी संविधान के अन्तर्गत सम्राट साम्राज्य का अध्यक्ष था जिसमें प्रभुता के सभी अधिकार केन्द्रित थे। वह शासन का मुख्य स्तम्भ तथा आधार था लेकिन अपने अधिकारों का प्रयोग संविधान के अनुसार करता था। जापान की जनता सम्राट को ईश्वर का स्वरूप, पवित्र एवम् पूर्ण गुणवान समझती थी। वह सम्राट की आज्ञाओं को ईश्वरीय आज्ञायें मानती थी। आइटो के कथनानुसार राज्य की सभी विधायी व कार्यपालिका शक्तियाँ उसके हाथों में केन्द्रीभूत थीं। देश के राजनैतिक जीवन के सभी सूत्र उसके नियन्त्रण में इस प्रकार थे जैसे कि शरीर के सभी अंगों पर मस्तिष्क का नियन्त्रण रहता है।

द्वितीय महायुद्ध से पूर्व सम्राट की स्थिति वास्तव में महान थी। जापान की जनता सम्राट तथा अपने बीच पिता-पुत्र का सम्बन्ध समझती थी। उस समय जनता इस सम्बन्ध के संशोधन के विषय में सोच भी नहीं सकती थी।

सम्राट की वर्तमान स्थिति

वैधानिक अध्यक्ष—द्वितीय महायुद्ध के बाद जापान में सम्राट और जनता के मध्य उपरोक्त संविधानिक सिद्धान्त में परिवर्तन आ गया। 3 मई, 1947 का नवीन संविधान कार्यान्वित किया गया और साथ ही सम्राट की स्थिति पूर्णतया बदल गई और उसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन आ गया।

इस नवीन संविधान के अन्तर्गत सम्राट का पद शक्ति का पद न रहकर वैधानिक अध्यक्ष का पद ही रह गया है। सम्राट अब शासन का अध्यक्ष न रहकर राज्य का प्रतीक मात्र है। अब राज्य की सर्वोच्च सत्ता सम्राट में निहित न रहकर प्रजाजनों में निहित है। सम्राट पद के मूल में प्रजाजनों की इच्छा है अर्थात् जनता ही सम्राट की इच्छा का स्रोत है। शासन कार्य में किसी प्रकार की पहल

अब सम्राट की चर्चा न रही हो सकती, क्योंकि वे शासन सम्बन्धी कोई भी कार्य व्यक्तिगत रूप में सम्राट नहीं करता।

सम्राट की संवैधानिक स्थिति में इस परिवर्तन का ही यह परिणाम निकला है कि सम्राट के विषय में प्रचलित नाना अन्धविश्वासों, प्रथाओं और कहानियों की समाप्ति हो गई है। अब सम्राट के विषय में वाद-विवाद किया जा सकता है उसकी व्यक्तिगत एवं सम्मानित आलोचना हो सकती है। युद्ध से पूर्व ऐसा करना असम्भव था। इसका परिणाम यह निकला है कि सम्राट को ईश्वरीय रूप में न मानकर उसे एक मानव बनाने का प्रयास किया गया है। आज सम्राट जनता के निकट आता जा रहा है।

इसके अतिरिक्त वर्तमान संविधान के अन्तर्गत सम्राट को परामर्श देने वाली पूर्वगामी संस्थाओं जुशिन और प्रिवी कौंसिल का अन्त हो गया है। 'संवैधानिक दृष्टि से अब सम्राट का शासन में भाग ब्रिटेन के राजा के समान रह गया है। कुलीनतन्त्र शासन समाप्त हो गया है तथा सम्राट को प्रभावित करने वाले अन्य आन्तरिक अंगों को कानून द्वारा मिटा दिया गया है।'

यथानुगत नव-संविधान की धारा 2 व्यवस्था करती है कि साम्राज्यीय सिंहासन राजवंशपरम्परानुकूल होगा और उसका उत्तराधिकार डायट द्वारा पारित साम्राज्यीय गृह कानून के अनुसार विनियमित होगा।

अधिकार एवं कार्य—पूर्वगामी संविधान में कैबिनेट का कोई स्थान नहीं था जबकि वर्तमान संविधान में समस्त राजकीय कार्यों में कैबिनेट का परामर्श और स्वीकृति आवश्यक है तथा इन कार्यों के लिये कैबिनेट ही उत्तरदायी है। संविधान की धारा 4 में यह स्पष्ट रूप से उल्लिखित कर दिया गया है कि राजकीय मामलों में सम्राट केवल उन्हीं कार्यों को करेगा जिनकी संविधान में व्यवस्था की गई है। शासन के सम्बन्ध में उसकी कोई शक्तियां न होंगी।

संविधान की धारा 7 में राजकीय मामलों से सम्बन्धित वे कार्य गिनाये गये हैं जिन्हें सम्राट जनता के नाम में करता है। इनमें से प्रमुख कार्य निम्न हैं—

1 संविधान के संशोधनों, कानूनों, केबिनेट के आदेशों एवं संधियों की घोषणा करना।

2 डायट का सत्र बुलाना, प्रतिनिधि-सदन का विघटन करना एवं डायट के सदस्यों के आम निर्वाचन की घोषणा करना।

3 राज्य के मंत्रियों की नियुक्ति करना और उनकी पदच्युति प्रमाणित करना।

4 कानून द्वारा व्यवस्थित अन्य अधिकारियों की नियुक्ति एवं पदच्युति को प्रमाणित करना।

5 राजदूतों एवं मन्त्रियों की शक्तियों तथा प्रमाण-पत्रों को प्रमाणित करना।

6 सम्मानसूचक उपाधियाँ देना।

7 विदेशी राजदूतों तथा मन्त्रियों का स्वागत करना एवं अन्य शिष्टाचार के कार्यों को करना।

8 साधारण तथा विशेष क्षमादान दण्ड को कम करने और अधिकारों का पुन प्रदान करने को पुन प्रमाणित करना।

9 प्राणदण्ड को कुछ समय के लिये स्थगित करने को प्रमाणित करना।

10 पुष्टिकरण आलेखों को प्रमाणित करना।

11 कानून द्वारा व्यवस्थित अन्य कूटनीतिक आलेखों को प्रमाणित करना।

उपर्युक्त सूची में वर्णित कार्यों के अतिरिक्त सम्राट को शासन के सम्बन्ध मे अन्य कोई कार्य नहीं करने पड़ते है। राज्य के संवैधानिक अध्यक्ष के रूप में सम्राट नियुक्ति सम्बन्धी कुछ कार्य अवश्य करता है। वह प्रधानमन्त्री एवं सर्वोच्च न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है। इस सम्बन्ध में संविधान की धारा 6 इस प्रकार है—"सम्राट डायट के निर्देशानुसार प्रधानमन्त्री और मन्त्रि मंडल के निर्देशानुसार सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्त करेगा।"

संविधान की धारा 4 के अनुसार सम्राट को अपने कृत्यों के सम्पादन के अधिकार का किसी और को सौंपने का भी अधिकार है। इसका आशय यह है कि संविधान द्वारा जिन कृत्यों की व्यवस्था की गई है उनको सम्राट स्वयं कर सकता है और यदि चाहे तो उन्हें किसी दूसरे व्यक्ति को भी सौंप सकता है। सम्राट के अस्वस्थ हो जाने की दशा में अथवा किसी कारण से कार्य करने में उसके असमर्थ हो जाने पर, एक संरक्षक की व्यवस्था की जा सकती है जो सम्राट के नाम से ही कार्य करेगा। संरक्षक को अपने काल में उन सभी कार्यों को करने का अधिकार होगा जिन्हें संविधान ने सम्राट को सौंपा है।

यह स्मरणीय है कि संविधान में सम्राट के जो उपरोक्त कृत्य बतलाए गए हैं वे प्रधानतः औपचारिक हैं, जिन्हें वह राज्य के अध्यक्ष के रूप में करता है। संवैधानिक धारा 3 में स्पष्ट कर दिया गया है कि सम्राट के कर्त्तव्य राजकीय मामलों से सम्बन्धित हैं और उन्हें भी वह केबिनेट के परामर्श व सहमति से ही कर सकता है और उनके लिए मन्त्रि मंडल (Cabinet) ही उत्तरदायी भी होगी।

संविधान की इस धारा से स्पष्ट है कि ब्रिटिश राजा की भांति जापानी सम्राट का भी किसी कार्य के लिए कोई उत्तरदायित्व नहीं होता। चूंकि उसके सभी काम मन्त्रियों द्वारा सम्पादित किये जाते हैं और उन कामों के लिए उत्तरदायित्व भी मन्त्रियों का ही होता है। संविधान ने सम्राट के कार्यों को स्पष्टतः प्रमाणित करके उसके लिये किसी प्रकार के अधिकारों की गुंजाइश नहीं छोड़ी है। डायट के अधिवेशन को आमन्त्रित करने तक का सम्राट का अधिकार व्यावहारिक दृष्टि से औपचारिक ही है क्योंकि संविधान की धारा 52 के अनुसार प्रतिवर्ष डायट का एक अधिवेशन आमन्त्रित करना अनिवार्य है। अतः सम्राट इच्छानुसार डायट को निलम्बित नहीं कर सकता, उसे वर्ष में कम से कम एक बार तो डायट को निश्चित रूप से आमन्त्रित करना ही पड़ेगा। फिर इसमें भी वह स्वेच्छा से कार्य नहीं कर सकता क्योंकि डायट का अधिवेशन प्रधानमन्त्री के कहने पर अवश्य ही आमन्त्रित करना होगा। यही बात प्रतिनिधि सदन के विघटन के सम्बन्ध में लागू होती है। यद्यपि संविधान में उल्लिखित है कि सम्राट प्रतिनिधि सदन को विघटित करेगा परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि वह अपनी इच्छा से कभी भी सदन को विघटित कर सकेगा। वास्तव में इस कार्य के सम्पादन में भी सम्राट मन्त्रि मण्डल के परामर्श पर ही निर्भर रहेगा और जब मन्त्रि मण्डल उसे कहेगा तभी वह सदन को विघटित कर सकेगा अन्यथा नहीं।

सम्राट सर्वाधिक सम्मानित, नैतिक और आध्यात्मिक व्यक्ति—वर्तमान संविधान में भी सम्राट जापान का सर्वाधिक सम्मानित व्यक्ति है। सम्राट अत्यन्त प्राचीन काल से राष्ट्र के इतिहास, उसकी संस्कृति और उसकी भावना, एकता का प्रतीक समझा जाता रहा है तथा वर्तमान संविधान भी उसे राष्ट्र और जनता की एकता का प्रतीक होने की घोषणा करता है। जापानवासी अपने सम्राट का सम्मान प्रजा द्वारा अपने माता पिता या सम्राट के प्रति किये जाने वाले सम्मान से अधिक ही करते हैं। जापानियों की अपने सम्राट के साथ ऐसी भावुकता का सम्बन्ध है जिसे [illegible] नहीं जा सकता।

जापान के इतिहास में सम्राट की [illegible] और आध्यात्मिक व्यक्ति के रूप में सत्व ही उच्चतम रहा है [illegible] पर वाद विवाद करते हुए [illegible] था, जापानियों की सम्राट के [illegible] है और उनकी यह भावना [illegible] और नैतिक है। जापानि, [illegible] किंचित मात्र भी [illegible] रखता है या नहीं।"

जापानी सम्राट की ब्रिटिश सम्राट से तुलना

ब्रिटन और जापान दोनों ही देशों में वैधानिक राजतन्त्र है। ब्रिटिश राजा और जापानी सम्राट दोनों ही अपने अपने राज्यों के नाम-मात्र के अध्यक्ष है। दोनों को ही व्यवहार में शासन सम्बन्धी शक्तियां प्राप्त नहीं हैं। पर यह साम्य होते हुए भी पदशक्तियों में ब्रिटिश राजा की स्थिति जापानी सम्राट की अपेक्षा कुछ दृष्टियों से अधिक महत्त्वपूर्ण है। प्रसिद्ध विद्वान सी० मैग्ना के शब्दों में "अब यह पूर्वापेक्षा अधिक स्पष्ट हो गया है कि जापान का सम्राट राज्य करता है शासन नहीं। ब्रिटन के सम्राट से भी उसकी शक्तियां बहुत कम हैं। ब्रिटन का सम्राट अब भी शासन के कार्यों में भाग लेता है। ब्रिटेन के सम्राट का अधिकार है कि ब्रिटेन का प्रधानमन्त्री उससे परामर्श ले। वह कुछ कार्यों को प्रोत्साहित कर सकता है तथा कुछ के विरुद्ध सावधान कर सकता है। जापान के सम्राट को इस प्रकार के कोई अधिकार प्राप्त नहीं हैं। दोनों की शक्तियों का अन्तर कुछ महत्त्वपूर्ण निम्नलिखित बातों से स्पष्ट हो जाता है—

सर्वप्रथम प्रधानमन्त्री की नियुक्ति को लिया जा सकता है। यह ठीक है कि राजा और सम्राट दोनों को ही इस विषय में व्यक्तिगत रुचि के अनुसार कार्य करने की स्वतन्त्रता नहीं है। ब्रिटिश राजा को उस व्यक्ति को प्रधान मन्त्री बनाना पड़ता है जो लोक सभा में बहुमत दल का नेता होता है और जापानी सम्राट को भी उस व्यक्ति को प्रधानमन्त्री नियुक्त करना होता है जिसका चुनाव डायट ने कर लिया है लेकिन इतनी समानता होने हुए भी इस विषय में ब्रिटिश राजा को कभी-कभी अपनी रुचि के अनुसार कार्य करने का अवसर मिल जाता है जबकि जापानी सम्राट को इस प्रकार के अवसरों का प्राप्त होना सम्भव नहीं है। विशेष परिस्थितियों में ब्रिटिश राजा को प्रधान मन्त्री की छांट के सीमित अधिकार और विवेक प्रयोग के अवसर मिल सकते हैं। लेकिन जापान का सम्राट किसी भी परिस्थिति में दलीय नेता को केबिनेट निर्माण के लिए आमन्त्रित नहीं कर सकता। जापान में प्रधानमन्त्री की छांट डायट द्वारा की जाती है और सम्राट को केवल उसकी नियुक्ति की औपचारिक रस्म पूरी करनी पड़ती है।

इसके अतिरिक्त ब्रिटेन में कुछ अभिसमयों (Conventions) के आधार पर ऐसा माना जाता है कि ब्रिटिश क्राउन को यह परमाधिकार (Prerogative) प्राप्त है कि वह हाउस आफ कामन्स के विघटन के लिए दिये गये परामर्श को अस्वीकार कर दे, किन्तु जापान का सम्राट डायट का विघटन करने से इन्कार नहीं कर सकता।

पुनश्च जापान का सम्राट राजनीतिक प्रश्नों पर सार्वजनिक रूप से मत प्रकट नहीं कर सकता। महत्त्वपूर्ण निर्णयों के करने में अपने प्रभाव का

प्रयोग भी नहीं कर सकता। इसके विपरीत ब्रिटेन के सम्राट को मन्त्रियों को चेतावनी व परामर्श देने का अधिकार प्राप्त है चाहे वे उन्हें मानने के लिए बाध्य न हों। साथ ही ऐसे भी अनेक अवसर आए हैं जब ब्रिटिश सम्राट अपनी राजनैतिक सूझ-बूझ, निष्पक्षता एवं प्रभाव के कारण राजनैतिक महत्वपूर्ण निर्णयों को एक सीमा तक प्रभावित कर पाया है।

परन्तु उपर्युक्त विवरण से यह नहीं समझना चाहिये कि वर्तमान संवैधानिक व्यवस्था हो जाने से जापान के सम्राट का महत्व बिलकुल समाप्त हो गया है। शासन के क्षेत्र में चाहे उसका प्रभाव लुप्त प्राय हो चुका है, उसका नैतिक प्रभाव पर्याप्त मात्रा है। मनागा के मतानुसार "सम्राट की शासनिक शक्तियों में लोप के कारण उसकी प्रतिष्ठा में कोई कमी नहीं हुई है। जहां तक जनता के सम्राट के प्रति रुख का सम्बन्ध है, आजकल भी कम से कम चिन्ह के रूप में सम्राट को ही राजा माना जा सकता है। सम्राट आज भी राष्ट्रीय राजनीति और राष्ट्रीय एकता का द्योतक है।"

सदस्यों को अधिकांश डायट के सदस्यों में से लिया जाए। इस व्यवस्था से यह निष्कर्ष निकल सकता है कि जापानी कैबिनेट में अनेक मंत्री डायट के बाहर से भी लिये जा सकते हैं और इस प्रकार मंत्रियों के दो वर्ग हो सकते है—एक वह जो डायट का सदस्य हो और दूसरा वह जो डायट का सदस्य न हो। लेकिन व्यावहारिक रूप यही है कि जापान में लगभग सभी मंत्रियों को डायट में से ही लिया जाता है, डायट के बाहर के व्यक्ति मंत्री बहुत कम बनते है। चूंकि उनकी संख्या केबिनेट में नगण्य होती है, अतः केबिनेट व्यवस्था की विशेषता का महत्वपूर्ण रूप से खण्डन नहीं होता।

कार्यपालिका का व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायित्व—व्यवस्थापिका के प्रति कार्यपालिका के उत्तरदायित्व का सिद्धान्त केबिनेट पद्धति का प्राण तत्व है। जापानी संविधान की धारा 66 में स्पष्टतः कहा गया है कि अपने सभी कार्यों के लिए केबिनेट डायट के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होगी। धारा 69 व्यवस्था करती है कि प्रतिनिधि सदन का विश्वास खो देने पर सम्पूर्ण केबिनेट को त्याग पत्र देना पड़ेगा यदि 10 दिन के भीतर प्रतिनिधि सदन का विघटन न कर दिया जाय।

वस्तुतः डायट को केबिनेट के ऊपर नियन्त्रण करने का वैसा ही अधिकार प्राप्त है जैसा संसदीय प्रणाली के देशों में व्यवस्थापिका को कार्यपालिकाओं पर प्राप्त होता है। डायट अनेक उपायों से केबिनेट पर नियन्त्रण रखती है। डायट के सदस्य मन्त्रियों से नीति-विषयक प्रश्न पूछते हैं जिनका उत्तर मन्त्रियों को देना पड़ता है। यद्यपि मन्त्री उत्तर देने के लिए सदैव बाध्य नहीं होते, तथापि सदस्यों के प्रश्न का भय उनकी स्वेच्छाचारिता पर अंकुश लगाये रहता है। डायट के सदस्य प्रश्न के अतिरिक्त मन्त्रियों की आलोचना भी करते है।

राजनीतिक सजातीयता—जापानी संविधान भी सामूहिक उत्तरदायित्व की व्यवस्था करता है। इस सामूहिक उत्तरदायित्व को सफल बनाने के लिए और मन्त्रियों के दृष्टिकोण में एकता बनाये रखने के लिए जापान में भी ब्रिटेन की ही भांति दल प्रथा का विकास हुआ है। राजनीतिक दलों का सरकार के निर्माण के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है और मन्त्रियों की नियुक्ति बहुत कुछ दलीय तथ्यों पर ही निर्भर करती है। डायट के वे सदस्य जो मंत्री बनाये जाते है, प्रायः एक ही राजनीतिक विचारधारा के होते है और इसीलिए वे एक इकाई के रूप में कार्य करते है। डायट के बाहर के व्यक्तियों में से नियुक्त किये जाने वाले मन्त्री इस बात के अपवाद हो सकते हैं, लेकिन ऐसे मन्त्रियों की संख्या सामान्यतः नगण्य अथवा शून्य ही रहती है।

संगठन-कार्य प्रणाली, अधिकार एवं कर्त्तव्य
(The Composition, Working, Powers & Functions of the Cabinet)

आकार एवं रचना

केबिनेट के आकार अथवा मन्त्रियों की संख्या एवं श्रेणियों के बारे में संविधान में विस्तार से वर्णन नहीं किया गया है। संविधान की धारा 66 में केवल यह व्यवस्था दी गई है कि प्रधानमन्त्री केबिनेट का अध्यक्ष होगा। उसके अतिरिक्त केबिनेट में कानून द्वारा की गई व्यवस्था के अनुसार राज्य के अन्य मन्त्री होंगे। इसी धारा के अनुसार यह व्यवस्था भी है कि प्रधानमन्त्री एवं सभी मन्त्रियों का असैनिक होना आवश्यक है। संविधान की धारा 67 के अनुसार प्रधानमन्त्री का नाम, डायट के सदस्यों में से डायट के संकल्प (Resolution) द्वारा तयार किया जाता है। प्रधानमन्त्री की छाँट के प्रश्न पर डायट के दोनों सदनों के मध्य मतभेद होने की सूरत में दोनों सदनों की संयुक्त समिति प्रयत्न करती है। यदि संयुक्त समिति के प्रयत्नों से भी सहमति प्राप्त न हो सके अथवा प्रतिनिधि सदन द्वारा नाम तय कर लेने पर आ विश्रामकाल को छोड़कर 10 दिन के मध्य कौंसिलर सदन नाम तय न कर सके तो संविधान की धारा 67 के अनुसार प्रतिनिधि-सदन के निर्णय को ही डायट का निर्णय समझ लिया जायगा। डायट द्वारा प्रधानमन्त्री का नाम तय हो जाने पर उसकी औपचारिक नियुक्ति सम्राट द्वारा की जाती है। इस धारा से स्पष्ट है कि प्रधानमन्त्री के नामांकन के विषय में सभासद सदन (House of the Councillors) की शक्तियाँ प्रतिनिधि सदन (House of Representatives) की तुलना में कम हैं।

अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति प्रधानमन्त्री द्वारा की जाती है। संविधान की धारा 68 के अनुसार अधिकांश मन्त्री राष्ट्रीय डायट के सदस्य होने चाहिए। मन्त्रियों को अपने पद से हटाने का अधिकार प्रधानमन्त्री को है।

अवधि

जापान की केबिनेट की भी कोई निश्चित अवधि नहीं है। वह डायट के निम्न सदन अर्थात् प्रतिनिधि सदन के बहुमत के समर्थन तक ही अपने पद पर बनी रह सकती है। यदि निम्न सदन केबिनेट के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास कर देता है अथवा अविश्वास प्रस्ताव को अस्वीकार कर देता है तो केबिनेट को दस दिनों के भीतर या तो स्वयं को त्यागपत्र दे देना चाहिये अथवा प्रतिनिधि सदन को भंग कर देना चाहिये एवं देश में दुबारा निर्वाचन कराने चाहिये। जब केबिनेट को त्यागपत्र देना होता है तो वह दोनों सदनों के अध्यक्षों को इस बात की लिखित सूचना देती है। यह सूचना प्राप्त होने पर डायट नये प्रधानमन्त्री को छाँटने का कार्य आरम्भ कर देती है।

संगठन एवं कार्यप्रणाली

केबिनेट का अध्यक्ष प्रधानमन्त्री होता है और प्रधानमन्त्री का कार्यालय ही सरकार का केन्द्रीय कार्यालय होता है। इस कार्यालय का मुख्य संचालक केबिनेट सचिवालय का निर्देशक (Director of Cabinet Secretariat) होता है। इसकी सहायता के लिये उप निर्देशक (Diputy Directors) होते हैं। सचिवालय केबिनेट की सभाओं का कार्यक्रम तैयार करता है, आवश्यक पत्र तैयार करता है एवं अन्य मामलों का प्रबन्ध करता है। सचिवालय के अलावा एक विधि निर्माण ब्यूरो (Bureau of the Legislation) भी होता है। इसका निर्देशक विधि निर्माण के सम्बन्ध में प्रधानमन्त्री एवं केबिनेट को कानूनी परामर्श देता है। मनक बोर्ड और कमीशन इस ब्यूरो के सहायक अङ्ग होते हैं।

केबिनेट की बैठकें साधारणतया सप्ताह में दो बार प्रधानमन्त्री की अध्यक्षता में प्रधानमन्त्री के सरकारी भवन में होती हैं। प्रधानमन्त्री की अनुपस्थिति में उपप्रधानमन्त्री सभापतित्व करता है।

केबिनेट की सभा के लिये कोई गणपूर्ति (Quorum) निश्चित नहीं है। यदि बहुमत से कोई निर्णय लिया जाता है तो अनुपस्थित सदस्यों के हस्ताक्षर बाद में कराये जा सकते हैं। केबिनेट के वाद विवाद गोपनीय होते हैं और कार्यवाही प्रकाशित नहीं की जाती।

केबिनेट मन्त्रियों के अधीन उपमन्त्री भी होते हैं। ये स्थायी सरकारी अधिकारी (Career Officials) होते हैं। इनका महत्त्व निरन्तर बढ़ता जा रहा है। इनकी बैठकों में हुए निर्णयों को केबिनेट की स्वीकृति पर ही लागू किया जा सकता है।

सी. यनागा के मतानुसार केबिनेट के कार्य दो प्रकार के होते हैं—(1) केबिनेट निर्णय (Cabinet decisions), एवं (2) केबिनेट समझौते (Cabinet Understanding)। महत्त्वपूर्ण प्रश्नों एवं संवैधानिक तथा कानूनी मामलों पर केबिनेट निर्णय करती है। अन्य साधारण मामलों पर केबिनेट के सदस्यों में आपसी समझौते होते हैं।

अधिकार एवं कार्य

संविधान की धारा 65 के अनुसार कार्यपालिका शक्ति केबिनेट में निहित की गई है। जापानी केबिनेट को संविधान से वास्तविक कार्यपालिका शक्ति प्राप्त है, जैसा कि व्यवहार में ब्रिटेन में है। केबिनेट के सभी नीति सम्बन्धी महत्वपूर्ण निर्णय एकमत से होते हैं और यदि किसी मन्त्री को ऐसा कोई निर्णय स्वीकार न हो तो उसे त्यागपत्र देना पड़ता है। केबिनेट के कार्यों को संक्षेप में निम्नवत् रखा जा सकता है—

प्रशासनिक अधिकार—सविधान के अनुसार देश की सम्पूर्ण प्रशासक शक्तियां केबिनेट में निहित है। वही इनका व्यावहारिक रूप में प्रयोग करता है। कबिनेट की प्रशासनिक शक्तियो को हम सक्षेप मे निम्नवत् गिना सकते है—

(1) केबिनेट राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओ पर विचार करती है तथा सर्व-सम्मति से निर्णय लेती है। नीति निर्धारण के सम्बन्ध मे उसके अधिकार अंतिम तथा पूर्ण है।

(2) अपने द्वारा लिये गये निर्णयो को क्रियान्वित करने तथा उन्हें अभिव्यक्त करने वाले कानूनो को लागू करने का काम केबिनेट का ही है।

(3) केबिनेट लोक-सेवको (Civil Servants) पर नियन्त्रण रखती है। उसे स्थायी तथा विशेष वर्गों की लोक सेवा के अधिकारियो की नियुक्ति का अधिकार भी प्राप्त है। कानून द्वारा निर्धारित नियमो के अनुसार वह सरकारी अधिकारियो को पदच्युत कर सकती है तथा उनके विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाही कर सकती है।

(4) राज्य के उच्च लोक सेवको और राजनीतिक पदाधिकारियो की नियुक्ति का भी अधिकार उसे ही प्राप्त है।

(5) विदेश-नीति का निर्धारण और सचालन करने का उत्तरदायित्व केबिनेट का ही है। विदेशो से सन्धि करने का उसे अधिकार है, किन्तु उन पर डायट की स्वीकृति लेनी पडती है। यह स्वीकृति सन्धि करने से पहिले या बाद मे ली जा सकती है।

(6) शासन के विभिन्न विभागो का मार्गदर्शन करने और उनके कार्यों म समन्वय लाने का मुख्य कार्य केबिनेट ही पूरा करती है।

विधायी अधिकार—कानून निर्माण मे प्रत्यक्ष सम्बन्ध न होने पर भी इस क्षेत्र म केबिनेट की भूमिका बडे महत्व की है। ससदीय व्यवस्था के अनुरूप जापानी केबिनेट भी विधायी क्षेत्र म व्यवस्थापिका को नेतृत्व प्रदान करती है। आवश्यक विधेयको का तैयार करने, डायट के समक्ष रखने और अपने बहुमत के बल पर उन्हें डायट से स्वीकृत करा लेने का सम्पूर्ण कार्य केबिनेट का ही है। उसे मन्त्रि मण्डलीय आदेश (Cabinet orders) भी जारी करने का अधिकार है। इन आदेशो का प्रभाव ससदीय कानूनो जैसा ही होता है। डायट को बुलाने, निम्न सदन को विघटित करने के लिए सम्राट को परामर्श देने, आम चुनावो की घोषणा करने तथा सविधान म सशोधन लाने के लिए आवश्यक कदम उठाने आदि के दायित्वो का निर्वाह भी केबिनेट ही करती है। एक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि जापानी कार्यपालिका को विधेयक के सम्बन्ध म निषेधाधिकार (Veto) का तथा अध्यादेश (Ordinances) निकालने का अधिकार नहीं है।

वित्तीय अधिकार–संविधान की धारा 83 ने राष्ट्रीय वित्त के प्रशासन का उत्तरदायित्व डायट पर डाला है, लेकिन व्यवहार में केबिनेट ही इस उत्तरदायित्व का अधिकांशत निवाह करती है। बजट तयार करने और उसे डायट के सामने रखने का काम केबिनेट का ही है। केबिनेट द्वारा तयार किये गये बजट में डायट प्राय नाममात्र ही हेर फेर करती है। आकस्मिक परिस्थिति में डायट द्वारा सुरक्षित धनराशि के व्यय का उत्तरदायित्व केबिनेट पर ही है, यद्यपि धन खच करने के बाद उसे अविलम्ब डायट की स्वीकृति लेनी पडती है। राज्य के सभी प्रकार के व्ययो और राजस्वा की जो वार्षिक रिपोट आडिट बोर्ड प्रस्तुत करता है उसे डायट के सामने पेश करने का काम केबिनेट का ही है। संविधान द्वारा केबिनेट पर ही यह भार डाला गया है कि वह नियत अवधि पर कम से कम वष में एक बार राष्ट्रीय वित्त के बारे में डायट और जनता के सामने रिपोट प्रस्तुत करे।

न्यायिक अधिकार—संविधान ने केबिनेट को सामान्य क्षमादान (General Amnesty), विशिष्ट क्षमादान (Special Amnesty), दण्ड को कम करने मृत्यु-दण्ड को अल्पकाल के लिए स्थगित करने तथा अधिकारों को पुन प्रदान करने आदि के प्रश्नो पर निणय देने का अधिकार दिया है। इस सम्बन्ध में केबिनेट द्वारा किये गये कार्यों को सम्राट प्रमाणित करता है।

उपरोक्त महत्वपूर्ण अधिकारो के अलावा केबिनेट को प्रतिनिधि सदन को भग करने का अधिकार भी प्राप्त है। प्रतिनिधि-सदन को भग करके वह हाउस आफ कौंसिलर्स (House of Councillors) का सकटकालीन अधिवेशन बुला सकती है। सारांशत, वर्तमान जापानी शासन-व्यवस्था का केबिनेट प्रमुख अग है और उसी के हाथ में व्यवहारत शासन की समस्त सत्ता है यद्यपि वह डायट के प्रति पूर्णतया उत्तरदायी है। यदि निम्न सदन में उसे बहुमत का समथन प्राप्त हो तो उसकी शक्ति बहुत बढ़ जाती है।

प्रधानमंत्री
(The Prime Minister)

नियुक्ति एवं योग्यता

संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार सम्राट उसी व्यक्ति को प्रधानमंत्री के पद पर नियुक्त करता है जिसका नामांकन डायट के दोनो सदन करते हैं। प्रधानमंत्री की नियुक्ति में सम्राट को व्यक्तिगत इच्छा अथवा रुचि के अनुसार काय करने का कोई अवसर प्राप्त होना सम्भव नहीं है।

संविधान द्वारा प्रधानमंत्री के लिए दो योग्यताएं निश्चित की गई हैं—

(क) उसे डायट का सदस्य होना चाहिए, एवं

(ख) उसे असैनिक (Civilian) होना चाहिए।

संविधानत प्रधानमंत्री डायट के किसी भी सदन का सदस्य हो सकता है पर चूंकि उसे मनोनीत करने में प्रतिनिधि सदन का शक्ति प्रभावशाली है

की अपेक्षा कुछ अधिक होती है, अतः यह आशा रहती है कि प्रतिनिधि सदन के सदस्य के प्रधानमन्त्री बनने की सम्भावनायें ही अधिक होगी।

स्थिति एवं शक्तियां

संविधान की धारा 65 के अनुसार राज्य की अधिशासी शक्ति केबिनेट में निहित है और केबिनेट का अध्यक्ष प्रधानमन्त्री होता है। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप में राज्य अधिशासी शक्ति पर अंतिम अधिकार प्रधानमन्त्री को ही प्राप्त है। डायट में बहुमत दल और जनता का निर्वाचित प्रतिनिधि होने के कारण उसे राष्ट्र का सर्वोच्च राजनीतिक नेतृत्व प्राप्त होता है। अपने नेतृत्व के लिए वह प्रत्यक्ष रूप से डायट के प्रति और अप्रत्यक्ष रूप से सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी होता है।

प्रधानमन्त्री की स्थिति और शक्तियों को हम निम्नानुसार व्यक्त कर सकते हैं—

मन्त्री मण्डल के निर्माण, जीवन और मरण का केन्द्र स्थल—मन्त्रिमण्डल में प्रधानमन्त्री की स्थिति सर्वोच्च होती है। वह मन्त्रियों को नियुक्त करता है और उनमें से एक को उप प्रधानमन्त्री बनाता है। मन्त्रियों के बीच विभागों के वितरण में उसका निर्णय अंतिम होता है। वही मन्त्रियों को क्रमबद्ध करके उन्हें ज्येष्ठता प्रदान करता है। वह अपनी इच्छानुसार मन्त्रि मण्डल में उलट फेर कर सकता है। मन्त्रिमण्डल की समस्त कार्यवाहियों का वह केन्द्र होता है। यह देखता है कि सब विभाग ठीक से काम कर रहे हैं या नहीं। मन्त्रि मण्डलीय बैठकों का सभापतित्व करने निरीक्षण करने और कार्यवाहियों का संचालन करने का अधिकार उसी का है। मन्त्रि मण्डल के निर्णयों और नीति निर्धारण में उसका सर्वोपरि हाथ रहता है। मन्त्रियों के कार्यों में वह सामञ्जस्य स्थापित करता है। कोई भी प्रशासनिक विभाग का मन्त्री अकेले ही कोई निर्णय नहीं कर सकता। किसी राज्य मन्त्री द्वारा जो निर्णय लिया जाता है उस पर मन्त्री के हस्ताक्षर होने के साथ साथ प्रधानमन्त्री के हस्ताक्षर होना भी अनिवार्य है। दूसरे शब्दों में मन्त्रि मण्डल का कोई भी निर्णय तभी मान्य समझा जाता है जब उस पर प्रधानमन्त्री के हस्ताक्षर हो जाय।

मन्त्रि मण्डल की सामान्य नीति का प्रतिनिधित्व भी प्रधानमन्त्री ही करता है। मन्त्रि मण्डल की ओर से डायट के सामने प्रस्तुत किये जाने वाले सभी पत्र आदि उसी के द्वारा पेश किये जाते हैं।

मन्त्रियों को पदच्युत करने का भी प्रधानमन्त्री को अधिकार है। संविधान की धारा 68 स्पष्ट उल्लेखित करता है कि प्रधानमन्त्री अपने विवेक द्वारा राज्य के मन्त्रियों का निष्कासन कर सकता है। सभी मन्त्रियों का भविष्य उसके साथ बंधा हुआ है। उसके त्याग पत्र के साथ पूरा मन्त्रि मण्डल टूट जाता है। यदि कोई मन्त्री उसके कहने पर त्याग पत्र नहीं देता तो वह सम्राट से कहकर मन्त्री को पदच्युत करा सकता है अथवा स्वयं

त्याग-पत्र दे कर अपने बहुमत के बल पर मन्त्रि मण्डल का पुनर्निर्माण कर सकता है।

दल का नेता—प्रधानमन्त्री शासन का प्रधान होने के अलावा बहुमत दल का नेता होता है। उसे दल का प्रतीक माना जाता है और आम चुनाव प्राय उसी के व्यक्तित्व को केन्द्र बना कर लड़ा जाता है। डायट म बहुमत दल के समर्थन पर ही वह और उसका मन्त्रि-मण्डल शासन की गृह तथा विदेश नीति का सफलतापूर्वक सचालन करता है। दलीय सगठन के कारण दल के सभी सदस्य उसकी आज्ञा का पालन करते हैं।

डायट का नेता—प्रधानमन्त्री डायट का, मुख्यत प्रतिनिधि सभा का नेता होता है। डायट म किसी भी महत्वपूर्ण विषय पर वह अन्तिम वक्ता और नीति का स्रोत है। प्रशासनिक नीतियो पर अन्तिम और अधिकृत भाषण प्रधानमन्त्री का ही होता है। वही विधियो के निर्माण वार्षिक बजट की तयारी सदन की कार्यवाही और व्यवस्था आदि के सम्बन्ध मे अन्तिम रूप से पथ प्रदर्शन करता है। यदि प्रतिनिधि सभा केबिनेट के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित करदे तो वह अपने साथियो सहित त्याग पत्र भी दे सकता है अथवा 10 दिन के भीतर प्रतिनिधि सभा को भग भी कर सकता है।

सम्राट एव मन्त्रि मण्डल के बीच कड़ी—प्रधानमन्त्री राजकीय मामलो म सम्राट और मन्त्रिमण्डल के बीच माध्यम का काय करता है। अन्य मन्त्रियो का व्यक्तिगत रूप से सम्राट से प्रत्यक्ष औपचारिक सम्बन्ध नही है। स्मरणीय है कि जापानी सम्राट का ऐसा कोई अधिकार सविधानत प्राप्त नही है कि वह भारतीय राष्ट्रपति के अनुसार प्रधानमन्त्री स किसी प्रकार की सूचना क मा ग करे।

अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिनिधि—प्रधानमन्त्री ही अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे अपने देश का सर्वोच्च और प्रभावशाली प्रतिनिधि है। वदेशिक नीति म उसके शब्द अन्तिम और अधिकृत माने जाते हैं। मुख्यत उसी के व्यक्तित्व और प्रभाव के आधार पर अन्य देशो स मत्रीपूर्ण आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित हो पाते हैं।

सकटकालीन अधिकार—भारत मे आपातकालीन [illegible] की हैं जिनका प्रयोग मन्त्रिमण्डल करता ह जबकि जापान के [illegible] व्यावहारिक दोनो ही दृष्टियो से आपातकालीन [illegible] निहित है जिनके प्रयोग का उत्तरदायित्व, मन्त्रिमण्डल [illegible] मन्त्री पर होता है।

स्पष्ट है कि जापान के [illegible] अत्यन्त महत्वपूर्ण और उच्च है। [illegible] भारतीय प्रधानमन्त्री क समान है। [illegible] उन सभी वाक्यो का [illegible] म लाये जाते हैं।

5

डायट (संसद)

(DIET)

जापान की संसद को अंग्रेजी भाषा में डायट (Diet) और जापानी भाषा में कोक्काई (Kokkai) कहते हैं। यह पर पश्चिमी विश्व की सर्वाधिक प्राचीन और अनुभवी व्यवस्थापिका है। इसकी स्थापना सन् 1889 में मेइजी संविधान के अन्तर्गत की गई थी। संसद के दो सदन थे—प्रथम प्रतिनिधि सदन (House of Representatives) और द्वितीय अभिजात सदन (House of Councillors)। प्रतिनिधि सदन का निर्वाचन सुविधा की दृष्टि से निर्वाचन क्षेत्रों से होता था पर प्रत्येक सदस्य सारे राज्य की ओर से बोलता था। मताधिकार केवल पुरुषों को प्राप्त थे। इसकी अवधि चार वर्ष थी पर यह सदन इससे पहले भी विघटित किया जा सकता था। अभिजात सदन एक स्थाई सदन था जिसमें केवल अभिजात वर्ग के ही व्यक्ति होते थे। यह 'युद्ध पूर्व की साम्राज्यीय संसद मूल रूप से एक मंत्रणा निकाय थी जिसने कार्यपालिका के कार्यों पर नियन्त्रण लगाने का प्रयत्न किया, परन्तु वह बहुधा असफल हुआ।' यह संसद अपने असीमित अधिकारों और सामन्तवादी अभिजात सदन के साथ सन् 1940 तक सफलतापूर्वक कार्य करती रही, पर उस वर्ष राजनैतिक दलों के अवैध घोषित हो जाने से सच्ची संसदीय प्रणाली का अन्त हो गया और सैनिक नेता देश के वास्तविक शासक बन गये।

द्वितीय महायुद्ध के बाद जापान का जो वर्तमान संविधान बना उसमें भी संसद का द्विसदनात्मक रूप बने रहने दिया गया है, लेकिन शक्तियों व संगठन की दृष्टि से यह रूप पूर्ववर्ती रूप से बहुत भिन्न रखा गया है। इसके अनुसार नई राष्ट्रीय डायट राज्य की शक्ति का सर्वोच्च अंग है। संविधान की धारा 41 में कहा गया है कि "डायट राज्य की शक्ति का सर्वोच्च अंग होगी और राज्य का एक मात्र विधि-निर्माण करने वाला अंग होगा।'

रचना

राष्ट्रीय डायट के दो सदन है—

1 प्रतिनिधि सदन (House of Representatives)

2 सभासद सदन (House of Councillors)

सविधान की धारा 43 के अनुसार दानो सदना के सदस्य निर्वाचित होते है, जो जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं। दाना सदनो के सदस्यो की सख्या कानून द्वारा निश्चित की गई है।

प्रतिनिधि सदन जापान की ससद का निम्न सदन है। इसमे 467 सदस्य है। पर यह सख्या सविधान द्वारा निश्चित नही है। इस ससदीय कानून द्वारा निश्चित किया गया है। प्रतिनिधि सदन के सदस्या के लिए सारा देश 118 निर्वाचन क्षेत्रो मे विभाजित है। निर्वाचन क्षत्र किसी प्रशासकीय सीमा पर प्राधारित नही है। प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र से एक से पाच सदस्य निर्वाचित किये जाते हैं किन्तु प्रत्येक मतदाता को केवल एक ही मत देने का अधिकार है। प्रत्येक सदस्य ग्रौसत रूप म सवा दो लाख व्यक्तियो की जनसख्या पर निर्वाचित किया जाता है।

प्रतिनिधि सदन का कार्यकाल 4 वर्ष है। 4 वर्ष की ग्रवधि के उपरांत नवीन सदन के लिए देश म चुनाव होना ग्रनिवार्य है। जब प्रतिनिधि सदन की ग्रवधि पूर्ण हो जाती है तो उसको भग करने की घोषणा सम्राट द्वारा की जाती है ग्रौर सम्राट द्वारा ही नवीन सदन के निर्वाचन के लिए ग्रादेश प्रसारित होते है। उनके ग्रादेश के प्रसारित होने क कुछ काल बाद नवीन चुनाव होने है। प्रतिनिधि सदन को ग्रवधि से पूर्व भी केबिनेट के परामर्श पर सम्राट द्वारा विघटित किया जा सकता है।

जापान के उच्च सदन का नाम सभासद सदन है। इसकी व्यवस्था नवीन सविधान के प्राचीन ग्रभिजात सदन के स्थान पर की गई है। सभासद सदन का निर्वाचन भी सार्वभौम वयस्क मताधिकार के ग्राधार पर प्रत्यक्ष रूप स होता है। प्रत्येक जापानी स्त्री-पुरुष जिसकी ग्रायु 20 वर्ष की है निर्वाचन मे मतदान का ग्रधिकारी है। इस सदन के 250 सदस्या म से 100 सदस्य तो राष्ट्रीय निर्वाचन क्षेत्रो (National Constituencies) से चुने जाते है ग्रौर शेष सदस्य क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रा (Prefectural Constituencies) स निर्वाचित होते है। क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रो ग्रर्थात् प्रीफक्चर को 2 स 8 तक प्रतिनिधि भेजने का ग्रधिकार है। प्रत्येक निर्वाचक दो मत प्रदान करता है—एक प्रीफेक्चर सदस्य के लिए ग्रौर दूसरा राष्ट्रीय सदस्य के लिए। सभासद सदन का निर्वाचन 6 वर्षों के लिए होता है। ग्राधे सदस्य प्रत्येक तीसरे वर्ष रिटायर होते रहते हैं ग्रौर उनके स्थान पर नये सदस्यो का चुनाव होता रहता है। यह स्थाई सदन है, जिसे भग नही किया जा सकता।

सदस्यो की योग्यतायें

डायट के सदस्या की योग्यतायें कानून द्वारा निश्चित की गई है—(1) प्रतिनिधि सदन और सभासद सदन के सदस्या की आयु क्रमश कम से कम 25 और 30 वर्ष होनी चाहिए, (2) डायट के सदस्य केवल जापान के जन्मजात सदस्य ही हो सकते ह।

जापान मे कोई भी सदस्य देश के किसी भी निर्वाचन क्षेत्र म खड़ा हो सकता है और उसके लिए अन्य योग्यतायें वही है जो मतदाताओ के लिए हैं। कोई भी व्यक्ति सदस्यता के लिए अयोग्य ठहराया जा सकता है यदि वह (i) जापानी सरकार म किसी लाभ के पद पर हो, (ii) न्यायालय द्वारा पागल करार दिया गया हो, (iii) दिवालिया हो (iv) जापान का नागरिक न हो अथवा (v) डायट के किसी कानून के अन्तगत अयोग्य सिद्ध हो गया हो।

वेतन और विशेषाधिकार

डायट के साधारण सदस्यो को 78 हजार येन मासिक वेतन मिलता है। सदस्या को सत्र के दिना मे प्रतिदिन भत्ता दिये जाने और पत्र व्यवहार आदि के लिए खर्चा देने की व्यवस्था है। निजी सचिव और कार्यालय रखने के लिए भी उन्हे कुछ खर्चा दिया जाता है। रल के पास और रिटायर होने वाले सदस्यो के लिए पेन्शन की भी व्यवस्था है।

डायट के सदस्या को सभवत अन्य किसी भी देश के विधायी सदस्या स अधिक सम्मान दिया जाता है। जापान मे उन्हे सावजनिक अधिकारी' कहा जाता है। सदस्या को डायट म भाषण का पूर्ण स्वत त्रता का अधिकार प्राप्त है। सदन म दिये गये भाषण और मतदान के लिए उनके विरुद्ध कोई कानूनी कायवाही नही की जा सकती। सत्र के दौरान उन्हे दण्डनीय अपराधो के सिवाय अन्य मामला के सम्बन्ध म बन्दी नही बनाया जा सकता। डायट म किये गये अवाछित आचरण के विरुद्ध अनुशासनात्मक कायवाही की जा सकती है।

कार्यविधि

डायट के तीन प्रकार के अधिवेशन होते हैं—साधारण असाधारण और विशेष। सम्राट के आदेश द्वारा डायट के सत्र की तारीख घोषित की जाती है। साधारण सत्र प्रतिवर्ष साधारणतया दिसम्बर म बुलाया जाता है जो लगभग 150 दिन तक चल सकता है। साधारण सत्र के साथ-साथ विशेष सत्र भी बुलाया जा सकता है। जब प्रतिनिधि सदन का आम चुनाव और काउंसिलर सदन का नियमित चुनाव हो तो जिस तारीख से दोना सदनो के सदस्या का कायकाल आरम्भ होगा उसके 30 दिन के भीतर डायट का विशेष सत्र बुलाया जायगा। इसके अलावा किसी भी सदन के कम से कम

चौथाई सदस्य अपने सदन के अध्यक्ष की कैबिनेट को लिखित प्राथना करके असाधारण सत्र को माग कर सकते है। ऐसी परिस्थिति म सरकार के लिए ऐसा सत्र बुलाना आवश्यक है। सरकार जब भी आवश्यक हो तभी महत्वपूर्ण अथवा आपातकालीन मामलो पर विचार करने के लिए असाधारण सत्र बुला सकती है। कौंसिलर सदन का असाधारण सत्र बुलाने के लिए प्रधानमन्त्री को अध्यक्ष से प्राथना करनी पडती है। इस प्राथना मे एकत्र होने की तारीख तथा विचारणीय विषयो का सकेत भी होता है।

सम्राट के आदेश मे दी गई तारीख पर डायट के सदस्य अपने अपने सदन म एकत्र होते हैं। पहले हो दिन प्रत्येक सदन को स्थान रिक्त होने की हालत मे, अपने अध्यक्ष व उपाध्यक्ष का चुनाव करना पडता है। चुनाव न होने तक सक्रेटरी जनरल अध्यक्ष का काय करता है। प्रत्येक सत्र के आरम्भ मे डायट का उद्घाटन समारोह होता है और इस अवसर पर सम्राट स्वय उपस्थित होकर अपना छोटा सा सदेश पढता है। सविधान की धारा 56 मे गणपूर्ति के विषय म कहा गया है कि किसी भी सदन मे उस समय तक कोई कायवाही आरम्भ नहो की जा सकेगी जब तक उस सदन के कुल सदस्यो के कम से कम एक तिहाई सदस्य उपस्थित न हो। प्रत्येक सदन मे सब मामलो का निर्णय उपस्थित सदस्यो के बहुमत के समथन से ही हो सकता है। यदि किसी स्थान पर सविधान कोई और व्यवस्था कर दे तो यह नियम लागू नही होगे। यदि किसी विषय पर समान मत आ जाते हैं तो सदन के अध्यक्ष को निर्णायक मत देन का अधिकार है।

पदाधिकारी

प्रत्येक सदन के जो अधिकारी होते हैं उनम प्रमुख ये है—अध्यक्ष उपाध्यक्ष, अस्थाई अध्यक्ष (President Protompore), स्थाई समितियो के सभापति तथा सेक्रेटरी जनरल। प्रतिनिधि सभा मे अध्यक्ष को स्पीकर और सभासद् सदन के अध्यक्ष को प्रसीडेन्ट कहा जाता है।

सदनो की प्रथम बठक होन पर सदस्यो द्वारा अपने म से अध्यक्षों का चुनाव करना होता है। सभासद सदन मे अध्यक्ष का चुनाव गुप्त मतदान के द्वारा और प्रतिनिधि सदन के अध्यक्ष का चुनाव सदन के निर्णय के अनुसार गुप्त या हस्ताक्षरित मत-पत्र द्वारा होता है। इसके उपरान्त इसी रीति से उपाध्यक्ष निर्वाचित कर लिया जाता है। अध्यक्षो के चुनाव के समय पूव अध्यक्ष सदन का सभापतित्व करते हैं। पूर्व अध्यक्षो की अनुपस्थिति म पूव उपाध्यक्ष और उनकी भी अनुपस्थिति मे सक्रेटरी जनरल सभापति का आसन ग्रहण करते हैं। सेक्रेटरी जनरल या महा-सचिव भी सदस्यो द्वारा चुने जाते हैं।

अध्यक्षों के अधिकार और उनकी स्थिति

अध्यक्षों को अपने अपने सदन में अनेक अधिकार प्राप्त हैं। वे सदन की बैठकों की अध्यक्षता करते हैं और उनके बाहर उनका प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रत्येक अध्यक्ष अपने सदन की सदन व्यवस्थापिका समिति (House of Management) के परामर्श से अपने सदन की समितियों के सदस्यों को मनोनीत करते हैं और एक सदस्य को एक समिति से दूसरी समिति में स्थानान्तरित कर सकते हैं। सदन के निर्देश से वह समितियों के अध्यक्षों को भी मनोनीत कर सकते हैं और समितियों के अध्यक्ष प्रायः सदन के अध्यक्ष द्वारा ही मनोनीत किये जाते हैं।

सदन का अध्यक्ष ही सदन के सदस्यों के स्थान नियत करता है। वही सदन का कार्यक्रम निर्धारित करता है, विधेयकों को विषयानुसार समितियों के हवाले करता है, प्रश्नों तथा वाद विवादों के लिए समय निर्धारित करता है और उसी के निश्चय पर वाद विवादों का अन्त होता है। सदन में शांति और सुव्यवस्था रखता है, मन्त्रियों को संसद में सहायता देने के लिए सरकारी सदस्यों की नियुक्ति पर स्वीकृति देता है, सदन की बैठक न होने के समय सदस्यों द्वारा त्यागपत्र दिये जाने पर उस में दूर करता है और किसी विधेयक या प्रस्ताव पर समान मत आने पर अपना निर्णायक मत देता है। वही यह निश्चय करता है कि किसी विषय पर सदन का मत ध्वनि-मत से, सदस्यों को खड़ा करके, हस्ताक्षरित मतपत्र या गुप्त मतदान—किस पद्धति से लिया जाए और सदस्यों का तदर्थ भाना देता है।

सदन का अध्यक्ष सदस्यों के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही कर सकता है। सदन की पुलिस अध्यक्ष के अधीन होती है और आवश्यकता पड़ने पर वह किसी सदस्य को गिरफ्तार भी कर सकती है। वह सदन से प्रायः अनुपस्थित रहने वाले सदस्यों के नाम कार्यवाही हेतु सदन व्यवस्थापिका समिति के पास भेज सकता है। अनुशासन भंग करने वाले सदस्यों के नाम भी वह समिति के पास भेज सकता है और समिति की प्रार्थना पर किसी सदस्य को सदन से निष्कासित भी कर सकता है, पर ऐसा प्रस्ताव सदन के दो तिहाई बहुमत से पास होना आवश्यक है। यदि वह व्यक्ति पुनः निर्वाचित हो जाता है तो उसे स्थान देना पड़ता है। अध्यक्ष सदन की बैठकों को स्थगित भी कर सकता है। सदन की कार्यवाही का विवरण अध्यक्ष की देखरेख में तैयार और प्रकाशित किया जाता है और वह उसमें परिवर्तन कर सकता है। वह समिति के अध्यक्ष की प्रार्थना पर किसी विधेयक पर सार्वजनिक सुनवाई की अनुमति भी दे सकता है। जब किसी विधेयक पर समिति का प्रतिवेदन सदन में प्रस्तुत किये जाने के लिए तैयार होता है तो अध्यक्ष व्यवस्थापक समिति के परामर्श से उसे सदन के कार्यक्रम में सम्मिलित करता है। अध्यक्ष

ही विभिन्न समितियों के मध्य क्षेत्राधिकार सम्बन्धी विवादों का निर्णय करता है। वह सदन के अधिवेशन के समय किसी समिति को बैठक करने का आदेश दे सकता है।

दोनों सदनों के अध्यक्ष प्रधानमन्त्री के साथ परामर्श करके सम्राट द्वारा संसद के औपचारिक उद्घाटन का दिन व समय निश्चित करते हैं। यह उद्घाटन सभासद सदन में दोनों सभाओं की संयुक्त बैठक में होता है। संयुक्त बैठक का स्पीकर वही होता है जो प्रारम्भिक भाषण देता है। स्पीकर की अनुपस्थिति में यह कार्य प्रेसीडेंट करता है।

जापान के प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष की सदन में स्थिति संयुक्त राज्य अमेरिका की प्रतिनिधि सभा और ब्रिटेन की लोकसभा के अध्यक्षों की स्थिति के मध्य में है। जापान का स्पीकर दलगत आधार पर चुना जाता है। वह शासक दल या दलों का प्रधानमंत्री के पास सबसे शक्तिशाली नेता होता है। उसका वेतन प्रधानमंत्री के वेतन के बराबर होता है। निर्वाचन के बाद प्राय वह अपनी दलीय सदस्यता का त्याग नहीं करता। दल का बहुमत न रहने पर उसके स्थान पर दूसरा व्यक्ति स्पीकर चुना जाता है। फिर भी वह यथासम्भव निष्ठापूर्वक संसदीय नियमों को लागू करने का और सभी सदस्यों के साथ उचित तथा न्यायपूर्ण व्यवहार करने का प्रयत्न करता है। मन्त्रिपरिषद् का स्वयं एक संसदीय समिति और प्रधानमन्त्री का प्रतिनिधि सदन के नेता होने के कारण सदन की कार्यवाही पर उनका इतना प्रभाव नहीं होता जितना संयुक्त राज्य अमरिका के स्पीकर का होता है और दलीय सम्बन्ध के कारण उसका उतना सम्मान भी नहीं होता जितना ब्रिटिश स्पीकर का होता है। जापानी स्पीकर की स्थिति दोनों के मध्य में है। उसको थोड़ा भय भी होता है और थोड़ा सम्मान भी, लेकिन उसकी स्थिति कुल मिलाकर भारतीय स्पीकर से अच्छी है।

संसद की समितियाँ

अन्य देशों की संसदीय व्यवस्था के अनुरूप जापानी डायट में भी समितियों का अति महत्त्वपूर्ण स्थान है। मेइजी संविधान में भी समितियों का स्थान महत्त्वपूर्ण था किन्तु कार्य-क्षमता की दृष्टि से वे बहुत दुर्बल थीं।

वर्तमान व्यवस्था के अधीन चार प्रकार की समितियाँ पाई जाती हैं—(i) स्थायी समितियाँ, (ii) विशिष्ट समितियाँ, (iii) विधायी समिति एवं (iv) संयुक्त समिति। यह व्यवस्था है कि कोई भी एक सदस्य एक साथ तीन समितियों से अधिक का सदस्य नहीं बनाया जा सकता।

स्थायी समितियाँ (Standing Committees)—डायट के प्रत्येक सदन में 15 स्थायी समितियाँ हैं जिनमें से प्रत्येक में लगभग 20 सदस्य होते हैं। केवल बजट समिति में 50 के आसपास सदस्य

है । समितियों में दलों की संख्या सदन में उनकी शक्ति के अनुपात में होती है । समितियों के अध्यक्ष पूर्ण सदन द्वारा चुने जाते हैं । विभिन्न समितियों के क्षेत्राधिकार सम्बन्धी विवादों का निर्णय सदन का अध्यक्ष करता है । स्थायी समितियों का मुख्य कार्य विधायी प्रस्तावों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना, उनकी आवश्यक जांच-पड़ताल करना, उनमें विभिन्न पक्षों की सुनवाई करना और उनका प्रारूप तैयार करना है । सदन भी विधेयक पर सम्बन्धित समिति का परामर्श लेकर ही प्राय आगे बढ़ता है । अमेरिकन काग्रेस की समितियों की भांति जापानी समितियां सभी विधेयकों की प्रगति पर पूर्ण नियन्त्रण रखती हैं । वे ही यह निश्चय करती हैं कि किन विधायी प्रस्तावों को सदन के विचार के लिए प्रस्तुत किया जाय और किन्हें नहीं ?

विशिष्ट समितियां (Special Committees)—ये समितियां किसी विशेष जांच-पड़ताल के उद्देश्य से निर्मित की जाती हैं । स्वभावत इन्हें विशेष अधिकार और उत्तरदायित्व सौंपे जाते हैं । समिति के अध्यक्ष का निर्णायक मत प्राप्त होता है । समिति विभिन्न पक्षों से गवाहियां लेकर और सरकारी कागजातों का परीक्षण करके सदन को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करती है ।

विधायी समिति (Legislative Committee)—डायट के दोनों ही सदनों की एक मिली जुली विधायी समिति होती है जिसका कार्य दोनों सदनों के आपसी सम्बन्धों, विधि निर्माण के नये तरीकों, विधि निर्माण प्रणाली के सरलीकरण और अन्य सम्बन्धित मामलों पर विचार करना होता है । इसमें दस सदस्य प्रतिनिधि सदन के और आठ सभासद् सदन के होते हैं । जहां अन्य समितियां दलबन्दी के कुचक्र में फंसी रहती हैं वहां संयुक्त विधायी समिति पर दल-बन्दी का विशेष प्रभाव नहीं पड़ता । इस समिति से यही आशा की जाती है कि वह तटस्थ आचरण रखते हुए सदनों को सन्तुलन में रखेगी ।

संयुक्त समिति (Joint Committee)—डायट के दोनों सदनों के बीच मतभेद को दूर करने के लिए एक संयुक्त समिति का निर्माण किया जाता है जिसमें लगभग 20 सदस्य होते हैं । दोनों ही सदनों से बराबर संख्या में सदस्य लिये जाते हैं । गण-पूर्ति के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक सदन के दो तिहाई सदस्य उपस्थित हों । समिति की अध्यक्षता दोनों ही सदनों के सदस्य बारी बारी से करते हैं । मतभेद सम्बन्धी समाधान पर पूर्ण सहमति हो जाने पर समिति की रिपोर्ट दोनों सदनों में पेश की जाती है । यह भी आवश्यक है कि प्रस्तावित रिपोर्ट समिति के दो-तिहाई बहुमत से स्वीकृत की गई हो ।

स्पष्ट है कि जापान में समिति-व्यवस्था पर्याप्त सुव्यवस्थित और प्रभावी रूप से सक्रिय है । यद्यपि समितियों की बहुतायत है और स्थायी

समितिया अलग-अलग मत्रालयो से सम्बन्धित रहने के कारण अपने अपने विभागो की वकील बन जाती है तथापि समितिया ने 'लघु विधान मण्डल' (Little Legislative) का रूप धारण कर लिया है। उन्हे हम सदन के आख, कान और मस्तिष्क की सज्ञा दे सकते है।

ससद की शक्तिया एव कार्य
(Powers & Functions of the Diet)

सविधान की धारा 41 के अनुसार 'डायट अर्थात् ससद राज्य शक्ति का सर्वोच्च अवयव है" और इस दृष्टि से उसे अनेक प्रकार के अधिकार प्राप्त है जिन्हे निम्नाकित भागो मे बाटा जा सकता है—

विधायी शक्ति

डायट का अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य विधि निर्माण करना है। जापान मे एकात्मक सविधान है। अत यहा सभी प्रकार के कानून डायट बनाती है। डायट के विधि निर्माण का व्यापक क्षेत्र सभी प्रकार के सामाजिक जीवन के सभी पहलुओ और व्यक्ति के प्राय सम्पूर्ण जीवन तक फैला हुआ है। डायट को प्रतिवर्ष बहुत बडी सख्या मे कानून बनाने पडते हैं। अन्य देशो की व्यवस्थापिकाओ के समान जापान की डायट भी कानून बनाने वाली फैक्ट्री बन गई है।

इस सन्दर्भ मे यह स्मरणीय है कि जापान मे कार्यपालिका को सिद्धान्त रूप मे भी ससद द्वारा पारित किये गये विधेयको पर निषेधाधिकार नही है। फिर भी ससद का प्रमुख कार्य कानून की योजना बनाना अथवा उसका उपक्रम करना नही है वरन् प्रस्तावो पर विचार करना, उन्हे सशोधित करना और उन्हे स्वीकार या अस्वीकार करना है। उनकी योजना बनाना और उपक्रम या पहल करना तो केबिनेट के हाथ मे है। ससद का कार्य मुख्य रूप से निषेधाधिकार का प्रयोग करना है। जापान मे विधायी कार्य पर केबिनेट का इतना व्यापक प्रभाव नही है जितना भारत और ब्रिटेन मे है तथापि डायट का अधिकार न तो असीमित है और न अनन्य ही। डायट का विधायी अधिकार देश के लिखित सविधान के अनुकूल होना चाहिये अन्यथा सर्वोच्च न्यायालय उसे असवैधानिक घोषित कर सकता है। सविधान मे वर्णित जनता के मूल अधिकार डायट के विधायी क्षेत्र को सीमित करते हैं। इसके अतिरिक्त किसी एक स्थानीय सत्ता के लिए डायट द्वारा बनाया गया कानून बिना उस क्षेत्र की जनता की स्वीकृति के प्रवृत्त नही किया जा सकता। डायट का शक्ति अनन्य ना नही है, सदन अपने नियम स्वय बनाते हैं। केबिनेट अपनी आज्ञायें देती है और सर्वोच्च न्यायालय अपने नियम बनाता है। इन सस्थाओ मे अधिकार सविधान प्रदत्त हैं

ग्रोर सर्वोच्च न्यायालय के नियम तो कहीं कहीं स्पष्ट रूप से ससदीय कानूनों के विपरीत है।

कायपालिका शक्ति

डायट का दूसरा अधिकार कायपालिका सम्बन्धी है। डायट को कायपालिका के काय के विषय मे जाच पडताल करने का अधिकार है। वह सरकार के भ्रष्टाचार के विषय म एव सरकारी सस्थाओं के काय के विषय मे अनेक बार जाच पडताल कर चुकी है। डायट कायपालिका पर कई रीतियो से निय त्रण रखती है। प्रधानमन्त्री का डायट द्वारा ही मनोनीत किया जाता है और *डायट किसी भी म त्री के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव* पास करके उसे त्याग पत्र देने को बाध्य कर सकती है। डायट प्रशासन काय *की देख रेख और जाच-पडताल के लिए आयोग तथा समितिया नियुक्ति कर* सकती है। वह प्रशासनिक अधिकारियो से उनके रिकार्ड और रिपार्ट मगा सकती है *तथा साक्षियो को बुला सकती है। सविधान की धारा 72 के अनुसार* केबिनेट का प्रतिनिधित्व करते हुए प्रधानमन्त्री उसके समक्ष सामा य राष्ट्रीय मामलो और विदेशी सम्बन्धो पर प्रतिवेदन समर्पित करता है और दोनो सदनो के सदस्य प्रशासन के किसी भी विषय पर स्पष्टीकरण की माग कर सकते ह। अत माग पर सात दिन के अन्दर उत्तर देना होता है।

वित्तीय शक्ति

डायट का राष्ट्रीय अथ व्यवस्था पर भी पूर्ण अधिकार है। सविधान की धारा 83 उपबन्धित करती है कि "राष्ट्रीय वित्त को परिचालित करने की शक्ति का प्रयोग उसी प्रकार होगा, जिस प्रकार *डायट निश्चित करेगी।'* केबिनेट द्वारा जो बजट पेश किया जाता है, उसे डायट ही पास करता है। डायट को उस बजट की जाच करने का पूरा अधिकार होता है। *सदस्यगण* प्रत्येक मद की आलोचना कर सकते है। डायट के दोनो सदनो द्वारा स्वीकृत हो जाने पर ही आय व्यय हो सकता है। *बजट के सम्बन्ध मे एक ध्यान देने* योग्य बात यह है कि व्यय की सभी मदें डायट के अनुमोदन के लिए रखी जानी आवश्यक हैं। व्यय की कोई ऐसी मद नही है जो डायट के क्षेत्राधिकार के बाहर हो।

सम्राट के परिवार की सम्पूर्ण सम्पत्ति *वतमान सविधान के अन्तगत* राज्य की सम्पत्ति है। सम्राट के परिवार के लिये सभी प्रकार के व्यय डायट ही स्वीकार करती है। *इस सम्बन्ध म सविधान की धारा 8 अत्यन्त महत्वपूर्ण* है जो इस प्रकार है—'डायट का अनुमोदन प्राप्त किये बिना राज्य परिवार द्वारा न तो कोई सम्पत्ति ग्रहण की जा सकती है और *न दी ही जा सकती*

है। राज्य परिवार से कोई भेंट आदि भी नहीं दी जा सकती है।' स्पष्ट है कि सम्राट और उसके परिवार के सभी व्यय भी डायट के ही अधीन हैं।

आय और व्यय के अंतिम लेखों की प्रति वर्ष आडिट बोर्ड द्वारा जांच होती है और यह जांच रिपोर्ट केबिनेट में ही रखी जाती है।

संसद के वित्तीय अधिकार पर एक प्रतिबन्ध है। धारा 89 के अनुसार किसी धार्मिक संस्था के प्रयोग लाभ अथवा पोषण के लिये और ऐसी शिक्षा सम्बन्धी या उदार उद्योगों के लिए जो सार्वजनिक पदाधिकारी में नहीं है, कोई धन विनियोजित नहीं कर सकती। लेकिन यह प्रबन्ध व्यावहारिक रूप में प्रवृत्त नहीं होता। धार्मिक संस्थाओं को उनके सांस्कृतिक तत्वों की रक्षा के नाम पर आर्थिक सहायता प्रदान कर दी जाती है और व्यक्तिगत विद्यालय विधि लोक कल्याण सेवा विधि तथा शिशु कल्याण सेवा विधि के अन्तर्गत संसद ने सरकार को व्यक्तिगत विद्यालयों और उदार उद्योगों को आर्थिक अनुदान देने की स्वीकृति दी है।

वैदेशिक शक्ति

डायट को देश की वैदेशिक नीति और वैदेशिक सम्बन्धों पर अधिकार है। प्रधानमन्त्री प्रतिवर्ष केबिनेट की ओर से देश के वैदेशिक सम्बन्धों के बारे में संसद को प्रतिवेदित करता है। यद्यपि संधि करने का अधिकार केबिनेट को है पर संविधान की धारा 73 (3) के अन्तर्गत केबिनेट के लिये यह आवश्यक है कि वह संधि के पहले या उसके पश्चात् उस पर संसद का अनुमोदन प्राप्त करे। संसद के अनुमोदन के अभाव में कोई संधि प्रवृत नहीं की जा सकती। फिर भी व्यावहारिक रूप में इस धारा का अक्षरशः पालन नहीं किया जाता। कुछ संधियों को प्रशासकीय समझौतों का नाम दे दिया जाता है और इस प्रकार उन्हें संसद की पूर्व या तदनन्तर स्वीकृति के लिये प्रस्तुत नहीं किया जाता।

न्यायिक शक्ति

डायट को कुछ न्यायपालिका सम्बन्धी अधिकार भी प्राप्त हैं। यह कानून द्वारा संविधान की धाराओं के अन्तर्गत न्यायपालिका का संगठन, न्यायाधीशों द्वारा अन्य कर्मचारियों का वेतन तथा न्यायालयों की कार्यप्रणाली निश्चित करती है। डायट द्वारा निर्मित व्यवहार प्रक्रिया संहिता और दण्ड प्रक्रिया संहिता न्यायालय के पूरे प्रक्रिया क्षेत्र को आच्छादित किये हुए हैं। पर संविधान की धारा 77 द्वारा सर्वोच्च न्यायालय को प्रक्रिया और प्रचलन, न्यायाधीशों, न्यायालयों के आन्तरिक अनुशासन और न्यायिक विषयों के प्रशासन के लिये नियम बनाने का अधिकार है। डायट कर्त्तव्य की उपेक्षा करने वाले और अपने अधिकारों का दुरुपयोग करने वाले न्यायाधीशों को महाभियोग की प्रक्रिया के द्वारा पदच्युत करा सकती है। इस कार्य के लि-

डायट दोनों सदनों की समान संख्या के सदस्यों के एक महाभियोग न्यायालय की स्थापना करती है। यह न्यायालय उन न्यायाधीशों पर दोषारोपण समिति द्वारा लगाये गये आरोपों की जाँच करता है।

संवैधानिक कार्य

डायट का संविधान के संशोधन के सम्बन्ध में भी कुछ कार्य है। संशोधन के प्रस्ताव डायट में ही पेश किये जाते हैं। किसी भी सदन में ऐसे प्रस्तावों के पारित होने के लिये यह आवश्यक है कि उनको सदन के कम से कम दो तिहाई सदस्यों की सम्मति प्राप्त हो। जब दोनों सदनों से यह प्रस्ताव इस प्रकार पारित हो जाते हैं तो उनको जनमत संग्रह के लिये रखा जाता है। यदि जनमत संग्रह में बहुमत का समर्थन प्राप्त हो जाता है तो वे पास समझे जाते हैं और सम्राट द्वारा संविधान के रूप में घोषित कर दिये जाते हैं।

अन्य शक्तियाँ और कार्य

डायट का एक महत्वपूर्ण अधिकार जनावेदन सम्बन्धी अधिकार है। सर्वोच्च शासक संस्था के रूप में डायट के दोनों सदन पृथक-पृथक रूप से जनता के विभिन्न प्रकार के आवेदन पत्रों पर विचार करते हैं और उचित आवेदन पत्रों को आवश्यक कार्यवाही हेतु केबिनेट के पास भेज देते हैं जो उन पर विचार करती है और अपनी कार्यवाही की सूचना सम्बन्धित सदन में देती है। जापान में आवेदन प्रथा अत्यधिक लोकप्रिय है।

इसके अतिरिक्त डायट को राज्यसिंहासन के उत्तराधिकार विषयक कानून बनाने का भी अधिकार प्राप्त है।

इस विवेचन से प्रकट यही होता है कि जापान की संसद को व्यापक अधिकार प्राप्त हैं। राज्य शक्ति का 'सर्वोच्च अवयव' है। लेकिन संविधान शास्त्रियों का मत है कि यह कथन संविधान द्वारा प्रदत्त अन्य अवयवों के अधिकारों की दृष्टि से अतिशयोक्तिपूर्ण है। जब केबिनेट संसद के अधिक शक्तिशाली सदन प्रतिनिधि सभा को भंग कर सकती है, बजट पर कार्यपालिका को उपक्रम अधिकार प्राप्त है, सिविल सर्विस में प्रशासकीय नेतृत्व स्थापित है और न्यायालयों द्वारा संसदीय कानूनों का पुनरावलोकन किया जा सकता है तो संसद को राज्य का 'सर्वोच्च अवयव' कहना समीचीन नहीं है। इतना ही नहीं व्यावहारिक रूप में भी संसद सर्वोच्च अवयव के रूप में प्रतिष्ठित नहीं कही जा सकती। केबिनेट में निहित आलम्बन दलीय अनुशासन, प्रतिनिधि सदन को भंग करने के अधिकार और न्यायपालिका की कर्तव्य विमुखता आदि ने संसदीय प्रभाव का ह्रास कर दिया है। फिर भी कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि डायट की शक्तियाँ पर्याप्त रूप से विस्तृत और वास्तविक तथा प्रभावी हैं।

डायट के दोनों सदनों से सम्बन्ध

जापानी ससद डायट के दोना सदनो के पारस्परिक सम्बन्धो को हम निम्नलिखित भागो म बाँट सकते है—

1 साधारण विधेयका के सम्बन्ध मे
2 वित्तीय व्यय विधेयको के सम्बन्ध म,
3 प्रधान मन्त्री के निर्वाचन के विषय मे
4 केबिनेट के उत्तरदायित्व क विषय मे, एवम्
5 सवैधानिक ससद के सम्बन्ध म।

साधारण विधेयका के विषय म स्थिति यही है कि इन्हे दोना सदनो मे स किसी भी सदन मे प्रस्तावित किया जा सकता है और उन्हे कानून का रूप तब ही प्राप्त होता है जब उन पर दोना सदनो की स्वीकृति मिल जाए। लेकिन इस क्षेत्र म अन्तत प्रतिनिधि सदन का शक्ति सभासद सदन से अधिक है। यदि प्रतिनिधि सदन द्वारा पारित किसी विधेयक को सभासद सदन स्वीकार नही करता अथवा उसम ऐस सशोधन कर देता है जो प्रतिनिधि सदन को स्वीकार न हो, तो विधेयक समाप्त नही होता प्रत्युत् उस अकेला प्रतिनिधि सदन ही पास कर सकता है बशर्ते कि वह उस दोबारा अपने सदस्यो के दो-तिहाई बहुमत से पारित करदे। ऐसे विधेयक पर यदि 60 दिन के अन्दर सभासद सदन अपना निर्णय नही भेजता तो प्रतिनिधि सदन विधेयक का उपर्युक्त विधि स अकेल ही पास कर सकती है।

वित्त विधेयको के क्षेत्र म तो सभासद सदन की स्थिति और भी कमजोर है। प्रथम तो वित्तीय विधेयक सभासद सदन म प्रस्तुत ही नहीं किये जा सकत वे सदव प्रतिनिधि सदन मे ही आरम्भ किये जाते हैं और वहा से पारित होने के बाद ही सभासद सदन के समक्ष विचार के लिये आते है। इसम यदि सभासद सदन प्रतिनिधि सदन के निर्णय के विरुद्ध कोई निर्णय दता है और यदि दोनो सदना म कानून द्वारा उपबन्धित का हुई सयुक्त समिति द्वारा भी कोई समझौता नही हो पाता है अथवा यदि सभासद सदन 30 दिन की अवधि क अन्दर भी उस वित्त विधेयक या बजट पर कोई निर्णय नही करता है तो प्रतिनिधि सदन का निर्णय ही संसद (डायट) का निर्णय माना जाता है। इस प्रकार वित्तीय क्षेत्र मे प्रतिनिधि सदन को निश्चयात्मक रूप से] प्रधानता दी गई है और द्वितीय सदन का गौण स्थान दिया गया है। इस क्षेत्र म द्वितीय सदन को केवल 30 दिन का विलम्ब करने की ही शक्ति है।

प्रधान मन्त्री के निर्वाचन के विषय म भी सभासद सदन की स्थिति प्रतिनिधि सदन की अपेक्षा दुर्बल है। यदि प्रधान मन्त्री के निर्वाचन पर दोना सदना म मतैक्य नहीं होता और उन दोना मे सयुक्त समिति के माध्यम स भी कोई समझौता नही हो पाता अथवा प्रतिनिधि सदन द्वारा किये

निर्वाचन के बाद 10 दिन के अन्दर सभासद सदन कोई निर्णय नहीं दे तो प्रतिनिधि सदन का निर्णय ही डायट का निर्णय समझ लिया जाता है। इस प्रकार प्रधान मन्त्री के निर्वाचन के विषय में भी उच्च सदन को केवल 10 दिन की देरी करने का ही अधिकार है।

केबिनेट के उत्तरदायित्व के सम्बन्ध में भी उच्च सदन की स्थिति निम्न सदन की अपेक्षा शक्तिहीन है। संविधान द्वारा यद्यपि केबिनट का उत्तरदायित्व डायट के प्रति रखा गया है, तथापि व्यवहार में केबिनट प्रतिनिधि सदन के प्रति ही उत्तरदायी है। प्रतिनिधि सदन अपने अविश्वास के प्रस्ताव द्वारा केबिनेट को अपदस्थ करने का अधिकार रखती है। ऐसी स्थिति में यदि केबिनेट स्वयं त्याग पत्र देकर 10 दिन के अन्दर प्रतिनिधि सदन को ही भंग करा देती है तो सभासद सदन केवल स्थगित हो जाता है, भंग नहीं होता। इस मध्य आवश्यकता पड़ने पर केबिनेट सभासद सदन का विशेष अधिवेशन बुला कर कार्य कर सकती है लेकिन इन कार्यों पर अधिवेशन में आने पर प्रतिनिधि सदन की 10 दिन के अन्दर परवर्ती अनुमति प्राप्त करनी अनिवार्य होगी, अन्यथा वे समाप्त समझे जाएंगे।

संवैधानिक संशोधन के सम्बन्ध में दोनों की शक्तियां समान हैं क्योंकि संशोधन के प्रस्तावों पर दोनों ही सदनों के दो तिहाई सदस्यों के बहुमत की सहमति अनिवार्य होती है।

विधायी प्रक्रिया
(Legislative Procedure)

जापान में बिलों को दो वर्गों में बांटा जाता है–सरकारी बिल और गैर-सरकारी सदस्यों के बिल। विषय वस्तु की दृष्टि से सरकारी बिल और गैर-सरकारी सदस्यों के बिल एक जैसे होते हैं लेकिन उनका उद्गम अलग अलग होता है। सरकारी बिल सरकार की ओर से मन्त्री द्वारा आरम्भ किये जाते हैं जबकि गैर सरकारी सदस्यों का बिल डायट के एक सदस्य द्वारा आरम्भ किया जाता है, जो सरकार का सदस्य नहीं है। जापान में समिति भी विधायन कार्य का आरम्भ कर सकती है।

सरकारी विधेयकों की प्रक्रिया

लगभग सभी सरकारी विधेयक स्वयं विभाग में ही आरम्भ किये जाते हैं। उन्हें विभाग के अधिकारी तैयार करके सम्बन्धित मन्त्री के पास भेज देते हैं। मन्त्री द्वारा विधेयक के अनुमोदन के पश्चात वे उसके नाम पर विधायन कार्य ब्यूरो को भेज दिये जाते हैं। ब्यूरो विधेयकों का अध्ययन करता है और इनके कानूनी, संवैधानिक एवं प्रशासनिक पहलुओं की जांच करता है। प्रत्येक विधेयक का संशोधन और शोधन के पश्चात् केबिनेट में भेज दिया जाता है और कार्य-सूची में शामिल कर लिया जाता है। विधेयक पर केबिनट का

समिति अवस्था—प्रस्तावना के बाद समिति अवस्था आती है। विधेयक को किसी एक स्थाई समिति या विशेष समिति को निर्दिष्ट कर दिया जाता है। समिति में बरिष्ठता से विधेयक पर ध्यानपूर्वक विचार होता है और इसके आवश्यक विषयों की जाच की जाती है। समिति किसी मन्त्री को या सदन के किसी सदस्य को अपने विचार व्यक्त करने के लिए आमन्त्रित कर सकती है अथवा कोई भी सदस्य समिति को प्रार्थना कर सकता है कि वह उसके विचार सुने। समिति विधेयक के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से विचार करने के लिए उप-समितिया नियुक्त कर सकती है। इसके अतिरिक्त सरकारी सलाह के लिए वह डायट के विधायन-काय ब्यूरो को भी आमन्त्रित कर सकती है। समिति जनता में से भी व्यक्तियों को, सम्बन्धित विषय के बारे मे विचार व्यक्त करने हेतु आमन्त्रित कर सकती है।

सदन मे विचार—समिति द्वारा विधेयक के समर्थन और विरोध मे तर्कों पर चर्चा करने के पश्चात् इसे समिति के अध्यक्ष द्वारा सदन को प्रस्तुत कर दिया जाता है। यदि विधेयक के किसी पहलू पर कोई अल्पमत रिपोर्ट है तो उस रिपोर्ट को भी सदन के समक्ष रख दिया जाता है। सदन मे कोई भी सदस्य विधेयक मे सशोधन का प्रस्ताव कर सकता है, ऐसे किसी भी सशोधन को प्रतिनिधि सदन कम से कम 20 सदस्यो का और सभा सद सदन मे कम से कम 10 सदस्यो का समर्थन अवश्य प्राप्त होना चाहिए। वित्त विधेयको का बजट मे सशोधन के लिए प्रतिनिधि सदन मे कम से कम 50 और सभा सद सदन मे कम से कम 20 सदस्यो का समर्थन होना आवश्यक है। विधेयक के सभी खण्डो पर वाचन और मत दान के पश्चात् सम्पूर्ण [illegible] मतदान लिया जाता है और एक सदन द्वारा पारित किये जाने के

दूसरे सदन म भेजा जाता है जहा विधेयक उपयु क्त व्यवस्थाग्रो स पुन गुजरता है। यदि दूसरा सदन भी विधेयक पारित कर देता है तो फिर इसे सम्राट के हस्ताक्षर के लिए भेजा जाता है। विधेयक पर मत भेद की स्थिति मे डायट द्वारा समाधान के लिए समाधान-समिति नियुक्त की जाती है जो यदि किसी समझौते पर नही पहुँच पाती तो प्रतिनिधि सदन विधेयक पर सभा सद सदन के विरोध म अपने दो तिहाई बहुमत के आधार पर अपनी बात मनवा लेता है।

सम्राट का अनुमोदन—डायट के दो सदनो द्वारा इस प्रकार विधेयक पारित कर दिए जाने के बाद इसे सदन के स्पीकर द्वारा केबिनेट के माध्यम स सम्राट के पास भेजा जाता है। समिति इसके प्राख्यापन के बारे म सरकारी तौर पर ऐलान करती है और मत्रियो द्वारा हस्ताक्षर किये जाने के बाद इस सम्राट को पेश करती है तथा सरकारी राजपत्र मे प्रकाशित कर दिये जाने के बाद कानून का ऐलान कर दिया जाता है।

बजट

बजट का अधिनियम साधारण विधेयक के अधिनियम से भिन्न है। वित्त विधेयक या बजट अनिवार्य रूप से प्रतिनिधि सदन द्वारा आरम्भ किया जाता है और साधारण विधेयको के विपरीत, सभा सद सदन इसे 30 दिन से अधिक अवधि के लिए नही रोक सकता। इस अवधि की समाप्ति के बाद वित्त विधेयक कानून बन जाता है चाहे सभा-सद सदन का विरोधी मत हो क्यो न हो।

गैर सरकारी सदस्य का विधेयक

गैर सरकारी सदस्य का विधेयक (Private Member's Bill) वह सावजनिक विधेयक है जो डायट के ऐसे सदस्य द्वारा पेश किया जाता है जो सरकार का सदस्य नही है। ये विधेयक सामान्यत कई सदस्यो द्वारा सयुक्त रूप से डायट म पेश किये जाते है और अपने उद्देश्यो एव लक्ष्यो की दृष्टि से अलग अलग होते है। डायट मे पेश किये गये अधिकाश विधेयको का उद्देश्य प्रचार द्वारा लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए या निर्वाचन आन्दोलन म मत प्राप्त करने के लिए सहायता प्राप्त करना होता है। इनको पारित करने की प्रक्रिया अन्य गर धन विधेयको के समान ही है।

6

न्यायपालिका
(THE JUDICIARY)

जापान की न्याय व्यवस्था उच्च स्तर की है। प्राचीन सविधान के अन्तगत जापानी न्याय-व्यवस्था मे जो अनेक दोष थे, उन्हे नवीन सविधान के अन्तगत लगभग दूर कर दिया गया है। जापान की वतमान न्यायपालिका अपने सगठन और स्वरूप म अमेरिकन एव भारतीय न्यायपालिका से पर्याप्त अ शो मे मिलती-जुलती है।

जापान की न्यायपालिका की विशेषतायें

न्यायपालिका की पृथकता—जापान मे न्यायपालिका को शासन के अन्य अ गो से पृथक और उनके नियन्त्रण से मुक्त रखा गया है। न्यायालयो का सगठन पूर्णत पृथक है जिसके शीर्ष पर सर्वोच्च-न्यायालय है। सर्वोच्च न्यायालय को अपनी काय-विधि आदि से सम्बन्धित नियम बनाने का अधिकार है। न्यायाधीशो पर कायपालिका द्वारा कोई अनुशासनात्मक कायवाही नही की जा सकती और न ही न्यायाधीशो को हटा सकती है। सविधान की धारा 87 द्वारा स्पष्ट शब्दो मे उपबन्धित किया गया है कि "न्यायाधीशो को सावजनिक महाभियोगो को छोडकर उस समय तक नही निकाला जायेगा जब तक वे न्यायिक रूप से मानसिक अथवा शारीरिक कारणो से अपने कत्तव्य पालन मे असमथ घोषित न कर दिये जायें।" न्यायाधीश ईमानदारी के साथ काय कर सकें और किसी प्रकार के प्रलोभन म न फसें, इसके लिए उन्हे समुचित वेतन और अन्य समुचित सुविधायें प्रदान की गई हैं। यह व्यवस्था है कि न्यायाधीशो का वेतन उनके कार्य-काल म नही घटाया जा सकता।

न्याय व्यवस्था की एकरूपता—जापान की सम्पूर्ण व्यवस्था को एक ही सूत्र म सगठित कर दिया गया है। सविधान की धारा 76 निर्देशित करती है कि " समस्त न्यायिक शक्ति सर्वोच्च न्यायालय और उन अधीनस्थ न्यायालयो मे निहित है जो कानून द्वारा स्थापित किये जाते हैं। किसी असाधारण न्यायालय की स्थापना नही की जायेगी और न ही

कार्यपालिका के किसी अवयव अथवा एजेंसी को अंतिम न्यायिक शक्ति दी जायेगी।''

न्यायिक पुनरावलोकन—संयुक्त राज्य अमेरिका और भारत के सर्वोच्च न्यायालयों की भांति ही जापान के सर्वोच्च न्यायालय को भी न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार प्राप्त है। जापान में न्यायपालिका की प्रभुता का सिद्धान्त अपनाया गया है, ब्रिटेन की भांति संसदीय प्रभुता का नहीं। जापानी केबिनेट कोई ऐसा काम नहीं कर सकती अथवा संसद कोई ऐसा कानून नहीं बना सकती जो संविधान से असंगत हो। संविधान की धारा 81 में प्रदत्त अधिकार के अन्तर्गत सर्वोच्च न्यायालय संविधान की व्याख्या करके यह निर्णय कर सकता है कि संसद द्वारा निर्मित कोई कानून अथवा कार्यपालिका द्वारा किया गया कोई कार्य संविधान के अनुकूल है अथवा नहीं और इस सम्बन्ध में उसका निर्णय सर्वमान्य समझा जायेगा।

प्रशासकीय न्यायालयों का अभाव—जापान के वर्तमान संविधान में पृथक प्रशासकीय न्यायालयों की कोई व्यवस्था नहीं है। सामान्य न्यायालयों को ही प्रशासनिक विषयों पर विचार करने का अधिकार है और साधारण नागरिक प्रशासनिक अधिकारियों के विरुद्ध उन न्यायालयों में पहुँचने के अधिकारी हैं।

सर्वोच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति का प्रजाजनों द्वारा पुनर्निरीक्षण—जापान की न्यायिक व्यवस्था की एक अनुपम विशेषता यह है कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के पदों पर प्रजाजनों का मत लिया जाता है। यदि प्रजाजन जनमत-संग्रह में न्यायाधीशों का समर्थन करते हैं तो उन्हें पद पर बना रहने दिया जाता है अन्यथा पद-मुक्त कर दिया जाता है। इस प्रकार के जनमत संग्रह सम्बन्धी नीतियों का निर्माण डायट द्वारा किया जाता है। यह जनमत संग्रह न्यायाधीशों की नियुक्ति के पश्चात होने वाले डायट के सदस्यों के प्रथम चुनाव के समय और उसके बाद प्रति दस वर्ष के अन्तर पर होता रहता है। इस तरह सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का पद अन्तिम रूप में निर्वाचकों के निर्णय पर निर्भर करता है। इस व्यवस्था का सबसे बड़ा लाभ यह है कि न्यायाधीश ईमानदारी से कार्य करते रहते और संविधान की मर्यादाओं के अन्तर्गत बने रहने को प्रेरित होते हैं।

सार्वजनिक न्यायिक कार्यवाही—जापानी संविधान में यह व्यवस्था है कि न्यायालयों में अभियोगों पर सार्वजनिक रूप में विचार किया जाएगा। लेकिन कुछ मामलों में गोपनीय विचार की व्यवस्था की गई है। किसी मामले पर गोपनीय रूप में विचार तभी सम्भव है जब किसी न्यायालय के न्यायाधीश

सवसम्मति से यह निणय करें कि अमुक मामले म सावजनिक-निणय शान्ति, व्यवस्था तथा नतिकता के विरुद्ध होगा।

न्यायपालिका का सगठन
(Organisation of the Judiciary)

जापान का वतमान न्यायालय सगठन 16 अप्रैल, 1947 को प्रख्यापित हुए यायालय सगठन-कानून (The Judiciary Organisation Law) पर आधारित है। जापान मे 5 तरह के न्यायालय हैं—

1 सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Courts)
2 उच्च न्यायालय (High Courts)
3 जिला यायालय (District Courts)
4 पारिवारिक न्यायालय (Courts of Domestic Relations)
5 समरी न्यायालय (Summary Courts)

इन सभी यायालयो का वणन क्रमश निम्न प्रकार है—

सर्वोच्च यायालय

सगठन—जापान के सर्वोच्च यायालय के न्यायाधीशो की सख्या सविधान द्वारा निश्चित नही की गई है। इस समय प्रधान न्यायाधीश को मिलाकर कुल न्यायाधीशो की सख्या 15 है। कानून के अनुसार इनमे स 10 यायाधीश ऐस होत है जो कानूनी जगत म उच्च व्यावसायिक योग्यताए रखते हो। शष व्यक्ति अन्य क्षेत्रो स भी लिए जा सकत हैं।

योग्यताए—कानून द्वारा यायाधीशो को निम्नाकित योग्यतायें निर्धारित की गई हैं—

1 वह कम से कम 40 वष की आयु का हो,
2 विधि-वेत्ता हो
3 न्यायाधीशो मे से कम से कम 10 व्यक्तियो ने कम स कम 10 वष तक उच्च न्यायालय के अध्यक्ष अथवा न्यायाधीश के रूप म काय किया हो अथवा 20 वर्षों तक शीघ्र निर्णायक न्यायालय के न्यायाधीश, लोक अभियोक्ता वकील या कानून द्वारा स्थापित विश्वविद्यालय के विधि विभाग के प्रोफेसर और सहायक प्रोफसर के पद पर काय किया हो। इन चारो पदो पर कुल मिलाकर 20 वष की सेवा भी मा य है।

पदावधि—यह व्यवस्था है कि 70 वष की आयु प्राप्त करने तक सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश अपने पदो पर रह सकते हैं। लेकिन निम्नलिखित तीन दशाओ म उन्हे अवधि के पूर्व भी पदच्युत किया जा सकता है—

1 सर्वोच्च न्यायालय के यायाधीशो के पदो पर प्रजाजनो लिया जाता है। यदि प्रजाजन जनमत सग्रह म यायाधीशो का

है तो उनको पद पर बने रहने दिया जाता है अन्यथा उन्हें निकाल दिया जाता है। जनमत संग्रह न्यायाधीशों की नियुक्ति के पश्चात् होने वाले डायट के सदस्यों के प्रथम चुनाव के समय तथा उसके पश्चात् प्रति 10 वर्ष के अन्तर पर होता रहता है।

2 न्यायाधीशों को सदाचार के अपराध पर पदच्युत किया जा सकता है। महाभियोग का आरोप प्रतिनिधि सदन द्वारा लगाया जा सकता है। इसका परीक्षण और निर्णय 14 सदस्यों की एक समिति द्वारा किये जाने की व्यवस्था है जिसमें दोनों सदनों के 7–7 सदस्य सम्मिलित होंगे।

3 तीसरी व्यवस्था न्यायिक निर्णय की है। इसके अनुसार न्यायालय स्वयं न्यायाधीशों के शारीरिक एवं मानसिक क्षमता की जांच करता है। उनके किसी अपराध पर उन्हें दण्डित भी किया जाता है।

निबन्धन—सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों एवं अन्य न्यायाधीशों के लिये निम्नांकित कार्यों का निषेध कर दिया गया है—

(क) संसद अथवा स्थानीय लोक सत्ताओं की सभाओं का सदस्य होना या राजनीतिक आन्दोलनों में भाग लेना

(ख) सर्वोच्च न्यायालय की स्वीकृति प्राप्त किये बिना कोई अन्य वैतनिक पद धारण करना एवं

(ग) कोई वाणिज्य सम्बन्धी व्यवसाय करना अथवा ऐसे व्यवसाय करना जिसका उद्देश्य आर्थिक लाभ हो।

अधिकार एवं कार्य

(क) *न्यायिक कार्य—सर्वोच्च न्यायालय के अधिकांश न्यायिक कार्य* नीचे के न्यायालयों के निर्णयों के विरुद्ध अपीलें सुनना है। अन्तिम न्यायालय के रूप में वह किसी भी प्रकार की अपील सुन सकता है लेकिन सामान्यतः वह फौजदारी और दीवानी दोनों प्रकार के विवादों में ये अपीलें सुनता है—

1 *उच्च न्यायालयों* के निर्णय के विरुद्ध द्वितीय स्थिति के न्यायालय के रूप में निम्न प्रकार के वादों में द्वितीय अपीलों को सुनना—(क) संविधान से सम्बन्धित प्रश्नों वाले वाद, (ख) *न्यायिक दृष्टान्तों के प्रतिकूल निर्णय वाले* वाद, एवं (ग) *कानूनों तथा अध्यादेशों के महत्वपूर्ण उल्लंघन के।*

2 प्रक्रिया संहिता में वर्णित प्रक्रिया सम्बन्धी विशेष अपीलों को सुनना।

उपयुक्त कार्यों के अतिरिक्त अपने और उच्च-न्यायालय के न्यायाधीशों के न्यायिक सेवा के स्तर के विरुद्ध अपराधों और उनकी मानसिक एवं शारीरिक क्षमता सम्बन्धी विवादों का निर्णय करना तथा नेशनल पर्सोनल आथारिटी के आयुक्तों के विरुद्ध संसद द्वारा लाये गये महाभियोग आरोपों के परीक्षण

ना भी सर्वोच्च न्यायालय को अधिकार प्राप्त है। यह इसके मौलिक क्षेत्राधिकार में सम्मिलित है।

संविधान की धारा 81 के अनुसार किसी कानून, आज्ञा, नियम अथवा प्रशासनिक कार्य की संवैधानिकता की परीक्षा करना और इस कार्य के लिये संविधान की व्याख्या करने का अन्तिम अधिकार भी सर्वोच्च न्यायालय का ही है। न्यायिक पुनरावलोकन का यह कार्य सम्पूर्ण न्यायाधीशों की बड़ी बेंच द्वारा किया जा सकता है और किसी विधि, नियम या आज्ञा को असंवैधानिक घोषित करने के लिये कम से कम 9 व्यक्तियों के बहुमत की आवश्यकता होती है। संवैधानिकता के प्रश्न पर जिला न्यायालयों के निर्णय के विरुद्ध अपील सीधे सर्वोच्च न्यायालय में जा सकती है।

(ख) नियम निर्माण सम्बन्धी कार्य—न्याय से सम्बन्धित विषयों पर व्यवस्थापिका द्वारा बनाये गये कानूनों को क्रियान्वित करने के लिये और जिन विषयों के सम्बन्ध में व्यवस्थापिका ने कोई कानून बनाये ही न हों, उन्हें नियमित करने के लिए धारा 77 के अधीन सर्वोच्च न्यायालय नियम बनाता है।

उच्च न्यायालयों, जिला न्यायालयों, परिवार न्यायालयों और न्यायिक अनुसंधान अधिकारियों, न्यायालय के सचिवों, लिपिकों एवं सहायक लिपिकों आदि अधिकारियों की नियुक्ति तथा सेवा सम्बन्धी नियमों को भी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा ही बनाया जाता है। यह कार्य प्रधान न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक गुप्त न्यायिक सभा द्वारा किया जाता है जिसमें प्राय सब सभी न्यायाधीश सम्मिलित होते हैं।

(ग) न्यायिक प्रशासन सम्बन्धी कार्य—सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक प्रशासन के सम्बन्ध में भी अनेक महत्वपूर्ण अधिकार मिले हुए हैं। वह मन्त्रि-परिषद् द्वारा की जाने वाली सर्वोच्च न्यायालय के अतिरिक्त अन्य न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्तियों के लिये योग्य व्यक्तियों की सूची बनाता है और मन्त्रि-परिषद् इस सूची में सम्मिलित व्यक्तियों को ही न्यायाधीशों के पदों पर नियुक्त कर सकती है। इसके अतिरिक्त जिला या उच्च न्यायालय के क्षेत्र में उप न्यायालय की शाखायें भी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्थापित की जाती हैं। विशेष परिस्थितियों में सर्वोच्च न्यायालय एक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को दूसरे उच्च न्यायालय में या दूसरे अन्य न्यायालय के क्षेत्र के जिला अथवा परिवार न्यायालय के न्यायाधीशों को उस क्षेत्र के उच्च न्यायालय में कार्य करने का आदेश दे सकता है। इसी प्रकार विशेष परिस्थितियों में उच्च न्यायालय एवं जिला न्यायालय के न्यायाधीशों को दूसरे जिला न्यायालय में कार्य करने का आदेश दिया जा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय किसी जिला न्यायालय को [illegible] कर सकता है और उसके

कार्य करने के लिए न्यायाधीश नामांकित कर सकता है। सर्वोच्च न्यायालय ही निम्न न्यायालयों के न्यायाधीशों को उनके पदों पर नियत करता है। वही उच्च न्यायालयों, जिला न्यायालयों और परिवार न्यायालयों के सचिवालयों के मुख्य अधिकारी को न्यायालयों के सचिवों में से नियुक्त करता है।

(घ) प्रशिक्षणात्मक एवं अनुसंधान सम्बन्धी कार्य—सर्वोच्च न्यायालय के अन्तर्गत तीन संस्थान हैं—विधि प्रशिक्षण तथा अनुसंधान संस्थान, न्यायालय लिपिक हेतु अनुसंधान तथा प्रशिक्षण संस्थान एवं परिवार तथा न्यायालय परिवीक्षण अधिकारी (Probation Officer) संस्थान। ये संस्थान सर्वोच्च न्यायालय की देखरेख में कार्य करते हैं। ये न्यायाधीशों, अन्य अधिकारियों, लिपिकों एपरंटिसों आदि का प्रशिक्षण देते हैं। विधि प्रशिक्षण और अनुसंधान संस्थान में उच्च लोकसेवा की न्यायिक परीक्षा पास विद्यार्थी प्रशिक्षण ग्रहण करते हैं।

न्यायिक विषयों पर अनुसंधान का कार्य विधि प्रशिक्षण तथा अनुसंधान संस्थान और न्यायालय लिपिक हेतु अनुसंधान तथा प्रशिक्षण संस्थान द्वारा किया जाता है। प्रथम संस्थान न्यायिक विषयों पर और द्वितीय लिपिकीय कार्यों पर अनुसंधान करता है। कुछ न्यायिक अनुसंधान अधिकारी सर्वोच्च न्यायालय में भी होते हैं। वे न्यायाधीशों की आज्ञा पर न्यायिक प्रक्रिया पर अनुसंधान करते हैं।

(ङ) पर्यवेक्षण सम्बन्धी कार्य—सर्वोच्च न्यायालय को अपने अधिकारियों एवं निम्न न्यायालय के अधिकारियों से सम्बन्धित पर्यवेक्षण अधिकार भी प्राप्त हैं। वह अपने अधिकारियों, निम्न न्यायालयों और उनके अधिकारियों के कार्यों का सर्वेक्षण करता है। लेकिन यह पर्यवेक्षण अधिकार न्यायालयों की न्यायिक शक्ति को प्रभावित नहीं कर सकता।

उच्च न्यायालय (High Courts)

सर्वोच्च न्यायालय के नीचे उच्च न्यायालय हैं। सम्पूर्ण जापान 8 क्षेत्रों में विभाजित है और प्रत्येक क्षेत्र में एक एक उच्च न्यायालय है। ये अधिकांशतः अपील के न्यायालय हैं और अपने क्षेत्र में इनका निर्णय अन्तिम होता है। उच्च न्यायालय का न्यायाधीश 65 वर्ष की आयु तक काम कर सकता है। इनकी संख्या अलग-अलग क्षेत्रों में अलग अलग है। ये मुकदमों को प्रायः तीन-तीन की बेंचों के रूप में सुनते हैं और उन पर निर्णय देते हैं। राजद्रोह के मुकदमों में 5 न्यायाधीशों की बेंच बैठती है क्योंकि यह इनके प्रारम्भिक क्षेत्र में आते हैं।

जिला न्यायालय (District Courts)

जापान में उच्च न्यायालयों के नीचे 49 जिला न्यायालय और उनकी

लगभग 240 शाखायें हैं। जिला न्यायालयों में कुछ न्यायाधीश और कुछ सहायक न्यायाधीश होते हैं। न्यायालय का प्रशासन सम्बन्धी कार्य एक न्यायिक सभा द्वारा किया जाता है जिसके सदस्य सभी न्यायाधीश होते हैं और मुख्य न्यायाधीश इसका अध्यक्ष होता है। सर्वोच्च न्यायालय जिला न्यायालय की शाखाएं स्थापित कर सकता है। जिला न्यायालयों में दीवानी और फौजदारी दोनों तरह के मामले आते हैं तथा नीचे की अदालतों की अपीलें भी आती हैं। साधारणत एक ही न्यायाधीश मुकदमा सुनता है और निर्णय देता है परन्तु गम्भीर मामलों में तीन न्यायाधीशों की बेंच भी बैठती है।

पारिवारिक न्यायालय (Courts of Domestic Relations)

ये न्यायालय जापान की न्यायिक व्यवस्था के क्षेत्र में अभी प्रयोग हैं। वस्तुतः ये न्यायालय जिला न्यायालयों के ही अङ्ग हैं जिनके निर्माण का उद्देश्य पारिवारिक झगड़ों को निपटाने में सहायता देना है। फलस्वरूप इनमें तलाक, जायदाद के बटवारे, गोद लेने, वचन तोड़ने आदि से सम्बन्धित मामले आते हैं। संविधान ने स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार देकर जो एक सामाजिक क्रांति का सिलसिला चलाया है, उसके कारण इन पारिवारिक अदालतों में मुख्यतः तलाक के मामले आते हैं। यह न्यायालय एक प्रकार के अर्द्ध पंचायती न्यायालय हैं जिनमें न्यायाधीशों के अतिरिक्त साधारण नागरिक भी न्याय करने बैठते हैं और कानूनी प्रक्रिया की जटिलता हटा दी जाती है।

समरी न्यायालय (Summary Courts)

जापान में सबसे नीचे के न्यायालय समरी न्यायालय हैं जो ब्रिटेन के जस्टिस आफ पीस न्यायालयों की भांति हैं। इनमें दीवानी और फौजदारी के छोटे मुकदमे आते हैं। मुकदमों का फैसला तुरन्त होता है। इसलिये भी इन्हें समरी न्यायालय कहा जाता है।

प्रोक्यूरेटर्स
(Procurators)

जापान में न्यायाधीशों के साथ सरकारी वकीलों का भी एक संगठन है जिसके प्रमुख को प्रोक्यूरेटर जनरल (Procurator General) कहा जाता है। इसी के द्वारा न्याय मंत्रालय कार्य करता है। इसके और इसके सहायकों की नियुक्ति केबिनेट द्वारा की जाती है और सम्राट इस नियुक्ति की पुष्टि (Attest) करता है। दूसरी श्रेणी के प्रोक्यूरेटरों की नियुक्ति का अधिकार प्रधानमंत्री को प्राप्त है। प्रोक्यूरेटर जनरल 65 वर्ष की आयु में और अन्य प्रोक्यूरेटर 63 वर्ष की आयु में पद-निवृत्त होता है। इनके वेतन प्रशिक्षण, योग्यताओं आदि के विषय में कानून बने हुए हैं। इनका मुख्य काम फौजदारी मुकदमों में सरकारी पक्ष रखना होता है।

कार्य करने के लिए न्यायाधीश नामाकित कर सकता है। सर्वोच्च न्यायालय ही निम्न न्यायालयो के न्यायाधीशो को उनके पदो पर नियत करता है। वही उच्च न्यायालयो, जिला न्यायालयो और परिवार न्यायालयो के सचिवालयो के मुख्य अधिकारी को न्यायालयो के सचिवो मे से नियुक्त करता है।

(घ) प्रशिक्षणात्मक एव अनुसधान सम्बन्धी कार्य—सर्वोच्च न्यायालय के अन्तर्गत तीन सस्थान है—विधि प्रशिक्षण तथा अनुसधान सस्थान, न्यायालय लिपिक हेतु अनुसधान तथा प्रशिक्षण सस्थान एव परिवार तथा न्यायालय परिवीक्षण अधिकारी (Probation Officer) सस्थान। ये सस्थान सर्वोच्च न्यायालय की देखरेख मे कार्य करते हैं। ये न्यायाधीशो अन्य अधिकारियो लिपिको एपरटिसो आदि का प्रशिक्षण देते हैं। विधि प्रशिक्षण और अनुसधान सस्थान मे उच्च लोकसेवा की न्यायिक परीक्षा पास विद्यार्थी प्रशिक्षण ग्रहण करते है।

न्यायिक विषयो पर अनुसधान का कार्य विधि प्रशिक्षण तथा अनुसधान सस्थान और न्यायालय लिपिक हेतु अनुसधान तथा प्रशिक्षण सस्थान द्वारा किया जाता है। प्रथम सस्थान न्यायिक विषयो पर और द्वितीय लिपिकीय कार्यो पर अनुसधान करता है। कुछ न्यायिक अनुसधान अधिकारी सर्वोच्च न्यायालय मे भी होते हैं। वे न्यायाधीशो की आज्ञा पर न्यायिक प्रक्रिया पर अनुसधान करते हैं।

(ङ) पर्यवेक्षण सम्बन्धी कार्य—सर्वोच्च न्यायाल
अधिकारियो एव निम्न न्यायालय के अधिकारियो से स
अधिकार भी प्राप्त है। वह अपने अधिकारियो, निम्न
अधिकारियो के कार्यो का सर्वेक्षण करता है। लेकिन यह
न्यायालयो की न्यायिक शक्ति को प्रभावित नही कर

उच्च न्यायालय (High Courts)

सर्वोच्च न्यायालय के नीचे उच्च न्यायालय
8 क्षेत्रो मे विभाजित है और प्रत्येक क्षेत्र मे एक एक
अधिकाशत अपील के न्यायालय हैं और अपने क्षेत्र
होता है। उच्च न्यायालय का न्यायाधीश 65 वर्ष
सकता है। इनकी सख्या अलग-अलग क्षेत्रो मे
प्राय तीन-तीन की बचो के रूप मे सुनते हैं और
द्रोह के मुकदमो मे 5 न्यायाधीशो की बच बठती है
क्षेत्र मे आते हैं।

जिला न्यायालय (District Courts)

जापान मे उच्च न्यायालयो के नीचे 49

लगभग 240 शाखाये हैं। जिला न्यायालयो मे कुछ न्यायाधीश और कुछ सहायक न्यायाधीश होते है। न्यायालय का प्रशासन सम्बन्धी काय एक न्यायिक सभा द्वारा किया जाता है जिसके सदस्य सभी न्यायाधीश होते हैं और मुख्य न्यायाधीश इसका अध्यक्ष होता है। सर्वोच्च न्यायालय जिला न्यायालय की शाखाएं स्थापित कर सकता है। जिला न्यायालयो मे दीवानी और फौजदारी दोनो तरह के मामले आते है तथा नीचे की अदालतो की अपीलें भी आती है। साधारणत एक ही न्यायाधीश मुकदमा सुनता है और निर्णय देता है परन्तु गम्भीर मामलो मे तीन न्यायाधीशो की बेंच भी बैठती है।

पारिवारिक न्यायालय (Courts of Domestic Relations)

ये न्यायालय जापान का पचायतो के क्षेत्र मे अभी प्रयोग है। वस्तुत ये न्यायालय जिला न्यायालयो के ही अङ्ग है जिनके निर्माण का उद्देश्य पारिवारिक झगडो को निपटाने मे सहायता देना है। फलस्वरूप इनमे तलाक, जायदाद के बटवारे गोद लेने वचन तोडने आदि से सम्बन्धित मामले आते हैं। सविधान ने स्त्रियो को पुरुषो के समान अधिकार देकर जो एक सामाजिक क्रांति का सिलसिला चलाया है उसके कारण इन पारिवारिक अदालतो मे मुख्यत तलाक के मामले आते है। यह न्यायालय एक प्रकार के अर्द्ध पचायती न्यायालय है जिनमे न्यायाधीशो के अतिरिक्त साधारण नागरिक भी न्याय करने बैठते है और कानूनी प्रक्रिया की जटिलता हटा दी जाती है।

समरी न्यायालय (Summary Courts)

जापान मे सबसे नीचे के न्यायालय समरी न्यायालय है जो ब्रिटेन के जस्टिस आफ पीस न्यायालयो की भाति है। इनमे दीवानी और फौजदारी के छोटे मुकदमे आते है। मुकदमा का फैसला तुरन्त होता है। इसलिये भी इन्हे समरी न्यायालय कहा जाता है।

प्रोक्यूरेटर्स
(Procurators)

जापान मे न्यायाधीशो के साथ सरकारी वकीलो का भी एक सगठन है जिसके प्रमुख को प्रोक्यूरेटर जनरल (Procurator General) कहा जाता है। इसी के द्वारा न्याय मत्रालय कार्य करता है। इसके और इसके सहायको की नियुक्ति केबिनट द्वारा की जाती है और सम्राट इस नियुक्ति की पुष्टि (Attest) करता है। दूसरी श्रेणी के प्रोक्यूरेटरो की नियुक्ति का अधिकार प्रधानमत्री को प्राप्त है। प्रोक्यूरेटर जनरल 65 वर्ष की आयु मे और अन्य प्रोक्यूरेटर 63 वर्ष की आयु मे पद निवृत होता है। इनके वेतन प्रशिक्षण, योग्यताओ आदि के विषय मे कानून बने हुए है। इनका मुख्य काम फौजदारी मुकदमो मे सरकारी पक्ष रखना होता है।

7

स्थानीय शासन

(LOCAL GOVERNMENT)

जापान के नवीन संविधान के अन्तर्गत स्थानीय स्वशासन को विशेष महत्त्व दिया गया है और अध्याय 8 में उसके मूल सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है। संविधान की धारा 92 में कहा गया है कि स्थानीय लोक संस्थाओं के संगठन और कार्य संचालन सम्बन्धी विनियम, स्थानीय स्वायत्तता के सिद्धांत के अनुसार कानून द्वारा निश्चित किया जायेगा। धारा 93 के अनुसार 'स्थानीय लोक संस्थायें अपने ऐच्छिक अवयवों के रूप में कानून के अनुकूल सभाओं की स्थापना करेंगी। सभी स्थानीय लोक संस्थाओं के प्रमुख अधिशासी कर्मचारी उनकी सभाओं के सदस्य और कानून द्वारा निर्धारित अन्य स्थानीय अधिकारी, अपने विभिन्न क्षेत्रों में प्रत्यक्ष लोक-मत द्वारा चुने जायेंगे।' धारा 94 यह उपबंधित करती है कि स्थानीय लोक संस्थाओं को अपनी सम्पत्ति का प्रबन्ध करने और अपने कार्यों एवं प्रशासन का उपबन्ध करने तथा कानून के अन्तर्गत अपने विनियम बनाने का अधिकार होगा। धारा 95 में उल्लिखित है कि 'किसी एक ही स्थानीय लोक संस्था पर लागू होने वाला कोई एक कानून डायट द्वारा तद्विषयक स्थानीय लोक संस्था के निर्वाचकों की बहुसंख्या के अनुकूल प्राप्त की हुई सहमति के बिना नहीं बनाया जा सकता।'

स्थानीय सरकार का संगठन एवं कार्य

(Organisation & Functions of the Local Government in Japan)

संविधान के अन्तर्गत निर्देश के अनुरूप वर्तमान स्थानीय शासन-संस्थाओं का संगठन मूलतः स्थानीय स्वायत्तता कानून (Local Autonomy Law) 1947 एवं बाद में समय समय पर होने वाले संशोधनों के आधार पर किया गया है।

जापान में स्थानीय शासन की संस्थायें दो श्रेणी की हैं—एक प्रीफेक्चरल (Prefectural) जिसमें चार प्रकार की संस्थायें हैं तथा दूसरी नगरपालिकायें जिनके अन्तर्गत नगर, कस्बे और गांव का प्रशासन आता है।

प्रीफेक्चर की स्थानीय सरकार (Prefectural Local Government)

गवनर—इस समय होकेडो को छोडकर सम्पूर्ण देश 46 प्रोफेक्चरों (प्रशासनिक इकाइयों) में बटा हुआ है। प्रीफेक्चर का प्रमुख गवर्नर कहलाता है। गवनर के लिए यह आवश्यक है कि वह जापान का निवासी हो और उसकी आयु कम से कम 30 वष की हो। लिंग के आधार पर कोई बंदिश नहीं है। गवनर एक साथ डायट और स्थानीय-सभा का सदस्य नहीं हो सकता। वह प्रीफेक्चर के लोगों द्वारा चुना जाता है और चार वर्ष तक अपने पद पर बना रहता है बशर्ते कि वह इससे पहले त्याग पत्र न दे दे या प्रीफेक्चर की सभा द्वारा उसके विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास न कर दिया जाए। अविश्वास का प्रस्ताव कुल सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से पास किया जा सकता है। यह गवनर की इच्छा पर है कि वह या तो सभा को भंग कर दे और नये निर्वाचन के लिये कहे या फिर त्याग पत्र दे दे। नव निर्वाचित सभा दुबारा अविश्वास प्रस्ताव पास करके गवनर को पद से हटा सकती है और इसमें उसे कुल सदस्यों की संख्या का साधारण बहुमत चाहिए। गवर्नर को 'लोकप्रिय प्रत्याहरण (Popular Recall) द्वारा भी पदच्युत किया जा सकता है। व्यवस्था यह है कि यदि प्रीफेक्चर के एक तिहाई निर्वाचक गवनर को उसके पद से हटाने की याचिका करते हैं और इस याचिका की प्रत्याहरण निर्वाचन (Recall Election) में बहुमत प्राप्त हो जाता है तो गवनर को अपना स्थान छोडना पडता है।

सहायक गवनर—गवनर एक से तीन तक सहायक गवनर नियुक्त कर सकता है और उन्हें हटा भी सकता है। गवनर ही अपने सहायकों के कर्त्तव्य का निर्धारण करता है। इन सहायक गवनरों के कर्त्तव्य राजनीतिक एवं प्रशासनिक दोनों है। गवनर की अनुपस्थिति मे उसके पद पर ये ही कार्य करते है। यदि किसी कारणवश गवर्नर और सहायक गवनर दोनों ही प्रीफेक्चर में नहीं हों तो प्रधान मन्त्री का अधिकार है कि वह किसी को भी उस अवधि के लिए कार्यवाहक गवनर नियुक्त कर दे। स्टाफ के अन्य सदस्यों के अतिरिक्त प्रीफेक्चर में एक लेखापाल एक कोषाध्यक्ष एक लेखा परीक्षक और उपनियमों के अनुसार कुछ अन्य कर्मचारी होते है।

गवनर की कार्यकारी शक्तियां और स्थिति—जापानी प्रीफेक्चर के गवनर को पर्याप्त अधिकार प्राप्त हैं और उसकी शक्तियां बहुत कुछ वे ही हैं जैसा कि परतन्त्र भारत में भारतीय प्रान्त के गवनर को प्राप्त थी। गवनर अपने प्रशासन का समन्वय करता है और अपने इलाके का प्रतिनिधित्व करता है। उसे दो क्षमताओं में काम करना पडता है-राष्ट्रीय मामलों में वह केन्द्रीय सरकार के प्रतिनिधि रूप में काय करता है और स्थानीय मामलों

में प्रीफेक्चर के अधिकारी की हैसियत से काय करता है। गवनर द्वारा किये जाने वाले काय निम्नलिखित हैं—

1 इलाके के महत्त्वपूर्ण अधिकारियों को नियुक्त करना, उन्हें उनके पद से हटाना और उनका पर्यवेक्षण करना।
2 सरकारी दस्तावेजो और अन्य आवश्यक कागजातो का अभिरक्षण करना।
3 प्रीफेक्चर के बजट पर नियन्त्रण रखना और अपने मार्गदर्शन में उसे तयार करना।
4 सभी करो के समाहरण और व्यय के भुगतान तथा लेखा परीक्षा व सम्पत्ति की व्यवस्था का दायित्व वहन करना।
5 प्रीफेक्चर को सभा के निर्धारण किये बिना ही आवश्यकतानुसार विनियम और अध्यादेश जारी करना।
6 उपयुक्त मुआवजा देकर सम्पत्ति का अर्जन करना।
7 विनियमो या अध्यादेशो के अतिक्रमण के लिए दो हजार येन तक जुर्माने का आदेश देना।
8 सकटकाल की अवधि मे प्रीफेक्चर द्वारा सभा के सभी या कुछ अधिकार आवश्यकतानुसार ग्रहण करना और विनियम जारी करना, आवश्यकतानुसार विधिवत् अधिकृत कार्यों के लिए धन खच करना, चाहे यह खच व्यवस्थापिका के निर्णयो के विरुद्ध ही क्यो न हो।

गवनर को स्थानीय सरकार पर निदेशात्मक शक्ति प्राप्त है वह मेयर का नियन्त्रण करता है, यद्यपि उसे मेयर को बर्खास्त करने का अधिकार नहीं है फिर भी वह उसे कानूनी कर्तव्य करने के लिए बाध्य कर सकता है। गवर्नर अपनी व्यापक शक्तियो के आधार पर नगरपालिकाओ को निर्देश दे सकता है उनका पर्यवेक्षण कर सकता है तथा उनके रेकाड तथा लेखा की जाच कर सकता है। प्रशासनिक शक्तियो के अतिरिक्त गवनर को कुछ महत्त्वपूर्ण राजनीतिक एव सामाजिक उत्तरदायित्व भी वहन करने पडते हैं। गवनर सरकार का प्रवक्ता होता है अत उसकी प्रत्येक बात को ध्यानपूर्वक और बडे सम्मान के साथ सुना जाता है।

प्रीफेक्चर का विधान मण्डल—प्रीफेक्चर की सभाओ की सदस्य सख्या इलाको की आबादी के अनुसार अलग-अलग हैं। यह 40 से 120 सदस्यों तक है। प्रीफेक्चर के निवासी सदस्यो का निर्वाचन करते हैं। मतदाता को 20 वष या इससे अधिक की आयु का होना आवश्यक है। विधान मण्डल के लिए प्रत्याशी की 25 वष की आयु का होना आवश्यक है। विधान मण्डल का अवधि 4 वष का है। प्रीफेक्चर के विधान मण्डल का सदस्य न

तो डायट का सदस्य हो सकता है और न स्थानीय प्रशासन का। विधान मण्डल के नियमित अधिवेशन वर्ष में ६ बार होते हैं तथा सभा के एक चौथाई सदस्यो द्वारा माग किये जाने पर उसके असाधारण अधिवेशन भी बुलाये जा सकते हैं।

प्रीफेक्चर की विधान सभा को इसकी सीमाओं और अधिकारों के अन्तर्गत उपनियमो के अधिनियमन की शक्ति प्रदान की गई है। यह उपनियमो के अतिक्रमण के लिए दो वर्ष तक के कारावास का या एक लाख येन तक के जुर्माने का दण्ड दे सकती है। प्रीफेक्चर की सभा वार्षिक बजट निर्धारित करती है और लेखा परीक्षकों की रिपोर्ट की चर्चा करती है। यह करों का आरोपण करती है और लोक-सभाओं के लिए फीस नियत करती है। सार्वजनिक सम्पत्ति का प्रबन्ध करने के लिए संविदा भी यही करती है। पुस्तकालय कायम करने और नगरो तथा सभा के सदस्यो के प्रयोग के लिये सरकारी राजपत्रो व अन्य सामग्री की व्यवस्था करना भी प्रीफेक्चर सभा अथवा विधान मण्डल का कर्त्तव्य है।

गवर्नर और विधान मण्डल का सम्बन्ध—दोनो का सम्बन्ध संसदीय प्रकार का है। गवर्नर विधेयको को प्रारम्भ करता है विधान मण्डल द्वारा पारित किये गये विधेयको को हस्ताक्षरित करता है। उसे सीमित वीटो का अधिकार भी प्रदान किया गया है। अपने विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पास होने की सूरत में वह विधान मण्डल को भंग कर सकता है। इसी प्रकार विधान मण्डल भी गवर्नर को त्याग पत्र देने के लिए बाध्य कर सकता है यदि वह अपने पुनर्निर्वाचन के पश्चात् साधारण बहुमत से गवर्नर के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पास कर दे। गवर्नर विशेष शक्तियों का प्रयोग करके विधान-मण्डल पर नियन्त्रण कर सकता है। यह विशेष शक्तियां प्रमुखत ये हैं—गवर्नर विधान मण्डल के किसी संकल्प का पुनर्विचार के लिए लौटा सकता है और इस प्रकार इसके पास होने में देरी कर सकता है अथवा इसे समाप्त कर सकता है, लेकिन यदि विधान-मण्डल इसे दुबारा पास कर देती है और इसे दो तिहाई बहुमत का समर्थन प्राप्त हो जाता है तो इसे अर्थात् संकल्प को अन्तिम रूप से पास कर दिया जाता है। यदि सभा का अधिवेशन नहीं होता है तो गवर्नर उपनियम जारी कर सकता है। इसके अतिरिक्त गवर्नर प्रशासनिक सेवाओं के लिए धन खर्च करने के विशेष अधिकार का इस्तेमाल करने की धमकी देकर विधान-मण्डल को प्रभावित कर सकता है। पुनश्च गवर्नर किसी भी उपनियम या संकल्प को लौटा सकता है, यदि वह इसे असंवैधानिक अथवा गैर-कानूनी समझे। वह इसके विरुद्ध अदालत में कार्यवाही भी कर सकता है।

यद्यपि गवर्नर अपने विशेषाधिकारों और अपनी विवेक शक्ति के बल

मेयर के ही कर्त्तव्य हैं। सकटकाल के दौरान मेयर उपनियमो के महत्व के विनियम जारी कर सकता है, विधिवत् प्राधिकृत कार्यों के लिए धन खर्च कर सकता है और बजट को कम कर सकता है।

नगर-सभा (Municipal Assembly)—इसके सदस्यों का चुनाव जापान के उन नागरिको द्वारा किया जाता है जो 20 वर्ष या अधिक की आयु के हो और उस इलाके के लगातार 3 मास तक निवासी रहे हो। नगर-सभा के प्रत्याशी की कम से कम आयु 25 है। नगर सभा की सदस्य सख्या कम से कम 12 और अधिक से अधिक 48 है। यह आकार जनसख्या के अनुपात से बदलता रहता है। नगर-सभा के सदस्य इसके साथ डायट और प्रीफेक्चर की सभा के सदस्य नहीं हो सकते। सदस्यों की अवधि 4 वर्ष की है और उनका पुनर्निर्वाचन भी हो सकता है। कम आबादी वाले छोटे-छोटे कस्बो और ग्रामो में निर्वाचकों की सामान्य बैठकें ही नगर सभाओं का स्थान ले लेती हैं।

नगर-सभा का अधिवेशन वर्ष में 6 बार नियमित अधिवेशनों के रूप में होता है। मेयर अथवा कुल सदस्यों के एक चौथाई भाग के कहने पर विशेष अधिवेशन भी बुलाया जा सकता है। नगर-सभा को अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर उपनियम बनाने की शक्ति प्रदान की गई है। यह वार्षिक बजट पेश करती है और अपने उपनियमों के उल्लघन करने के लिए दण्ड निहित करती है। यह करारोपण भी करती है और सार्वजनिक सेवाओं के लिये शुल्क नियत करती है। सभा स्थानीय मामलो की जाच कर सकती है तथा स्थानीय अधिकारियो को गवाही देने के लिए अपने सामने पेश होने के लिए कह सकती है।

साराश मे, जापान में नवीन सविधान के अन्तर्गत जिस प्रकार के स्थानीय प्रशासन के सगठन की परिकल्पना की गई है, वह लोकतन्त्रात्मक पद्धति के अनुकूल है।

मेयर के ही कर्त्तव्य हैं। संकटकाल के दौरान मेयर उपनियमों के महत्व के विनियम जारी कर सकता है, विधिवत् प्राधिकृत कार्यों के लिए धन खर्च कर सकता है और बजट को कम कर सकता है।

नगर-सभा (Municipal Assembly)—इसके सदस्यों का चुनाव जापान के उन नागरिकों द्वारा किया जाता है जो 20 वर्ष या अधिक के हो और उस इलाके के लगातार 3 मास तक निवासी रहे हो। ... के प्रत्याशी की कम से कम आयु 25 है। नगर सभा की कम से कम 12 और अधिक से अधिक 48 है। यह आबादी ...पात से बदलता रहता है। नगर-सभा के सदस्य इनके ... प्रीफेक्चर की सभा के सदस्य नहीं हो सकते। सदस्यों की ... उनका पुनर्निर्वाचन भी हो सकता है। कम आबादी ... ग्रामों में निर्वाचकों की सामान्य बैठकें ही नगर ...

पर विधान-मण्डल की इच्छाग्रा के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है, लेकिन दोनो के वतमान सम्बन्धों से ऐसा न्हीं लगता कि एक दूसरे से वरिष्ठ हैं। वास्तविक व्यवहार के अन्दर ऐसा हो कि उसमे समाधान को कोई सभावना नही हो तो उनमे से एक अपने पद से त्याग पत्र दे देगा।

नगरपालिका (Municipality)

ऊपर हमने प्रीफेक्चर की स्थानीय सरकार का वर्णन किया है। नगरा, कस्बो और ग्रामो की स्थानीय सरकारें नगरपालिकाग्रा द्वारा चलायी जाती है। नगरपालिका की कार्यपालिका शक्ति मेयर (Mayor) म निहित है और विधायी शक्तिया नगरपालिका म ही।

मेयर—जापान का कोई भी नागरिक, जो 25 वर्ष या इससे अधिक की आयु वाला हो, मेयर चुना जा सकता है। मेयर भी एक ही समय म डायट द्वारा स्थानीय असेम्बली या सभा का सदस्य नही हो सकता। वह सार्वजनिक वयस्क मताधिकार के आधार पर इलाके के लोगो द्वारा चुना जाता है। अपने कर्त्तव्य पालन के लिए उसे नियमित वेतन दिया जाता है। कानून के अनुसार कर्त्तव्य-पालन न करने पर गवर्नर उसे पदच्युत कर सकता है। इसके अतिरिक्त नगरपालिका अपनी कुल सदस्य सख्या के दो तिहाई बहुमत से अविश्वास प्रस्ताव पास करके भी मेयर को त्याग पत्र देने के लिये विवश कर सकती है। एक और भी तरीका है जिसम मेयर पदच्युत किया जा सकता है और वह है प्रत्याहरण (Recall) का। इसके लिए निर्वाचको का एक तिहाई भाग याचिका रखता है और इस विषय को नगरपालिका के मतदाताग्रा के निर्णयो के लिए उनके समक्ष रखा जाता है, यदि निर्णय मेयर के विरुद्ध होता है तो उसे त्यागपत्र देना ही पडता है।

सहायक मेयर—मेयर के कर्त्तव्य पालन म सहायता के लिए एक सहायक मेयर की भी व्यवस्था की गई है जिसे मेयर ही नियुक्त करता है और वही उसे हटा भी सकता है। सहायक मेयर को उन सभी कार्यों को करना पड़ता है जो मेयर द्वारा उसे सौंपे जाते है। मेयर के कर्त्तव्य अशत राजनीतिक और प्रशासनिक है और उसको अनुपस्थिति म सहायक मेयर उसके सभी कार्य करता है।

मेयर के भी दोहरे उत्तरदायित्व और कर्त्तव्य हैं। राष्ट्रीय मामलो पर विचार करता है और इसके लिए अपने प्रीफेक्चर के गवर्नर के प्रति उत्तरदायी होता है। स्थानीय मामलो के लिए वह अपनी नगरपालिका का कार्यकारी अधिकारी है और इस नाते वह स्थानीय अधिकारियो की नियुक्ति व पदच्युति करता है, उनके कार्यों का पर्यवेक्षण करता है, नगरपालिका का बजट तयार करता है तथा इसे समिति के विचारार्थ प्रस्तुत करता है। सभी कर और शुल्क वसूल करना एव सभी विनियोगो की लेखा परीक्षा भी

मेयर के ही कर्त्तव्य हैं। सकटकाल के दौरान मेयर उपनियमो के महत्व के विनियम जारी कर सकता है, विधिवत् प्राधिकृत कार्यों के लिए धन खर्च कर सकता है और बजट को कम कर सकता है।

नगर-सभा (Municipal Assembly)—इसके सदस्यो का चुनाव जापान के उन नागरिको द्वारा किया जाता है जो 20 वर्ष या अधिक की आयु के हो और उस इलाके के लगातार 3 मास तक निवासी रहे हो। नगर-सभा के प्रत्याशी की कम से कम आयु 25 है। नगर सभा की सदस्य सख्या कम से कम 12 और अधिक से अधिक 48 है। यह आकार जनसख्या के अनुपात से बदलता रहता है। नगर-सभा के सदस्य इसके साथ डायट और प्रीफेक्चर की सभा के सदस्य नही हो सकते। सदस्यो की अवधि 4 वर्ष की है और उनका पुनर्निर्वाचन भी हो सकता है। कम आबादी वाले छोटे छोटे कस्बो और ग्रामो म निर्वाचको की सामान्य बैठके ही नगर सभाओ का स्थान ले लेती हैं।

नगर-सभा का अधिवेशन वर्ष म 6 बार नियमित अधिवेशनो के रूप मे होता है। मेयर अथवा कुल सदस्यो के एक चौथाई भाग के कहने पर विशेष अधिवेशन भी बुलाया जा सकता है। नगर-सभा को अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर उपनियम बनाने की शक्ति प्रदान की गई है। यह वार्षिक बजट पेश करती है और अपने उपनियमो के उल्लघन करने के लिए दण्ड निहित करती है। यह करारोपण भी करती है और सार्वजनिक सेवाओ के लिये शुल्क नियत करती है। सभा स्थानीय मामलो की जाच कर सकती है तथा स्थानीय अधिकारियो को गवाही देने के लिए अपने सामने पेश होने के लिए कह सकती है।

साराश मे, जापान म नवीन सविधान् के अन्तर्गत जिस प्रकार के स्थानीय प्रशासन के सगठन की परिकल्पना की गई है, वह लोकतन्त्रात्मक पद्धति के अनुकूल है।

पर विधान मण्डल की इच्छाओं के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है, लेकिन दोनों के वर्तमान सम्बन्धों से ऐसा नहीं लगता कि एक दूसरे से वरिष्ठ हैं। वास्तविक व्यवहार के अन्दर ऐसा हो कि उसमे समाधान की कोई सभावना नहीं हो तो उनमे से एक अपने पद से त्याग पत्र दे देगा।

नगरपालिका (Municipality)

ऊपर हमने प्रीफेक्चर की स्थानीय सरकार का वर्णन किया है। नगरों कस्बों और ग्रामों की स्थानीय सरकारें नगरपालिकाओं द्वारा चलायी जाती हैं। नगरपालिका की कार्यपालिका शक्ति मेयर (Mayor) में निहित है और विधायी शक्तियां नगरपालिका में ही।

मेयर—जापान का कोई भी नागरिक, जो 25 वर्ष या इससे अधिक की आयु वाला हो मेयर चुना जा सकता है। मेयर भी एक ही समय में डायट द्वारा स्थानीय असेम्बली या सभा का सदस्य नहीं हो सकता। वह सार्वजनिक वयस्क मताधिकार के आधार पर इलाके के लोगों द्वारा चुना जाता है। अपने कर्त्तव्य पालन के लिए उसे नियमित वेतन दिया जाता है। कानून के अनुसार कर्त्तव्य-पालन न करने पर गवर्नर उसे पदच्युत कर सकता है। इसके अतिरिक्त नगरपालिका अपनी कुल सदस्य संख्या के दो तिहाई बहुमत से अविश्वास प्रस्ताव पास करके भी मेयर को त्याग-पत्र देने के लिये विवश कर सकती है। एक और भी तरीका है जिसमें मेयर पदच्युत किया जा सकता है और वह है प्रत्याहरण (Recall) का। इसके लिए निर्वाचकों का एक तिहाई भाग याचिका रखता है और इस विषय को नगरपालिका के मतदाताओं के निर्णय के लिए उनके समक्ष रखा जाता है, यदि निर्णय मेयर के विरुद्ध होता है तो उसे त्यागपत्र देना ही पड़ता है।

सहायक मेयर—मेयर के कर्त्तव्य पालन में सहायता के लिए एक सहायक मेयर की भी व्यवस्था की गई है जिसे मेयर ही नियुक्त करता है और वही उसे हटा भी सकता है। सहायक मेयर को उन सभी कार्यों को करना पड़ता है जो मेयर द्वारा उसे सौंपे जाते हैं। मेयर के कर्त्तव्य प्रधानत राजनीतिक और प्रशासनिक हैं और उसकी अनुपस्थिति में सहायक मेयर उसके सभी कार्य करता है।

मेयर के भी दोहरे उत्तरदायित्व और कर्त्तव्य हैं। राष्ट्रीय मामलों पर विचार करता है और इसके लिए अपने प्रीफेक्चर के गवर्नर के प्रति उत्तरदायी होता है। स्थानीय मामलों के लिए वह अपनी नगरपालिका का कार्यकारी अधिकारी है और इस नाते वह स्थानीय अधिकारियों की नियुक्ति व पदच्युति करता है, उनके कार्यों का पर्यवेक्षण करता है, नगरपालिका का बजट तैयार करता है तथा इसे समिति के विचारार्थ प्रस्तुत करता है। सभी कर और शुल्क वसूल करना एवं सभी विनियोगों की लेखा परीक्षा भी

मेयर के ही कर्त्तव्य हैं। संकटकाल के दौरान मेयर उपनियमों के महत्व के विनियम जारी कर सकता है, विधिवत् प्राधिकृत कार्यों के लिए धन खर्च कर सकता है और बजट को कम कर सकता है।

नगर सभा (Municipal Assembly)—इसके सदस्यों का चुनाव जापान के उन नागरिकों द्वारा किया जाता है जो 20 वर्ष या अधिक की आयु के हों और उस इलाके के लगातार 3 मास तक निवासी रहे हों। नगर-सभा के प्रत्याशी की कम से कम आयु 25 है। नगर सभा की सदस्य संख्या कम से कम 12 और अधिक से अधिक 48 है। यह आकार जनसंख्या के अनुपात से बदलता रहता है। नगर-सभा के सदस्य इसके साथ डायट और प्रीफेक्चर की सभा के सदस्य नहीं हो सकते। सदस्यों की अवधि 4 वर्ष की है और उनका पुनर्निर्वाचन भी हो सकता है। कम आबादी वाले छोटे छोटे कस्बों और ग्रामों में निर्वाचकों की सामान्य बैठकें ही नगर सभाओं का स्थान ले लेती हैं।

नगर-सभा का अधिवेशन वर्ष में 6 बार नियमित अधिवेशनों के रूप में होता है। मेयर अथवा कुल सदस्यों के एक चौथाई भाग के कहने पर विशेष अधिवेशन भी बुलाया जा सकता है। नगर-सभा को अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर उपनियम बनाने की शक्ति प्रदान की गई है। यह वार्षिक बजट पेश करती है और अपने उपनियमों के उल्लंघन करने के लिए दण्ड निहित करती है। यह करारोपण भी करती है और सार्वजनिक सेवाओं के लिये शुल्क नियत करती है। सभा स्थानीय मामलों की जांच कर सकती है तथा स्थानीय अधिकारियों को गवाही देने के लिए अपने सामने पेश होने के लिए कह सकती है।

सारांश में, जापान में नवीन संविधान के अन्तर्गत जिस प्रकार के स्थानीय प्रशासन के संगठन की परिकल्पना की गई है, वह लोकतन्त्रात्मक पद्धति के अनुकूल है।

8
राजनीतिक दल
(POLITICAL PARTIES)

द्वितीय महायुद्ध के दौरान सन् 1940 में जापान में एक नवीन शासन प्रणाली स्थापित हुई, जिससे सेना अत्यन्त शक्तिशाली स्थिति में आ गई। सैनिक शासन के अन्तर्गत राजनीतिक दलों के समाप्त हो जाने से जापान से प्रजातन्त्र का प्रत्येक चिन्ह मिट गया। द्वितीय महायुद्ध के बाद जब 1947 में वर्तमान नवीन जापानी संविधान लागू हुआ तो राजनीतिक दलों का पुनरुत्थान हुआ। वैसे यथार्थ में इस संविधान के लागू होने से पूर्व ही प्राचीन राजनीतिक दल फिर से उत्पन्न होकर जोर पकड़ने लग गये थे। शनैः शनैः राजनीतिक दलों ने नये सिरे से अपने संगठन स्थापित कर लिए और आज जापान में निम्न लिखित प्रमुख राजनीतिक दल वहाँ की राजनीति में प्रमुख भूमिका अदा करते हैं—

उदार प्रजातान्त्रिक दल (Liberal Democratic Party)

इस दल का जन्म उदार (Liberal) एवं प्रजातान्त्रिक (Democratic) दलों को मिलाकर हुआ। इन दोनों ही दलों का विलय सन् 1955 में हुआ। इसके पूर्व यह दोनों पृथक्-पृथक् दल थे। नवीन दल अत्यन्त शक्तिशाली सिद्ध हुआ और वर्तमान जापान में इसका अति प्रमुख स्थान है। यही दल जापान का एकमात्र रूढ़िवादी दल है जिसका सम्बन्ध बड़े बड़े व्यापारियों और राजवंश के लोगों और शासन के अधिकारियों से है। संगठन की दृष्टि से यह केन्द्रीभूत दल है। यद्यपि जिला-स्तर पर एवं स्थानीय स्तर पर इसकी शाखायें हैं, लेकिन इसका स्थानीय संगठन विकसित नहीं है। सारा कार्य केन्द्रीय संगठन के द्वारा ही संचालित होता है। दल के अधिकारियों में चार प्रमुख व्यक्ति होते हैं—अध्यक्ष (President), महासचिव (Secretary General), नीति अनुसंधान समिति का अध्यक्ष (Chairman of Policy Research) एवं कार्यकारिणी समिति का अध्यक्ष (Chairman of the Executive Council)। इसके अतिरिक्त एक परामर्शदाता भी होता है जिसको सम्मिलित करने पर इन पाँचों प्रमुख व्यक्तियों का 'हाई कमाण्ड' बनता है। पदाधिकारियों में अध्यक्ष का पद बड़ा महत्त्व का होता है। अध्यक्ष के निर्वाचन में एक सहायक वस्तु यह है कि वह सम्पन्न और प्रभावशाली व्यक्ति है। प्रायः सरकार प्राप्त उच्च सरकारी अधिकारी इस पद के लिए

अधिक उपयुक्त माना जाता है। महासचिव दल का प्रमुख प्रवक्ता होता है जिसका मुख्य काय धन सग्रह करना होता है।

दल के प्रत्येक सदस्य को 200 येन चन्दा प्रति वर्ष देना पडता है। चू कि यह सदस्यता शुल्क कुछ भारी पडती है, अत अपेक्षाकृत कुछ अधिक सम्पन्न वग के लोग ही दल की सदस्यता प्राप्त करने म समर्थ होते है। दल के सदस्यो मे अधिकाश व्यक्ति व्यावसायिक राजनीतिज्ञ है। इसके अतिरिक्त देहातो के कृपक वर्ग के बडे प्रतिनिधि, नगरो के वाणिज्य एव उद्योग सस्थाना के स्वामी, लघु उद्योगो के कमचारी, उच्च-स्तर के प्रशासकीय अधिकारी, वकील, पत्रकार आदि इसके सदस्य होते है।

सद्धान्तिक दृष्टि से यह दल अनुदार एव प्रतिक्रियावादी है और युद्ध पूर्व की सामाजिक राजनीतिक एव सवैधानिक स्थिति को पुन स्थापित करना चाहता है। दल स्थानीय स्वायत्त शासन के विरुद्ध है और स्वय लोकसेवा व्यवस्था का समर्थक भी नही है। इस प्रकार यह दल केन्द्रीयभूत स्थानीय शासन और पूर्ण रूपेण शासनाधीन लोकसेवा स्थापित करने के पक्ष म है। लोकतन्त्र और स्वत त्रता का यह समथक है। यद्यपि युद्ध त्याग का यह समर्थन करता है तथापि राष्ट्रीय शस्त्रीकरण को भी आवश्यक मानता है। इसके साथ ही यह दल व्यापार स्वातन्त्र्य एव व्यक्तिगत उपक्रम का समथक है एव पूर्ण स्वतन्त्र न्याय पालिका का विरोधी। परन्तु इतनी अनुदार नीतियो को रखते हुए भी लोक-कल्याणकारी राज्य की स्थापना का यह विरोधी नही है। जन-साधारण क जीवन को अधिक सुखी एव सम्पन्न बनाने के लिए यह लोक-स्वास्थ्य बीमा, व द्ध एव असहाय व्यक्तियो के लिए सहायता साधारण मूल्य की भावना व्यवस्था आदि पर जोर देता है। उद्योगो की यह इस आधार पर व्यवस्थित करना चाहता है जिसस जनहित सर्वोत्तम रूप म हो सके।

विदेश-नीति की दृष्टि से यह दल रूस विरोधी और अमरिका समथक दृष्टिकोण लिए हुए है। अमेरिका के साथ जापान के सहयोग की इच्छा रखने हुए उसके साथ रक्षा सधि का भी यह समथक है। इस दल की माँग है कि रूस द्वारा कुराइल द्वीप जापान का लौटा दिया जाना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और स्वतन्त्रता के लिए प्रयासो का समथन करते हुए यह दल एक पूर्ण आत्म-निर्भर एव प्रत्येक दृष्टि से स्वतन्त्र जापान की स्थापना का पोषक है। अन्य देशो के साथ जापान के व्यापार म वृद्धि की भी यह दल इच्छा करता है। व्यापारिक दृष्टि स साम्यवादी चीन क साथ सहयोग करने का भी यह पक्षपाती है। अमरिका के साथ सहयोग करते हुए भी इस दल की माग है कि जापान स्थित अमेरिकन सनिक अड्डो को समाप्त कर दिया जाना चाहिए।

समाजवादी दल (The Socialist Party)

जापान का समाजवादी दल देश का दूसरा दल है। यह दो गुटो म

विभाजित है—दक्षिण मार्गी और वाम मार्गी। दक्षिण मार्गी गुट दल को प्रजातन्त्र समाजवादी-दल और वाम मार्गी गुट को जापान समाजवाद-दल कहते हैं। यह विभाजन सन् 1958 में हुआ था।

दक्षिण मार्गी दल शांति संधि और उससे सम्बन्धित जापान अमेरिका सुरक्षा संधि एवं सीमित पुनर्शस्त्रीकरण का समर्थक है जबकि वाम मार्गी इसका विरोध करते हैं। परन्तु इन अन्तरों के होते हुए भी संगठन की दृष्टि से दोनों दलों के संगठनों में एकरूपता है। दोनों के संगठनों में केन्द्रीय कार्यपालिका समिति एवं उसका सभापति, महासचिव, नीति निर्माण समिति एवं उसका सभापति तथा कार्याध्यक्ष होते हैं। समाजवादी दल में उदार प्रजातान्त्रिक दल के समान कोई अध्यक्ष (President) नहीं होता। दल में केन्द्रीय और स्थानीय दोनों प्रकार के संगठन सुदृढ़ हैं। स्थानीय संगठनों और केन्द्रीय कार्यालयों का सम्बन्ध भी बहुत नजदीक का है। इस दल को श्रमिकों का भारी संख्या में समर्थन प्राप्त है। दल के सदस्यों में प्रोफेसर, लेखक, छात्र, लिपिक वर्ग, विक्रेता एवं अल्प-वेतनभोगी व्यक्ति सम्मिलित हैं।

समाजवादी दल पूर्ण नियोजन, लोक कल्याण में सुधार, निम्न वर्ग के लोगों के जीवन स्तर में वृद्धि, एवं स्वतन्त्र विदेशी नीति के संचालन का पक्षपाती है। यह दल अणुशस्त्रों के प्रशिक्षण का निषेध करता है। दल चाहता है कि चीन को मान्यता मिल जाए और उसके साथ जापान का अधिकाधिक व्यापार हो। एशियायी अफ्रीकीय देशों के स[ाथ] जापान के सम्बन्धों को दृढ़ करने का भी यह पक्षपाती है। रूस, चीन और अमेरिका के साथ सामूहिक सुरक्षा संधि के निर्माण पर भी यह दल जोर देता है।

साम्यवादी दल (The Communist Party)

साम्यवादी दल देश का प्राचीन दल है। इसका दावा है कि यह दल जापान में 1922 से नियमित रूप से मौजूद रहा है। 1949 में इस दल का प्रभाव बहुत बढ़ गया था। उस समय इसने डायट में 63 स्थान प्राप्त किये थे। इसकी सदस्य संख्या भी उस समय लगभग एक लाख थी लेकिन बाद में इस दल का ह्रास होता गया। 1952 में इसकी सदस्य संख्या केवल 50 हजार ही रह गई और डायट में भी यह कोई स्थान ग्रहण नहीं कर सका। आजकल इस दल के समर्थक जापान में रहने वाले कुछ मन्चूरियावासी ही हैं जो अत्यन्त अल्पसंख्या में हैं और साम्यवादी दल का समर्थन अपनी उन कटु भावनाओं के कारण करते हैं जिनका जन्म उसमें उस समय हुआ था जब जापानियों ने उनका शोषण किया था। जापान में साम्यवादी दल के पनप सकने का कारण सोवियत रूस पक्षपाती विचार और नास्तिक दृष्टिकोण है।

उपर्युक्त प्रमुख दलों के अतिरिक्त जापान में ग्रीन ग्रोज-भासायटी एवं कुछ संगठन और भी हैं। अन्य संगठनों में प्रबन्धकों का संगठन (Japan Management Association), मालिकों के संघों का फेडरेशन (Japan

Federation of Employers Association), जनरल कौंसिल का ट्रेड यूनियन कांग्रेस (General Council of Trade Union Congress), जापान फामर्स यूनियन (Japan Farmers Union) आदि मुख्य हैं।

राजनीतिक दलों का संगठन और स्वरूप

जापान के सभी दलों का संगठन मोटे रूप में एक सा है। कहीं-कहीं थोड़ी बहुत भिन्नता दिखलाई देती है। सभी दलों की प्रेसीडेंसी (Presidencies) है और सभी के निदेशालय (Directorates) है। उनके अन्तरंग विभाग (Inner Core) भी है। अनुशासन और वित्त व्यवस्था के क्षेत्र में भिन्नता पाई जाती है।

जापान के राजनीतिक दलों के सम्बन्ध में संविधान मौन है। यह व्यवस्था अमेरिकन और ब्रिटिश राजनीतिक व्यवस्था जैसी है। इस सम्बन्ध में चितोशी यानगा ने ठीक ही लिखा है कि स्वयं दल की यद्यपि संविधान में कोई चर्चा नहीं है तथापि संविधान की मान्यता इस बारे में स्पष्ट है, क्योंकि राजनीतिक दलों के अभाव में उत्तरदायी संसदीय सरकार का न तो अस्तित्व ही रह सकता है और न उसका संचालन ही सम्भव है।' जापान के राजनीतिक दलों में व्यक्तियों का महत्व अधिक काम करता है। नेतृत्व को बाको मान्यता दी जाती है। नेताओं के व्यक्तिगत टकराव तथा व्यक्तित्व के आधार पर दलों की आन्तरिक गुट-बन्दी चलती रहती है। राजनीतिक महत्वाकांक्षाएं प्राप्त करने के ढंग आज भी लगभग वैसे ही हैं जैसे युद्ध से पहले थे। दलों पर पाश्चात्य सभ्यता का भी स्पष्ट प्रभाव दिखलाई देता है। अमेरिकन और ब्रिटिश अनुकरण तथा प्रभाव के होते हुए भी दलीय जीवन का वह आधार प्राप्त नहीं किया जा सका है जो अमेरिका और ब्रिटेन में पाया जाता है। दलों का रूप क्षेत्रीय अधिक और राष्ट्रीय कम है किन्तु अब परिस्थितियां ऐसी बन गई हैं कि कोई भी राजनीतिक दल राष्ट्रीय रूप धारण किये बिना जीवित नहीं रह सकता।

जापान की दल प्रणाली की प्रमुख विशेषताएं
Main Features of Japanese Party System)

(1) धर्म निरपेक्षता—जापानी दलों के निर्माण और पारस्परिक व्यवहार में धार्मिक आधार को कोई महत्व नहीं दिया गया है। दलों के संगठन और विघटन में धर्म का कोई मुख्य हाथ नहीं है।

(2) दलों की बहुतायत—जापान बहुदल प्रणाली का देश है। द्वितीय महायुद्ध के बाद होने वाले प्रथम चुनावों में लगभग 260 राजनीतिक दलों ने भाग लिया था। इनके अलावा और भी सैकड़ों राजनीतिक संगठन थे। वास्तव में जापानी प्रजन स्वभाव के कारण मनभेदता और विभिन्नता के

नौकीन हैं। वे छोटे छोटे मतभेदों के आधार पर राजनीतिक दलों का संगठन कर लेते है। दलों का केन्द्रीय आधार व्यक्ति अथवा नेता होता है अत उनके बनने बिगड़ने का क्रम चलता रहता है। प्रत्येक दल अपने को नवीनतम सिद्ध करने के प्रयत्न मे लगा रहता है।

(3) गुट-बन्दी—दलो म बहुत अधिक गुटबन्दी पाई जाती है जिसके कारण राजनीतिक आवारागर्दी काफी व्याप्त है। इस गुटबन्दी और दलो की अस्थिरता के कारण कोई भी एक दल प्राय सरकार बनाने की सुदृढ स्थिति मे नही होता। यही कारण है कि जापान म प्राय मिश्रित या सम्मिलित सरकारें (Coalition Government) ही बनती रही ह।

(4) पूजीपतियो एव राजनीतिक दलो मे गठजोड़—जापान म बडे बडे पूजीपतियो और व्यवसायियो तथा राजनीतिक दलो म घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है। एकाधिकारी पूजीवाद के साथ दलीय गठबन्धन के कारण सरकारी नीतिया प्राय बडे बडे उद्योगो और व्यवसायो के अनुकूल रहती ह। सरकार और दलो को धन के लिए भी प्राय उन्ही पर निर्भर रहना पड़ता है।

(5) दलो पर नौकरशाही का प्रभाव—राजनीतिक दलो पर नौकरशाही का काफी प्रभाव पाया जाता है। दलो मे सरकारी कर्मचारी बडी सख्या मे निरन्तर प्रवेश करते रहते हैं। फलस्वरूप राजनीतिक दलो का कर्मचारी-स त्रीकरण-सा हो गया है। दलो म सरकारी कर्मचारियो के प्रभाव के कारण डायट म भी नौकरशाही का प्रभाव बहुत बढ गया है।

अन्त म यह उल्लेखनीय है कि यद्यपि जापान म ढेर सारे दल ह किन्तु विशेष रूप से प्रमुखता दो ही दलो को प्राप्त है—उदार प्रजातान्त्रिक दल (Leberal Democratic Party) तथा समाजवादी दल (The Socialist Party)। ये दोनो ही दल डायट म प्रमुख रूप म सक्रिय रहते ह फिर भी जापान द्वि-दलीय व्यवस्था का देश नही माना जा सकता। जापानी लोगो की प्रवृत्ति और परम्परा को देखते हुए निकट भविष्य म यह सम्भावना नही दिखाई देती कि वहा द्वि-दलीय व्यवस्था पनप सकेगी।

EXERCISES

1 Describe the important characteristics of the Modern Constitution of Japan

जापान के वतमान सविधान की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए ।

2 Briefly describe the rights and duties granted to the citizens by the Japanese Constitution Add a short note on the Laws of Citizenship

जापानी नागरिको को सविधान द्वारा प्राप्त अधिकारो व कर्त्तव्यो का सक्षेप मे उल्लेख कीजिए । नागरिकता पर एक छोटा नोट दीजिये ।

3 "Japanese Emperor rules but does not govern Discuss the position of Emperor under present Constitution

"जापान का सम्राट राज्य करता है शासन नही ।" वतमान सविधान के अन्तर्गत जापानी सम्राट की स्थिति को स्पष्ट कीजिये ।

4 Explain the position, functions and powers of the Emperor in the present Constitution of Japan Compare and contrast his position with that of the King in England

जापान के वर्तमान सविधान के अन्तगत सम्राट की स्थिति, उसके कार्यो एव अधिकारो का वर्णन कीजिये । इगलैण्ड के राजा की स्थिति के साथ जापानी सम्राट की स्थिति की तुलना भी कीजिये ।

5 Describe the organisation and working of Japanese Cabinet under the present Constitution

वतमान सविधान के अन्तर्गत जापान की केबिनेट के सगठन तथा कार्य-विधि का वर्णन कीजिए ।

6 What are the nature, size and composition of the Japanese Cabinet after the Second World War ? Also describe its organisation and working

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात की जापान की केबिनेट के स्वरूप, आकार और उसकी रचना क्या रही है ? इसके सगठन और इसकी कार्यप्रणाली का भी वर्णन कीजिये ।

7 How is the Prime Minister of Japan appointed ? Describe his powers and functions.

जापान के प्रधानमन्त्री की नियुक्ति किस प्रकार होती है ? उसकी शक्तियो एव कार्यो का वर्णन कीजिये ।

8 Describe the composition, organisation and powers of the Imperial Diet under the present Constitution of Japan
जापान के वतमान सविधान के अन्तगत इम्पीरियल डायट की रचना, सगठन और उसकी शक्तियो का वर्णन कीजिये।

9 Give an account of the Committee System in the Japanese Diet
जापान की डायट म विभिन्न प्रकार की समितियां तथा कार्यों का वर्णन कीजिये।

10 How a bill becomes an act in Japanese Parliament ? What ways the procedure differs in case of money bills ?
जापानी ससद के विधेयक किस प्रकार पारित होते है ? वित्तीय विधेयको के सम्बन्ध म क्या विशेषता रहती है ?

11 Describe the various functions of the Diet and briefly explain the relationship between the two houses of Parliament
डायट के मुख्य कार्यों का वर्णन कीजिये तथा सक्षप म दोनो सदनो के आपसी सम्बन्धो को स्पष्ट कीजिये।

12 Describe the function of the Speaker of the House of Representatives How does he differ from the speaker of the British House of Commons ?
प्रतिनिधि सदन के अध्यक्ष के कृत्यो का वर्णन कीजिए। वह ब्रिटिश लोकसभा के अध्यक्ष से कहा तक भिन्न है ?

13 *Discuss briefly the organisation and jurisdiction of the courts in Japan and how far do you think it works as the guardian of the Constitution ?*
जापान के न्यायालयो के सगठन तथा अधिकार क्षेत्र का सक्षेप म वर्णन कीजिये। यह न्यायपालिका कहा तक सविधान की सरक्षक है ?

14 Describe the organisation and functions of the Local Government in Japan
जापान मे स्थानीय स्वशासन की सस्थाओ के सगठन तथा कार्यों का वर्णन कीजिए।

15 Give an account of the special features of Japanese Party System
जापानी दल व्यवस्था के विशिष्ट लक्षणो का विवरण दीजिये।

16 Describe some of the Major Political Parties of Japan
जापान के प्रमुख राजनीतिक दलो म से कुछ का वर्णन कीजिये।

SELECTED READINGS

1 Bisson, T A	Shadow over Asia (1941)
2 Colegrove, K W	The Constitution Development of Japan (1951)
3 Douglas V Verney	The analysis of Political Systems (1959)
4 Embree, J F	The Japanese Nation A Social Survey (1945)
5 E Dening	Japan
6 Francis Low	Struggle for Asia (1955)
7 Francis, J Horner	A Case History of Japan (1948)
8 G Lowell Field	Governments in Modern Society (1959)
9 G T Trewartha	Japan A Physical, Cultural and Regional Geography (1945)
10 Gunther John	Inside Asia (1942)
11 Hinton Ike, Palmer, Callard & Kahin	Major Governments of Asia (1958)
12 Ito	Commentaries on the Constitution (Tokyo 1889)
13 Iko Nobutaka	The Beginnings of the Political Democracy in Japan (1950)
14 J Monaki	The Governments and Politics of Japan
15 Kitazawa N	The Government of Japan (1929)
16 Kikuo Nakamura and Yutaka Matsumura	Political Hand book of Japan (1958)
17 arger, Chu and Burks	Far Eastern Governments and Politics . China and Japan (1954)
18 Nanporia N J	Japan s Pacific Adventure (1946)
19 Norman, E Herbert	Japan's Emergence as a Modern State
20 Pannikar K M	Asia and Western Domir (1959)

21	*Quigley, H S*	Japanese Government and Politics (1932)
22	Quiglev, H S	The New Japan Government and Politics (1950)
23	Reischauer, R K	Japan Government and Politic (1939)
24	*Reischauer E O*	Japan Past and Present (1947)
25	Rodger, S and Paul, L	Red Flag in Japan International Commission in Action (1952)
26	Janin and Yohan	*Militarism and Fascism in Japans* (1934)
27	Uyehara	Political Development of Japan (1867-1909)